सम्पूर्ण गाधी वाङ्मय

२१

(अगस्त – दिसम्बर १९२१)

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

२१

(अगस्त – दिसम्बर १९२१)

सत्यमेव जयते

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मन्त्रालय

भारत सरकार

मार्च १९६७ (फाल्गुन १८८८)

साढ़े सात रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, दिल्ली–६ द्वारा प्रकाशित
और जीवणजी डाह्याभाई देसाई, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद–१४ द्वारा मुद्रित

भूमिका

प्रस्तुत खण्डमे २१ अगस्त १९२१ से १४ दिसम्बर १९२१, अर्थात् पाँच महीनेकी सामग्री सगृहीत है। "एक वर्षमे स्वराज्य" के कार्यक्रमको सफल बनानेके प्रयत्नका अन्तिम महीना सितम्बर था, इसलिए अगस्तमे एक ऐसे जोरदार कार्यक्रमकी पृष्ठभूमि तैयार की जा रही थी जो सरकारको हिला दे सके और उसे लोकमतके आगे झुकनेपर विवश कर दे। गाधीजी स्वराज्यको किसी राजनीतिक अवस्थाकी बजाय एक आध्यात्मिक अवस्था ही अधिक मानते थे। किन्तु इस अर्थकी गहराई तक सबका पहुँच सकना सम्भव नही था। तमाम लोगोको ऐसा लगता था कि गाधीजीने जब एक सालमे स्वराज्य दिलानेकी बात की है, तो किसी दिन अवश्य ही कोई बडा चमत्कार होगा और साल समाप्त होते न होते तक स्वतन्त्रता सामने आकर खडी हो जायेगी। तथापि गाधीजीको खटका था कि जो अवधि निश्चित की गई है, उसमे स्वराज्यकी प्राप्ति कदाचित् सम्भव न हो सके और इसीलिए गुजरातके बारडोली और आनन्द जिलोके चुने हुए अचलोमे सविनय अवज्ञा और सत्याग्रहकी तैयारीके बीच भी उनका मन परेशान बना हुआ था। इस खण्डमे एक ओर सघर्षके अन्तिम दौरकी यह तैयारी और दूसरी ओर गाधीजीके मनकी बेचैनी उभरकर सामने आ जाती है।

गाधीजी देशमे जिस शान्तिपूर्ण क्रान्तिकी अवतारणा करना चाहते थे, उसके लिए जनताको अहिंसात्मक प्रशिक्षण देनेकी दृष्टिसे गाधीजीने समूचे देशकी "प्रदक्षिणा" प्रारम्भ की। पश्चिममे कराचीसे पूर्वमें डिब्रूगढ तक और उत्तरमे रावलपिण्डीसे दक्षिणमे तूतीकोरिन तक इसी क्रान्तिको सुदृढ आधार देनेकी दृष्टिसे वे अनवरत यात्रा-रत रहे। जिन दिनो अपनी इस यात्राके दौरान वे असममे थे, उन्होने अखबारो-मे समाचार पढा कि मलाबारमे एकाएक हिंसक काण्ड शुरू हो गया है। इतिहासमें यह घटना मोपला काण्डके नामसे जानी जाती है। मोपला अरबोके वशज होते हैं। यह हमारे देशके दक्षिण पूर्वके समुद्री किनारेके एक छोटेसे टुकडेमें बस गये थे और राष्ट्रीय जीवनके मुख्य स्रोतोसे उनका शताब्दियोसे कोई सम्बन्ध नही था। एकाएक २० अगस्त १९२१को इन्होने विद्रोह किया और "खिलाफत राज" की घोषणा कर दी। उन्हे खिलाफत आन्दोलनकी लगभग कोई खबर नही थी और अहिंसक असह-योगकी तो कल्पना थी ही नही। क्रोधमे अन्धे होकर उन्होने अपने हिन्दू पडोसिया-पर हमले शुरू कर दिये और ऐसे जघन्य अत्याचार किये कि देशमे हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यके बढते हुए पौदेकी जडे हिल गईं। कुछ मुस्लिम नेताओंके रुखसे ऐसा जान पडा, मानो वे इन अत्याचारोको तरह देना चाहते हो। परिस्थिति इससे और भी गभीर हो गई। दक्षिणमे हिन्दुओंकी भावनाओंका शमन करना गाधीजीके लिए कठिन हो गया। वे यह तो जानते थे कि मोपलोने सन्तुलन खो दिया है, किन्तु उन्होने हिन्दु-ओंसे अपील की कि वे अपना सन्तुलन न खोये और मोपलोकी गलतीको हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यकी जडे खोखली करनेका कारण न बनने दे। परिस्थितिने जो भयकर स्वरूप

धारण कर लिया था, उसके लिए उन्होंने सरकारको [illegible] दोष दिया और इस मामलेमें भी उनकी आत्म-भर्त्सना थी कि [illegible] [illegible] सन्देशको नेताओं तक [illegible] [illegible] शान्ति और सहनशीलता [illegible] [illegible] नहीं ग्रहण किया। इतना ही नहीं, उन्होंने [illegible] [illegible] कि सरकार [illegible] [illegible] कर रही है उसके लिए इसकी सहानुभूति [illegible] ही [illegible] चाहिए। गांधीजीकी तमाम [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] एक [illegible] [illegible] ही रही।

उसी समय [illegible] गिरफ्तारीके कारण भी हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यको बनाये रखनेके प्रयत्न आशाजनक प्रतीत होते थे। [illegible] [illegible] [illegible] मुस्लिम जनताको समझाकर रखनेमें [illegible] [illegible] ही रहे थे। [illegible] महीने-में उन्होंने अपने भाषणमें [illegible] ऐसी बातें कह दी जिनसे हिंसाको बढ़ानेकी प्रवृत्ति दिखाई देती थी — इन बातोंका [illegible] सार्वजनिक [illegible] माँगनी पड़ गई और इन भाषणोंके [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] नहीं रहे। [illegible] खिला-फत अधिवेशनमें समय सैनिक [illegible] सम्बन्धित प्रस्तावका समर्थन करनेके आरोपमें उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और उनपर मुकदमा चलाया गया। गांधीजीने अली-बन्धुओंकी हिम्मतकी सराहना की और उनके खिलाफ कही जानेवाली बातोंका खण्डन करते हुए उनके व्यवहारका समर्थन और उचित ठहराया। करांचीके अपने भाषणमें अली-बन्धुओंने जो कुछ कहा था, गांधीजीने अपने अनेक भाषणोंमें वही बात दोहराई तथा एक घोषणापत्र तैयार किया और उसपर अली-बन्धुओंकी बातके समर्थनमें देशके प्रमुख नेताओंके हस्ताक्षर लिये (पृष्ठ २४८-८५)। उन्होंने कांग्रेसकी कार्यकारिणी तकको इस बातपर राजी कर लिया कि वह करांचीके उस प्रस्तावका समर्थन करते हुए एक प्रस्ताव पास करे (पृष्ठ २८८-८५)। उन्होंने तुनौतीके रूपमें 'राजभक्तिको भ्रष्ट करनेका आरोप" शीर्षक एक लेख भी लिखा और उसमें उन्होंने कहा "मैं निःसंकोच कहूँगा कि चाहे सैनिकके रूपमें हो या गैर-सैनिक अधिकारीके रूपमें, किसी भी हैसियतमें किसी भी व्यक्तिके लिए उस सरकारकी नौकरी करना पाप है जिसने भारतके मुसल-मानोंके साथ धोखेबाजी की है और जो पंजाबमें अमानवीय व्यवहार करनेकी अपराधिनी है। मैंने यह बात कई मंचोंसे सिपाहियोंकी उपस्थितिमें कही है" (पृष्ठ २३१)। मार्च १९२२को गांधीजीपर जो मुकदमा चलाया गया और जिसके बाद उन्हें सजा दी गई, उस मुकदमेके अनेक आधारोंमें यह लेख भी एक था।

हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यको गांधीजी एक ऐसा कोमल पौधा मानते थे जिसकी सार-सम्भाल बड़ी ही सावधानीके साथ की जानी चाहिए। साथ ही वे खादीके व्यापक प्रचारको भी कम महत्त्व नहीं देते थे और मानते थे कि उसे सबके बीचमें प्रतिष्ठित और स्वीकृत करानेके लिए बड़े ही कठिन परिश्रमकी आवश्यकता है। देशमें विदेशी वस्त्रोंकी होलियाँ जलाई जा रही थीं और अनेक लोगोंको लगता था कि यह उचित नहीं है। श्री सी० एफ० एन्ड्रयूज-जैसे मित्र तक भ्रममें पड़ गये थे और उन्हें ऐसा आभास हुआ था कि यह विदेशी व्यक्तियोंके प्रति तर्कहीन घृणाकी अभिव्यक्ति है (पृष्ठ ४१)। इस प्रकारकी आलोचनाका जवाब देते हुए गांधीजीने कहा "विदेशी

कपडोकी यह होली स्वदेशी कपडेकी उत्पत्तिको उत्तेजन देनेका अधिकसे-अधिक गतिपूर्ण उपाय है। अपनी सारी शक्ति लगाकर एक प्रचण्ड प्रयत्नके द्वारा और इस आवश्यक विध्वसात्मक कार्यको तेजीसे पूरा करके हमे हिन्दुस्तानको उसकी मोह-निद्रासे जगाना है, उसकी मजबूरीसे उत्पन्न सुस्तीको दूर करना है" (पृष्ठ ४४-४५)। एक अन्य सज्जनकी आलोचनाका जवाब देते हुए गाधीजीने कहा कि विदेशी कपडोकी होली जलाकर हम वास्तवमे अपनी शौकीनीको ही जला रहे है। इसमे उद्देश्य विदेशियोको नही, अपनेको ही दण्ड देनेका है। विदेशी कपडोकी होलीके विचारके पीछे घृणाकी नही, बलिक अपने अतीतके पापोके लिए प्रायश्चित्तकी भावना रही है। रोग इतना गहरा बैठ गया था कि शल्य-चिकित्साके अतिरिक्त उसका कोई उपचार नही बचा था (पृष्ठ १०६)।

इस सबके बावजूद लोगोके मनमे विदेशी कपडोको जलानेके औचित्यके विषयमे सन्देह बना रहा। अक्तूबरमे कविश्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर और गाधीजीके बीच इसको लेकर जो लिखा-पढी हुई, वह इस दृष्टिसे सर्वाधिक मार्मिक थी। ६ सितम्बरको कलकत्तामे दोनोकी भेट हुई थी और उस भेटमे कुछ मतभेद सामने आये। समाचार-पत्रोमे उक्त भेटके त्रुटिपूर्ण विवरण प्रकाशित हुए और ऐसा जान पडा मानो विवरणोका उद्देश्य देशके इन दो महान् व्यक्तियोके बीचमे मतभेद उत्पन्न करनेका ही हो। रवीन्द्रनाथ ठाकुरका 'मॉडर्न रिव्यू' के अक्तूबर-अकमे "सत्यकी पुकार" शीर्षक एक शानदार निबन्ध प्रकाशित हुआ। स्वदेशी आन्दोलनको उसमे रवीन्द्रनाथने देशको आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय सुप्रभावोसे वचित करनेका एक प्रयत्न कहा था। गाधीजीने "महान प्रहरी" शीर्षक जोरदार लेख लिखकर इस निबन्धका उत्तर दिया। "वे हमारी चमत्कृत आँखोके सामने एक सुन्दर चित्र प्रस्तुत करते है — उष कालमे पछी अपने बसेरोसे निकलकर आकाशमें ईश्वरका गुणगान करते हुए उडे चले जा रहे हैं। किन्तु वे भूल जाते है कि इन पछियोको उस रातसे पहलेके दिन, पूरा आहार मिला था और जब ये प्रात काल उडकर चले तब इनके डैने काफी विश्राम पा चुके थे और उनकी नसोमे पिछली रात नये रक्तका सचार होता रहा था। लेकिन मैने तो शोक-विह्वल मनसे ऐसे पछी भी देखे है जो शक्तिके अभावमे लाख प्रोत्साहन और हिम्मत देनेपर भी अपने डैने फडफडा तक नही पाये। भारतीय आकाशके तले रहनेवाले मानव-पछीको रातमे नीद नही आती। वह सोनेका महज बहाना करता है और प्रात काल जब उठता है तब वह पिछले दिनसे भी ज्यादा कमजोर उठता है। मैने तो किसी रुग्ण व्यक्तिकी पीडाको कबीरका भजन सुनाकर दूर कर पाना असम्भव ही पाया है। करोडो भूखे लोग आज एक ही कविताकी मॉग कर रहे है — भूख मिटानेवाली भोजन-रूपी कविताकी। लेकिन वह उन्हे कोई नही दे पा रहा है। उन्हे अपना भोजन स्वय प्राप्त करना है और वे उसे प्राप्त कर सकते है सिर्फ अपने भालका पसीना बहाकर" (पृष्ठ ३०५)।

गाधीजीने देशकी अभावग्रस्त जनताके साथ जिस तीव्रताके साथ अपना साधारणीकरण किया, उससे उनका व्यक्तिगत जीवन भी बदलता चला गया। खादीकी कमीकी चर्चा करते हुए गाधीजी प्राय लोगोसे अपने कपडेकी जरूरतको अधिकाधिक

कम कपड़ोंकी बात कहा करते थे। वे जो-कुछ कहते थे, उसपर आचरण करते थे। इसी तरह २२ सितम्बरको मदुरामें जनसाधारणके समान वे केवल एक लंगोटी पहन-कर गये और उन्होंने कहा "हमारे भाइयोंकी यह शिकायत रहती है कि खादीसे शरीर-रक्षाकी दृष्टिसे ज्यादा कपड़े जरूरी नहीं होते। इसलिए बदनको कोई विशेष शिष्टाचार बरतना आवश्यक नहीं है" (पृष्ठ १८७)। २१ अक्तूबरको गांधीजीने शामके भोजनके पहले नियमित आधा घंटा सूत कातनेका संकल्प किया और बताया भी कि यदि वे किसी दिन किसी कारणसे शाम तक आधा घंटा कात नहीं पायेंगे, तो उस दिन शामका भोजन नहीं करेंगे। इसी अवधिमें गांधीजीने प्रति सप्ताह सोमवारको उपवास और मौन रखनेका व्रत लिया और आजन्म उस व्रतपर दृढ़ रहे। उपवास और मौन रखनेका यह व्रत १७ नवम्बरको बम्बईमें हुए उस दंगेका नतीजा था जो नगरमें प्रिंस ऑफ वेल्सके आगमनके समय हुआ था। प्रिंस ऑफ वेल्सके आगमनके बारेमें गांधीजीकी राय यह थी कि युवराजकी यात्राका नाजायज फायदा उठाकर भारतमें ब्रिटिश शासनके "कल्याणकारी" रूपका प्रचार किया जा रहा है। उन्होंने कहा कि उस "कल्याणकारी" रूपका प्रचार देशमें दमन-चक्र चलाकर किया जा रहा है (पृष्ठ ३६६)। इसलिए उन्होंने जनतासे कहा कि युवराजके स्वागतमें आयोजित किसी भी कार्यक्रममें कोई भाग न लिया जाये, किन्तु साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि ऐसे कुछ लोग अवश्य होंगे जो किसी भय, आशा अथवा अपनी मर्जीसे विभिन्न समारोहोंमें शामिल होना चाहेंगे। उन्हें भी अपनी इच्छाके अनुसार चलनेका उतना ही अधिकार है जितना हमें (पृष्ठ ३६८)। इसी १७ तारीखको जब गांधीजी एक सार्वजनिक सभामें लोगोंको उनके शान्तिपूर्ण व्यवहार और बहिष्कारकी सफलतापर बधाई दे रहे थे, नगरके दूसरे भागमें लोगोंने कुछ ऐसे लोगोंसे हाथापाई शुरू कर दी जो बहिष्कारमें शामिल नहीं हुए थे। १९१९ के अप्रैलमें जो उपद्रव हुए थे (देखिए खण्ड १५) उनसे गांधीजीको इतना दुःख नहीं हुआ था, जितना इन उप-द्रवोंसे हुआ। उसी तिथिको लिखे गये अपने एक पत्रमें वे लिखते हैं "स्वराज्यकी अग्रिम झाँकी देखकर मैं लज्जित हूँ" (पृष्ठ ४८५)। दो दिन बाद उन्होंने नागरिकोंके नाम एक अपील प्रकाशित करते हुए स्वीकार किया "उक्त दो दिनोंमें मैंने स्वराज्यका जो रूप देखा है, उसकी सड़ाँध मेरे भीतर तक पैठ गई है (पृष्ठ ४८९)। उन्होंने यह भी कहा "आप लोग अनायास यह समझ ले सकते हैं कि उन लोगोंको अधिकसे-अधिक राहत पहुँचाना मेरा कर्त्तव्य है जिन्हें मुख्यतया मेरे निमित्तसे उद्भूत हलचलका शिकार बनना पड़ा है" (पृष्ठ ४९०)। प्रायश्चित्त और तपश्चर्याके रूपमें उन्होंने उपवासकी घोषणा कर दी और स्पष्ट कर दिया कि जबतक विभिन्न सम्प्रदायोंके बीच स्नेह और शान्तिका सम्बन्ध स्थापित नहीं हो जाता, उपवास चलता रहेगा।

परिस्थितियाँ जल्दी ही इतनी सुधर गई कि गांधीजीने अपना उपवास तोड़ दिया। किन्तु फिर भी उनकी दृष्टिमें देशका राजनीतिक वातावरण इतना खराब तो हो ही चुका था कि जिस सार्वजनिक सविनय अवज्ञाको देशके कुछ चुने हुए हिस्सेमें प्रारम्भ करनेकी तैयारी हो रही थी उन्हें उसका विचार छोड़ देना पड़ा। किन्तु

सरकार ताकत आजमानेपर तुली हुई थी। बगाल, उत्तरप्रदेश, पजाब और दिल्लीमें स्वयसेवकोके सगठनोको गैरकानूनी करार दिया गया, राष्ट्रीय अखबारोपर प्रतिबन्ध लगा दिया गया और लाला लाजपतराय, मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू-जैसे राष्ट्रीय नेताओके साथ-साथ अहमदाबादमे होनेवाली आगामी काग्रेस अधिवेशनके मनोनीत अध्यक्ष चित्तरजन दास भी गिरफ्तार कर लिये गये। गाधीजीने देखा कि यह तो एक चुनौती है और उन्होने लोगोको यह चुनौती स्वीकार कर लेनेके लिए कहा। २९ अक्तूबरको अहमदाबादमे बोलते हुए उन्होने जनतासे प्रश्न किया "अब हमारे सामने पूरे दो महीने भी नही रह गये है। दिसम्बरकी २५ तारीखको काग्रेस अधिवेशन शुरू होगा। अगर उस समय तक हम स्वराज्यके झण्डेको न फहरा सके, तो काग्रेस अधिवेशनको बुलानेका क्या अर्थ है" (पृष्ठ ३७७)।

अहमदाबादके काग्रेस अधिवेशनकी तैयारियोके सिलसिलेमे गाधीजीने 'नवजीवन' मे (पृष्ठ ५०-५२, १८८-८९) लेख लिखकर छोटी-छोटी बातोके विषयमे भी जो दिशादर्शन किया, उससे गाधीजीकी व्यावहारिक दृष्टि और तफसीलके प्रति जागरूकताका बडा अच्छा उदाहरण सामने आता है। उन्होने बताया कि पाखाने किस तरह बनेगे, पेशाब-घर कैसे और कहाँ-कहाँ होगे, पीनेका पानी, बिजली, भाषावार रसोईघर आदि बीसियो बातोपर उन्होने प्रबन्धकोका मार्गदर्शन किया —और सो भी उस समय जब वे देशकी बडीसे-बडी समस्याओको लेकर अत्यन्त व्यस्त थे। एक दूसरे सन्दर्भमे उन्होने अखबारोमें प्रकाशित भाषणोके विवरणोके प्रति लोगोको सावधान किया "अधिकसे-अधिक सद्भावना रखते हुए भी सवाददाता मेरे भाषणोकी बिलकुल सही रिपोर्ट कदाचित् ही दे पाये है। दरअसल सर्वोत्तम बात तो यह होगी कि जबतक भाषणोके विवरण स्वय वक्ताओको न दिखा लिये जाये, तबतक वे अखबारोमे प्रकाशित ही न हो। अगर इस सीधे-सादे नियमका पालन किया जाये, तो बहुत-सी गलतफहमियाँ टाली जा सकती है" (पृष्ठ ५६४)।

इस खण्डमे सगृहीत सामग्रीका सम्बन्ध यद्यपि राजनीतिक समस्याओसे अधिक है—और यह स्वाभाविक भी है, किन्तु इसमे ऐसी सामग्री भी पर्याप्त परिमाणमे है जो गाधीजीके व्यक्तित्वके दूसरे पहलुओको भी सामने रखती है। असमके दौरेका उनके द्वारा लिखा हुआ वर्णन (पृष्ठ ५३-५८, ८६-९३) स्पष्ट करता है कि गाधीजीकी दृष्टि प्रकृतिके सौन्दर्यको कितने प्रकृत भावसे ग्रहण कर सकती थी और वे उसके सम्पर्क मे आकर कोमलताके भावोसे किस तरह भर उठते थे और आनन्द-विभोर हो जाते थे। उसी विवरणमे हम यह भी देखते है कि मानव-स्वभावकी सादगी उन्हे किस तरह छूती थी। बारीसालमे "पतित बहनो" की सामाजिक समस्याने तो उन्हे लगभग विचलित कर दिया था। पुरुषने स्त्रीको जिस अत्याचारका शिकार बनाकर रखा है, उसका विचार करते हुए उनका सिर लज्जासे झुक गया। "ज्यो-ज्यो इन बहनोका चित्र मेरी आँखोके आगे सजीव होता है, त्यो-त्यो मुझे खयाल आता है कि अगर ये मेरी ही बहने या लडकियाँ होती तो—? और 'होती तो' क्यो, है ही" (पृष्ठ ९६)। हिन्दू धर्मके बारेमे उन्होने एक परिपूर्ण वक्तव्य दिया जिसमे उन्होने उत्कृष्ट प्रबन्धकारो-जैसी मनोहारिणी स्पष्टवादिताके साथ यह दर्शाया कि वे उसपर इतने

सुख रखा है। उन्होंने लिखा: "जैसे अपनी पत्नीके बारेमें अपनी भावनाका वर्णन करना मेरे लिए कठिन है, वैसे ही हिन्दू धर्मके बारेमें भी। मुझपर उसका जितना असर होता है, वैसा संसारकी किसी स्त्रीका नहीं हो सकता। ऐसा नहीं कि उसमें दोष ही नहीं है। मुझे तो ऐसा लगता है कि मुझे स्वयं जितने दोष उसमें दिखाई देते हैं, उससे कहीं अधिक दोष उसमें होंगे। लेकिन मुझे उसके साथ एक अटूट बन्धनका अनुभव होता है। मेरी यही भावना हिन्दू धर्मके बारेमें भी है, भले ही उसमें चाहे जितने दोष हों, उसकी चाहे जैसी सीमाएँ हों। हिन्दू धर्मकी दो ही पुस्तकें ऐसी हैं जिनके जाननेका मैं दावा कर सकता हूँ। वे हैं गीता और तुलसीकृत 'रामायण'। इनका संगीत मुझको जितना आह्लादित करता है उतनी आह्लादित कोई और चीज नहीं करती (पृष्ठ २६०)।

वर्ष समाप्त होते-होते तक उन्होंने देख लिया कि आत्मशुद्धिकी दृष्टिसे प्रस्तुत किये गये रचनात्मक कार्यक्रमके माध्यमसे उन्होंने स्वराज्यका जो सन्देश दिया था, उसे लोगोंने सार्थक नहीं किया। उन्होंने देखा कि लोग बातको सुन तो लेते हैं, उससे उत्साह भी दिखा देते हैं, किन्तु उसे हृदयसे अंकित नहीं करते, आचरणमें नहीं उतारते। उन्होंने इसे अपनी ही विफलता माना और कहा "क्या मुझे पूर्ण विनयके साथ अपने सृजनहारके सामने घुटने टेककर यह प्रार्थना नहीं करनी चाहिए कि वह मेरे इस अनुपयोगी शरीरको समाप्त करके उसे सेवाके किसी अधिक उपयुक्त साधनका रूप दे?" (पृष्ठ ४८०)। किन्तु निराशापूर्ण यह मानसिक स्थिति दीर्घकालतक नहीं टिकी। वर्षके अन्त तक देशमें गाधीजीने जिस सजीवनीके सचारकी आशा की थी, उसे सफल न होते देखकर उन्हें अवश्य दुःख हुआ। किन्तु उनकी स्थितप्रज्ञता इस उद्वेगपर जल्दी ही हावी हो गई। उन्होंने एक वर्षकी जो अवधि स्वराज्य-प्राप्तिके लिए दी थी, उसे सफल बनानेके लिए आवश्यक था कि जनता आध्यात्मिकताका महत्त्व समझती और आत्मशुद्धिको राजनीतिक स्वतन्त्रताका अनिवार्य साधन मानती। गाधीजीने लोगोंके सामने जो शर्तें रखी थीं, वे सरल थीं और उन्होंने कहा भी था "इन शर्तोंका पालन करो और स्वराज्य ले लो" (पृष्ठ ५८५-८६)। किन्तु वह सम्भव नहीं हुआ और गाधीजी स्वय अनतिकाल अवसन्न रहकर फिर एक सच्चे साधककी प्रसन्न मन स्थितिमें आ गये। वे ईश्वर-निष्ठ होनेके नाते निराशावादी हो ही नहीं सकते थे। उन्होंने कहा "यदि हिन्दुस्तान स्वराज्य प्राप्त नहीं करता, तो मैं आत्महत्या क्यों करूँ? . यदि हिन्दुस्तानको गरज है, तो वह उसकी कीमत चुकाये और स्वराज्य ले" (पृष्ठ ३४५)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम साबरमती आश्रम सरक्षक तथा स्मारक न्यास (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐंड मेमोरियल ट्रस्ट) और सग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट, गुजरात विद्यापीठ ग्रथालय, अहमदाबाद, गाधी स्मारक निधि व सग्रहालय नई दिल्ली, बम्बई सरकार गृह-विभाग, बम्बई, नगरपालिका सग्रहालय, इलाहाबाद, श्रीमती तेहमिना खम्भाता, बम्बई, श्री द० प० जोशी, पून , श्री वालजी गोविन्दजी देसाई, पूना, श्री महेश पट्टणी, भावनगर, 'टू अवेकिंग इडिया', 'बापुना पत्रो–२ सरदार वल्लभभाईने', 'बापुना पत्रो–४ मणिबहेन पटेलने', 'बापुनी प्रसादी', 'माई डियर चाइल्ड', 'सेवन मथ्स विद महात्मा गाधी', पुस्तकोके प्रकाशको तथा निम्नलिखित समाचारपत्रो और पत्रिकाओके आभारी है 'अमृत बाजार पत्रिका', 'आज,' 'गुज-राती', 'ट्रिब्यून,' 'नवजीवन', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'यग इडिया', 'हिन्दी नवजीवन' तथा 'हिन्दू।'

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओके लिए अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इडियन कौसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय (मिनिस्ट्री ऑफ इन्फरमेशन ऐंड ब्रॉडकास्टिग)के अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग (रिसर्च ऐंड रेफरेस डिवीजन), नई दिल्ली, तथा श्री प्यारेलाल नय्यर और कागजातकी फोटो-नकल बनानेके लिए सूचना और प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभागके आभारी है।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलोंको सुधार दिया गया है। अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय उसे मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद प्राप्त हो सके हैं, हमने उनका मूलसे मिलान और संशोधन करनेके बाद उपयोग किया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारनेके बाद अनुवाद किया गया है और मूलमें प्रयुक्त शब्दोंके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। यह ध्यान रखा गया है कि नामोंको सामान्यतः जैसा बोला जाता है वैसा ही लिखा जाये। जिन नामोंके उच्चारणोंमें संशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है, जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। शीर्षकके अन्तमें सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ है वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज पत्रोंका और 'सी० डब्ल्यू०' 'सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय' (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

चित्र-सूची

१. अस्पृश्यता

शास्त्री वसन्तरामके उस पत्रपर[1] जिसमे उन्होने अस्पृश्यताके सम्बन्धमे अपना निर्णय दिया था, अपने विचार प्रकट करते हुए अनेक लोगोने मुझे पत्र लिखे है। यदि मै इन पत्रोको छापूं तो उससे बहुत स्थान घिरेगा। किन्तु इतने लोगो द्वारा की गई इन समीक्षाओको मै शुभ लक्षण समझता हूँ। सभी पत्र-लेखक इस प्रश्नका धार्मिक या तात्विक दृष्टिसे निर्णय कराना चाहते है। उनके पत्रोसे प्रकट होता है कि उन्हे केवल व्यावहारिक निर्णयसे सन्तोष नही हो सकता। हिन्दू समाज अन्त्यजोको बहुत-सी सुविधाएँ दे फिर भी यदि वह उन्हे मैलेका स्पर्श करनेके बाद नहा लेनेपर भी अस्पृश्य मानता रहे तो यह बात इन तात्विक निर्णय चाहनेवाले लोगोको असह्य और पापपूर्ण लगती है। ये पत्र-लेखक सुधारक नही है। इनकी मान्यता यह नही है कि हमारी सब बाते खराब है और यूरोपकी सब बाते अच्छी है। ये लोग विवेकी और सयमी है, अपने आपको हिन्दू मानते है और इसका उन्हे अभिमान है। वे मर्यादाको प्रधान स्थान देते है। इस बातसे मुझे तो अतिशय हर्ष होता है, और उनके आग्रहसे लगता है कि हम अस्पृश्यताके पापसे जल्दी मुक्त होगे।

हम शास्त्रका अर्थ करनेकी झझटमे इतना ज्यादा फँस गये है कि हमने धूलका धान करनेके बजाय धानकी धूल कर दी है। हम चावलको छोडकर छिलकेसे चिपट गये है। हमने मक्खन छोड दिया है और बेस्वाद मट्ठेके पीछे दौड रहे है। मेरे पास जो पत्र है उनसे पता चलता है कि अब हम ऐसे युगमे प्रवेश कर रहे है जिसमे हमे गीत नही गाने है, बल्कि काम करना है। वर्ण पाँच नही, चार है। अस्पृश्यता सयम नही है, वह वर्णाश्रमकी मर्यादा नही है। वर्णेतर लोगोको भी अस्पृश्य मानना दयाधर्म नही, बल्कि क्रूरता है। कोढसे पीडित लोगोको स्पर्श करनेसे आत्मा अशुद्ध नही होती, उलटे, यदि उनका स्पर्श सेवाभावसे किया जाये तो वह ऊँची उठती है। भगीकी सेवा करना धर्म है। रोगसे पीडित भगीकी शुश्रूषा पहले करना दया है। भगीने मैला उठाया हो तो स्नान करना शौच-क्रिया है, यह आवश्यक है, किन्तु यदि वह न नहाये तो इससे उसका अध पतन नही होता। आवश्यकता होनेपर भगीको स्पर्श न करनेमे पाप हो सकता है। जो भगी नहा-धोकर आया है उसे आदरपूर्वक अपने पास न बैठाना पाप है और जो लोग यह मानते है कि भगीको छूना पाप है यह उनका अज्ञान है। ऊपरके पत्रोसे मै देखता हूँ कि इस तरहके विचार अब बहुत व्यापक हो गये है। इन पत्रोमे से एक पत्र मै दे चुका हूँ। अब दूसरा पत्र श्री साकरलाल अमृतलाल दवेका[2] नीचे दे रहा हूँ

अस्पृश्यताके सम्बन्धमें शास्त्री वसन्तरामकी शास्त्रीय चर्चा प्रेमपूर्वक पढ़ी। किन्तु मेरे जैसा अ-शास्त्रज्ञ शास्त्रके भवरजालमें भ्रमित न हो जाये इस दृष्टिसे

१ **नवजीवन**, १७–७–१९२१ में प्रकाशित ।

२ गुजरातके एक शिक्षाशास्त्री । 482

क्या वे नीचे लिखे दो मुद्दोंका स्पष्टीकरण करनेकी कृपा करेंगे?

(१) आपने श्री भगवानके चरणोंमें अपना मन, वचन, कर्म, अर्थ और प्राण अर्पित कर दिया है। क्या आप चाण्डालको स्पर्श करके स्नान करेंगे? ऐसे चाण्डालके स्पर्शसे आप पवित्र होंगे या अपवित्र? यदि वह भगवानके मन्दिरमें आना चाहे तो आप उसे प्रवेश करने देंगे या नहीं?

(२) आपका पाखाना साफ करनेवाला भंगी दोपहर-बाद दो बजे नहा-धोकर, बहुत साफ होकर आपके घर आये तो आप उसे प्रवेश करने देंगे और अपनी बैठकमें बैठने देंगे कि नहीं?

मैं यह मानता हूँ कि इन दोनों मुद्दोंके स्पष्टीकरणमें अस्पृश्यता-सम्बन्धी समस्त चर्चा पूरी हो जायेगी।"

शास्त्रीजीके लेखका अर्थ मैं तो एक ही कर सकता हूँ। फिर भी यदि शास्त्रीजी उसका उत्तर देंगे तो मैं उसे अवश्य प्रकाशित करूँगा। तबतक मैं श्री साकरलालको सावधान कर देना चाहता हूँ कि शास्त्री वसन्तरामके निर्णयसे ही अस्पृश्यताके सम्बन्धमें होनेवाली चर्चा समाप्त नहीं हो जायेगी। शास्त्रीजीका उत्तर हमारी आशाके अनुरूप हो तो भी दीर्घकालसे जमा हुआ यह मैल एक-दो बारकी चर्चा-मात्रसे दूर नहीं होगा। यह मैल तो केवल कार्य करनेसे ही दूर होगा। हममें से जो लोग यह समझते हैं कि किसीको भी स्पर्श करनेसे पाप नहीं लगता, और शरीर शुद्ध करके आये हुए भंगीको स्पर्श करनेके बाद नहाना पाप है, वे भंगी आदि अस्पृश्य वर्गके लोगोंकी सेवा करते हुए समय-समयपर उनका स्पर्श करेंगे तभी उनका यह मैल दूर होगा। वैसे ऐसा कहने और माननेवाले लोग तो तब भी रहेंगे कि सौ पीढ़ियाँ बदल जानेपर भी अन्त्यजका स्पर्श करना पाप है। ऐसे लोगोंको हम विनयपूर्वक किन्तु उतने ही आग्रहपूर्वक किये गये अपने आचरणसे एवं उसके शुभ परिणामोंसे जीत सकेंगे।

मैं तो, जिस तरहकी अस्पृश्यता इस समय व्यवहारमें आ रही है उसको पाप रूप मानकर उसका त्याग करनेका आग्रह धर्मकी दृष्टिसे ही करता हूँ। किन्तु स्वामी श्रद्धानन्दजीने[1] अपने एक पत्रमें लिखा है कि उत्तर भारतमें कितने ही अंग्रेज अन्त्यज-वर्गको असहयोगके विरुद्ध भी भड़का रहे हैं। और यदि भारतमें सर्वत्र हमने अस्पृश्यताका विरोध न किया होता तो इस समय हमारे विरोधियोंने उसका बहुत दुरुपयोग किया होता। शैतान हमेशा एक छेदसे होकर घुसता है और फिर ऐसा बड़ा दरवाजा अपने आने-जानेके लिए बना लेता है जिसे सभी देख सकें। जिसे अपने जीवनका निर्माण धार्मिक दृष्टिसे करना है वह तो अपने धर्मके दुर्गमें एक भी कमजोर ईंट नहीं लगने देगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २१–८–१९२१

१ (१८५६–१९२६), राष्ट्रवादी नेता; संन्यास लेनेके पूर्व महात्मा मुन्शीरामके नामसे प्रसिद्ध, गुरुकुल काँगड़ीके संस्थापक।

२. टिप्पणियाँ

बिहारका दौरा

चम्पारनमे जो-कुछ सेवा मुझसे बन पडी है उसके तथा बिहारियोके स्वभावके कारण मेरी बिहार-यात्रा बहुत-कुछ कष्टप्रद हुई। छोटे-छोटे गाँवोमे भी झुण्डके-झुण्ड लोग चरणस्पर्शके लिए एकत्र होते थे और इतना कोलाहल होता था कि मै तो घबरा जाता था। 'दर्शन'के मारे जरा भी फुरसत नही मिलती थी। इससे न रातको शान्ति मिलती थी, न दिनको। फिर घूमने-फिरनेकी तो बात ही दूर रही। यदि थोडे ही, परन्तु कुशल कार्यकर्त्ता हो तो भी ऐसे श्रद्धालु लोगोसे अभीष्ट काम लिया जा सकता है। और बिहार ऐसा काम करके दिखा रहा है। बिहारमे कितने ही कार्यकर्त्ताओका जीवन इतना सादा और पवित्र है और शान्तिमय असहयोगपर उनका विश्वास इतना पक्का है कि समाजपर उनका गहरा प्रभाव जम गया है और उन्होने शान्तिपूर्वक बहुत काम किया है। एक वर्ष पहले जहाँ बहुत थोडे चरखे चलते थे वहाँ आज हजारो घरोमे चल रहे है। हजारो गज खादी बुनी जा रही है और हजारो लोगोने केवल खादी ही पहनना अखत्यार कर लिया है।

यह दो आना रोज मजदूरी देनेवाला चरखा बिहार, उडीसा इत्यादि प्रान्तोमे कितने ही लोगोकी सम्पूर्ण आजीविकाका साधन हो गया है। खेतोपर काम करनेवाले बहुतसे मजदूर भी इतनी मजदूरी नही पाते। खेतोपर काम करनेके लिए शरीर मजबूत होना चाहिए। पर चरखेको तो एक कोमलागी बालिका भी चला सकती है और चाहे तो उससे दो आना रोज पैदा कर सकती है। लोगोपर चरखेका जैसा असर हो रहा है वैसा असहयोगके दूसरे अगोका नही पडा। कितने ही लोग तो चरखेको एक बरकत देनेवाली चीज समझते है और उसकी पूजा करते है। हिन्दू और मुसलमान दोनो चरखेको एक दृष्टिमे देखते है और दोनो ही को वह प्रिय हो गया है। ऐसी दशामे यदि चरखा सब जगह न फैल जाये और ३० सितम्बरके पहले उसके द्वारा हम आवश्यक कपडा न तैयार कर सके और विदेशी कपडेका बहिष्कार न कर सके तो कहना होगा कि इसका कारण केवल हमारी सगठनशक्ति और कार्यदक्षताकी कमी ही होगी।

बुनकरोकी सभा

बिहार-शरीफ नामका एक छोटा शहर बिहारमे है। उसकी आबादी कोई पच्चीस हजार है। उसके पास ही प्रसिद्ध जैन तीर्थंकर महावीर स्वामीका जन्म हुआ था और उसीके पास वे समाधिस्थ हुए थे। उस स्थानपर बडे विशाल मन्दिर है। बिहार-शरीफ जाते हुए ये रास्तेमे पडते है। यह एक मशहूर पीरका स्थान है, इसलिए शरीफ कहलाता है। कहते है कि अजमेरके पीरके बाद, दूसरे नम्बरपर इसी स्थानकी महिमा है। यहाँ कोई ५०० जुलाहे — बुनकर बसते है। इनमे मुसलमान ही ज्यादा है। यहाँ काग्रेस कमेटी और खिलाफत कमेटीकी ओरसे जुलाहोकी सभा खास तौरपर की गई। उसमे हमने समस्त बुननेवालोसे निवेदन किया कि अब आजसे आप लोग केवल

हाथका ही सूत बरतिए। उन्होंने यह बात मंजूर की और कहा कि काम रुक जानेपर ही वे मिलका सूत काममें लायेंगे। आजतक तो वे विदेशी सूतको बरतते जा रहे थे, पर खुद उन्होंने ही यह कहा कि हमारे बाप-दादे तो सिर्फ हाथका ही सूत इस्तेमाल करते थे। अब यदि इन जुलाहोंको हाथका ही कता सूत दिया जायेगा तो ये जरूर उसीको काममें लेंगे। पर यदि इसके लिए उत्साही कार्यकर्ताओंका अभाव रहा तो वे, हाथका सूत बरतना स्वीकार कर चुकनेपर भी, जरूर ही विदेशी सूतको काममें लेंगे। अब हमारा काम यह है कि हम जुलाहे, पिंजारे, धुनिया, बढ़ई, लुहार इत्यादिको देशके काममें दिलचस्पी लेनेके लिए प्रवृत्त करें। मैं आशा करता हूँ कि राष्ट्रीय सभाके कार्यकर्त्ता प्रत्येक गाँवमें जा-जाकर इन लोगोंसे मिलेंगे, उन्हें सभासद बनायेंगे और उनसे देशकी सेवा लेंगे। अपना काम वे लोग मजेमें करते रहें और कमायें, पर देशके कार्यको पहला स्थान दें और उसके लिए सामान्यसे कुछ-कम मेहनताना लें। बस, हमें उनकी इतनी ही सेवापर सन्तोष हो सकता है।

महायज्ञ

विदेशी कपड़ेका त्याग हमारा एक महायज्ञ है। इसमें हमें पूरी तरह सफलता मिलना ही स्वराज्य है। काम बड़ा है लेकिन हमें यह भय रखनेका कोई कारण नहीं कि यह एक माहमें कैसे हो जायेगा। चिन्तित और भयभीत मनुष्य विमूढ़ हो जाता है, उसकी आँखोंके सामने अन्धेरा छा जाता है और उसे मार्ग नहीं दिखाई देता। यदि हम जरा-भर सोचें तो मालूम हो जाये कि स्वराज्य तो बड़ा आसान है, क्योंकि यह हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। इसलिए यह निश्चय रखकर कि स्वदेशी मुश्किल नहीं हो सकती, हमें काममें जुट जाना चाहिए। कार्यपरायण होनेके लिए हमें निश्चयी और उद्योगी बनना चाहिए। ज्यों-ज्यों मैं भ्रमण करता हूँ त्यों-त्यों मुझे तो यह अनुभव होता जाता है कि इसका आसानसे-आसान उपाय यही है कि हम अपनी जरूरतका कपड़ा घर ही में तैयार करा लें। एक करोड़ आदमियोंको एक जगह इकट्ठा करके उनसे काम करवानेकी बनिस्बत तो यह कहीं ज्यादा आसान है कि हम लोगोंको यह सिखा दें कि वे अपने ही गाँवोंमें रहकर और अपने ही घरोंमें बैठकर कातने और बुननेकी क्रिया किस तरह कर सकते हैं। जैसा श्री अमुभाईने बताया है, बहुत जल्दी करनेपर भी मिलोंके द्वारा जिस कामके लिए हमें कमसे-कम २५ वर्ष चाहिए, वही काम यदि हम समझ जायें तो घर बैठे २५ दिनमें कर सकते हैं। परन्तु जिस तरह नया अन्न पकानेवाला पहले अपने बरतन साफ कर डालता है उसी तरह हमें पहले विदेशी कपड़े-रूपी मैलको धो डालना चाहिए। उसके बिना हमारा आलस्य दूर नहीं हो सकता। जो आदमी एक बार लँगड़ा हो जाता है वह अच्छा हो जानेपर भी जिस प्रकार लकड़ीका सहारा छोड़ते हुए डरता है और गिर जानेके भयसे लँगड़ाते हुए ही चलता है उसी प्रकार जबतक हम विदेशी कपड़ेके सहारे चलते रहेंगे तबतक हमारे पाँवोंमें बल नहीं आ सकता।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २१-८-१९२१

३ बिहार-निवासियोंके प्रति

तेजपुर

असम

भाद्रपद कृष्ण ८ [२२ अगस्त, १९२१][1]

बिहारकी श्रद्धा और भक्ति अवर्णनीय है। गो-माताके प्रति आपके प्रेमको मैं अच्छी तरह जानता हूँ। आप भारतशिरोमणि तुलसीदासके पुजारी हैं। आप दयाधर्मके [illegible] हैं। गो-माताको बचानेका मुख्य-मार्ग एक ही है। आप मुसलमान भाइयोंको खिलाफत-रूपी गायको बचानेमें सहायता करें। मुसलमान-भाई प्रेमके वश होकर गायको बचा सकते हैं। इस्लाम धर्म यह नहीं सिखाता कि हम एक प्राणीको बचानेके लिए दूसरेकी जान लें। जिसको हम बचाना चाहते हैं उसके लिए हम अपना ही प्राण दें। इसीको इस्लाम धर्म तपश्चर्या कहता है। तपश्चर्यासे ही हम धर्मका पालन कर सकते हैं। तपश्चर्या [illegible] है, और यही ही धर्म है।

जबतक हम स्वयं पापरहित नहीं हो चुकते तबतक हम दूसरोंसे कैसे कुछ कह सकते हैं? क्या हमारे ही हाथों गो-हत्या नहीं होती? हम गो-माताके वंशके प्रति कैसा बर्ताव रखते हैं? बैलोंपर हम कितना बोझ लादते हैं? बैलोंको तो ठीक, पर क्या हम गायको भी पूरा खाना देते हैं? गायके बछड़ेके लिए हम कितना दूध रखते हैं? गायको बेचनेवाले कौन लोग हैं? थोड़े पैसेके लिए जो हिन्दू गायको बेचते हैं उनसे हम क्या कहते हैं? उन्हें रोकनेके लिए क्या करते हैं?

अंग्रेज सिपाहियोंके लिए हमेशा गायें कटती जाती हैं। उसके लिए हमने क्या किया है? इन सब बातोंको समझते हुए भी हम क्यों अपने मुसलमान भाईपर ही, जो अपना धर्म समझकर गो-कुशी करता है, क्रोध करें? कमसे-कम हमें अपने हाथ तो साफ कर डालने चाहिए।

ईश्वरका बड़ा अनुग्रह है कि हमारे मुसलमान भाइयोंने बकर-ईदके दिन बड़ी शान्ति रखी, हमारा लिहाज किया और जहांतक हो सका उन्होंने गो-कुशी नहीं की। इसलिए हम उनके एहसानमन्द हुए हैं।

लेकिन भविष्यमें भी ऐसा ही हो, उसका खयाल रखना आवश्यक है। इसलिए हम बकरे इत्यादिका मांस छोड़ दें। ऐसा करनेसे मांसका भाव गिरेगा और गायकी कीमतें बढ़ेंगी। गायका बेचना-खरीदना ही हमें असम्भव कर देना चाहिए। यह सब कार्य हम तभी कर सकेंगे जब हम अपने प्रत्येक कार्यमें विवेक, दया, बुद्धि और त्यागका प्रयोग करेंगे।

आप लोगोंमें धर्मके प्रति बड़ी श्रद्धा है। जिस देशमें जनक, बुद्ध और महावीरने जन्म लिया है ऐसे पवित्र स्थानमें रहकर आप धीरज और धर्मको साथ रखते हुए

१. गांधीजी इस दिन तेजपुरमें थे।

वडा कार्य कर सकते हैं, और गोमाताकी रक्षा करनेका धर्म-मार्ग सारे भारतवर्षको वता सकते हैं।

आपका सेवक,
मोहनदास करमचद गाधी

हिन्दी नवजीवन, २–९–१९२१

४. पत्र : महादेव देसाईको

तेजपुर
मौनवार [२२ अगस्त, १९२१][1]

भाईश्री महादेव[2],

तुम्हे मेरे पत्र मिले होगे। तुमने भी मुझे लिखा ही होगा लेकिन मुझे कोई पत्र मिला नही है। असम मे तुम मेरे साथ होते तो तुम्हारी काव्यशक्तिको अच्छा भोजन मिलता। लेकिन हम इस कर्मभूमिमे कोई भोग-भोगनेके लिए पैदा नही हुए हैं। इसलिए असम और प्रयाग[3] दोनोमे से हमे काव्य-शक्तिको सीचनेके लिए जो मिल जाये उसीसे सन्तोष करना है।

निम्नलिखित कार्यक्रम लगभग ठीक है।

२३	जोरहाट
२४–२५	डिब्रूगढ
२७	सिलचर
२८–२९	सिलहट
३१–१	चटगॉव
३	बारीसाल
४	कलकत्ता

कलकत्तामे हम लगभग दस दिन रहेगे। बीचमे एक दिनके लिए शायद बोलपुर जाना पडे।

अन्य समाचार तुम 'नवजीवन' और 'यग इडिया'मे देखोगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२२) की फोटो-नकलसे।

१. गाधीजी २२ तारीखको तेजपुरसे नाव द्वारा रवाना हुए और नौगावके रास्ते २३ की बजाय २४ अगस्त, १९२१ को जोरहाट पहुँचे।

२ १८९२–१९४२, २५ वर्षोतक गाधीजीके सेक्रेटरी।

३. महादेवभाई उस समय प्रयागमें थे।

५. वक्तव्य : रियासतोंमें दमनके सम्बन्धमें

[२५ अगस्त, १९२१ के पूर्व]

अपनी यात्रामे जब मैं ग्वालियर जा रहा था तो मुझे यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि लोग स्टेशनपर हमारी गाडीके पास आनेमें भी डरते थे। प्लेटफार्मपर स्वदेशी वस्त्र नामको भी दिखलाई नही पडे। इसका कारण मुझे शीघ्र ही मालूम हो गया। इस रियासतमे असहयोग आन्दोलन एकदम बन्द कर दिया गया है। खादीकी टोपी पहनना तथा अपने पास चरखा रखना रियासत पसन्द नही करती, बल्कि ऐसा करना जुर्म समझा जाता है। मेरा विश्वास है कि महाराजा साहबके विचार इतने गिरे हुए नहीं हैं। मेरी पूर्ण सहानुभूति महाराजा साहबके साथ है। गवर्नमेंटका विषैला प्रभाव जितना हिन्दुस्तानी रियासतोंमे देख पडता है उतना और कही नही। इसका कारण यह है कि हिन्दुस्तानी रियासतें किसी प्रकारका सुधार तो कर ही नही सकती, बल्कि बहुधा उनसे जबर्दस्ती अपनी प्रजाकी स्वतन्त्रतापर आक्षेप कराया जाता है। इसके अतिरिक्त गवनमेंटकी छत्रछायामे समस्त भारतकी तरह वे भी कमजोर तथा गैरजिम्मेदार हो गई हैं। इस कारण यदि कोई राजा जिद्दी हो और जुल्म करना चाहे तो वह अपनी रियासतमें वाइसरायसे भी अधिक उपद्रव कर सकता है। वर्तमान शासन-प्रणालीका सबसे बडा दोष यही है। मैं आशा करता हूँ कि ग्वालियर स्टेशनपर जो बातें मुझे बताई गई हैं, वे बहुत बढाकर कही गई थी और उस रियासतमे इतना घोर दमन नहीं हो रहा है जितना कि कहा जाता है।

आज, २५–८–१९२१

६. टिप्पणियाँ

आन्ध्रमें असहयोग

ये टिप्पणियाँ मैं पटनामे गगा तटपर स्थित श्री मजहरुल हकके[१] सदाकत आश्रम-से लिख रहा हूँ। मैंने हमेशा असहयोगमे बिहारका स्थान सर्वोत्तम माना है। और उसके बाद आन्ध्रका। लेकिन अब कहना कठिन है कि कौन-सा प्रान्त बाजी मार ले जायेगा। लेकिन जो भी हो स्थानीय सरकार लोगोको अनुशासन सीखनेमे अवश्य योग दे रही है। अपने पिछले पत्रमे श्री कोण्डा वेंकटप्पैया लिखते है

> मैंने अपने पिछले पत्रमें आपको सूचना दी थी कि मेरी और मेरे तीन व्यापारी मित्रोंकी गिरफ्तारीके बाद इस नगरके वकीलोंने ३१ दिसम्बर तक अदालतोंका बहिष्कार करनेका निश्चय किया है। हमारी रिहाईके बाद बाप-

१. बिहारके नेता, मुस्लिम लीगके संस्थापकोंमें से एक और बादमें उसके अध्यक्ष, चम्पारन सत्याग्रहके दिनोंमें उन्होंने गाधीजीको सक्रिय सहायता की थी।

टला -- जो हमारे जिलेका दूसरा बडा नगर है -- के वकीलोंने भी यही करनेका निश्चय किया। श्री प्रकाशम्[1] और मैं वकीलोंसे अदालतोंका ऐसा ही बहिष्कार करानेके उद्देश्यसे इस जिलेके दूसरे शहरोंके दौरेपर निकल रहे हैं। गण्टूर नगरमें दो जिला मुन्सिफ कचहरियों और कई मजिस्ट्रेटकी कचहरियोंके अतिरिक्त एक जिला अदालत और दो छोटी अदालतें भी हैं। बापटलामें एक छोटी अदालत और दो जिला मुन्सिफ कचहरियाँ हैं। आजकल इक्का-दुक्का लोगोंके अलावा सबने इन कचहरियोंको छोडकर उजाड बना दिया है। हमें आशा है कि जिलेके और शहरोंमें भी अदालतें इसी प्रकार उजड जायेंगी। नये मुकदमों और अपीलोंकी सुनवाई और निर्णयके लिए पचायती कचहरियाँ स्थापित की गई हैं, और इन कचहरियोंका पहला इजलास परसों शुरू होगा (यानी सोमवार ८ तारीखको)। हमारा लक्ष्य तो यह है कि ब्रिटिश अदालतोंमें चालू सब मुकदमों और अपीलोंको वहाँसे हटाकर पचायती कचहरियोंमें पेश किया जाये। समान कचहरियोंकी नियमित स्थापना और उसके फलस्वरूप ब्रिटिश अदालतोंकी न्याय-व्यवस्थाके ठप हो जानेके बाद मुझे आशा है कि और दूसरे जिले भी इस दृष्टान्तका अनुगमन करेंगे। हमारा उद्देश्य यह है कि पहले इस जिलेमें हम यह काम समाप्त कर लें और फिर दूसरे जिलोंकी ओर बढ़ें -- यदि इस बीचमें वे स्वयं ही ऐसा काम शुरू नहीं कर देते।

इस जिलेके, खासकर इस नगरके व्यापारी वर्गमें उल्लेखनीय जाग्रति हुई है। लोकमान्य तिलककी[2] निधन-तिथिपर लगभग वे सभी नये स्वदेशी कपडे पहनकर जुलूस और सभामें शामिल हुए। कपडोंके व्यापारी स्वदेशी कपडेका धन्धा करनेको तैयार हैं यदि हम उनके विदेशी मालके भण्डारको निपटानेका कोई उपाय उनको बताएँ। इस समूचे जिलेमें २९ लाख रुपयेकी कीमतका विदेशी कपडा और सूत है। उसमें से आधा हिन्दुस्तानी मिलोंसे प्राप्त है। इस गण्टूर नगरमें व्यापारियोंके पास ३ लाख रुपयेकी कीमतका विदेशी कपड़ा और सूत पडा है। इस मालको वे भारतके बाहर कहीं भी भेजनेके लिए और फिर केवल स्वदेशी कपडे और सूतका धन्धा करनेके लिए तैयार हैं।

अत. आपसे मेरी विनय है कि आप कृपापूर्वक मेरा बम्बईके ऐसे मित्रोंसे सम्पर्क करा दीजिये जो मुझे यह बतानेको तैयार हों कि बम्बईके कपडेके व्यापारी अपने विदेशी मालकी क्या व्यवस्था करनेवाले हैं और यह कि यहाँ हम अपने व्यापारी मित्रोंको बिना हानि उठाये भारतके बाहर अपना माल निर्यात कर सकनेमें क्या सहायता दे सकते हैं?

१ टी० प्रकाशम् (१८७६–१९५७), स्वराज्यके सम्पादक, आन्ध्र केसरीके नामसे विख्यात, मद्रास राज्यके प्रथम मुख्य-मन्त्री।

२, बाल गगाधर तिलक (१८५६–१९२०), राजनीतिज्ञ नेता, विद्वान् और लेखक।

मुझे आशा है कि वकीलोका उत्साह सच्चा और स्थायी सिद्ध होगा। अदालतोका यह वहिष्कार, फिर चाहे वह सरकारकी नीतिके खिलाफ, मात्र अपना विरोध प्रकट करनेके लिए ही क्यो न किया जा रहा हो, उन्हे और देशको लाभ पहुँचायेगा। व्यापारियोकी समस्याके विषयमें मैं यही सलाह दे सकता हूँ कि उनको स्वय कोई ऐसा तरीका ढ़ँढना चाहिए जिससे वे प्रधान व्यापारियोके जरिये अपने मालका निर्यात कर सके। मुझे उम्मीद है कि वम्वईके व्यापारी भारत-भरके व्यापारियोकी सहायता करेगे और जितना अधिक माल निर्यात किया जा सकता हो, करनेकी कोशिश करेगे। परन्तु मान ले कि इसकी कोई व्यवस्था नही हो पाती तो व्यापारी अपने मालको जिदसे न वेचे वलिक केवल उन ग्राहकोको वेचे जो विदेशी ही खरीदनेकी जिद करे। मैं यह आशा तो नही करता कि सारा भारत अचानक ही विदेशी कपडेके उपयोगके त्यागके औचित्यको समझ लेगा और उसे कर्त्तव्यके रूपमे स्वीकार कर लेगा। अभी एक महीना शेप है और यदि अव विदेशी कपडे या सूतकी और खरीद न हो तो इस अवधिमें वहुत कुछ किया जा सकता है।

हिन्दू-मुस्लिम एकता

उन्नाव खिलाफत समितिके सभापति श्री सैयद मुहम्मद लिखते हैं

> आपके पत्रोमें मुसलमानोके काग्रेसमें शामिल न होनेके वारेमें जव-तव छिट-पुट कुछ निकलता ही रहता है। मुझे इससे दु ख और चिन्ता होती है। खेदकी वात है कि जिलोमें हिन्दू नेता आम तौरपर अपने मुसलमान पडोसियोसे कुछ परायापन महसूस करते हैं और छोटे जिलोमें हिन्दू और मुसलमान कार्यकर्त्ता व्यक्तिगत विज्ञापनकी महत्वाकाक्षा रखते हैं और अपनी श्रेष्ठताका दावा भरते हैं, जो कि सच्ची एकताके लिए घातक है। फल यह है कि हिन्दू कार्यकर्त्ता खिलाफत आन्दोलनमें शायद ही कोई सक्रिय भाग लेते हैं और इस तरह वीचकी खाई चौडी होती जाती है। जहाँतक प्रचारके कामका सम्बन्ध है, काग्रेस कमेटियोने कुछ भी नहीं किया है, और वे समझती है कि उनका काम खिलाफत समितियोसे विलकुल भिन्न है। छोटे जिलोमें यह दूषण बहुत शोचनीय है और पूरी एकताके लिए मेरे नितान्त सच्चे प्रयत्नोके बावजूद हम सतही एकतासे अधिक कुछ नहीं पा सके हैं। हिन्दू एक बार एकताकी इस शक्तिको समझ ले और महसूस करे तो मैं दावेके साथ कह सकता हूँ कि इस जिलेमें गो-वलि नगण्य रह जायगी। उनका अलग रहना ही हमारे लिए सबसे बडी रुकावट है।

यदि उन्नावके हिन्दू खिलाफतके सवालके प्रति उदासीन हो, तो मुझे सचमुच वडा दु ख होगा। मुझे कोई सन्देह नही कि खिलाफतमे हिन्दू जितनी ज्यादा दिलचस्पी लेगे उतना ही स्वराज्य निकट आयेगा। हमे याद रखना चाहिए कि अभी यह सम्भव नही कि हम खिलाफतके सिवा किसी अन्य रूपमे मुसलमानोको स्वराज्यमे दिलचस्पी लेनेके लिए प्रेरित कर सके। यह दु खकी बात है, पर है सत्य। दोनो जातियाँ एक-

दूसरेसे इतने समयतक विमुख रही है कि मुसलमान अनजाने लगभग यही समझने लगे थे कि भारत उनका घर नही। खिलाफतके खतरेने उनकी आँखे खोल दी है। हिन्दू इस तथ्यको ध्यानमे रखे और अपने मुसलमान भाइयोकी मदद करके अपनी भी मदद करे और हमेशाके लिए हिन्दू-मुस्लिम एकताको पक्का करे। दोनोके लिए सौभाग्यकी बात है कि -- उन्नावमे जैसा भी हो -- दूसरी अनेक जगहोमे निश्चय ही ऐसा नही है। वहाँ हिन्दू खिलाफत आन्दोलनके लिए भरसक पूरी सहायता कर रहे है।

तमिल बहनोके बारेमें कुछ और

एक दक्षिण भारतीय वकील लिखते है

> तमिल प्रान्तमे खादीका उतना व्यापक व्यवहार नही जितना और प्रान्तोमें है -- मुख्यत. इसलिए कि स्त्रियाँ उसे नहीं पहनतीं। इसी कारण चरखा भी उतना नजर नहीं आता। सधवाएँ यहाँ सादा सफेद कपडा नहीं पहन सकतीं। वे केवल रगीन साडी ही पहन सकती है। पहले समयमें महिलाओमे केवल सूती-का ही चलन था। अब जो बिलकुल ही गरीब है, उनके सिवा सभीने सूती साडियोका त्याग कर दिया है और दैनिक व्यवहारमें रेशमी साडियाँ ही आती है। रेशमी साडियाँ पहले यही कोरनाडु (मायावरम्के निकट)मे बनती थीं, बादमें कांजीवरम्में बनने लगीं; ये साडियाँ देशी रगोमे रगी जाती थीं। उनका मूल्य रु० १० से ३० तक होता था। उन्हे कभी-कभी ही पहना जाता था। लेकिन इधर कुछ अरसेसे बाजारमें बंगलौरी साडियोका ही बोल-बाला है जो जर्मन या अंग्रेजी रँगोसे रँगी जाती है और सबसे घटिया भी लगभग रु० ५० की होती है। इसका निर्धन ब्राह्मण गृहस्थपर बुरा प्रभाव पड़ता है, खासकर इसलिए कि उसे अपने परिवारके सभी सदस्योको केवल रेशम ही पहनाना पड़ता है और चूँकि दैनिक व्यवहारमें भी रेशमी साडीका ही उपयोग होता है इसलिए उसे रेशमी साडियाँ काफी संख्यामें खरीदनी पडती है। विवाहके अवसरपर भेंट देने लायक साडीका कमसे-कम मूल्य ही १०० रु० से ऊपर होता है। कितने ही सम्भ्रान्त परिवारोकी इसी कारण जर्जर दशा हो जाती है। यह है नाशकारी प्रथा जो ब्राह्मणोतक ही सीमित थी, अब दूसरे वर्गोमें भी फैल गई है।
>
> खर्चके प्रश्नके अलावा आराम और सुविधाकी दृष्टिसे भी यह बात विचारणीय है। रेशममें पसीना नहीं मरता और वह भारी भी है, इसे पहनकर काम करना या खाना पकाना तो मानो मौत ही है। यहाँ सालमें दो-एक महीनोको छोड़कर हमेशा गर्मी ही रहती है। एक और विचित्र और गन्दी आदत है. लोग बहु-मूल्य साड़ियोको इस डरसे कि कहीं उनका रग बिगड न जाये और सलवटें न पड जाये, धोते नही है। पसीना और दुर्गन्ध दोनो असह्य होते है।
>
> बरबादीकी खाईपर खडे बहुतेरे गृहस्थ आपका उपकार मानेगे यदि आप मितव्ययिता, सादगी और आराम वापस ला सके।

मुझे आशा है कि मद्रासके कार्यकर्ता इस पत्रमे जिस कुप्रथाकी शिकायत की गई है, उसे मिटायेगे। पत्रलेखककी तरह मुझे भी मद्रासकी अपनी अगली यात्राके बारेमे अब डर-सा लग रहा है कि तमिल स्त्रियोको रेशमी साडियोका बहुत मोह है। मद्रास-जैसी गरम जलवायुमे रेशमसे बढकर दूसरा हानिकर वस्त्र नही है। और हमारे निर्धन देशमे एक साडीपर सौ रुपये खर्च करना धनका ऐसा अपव्यय है जिसे अपराध ही कहा जा सकता है। इस मामलेमे पुरुष भी समान रूपसे दोषी है क्योकि वे जरीकी पगडियो धोतियो और अगवस्त्रमें तो मान समझते है, और यह भूल जाते है कि इन सभीमे सूत तो विदेशी ही होता है। आश्चर्य तो होगा परन्तु पसीनेको अपने भीतर सोख लेनेवाली खादी इन सब सुन्दर वस्त्रोसे, जिनपर पुरुषोको इतना नाज है ज्यादा ठडी होती है। लेकिन मुझे आशा है कि मेरा यह विश्वास कि तमिल लोग आध्यात्मिक विषयोमे रुचि रखते है, स्वदेशी-जैसे टेढे मामलेमे भी सही सिद्ध होगा और वे विदेशी वस्त्रके पूर्ण बहिष्कार और चरखेको स्वीकार करनेकी नैतिक आवश्यकताको समझेगे। मद्रास और आन्ध्रके मैदानोकी गर्मीमे कोई दूसरा उद्योग इतना सहायक नही हो सकता जितना कि मधुर-मन्थर गतिवाला चरखा। द्रविड देश भारतके बाहर गुलामीका जीवन बितानेके लिए सबसे ज्यादा प्रवासी भेजता है। चरखेकी पुनःस्थापनासे लाचारीके प्रवासकी यह कठिन समस्या अपने-आप सुलझ जाती है। केवल जमीन भारतकी निर्धन किसान जनताका भरण-पोषण नही कर सकती, चाहे उन्हे लगान न भी देना पडे।

वकालतमें लगे हुए वकील

ऐसे वकीलोके विषयमें जिन्होने वकालत नही छोडी है पर फिर भी काग्रेस कमेटियोमें भिन्न-भिन्न पदोपर काम कर रहे है, मेरे पास बराबर पत्र आ रहे है। जबसे मै बगालमें आया हूँ तबसे तो यह सवाल मुझसे और भी आग्रहके साथ पूछा जा रहा है। दुबरीके एक भूतपूर्व विद्यार्थी लिखते है कि क्या आप उन वकीलोके नेतृत्वमें, जो अब भी वकालत कर रहे है, इस आन्दोलनके सफल होनेकी आशा रखते है। यदि स्वार्थ-त्यागपर आधारित यह आन्दोलन ऐसे वकीलोके नेतृत्वमें चलता है जो स्वार्थ-त्यागमें विश्वास नही करते तो उसके सफल होनेकी आशा मै नही करता। बल्कि मैने तो निःसकोच यह राय दी है कि ऐसे वकीलोको, चाहे वे बडी योग्यता रखनेवाले हो तो भी, अपना अगुआ बनानेके बजाय तो यह बेहतर है कि मतदाता लोग उनसे कम योग्यता रखनेवाले दूसरे लोगोको अपना नेता बनाये। किसी डरपोक और शक्की वकीलकी बनिस्बत तो मै खयाल करता हूँ कि कोई बहादुर और निष्ठावान मोची या जुलाहा निःसन्देह बहुत अच्छी तरह नेताका काम कर सकता है। क्योकि सफलता तो वीरता, त्याग या कुर्बानी, सत्य, प्रेम और विश्वासपर अवलम्बित है — कानूनी ज्ञान, बौद्धिक कुटिलता, कूट-नीति, द्वेष और अविश्वासपर नही।

रोटीका सवाल

इसी विद्यार्थीने एक सवाल और उठाया है। वे कहते है कि बहुतेरे बगाली रोटीकी समस्याके कारण राष्ट्रीय कार्य नही कर पाते या ऐसा कहे कि अपनी गुलामी

नही छोड पाते। मैं कहूँगा कि कारण रोटीकी समस्या उतना नही है जितना कि रोटी कमानेके लिए शरीर-श्रम करनेकी अरुचिकी समस्या। हम शिक्षित भारतीयोने रोटीके लिए शरीर-श्रम करनेकी कला खो दी है। बुनने, धुनने और कातनेवालोकी मजदूरी रोज-ब-रोज बढती जा रही है—ऐसी हालतमे हम यह नही कह सकते कि रोटी कमाना कोई बडी समस्या है। प्रतिदिन आठ घटे बुनाईका काम करनेवाला शुरूमे ही कमसे-कम एक रुपया रोज कमा सकता है। सिद्धहस्त बुनकर आज दो रुपया रोज तक कमा लेते हैं। हमे अपनी जीविकाके लिए केवल टेबल-कुर्सीका ही काम चुननेकी बात नही सोचनी चाहिए।

नीतिके तौरपर अहिंसा

इस विद्यार्थीका अन्तिम प्रश्न सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है।

> **"क्या आप यह आशा करते है कि यह शान्तिमय सग्राम जिसका आधार प्रेम और आत्मिक बल है, उन लोगोके शामिल होनेसे जो कि अहिंसा या शान्ति-को एक नीति मात्र समझते है, सफल हो सकता है? शुद्ध अहिंसाके लिए अधिक साहस और देशप्रेमकी आवश्यकता है। परन्तु अगर यह "कमजोरोका हथियार" हो तो भावी दमनके मुकाबलेमें इससे लोगोंमें भयका संचार होगा।**

प्रश्नकर्त्ताने सवालका कुछ जवाब तो खुद ही दे दिया है। अहिंसा धार्मिक विश्वासके रूपमे न सही, नीतिके ही रूपमे स्वीकार की जाये तो भी उसमे सफलता मिल सकती है। पर कब? जब उसके साथ साहस और देशका अथवा स्वीकृत कार्यका सच्चा प्रेम मिला हुआ हो। अन्याय करनेवालोके प्रति द्वेष रखनेका अर्थ देश-प्रेम हो, सो बात नही। हमारे रास्तेमें तो कठिनाई इस बातसे पैदा होती है कि बहुतसे लोग दरअसल तो नीतिके तौरपर भी अहिंसाके कायल नही होते पर ऐसा बताते जरूर हैं। अलीबन्धु[1] अहिंसाको बिलकुल नीतिके तौरपर ही मानते हैं; परन्तु मेरे खयालमे अहिंसामे नीतिके तौरपर सच्चा विश्वास करनेवाला उन दो भाइयोसे बढकर आज कोई नही है। वे मानते हैं कि शान्तिभग होनेसे हमारे कामको धक्का पहुँचनेके सिवा और कुछ नही हो सकता और यदि व्यापक पैमानेपर अहिंसा या शान्तिका व्यवहार किया गया तो पूरी तरह सफलता मिल सकती है। जो मनुष्य एक नीतिके तौरपर ही सत्यका अवलम्बन करता है वह उसके भौतिक फलोको अवश्य पाता है। परन्तु जो केवल सत्यका ढोग रचता है वह हरगिज नही पा सकता।

कार्यसमितिकी आज्ञाओका पालन

यदि हम इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त कर लेना चाहते है तो हमे अपने जीवनके प्रत्येक अगमे और, सबसे अधिक, काग्रेसी सस्थाओके काममे उसके आनेके लक्षण दिखाने होगे। जो कानून और नियम हमने आज स्वय बनाये है उनके अनुसार यदि हमने

१. मौलाना मुहम्मद अली (१८७८–१९३१) और शौकत अली (१८७३–१९३७), खिलाफत आन्दोलनके प्रमुख नेता।

आचरण न किया तो जब हम स्वराज्य प्राप्त कर लेगे तब भी हमारी यही वृत्ति रहेगी। कार्य-समितिकी पिछली बैठकमे कोषाध्यक्षने इस बातकी बडी शिकायत की थी कि कितनी ही प्रान्तीय कमेटियोने अभीतक उनके पास अपने द्वारा इकट्ठे किये गये चन्देकी चौथाई रकम नही भेजी। कहा गया है कि कुछ प्रान्तोने तो अपनी रकम इसलिए रोक रखी है कि दूसरे प्रान्तोने अभीतक अपनी रकम नही भेजी। मै तो इसके विपरीत यह कहूँगा कि काग्रेसके प्रति अपने कर्त्तव्योका पालन ठीक-ठीक करनेमे प्रत्येक प्रान्तको एक-दूसरेसे होड करनी चाहिए। बस, केवल इसी रीतिसे हम स्वराज्यके योग्य होनेकी आशा रख सकते है और तभी हमारी माँगें आदरके साथ सुनी जायेंगी। यदि काग्रेस सस्थाओका काम अच्छी तरह चलाना है तो कार्यसमितिकी तमाम सूचना-ओ और आदेशोका पालन सचाई और तत्परताके साथ होना चाहिए। कार्यसमितिने यह निश्चय किया है कि हर प्रान्तके कुल चन्देका कमसे-कम चौथाई हिस्सा स्वदेशी —अर्थात् हाथ-कताई और हाथ-बुनाईके काममे लगाना चाहिए। यदि हमे खादीकी माँग पूरी करनी है तो २५ लाख रुपये सारे भारतके लिए कोई बडी रकम नही है। सच तो यह है कि जो प्रान्त इस मदपर जितना ज्यादा खर्च करेगा, उसका काम उतना ही ज्यादा अच्छा होगा।

ईसाई और असहयोग

उत्तरी बसरासे एक हिन्दुस्तानी ईसाईने लिखा है

> "मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि आप हिन्दुस्तानी ईसाइयोको हिन्दुस्तानकी प्रजा नहीं समझते। मैने कई बार आपके 'यग इडिया' में देखा है कि आप मुसलमान, हिन्दू, सिख आदिका नाम तो लेते है, पर ईसाइयोका उल्लेख नहीं करते।
>
> आप विश्वास कीजिए कि हम हिन्दुस्तानी ईसाई भी हिन्दुस्तानकी प्रजा है और हिन्दुस्तानके हितके कामोमें बहुत रस लेते हैं।
>
> मै पूरे विश्वाससे कहता हूँ कि असहयोगकी प्रगतिमें हिन्दुस्तानी ईसा-इयोने जितनी दिलचस्पी ली है उतनी और किसीने नहीं। अपनी मातृभूमिके कल्याणके कामोके साथ मेरी बडी हमदर्दी है। मै खुद भी एक असहयोगी हूँ।
>
> मै वादा करता हूँ कि मै आपको कभी-कभी मेसोपोटेमियामें रहनेवाले हिन्दुस्तानियोकी हालतके बारेमें कुछ लिखता रहूँगा।"

मै इन पत्र भेजनेवाले महाशय तथा अन्य हिन्दुस्तानी ईसाइयोको विश्वास दिलाता हूँ कि असहयोगमे जातियो और पन्थोके लिहाजकी गुजाइश नही है। वह तो अपने दायरेमें सबको निमन्त्रित करता है और प्रवेश देता है। कितने ही हिन्दुस्तानी ईसा-इयोने तिलक स्वराज्य कोषमे चन्दा दिया है। कुछ प्रसिद्ध हिन्दुस्तानी ईसाई तो असह-योगकी सबके आगेकी कतारमे है। हिन्दुओ और मुसलमानोका जिक्र तो बार-बार इसलिए आता है कि आजतक वे लोग एक दूसरेको अपना दुश्मन समझते रहे है। इसी प्रकार जब-जब किसी जातिका उल्लेख खास तौरपर 'यग इडिया' मे हुआ है तब-तब उसके लिए वैसा कोई सबब रहा है।

मेरी महत्वाकाक्षा

शिमलाके एक आग्रही सज्जन मुझसे पूछते है कि क्या मेरी इच्छा कोई नया सम्प्रदाय स्थापित करनेकी या दैवी पुरुष होनेका दावा करनेकी है। मैंने उन्हे एक निजी पत्रमे उनके प्रश्नका उत्तर दे दिया था। लेकिन वे चाहते है कि भावी पीढियोका खयाल करके मै इस प्रश्नपर अपनी बात लोगोके सामने सार्वजनिक रूपसे भी कह दूं। मेरा खयाल था कि अपने दैवी पुरुष होनेकी बातका खण्डन मै काफी सख्त शब्दोमे कर चुका हूँ। हॉ, मै भारत और मनुष्य-जातिका एक नम्र सेवक होनेका दावा अवश्य करता हूँ और ऐसी सेवा करते हुए मरनेकी इच्छा रखता हूँ। सम्प्रदाय स्थापित करनेकी मेरी कतई कोई इच्छा नही है। सच पूछिए तो मेरी महत्वाकाक्षा इतनी बडी है कि वह सम्प्रदाय स्थापित करके और चन्द अनुयायी पाकर सन्तुष्ट नही हो सकती। कारण यह है कि मै किसी नये सत्यका प्रतिपादन नही कर रहा हूँ। मेरी कोशिश सत्यको जिस रूपमे मै जानता हूँ, उस रूपमे उसका अनुसरण करनेकी और उसे अपने जीवनमे उतारनेकी है। कई पुराने सत्योपर नया प्रकाश डालनेका दावा मै जरूर करता हूँ। मै आशा करता हूँ मेरे इस वक्तव्यसे मेरे प्रश्नकर्त्ता और उनके जैसे दूसरे लोगोका सन्तोष हो जायेगा।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २५–८–१९२१

७. न्यायका स्वांग

मै पहले एक अकमे[1] इस बातका उल्लेख कर चुका हूँ कि २५ जुलाईको कराची-मे लोकप्रिय धर्म-प्रचारक, समाज सुधारक और धरना-आन्दोलनके प्राण स्वामी कृष्णा-नन्दकी गिरफ्तारी, मुकदमेकी सुनवाई और एक सालकी सख्त कैद — तीनो बाते तीन घटेके अन्दर समाप्त कर दी जानेकी खबर पानेपर भीडने लज्जास्पद व्यवहार किया था। कचहरीके चारो ओर सैनिक तैनात थे और मुकदमा एक प्रकारसे बन्द कमरेमे किया गया था। स्वामीजी २० तारीखको गिरफ्तार हुए थे परन्तु एक घटेकी हवालातके बाद ही छोड दिये गये थे। गत पच्चीस तारीखको उसी अभियोगमे बिना चेतावनीके उन्हे फिर गिरफ्तार कर लिया गया। उनपर कर्त्तव्यपालनमे सलग्न एक कान्स्टेबलको मारनेका अभियोग लगाया गया। प्रोफेसर वासवानी[2], जो स्वामीजीके सम्पर्कमे थे और अदालतमे मौजूद थे, साक्षी देते है[3] कि स्वामीजीने सिपाहीको कदापि नही मारा बल्कि सिपाहीने ही उन्हे मारा और काफी मारा। कारण यह था कि वे एक मित्रके साथ बाते कर रहे थे, और उन्होने अपनी जगहसे हटनेसे इनकार किया था। भीडको

१ देखिए खण्ड २०, पृष्ठ ४८४।

२ टी० एल० वासवानी (१८७९–१९६६), सिन्धके एक सन्त पुरुष; लेखक, मीरा शिक्षण-सस्था, पूनाके सस्थापक।

३ प्राइसको लिखे अपने पत्रमें, देखिए परिशिष्ट १।

स्वामीजीकी निर्दोषितापर पूरा विश्वास था। और फिर उसने आवेशमें आकर वहाँसे गुजरनेवाले प्रत्येक यूरोपियनपर तथा यूरोपीय हैट पहने हुए यात्रीपर अपना गुस्सा उतारा। मार खानेवाले यूरोपीयोमे विधान-सभाके सदस्य श्री प्राइस भी थे। रोषका चाहे कितना भी बडा कारण रहा हो, स्वामीजीकी निर्दोषिता कितनी भी असदिग्ध रही हो, उनका पद चाहे जो-कुछ भी रहा हो, भीडको क्रोधित कदापि न होना चाहिए था। जबतक हम बडेसे-बडा कारण होते हुए भी क्रोधको वशमें रखनेमे समर्थ न हो तबतक विजय असम्भव है। गोलियोंकी वर्षाके बीच शान्ति रखना सैनिकका अनिवार्य गुण है। यदि असहयोगी बडीसे-बडी उकसाहटके बीच भी शान्त न रह सके तो वह किस कामका? हमें अपनी चुनी हुई शैय्यापर ही सोना होगा। हमें सरकारसे हर परिस्थितिमें शान्त रहनेकी अपेक्षा न करनी चाहिए। हमारे समान उसके भी अपने सिद्धान्त हैं। वह एक हदतक ही शान्त रह सकती है। जबतक हम खिलवाड करते दिखेंगे, तबतक वह खामोशी अख्तियार किये रहेगी। ज्योही ऐसा मालूम होगा कि हम सचमुच कुछ करने जा रहे हैं उसी क्षण दमन शुरू कर देना उसकी दृढ नीति है। स्वामीजी और उनके अनुयायी अपनी निष्ठामे गम्भीर थे इसलिए सरकारने वार किया। यही हमारी परीक्षाका अवसर था और हम उसमें असफल हुए। यह कहना कि प्रोफेसर वासवानी और उनके कमठ कार्यकर्ताओंने भीडका क्रोध रोकनेका प्रयत्न किया और कुछ हदतक सफल भी हुए और अधिक भीषण घटनाएँ घटित होनेसे रोक सके, सच तो है परन्तु है असगत। जिस बातपर हमें ध्यान देना चाहिए वह यह है कि भीडका आत्म-नियन्त्रण टूटा ही क्यों? लोगोका वहाँ इकट्ठा होना कोई जरूरी न था। इकट्ठा होनेपर उसे पूरे समय शान्त और स्थिर रहना चाहिए था। भीडका अधिकार तो यह था कि वह अपना क्रोध विदेशी कपडोको त्यागकर घरोमे कपडे बुनने और शराबकी दूकानोपर धरना देनेका निश्चय करके उतारती। सरकारपर साघातिक वार वही होता। वस्तुत हुआ ऐसा कि उसके निष्फल रोषके फलस्वरूप उस आन्दोलनकी ही, जिसके पक्षमें वे प्रत्यक्षत काम कर रहे थे, भारी क्षति हुई।

ठीक-ठीक रूपसे समझ लिया जाये कि जबतक भीड अनुशासित सैनिकोंके समान व्यवहार करना न सीखे, सविनय अवज्ञा असम्भव है। और हम सविनय अवज्ञाके मार्गको तबतक अपना नही सकते जबतक हम प्रत्येक अग्रेजको इस बातका विश्वास दिला न सकें कि वह भारतमे भी अपने घरके समान ही सुरक्षित है। कोरा आश्वासन देना काफी नही है। प्रत्येक अग्रेज स्त्री और पुरुषको यह लगना भी चाहिए कि उसकी सुरक्षाको कोई भय नही है और उसका कारण उनकी सगीनोका बल नही बल्कि हमारा जीवित सिद्धान्त है। यह शर्त सफलताके लिए ही लागू नही है बल्कि वर्तमान रूपमें आन्दोलन चलानेकी हमारी क्षमताकी भी यही शर्त है। असहयोग सघर्ष चलानेका और कोई दूसरा तरीका नही है।

हम स्वामीजीके विदाईके सन्देशको ध्यानमे रखे "मद्यपानके विरुद्ध आन्दोलन जारी रखा जाये और भगियोकी मदद की जाये।" इससे और अच्छा सन्देश हो ही नही सकता था। यदि हम मद्य-निषेध कर सके और भगीको अपने स्तरसे — यद्यपि वह स्तर नीचा है — उठा सके, तो हम स्वराज्यके बहुत निकट आ जाते हैं।

निस्सन्देह सिन्धका अधिकारी-वर्ग अपनी बुद्धि खो बैठा है। मै उनके द्वारा की गई ऐसी घोषणाएँ देखता हूँ जिनमे लोगोको जहाँ और जैसे उनकी इच्छा हो घूमनेकी तथा छडीके अलावा और कुछ लेकर चलनेकी मनाही है।

यूरोपीय भी आत्मसयम खो बैठे है। मुझे इसपर आश्चर्य नही। वहुतोके बीचमे वे मुट्ठीभर है। प्रोफेसर वासवानीने दुर्घटनापर शोक प्रकट करते हुए श्री प्राइसको उच्च भावनाओसे पूरित पत्र भेजा है। वे श्री प्राइससे परिचित थे। श्री प्राइसने उसका रोषपूर्ण उत्तर भेजा। प्रो० वासवानीने फिर पत्र लिखा। श्री प्राइस फिर भी नाराज हुए। मै अन्यत्र इनके रोचक पत्रव्यवहारमे से दो विशिष्ट पत्र छाप रहा हूँ——एक श्री प्राइसका, उनका सबसे बुरा पत्र नही, और एक प्रो० वासवानीका, शान्त और गाम्भीर्यपूर्ण। दूसरा पत्र असहयोगीकी स्थितिके स्पष्टीकरणके रूपमे भी बहुमूल्य है।

'न्यायके' इस 'स्वाग' से जैसा कि प्रो० वासवानीने इसे कहा है और उसके बादकी घटनाओसे हमे यही नसीहत लेनी है कि जैसे-जैसे असहयोगकी तेजी बढती जायेगी और सालका अन्त समीप आता जायेगा तैसे-तैसे हमे न्यायके साथ खिलवाडके ऐसे अनेक अवसरोके लिए तैयार रहना चाहिए, और निर्दोष व्यक्तियोकी गिरफ्तारीको विना क्रोध किये और बिना बदला लिए सहन करनेके लिये भी तैयार रहना चाहिए, और यदि हम ऐसा नही करते है तो फिर हमे उस विफलताके लिए तैयार रहना चाहिए जिसके कि उस हालतमे हम पात्र होगे। जब हम अपने ध्येयकी प्राप्तिके इतने निकट पहुँच चुके है तब जनसमुदायोको वशमे रखनेकी असमर्थताके कारण हमे उससे पीछे हटना पडे——यह कैसी करुणाजनक स्थिति होगी।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-८-१९२१

८. चिरला-पेरला

चिरला-पेरला सच पूछो तो एक गाँव ही है। यह समुद्रके पास ही बसा है, इसकी जलवायु बहुत अच्छी है। कोई १५०००की घनी आबादी है। यह आन्ध्र प्रदेशमे है, और श्री० गोपाल कृष्णय्या नामके एक बहुत बुद्धिमान और स्वार्थत्यागी नेता उसमे रहते है। अपने अध्यवसाय और त्यागके बलपर उन्होने वहाँके लोगोको बिना दिक्कतके एकताके सूत्रमे बाँध रखा है। वहाँका नागरिक शासन अब भारतीय मत्रीके अधीन है। उसने पिछले सालसे वहाँके बहादुर लोगोपर रौब जमाना शुरू किया है। उनपर एक बेजा और कष्टकर व्यापारिक अनुमति-पत्र लेनेकी बाध्यता लादी गई। पर लोगोने इसका उत्तर अनुमति-पत्र लिए बिना ही अपना व्यापार जारी रखकर दिया। फल यह हुआ कि मुखालिफत करनेवाले लोगोपर मामला चला और सजाएँ हुई। उनमे एक बूढी स्त्रीको भी जेल जाना पडा। सरकार वहाँ लोगोपर नई नगरपालिकाका बोझ लादनेकी कोशिश कर रही है। लोगोने इसका विरोध किया है। परन्तु जिस मन्त्रीने, लोकमतका अत्यन्त विरोध होते हुए भी मन्त्रित्वका पद ग्रहण किया हो वह इसके

सिवा और कर ही क्या सकता है कि लोगोपर अपने निर्णय लादनेकी कोशिश करे और यह दिखाये कि मुझे उनके मतकी जरा भी परवाह नही है।

अच्छा, अब हम यह देखे कि इस नगरपालिकासे जनताका कितना हित साधन हुआ। गाँव पहलेकी अपेक्षा ज्यादा साफ-सुथरा हुआ है, यह तो कहा ही नही जा सकता, क्योकि लोगोने खुद ही उस स्थानको असाधारण रूपमे अच्छी हालतमे बना रखा है। अधिक शिक्षा-प्रचार भी नही हुआ, क्योकि वहाँके लोग तो असहयोगी है। एक ही बात हुई कि और भी ज्यादा कर बैठाये गये और लोगोकी स्वतन्त्रतामे और भी ज्यादा दस्तदाजी की गई। यह बुराई लोगोके लिए असह्य थी।

अतएव, उन लोगोने निश्चय किया कि हम लोग नगरपालिकाकी हदको छोडकर उसके बाहर पास ही खुली जगहमे जा बसेगे। उन्होने वहाँ झोपडियाँ बनाई और पिछली मईके आसपास चिरला-पेरला खाली करके लोग उनमे रहने चले गये। मन्त्रीने बेधडक होकर मालगुजारीके महकमेकी मदद ली और उस महकमेकी ओरसे यह कारण बताते हुए उनपर कर बिठा दिया गया कि तुम लोगोने सरकारी बजर जमीनपर अपने छप्पर डाले है। हर छप्परपर रु० १०–२–६के हिसाबसे कर बैठाया गया है, यद्यपि उनमें से प्रत्येककी कीमत कुल मिलाकर २५) ही है। कर अदा न करनेकी हालतमे रहनेवालोको अपनी झोपडियाँ खाली कर देनी होगी।

इस दमनके आरम्भका वर्णन आन्ध्र प्रान्तीय काग्रेस कमेटीने इस प्रकार किया है —

"चिरला-पेरलाके दमनके "सम्मान-पत्रक"में वृद्धि हो रही है। नगरपालिका टैक्स देनेसे इनकार करनेके कारण १२ पुरुष और १ स्त्री तो पहले ही सजा काटकर बाहर आ चुके है। अब उसी सम्बन्धमें ३ पुरुष राजमहेन्द्रीकी सेन्ट्रल जेलमें सख्त सजा भोग रहे है और छ आदमी कारावासके हुक्मकी बाट जोह रहे है। अनोखी बात तो यह है कि कैदकी सजा इन छ आदमियोको एक माह पहले सुनाई गई थी पर रोक रखी गई। हमारे सुननेमें ऐसी कोई घटना नहीं आई जिसमें कि लोगोको सजा तो ठोक दी जाये परन्तु जमानत तक तलब न करके उनसे चुपचाप कह दिया जाये कि घर जाओ और हुक्मका इन्तजार करो। चिरला-पेरलामें और भी कितने ही लोग जेलोको भर देनेके लिए तैयार बैठे है। सघर्ष प्रशसनीय वीरता और दृढताके साथ चलाया जा रहा है। यद्यपि गाँवोके खाली कराये जानेसे कारोबार अस्तव्यस्त हुआ है और अधिक गरीब लोगोकी आजीविका समाप्त हो जानेके फलस्वरूप बहुत बडी कठिनाई उत्पन्न हुई है।

सजायाफ्ता लोगोकी जायदाद जब्त कर ली गई है और बपतला तथा गन्टूरमें कई बार नीलामपर चढाई गई थी ताकि उसे बेचकर जुर्मानेकी रकम वसूल कर ली जाये। परन्तु इन दोनो स्थानोमें से किसीमें भी किसीने बोली नहीं लगाई। चिरला-पेरलाके कष्ट-सहनके कारण उनके प्रति लोगोकी जो सहानुभूति आमतौरपर देखनेमें आ रही है उसका यह एक उज्ज्वल प्रमाण है।"

इस प्रकार हमारे सामने यह ठोस उदाहरण मौजूद हे जिससे सुधारो और उत्तरदायित्वका सही रूप प्रकट हो जाता हे। मुझे इसमे सन्देह नही कि मन्त्री महाशय जो कुछ करते हैं वह इसी विश्वाससे करते हैं कि इसमे लोगोका हित है। जब-जब अग्रेज अधिकारियोने जबरदस्ती कुछ भी, यहाँतक कि रोलट ऐक्ट भी, हमपर लादा, तब-तब उन्होने क्या उसका समर्थन यही कहकर नही करना चाहा कि यह तो प्रजाके कल्याणके लिए ही है। असहयोगका सघर्ष अन्य बातोके सिवा, आश्रयदानकी भावनाके विरुद्ध भी हे। हम कुछ अच्छा करना सीखे उसके पूर्व हमे इस बातकी स्वाधीनता जरूर होनी चाहिए कि हम अपने प्रयत्नसे जो चाहे सो करे फिर वह बुरा भी क्यो न हो। "स्वाधीनता" भी हमपर "जबरदस्ती" न लादी जाये। जनसत्ताकी भावना तो यही चाहती है कि मन्त्री या तो लोकमतके आगे सिर झुका दे या इस्तीफा पेश कर दे। सब प्रकारसे दोष रहित सुधार-कार्योंमे भी उसे प्रबुद्ध जनमतको धैर्यपूर्वक अपने साथ लेकर चलना चाहिए।

चिरला-पेरलाके बहादुर लोगोने सरकारसे कह दिया है कि वह उससे जो बने सो कर ले, वे उसके दमनके आगे नही झुकेगे और नगरपालिका गठित करनेसे इनकार कर दिया है। उन्हे ऐसा करनेकी आवश्यकता नही थी। वे "स्वराज्य" तक इसका इन्तजार कर सकते थे। परन्तु उन्होने इसके विपरीत करना अच्छा समझा। इसकी जबाबदेही पूर्णत उन्हींपर है। अब वे किसी भी हालतमे अपनी टेक न छोडे। उत्तेजना और सनसनीकी हालतमे रोषको पास फटकने न दे। वे सरकारको बडी खुशीके साथ वह जो चाहे, इसकी सजा देने दे। अपने इस नम्र परन्तु अटल कष्टसहनकी बदौलत वे स्वय अपनेको तथा भारत-माताको गौरवसे भूषित करेगे एव देशको अहिसा और शान्तिका पदार्थ-पाठ पढायेगे।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २५-८-१९२१

९. पत्र: मणिबहन पटेलको

डिब्रूगढ, [असम]
२५ अगस्त, १९२१

चि० मणि[1],

तुम्हारा पिछला पत्र मै अपने साथ लिये घूमता रहा हूँ। काका विट्ठलभाईको समझाना बडा मुश्किल काम मानता हूँ। अपनी इस उम्रमे और एक प्रकारकी लडाईमे[2] फतह पानेकी मान्यता बन जानेके बाद अब उन्हे नये प्रकारको ग्रहण करना कठिन मालूम होता हे। हम धीरज रखकर उनका मतभेद सहन करके अपने रास्ते चलते रहे, इसके सिवा और कोई उपाय मुझे दिखाई नही पडता।

१ वल्लभभाई पटेलकी पुत्री।

२ विधान-सभाकी सदस्यताके लिए।

वहाँ बहिष्कारका[1] और खादी-उत्पादनका काम जोरोंसे हो रहा होगा।

असम एक नया ही देश लगता है। यहाँका जानने लायक भाग 'नवजीवन'[2] में दे चुका हूँ। इसलिए यहाँ नहीं लिख रहा हूँ। भाई इन्दुलालके[3] साथ मैंने बात कर ली है। कुमुदबेनके[4] साथ मैं जी-भरकर बातें करना चाहता हूँ और उन्हें शान्ति देनेका प्रयत्न करना चाहता हूँ। इसका आधार उनकी इच्छा और मेरी फुरसतपर रहेगा। मैं उधर अक्तूबर माससे पहले आ सकूँगा, ऐसा नहीं लगता। तुम दोनों भाई-बहन[5] बापूको[6] खूब मदद करते होगे। उनपर बहुत बोझा आ पड़ा है। परन्तु प्रभुकी इच्छा होगी तो वे उसे उठा लेंगे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च] मेरे प्रवासका कार्यक्रम ३१ से ३ तक चटगाँव और बारीसाल, ४ से १२ तक कलकत्ता।

बहन मणिगौरी,
द्वारा श्री वल्लभभाई झवेरभाई पटेल[7], बार-एट-लॉ
भद्र, अहमदाबाद।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ मणिबहेन पटेलने

१०. भाषण : डिब्रूगढ़में

[२५ अगस्त, १९२१][8]

भाइयो,

आज असममें हमारी आखिरी रात है। कल हम असम छोड़कर चटगाँव चले जायेंगे। असमसे जो कुछ कहना था सो हम लोगोंने अबतक कह दिया है। और, इससे पहले कि मैं अब और कुछ कहूँ, आपसे यह जानना चाहता हूँ कि चायके बागीचोंमें काम करनेवाले मजदूरोंमें से कितने लोग यहाँ आये हैं। यदि मेरी आवाज

१ विदेशी कपड़ेका।

२ देखिए "असमके अनुभव–१", ४–९–१९२१ तथा "असमके अनुभव–२", ११–९–१९२१।

३ इन्दुलाल याज्ञिक, एक सक्रिय राजनैतिक कार्यकर्ता, गांधीजीने इन्हींसे नवजीवन लेकर उसे साप्ताहिक रूप दिया था।

४ इन्दुलाल याज्ञिककी पत्नी।

५ डाह्याभाई पटेल।

६ व ७ वल्लभभाई पटेल (१८७५–१९५०), गुजरातके प्रमुख नेता, भारतके प्रथम उप प्रधान मन्त्री।

८ गांधीजी इस दिन डिब्रूगढ़में थे, देखिए "पत्र : महादेव देसाईको", २३–८–१९२१।

आप लोगोतक पहुँचती है तो जो मजदूर लोग यहाँपर आये हो वे अपना हाथ ऊँचा उठा दे। मै देखता हूँ कि इस जलसेमे बहुत कम मजदूर आये है।

मुझे उम्मीद थी कि यहाँपर मजदूर भाइयोसे भी मेरी मुलाकात हो जायेगी। मैने अपनी जिन्दगीके कमसे-कम बीस साल आफ्रिकामे मजदूरोके साथ बिताये है। हिन्दुस्तानमे भी मै जहाँ-जहाँ जाता हूँ, मजदूरोकी जानकारी रखता हूँ। असममे मजदूरोकी हालत कैसी है, यह मै नही जानता। बागान-मालिकोके प्रतिनिधियोसे कल मै बातचीत कर लूंगा। परन्तु मै उम्मीद करता था कि उसके पहले मै अपने मजदूर भाइयोसे भी बाते कर लूं। मै जिस कामके लिए इस तरफ आया हूँ उसने मेरा इतना वक्त ले लिया कि मै बागीचोमे जाकर मजदूर भाइयोसे बातचीत न कर सका। इस बातका मेरे मनमे अफसोस ही रह जायेगा। परन्तु इस अफसोसके साथ असमको छोडते हुए भी मै इस खयालसे धैर्य रखे हूँ कि जिस कार्यको मैने हाथमे लिया है उसमे यदि ईश्वर सफलता दे दे तो फिर मजदूरोके पास जाना ही न पडे। हिन्दुस्तानके लोगोका दु ख मिट जाना चाहिए अन्यथा स्वराज्यके कोई मानी नही है। एक छोटेसे छोटा मजदूर या चायके बागीचेमे काम करनेवाली बालिका, काश्मीरसे लेकर कन्याकुमारीतक, आजादीके साथ घूम-फिर सके और एक भी बदमाश उसे तकलीफ न दे सके, ऐसा स्वराज्य जबतक न होगा तबतक वह "स्वराज्य" हो ही नही सकता। यह जो लडाई शुरू है इसका कारण यही है कि अग्रेजी राजसे हिन्दुस्तानका भला नही हुआ है। अब मै छोटी-छोटी बातोमे नही फॅस सकता। मै कुछ दिनोतक ऐसा समझता था कि मुहब्बतके साथ सब-कुछ अच्छा हो जायेगा। परन्तु पजाबके अनुभवसे और मुसलमानोके साथ इन्साफके नामपर जो अत्याचार किया गया है उससे मै समझ गया कि ऐसा अन्याय दूसरी सल्तनतमे नही हो सकता। और तभीसे मै इस सल्तनतको "शैतानी" सल्तनत कहने लगा।

अगर हम शैतानियतको मिटाना चाहते है, यदि मजदूरोके दु खोको कम करना चाहते है और औरतोपर होनेवाले अत्याचारोको नष्ट करना चाहते है तो कोई शक्ति ऐसी नही है जो हमे रोक सके।

यदि हमारा ईश्वरपर विश्वास कम न हो जाता तो हिन्दुस्तानमे कगाली न छा जाती।

हमारा सघर्ष दुश्मनीका नही है। इतना अवश्य है कि हम किसीकी सरदारी कुबूल करना नही चाहते। **ईश्वरके सिवा और किसीको हम अपना सरदार नही समझते।** यही स्वराज्यके मानी है। जिस सल्तनतमे झूठका बोलबाला है, अत्याचार किये जाते है, झूठे खरीते भेजे जाते है, उससे मुहब्बत करना हराम समझना चाहिए। इसलिए हम इस सरकारकी अदालतोसे न्याय नही चाहते, उसके मदरसोमे लडके नही पढाना चाहते और इसीको हम तर्के मवालात — असहयोग-कहते है। हम किसीको दगा-फिसादके लिए नही कहते। हम ईश्वरका नाम लेकर, शान्तिपूर्वक स्वराज्य प्राप्तकर सकते है, और मुसलमानोके घावोको सुखा सकते है।

'आत्मशुद्धि' क्या चीज है, यह हमको अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। आप शराब, गाजा, अफीम और वेश्यागमन छोड दे। मै मजदूरोकी आदतोसे खूब वाकिफ

हैं। आपको जो अठन्नी रुपया महीना मिलता है, उससे आप सुख और चैनसे नहीं रह सकते। आप जो शराब पीते हैं सो दुःखको भूल जानेके लिए पीते हैं। परन्तु दुःख मिटानेका सीधा-सा उपाय तो यह है कि आप दुःखको सहन करें, यदि गैर-इन्साफसे सरकार कोई आपको सजा दे तो उसको खुशीसे स्वीकार करें। हिन्दुस्तानने इस उसूलको अभी अच्छी तरह नहीं समझा है। जब मैं यह समझ लूंगा कि हिन्दुस्तानको इसका पूरा इल्म हो गया है, बस उसी दिन हिन्दुस्तान स्वतन्त्र हो जाता है। आज हिन्दुस्तानमें इतना सविनय-भंग शान्तिपूर्वक करनेकी ताकत नहीं है। मुझे आशा है कि वह ताकत अक्तूबरके पहले आ जायेगी। परन्तु यह ताकत शराब पीनेसे, वेश्यागमन करनेसे नहीं आ सकती। इसलिए शराब पीना छोड दो, वेश्यागमन छोड दो। इसमें बड़ा खतरा भरा है। आप यदि किसी गन्दी चीजसे सम्बन्ध रखना नहीं चाहते तो पहले आप खुद शुद्ध हो जाइए।

हमको पता नहीं है कि हमारा देश शराब और अफीम पीनेकी अपेक्षा विदेशी व्यापारसे कितना अधिक गिर गया है। हमने विदेशी व्यापारकी गन्दगी और पापकी ओर नजर नहीं फेरी। मेरे प्यारे भाई एन्ड्रयूज साहब[1] भी मुझसे पूछते हैं कि तुम्हारे इतने गरीब होते हुए भी आप विलायती कपड़ा क्यों जलाते हैं? हमें पता नहीं कि परदेशी कपड़ा पहनना कितना गुनाह है। आत्मशुद्धिके लिए, और दुनियाको आत्मशुद्धिकी पहचान करानेके लिए, विदेशी कपड़ा छोड देना चाहिए। हिन्दुस्तान यदि इतना कर सके तो अक्तूबरतक वह आजाद हो सकता है।

डिब्रूगढके मारवाड़ी भाइयोंसे मैं नम्रतापूर्वक कहना चाहता हूँ कि आप यदि जनताकी सेवा करना चाहते हैं, यदि धर्मकी सेवा करना चाहते हैं — और मैं जानता हूँ कि आपमें धर्मकी सेवाका ज्ञान है और धर्मके लिए प्रेम भी है — तो आप विदेशी कपड़ेका व्यवहार छोड दें।

मुझे दुःख है कि आजकी इस आखिरी रातको डिब्रूगढमें परदेशी कपडा जलानेका पवित्र काम करनेकी कोई तजवीज नहीं की गई। दुःखकी बात है कि डिब्रूगढ इतना भी यज्ञ नहीं कर सकता। क्या आप लोग मैलको भी जलानेसे डरते हैं?

आप यदि मजदूरोंके दुःखको मिटाना चाहते हैं, स्त्रियोंकी पवित्रता और हिन्दुस्तानकी प्राचीन सभ्यताकी रक्षा करना चाहते हैं तो विदेशी कपडा जला दीजिए। इतनी दूर-दूरसे मजदूर लोगोंको यहांपर क्यों आना पडता है? इसका कारण मैं यही समझता हूँ कि उन्होंने चरखा छोड दिया है। किसानोंने भी चरखा छोड दिया है। उधर खेतीमें काफी पैदायश नहीं होती। इसलिए १० लाख लोग असममें बाहरसे आये हैं। यह हमारे पापकी निशानी है।

"परमेश्वर हमको विदेशी कपडेका त्याग करनेकी और हमारी स्त्रियोंकी लाज बचानेकी शक्ति दे", ऐसी प्रार्थना करता हुआ मैं अपना भाषण खत्म करता हूँ।

हिन्दी नवजीवन, ९–९–१९२१

१ सी० एफ० एन्ड्रयूज (१८७१–१९४०), अंग्रेज धर्मप्रचारक जिनकी मानवतापूर्ण सेवाओंके कारण भारतवासी उन्हें "दीनबन्धु" के नामसे पुकारने लगे।

११. पत्र : महादेव देसाईको

सिलचरके रास्तेपर
शनिवार [२७ अगस्त, १९२१][1]

भाईश्री महादेव,

काग्रेस द्वारा वताई गई असमकी हृदको आज छोडकर हम अव सुरमा घाटीमे प्रवेश कर रहे हैं। दृश्यावली भी वदल गई है। ब्रह्मपुत्रकी यात्रामें हमने तुम्हे काफी याद किया। लेकिन क्या हम अपने मनचाहे भोजनको हमेशा प्राप्त कर सकते हैं, या खा ही सकते है ? तुम्हारी ओरसे कोई भी पत्र नही मिला है। वस्तुत गोहाटी छोडनेके वाद हमे डाक मिली ही नही और ऐसी आगका है कि अभी कलकत्ता पहुँचनेसे पहले मिलेगी भी नही। वहाँ तो मुश्किलसे चार तारीखतक ही पहुँचेगे। अन्नपूर्णादेवीका पता है. चतापारु, एलौर, मद्रास प्रान्त।

एस्थर फैरिंगका[2] पता याद हो तो लिख भेजना।

तुम्हारे स्वास्थ्यके वारेमे समाचार जाननेको आतुर हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४१२) की फोटो-नकलसे।

१२. तार : सरदार वल्लभभाई पटेलको

सिलहट
आसाम
३० अगस्त, १९२१

इष्ट दिन[3] समीप आ रहा है। गुजरातमे उस दिन हडताल कराये। मजदूरोको चाहिए कि वे अनुमति लेकर शरीक हो। वुधवार और वृहस्पतिवारको चटगाँव रहूँगा। शनिवारको वारीसालमे। इतवारको व उसके वाद कलकत्ता।

[अग्रेजीसे]

वापुना पत्रो–२ सरदार वल्लभभाईने

१ देखिए "पत्र : महादेव देसाईको", २२–८–१९२१।

२ एक डेनिश मिशनरी जो १९१६ में भारत आई थीं और वादमें कुछ समयतक सावरमती आश्रममें रहीं, गाधीजी उनके साथ पुत्रीका-सा व्यवहार करते थे।

३. प्रिंस ऑफ वेल्सके भारत-आगमनका दिन।

१४. भाषण: चटगाँवमे, रेल कर्मचारियोंके समक्ष

३१ अगस्त, १९२१

(असम-बगाल रेलवेमे जो हडताल हुई थी वह कर्मचारियोने अपना कोई स्वार्थ साधनेके खयालसे नही की थी। बल्कि चाँदपुरमे चायबागानोसे निकल कर आये हुए मजदूरोपर जो अत्याचार किये गये, उनका परिमार्जन करानेके लिए की थी। सरकारने चायबागानके मजदूरोको चाँदपुर स्टेशनसे मार-मार कर निकाल दिया और उनको उनके घर भेजनेसे इनकार कर दिया। इससे रेलवेके कर्मचारियोको बहुत दुख हुआ। बागानके मजदूरोसे कर्मचारियोका कोई सम्बन्ध नही था। मजदूर बिहार आदि प्रान्तोके है और रेल कर्मचारी प्राय बगालके है। अर्थात् इस हडतालमे रेल कर्मचारियोका कोई स्वार्थ नही था। इन हडतालियोसे मै चटगाँवमे मिला, वहाँ मैने उनको यह बताया कि उन्हे क्या करना चाहिए। वह भाषण लिखा लिया गया था। इस भाषण-मे मैने जो विचार प्रकट किये थे वे बहुत-कुछ उपयोगी है, इस कारण, यद्यपि रिपोर्ट पूरी नही है और उसमे मै कोई सुधार या काट-छाँट भी नही कर सका हूँ, फिर भी मै उसे पठनीय समझकर यहाँ देता हूँ।

मोहनदास करमचन्द गाधी)

आप भाइयोने मुझे जो मानपत्र दिया है, उसके लिए मै आप सबका आभार मानता हूँ। किन्तु शिष्टाचारकी भाषाका उपयोग करके आपका अधिक समय लेना नही चाहता।

आपने हडताल की, और इतने दिनोतक जारी रखी, यह आपने उचित किया या अनुचित किया, इस सम्बन्धमे मै गहराईसे विवेचन न करूँगा, क्योकि इसकी मुझे पूरी जानकारी नही है। यहाँ आनेपर कल जितना सुना है उतना ही मै जानता हूँ। उतनेसे मै इस सम्बन्धमे आपको अपना मत नही दे सकता। असम-बगाल रेलवेकी हडतालके सम्बन्धमे 'यग इडिया' मे मैने एक बार चर्चा की है। उसका उल्लेख किसी नेताने आपसे किया ही होगा। किन्तु मैने उसमे भी अपना कोई मत प्रकट नही किया है, क्योकि मेरे पास इतनी सामग्री न थी कि मै कोई मत दे सकता। मै यह नही जानता था कि आपकी हालत कैसी है, आपके अभियोग क्या है। मै यह भी न जानता था कि आपको हडताल करनेका उचित कारण मिला है या नही और यह बात मै अभीतक नही जानता। फिर भी मै यह देखता हूँ कि आपने जो हडताल की है वह दूसरी हडतालोकी तरह स्वार्थके कारण नही की गई है। आपने अपने वेतनोमे वृद्धि करानेके लिए हडताल नही की है, बल्कि परहितार्थ हडताल की है। चाँदपुरमे जो अत्याचार किया गया और यहाँ आपके भाइयोको जो कष्ट उठाने पडे उसमे उनके प्रति अपनी सहानुभूति दिखानेके लिए आपने यह हडताल की है। मुझे यह बात सूझी ही नही थी कि भारतके मजदूरोमे दूसरोके कष्ट निवारणार्थ हडताल करनेकी

शांति आ गई है। सब मजदूरोंकी स्थिति ऐसी नही है, फिर भी आपने तो यह हड़ताल अपने भाइयोंके दुःखोंके निवारणार्थ ही की है, यह मुझे बताया गया है।

और यदि आपने उनके दुःखोंके निवारणार्थ ही हडताल की हो तो जबतक इनके कष्ट निवृत्त न हों, जबतक उन लोगोंको न्याय न मिले, तबतक आपमें से एक भी मनुष्य कामपर लौट कर न जाये, यह आपका कर्त्तव्य है।

इन लोगोंके कष्ट दूर हो गये यह कब समझा जायेगा? चांदपुरमें किये गये अत्याचारका परिमार्जन हो गया, यह कब माना जायेगा? जब सरकार पश्चात्ताप करे तब, मजदूरोंको जो मारा-पीटा गया, उसके लिए वह माफी मांगे और बागान-मालिकोंके दबावमें आकर उसने मजदूरोंको जो रेलभाड़ा नही दिया है वह उन्हे दे दे, तब। जिन कमिश्नरने इन हारे-थके गरीब स्त्री-पुरुषों और उनके बाल-बच्चोंको आधी रातके समय स्टेशनके मुसाफिर खानेमें निकाल देनेका भयकर आदेश गोरखा सैनिकोंको दिया वह भारतमें ही पैदा हुआ हमारी ही जातिका आदमी है। उसे लज्जित होना चाहिए और स्वयं ही माफी मांगनी चाहिए।

जब इतना हो जाये तब आप फिर कामपर वापस जा सकते हैं। सरकार इतना कर दे, फिर रेल्वे कम्पनी आपको बिना नोटिस हडताल करनेपर पिछले दिनोंका वेतन न दे, तो वह सहन किया जा सकता है। वह आपकी नौकरी नई नौकरी समझे और आपको कहे कि "ज्यों-ज्यों जगहे खाली होती जायेंगी त्यों-त्यों आपको लेते जायेंगे", और आपसे नई शर्तें भी करा ले — यह सब सहा जा सकता है, किन्तु यह सब तभी हो सकता है जब सरकार एक बार झुक जाये। जबतक वह नही झुकती तबतक आपको चाहे जितना रुपया दिया जाये, आपको चाहे कितना ही समझाया जाये, आप कामपर वापस नहीं जा सकते।

इस हड़तालमें आपको कांग्रेसकी ओरसे रुपया नही दिया जाये या नेता लोग आपका साथ छोड़कर खिसक जायें तब भी आपको दीन नही बनना चाहिए। जिस मनुष्यके हाथ-पांव काम देते हैं, उसके लिए दीन बननेकी क्या बात है? उसे तो किसीका तनिक भी आश्रित हुए बिना स्वावलम्बी ही रहना चाहिए। क्या मैं और क्या कांग्रेस — कोई भी क्यों न हो, यदि तुम्हारे नेता हडताल करानेके बाद तुम्हारा साथ छोड़कर खिसक जायें तो भी आपको अडिग ही रहना चाहिए। कल आपको जो नोटिस दिया गया है, वह मैंने पढा है। उसमें यह लिखा है

> "आपमें से अनेक लोग कामपर वापस आ गये हैं। आप भी जल्दी कामपर लौट आये। हम आपकी भलाईके लिए ही यह कहते हैं। कुछ गैर-जिम्मेदार लोगोंने आपसे हड़ताल करवा दी और अब वे आपके पाससे खिसक गये हैं। आप उनके बहकानेसे गुमराह न हों। यदि आप कामपर लौटनेमें विलम्ब करेंगे तो आपकी नौकरी भी चली जायेगी।"

आपको इस नोटिससे घबरानेकी जरूरत कतई नही है। आपको नौकरीपर नही जाना है। जो लोग चले गये हैं, उन्हे जाने दें, उन्होंने यह काम अनुचित किया है। अब आप अपनी नाक रखें।

482

युग निरन्तर बदलता रहता है। यह युग बुनकरोका युग हे। यदि आप इस धन्धेको अपना ले तो आप अपने पैरोपर खडे रह सकते है। यह न समझे कि यह काम करनेसे काम न चलेगा। आज बुनकर तो दुगुनी मजूरी कमा सकते है। फिर आपमे से जिनको अपने घर जाना हो वे जाये, आपका किराया पूरा कर दिया जायेगा। आप वहाँ जानेके वाद अपनी छोटीसी जमीनमे खेती करे और साथ ही चरखा चलाये। इसके अतिरिक्त आप अपने गाँवमे अपनी पसन्दका कोई और काम भी करे और स्वावलम्बी बने। यदि आप सव लोग चटगाँववासी ही हो तो आप यहीपर ऊपर बताये गये अनुसार खेती और बुनाईका धन्धा करे। और इस प्रकार चटगाँवको भारतकी नाक बनाएँ। ऐसा करना कोई कठिन काम भी नही है। ईश्वर बहुत ही दयालु और न्यायकारी है। सूत कातना तीन दिनमे सीखा जा सकता है। रुई पीजनेकी क्रिया भी सुगम है। और मनुष्य कपडा बुननेका काम नियमित रूपसे सीखनेपर एक महीनेमे सीख लेता है। हाँ, यह जरूर है कि रेल विभागके कर्मचारियोको रिश्वत लेने और चोरी करनेकी लत पड जाती है। यदि आप मेहनत किये विना अपना पेट भरना चाहेगे तो आप अवश्य ही दूसरे दिन मुझे यह लिखेगे कि "हमसे बुनाईका काम नही होता।" किन्तु यदि आप मेहनत करेगे, दिनमे बारह घटे काम करेगे तो आप मुझे एक महीनेमे ही यह अवश्य लिख देगे कि "आपने हमे जो उपाय सुझाया है, उससे हम स्वावलम्बी वन गये है। अव हमे ईश्वरके सिवा अन्य किसीकी परवाह नही है।" और वारह घटे काम करना कोई कठिन वात नही है। मै बूढा हो गया हूँ, अव मुझमे कोई शक्ति नही रही है, फिर भी वारह घटे काम कर सकता हूँ। तव आप जवान लोग क्यो नही कर सकते? यदि आप मेहनत करेगे, विचारपूर्वक जीवन वितायेंगे, तो आप ईश्वरको पहचान जायेगे। क्योकि जिस मनुष्यका चरित्र अच्छा नही है, जो शराव पीता है ओर जो व्यभिचार करता है वह बारह घटे काम कर ही नही सकता। आप काग्रेससे गुजारेके लिए पैसा नही माँग सकते, आपने हडताल की है तो आप उससे चरखा माँग सकते है। आप अपनी रोटी चरखा चलाकर कमा सकते है। आप चरखेका सहारा लेकर अपनी हडताल जारी रखे. दु खी लोगोको दिलासा दे और जवतक यह राक्षसी राज्य न झुके तवतक आपमे से एक भी मनुष्य कामपर वापस न जाये।

मै आज कमसे-कम तीस सालसे मजदूरोके जीवनमे ओतप्रोत हूँ। मै जव वकालत करता था तव भी मजदूरोके वहुतसे मुकदमे हाथमे लेता था। मै उनके साथ रहता, उनके साथ चलता-फिरता, उन्हीके साथ सोता और खाता-पीता था। मैंने आजतक कितनी ही हडताले चलाई है। मै अपने आपको हडताल-शास्त्री मानता हूँ। किन्तु मैने जितनी हडताले हाथमे ली है उन सवमे ईश्वरकी कृपासे सफलता पाई है। इसका कारण यही है कि हर हडतालमे मैंने मजदूरोको खुद अपने पैरोपर खडा होना सिखाया है, मैंने पैसा उगाहकर हडतालियोका उदर-पोपण कभी नही किया। हाथो-पावोमे पूरा कोई स्वस्थ मनुष्य दूसरोसे पैसा लेकर अपना पेट क्यो भरे? मेरी नौकरी चली जाये या मेरा व्यापार डूव जाये तो मै अपने भाई या मित्रसे रुपया माँगने न जाऊँगा। मुझे रोग हो जाये, मै अपग हो जाऊँ तभी मै अपने भाईके सामने अपना हाथ फैलाऊँगा।

दक्षिण आफ्रिकामें जब चालीस हजार मजदूरोंने हड़ताल की, तब मैंने तुरन्त श्री गोखले[1] को तार दिया, 'कोई चिन्ता न करें। भारतसे रुपया इकट्ठा करके यहाँ भेजनेकी कतई जरूरत नहीं है।' और जब पैसा न था तब बहुत अच्छी तरह काम चलता था। जब पैसा आने लगा तभी कठिनाइयाँ सामने आईं। मजदूरोंको जिसकी जरूरत थी वह मिल गया। हड़ताल छः महीने भी नहीं चलानी पड़ी। हड़ताल समझौता होने पर कुछ हफ्तोंमें ही बन्द हो गई। हड़तालियोंको दिनमें एक रोटी और एक औंस खाँड दी जाती थी। इतने अल्प भोजनपर वे बीस-बीस मीलकी मंजिल तय करते थे और साथमें स्त्री-बच्चे भी होते थे।

यह हड़ताल बहुत बड़ी थी। उसके आगे आपकी हड़ताल कुछ भी नहीं है। उनमें बहुतसे लोग मार खाते थे और मुँहतक न खोलते थे। यों दस हजार लोग जेलमें गये थे पर किसीने मुँहसे एक शब्द भी नहीं निकाला था। इनमें लम्बे-तगड़े पठान भी थे। एक बार कोयला खदानमें काम करनेवाला एक पठान मेरे पास आया और मुझे अपनी सूजी हुई और घायल पीठ दिखा कर बोला : "यह देखो, तनिक भी हिले-डुले बिना मैंने यह सब मार खाई है। इस जालिमने मेरी खाल उतारनेमें कोई कसर नहीं रखी है, किन्तु फकत इसलिए मैंने यह मार खाई है कि मैं आपके सामने खुदाके नामपर कसम ले चुका था। नहीं तो उसकी क्या मजाल थी कि वह मुझे मारता। उस जैसेको तो मैं कुचल देता।"

मैंने उनसे कहा, तू खरा बहादुर है। और उस हड़तालमें ऐसा एक ही पठान न था, बहुतसे थे। उसमें चोरी और खून वगैरा जुर्ममें जेल गये हुए लोग भी थे। फिर भी उनके मनमें एक ही बात थी कि "उन्होंने कसम जो ली है, मर जायेंगे पर उसपर कायम रहेंगे।" ये सभी लोग बहादुर थे। मैं चाहता हूँ कि आप सब भी ऐसे बहादुर बनें। मैं आप सभीसे फिर कहता हूँ कि आप कांग्रेसकी ओर न ताकें। ईश्वरने दाँत दिये हैं तो वह चबैना भी देगा। बंगालकी जमीन कितनी उपजाऊ है। यहाँ इतनी वर्षा होती है। प्रकृतिकी आपपर पूरी कृपा है। यहाँके लोग भूखों कैसे मरेंगे? यहाँके लोग किसीके गुलाम कैसे हो सकते हैं? उन्हें तो बिलकुल स्वतन्त्र होना चाहिए। वे निश्चय कर लें तो आज समस्त भारतको स्वराज्य दिला सकते हैं। मुझे तो तब शर्म आती है जब खुलनामें अकाल पड़ता है और उसके निवारणार्थ बम्बईके व्यापारियोंसे रुपया माँगा जाता है और जब वह रुपया मिलता है तब खुलनाके लोगोंका लवन खुलता है।

अब हम यह सोचें कि हमें करना क्या चाहिए। या तो आप अपने-अपने घरोंको चले जायें और वहाँ आजीविकाके दूसरे साधन खोज लें अथवा अपनी कोई संस्था बना लें। यदि आप अपने-अपने घर जाना चाहें तो कांग्रेस समितिका कर्त्तव्य है कि वह आपको किराया दे। किन्तु मेरी सलाह तो यह है कि आप अपनी संस्था बना लें। एक स्वराज्यवादीके नाते आपको मेरी यह सलाह है कि आप पीजें, कातें और बुनें।

१. गोपाल कृष्ण गोखले (१८६६–१९१५), शिक्षाशास्त्री और राजनीतिज्ञ, भारत सेवक समाज (सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के संस्थापक।

एक महीनेतक काम सीखनेके बाद इससे आप एक रुपया रोज कमा सकेगे। इसमे आप ज्यो-ज्यो कुशल होते जायेगे त्यो-त्यो आपको अधिक मजदूरी मिलती जायेगी। इससे आप देशकी सेवा भी करेगे। इसमे कुटुम्बीजनोका बोझ भी नही रहेगा, क्योकि इसमे वे भी आपकी सहायता कर सकेगे। इसके अतिरिक्त आपके इस साहसका प्रभाव लोकमतपर पडेगा और जो लोग आपका साथ छोड कर चले गये है वे भी आपके साथ आ जायेगे। इसमे आपको दृढताकी आवश्यकता अवश्य होगी। हमारे पूर्वजोने प्रतिज्ञाके पालनपर बहुत जोर दिया है। महाराज दशरथने कहा था, 'रघुकुल रीति सदा चलि आई। प्राण जाहि पर वचन न जाई।'

आपमे से बहुतसे फिर रेलकी नौकरीमे वापस चले गये है। वे नासमझ है और कमजोर है। आप उन्हे गालियाँ देकर और मारपीट करके फिर नौकरी छोडनेके लिए मजबूर न करे। ऐसा करना आपका धर्म नही है। यदि आप अपनी प्रतिज्ञाको न छोडेगे चुपचाप अपनी हडतालको जारी रखेगे, कताई और बुनाईसे अपना पेट भरेगे और ईश्वर-स्मरणमे अपना जीवन बितायेगे तो इससे उन्हे अपने-आप शर्म आयेगी और उन्हे लोकमत भी शर्म दिलायेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५–९–१९२१

१५. टिप्पणियाँ

रम्य असम

मै ये टिप्पणियाँ महानद ब्रह्मपुत्रके तटपर बसे तेजपुरमे बैठा लिख रहा हूँ। तेजपुरका नाम किसी समय शोणितपुर था और कहा जाता है कि वह राक्षस बाणासुरकी, जिसकी पुत्री ऊषाका विवाह अनिरुद्धसे हुआ था, राजधानी थी। भक्तगण वह जगह भी दिखाते है जहाँ हरि और हरका सग्राम हुआ था। असमकी भूमिमे सुन्दर हरियाली ही हरियाली दीख पडती है। इस नदीके कुछ दृश्य तो इतने सुन्दर है कि उनसे बढकर ससारके किसी भागके दृश्य शायद ही हो। मैने टैम्स नदीके भव्य दृश्य देखे है परन्तु इस महान् नदीको, जिसके तटपर बैठा मै ये पक्तियाँ लिख रहा हूँ, प्रकृतिने जितने वैभवसे सजाया है उससे बढकर कोई दृश्य मुझे याद नही आता।

केवल उत्तरी असमकी जनसख्या ३७ लाखसे अधिक है। असमकी प्रत्येक स्त्री जन्मजात बुनकर है। जिस असमिया लडकीको बुनना न आता हो वह पत्नी बननेकी आशा नही रख सकती। और वह अपने बुने वस्त्रोमे मानो परी-देशका सौन्दर्य खीच लाती है। हमारे मेजवान श्री फूकेनने मुझे जो पुराने नमूने दिखाये उनका सौन्दर्य अद्वितीय था। उन सुन्दर नमूनोको देखते हुए भारतके बीते गौरव और खोई कलाको यादकर मेरी आँखोमे आँसू उमड आये। आँखोको ठडक पहुँचानेवाला, सौम्य रँगोका ऐसा मधुर सामजस्य विदेशकी भडकीली बढिया साडियोमे कहाँ मिलेगा? असमके

वनज रँग अव लगभग लुप्तप्राय है। जव असम अंग्रेजोके आधिपत्यमे आ गया तव स्त्रियोने कातना छोड दिया और विदेशी सूतको वुननेका पापमय कार्य प्रारम्भ कर दिया। अव असमकी स्त्रियाँ वुननेमे जितनी बचत कर लेती है उतना ही विदेशी सूत खरीदनेके कारण खो देती है। आज जो साडियाँ मै देखता हूँ वे सुन्दरता या कोमलतामे पुराने नमूनोकी तुलनामे कुछ भी नही है। यदि असमके कार्यकर्त्ता अपने कर्त्तव्यका पालन करे तो स्वदेशीके विकासमे उसका योग महत्त्वपूर्ण हो सकता है। वहाँकी स्त्रियाँ अपनी आवश्यकतासे कही अधिक कपडा वुन सकती है। वहाँ आज चालीस हजार एकड भूमिपर कपासकी खेती होती हे, और एक एकडकी औसत उपज १३३ पौण्ड है। लेकिन निश्चय ही असम इससे वहुत अधिक उपजा सकता है। कुछ कपास जो मैंने यहाँ देखी है सुन्दर हे और लम्वे रेशेवाली है। आन्ध्रके समान ही यहाँ भी छिटपुट घरोमे महीन कताई अब भी हो रही हे। सभी मानते है कि असमियोके पास समय काफी रहा करता है। किसी और स्थानपर मैंने एक अंग्रेज लेखकके इसी धारणाकी पुष्टि करनेवाले विचार उद्धृत किये है। असममे पक्की और टिकाऊ लकडीकी वहुतायत भी है जो चरखे वनानेके लिए बिलकुल उपयुक्त है। हम आशा करे कि स्वदेशीके मामलेमे असम अपनी पूरी क्षमता दिखायेगा।

असमिया अफीम खानेके आदी है, परन्तु सम्पूर्ण भारतमे इस कुटवके विरुद्ध आन्दोलन फैल चुका है। मैंने सुना है कि वहुतेरे लोगोने इस कुटेवका सर्वथा त्याग कर दिया है और नशीली चीजोसे परहेजका आन्दोलन वढ रहा है।

मैंने सुना हे कि कुछ सरकारी अफसरोने मेरी एक भूलका उपयोग किया है जो मैंने 'हिन्द स्वराज्य' नामक पुस्तिकामे की थी, उसमे एक जगह मैंने असमियोकी गिनती पिण्डारियो और दूसरी जगली जातियोके साथ की है।[1] मै जनताके सामने इस भूलको स्वीकार कर चुका हूँ और मैंने उसमे सुधार कर लिया है। असमकी महान् जनताके प्रति मेरा यह घोर अन्याय था, वे निश्चय ही सब प्रकारसे भारतके दूसरे भागो जितने ही सभ्य है। उनका उत्तम साहित्य है, जिसका कुछ भाग अगरु पेडकी छालपर लिखा गया है जो अनेक रगीन चित्रोसे युक्त है, और वहुत प्राचीन हे। असमकी स्त्रियोसे तो, जैसे ही उनके कुशल वुनकर होनेका पता चला, मुझे सहज ही प्रेम हो गया। बुनकर होनेके नाते वे अपनी वेशभूषामे किफायतसे काम लेती है और खूबी यह है कि इससे न तो उनकी सुन्दरतामे कोई कमी हुई है और न शरीरको ढकनेकी उनकी क्षमतामे। असमी महिलाएँ और कन्याएँ थोडे ही या नगण्य गहने पहने दीखती है — यह भी उनकी उत्तम सस्कृतिका चिह्न है, मै तो ऐसा ही मानता हूँ। वे भारतके और सब भागोकी स्त्रियोके समान ही स्वभावत सकोची और सुशील है और उनके चेहरे सुसभ्य और निष्कपट है।

असमियोके विषयमे मेरी उपर्युक्त गलत धारणा वनी १८९०मे, जव मैंने मणिपुरकी चढाईका वृत्तान्त पढा था, उसमे स्वर्गीय सर जॉन गॉस्टने वहाँके स्वर्गीय सेनापतिके प्रति अधिकारियोके व्यवहारका वचाव करते हुए कहा था कि सरकार हमेशा

१ सशोधित सस्करणके लिए देखिए खण्ड १०, पृष्ठ २४ तथा पृष्ठ ६ पा० टि० १।

मुखिया-रूपी ऊँचे पौधोको तराशना पसन्द करती है। इतिहासका कच्चा पाठक होनेके कारण मेरे मनमे यह धारणा रह गई कि असमिया जगली होते है और १९०८ मे[1] वह लिखनेमे भी आ गई। जो भी हो, मेरी इस भूलसे कुछ अफसरोको कुछ चैन मिला, उस जनताको हँसीका मसाला मिला जिसके सामने मैने अपनी भूल सुधारी और मुझे शानदार मौका मिला कि असमी बहनोके सादे और अकृत्रिम सौन्दर्यकी प्रशसा कर सकू तथा उन्हे भारत और स्वदेशीके पक्षमे करूँ।

मुझे इस तथ्यकी चर्चा भूलनी न चाहिए कि लगभग अठत्तर असमी वकीलोमे से पन्द्रह वकीलोने वकालत छोड दी है जो सम्भवत भारत-भरमे सबसे ऊँची प्रतिशत सख्या है।

अन्तमे मै काग्रेस कमेटियोको धन्यवाद देता हूँ जिन्होने सब सभाओमे सुन्दर व्यवस्था रखी है और अद्भुत अनुशासन द्वारा सब हडबडी और हो-हल्लेका निराकरण किया है।

अनुचित दस्तदाजी

असमके अधिकारी, साफ मालूम होता है, बडे प्रदर्शनो और बडी सभाओके आदी नही है। उन्होने सभाएँ आदि करनेवालोको सार्वजनिक स्थानोका उपयोग करनेकी भी इजाजत नही दी। नौगाँवके अधिकारियोने तो अपनी कार्रवाईसे लोगोको एकदम चिढा ही दिया। एक फुटबालके मैदानमे सभाके लिए मचान बनाने और उसपर शामियाना खडा करनेकी तजवीज की गई थी। पर वहाँके डिप्टी कमिश्नरने ऐसा नही होने दिया। तुर्रा यह कि पहले मैदानके उपयोगकी अनुमति देकर उसने बादमे शामियाना उखडवा दिया। अब इसका कारण सुनिए। आप फरमाते है कि मचान बनाकर कमेटीके अध्यक्षने हुक्मकी मशाके खिलाफ कार्रवाई की। कमेटीने लाचार होकर अपनी सभा एक खानगी जगहमे की। इतना ही नही, डिप्टी कमिश्नरने स्टेशन जानेवाले लोगोपर भी पाबन्दियाँ लगानेकी कोशिश की। उसने उन चुने हुए लोगोके नाम माँगे जो प्लेटफॉर्मपर जानेवाले थे। उपद्रवोके डरसे उसने किसी किस्मका जुलूस भी नही निकलने दिया। सच पूछो तो मैने भीडका व्यवहार असममे जितना सयत और शिष्ट पाया उतना किसी दूसरी जगह नही पाया। वे प्रेमके प्रदर्शनके प्रसगमे सीमाका उल्लघन नही करते। कोई भी अनुभवी अधिकारी यह समझ सकता था कि प्रेमभावसे प्रेरित इन प्रदर्शनोसे, उनमे शोर-गुल चाहे जितना हो, दगा-फसाद होनेका कोई डर नही हो सकता। लेकिन असम ऐसा प्रान्त है जहाँ, मुझे मालूम हुआ है, अधिकारी जनतामे किसी तरहकी जागृतिका होना सहन नही करते। अभी कुछ ही दिन पहलेकी बात है। तेजपुरमे एक अधिकारीने कुछ मकान उन मकानोमे रहनेवाले लोगोसे जबरदस्ती और एकदम इस कारण खाली करा लिये कि उन मकानवालोकी भैसोसे उसके खेलमे खलल पडता था। युद्धके दिनोमे एक दूसरे अधिकारीने सीमापर रहनेवाले कूकी नामके कबीलेके लोगोमे हत्याकाण्ड मचा दिया, उसने उन्हे भेड-बकरियोकी तरह काट डाला। न स्त्रियोको छोडा, न बच्चोको। मुझे मालूम हुआ है कि

१ १९०९ में, हिन्द स्वराज्य पुस्तिका सन् १९०९ में ही लिखी गई थी।

इस शर्मनाक हत्याकाण्डको लोगोसे छिपानेका प्रयत्न किया गया था, यद्यपि उसे जानते तो सब हैं। तब कोई आश्चर्य नही कि असममे परिस्थिति इस हदतक पहुँची है कि उसकी स्थायी राजधानी समुद्र-तल से ४००० फुट ऊपर है। नीचे मैदानमे तो उसका कोई सदर मुकाम है ही नही। मुझे बताया गया है कि शिलाग तो व्यवहारत यूरोपीयोकी ही बस्ती है। और वहाँकी सरकार अपनी अगम्य ऊँचाइयोसे कभी नीचे उतरती ही नही।

नगरपालिकामें खादी

रायपुर (मध्यप्रान्त) की नगरपालिकाने बहुमतसे नीचे लिखे प्रस्ताव पास किए हैं —

> १ अगस्त, १९२१ से नगरपालिका स्कूलोके तमाम लडकोको राष्ट्रीय पोशाक — खादीका कोट या कुरता और खादीकी टोपी — पहनना चाहिए।
>
> तमाम नगरपालिकाके स्कूलो और दफ्तरोमे १ अगस्त, १९२१ को लोकमान्य बाल गगाधर तिलककी बरसीके उपलक्ष्यमे छुट्टी रखी जाये।
>
> नगरपालिका अपने तमाम नौकरोसे उम्मीद करती है कि वे देशी कपडा बरतेगे।
>
> नगरपालिकाके नौकरोको खादीकी वर्दी दी जाये।

रायपुरकी नगरपालिकाने अपने अधिकारोका बहुत ही बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग किया है। इसमे कोई शक नही कि हरएक नगरपालिका, पूरी असहयोगवादी हुए बिना भी, असहयोगके तमाम विधायक स्थायी अगोको अपना सकती है। ऊपरके प्रस्तावोमे ऐसा एक भी प्रस्ताव नही है जिसपर कोई किसी भी प्रकारका आक्षेप कर सके। जो नगरपालिका स्वदेशीको अपनायेगी, अपनी कार्रवाई अपने प्रान्तकी भाषामे करेगी, दबी हुई जातियोको ऊपर उठायेगी, शराबकी बिक्री तथा वेश्याओके धन्धेको बन्द करेगी, वह मानो राष्ट्रीय शुद्धिके काममे मदद देगी। और, तभी यह कहा जा सकेगा कि हाँ, नगरपालिका हो तो ऐसी हो।

खादीके नाशका प्रयत्न

खादी टोपीके ऊपर भारतके भिन्न-भिन्न प्रान्तोमे सरकारी अधिकारियोने जो प्रतिबन्ध लगाया है उससे तो हम लोग परिचित ही हैं। मैंने सुना है कि बिहारमे एक मजिस्ट्रेटने विलायती कपडा बेचनेके लिए, सचमुच फेरी लगानेवालोको भेजा। पर धारवाडमे नाम पैदा करनेवाले श्री पेटर तो और भी आगे बढ गये हैं। उन्होने सरकारी तौरपर एक परिपत्र निकाला है, जिसमे वे कहते हैं —

> जिला मजिस्ट्रेट और कलेक्टरके मातहत तमाम अफसरोको चाहिए कि वे लोगोको यह बतलाये कि चूँकि हिन्दुस्तान अपने तमाम लोगोकी जरूरतसे कम माल तैयार करता है, विलायती कपडेका बहिष्कार करनेसे अथवा उसके जलाने या बाहर भेजनेसे कपडेके दाम जरूर ही बहुत बढ जायेगे। इसका नतीजा यह हो सकता है कि बडी अव्यवस्था फैले और लूटमार हो, और यह सब सरकारके किसी कामसे नही, बल्कि श्रीयुत गाधीके आन्दोलनकी बदौलत होगा।

इसके बाद, दो अनुच्छदोमे उन्होने यह भी बताया है कि इस स्वदेशी-प्रचारका मुकावला किस तरह किया जाये — (१) सभाएँ की जाये और (२) जो व्यापारी वहिष्कारके खिलाफ हो उन्हे नियत समयपर कलेक्टरके दफ्तरमे वुलाया जाये। मद्रास सरकारने तो इससे भी वढकर अपनी कानूनी-शेखी बघारनेवाला एक परिपत्र निकाला है। इन हुक्मनामोका मतलव साफ है। सरकार व्यापारियो और दूसरे लोगोपर दवाव डालना चाहती हे जिससे वे बहिष्कारमे साथ न दे सके। अब नीचेके हुक्काम इसमे इतनी आजादीसे काम लेगे जितना कि उन परिपत्रोके निकालनेवालोने सोचा भी न होगा। परन्तु अब देशके सौभाग्यसे हाकिमोकी इन धमकियोका असर लोगोपर बिलकुल ही नही या बहुत थोडा होता है और हाकिम लोग दवे-छुपे अथवा खुलेआम न्याय-नीतिको ताकमे रखकर अथवा भलमनसीके साथ चाहे कितना ही विरोध करे, स्वदेशी-आन्दोलन तो आगे बढता ही रहेगा।

हाकिम लोग इतने अज्ञानी और हठीले हैं कि जिस अव्यवस्था और लूटमारका डर उन्हे हो रहा है उसको टालनेका रामबाण उपाय वे नही करते, और वह उपाय यही है कि स्वदेशी-प्रचारमे वे लोगोका साथ दे और देशी माल तैयार करनेमे प्रोत्साहन दे। पर विलायती कपडोके खिलाफ उठाये गये इस आन्दोलनको वाछनीय और आवश्यक समझना तो एक ओर रहा, वे तो उलटा उसे दबाने-योग्य बुराई समझते है और फिर भी जब मैं इस शासन-व्यवस्थाको, जो कि जनताके सद्भावपूर्ण आन्दोलनको रोकना चाहती है, "शैतानी" कहता हूँ तो शिकायत की जाती है। देशी कपडोकी तगी यहाँ क्यो होनी चाहिए? क्या हिन्दुस्तानमे कपास काफी नही है? क्या यहाँ ऐसे स्त्री-पुरुषोकी सख्या काफी नही है जो सूत कात सकते है और कपडा बुन सकते है? क्या यह मुमकिन नही है कि जरूरतके लायक तमाम चरखे थोडे ही दिनोमे वनकर तैयार हो जाये? हरएक घरमे जिस प्रकार अपना भोजन बनाया जाता है उसी प्रकार अपना कपडा भी क्यो नही तैयार होना चाहिए? अकालके दिनोमे क्या अकाल-पीडितोको कच्चा अनाज बाँटना ही काफी नही है? तो फिर, जो लोग कपडेके मोहताज है उन्हे कोरी कपास ही देना काफी क्यो न होना चाहिए? तब फिर कपडेकी तगीका यह पाखण्ड-भरा या झूठमूठका शोर क्यो मचाया जाता है जब कि कल-कारखानोकी सहायताके बिना ही भारतमे एक महीनेके अन्दर उसकी जरूरतके मुताविक काफी कपडा बन सकता है? लोग वेचारे अवतक जानवूझकर अथवा वे-जाने-वूझे ही अँधेरेमे रखे गये है। उन्हे जो यह विश्वास रखना सिखाया गया है कि अपनी जरूरतके मुताविक कपडा हिन्दुस्तानके घरोमे, प्राचीन समयकी तरह, नही वनाया जा सकता, विलकुल गलत है। अगर अलकारिक भाषामे कहे तो वे पहले अपग वना दिये गये है और फिर उन्हे विलायती या मिलके वने कपडोका सहारा लेनेके लिए वाध्य किया गया है। कितना अच्छा हो कि वे लोग जिनके यहाँ ये परिपत्र निकाले गये है, इसका योग्य और गौरवपूर्ण उत्तर दे। और वह उत्तर यही हो सकता है कि वे फौरन अपने सारे विलायती कपडे जला डाले या वाहर भेज दे और साहसपूर्वक यह प्रतिज्ञा कर ले कि अपनी जरूरतके लायक हम खुद ही कातेगे और खुद ही वुनेगे। निकम्मे और सुस्त आदमीको छोडकर हरएकके लिए ऐसा करना वाये हाथका खेल है।

झूठे विज्ञापन

"स्वदेशी"के सम्बन्धमे झूठे विज्ञापनोकी शिकायते बराबर मेरे पास आ रही है। सत्याग्रहाश्रमके व्यवस्थापक — जिन्होने इन सुधरे हुए और ईजाद किये हुए कहे जानेवाले लगभग तमाम चरखो और करघो आदिको आजमा देखा हे — लिखते है कि अभी हालमे मुझे कलकत्तेसे एक विज्ञापन मिला हे, जिसने पिछले सब विज्ञापनोके कान काट लिए है। उनकी राय है कि अभीतक कोई ऐसा चरखा नही पाया गया जो सादगी, आराम और अधिक सूत-कताईमे पुराने चरखेसे बढकर हो। वे तमाम सूत कातनेवालोको चेतावनी देते है कि आप किसी नये ढगके चरखेके लिए रुपया बरबाद न करे। वे तमाम काग्रेस कमिटियोको सलाह देते है कि वे अपने-अपने क्षेत्रमे ऐसे सारे विज्ञापनोकी जाँच करे और ऐसी हरएक कलको कमसे-कम एक महीनातक आजमा कर देखे और फिर उसके बारेमे अपनी राय घोषित करे। जैसे-जैसे स्वदेशीकी जड जमती जाती है वैसे-वैसे बनावटी आविष्कार भी लोगोके सामने आये बिना न रहेगे। इसलिए ऐसे तमाम मामलोमे काग्रेस कमेटियोको जरूर रहनुमा होना चाहिए।

एक तूणी सज्जन लिखते है कि बम्बईके कुछ दुकानदार महीन कपडा खरीदनेके लिए आन्ध्र देश गये है। और मेरे खबरदार कर देनेपर भी, कुछ सौदागरोने बेज-वाडासे विलायती सूतका कपडा भेजा। मै तमाम खरीदारोको होशियार किये देता हूँ कि वे ऐसे कपडेसे दूर रहे। यहाँ स्वदेशी कपडेका सारा स्टॉक खतम हो चुका हे। इससे क्या नसीहत लेनी चाहिए सो साफ जाहिर है। वह नसीहत यह है कि "महीन कपडोसे बचो।" महीन हाथ-कता सूत बहुतायतसे मिलना मुश्किल है और इसलिए काग्रेसके कार्यकर्त्ताओके लिए सबसे अच्छी बात यही हे कि वे महीन खादीसे अपने को बचाये। जैसा कि श्रीमती सरोजिनी नायडूने[1] फरूखाबादमे कहा है, विलायती कपडा पहननेकी बनिस्बत तो पेडके पत्तोसे अपना बदन ढक लेना अच्छा हे। जिनके दिलमे यह भावना दिनरात जगमगाती रहती है वे अभी नफीस और महीन कपडेके खतरनाक जालमे न फँसे। वह समय जल्द ही आयेगा जब कि हमे बुने जाने लायक हाथकते महीन सूतकी कमी न रहेगी।

एक सामयिक प्रकाशन

पटनाके डा० सैयद महमूदने खिलाफत ओर इग्लैडपर अपनी पुस्तिका प्रकाशित करके खिलाफतकी सेवा की है। यह पढनेमे सुगम है ओर व्यस्त व्यक्तिके सामने भी खिलाफतका लगभग समूचा पक्ष पेश करती है। डा० महमूदने अपनी सभी बातोकी पुष्टिमे प्रचुर उद्धरण देनेकी सावधानी बरती है। उन्होने अग्रेज मन्त्रियोके भाषणो और लेखोसे ही उद्धरण लेकर उनका विश्वासघात सिद्ध किया है। उन्हे यह प्रमाणित करनेमे कोई कठिनाई नही हुई कि इग्लैड जब टर्कीका मित्र समझा जाता था तब भी उसकी यह मित्रता विवशताजन्य थी, क्योकि रूस उसका शत्रु था। इग्लैड और टर्कीके सम्बन्धका इतिहास टर्कीके हितोके विरुद्ध गुप्त सन्धियो और विश्वासघातसे भरा हुआ है, जब कि वीर

१ १८७९–१९४९, प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ और कवयित्री, अ० भा० काग्रेसकी अध्यक्ष, १९२५, उत्तर प्रदेशकी राज्यपाल।

और विश्वासशील तुर्क हमेशा इग्लैडके वायदोपर भरोसा रखते रहे। लॉर्ड पामर्स्टनके जमानेमे टर्कीके समर्थनका कारण उन्हीके शब्दोमे यह है, "हम टर्कीका समर्थन अपने हितकी खातिर ही करते है।" जब यह महत्वपूर्ण कारण न रहा तब टर्कीका सौदा कर दिया गया। १८७७ मे बर्लिन काग्रेसके अवसरपर इस बातका भडाफोड हो गया कि ब्रिटेनने टर्कीसे साइप्रस द्वीप ऐठ लिया था। डिजरायली और सैलिस्बरी इन दोनो अग्रेज राजदूतोने काग्रेससे यह भेद छुपा रखा था, हालाँकि उनका कर्त्तव्य उसे गुप्त न रखकर प्रकट कर देना था। इस तरह, "उन्होने झूठका अपराध किया — सीधे और लिपिबद्ध झूठका!" इस भेदके प्रकट हो जानेसे क्या टर्कीको साइप्रस वापस मिल गया? बिलकुल भी नही। किन्तु इग्लैडके इस व्यवहारसे फ्रास बहुत नाराज हुआ था। इग्लैडने ज्यो ही पहला अवसर उसके हाथ आया, ट्यूनिसपर कब्जा करनेका उसका अधिकार मानकर, यह स्वीकार करके कि सीरियामे अपने स्वार्थकी दृष्टिसे उसकी दिलचस्पी है और मिस्रकी आर्थिक लूट-खसोटमे उसको सम भाग देकर उसे सन्तुष्ट कर दिया। "पूर्वी देशोकी और उत्तरी आफ्रिकाकी स्वतन्त्रताके विरुद्ध हमारी पुश्तमे हुए अत्याचारोमेसे आधेका मूल साइप्रस सम्बन्धी षड्यन्त्रमे देखा जा सकता है।" श्री ब्लटका यह कहना कोई विचित्र बात नही है। डा० सैयद महमूदने इग्लैडकी मिस्र तथा ट्रिपोली और बालकन युद्ध-सम्बन्धी विश्वासघातपूर्ण कार्रवाइयोका इतिहास प्रस्तुत किया है ओर साफ-साफ दिखाया है कि टर्कीको इग्लैडके साथ उसकी सन्धिसे लगभग बाहर धकेल दिया गया था। तब क्या आश्चर्य कि कोई मुसलमान अग्रेज मत्रियोके मैत्रीपूर्ण वचनोपर विश्वास नही करता? यदि वे टर्की और भारतके प्रति न्याय करानेमे अग्रेजोको विवश किये बिना चैनसे बैठ जाये तो वे इस्लाम धर्मके अनुयायी होनेका दावा खो बैठेगे।

पजाबके मुकदमे

मौलवी सैयद हबीबको तीन सालका सपरिश्रम कारावासका दण्ड दिया गया है — प्रकट रूपसे उनके 'सियासत' नामक पत्रमे उनके लेखोके कारण, परन्तु वास्तवमे मुसलमानोपर उनके प्रभावके कारण। श्री जफरअली खाँके पुत्र श्री अख्तर अली खाँ और उनके एक सम्बन्धी श्री गुलाम कादिरपर मुकदमा चल रहा है। परिणाम तो अभीसे निश्चित है। इस तरह उन सभी विशिष्ट मुसलमान और सिख असहयोगियोको, जिन्हे सरकार अपने रास्तेका काँटा मानती है, रास्तेसे हटा दिया जायेगा। वे माफी माँगनेको तैयार नही है और न अपने शब्द ही वापस लेगे, क्योकि वापस लेनेको कुछ है ही नही। उनके लेखोमे मैत्रीभावका अभाव अवश्य था। परन्तु असहयोगके नामको सार्थक करनेवाले किसी भी पत्र द्वारा [सरकारके प्रति] अमैत्री भावका प्रचार तो होना ही चाहिए। अत इन महानुभावोको मै उनके इस सुअर्जित मानपर बधाई देता हूँ। मै यही आशा रख सकता हूँ कि मुसलमान और सिख स्वदेशी कार्यक्रममे अपना योगदान पूरा करते हुए सरकारके इस कदमका सम्मान करेगे। इन मुकदमो और दण्डोके लिए जनता अपनेको तभी सत्पात्र सिद्ध कर सकेगी जब वह इतनी शक्ति पैदा करे कि उन मित्रोकी रिहाई अवधिसे बहुत पहले ही हो जाये।

इस्तगासोका एक नमूना

एक मित्रने मुझे नागपुरके पण्डित राधामोहन गोकुलजीपर जारी किये गये नोटिसकी नकल भेजी है। नोटिसमें कहा गया है कि या तो वे नेकचलनीके लिए मुचलका दें या जेल जानेके लिए तैयार रहें। पण्डितजी इन दिनों जेलमें बन्द हैं। नोटिसके साथ कुछ उद्धरण भी जोड़े गये हैं जो उनके समय-समयपर दिये गये भाषणोंसे लिये गये बताये जाते हैं। इन उद्धरणोंको मैंने बार-बार पढ़ा है। अब मैं उन्हें पाठकोंके सामने उसी क्रममें पेश करता हूँ जिस क्रममें वे उक्त नोटिसमें दिये गये हैं

२० जून, १९२१ का सिवनीका भाषण

१ हम एक जुल्मी सरकारके खिलाफ लड़ रहे हैं। देखें .यह जुल्मी सरकार कबतक हमपर मुकदमे चलाती है? पश्चिमके लोग ईसाई नहीं हैं।

२ जबतक हिन्दुस्तानकी सारी जेलें हिन्दुस्तानियोंसे भर नहीं जातीं तबतक हम अपना मकसद हासिल नहीं कर सकते। एक भी बालक जबतक जीवित है . . तबतक हमारी यह आजादीकी लड़ाई जारी रहनी चाहिए।

३ जिस समय रोमके लोग इग्लैंडपर राज्य कर रहे थे वे क्रूर और विचारशून्य हो गये। उन्होंने एक बार रानी बॉडीसियाको कोड़े लगाये, नतीजा क्या हुआ — आज रोमके साम्राज्यका कहीं पता नहीं है।

४ इस राक्षसी सरकारके इन गुलामखानों (स्कूलों) को बन्द कर दो।

५ भारतीयोंके लिए अलग कानून हैं और यूरोपीयोंके लिए अलग। ऐसी हालतमें हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि सरकार बेईमान है और वह जनताका भला नहीं चाहती।

६ जबतक आप इस जुल्मी सरकारसे लड़ रहे हैं तबतक बच्चे पैदा न करें।

२१ जून, १९२१का सिवनीका भाषण

१. इसके बाद उन्होंने असहयोग आन्दोलनका उल्लेख किया और कहा कि इस आन्दोलनके द्वारा रक्तहीन क्रान्ति की जा सकती है, इस अन्यायी सरकारको भंग किया जा सकता है और स्वराज्य प्राप्त किया जा सकता है।

२ जो सरकार ऐसी बेईमानी कर सकती है उसका नाश करना हमारा कर्त्तव्य है।

३ इस सरकारको हमने जो पैसा दिया और जो आदमी दिये उसका बदला हमें क्या मिला? रौलट कानून, जिसमें न अपीलकी गुंजाइश है, न बहस की।

४ आज हमारे ऊपर 'इम्पीरियल प्रिफरेन्स' लादा जा रहा है जिसके कारण न तो हम ब्रिटिश साम्राज्यके बाहरके देशोंसे उनका माल सस्ते भावपर खरीद सकते हैं और न अपना उन्हें ज्यादा अच्छी कीमतपर बेच सकते हैं।

५ वे सारे कानून जिनपर हमारी इज्जतका दारोमदार है विदेशी भाषामें बनाये जाते है, उसी भाषामें उनपर बहस होती है। ऐसे कानूनोको माननेके लिए हम बाध्य नहीं है।

६ आप लोगोको निर्वासनके लिए और रॉबर्ट मूरकी तरह फाँसीपर चढनेके लिए तैयार रहना चाहिए।

७ जिस बदजात सरकारने औरतोके गुप्त अगोमें लकडियाँ घुसेडवाई उसको बरबाद करना अगर तुम अपना कर्त्तव्य नही समझते हो तो क्या तुम इन्सान कहलानेके लायक हो?"

५ जुलाई, १९२१का नागपुरका भाषण

१. इस पापी ब्रिटिश सरकारने चीनियोको अफीम पीना और भारतीयोको शराब पीना सिखाया।

२ इस पापी ब्रिटिश सरकारने तुर्की साम्राज्यके तो टुकड़े कर डाले किन्तु युरोपीय राज्योको ज्योका-त्यो रहने दिया।

३. ये भारतीय (मारवाडी) व्यापारी तो डाकू है जो और ज्यादा बड़े डाकुओंके लाभके लिए जनताको लूटते है।

४ ब्रिटिश और जापानी सरकारे भाई-भाई है। जैसे यहाँ ब्रिटिश सरकारने लोगोको जेलोमे बन्द कर रखा है उसी तरह जापानी सरकारने वहाँ कोरियामें असहयोगी विद्यार्थियोको मरवा डाला है।

५ यह सरकार इतनी पापी है कि इसके पापका घडा इसीके सिरपर फूटेगा और रोमन तथा मिस्री साम्राज्योकी तरह यह भी नेस्तनाबूद हो जायेगी।

इन उद्धरणोमे ऐसा कुछ नही है जिसे मैंने या सैकडो अन्य वक्ताओने विभिन्न अवसरोपर हजारो मचोसे न कहा हो। केवल एक ही वाक्य ऐसा है जिसके खिलाफ आपत्ति की जा सकती है—यह वाक्य है दूसरे भाषणका सातवाँ उद्धरण। यह इलजाम काग्रेस कमेटीके सामने पेश किये गये बयानोमे जरूर आया है लेकिन वह कुछ आदमियोके खिलाफ है, सारी सस्थाके खिलाफ नही है। सरकारके विषयमे यह कहना जितना वाजिब हो सकता है कि उसने अमृतसरकी गलियोमे लोगोको पेटके बल रेंगाया उतना वाजिब यह कहना नही हो सकता कि उसने ऐसा निन्दित और जगली अत्याचार करवाया। लेकिन पण्डितजीको जो सजा दी गई है वह उनके भाषणोमे उनकी किसी भूल या अतिरजनाके लिए नही दी गई है। उनका इस्तगासा तो वडा तेज और मुकम्मिल है जिसमे उनके तीन भाषणोके १८ उदाहरण दण्डनीय माने गये है और उनमे से प्राय हरएककी पुष्टि की जा सकती है। टीका करनेमे वक्ता निष्पक्ष रहा है जैसा कि उसके मारवाडियो और जापानियो-विषयक उद्गारोसे प्रगट होता है। लेकिन यह भी याद रखना चाहिए कि भाषण हिन्दीमे दिये गये थे और ये उद्धरण सन्दर्भके विना ही पेश किये किये है। जो हो, हम कार्यकर्त्ताओको तो इससे

यही सबक लेना है कि हम अपना काम निर्भयतापूर्वक जारी रखे और पण्डित गोकुलजी तथा दूसरे सज्जनोकी तरह जेल जानेको तैयार रहे।

नागपुरके वकील

नागपुरके दौरा जजने वहाँके वकीलोकी जो अग्निपरीक्षा ली थी उसमे वे अच्छी तरह पास हुए है। असहयोग करनेवाले वकीलोसे उन्होने पूछा कि वकीलोके नाते तुम लोगोने जो राजभक्तिकी कसम खाई है उसमे और वकालत मुल्तवी कर देनेमे किस तरह सगति बैठ सकती है? सब वकीलोने एक स्वरसे कहा कि हमने वकालत काग्रेस-की आज्ञाके अनुसार बन्द की है। श्रीयुत मुहम्मद समीउल्ला खाँने यह भी कहा कि मेरी राजभक्तिकी प्रतिज्ञा खुदा और उसके पैगम्बरकी भक्तिकी सौगन्धसे नीची है। खुदा और पैगम्बरकी भक्ति सबके ऊपर है, कोई दूसरी प्रतिज्ञा उससे बढकर नही हो सकती। श्रीयुत नारायणराव टी० वैद्यने कहा कि अब जमाना बहुत बदल गया है और राजभक्तिकी शपथमे भी परिस्थितिके अनुसार फेर-बदल करना होगा। नही तो कोई भी स्वाभिमानी वकील किसी भी अग्रेजी अदालतमे वकालत करना न चाहेगा। अपने इस निर्भय व्यवहारके लिए उपरोक्त वकीलगण बधाईके पात्र है। हाँ, वह जमाना अब बेशक चला गया है जबकि लोगोको डरा धमकाकर गुलामोकी तरह कायल किया जाता था। मनुष्यका जीवन केवल रोटियोके बलपर नही चलता। उसे पोपणका ऐसा स्रोत प्राप्त है, जो किसी बढियासे-बढिया भोजनसे ज्यादा समृद्ध और शक्तिदायी है।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १–९–१९२१

१६. राष्ट्रीय शिक्षा

राष्ट्रीय शिक्षा विषयक मेरे विचाराके सम्बन्धमे अबतक इतनी अजीब-अजीब बाते कही गई है कि लोगोकी जानकारीके लिए यहाँ उनका सिलसिलेवार वर्णन कर देना अप्रासगिक न होगा।

शिक्षाकी वर्तमान पद्धतिका सम्बन्ध एक नितान्त अन्यायी सरकारके साथ है, यह दोष तो इसमे है ही किन्तु उसके सिवा भी यह तीन अत्यन्त महत्वपूर्ण बातोमे सदोष है।

(१) यह विदेशी सस्कृतिपर आधारित है, देशी सस्कृतिका तो इसमे नामोनिशान तक नही है, ऐसा कहा जा सकता है।

(२) यह हृदय और हाथकी सस्कृतिपर ध्यान नही देती, सिर्फ दिमागकी सस्कृति तक ही सीमित है।

(३) विदेशी माध्यमके द्वारा वास्तविक शिक्षा असम्भव है।

अब हम इन दोषोकी छानबीन करे। पहले पाठ्य-पुस्तकोको ही लीजिए। उनमे ऐसी बातोका अभाव होता है जिनकी जरूरत लडको और लडकियोको अपने घरेलू

जीवनमे हमेशा हुआ करती है, वल्कि उनमें वे बाते भरी रहती है जिनसे वे विलकुल अपरिचित होते है। पाठ्य-पुस्तकोके द्वारा लडका यह नही जान पाता कि गृह-जीवनमे कौनसी वात ठीक है और कौनसी बात अनुचित। उसे ऐसी शिक्षा कभी नही दी जाती जिससे उसके मनमे अपने पास-पडोसियोके विषयमे अभिमान जाग्रत हो। पढाई-लिखाईमे वह जितना ही आगे वढता जाता है वह अपने घरसे उतनी ही दूर होता जाता है — यहाँतक कि अपनी शिक्षाकी समाप्तिके दिनतक अपने आसपास-वालोसे उसका चित्त हट जाता है। गृह-जीवनमे उसे आनन्द नही आता। गाँवोके दृश्योका उसके लिए होना न होना बरावर है। उसीकी सभ्यता उसे नि सत्व, जगली, अधविश्वासोसे भरी हुई और सारे अमली कामोके लिए निकम्मी वताई जाती है। यह शिक्षा इस ढगसे दी जाती है कि विद्यार्थी अपनी परम्परागत सस्कृतिसे विमुख हो जाये। इतना होनेपर भी, आज शिक्षित लोग राष्ट्रीयतासे जो पूरी तरह हीन नही हो गये है उसका कारण यही है कि उनके दिलमे प्राचीन सस्कृतिकी जड इतनी गहरी जम चुकी है कि वह, उसके विकासमे बाधा पहुँचानेवाली शिक्षाके द्वारा भी, बिलकुल नष्ट नही हो सकती। यदि मेरा वश चलता तो मैं अवश्य ही आजकी वहुतेरी पाठच-पुस्तके जलवा डालता और ऐसी पाठच-पुस्तके लिखवाता जो गृह-जीवनसे सम्बन्ध रखनेवाली तथा उसके अनुरूप होती, जिससे लडका ज्यो-ज्यो उन्हे पढे त्यो-त्यो अपने आसपासके जीवनकी ओर अधिक आकर्षित होता जाये और उसमे हिस्सा लेकर उसे प्रभावित करे।

दूसरे, और देशोके विपयमे चाहे जैसा हो, भारतमे तो, जहाँ ८० फी सदीसे भी ज्यादा लोग खेती करनेवाले और १० फी सदी उद्योग-धन्धा करनेवाले है, केवल साहित्यिक शिक्षा देना और लडके-लडकियोको अपने आगेके जीवनमे हाथसे काम करनेके अयोग्य वना देना एक जुर्म है। मेरी तो वेशक यही धारणा है कि अव चूँकि हमारा अधिकाश समय अपनी रोजी कमानेके उद्योगमे जाता है, हमारे वालकोको लडकपनसे ही परिश्रमको गौरवकी दृष्टिसे देखनेकी तालीम दी जानी चाहिए। हमारे वालकोको ऐसी शिक्षा हरगिज न दी जाये जिससे वे मेहनतको हिकारतकी नजरसे देखने लगे। कोई वजह नही कि एक किसानका लडका मदरसेमे तालीम पाकर निकम्मा वन जाये और खेतोपर काम न करे। हमारे मदरसोके लडके हाथका काम करना घृणित नही तो हेय तो समझते ही है। यह दु खकी वात है। इसके सिवा, यहाँ हिन्दुस्तानमे, अगर हम यह उम्मीद करे, जैसी कि हमे जरूर करनी चाहिए, कि मदरसा जाने योग्य उम्रका हरएक लडका और लडकी मदरसे जाये तो हमारे पास आजकी प्रथाके अनुरूप उनकी शिक्षाके लिए खर्चके साधन नही है और न करोडो माता-पिता उतनी फीस ही देनेकी स्थितिमे है जो आज लगाई जाती है। इसलिए शिक्षाको यदि अधिक व्यापक करना हो तो फीस न लगानी चाहिए। मेरा खयाल है कि आदर्श शासन-व्यवस्थामे भी हम २ अरव रुपये जो कि तमाम मदरसे जाने लायक उम्रके लडके-लडकियोकी शिक्षाके लिए दरकार है, खर्च न कर सकेगे। इससे यह नतीजा निकलता है कि हमारे वालक जो कुछ शिक्षा ग्रहण करे उसका सारा या अधिकाश भाग वे "परिश्रम" के रूपमें अदा करे। और ऐसा सार्वत्रिक काम जो फायदेमन्द हो,

मेरे खयालमे तो हाथ-कताई और हाथ-बुनाई ही हो सकता है। परन्तु मेरे कथनकी सिद्धिके लिए यह बात कोई महत्व नही रखती कि हम सूत-कताईका ही अवलम्बन करे अथवा किसी दूसरे कामको करे, बशर्ते कि उसमे लाभ होते रहनेकी गुजाइश हो। लेकिन बात केवल इतनी ही है कि जॉच करनेपर ऐसा ही मालूम होगा कि दूसरा ऐसा कोई धन्धा नही है जो कपडा बनानेसे सम्बन्धित क्रियाओसे बढकर अमली और फायदेमन्द साबित हो और जो बहुत बडे पैमानेपर किया जा सकता हो तथा सारे हिन्दुस्तानके मदरसोमे दाखिल किया जा सकता हो।

हमारे जैसे दरिद्र देशमे हाथसे काम करनेकी तालीमसे दुहरा काम बनेगा। एक तो उससे हमारे बालकोकी शिक्षाका खर्च निकलेगा और दूसरे, वे एक ऐसा धन्धा सीख जायेगे जिसका वे चाहे तो अपनी जीविकाके लिए आगेकी जिन्दगीमे सहारा ले सकते है। ऐसी प्रणालीसे हमारे बालक अवश्य ही आत्मावलम्बी होगे। हम मेहनत-मजदूरीसे घृणा करना सीखे, इससे हमारा राष्ट्र जितना कमजोर होगा, उतना किसी और वस्तुसे नही।

अब मै हृदयकी शिक्षाके सम्बन्धमे एक बात कहना चाहता हूँ। मै नही मानता कि यह पुस्तकोके द्वारा दी जा सकती है। यह तो सिर्फ शिक्षकके प्राणप्रेरक सहवासके ही द्वारा मिल सकती है। और, आरम्भिक तथा माध्यमिक पाठशालाओमे भी, शिक्षा कौन लोग देते है? क्या उन पुरुषो और स्त्रियोमे निष्ठा और चारित्रिक बल होता है? क्या खुद उन्होने हृदयकी शिक्षा पाई है? क्या उनसे यह उम्मीद भी की जाती है कि वे अपने सुपुर्द किये गये लडको और लडकियोके स्थायी गुणोपर ध्यान रखे? नीची कक्षाओके मदरसोके लिए मुदर्रिस तजवीज करनेका तरीका क्या शील-चारित्र्यके विकासके लिए एक बडी भारी बाधा नही है? क्या शिक्षक गुजर-बसरके लायक तनख्वाह पाते है? और यह बात तो हम जानते ही है कि प्राइमरी स्कूलोके शिक्षकोका चुनाव, उनमे कितनी देशभक्ति है इसे देखकर नही किया जाता है। वहाँ तो सिर्फ वे ही लोग आते है जिनकी रोटीका सहारा कही दूसरी जगह नही होता।

अब रही शिक्षाके माध्यमकी बात। इस विषयपर मेरे विचार इतने विदित है कि यहाँ उनके दुहरानेकी जरूरत नही। इस विदेशी भाषाके माध्यमने लडकोके दिमाग-को शिथिल कर दिया है और उनकी दिमागी शक्तियोपर अनावश्यक बोझ डाला है। उन्हे रट्टू और नकलची बना दिया है। मौलिक विचारो और कार्योके लिए अयोग्य कर दिया है और अपनी शिक्षाका सार अपने परिवारवालो तथा जनतातक पहुँचानेमे असमर्थ बना दिया है। इस विदेशी माध्यमने हमारे बच्चोको अपने ही घरमे पूरा-पक्का परदेशी बना दिया है। वर्तमान शिक्षा-प्रणालीका यह सबसे बडा दुखान्त दृश्य है। अग्रेजी भाषाके माध्यमने हमारी देशी-भाषाओके विकासको रोक दिया है। यदि मेरे हाथमे मनमानी करनेकी सत्ता होती तो मै आजसे ही विदेशी भाषाके द्वारा अपने देशके लडके-लडकियोकी पढाई बन्द करवा देता, और सारे शिक्षको और अध्यापकोसे यह माध्यम तुरन्त बदलवाता या उन्हे बरखास्त करा देता। मै पाठ्य-पुस्तकोकी तैयारीका इन्तजार न करता। वे तो परिवर्तनके पीछे-पीछे चली आयेगी। यह खराबी तो ऐसी है, जिसके लिए तात्कालिक इलाजकी जरूरत है।

विदेशी माध्यमके मेरे इस अटल विरोधके कारण ही लोग मुझपर यह अनुचित आरोप मढते है कि मै विदेशी सस्कृतिके या अग्रेजी भाषा पढनेके खिलाफ हूँ। 'यग इडिया'मे अक्सर मैने यह विचार प्रतिपादित किया है कि मै अग्रेजीको अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और कूटनीतिकी भाषा मानता हूँ और इसलिए उसके ज्ञानको हममे से कुछ लोगोके लिए आवश्यक समझता हूँ। 'यग इडिया'के पाठकोकी नजरसे यह गुजरा ही होगा। मै यह जरूर मानता हूँ कि अग्रेजी भाषामे साहित्यकी और विचारोकी अत्यन्त समृद्ध निधियाँ प्राप्त है। अतएव जिन लोगोको भाषाकी ईश्वरी देन हो उन्हे उसके सूक्ष्म अध्ययनके लिए मै अवश्य ही उत्साहित करूँगा और उनसे यह अपेक्षा करूँगा कि वे अपने देशके लिए उसकी ज्ञान-राशिको देशी भाषाओके द्वारा प्रकट करे।

दुनियासे अलहदा रहने या उसके और अपने बीच दीवार खडी करनेकी बात तो मै कदापि नही कहता। यह तो मेरे विचारोसे बडी दूर भटक जाना है। परन्तु हाँ, यह मै जरूर अदबके साथ कहता हूँ कि दूसरी सस्कृतियोके गुणका ज्ञान और मान अपनी निजी सस्कृतिके गुणके ज्ञान-मानके पीछे तो अच्छी तरह चल सकता है, पर आगे कभी नही। मेरा तो यह निश्चित मत है कि दुनियामे किसी सस्कृतिका भण्डार इतना भरा-पूरा नही है जितना कि हमारी सस्कृतिका है। हमने उसे जाना नही है, हम उसके अध्ययनसे दूर रखे गये है और उसके गुणको जानने और माननेका मौका हमे नही दिया गया है। हमने तो उसके अनुसार चलना करीब-करीब त्याग ही दिया है। बिना आचारके कोरा बौद्धिक-ज्ञान वैसा ही है जैसा कि भोमिया लगाया हुआ मुर्दा। वह देखनेमे तो शायद सुन्दर दिखाई देता है परन्तु उसमे स्फूर्ति या प्रेरणा देनेवाली कोई भी बात नही। मेरा धर्म मुझे यह अनुज्ञा नही देता कि मै दूसरेकी सस्कृतिको तुच्छता या अनादरकी दृष्टिसे देखूँ, उसी तरह वह इस बातपर भी जोर देता है कि मै खुद अपनी सस्कृतिको भी मानूँ और उसके अनुसार चलूँ, क्योकि ऐसा न करनेका अर्थ सामाजिक दृष्टिसे आत्महत्या कर लेना होगा।

[अग्रेजीसे]

यग इंडिया, १-९-१९२१

१७. विनाशका नैतिक औचित्य

श्रीयुत एन्ड्रयूज साहबने मुझे एक बड़ा ही सुन्दर और करुणा पैदा करनेवाला पत्र लिखा है। उसे मैं यहां देता हूं। आशा है, पाठक उसकी कद्र करेंगे।

मैं यह बात जानता हूं कि आप जो विलायती कपडा जलाते हैं वह गरीबोंको मदद पहुंचानेके खयालसे जलाते हैं। मगर मुझे लगता है कि इसमें आपने गलती की है। अगर विलायती कपडोंके पूरे, या ज्यादातर बहिष्कारमें आपको सफलता मिली तो मुझे यह स्वयसिद्ध मालूम होता है कि मिलके बने कपडेकी कीमत बढ जायेगी और इससे गरीबोंको धक्का पहुंचेगा। लेकिन इसके सिवा, यह "विदेशी" शब्द बहुत ही चुपचाप जाति-विरोधकी भावनाको उकसाता है और मैं समझता हूं कि इसको उत्तेजना देनेके बजाय रोकनेकी ही आवश्यकता है। आपके हाथों उस भारी ढेरके, जिसमें बढिया-बढिया और सुन्दर कपडे थे, जलाये जानेका चित्र देखकर मेरे दिलको गहरा धक्का पहुंचा। ऐसा जान पडता है कि जिस विशाल सुन्दर जगत्के हम एक अग हैं उसका ध्यान हम भुला रहे हैं और स्वार्थवश होकर केवल भारतको अपना लक्ष्य बना रहे हैं। मुझे अन्देशा है कि यह वृत्ति फिरसे हमें उसी पुराने स्वार्थमूलक और अनिष्ट राष्ट्रवाद तक खींच ले जायेगी। अगर ऐसा हुआ तो हम भी उसी पापपूर्ण घेरेमें पहुंच जायेंगे — कूप-मण्डूक हो जायेंगे जिसमें से निकलनेका प्रयत्न आज यूरोप यों जी तोडकर कर रहा है। लेकिन मैं इस विवादको खींचना नहीं चाहता। मैं तो फिर भी यही कह सकता हूं कि इससे मेरे दिलको धक्का लगा है और मुझे तो यह प्राय हिंसाका ही एक रूप नजर आता है, यद्यपि मैं यह जानता हूं कि हिंसासे आपको कितनी विरक्ति है। विदेशी कपडा जलानेको धार्मिक कर्तव्यका रूप देनेकी बातको मैं बिलकुल पसन्द नहीं करता।

जिस समय आप बडे-बडे बुनियादी नैतिक दोषोंपर — जैसे कि शराबखोरी, नशा-पत्ता, छुआछूत, जातिका घमण्ड इत्यादिपर जोरका प्रहार कर रहे थे, जिस समय आप वेश्यावृत्तिके घृणित पापको दूर करनेका प्रयत्न, अपने हृदयकी उस अनोखी और सुन्दर कोमलताके साथ कर रहे थे, तब उसे देखकर मुझे परम सुख होता था। लेकिन यह विलायती कपडोंकी होली जलाना और लोगोंसे यह कहना कि विदेशी कपडोंको पहनना पाप है, अपने ही साथी स्त्री-पुरुषों, दूसरे देशके अपने ही भाइयों और बहनोंके हाथकी बढिया कारीगरीको यह कहकर आगमें जला देना — कि इनको पहनना अपवित्र होना है — यह सब, मैं नहीं कह सकता कि मुझे कितना भिन्न, कितना अटपटा मालूम होता है। क्या आप जानते हैं कि अब मैं आपके दिये खद्दरको पहननेसे प्राय चौंकता

हूँ? मुझे यह खयाल होता है कि कहीं मैं अपनेको एक "फैरिसी" की तरह यह कहते हुए कि "मैं तुझसे ज्यादा पवित्र हूँ" दूसरेसे श्रेष्ठ न समझने लगूँ। इससे पहले मेरे दिलमें कभी ऐसा खयाल नही उठा था।

यह तो आप जानते ही है कि जब-जब मेरे दिलको आपकी किसी बातसे चोट पहुँचती है तब-तब अपनी पुकार आपको पहुँचानेके सिवा मुझे कुछ और नहीं सूझता। और आपकी इस बातसे मुझे बडा दु:ख हुआ है।

'माडर्न रिव्यू' के ये लेख जिन्हे मैं इसके साथ भेज रहा हूँ, मैंने बड़े उत्साह और हर्षके साथ लिखे थे क्योकि मुझे यकीन हो गया था कि मैंने आपके जीवनके रहस्यका पता पा लिया है। परन्तु अब मेरा मन आपतक पहुँचकर पुकार मचाता है कि आपका यह काम हिंसापूर्ण, कुछका-कुछ और अस्वाभाविक-सा हो रहा है। जब आपने अपने भाईको कुछ बेजा काम करते हुए पाया था तब आपका प्रेम उसके प्रति और भी बढ गया था। उसी तरह मेरे हृदयमें भी इस समय प्रेमका भाव जोरके साथ उमड रहा है। मुझे बताइये कि इसमें आपका क्या हेतु है? 'यग इडिया' में अबतक इस सम्बन्धमें आपने जो कुछ कहा है[1] उससे मेरा जरा भी समाधान नहीं हुआ।

पत्र उनके स्वभावके अनुरूप है। जब कभी मेरे किसी कामसे उनको व्यथा होती है (और यह ऐसा पहला ही मौका नही है) तभी वे मुझपर इस तरह पत्रोकी भरमार करते है। उत्तरका रास्तातक नही देखते, क्योकि यह तो हृदयसे हृदयकी और प्रेमसे प्रेमकी बातचीत है, बहस नही। यह एक व्यथित मित्रके हृदयके उद्गार हैं। और इसका कारण है विदेशी कपडोका जलाया जाना।

जो बात एन्ड्रयूज साहबने प्रेम-भरी भाषामे कही है उसीको इससे पहले बहुतसे लोग, जो मुझसे सहमत नही है, भद्दे, गुस्सा-भरे और ग्राम्य शब्दोमे कह चुके है। एन्ड्रयूज साहबके शब्द प्रेम और दु:खसे भरे होनेके कारण, मेरे दिलमे गहरे पैठ गये है और पूरा उत्तर पानेके अधिकारी हैं। परन्तु जिन लोगोके शब्द क्रोध-भरे थे उन्हे वैसे ही अलग रख देना पडा — कही चलते-चलते यो ही कोई बात कह दी तो भले ही। एन्ड्रयूज साहबके शब्दोमे हिंसाका लेश नही है और ये प्रेमसे सने हुए हैं, इसलिए वे मुझपर असर कर गये हैं। दूसरे लोगोके शब्द हिंसा और द्वेषसे युक्त थे, इसलिए कुछ भी असर न डाल सके और अगर मैं उलटके वैसा ही जवाब दे सकता होता या मेरी वैसा जवाब देनेकी आदत होती तो उनका गुस्सा-भरा ही जवाब मिलता। एन्ड्रयूज साहबका यह पत्र उस अहिंसाका नमूना है जो स्वराज्यको शीघ्र प्राप्त करनेके लिए आवश्यक है।

खैर, यह तो प्रसगवश कह दिया। हाँ, विदेशी कपडोको जलानेकी आवश्यकताके विषयमे तो मेरा मत अब भी वैसा ही पक्का बना हुआ है। इसकी क्रियामे जाति-विरोधपर कही भी जोर नही है। अपने परिवारमे अथवा चुने हुए मित्रोकी मण्डलीमे

१. देखिए खण्ड २०, पृष्ठ ४५०–५२, उप शीर्षक "विदेशी कपडे क्यों जलायें?"।

भी मैं ठीक ऐसा ही करता। मैं जो कुछ करता हूं या जिसके करनेकी सलाह देता हूं उसे मैं एक अचूक कसौटीपर कसता हूं। कसौटी यह है कि मैं अपने अजीज और नजदीकी लोगोंके सम्बन्धमें भी ठीक वही काम करूंगा या नहीं? इस विषयमें मेरे धर्मका, मेरे विश्वासोंका आदेश बिलकुल साफ है। चाहे मित्र हो चाहे शत्रु, मुझे तो सबके साथ एक ही सा रहना चाहिए। और यही विश्वास इस बातका कारण है कि मुझे अपने ऐसे कितने ही कार्योंपर यकीन होता है जिनसे अक्सर मेरे मित्र उलझनमें पड़ जाया करते हैं।

मुझे याद है कि मैंने एक दफा एक बड़ी अच्छी दूरबीनको समुद्रमें फेंक दिया था। क्योंकि उसके कारण मेरे एक प्यारे मित्रमें[1] और मुझमें बराबर बहस हुआ करती थी। पहले-पहल तो वे भी हिचकिचाये, लेकिन फिर उन्होंने समझ लिया कि हां, इस कीमती और सुन्दर चीजका भी नाश कर देना ठीक ही था, यद्यपि वह उन्हें एक मित्र द्वारा भेंटमें दी गई थी। अनुभवसे मालूम होता है कि बड़ेसे-बड़ा और बढ़िया तोहफा भी, अगर वह हमारी नैतिक उन्नतिमें बाधा डालता है तो जरूर ही नष्ट कर डालना चाहिए, उसमें जरा भी हिचकिचानेकी अथवा यह सोचनेकी जरूरत नहीं कि उसके बदले हमें क्या मिलनेवाला है। अगर घरकी कीमतीसे कीमती पुरानी चीजोंमें भी प्लेगके जन्तु फैल जायें तो उन्हें "स्वाहा" कर देना क्या हमारा पवित्र कर्त्तव्य नहीं हो जाता है? मुझे याद पड़ता है कि जब मैं नौजवान था, मैंने खुद अपनी धर्मपत्नीकी प्रिय चूड़ियां टुकड़े-टुकड़े कर डाली थीं। क्योंकि वे हमारे बीचमें मतभेदका कारण बन गयी थीं। और, अगर मुझे ठीक-ठीक याद होता है तो वे चूड़ियां उसकी मां की दी हुई थीं। मैंने यह काम घृणा या द्वेषके वश होकर नहीं, बल्कि प्रेम-वश किया, यद्यपि अब अपनी पकी उम्रमें मैं देखता हूं कि उसमें मेरा अज्ञान था, पर इस विनाशने हमको सहायता दी और हमारी जुदाई दूर की।

हां, अगर तमाम विदेशी चीजोंपर जोर दिया गया होता तो यह बात जातिका विरोध करनेवाली, संकीर्णतायुक्त और शरारत-भरी होती। जोर तो सिर्फ तमाम कपड़ोंपर दिया जाता है। इस मर्यादाके कारण प्रस्तुत बहिष्कार एक बिलकुल अलग चीज बन जाती है। मैं यह नहीं चाहता कि अंग्रेजी लीवर घड़ियां या जापानकी वार्निश की हुई लकड़ीकी सुन्दर वस्तुएं भारतमें न आने पायें। लेकिन मुझे यूरपकी उम्दासे-उम्दा किस्मकी शराब जरूर नष्ट करनी होगी, फिर चाहे वह कितने ही परिश्रम और कितनी ही खबरदारीके साथ क्यों न बनाई गई हो। शैतानका जाल बड़ी मायाके साथ बिछा रहता है और जहां कार्य और अकार्यका भेद इतना सूक्ष्म रहता है कि उसका पहचानना कठिन होता है वहां तो वह बहुत ही मोहोत्पादक हो जाता है, लेकिन भले और बुरेकी विभाजक रेखा तो फिर भी वैसी ही सुदृढ और अमिट बनी हुई है। उसकी सीमाका जरा उल्लंघन हुआ नहीं कि बस, निश्चयपूर्वक मौत समझिए।

भारतमें आज जाति-विरोध विद्यमान है। बड़ी ही कोशिशोंके बाद लोगोंके दुर्विकारों-दुर्भावोंकी गतिको रोक रखना सम्भवनीय हुआ है। आम तौरपर लोगोंके

१ हरमान कैलेनबैक, एक जर्मन वास्तुकार, दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके सहयोगी।

दिल बुरे भावोसे भरे हुए है। इसका कारण यह है कि वे कमजोर है और अपनी कमजोरीको निकालनेका उपाय बिल्कुल नही जानते। उनके इसी दुर्भावको मै मनुष्यो परसे हटाकर वस्तुओकी ओर ले जा रहा हूँ।

विदेशी कपडेके प्रेम या मोहके ही कारण यहाँ विदेशियोका आधिपत्य हुआ, मुफलिसी छा गई और इससे भी बुरा और क्या होगा कि कितने ही घरोकी लाज भी जाती रही। पाठक, शायद, यह बात न जानते होगे कि थोडे ही दिन पहले, काठियावाडके सैकडो "अछूत" बुनकर बम्बईकी नगरपालिकामे मेहतरोका काम करने लगे क्योकि उनका बुनाईका धन्धा खत्म हो गया था। और अब इन लोगोका जीवन इतना दूभर हो गया है कि बहुतेरे लोग तो अपने बाल-बच्चोसे हाथ धो बैठे है और उनका स्वास्थ्य और चरित्र, दोनो ही चौपट हो चुका है। कुछ लोग तो इतने बेबस हो गये है कि अपनी बेटियो और बीबियोतक की लाजको अपनी आँखो जाते हुए देखते है, पर कुछ कर नही सकते। पाठक शायद नही जानते होगे कि गुजरातमे इस श्रेणीकी बहुतसी औरते, कोई घर-धन्धा न होनेके कारण, आम सडको पर काम करनेके लिए लाचार हुई है और वहाँ वे, किसी न किसी ढगके दबावसे अपनी इज्जतको बेचनेपर मजबूर होती है। पाठक यह भी न जानते होगे कि पजाबके स्वाभिमानी बुनकरोको जब कोई पेशा न रहा तो वे — बहुत बरसोकी बात नही है — फौजमे भरती हो गये और अपने अफसरोके हुक्मपर स्वाभिमानी और बे-गुनाह अरबोका सहार करनेके लिए एक हथियार बन गये। और यह उन्हे अपने देशके लिए नही, बल्कि रोटियोके लिए करना पडा। और अब इन बहके हुए भडैतियोको समझाकर उनसे यह खूनी पेशा छुडाना कठिन मालूम होता है। जो पेशा किसी जमानेमे इज्जत और कारीगरीका माना जाता था आज वही उन्हे बदनामीवाला दिखाई देता है। जब ढाकाके बुननेवाले जुलाहे विश्वविख्यात शबनम नामकी मलमल बनाते थे तब तो वे "बदनाम" नही समझे जाते थे।

तो, क्या अब यह कोई ताज्जुबकी बात है जो मै विदेशी कपडेको छूना पाप समझूँ? क्या उस मनुष्यके लिए, जिसका मेदा बहुत कमजोर पड गया है, भारी भोजन करना "पाप" नही होगा? क्या ऐसे खानेको उसे नष्ट नही कर देना चाहिए? अथवा फेक न देना चाहिए? अगर मेरा लडका बीमार पडा हो और उसे भारी भोजन करना बिल्कुल मना हो, परन्तु फिर भी वह उसे खाना चाहे तो मै जानता हूँ कि उस समय मुझे उस अन्नका क्या करना चाहिए। उसकी हवस छुडानेके लिए, उसे हजम करनेकी ताकत होते हुए भी, मै खुद उसे न खाऊँगा और उसके सामने ही उसको नष्ट कर दूंगा, जिससे कि वह खाना पाप है यह बात उसे अच्छी तरह जँच जाये।

यदि विदेशी कपडेका जलाना, ऊँचीसे-ऊँची नैतिक दृष्टिसे उचित ठहरता हो तो स्वदेशी कपड़ेकी कीमत बढ जानेकी सम्भावनासे हमे घबराना नही चाहिए। विदेशी कपडोकी यह होली स्वदेशी कपडेकी उत्पत्तिको उत्तेजना देनेका अधिकसे-अधिक गतिपूर्ण उपाय है। अपनी सारी शक्ति लगाकर एक प्रचण्ड प्रयत्नके द्वारा और इस आवश्यक विध्वसात्मक कार्यको तेजीमे पूरा करके हमे हिन्दुस्तानको उसकी मोह-निद्रासे जगाना

है। उसकी मजबूरीसे उत्पन्न सुस्तीको दूर करना है। असम 'गजेटियर'के रचयिता मि० ऐलनने १९०५मे कामरूपके विषयमे लिखा था—

> **इधर कुछ वर्षोंसे लोग विदेशी कपडोको पसन्द करने लगे हैं। यह परिवर्तन ऐसा है कि जिसका समर्थन नहीं किया जा सकता, क्योकि जो समय पहले करघोपर बिताया जाता था उसमें अब कोई दूसरा उपयोगी काम-धन्धा नहीं किया जाता।**

असमियोसे मैंने यह बात कही और वे बहुत नुकसान उठानेके बाद, इन शब्दोकी सच्चाईका अनुभव करते है। हिन्दुस्तानके लिए विदेशी कपडा वैसा ही है जैसा कि शरीरके लिए विजातीय द्रव्य। हिन्दुस्तानके आरोग्य-लाभके लिए विदेशी कपडेको दियासलाई दिखाना उतना ही आवश्यक हे जितना कि शरीर-स्वास्थ्यके लिए विजातीय द्रव्यका नाश करना आवश्यक है। एक बार जहाँ आपने स्वदेशीकी अविलम्ब आवश्यकताको स्वीकार कर लिया कि फिर विदेशी कपडोका अग्निसस्कार किये विना छुटकारा ही नही है।

और न हमे इसी बातसे डरना चाहिए कि सर्वांगपूर्ण स्वदेशीकी भावनाका विकास करते हुए हम कही सकीर्णता और दूसरे लोगोसे अपनेको अलग रखनेकी भावना न पैदा कर बैठे। बात यह है कि दूसरोकी पवित्रताकी रक्षा करनेके पहले हमे स्वय अपने शरीरको भोगसे होनेवाले विनाशसे बचाना चाहिए। भारत आज एक बिलकुल निर्जीव पिण्ड हे, जो दूसरोकी इच्छाके अनुसार सचालित होता है। आत्मशुद्धि अर्थात् सयम और त्यागके द्वारा उसमे प्राणका सचार होने दीजिए और वह स्वय अपने लिए तथा सारी मनुष्य-जातिके लिए एक वरदानरूप होगा। पर अगर लापरवाहीके के साथ उसे भोगलोलुप, उद्धत और लोभी होने दिया गया और फिर उसका उत्थान हुआ तो वह कुम्भकर्णके सदृश केवल सहार ही करेगा और अपने तथा मनुष्यजातिके लिए शाप-रूप हो जायेगा।

और जो मनुष्य स्वदेशीमे दृढ विश्वास रखता है उसे "फैरिसी"की तरह खादी पहनकर ऐसा न सोचना चाहिए कि मै औरोसे श्रेष्ठ हूँ। "फैरिसी" तो अपने बडप्पनके लिए सद्गुणोको मानो आश्रय देता है। स्वदेशीकी दृष्टिसे खादी पहनना तो इतना स्वाभाविक होना चाहिये जैसे मनुष्यके लिए श्वासोच्छ्वास लेना। दूसरे लोग जो इसकी आवश्यकता या उपयोगिताके कायल नही हैं वे चाहे इसे अशुद्ध भावसे करे अथवा बिल्कुल इससे दूर रहे, पर हमे तो इसे एक स्वाभाविक और नित्यकर्म की तरह करना है।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १–९–१९२१

१८. पत्र : रैहाना तैयबजीको

असंशोधित

चटगाँव
१ सितम्बर, [१९२१]

मेरी प्यारी रैहाना,[१]

तुम्हारा प्यारा पत्र मिला। तुम और माताजी दोनो सही हो और मुझे जरा भी सन्देह नही कि तुम ज्यादा ठीक हो। माताजीने व्यावहारिक समझदारीकी बात कही है। तुमने जीवनके कटु अनुभवोसे सर्वथा अप्रभावित अपनी अन्तरात्मामे सहज उपजी बातको ज्योका-त्यो व्यक्त कर दिया है। परित्याग किए हुए विदेशी वस्त्र मध्यवर्गके लोगोको नही दिये जा सकते। वह कोई स्वदेशी नही होगी। यदि लोग मुझे सत बताकर आरामसे बरतरफ कर दे तो मेरा क्या बस है? मै जनतासे वह सब कुछ करनेको नही कहता जो मुझे सतके गुणोसे विभूषित करे। मै तो केवल लोगोसे सैनिककी भावना अपनानेको कहता हूँ जो स्वराज्यके लिए अपरिहार्य है। यदि स्वराज्य हासिल करनेका अर्थ सत बनना है तो मै चाहता हूँ कि हम सब सत बन जाएँ और तुम अपने मनोहारी ढगसे माताजीके विरोधका शमन कर सकती हो। हमे बनियो जैसी नफा-नुकसान और सौदेबाजीकी भावना छोडकर धर्म-सैनिकोकी तरह शुद्ध त्याग करना चाहिए।

हमारे यहाँ सुन्दर रगवाले बारीक वस्त्र पहले भी हुआ करते थे। तुम्हारी अहतुष्टि या रुचिके लिए जो चीज जरूरी लगे उसके लिए तुम्हे काम करना चाहिए। आज तो केवल एक ही रुचि हो सकती है, दूसरी नही, और वह है स्वराज्यके लिए। इसके अलावा कुछ नही। यदि मेरा तर्क तुम्हारा समाधान कर सके तो मै यह दायित्व तुमपर डालता हूँ कि तुम माताजीको समझाओगी और मुझे सूचित करोगी कि तुमने अपनी कपडोकी अल्मारीसे सारा कूडा साफ कर दिया है। मै इतवारको कलकत्ता पहुँच रहा हूँ और शायद १२ तक वहाँ रहूँगा। मेरा पता होगा ४, पोलक स्ट्रीट।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गाधी

अग्रेजी पत्र (एस० एन० ९६३४) की फोटो-नकलसे।

१. अब्बास तैयबजीकी पुत्री।

१९. पत्र : महादेव देसाईको

चटगाँव,
१ सितम्बर, [१९२१]

भाईश्री महादेव,

पैन्सिलसे लिखा तुम्हारा एक लम्बा पत्र मुझे मिला है। तुम्हारे इस पत्रको पढनेमे मुझे तकलीफ हुई। कभी-कभी पैन्सिलसे लिखे हुए अन्य लोगोके पत्र भी मुझे प्राप्त होते है और उन्हे पढनेमे मुझे दिक्कत होती है, इससे मेरी समझमे यह आ गया है कि पैन्सिलसे लिखे हुए मेरे पत्र भी लोगोके लिए कष्टकर होते होगे। मुझे यह आशका तो थी ही कि पैन्सिलसे लिखना गुनाह है लेकिन अपनी विषम स्थितिको देखते हुए मैंने यह छूट ले ली थी। लेकिन जब दूसरा कोई यह गुनाह करता है तब मुझसे नही सहा जाता। तुमने तो गुनाह नही किया है, यह मैं जानता हूँ। तुम्हे एक प्रति अपने लिए रखनी थी। बहुत बार पहली कार्बन कापी अधिक साफ होती है।

विचार बदलता हूँ।[1] तुम मुझे पहले कलकत्तेमे मिलो और बादमे देवदासको[2] बुलाओ — यही अधिक उचित जान पडता है। तुमने फिलहाल वही रहनेका निश्चय किया हो तो देवदासको तार कर देना। लेकिन मुझे ऐसा लगा कि मेरे साथ तुम सलाह-मशविरा कर लो, उसके बाद ही कुछ करना ठीक होगा, इसलिए मैं एक बिलकुल ही अलग प्रकारका तार[3] भेज रहा हूँ।

मलाबारमे जो-कुछ हुआ उसका समाचार मैंने बादमे देखा। उसके सम्बन्धमे 'यग इडिया'[4] के लिए एक टिप्पणी लिखकर मैंने भेज भी दी है। तुम्हे उसकी एक प्रति भेजी होती तो अच्छा होता। तुम्हारे लेख तो मुझे कलकत्ता पहुँचनेपर ही देखनेको मिलेगे।

मालवीयजी[5] अथवा कविके मनमे मेरे प्रति कोई ईर्षा-भाव है, यह बात तो मैं स्वप्नमे भी नही सोच सकता। दोनोमे भीरुता है और दोनोको अपने विचारोके सम्बन्धमे अभिमान है। यदि अभिमानके साथ भीरुता न हो तो अभिमानको सहन किया जा सकता है। हम जिस दृष्टिसे असहयोगको देखते है, असहयोगियोके दोषोको दरगुजर कर देते है वैसा ये दोनो नही कर सकते और इसीलिए इसका विरोध करते है। इसके अतिरिक्त मेरे विचारोकी नवीनता और सरलता उन्हे भ्रमित भी करती

१ गाधीजीने यहाँ दो वाक्य लिखकर काट देनेके कारण यह लिखा है।

२ १९००–१९५७, गाधीजीके सबसे छोटे पुत्र।

३ यह उपलब्ध नही है।

४ देखिए अगला शीर्षक।

५ १८६१–१९४६, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके संस्थापक, १९०९ और १९१८ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष।

है। उनके सम्बन्धमे इससे अधिक कुछ मानना मुझे तो पापरूप ही लगता है। विपिन-बाबू[1] अथवा विजयराघवाचार्यके[2] मनमे अवश्य बहुत-कुछ हो सकता है। रमाकान्तको मैं बालक मानता हूँ। ऐसा जान पडता है कि उसने स्वतन्त्र विचार रखनेका दावा करनेकी खातिर ही मेरा विरोध किया है। हमे उसका विचार ही नही करना चाहिए और पत्रकारके रूपमे मधुर टीका करनेके कामको करते रहना चाहिए। [3]के सम्बन्धमे कवि और मालवीयजीके विचारोको अवश्य बताते रहो। यह काम 'यग इडिया' मे अधिक नही हो सकता लेकिन 'इडिपेडेट' मे आरामसे और बखूबी हो सकता है।

इन्दुके लिए हाथसे कते सूतके हार सहज ही बनाये जा सकते है।

तुम काफी पिओ तो इससे मुझे तनिक भी बुरा नही लगेगा। मेरे लिए यह ज्यादा जरूरी है कि तुम अपने स्वास्थ्यको बनाये रखो। अलबत्ता, मेरा ऐसा अनुभव है कि सामान्य रूपसे काफीकी जरूरत नही होती, और मैं ऐसा मानता भी हूँ। जब मैं काफी पीता था, मुझे कोई फायदा नजर नही आया। अब नही पीता, इससे भार तो कम हुआ ही है, और बला टली सो अलग।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४१८) की फोटो-नकलसे।

२०. मोपला उत्पात

मलाबारमे एकाएक जो अशान्ति फैल गई है उसकी थोडी-बहुत खबरे, यहाँ मेरे पास सुदूर उत्तर-पूर्वमे भी, आ पहुँची है। यह लेख मैं जन्माष्टमीके दिन रेलगाडीमे बैठे हुए लिख रहा हूँ। पाठकोके हाथमे यह लेख नौ दिन बाद पहुँचेगा, तबतक और भी बाते प्रकट हो जायेगी। तो भी जो खबरे अबतक मालूम हुई है उनसे निकलनेवाले सिद्धान्तोका विचार तो, अगले समाचारोके अनुसार तथ्योमे कमीबेशी होने-पर भी, हम कर सकते है।

मोपला लोग मुसलमान है। उनकी नसोमे अरब लोगोका खून बहता है। कहते है कि उनके बाप-दादे, कितने ही वर्षो पहले, अरबिस्तानसे आकर मलाबारमे बस गये थे। उनका मिजाज बडा तेज है। वे बहुत जल्दी आवेशमे आ जाते है, जरा-सी बातमे बिगडकर लड पडते है। उनके हाथो अनेक हत्याएँ हुई है। उनको वशमे करनेके लिए, बहुत बरस पहले, एक खास कानून भी बनाया गया था। उनकी आबादी दस लाख गिनी जाती है। यह जाति अपढ किन्तु बहादुर है। मौतका तो उन्हे डर ही नही। जब लडाईपर निकलते है तब पीछे पाँव न हटानेकी कसम खाकर ही निकलते

१. विपिनचन्द्र पाल (१८५८–१९३२), बगालके शिक्षाशास्त्री, पत्रकार, वक्ता और राजनीतिक नेता।
२. १८५२–१९४३, अध्यक्ष, भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस, १९२०।
३. साधन-सूत्रमें यहां एक शब्द स्पष्ट नही है।

है। इससे, कहा जाता है कि वे मारते या खून करते जरा भी नही हिचकते। उन्हीके लड पडनेके डरसे जनाव याकूव हसन[1] रोके गये थे और फिर कैद भी कर लिये गये थे। इस वार वे क्यो विगड खडे हुए, यह वात अभी तो साफ-साफ मालूम नही हुई है। कहते है कि उन्होने छ सरकारी नौकरोको मार डाला है, जिनमे दो गोरे और चार भारतीय थे। कुछ और भी मारे गये होगे। उनमे से कोई ५०० आदमी मारे गये है। यह भी सुनते है कि उन्होने कितने ही मकानोको जला डाला और लूट लिया। कालीकट तथा उसके ऊपरके हिस्सेमें आजकल फौजी कानून जारी है।

इस तरह अभी मलावारमे प्रगति रुक गई है और सरकारकी वन आई है। सरकार तो ऐसे उपद्रवोको दवानेकी कला खूव जानती है। कितने ही बे-गुनाह लोग मर चुके होगे और मरेगे। सरकारको वुरा कौन कहेगा? और कहे भी तो सरकार उसे सुनने क्यो लगी?

जो अशान्तिको रोके अथवा उसका शमन कर सके वही सरकार है। मलावारने दिखा दिया है कि हम असहयोगियोका प्रभाव अभी पूरा-पूरा नही जमा। जो लोगोको अपने वश कर सके वही सरकार है। हम तो लोगोको एक ही रीतिसे वशमे कर सकते है — शान्तिसे।

अशान्तिके यानी मार-काटके द्वारा हम विजय प्राप्त करना चाहे तो भी इच्छित काम करनेकी ताकत हममे होनी चाहिए। उस शक्तिको प्राप्त करनेके लिए हमे क्या करना चाहिए, यह सोचना फिजूल है, क्योकि इस उपायसे फतह हासिल करना हमारी वुद्धि और अनुमानके वाहरकी वात है।

पर यह तो साफ दिखाई देता है कि हमारी शान्ति भग हो गई। दो प्रतिकूल वस्तुएँ एक साथ नही चल सकती। एक तरफसे शान्ति और दूसरी तरफसे अशान्ति हो तो इसमे किसीकी भी जीत नही हो सकती।

यह तो पक्की वात है कि हम मोपलाओके ऊपर असर न डाल सके। उनके दिलोका इतना परिवर्तन नही हो पाया कि जिससे वे अशान्त हो ही नही। उनकी अशान्ति तो हमको चौंका देनेवाली है, वह हमारी प्रगतिको रोकती है।

अब, जो लोग यह मानते है कि हमारी जीत शान्तिके ही द्वारा हो सकती है, उन्हे तो समझना ही चाहिए कि शान्तिकी रक्षाके लिए हमे दुगुना प्रयत्न करना होगा। हमे यह सदा याद रखना होगा कि अशान्तिको हमे अपने दिलमे भी स्थान नही देना है।

दूसरे प्रान्तोको भी अपने कर्त्तव्यके पालनमे जुट जाना चाहिए। एक प्रान्त भी अगर पूरी कोशिश करे तो इसी सालमे स्वराज्य स्थापित करना नामुमकिन नही। अगर दूसरे प्रान्त पिछड जायें और सिर्फ एक ही प्रान्त पूरी तरहसे असहयोग करे तो भी मै इसी सालमें स्वराज्य प्राप्त करना विलकुल सम्भव मानता हूँ। परन्तु, यदि दूसरे प्रान्तोमे अथवा किसी एक ही प्रान्तमें अशान्तिके जारी रहनेपर केवल एक ही प्रान्तके शान्त साहससे मै यह दावेके साथ कहनेकी हिम्मत नही करता कि स्वराज्य

१ दक्षिण आफ्रिकी भारतीय लीगके मन्त्री।

मिल ही जायेगा। विघ्न तो मै बहुतेरे देखता हूँ, परन्तु अपना कर्त्तव्य भी मुझे बिलकुल साफ दिखाई देता है। हमे अधिक सयम रखना है, अधिक शुद्ध होना है, अधिक जागृत या सचेत रहना है, अधिक कुरबानियाँ करना है। दोनो शक्तियोकी दिशाऐ जुदी-जुदी है। इसलिए जब हमारी शान्तिका बल अधिक होगा तभी हमारी गाडी आगे चल सकती है। एक गाडीमे चार बैल हो और उनमे से एक मर जाये या छूट निकले तो उसका बोझ बाकीके तीन बैलोको उठाना पडता है। परन्तु अगर चारमे से एक छूटे या मरे तो नही, पर विद्रोही हो जाये — उलटे रास्ते जाने लगे, तो फिर बाकीके तीन बैलोका काम केवल इतना ही नही रहेगा कि एकका बोझा और उठाये, उन्हे उस उलटा चलनेवालेके उपद्रवको रोकनेकी शक्ति भी प्राप्त करनी होगी। इस तरह सच्चे असहयोगियोका बोझ अब और भी बढ गया है।

मैं तो यह बराबर देखता हूँ कि हमारे रास्तेमे भारीसे-भारी विघ्न सरकारकी तरफसे नही, बल्कि खुद हमारी ही तरफसे आते है। हमारी उलटी गति, हमारी नासमझी, हमारे काममे जितनी अधिक रुकावट डालती है, उतनी सरकारकी उलटी गति हमे नही रोकती। यदि सरकारकी विपरीत गतिको हम समझ ले तो हम आगे बढे। परन्तु, स्वय अपनी कमजोरी और उलटी गतिके कारण हम पीछे हटेंगे। सच है, आत्मा ही हमारा शत्रु और हमारा मित्र भी है। इस शत्रुको जीतनेमे ही शान्तिमय असहयोगकी पूरी विजय है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ४–९–१९२१

२१. अधिवेशनकी तैयारी

बहुत वर्षोके बाद अहमदाबादमे काग्रेसकी बैठक फिरसे होनेवाली है। फिर इस बारका अधिवेशन भी दूसरे अधिवेशनोसे बिलकुल अलग प्रकारका होगा। नया सविधान, नई आशा, नया युग! कारण, अगर काग्रेस अपने सम्बन्धमे किये हुए प्रस्तावके अनुसार चलेगी — अर्थात् अगर जनता अपनी की हुई प्रतिज्ञाका पालन करेगी तो हम लोगोको यहाँ इसलिए इकट्ठा होना है कि हम स्वराज्यका उत्सव मनाये। परन्तु ऐसा सुन्दर अवसर कही इन बाकीके चार महीनोमे आ सकता है? बरसोकी बेडिया कही एक क्षणमे टूटती है?

इसका जवाब इस शकाके अन्दर ही है। अगर किसी बीमारको अच्छा होना हो तो जरूर कुछ वक्त लगता है, पर बीमारको अगर अपने मर्जका सिर्फ वहम ही हो, और मर्ज अगर जाना है तो क्षण-मात्रमे ही चला जायेगा। जब वह जायेगा तो एक क्षणमे ही जायेगा। दस साल पहले जिसने बेडियाँ पहनी हो उसकी बेडियाँ टूटनेका भी जब वक्त आता है तब क्या तोडनेकी क्रियामे बहुत-कुछ वक्त लगता है? बस, बात सिर्फ हमारे भयके भागनेकी है। किसीकी आँखोपर पट्टी चढा दी गई और वह अन्धा बना दिया गया। तब, पट्टीके खुलते ही वह तुरन्त देखने न लगेगा

तो और क्या होगा? हाँ, अगर बन्धनको तोडनेकी शर्ते कठिन होती तो कुछ ज्यादा सोचनेकी जरूरत होती। पर यहाँ तो सिर्फ तीन अनिवार्य शर्ते है—(१) हिन्दू-मुसलमानोकी एकता, (२) शान्तिका पालन ओर (३) स्वदेशीका व्यवहार।

पहली दो शर्तोको पालनेके लिए सिर्फ दिलके परिवर्तनकी जरूरत है। इसमे न तो इतनी पैसेकी जरूरत है, न भारी तालीम की और न तलवारकी अर्थात् पशु-वलकी। परन्तु यह लेख मै यह वतानेके लिए नही लिख रहा हूँ कि स्वराज्य इस सालमे मिलेगा ही, अथवा वह किस तरह मिल सकता हे। इस लेखका हेतु तो व्याव-हारिक दृष्टिसे इस वातपर विचार करना है कि काग्रेमके आगामी अधिवेशनको सफल वनानेके लिए अहमदावादको और गुजरातको क्या करना चाहिए।

गुजरातका कर्त्तव्य होगा कि मेहमानोकी सुविधाओका पूरा ध्यान रखा जाये। हम उनका समुचित स्वागत कर सके तो इस प्रसगमे हमारा पहला और विगेष कर्त्तव्य पूरा हो गया।

हमे इसकी पूरी व्यवस्था करनी हे कि मेहमानोको रहने, खाने-पीने, नहाने-धोने, शौच-सफाई ओर प्रकाश आदिकी सारी सुविधाये मिल जाये।

इस वक्त हम रहने और खाने-पीनेका इन्तजाम एक ही ढगका कर सकेगे और वह भी हिन्दुस्तानी ढगका। मुझे लगता है कि अधिवेशनका आयोजन जहाँ किया जा रहा है, उस जगह हम लोग अग्रेजी ढगसे रहनेवाले मेहमानोके लिए कोई प्रवन्ध नही कर सकेगे। हमे पहले ही से खवर दे देनी चाहिए कि जो लोग सिर्फ अग्रेजी ढगसे ही रहना चाहेगे, उनकी सुविधाकी जिम्मेवारी लेनेमे हम असमर्थ है। उन्हे हम यहाँके होटलोका नाम-ठाम लिखकर भेज दे, इतना ही काफी समझा जाना चाहिए।

परन्तु हिन्दुस्तानी व्यवस्था तो हमे ऊँचे दरजेकी करनी चाहिए। आजकल तो यह माना जाता हे कि हिन्दुस्तानी व्यवस्थाके मानी है—गन्दगी ओर अग्रेजी व्यवस्था-के मानी है—सफाई। पर नियम असलमे यह होना चाहिए कि जितनी ही अधिक सादगी उतनी ही अधिक सफाई और जितना ज्यादा ढोग-ढकोसला, उतनी ही ऊपरी शानवान और अन्दर मैलापन। परन्तु अपने आजकलके वरतावमे हमने सादगीके साथ गन्दगीको मिला दिया हे। हमे इसमे से वाहर निकलना होगा।

टट्टी-पाखानेका इन्तजाम, आम तौरपर, वहुत ही खराव होता है। हमे पाखानोकी तादाद वहुत रखनी होगी और उनको साफ रखनेके लिए भी आवश्यक व्यवस्था करनी होगी। अगर अकेले मेहतरोपर ही हमारा दारोमदार रहा तो हम जितनी चाहिए उतनी सफाई न रख सकेगे। हम अगर छुआ-छूतकी वुराईसे मुक्त हो चुके हो तो हमे पाखाना साफ करनेमे कोई दिक्कत नही होनी चाहिए। पाखानोके लिए गड्ढे खोदने होगे ओर अगर हम सूखी मिट्टीके वडे-वडे ढेर तैयार रखेगे तो साफ करनेमे जरा भी कठिनाई न होगी। मेरी तो सलाह यह है कि हिन्दी, उर्दू, गुजराती आदि जितनी भाषाओमे यदि हमसे वन सके, इस विषयकी सूचनाये निकाली जाये तो वे प्रतिनिधियोमे वाँटी जा सकेगी।

जिस तरह पाखानोकी, उसी तरह नहाने-धोनेकी भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। जिसे गरम पानी चाहिए उसे गरम पानी और जिसे ठडे पानीकी जरूरत

हो, उसे ठडा पानी मिलना चाहिए। इस विभागके लिए अलग स्वयसेवक होने चाहिए।

पेशाव-घर विशेष रूपसे अलग बनाये जाने चाहिए।

मैंने अकसर देखा है कि पीनेके पानीकी व्यवस्था जैसी होनी चाहिए, वैसी नही होती। कामचलाऊ नलो या किसी दूसरे सस्ते उपायो द्वारा हमे उसकी ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि पानी सबको आसानीसे मिल सके। इसके सिवा, जिस तरह यह प्रबन्ध होना चाहिए कि लोगोको आसानीसे पानी मिल सके उसी तरह नीचे ढुलनेवाले पानीके निकासका भी प्रबन्ध होना चाहिए। नागपुरमे हमने जहाँ-तहाँ पानीके गड्ढे भरे देखे थे।

खाने-पीनेकी व्यवस्थाके बारेमे भी हमे पूरा विचार करना पडेगा। ऐसा खयाल है कि नागपुरमे यह व्यवस्था काफी अच्छी थी। यदि हम बगाल, मद्रास, पजाब आदि प्रत्येक शिविरके लिए अलग रसोडेका प्रबन्ध कर दे तो हम बहुतेरी असुविधाओसे बच जायेंगे। उत्तम तो यह होगा कि हम प्रत्येक प्रान्तीय कमेटीसे अभीसे उनकी आवश्यकताओके बारेमे पूछ ले। प्रत्येक जगहसे ज्यादासे-ज्यादा कितने लोग आ सकते है, यह तो हम जानते ही है, अत उनका प्रबन्ध कर सकनेमे हमे कोई कठिनाई नही होनी चाहिए।

एक सूचना अभीसे कर देनेकी इच्छा मुझे हो रही है। गुजरातके सब प्रतिनिधि स्वयसेवक हो जाये। दूसरे स्वयसेवकोकी तो जरूरत हमे होगी ही, परन्तु गुजरातके प्रतिनिधि सेवक बनकर हर तरहके इन्तजामकी देखभाल करे और खुद सेवा लेनेका हक छोड दे तो हमारी मेहमानदारी बहुत चमक उठे। यदि हम चाहते हो कि कही भी अव्यवस्था न हो तो हम सबको पूरी तरह सेवक बन जाना चाहिए।

हमे यह आशा रखनी है कि सब मिलकर एक लाख लोग जमा होगे और ऐसी ही आकर्षक साधन-सामग्री भी हमे जुटानी होगी।

इस समय हमने इस विषयका विचार अपनी सुविधाकी दृष्टिसे ही किया है, बाकी इसके बाद किसी अगले अकमे करेगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ४-९-१९२१

२२. टिप्पणियाँ

धोखेसे कैसे बचें?

मुझे जगह-जगहसे पत्र मिल रहे हैं कि लालची लोग खादीके नामसे विदेशी अथवा मिलोंका बना कपडा बेच रहे हैं और वे उसके दाम भी बढा देते हैं। मुझे इसमें कोई आश्चर्य नही लगता। जब समस्त शासनतन्त्र ही धोखेकी नीवपर खडा है तब लोगोंसे दूसरी बातकी आशा कैसे की जा सकती है? अदालतोंमे जायें तो धोखा, दुकानोंमें जायें तो धोखा, अस्पतालोंमे जायें तो धोखा और धारासभाओंमें जायें तो वहाँ भी वैसी ही हालत। इनसे बचनेके लिए ही तो असहयोग किया जा रहा है। हमारा असहयोग मनुष्योंसे नही, मनुष्योंके दुष्कर्मोंसे है। किन्तु एक पापसे पीछा छुडाने पर दूसरे पापमें फँसनेका डर हमेशा ही रहता है। और जबतक मिलोंके जैसा कपडा लेनेकी इच्छा रहेगी और जबतक हमारा कपडा खुद अपनी आँखोके सामने नही बुना जायेगा तबतक धोखा खानेका भय तो रहेगा ही। इसका सबसे आसान तरीका तो एक ही है और वह यह है कि हरएक गांव अपनी जरूरतकी खादी खुद बना ले और शहरोंके लोग वैसी ही खादी ले जो मिलोंके कपडों जैसी न लगे। उसपर कांग्रेसकी छाप लगी हो तो अच्छा। इतनी सावधानी रखनेपर भी धोखेका डर न रहेगा, यह नही कहा जा सकता। लेकिन इतना तो अनिवार्य मानकर सहन ही करना होगा। यह जानने योग्य है कि धोखादेहीकी शिकायतें सिर्फ शहरोंसे ही आ रही हैं। मुझे आशा है कि कुछ समयमें ही लोग बम्बईसे खादी नही मँगायेंगे, बल्कि बम्बईवासी अपनी जरूरतकी खादी आसपाससे मँगायेंगे। गाँवोंसे जो खादी आयेगी उसमें धोखेकी गुंजाइश सम्भवतः कम होगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ४–९–१९२१

२३. असमके अनुभव — १

देश और उसके निवासी

असमका तो मैंने सिर्फ नाम ही सुना था। जब मैं विलायतमें था तब मैंने मणिपुरकी चढाईकी कहानी पढी थी और तबसे मेरा यही खयाल हो गया था कि असमके लोग असभ्य और जगली होंगे। इसीलिए मैंने 'हिन्द-स्वराज्य'में उन्हे जगली लिखा था। यह बात असमी भाइयोंको अखरती थी। हाकिमोंने उस वाक्यका दुरुपयोग भी खूब किया। और, जिसने असमियोंको जगली लिखा, उस अज्ञानीको भला असमी लोग भी कैसे चाह सकते हैं। परन्तु लोग तो अब मनुष्यके हृदयको परखने लगे हैं, तब यह कैसे हो सकता है कि वे निर्दोष अज्ञानपर बुरा मानें? तथापि मैंने, अपनी

इस भूलके लिए, सभामे लोगोके सामने सबसे पहले ही माफी माँग ली। जब मैने अपनी भूलका जिक्र किया तब लोग खिलखिलाकर हँस पडे। क्योकि वे तो माफीकी उम्मीद ही नही करते थे।

असमके लोगोको जगली कौन कह सकता है? कहनेवाला ही मुझ जैसा जगली होना चाहिए। जिनकी स्त्रियाँ सुन्दरसे-सुन्दर कपडा बुनती है और अपने हाथका ही बुना कपडा पहनती है, उन्हे कौन जगली मान सकता है?

गुजरात जिस तरह हिन्दुस्तानके पश्चिममे और विन्ध्याचलके दक्षिणमे है उसी तरह असम ठेठ पूर्व और उत्तरमे है। असम हिन्दुस्तानका उत्तर-पूर्वी कोना है। वहाँसे ब्रह्मपुत्रके किनारे-किनारे तिब्बत जानेका रास्ता है ओर वहाँसे दक्षिणकी ओर पहाडोमे से होकर ब्रह्मदेश जानेका खुश्की रास्ता है। असममे जहाँ देखिए वहाँ हरियाली-ही-हरियाली छाई हुई है। असमकी एक पहाडी — चीरापूँजीपर — हिन्दुस्तानमे सबसे ज्यादा वर्षा होती है। हर साल औसतन कोई ३६८ इच पानी बरसता है। १८६१ ईसवीमे तो यहाँ ८०५ इच पानी बरसा था और उसमे भी, अकेले जुलाई मासमे ही ३६६ इच। साठ इचसे कम बरसात तो यहाँ कही नही होती। इस तरह, जहाँ एक ओर बरसात और दूसरी ओर ब्रह्मपुत्र-जैसी नदी हो, वहाँ हरियालीका क्या पूछना? फिर नदीके आसपास जहाँ-तहाँ टेकडियाँ खडी है, इससे जहाँ-जहाँ नजर फेकते है वहाँ-वहाँ बडे ही सुन्दर और मनोहर दृश्य दिखाई पडते है।

जिस मकानमे हम लोग ठहराये गये है वह ठीक नदीके किनारेपर ही है। सामने नदी शान्तिके साथ वह रही है। 'शान्तिके साथ' शब्दोका प्रयोग मैने जान-बूझकर किया है। पानी खूब गहरा है। इससे उसमे जरा भी छलछलाहट नही दिखाई देती। ब्रह्मपुत्रमे इतनी ताकत है कि बडे-बडे स्टीमर उसमे बारहो महीने चल सकते है। उसके जैसी गहराई हम लोगोमे आ जाये और उसके जैसी शान्ति हम लोगोमे छा जाये, तो हमे स्वराज्य प्राप्त करनेमे किस बातकी देर लगे? हमे उथले पानीकी छलछलाहट नही चाहिए। हमे तो गहरे पानीकी शान्ति और उसमे से प्रकट होनेवाले बलकी जरूरत है।

असममे तरह-तरहके पेड-पौधे और फल फलते है। चाय तो वहाँ है ही। उससे फायदा तो कौन जाने क्या हुआ है, पर नुकसानसे तो हम सब लोग परिचित है। असममे केले, अनन्नास, नारगी, शरीफा इत्यादि बहुतेरे फल होते है। अनाजमे चावलकी फसल मुख्य है।

लोग भोले-भाले और सीधे-सादे है। हिन्दू-मुसलमान दोनो असमी बोली बोलते है। असमिया भाषा बगलाकी बहन मानी जाती है। लिपि बगला है। मै ज्यो-ज्यो ज्यादा घूमता हूँ त्यो-त्यो यही देखता हूँ कि अगर हिन्दुस्तानकी सारी भाषाएँ देव नागरी लिपिमे लिखी जाया करे तो इसमे हमारी राष्ट्रीयताको बहुत बडी ताकत मिले। लिपियाँ तो बस, दो ही हो सकती है — उर्दू और देवनागरी। असमिया, बगला, पजाबी, सिन्धी इत्यादि भाषाएँ यदि देवनागरीमे लिखी जाये, तो उनके समझनेमे बहुत ही थोडी दिक्कत हो, इसमे कोई शक नही। ऐसा होनेमे इन सब भाषाओके पढने-वालोका बहुत-सा समय बच जाये और भाषा बडी आसान मालूम होने लगे।

पर यह तो मै बीचमे एक नया ही मसला छेड बैठा। असमके लोगोको और लोगोसे सुखी कह सकते है। उनकी जमीनको बहुत जोतना नही पडता। नदीकी धाराये जमीनको खाद देती रहती है। इससे लोग थोडी मेहनतसे ही अपनी रोजी कमा सकते है। असम बडी देर बाद अंग्रेजोके कब्जेमे आया, जिससे उसमे 'सुधारो'का, नई सभ्यताका प्रवेश कम हो पाया है। इससे लोग अपना धन और अपनी समृद्धि कायम रख पाये है। असमके लोग मजदूरी तो करते ही नही। पर चायके खेतोपर तो मजदूरोके बिना काम चल ही नही सकता। इसलिए सयुक्त प्रान्तसे मजदूर बुलाये जाते है। यही कारण है कि मजदूरोके साथ अत्याचारोकी कितनी ही बाते सुनाई देती है, और इसीसे चान्दपुरके जैसी घटना घटित हो सकी।

असममे, पचास साल पहले, ऐसा जमाना था कि वहाँके लोगोकी तमाम जरूरते वही पूरी हो जाती थी। पाठक यह जानकर खुश होंगे कि आज भी असममे हरएक औरत बुनना जानती है। अपना कपडा वे खुद ही बुन लेती है। छोटे-बडे सब घरोकी स्त्रियाँ बुनना जानती है। वे पेशेके तौरपर बुननेका काम नही करती, बल्कि घरमें जब-जब फुरसत मिल जाती है तब-तब वे बुनाई किया करती है। जो लडकी बुनाई नही जानती उसकी तो सगाई होना ही मुमकिन नही। जिस घरमे मै ठहरा हूँ उसके मालिक बडे जमीदार है, पैसेकी कमी नही, लेकिन उनकी ७० वर्षकी बूढी माँ, और बहने और पत्नी, सब कपडा बुनती है। उनकी एक दस-ग्यारह सालकी लडकी है। वह भी बुनाई करती है।

असममे रेशम भी अच्छा पैदा होता है। इससे वहाँकी औरते रेशम और सूत दोनो बुनती है। उनपर अनोखे बेलबूटे भी काढ सकती है। पचास बरस पहले प्रत्येक स्त्री सूत भी कातती थी और बुनती भी थी। पर जबसे अंग्रेजी राज्य आया तबसे उसके साथ ही, विलायती सूत भी वहाँ आ पहुँचा। इसी सूतने सब-कुछ चौपट कर दिया। इसी सूतसे ललचाकर औरतोने कातनेका काम छोड दिया। सौभाग्यसे यह नियम था कि जो बुनना नही जानती वह शादी करनेका भी हक नही रखती, इसलिए बुननेकी कला कायम रह गई। जिन औरतोको अभ्यास है उनके लिए तो कातना आसान ही है। इससे अब फिर औरतोमे जागृति हुई है और कातनेका काम भी शुरू हुआ है। पर जिन दिनो असममे विलायती सूतका प्रवेश हुआ उन्ही दिनो एक अंग्रेजी अवलोकनकर्त्ताने यह टीका की थी कि विदेशी सूतको अगीकार करके इन स्त्रियोने कुछ कमाया नही। क्योकि उन्होने कताईके बदले किसी दूसरे उद्योगकी तजवीज नही की।

असममे आज भी ४० हजार एकड जमीनमे कपास पैदा होती है। यह रुई बडे ऊँचे दरजेकी होनी चाहिए, क्योकि इसकी जो पूनियाँ मुझे दिखाई गई थी उन्हे देखकर मुझे आन्ध्र देशकी पूनियोकी याद आ गई। पूनियाँ बहुत ही साफ-सुथरी, और मुलायम थी और उनमे कचरा नही था। मुझे एक कपडेका नमूना भी दिया गया था, वह भी इतना बढिया था कि प्राय आन्ध्रके कपडेकी बराबरी करता था।

असममे असमिया भाषा बोलनेवालोकी आबादी ३७ लाख है। इनमे कमसे-कम १० लाख औरते है। यदि ये दस लाख औरते हिन्दुस्तानके लिए काते और बुने तो

असम न केवल अपनी जरूरतका सारा कपडा खुद तैयार कर सकता है, बल्कि सारे हिन्दुस्तानको भी वहुत-सी खादी दे सकता है।

मालूम होता है कि असमके काग्रेसके कार्यकर्त्ता वहुत अच्छे है। जिनके यहाँ मै ठहरा हूँ वे असमके 'सेनापति' घरानेके है। पुराने बैरिस्टर है। भारी जमीदार है। विधानसभाके सदस्य थे। वहुत सार्वजनिक सेवाएँ की है। अव वे पक्के असहयोगी है। मन्त्री है — श्रीयुत वारदोलाई। वे भी पुराने वकील है। घरवार और जमीन-जायदाद उनके पास भी काफी है। आपने भी पूरा असहयोग किया है। असमी वकीलोकी सख्या ७८ है। उसमे १५ लोगोने वकालत छोड दी है और सवके-सव असहयोगके काममे लगे हुए है। उनके साथ कोई ५०० स्वयसेवक है। उनमे वहुतेरे कालेज छोडकर आये हुए विद्यार्थी है।

असमके लोगोको अफीम खाने-पीनेकी वुरी टेव है। इसमे वे लाखो रुपया गँवाते है। कार्यकर्त्ता लोग कहते है कि असहयोगकी हलचलके वादसे अफीम-सेवनकी कुटेव वहुत कुछ कम पड गई है। कहते है कि उससे प्राप्त होनेवाला सरकारी कर कोई २५ प्रति सैकडा कम हो गया है। विलायती सिगरेट भी लोग बहुत पीते थे, पर उनमे से अव शायद ही कोई पीते हुए नजर आते है। जो लोग पीते है वे सिर्फ स्वदेशी वीडियाँ पीते है। परन्तु यह व्यसन भी हालमे तो छूटता जा रहा है। मुझे यह भी खवर दी गई है कि असहयोगके फलस्वरूप लोग अपने आप सुधार करते जाते है।

स्त्रियोंकी सभा

स्त्रियोकी अलग-अलग तीन सभाएँ हुईं — एक मारवाडी वहनोकी, दूसरी असमी वहनोकी और तीसरी वगाली वहनोकी। इनमे असमी और वगाली वहने तो अपनी कीमतीसे-कीमती विलायती साडियोकी जगह सादीसे-सादी धोतियाँ पहन कर आई थी। वहुत-सी वहने, खादीकी साडी अपने पास न होनेके कारण, शर्मिन्दा हो रही थी, मारवाडी वहने तो विलकुल विलायती कपडे पहनकर आई थी। परन्तु श्री जमनालालजीने[1] मुझसे कहा कि उन वहनोने भी अव खादीकी साडियाँ मँगवाई है। इस सभामे मौलाना मुहम्मद अलीकी धर्मपत्नी[2] भी आई थी। उनकी खादीकी पोशाक देखकर लोग वडे खुश हुए। उनमे वोलनेकी शक्ति अच्छी है। उन्होने खुद, वुरका ओढे-ओढे, भाषण भी दिया था।

विलायती कपडोंकी होली

मै यह गोहाटीमे वैठे हुए लिख रहा हूँ। गोहाटी असमका मुख्य शहर है। कलकत्तेसे १९ घटेका रास्ता है। यहाँ एक भारी सभा हुई थी, जिसमे विलायती कपडेके वडे भारी ढेरकी होली की गई थी। उसमे मैंने कितनी ही महीन धोतियाँ,

१ जमनालाल वजाज (१८८८–१९४२), प्रसिद्ध गांधीवादी उद्योगपति; जिन्होंने गाधीजीकी रचनात्मक योजनाओंमें भरपूर सहयोग दिया, गाधीजीके निकटतम साथियों और सलाहकारोंमें से एक।

२. वेगम साहिवा, देखिए "भाषण: मद्रासमें", १५–९–१९२१ तथा "टिप्पणियाँ", २९–९–१९२१ का उप शीर्षक "एक वहादुर स्त्री"।

पतली साडियाँ, टोपियाँ और लेसे देखी। होली सुलगानेका पवित्र काम तो मेरे ही हाथो कराया जाता है। होली सुलगानेके बादका दृश्य मुझे बडा भव्य दिखाई दिया। सैकडो बारीक कमीजे और दूसरे कपडे हवामे उडते हुए होलीमे गिर रहे थे। इस प्रान्तमे टोपी कम पहनी जाती है। इससे विदेशी टोपियाँ कम उछली। खादी तो यहाँ भी पहुँच गई है। इमसे जो लोग टोपी पहनते है वे बहुत करके खादीकी ही पहनते है।

मारवाडी

असममे मारवाडी भाइयोकी सख्या काफी अधिक है। बाहरका तमाम व्यापार उन्हीके हाथोमे है। मै पहले ही कह चुका हूँ कि आसामके लोगोके अपने खेतोमें फसल अच्छी होती है इसलिए वे व्यापारमे अथवा नौकरीकी झझटमे बहुत कम पडते है। इससे व्यापारको मारवाडियोने अपना लिया है और सरकारी नौकरियाँ बगालियोके हाथमे आ गई है। इनमे से बहुतसे मारवाडी विदेशी सूत और कपडेका व्यापार करनेवाले है। उनमे से कितने ही — कोई ६५ — व्यापारियोने प्रतिज्ञा की है कि अब वे विलायती कपडा और विलायती सूत नही मँगायेंगे।

मुसलमान भाई

असममे मुसलमान भाइयोकी आबादी बहुत बडी है। परन्तु फिर भी वे सार्वजनिक कामोमे कम हिस्सा लेते है। खिलाफतके मामलेका भी उन्हे पूरा ज्ञान नही है। पर अब उनमे भी अच्छी जागृति देखी जाती है। कहा जा सकता है कि हिन्दू नेताओने उन्हे जगाया है। इससे यहाँ हिन्दू-मुसलमानोमे वैर-भाव नही देखा जाता। मौलाना मुहम्मदअली और मौलाना आजाद सोबानीके आनेसे मुसलमानोमें अधिक जागृति और हिम्मत आ गई है।

दूसरेके धनपर चैन

मैने ऊपर कहा है कि गोहाटी असमका मुख्य शहर है। लेकिन गोहाटी असमकी राजधानी नही है। असमकी राजधानी तो शिलाँग है। गोहाटीसे कोई पाँच घटेमे मोटरके जरिये वहाँ पहुँचा जाता है। शिलाँग समुद्रकी सतहसे ४ हजार फीट ऊँचा है। मै वहाँ नही जा सका। पर कहते है कि वह तो केवल यूरोपीय लोगोके ही रहनेकी जगह है। अगर शिमलामे भी बारहो मास रहनेकी सुविधा होती तो वहाँ भी केवल गरमी-भरकी राजधानी नही रहती, वरन् हमेशाकी हो जाती। यदि दार्जिलिगमे लोग हमेशा रह सकते होते तो दार्जिलिग बगालकी बारहो मासके लिए राजधानी हो जाता। क्या बम्बई अहातेमे तीन राजधानियाँ नही है? कभी बम्बई, कभी गणेशखिण्ड और गर्मियोमे महाबलेश्वर। परन्तु शिलाँगकी आबहवा ऐसी है कि वहाँ यूरोपीय लोग बारहो महीने मजेमे रह सकते है। इसलिए शिलाँग असमकी राजधानी बनाया गया है। इतने ऊँचेपर भला कही खेतोमे काम करनेवाले मजदूरोकी पुकार पहुँच सकती है? हर बातमें 'जिसकी लाठी उसकी भैस' वाला मामला देखा जाता है। 'प्लाटर' — बागान-मालिक — शिलाँगमे रह सकते है और जब चाहे तब वहाँ जा सकते है। उनके

मजदूरोमे से किसीकी ताब नही कि वहाँ जा सके। उस बेचारेकी तो अर्जी भी शिलाँग तक पहुँचते-पहुँचते फटकर चिथडा हो जाती है।

कहाँ ब्रह्मपुत्र और कहाँ सरकार?

ब्रह्मपुत्र इतनी विशाल नदी है कि वह नारीसे नर — नदीसे नद हो गई है। फिर भी उसकी नम्रताका पार नही। हिमालयकी चोटीपर रहते हुए भी वह नीचे उतरकर लोगोको सुखी करती है और अपनी छातीपर उठा-उठाकर हजारो मनुष्योको और उनके माल-असबाबको एक जगहसे दूसरी जगह पहुँचाती है। इस कारण सारा असम उसकी पूजा करता है। और मुझ जैसे भारतके ठेठ पश्चिमसे आनेवाले प्राणीका भी सिर अपने-आप उसके चरणोपर झुक जाता है। पर हमारी सरकार अपोलो बन्दरपर[1] उतरकर बे-शुमार मजदूरोकी, भापकी और बिजलीकी मदद लेकर, नीचेसे ऊपर चढकर, शिमला और शिलाँगपर जाकर विराजमान होती है और वहाँसे बैठे-बैठे लोगोको घुडकती है। फिर लोग बेचारे भयभीत होकर "बचाओ! बचाओ!" की पुकार लगाये तो इसमे कौन ताज्जुबकी बात है? ब्रह्मपुत्र आश्वासन देता है। शिलाँगमे रहनेवाली सरकार ऊपर चढकर लोगोको सताती है। इसीलिए असमियोने सरकारकी सलामी — उसका सहयोग — छोड दिया है। ब्रह्मपुत्र अगर मस्तीमे आकर लोगोके खेतो ओर गाँवोको डुबोने लगे तो लोग उससे दूर हटनेके सिवा और क्या कर सकते है? सरकारके दावानलसे जलनेवाले लोग उससे भागे नही तो क्या करे? असमी लोग समझ चुके है कि हमारे लिए तो, बस, असहयोग ही एकमात्र राज-मार्ग है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ४–९–१९२१

२४. पत्र : एस्थर मेननको[2]

दौरेपर

४ सितम्बर, १९२१

मेरी प्यारी एस्थर,

अपने पूर्वी बगालके दौरेसे कलकत्ता वापस लौटनेपर मैने देखा कि तुम्हारा पत्र कई रोज पहले वहाँ पहुँच चुका था।

मै तुम्हारे ओर तुम्हारे पतिके लिए सुखी और सेवामय जीवनकी कामना करता हूँ।

मै तुम्हारे पत्रके लिए उत्कण्ठित था और जानना चाहता था कि तुम कैसी हो।

१ बम्बईमें।

२ यह पत्र एस्थरको डेन्मार्कमें ई० के० मेननके साथ उनके विवाहका समाचार सुननेके पश्चात् लिखा गया था।

मेरी समझमे नही आता कि तुम्हे 'यग इडिया' क्यो नही मिलता है। मै पता लगा रहा हूँ।

जब तुम भारत लौटोगी, तब तुम्हे आश्रमके अन्दर अधिकाश समय धुनने, कातने-बुननेमे व्यतीत होता दिखाई देगा। यदि डेन्मार्कमे हाथकी कताई-बुनाईका काम होता हो तो मेरी इच्छा है कि तुम वहाँकी यह कला सीख लो।

ईश्वर महान है। हम जो प्रयत्न कर रहे है उनसे नही, किन्तु उसकी कृपासे इसी साल स्वराज्य पाना सम्भव हो सकता है। और तब तुम बिना रुकावट वापस आ सकोगी।[1] स्वराज्य पानेके लिए जितनी दृढताकी जरूरत है उतनी ही उसे स्थापित करनेमे भी होगी। एन मेरीको[2] स्वराज्य प्राप्तिके लिए यहाँ काम करने दो और तुम वहाँ इसको सफल बनानेके लिए काम करती रहो।

तुम दोनोको प्यारसहित,

तुम्हारा,
बापू

[अग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड

२५. पत्र : सरदार वल्लभभाई पटेलको

१४८ रसा रोड,
कलकत्ता
मौनवार [५ सितम्बर, १९२१][3]

भाईश्री वल्लभभाई,

आपका पत्र मिला। मै दर्शकोके बारेमे 'यग इडिया'[4] मे लिखूँगा।

मेरा जी तो वहाँ आनेके लिए तडप ही रहा है। मगर यहाँसे छुट्टी नही मिल सकती। मद्राससे राजगोपालाचार्यका[5] तार आया है कि उनका तार मिलनेके बाद ही मै यहाँसे रवाना होऊँ। १२ तारीखतक मुझे यहाँ काम भी है।

बगालमे स्वदेशीका काम शिथिल हो गया है। चरखे जरूर ठीक चले है। मगर सूतका वजन रखने और खादीपर ध्यान देनेका काम कम हुआ है।

१ कुछ समयके लिए ब्रिटिश सरकारने एस्थरको भारत लौटनेकी अनुमति देनेसे इनकार कर दिया था।

२ एन मेरी पीटर्सन, जिन्होंने एस्थरके साथ दक्षिण भारतमें काम किया था, वे कुछ समयतक साबरमती आश्रममें रही थी।

३ महादेव देसाईके नाम, २२-८-१९२१ के पत्रमें दिये गये कार्यक्रमके अनुसार गाधीजी कलकत्ता ४ सितम्बर, १९२१ को पहुँचनेवाले थे और वहाँ १२ सितम्बरतक ठहरनेवाले थे। इस अवधिमें मौनवार ५ सितम्बरको ही था।

४ देखिए "टिप्पणियाँ" २२-९-१९२१ का उप शीर्षक "काग्रेस अधिवेशन कोई तमाशा नही"।

५ चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य, (१८७९-), राजनीतिज्ञ, १९४८ में पहले भारतीय गवर्नर जनरल।

ऐसा लगता है कि इस महीनेके लिए कानून-भंग रुक सके तो अच्छा। दिल्ली [के प्रस्ताव] की शर्तके अनुसार भी जितना धरना दिया जा सके उतना भले दिया जाये। जब हम कानून तोड़ें, तब जान हथेलीपर लेकर ही तोड़ें, यह ज्यादा ठीक लगता है। एक बार हमारी मण्डलीके साथ मेरी चर्चा हो जाये, तो मुझे ज्यादा पता चलेगा। फिलहाल स्वदेशीपर — विदेशी कपड़ेका बहिष्कार और खादीकी उत्पत्ति इन दोनों अंगोंपर — खूब ध्यान दिया जाये तो अच्छा।

आपके पत्रसे मान लेता हूँ कि आजकल वहाँ विद्यापीठमें कोई झगड़ा नहीं चल रहा है।

अपनी तबियत सँभालकर रखना। दिसम्बरतक बहुत काम करना है। हिन्दुस्तानका चेहरा तो जरूर बदलेगा। सिंह होगा या सियार, यह या तो ईश्वरके हाथ है या हमारे।

वाइसरायके भाषणसे मेरा मोह तो और भी कम हो गया है। युवराज अगर राजनीतिक कामसे नहीं आ रहे हैं तो किसलिए आ रहे हैं और किसके खर्चसे? परन्तु इसका हमें अभी विचार ही नहीं करना है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

भाईश्री वल्लभभाई पटेल, बैरिस्टर
भद्र, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने

२६. पत्र: मणिबहन पटेलको

कलकत्ता
मौनवार [सितम्बर ५, १९२१][1]

चि० मणि,

अभी-अभी तुम्हारा पत्र मिला। मेरी माँग तो पहननेके ही कपड़े जलानेकी है। किसीके घर विलायती जाजमें वगैरा रखी हैं, कोचोंपर विदेशी कपड़े चढ़े हैं — ये सब अधिकांश लोग नहीं देंगे। इसलिए उनकी माँग नहीं की। ऐसी कोई नई चीज वे अब न लें तो उतना काफी है। हमें पहननेके कपड़ोंकी ही माँग करनी है। मैं 'नवजीवन' में लिखूँगा।

पर्युषणमें उपासरे[2] जाना तय किया, वह अच्छा है। इन बहनोंमें से कोई अपने कपड़े देती हैं?

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. जैन साधुओंका निवास-स्थान।

१२ तारीखतक तो कलकत्तेमें रहना है। बादमें क्या करना है यह सोचूंगा।

बेजवाडाकी साडियोंमें अब धोखा जरूर घुसा होगा। अच्छा यही है कि उन्हें हाथ ही न लगाया जाये।

कुमुदबहनको पत्र भेजा सो अच्छा किया। पत्र लिखते रहनेसे उन्हें आश्वासन मिलेगा।

कल बहुत करके महादेव आकर मुझसे मिल जायेंगे।

यहां भी तुम्हारी ही उम्रकी केवल खादी ही पहननेवाली और खूब उत्साही दो बहनें हैं। वे अभी देशबन्धु दासकी[1] बहनको उनके नारी-मन्दिरमें मदद दे रही हैं।

मोहनदासके आशीर्वाद

चि० मणिबहन,
द्वारा भाई वल्लभभाई पटेल बैरिस्टर,
भद्र, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ मणिबहेन पटेलने

२७. भाषण : पंजाब-सभाकी बैठकमें

कलकत्ता,
७ सितम्बर, १९२१

खालसा दीवान एसोसिएशनके ६२, शम्भुनाथ पण्डित स्ट्रीट, भवानीपुर स्थित ठिकानेपर बुधवारकी शामको पंजाब-सभाके तत्वावधानमें एक सभा हुई। लाला मेघराज जयने सभाकी अध्यक्षता की। लोग बहुत बड़ी संख्यामें एकत्र हुए थे, जिनमें अधिकांश सिख थे। कुछ मारवाडी तथा कुछ सिख स्त्रियां भी थीं।

श्री गांधीने अपने भाषणके दौरान कहा कि पिछली बार जब मैं कलकत्ता आया था तब मैंने लोगोंसे तिलक स्वराज्य कोषमें दान देनेकी अपील की थी। और देशभरके कल्याणार्थ तत्काल उसकी अनुकूल प्रतिक्रिया हुई जिसे देखकर मुझे खुशी हुई थी। श्री गांधीने कहा कि मैं चाहता हूँ कि विदेशी कपड़े या तो जला डाले जायें या स्मर्ना भेज दिये जायें। उन्होंने लोगोंसे विदेशी वस्तुओंका पूर्ण बहिष्कार करनेका आग्रह किया और श्रोताओंसे कहा कि आप लोग हाथके कते अर्थात् चरखेके सूतसे बुने कपड़े पहना कीजिए। उन्होंने कहा कि यदि सभी लोग स्वदेशी वस्त्र पहननेकी पूरी चेष्टा करें तो मैं सारे भारतके लोगोंको 'स्वराज्य' दिलाने और

१ चित्तरंजन दास (१८७०–१९२५), वकील, वक्ता और लेखक, कांग्रेसके गया-अधिवेशनके अध्यक्ष, १९२२।

खिलाफत तथा पंजाबके सम्बन्धमें सरकार द्वारा किये गये अन्यायोको दूर करानेको तैयार हूँ। इसी आशयका प्रस्ताव काग्रेस कमेटी और खिलाफत समिति, दोनोने ही, पास किया है। अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीने इस आशयका भी एक प्रस्ताव पास किया है कि इसी ३० तारीखसे पहले ही विदेशी वस्तुओका पूर्ण बहिष्कार हो जाना चाहिए और लोगोको अपने ही देशमें बने कपड़े पहनने चाहिए। श्री गाधीने श्रोताओसे कहा यदि आप लोग वास्तवमें देशकी भलाई चाहते है तो उक्त प्रस्तावको कार्यान्वित करे। आगे बोलते हुए श्री गांधीने कहा कि मै जानता हूँ कि सिख समाज एक बहुत ही सशक्त समाज है। यदि इस समाजके लोग सचमुच अपने कामको निष्ठा और लगनके साथ करेगे और चरखेको अपनायेंगे तो मेरे मनमे इस बातका जरा भी सन्देह नहीं कि वे न केवल अपने समाजको वरन् सारे भारतके लोगोको जरूरत-भरका कपड़ा दे सकेगे। मै चाहता हूँ कि आप लोग अहिसात्मक असहयोगके सिद्धान्तका समग्र रूपसे पालन करे और किसी हालतमें भी कोई ऐसा तरीका न अपनाएँ जिसका परिणाम हिंसा हो। उन्होने ननकाना साहबकी दुखद घटनापर[1] बहुत ही खेद व्यक्त करते हुए कहा कि यह घटना पजाबकी घटनासे भी ज्यादा निन्दनीय और खून खौलानेवाली है। सिखोने इसे जिस रूपमें लिया है वह स्वाभाविक ही था। मैने उनकी सभाओकी रिपोर्ट पढी है और उनके बारेमें सुना भी है, परन्तु उनसे मेरा निवेदन यह है कि वे उन सब घटनाओको भूल जायें। यह सच है कि शहरोने जो पाप किया है उसका प्रायश्चित नहीं है। और सामान्यत यही माना जा रहा है कि उन अन्यायोका एकमात्र निराकरण यही है कि उन अधिकारियोको दण्ड दिया जाये। श्री गाधीने कहा कि मै उन्हे दण्ड दिया जाना पसन्द नहीं करता। मेरी रायमे केवल भगवान ही उन्हें दण्ड देनेका अधिकारी है। अन्तमें श्री गाधीने सिखोको सलाह दी कि जिस महान कार्यमें आप लगे हुए है उसे शान्तिपूर्वक पूरा करनेका प्रयत्न करें।

मौलाना आजाद सोबानी और लाला लाजपतरायने[2] भी असहयोग और बहिष्कारपर भाषण दिया।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ९–९–१९२१

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ४०१-४।

२ लाला लाजपतराय (१८६५–१९२८); समाज सुधारक, लेखक और राजनीतिक नेता, १९०७ में निष्कासित; सर्वेन्ट्स ऑफ पीपुल्स, सोसाइटीके संस्थापक, १९२० में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष।

२८. मारवाड़ी व्यापारियोंसे बातचीत

७ सितम्बर, १९२१

श्री गाधीने १२४ कैनिंग स्ट्रीट, फलकत्तामें रातके समय कपडेके व्यापारियोकी सभामें चर्चा की। यह वातचीत आधी राततक चलती रही। श्री गाधीने उनसे आग्रह किया कि वे विदेशी कपडा न वेचें और इस सम्वन्धमें कोई नया अनुवन्ध न करे। व्यापारियोने वताया कि वे पहले ही मारवाडी उद्योग-मण्डल द्वारा पास किये गये उस प्रस्तावके अनुसार काम करनेको सहमत हो चुके हैं, जिसमें साफ-साफ कहा गया है कि ३१ दिसम्बर, १९२१ तक वे विदेशी कपडा नहीं खरीदेंगे। श्री गाधीने उनसे यह वादा करा लेना चाहा कि वे अव और विदेशी कपडा विना किसी समय-सीमाके नहीं खरीदेंगे। तथापि महात्मा गाधीने उन्हे इस मामलेपर विचार करनेके लिए और समय दिया ओर १३ तारीख, जिस दिन वे कलकत्ता छोडनेवाले थे, से पहले उनके वीच भाषण देनेका वचन दिया।

[अंग्रेजीसे]

अमृतवाजार पत्रिका, ९–९–१९२१

२९. टिप्पणियाँ

अली भाइयोपर मुकदमा

अली भाइयोपर मुकदमा चलनेकी अफवाह फिरसे उडी है। मुझे उम्मीद है कि यह खवर गलत होगी। अगर सरकार दरअसल यह चाहती हो कि उसके और प्रजाके वीचका यह मामला गुण-दोपके आधारपर तय हो और इसके लिए लोक-मतको परिपक्व वनने दिया जाये तो उसे अली भाइयोको नही छेडना चाहिए। परन्तु अगर उनपर मामला चलाया ही जाये और उन्हे कैदकी सजा हो जाये तो भी मुझे आशा है कि लोग अपनी शान्तिको डिगने न देंगे, और अपनी वातपर दृढताके साथ डटे रहेंगे। अलवत्ता, उनके कैद हो जानेसे शान्तिकी रक्षाका काम पहलेसे भी ज्यादा मुश्किल हो जायेगा। इन दो देशभक्त भाइयोंने मुसलमानोकी तवीयतको जितनी कामयावीके साथ भडकनेसे रोका है उतना और किसीने नही। क्या मौका और क्या वेमौका, क्या खानगीमे और क्या आम लोगोमे, हर जगह और हर स्थानपर उन्होने 'अहिंसा' का ही उपदेश किया है और खुद भी उसके पावन्द रहे हैं। यहाँतक कि अपने उन भाषणोमे भी, जिनके कुछ अशोके मानी हिंसाके पक्षमे लगा देनेका अन्देशा हो सकता है, मैं कह सकता हूँ कि उनका मतलव हिंसासे हरगिज नही था। ऐसी दशामे अली भाइयोपर मुकदमा चलानेके मानी यही होंगे कि सरकार हिन्दुस्तानमे

दिन-ब-दिन बढ़नेवाले खिलाफत-आन्दोलनका गला घोंट देना चाहती है। यह तो सरासर सारे मुसलमानोंको और मुसलमानोंको ही क्यों, सारे हिन्दुस्तानको सीधी चुनौती देना है, क्योंकि खिलाफतका सवाल अब सारे हिन्दुस्तानका मसला हो गया है। अब यह महज मुसलमानोंकी ही शिकायत नहीं रह गया है।

लेकिन यह लिखनेमें मेरा आशय सरकारको उतना नहीं जितना लोगोंको सचेत कर देनेका है। अगर लोगोंने अली भाइयोंके सन्देशका मर्म समझ लिया हो तो उन्हें अपने मजहबके लिए, और अपने मुल्कके लिए, सरकारके द्वारा चाहे जितना उकसाये जाने पर भी शान्त बने रहना चाहिए। उन्हें अपने देश और धर्मके लिए हद दर्जेतक कष्ट सहन करना चाहिए। उनका सन्देश यह है कि हिन्दुओं और मुसलमानोंका हित एक दूसरेमें मिला हुआ है, उन्हें साथ-साथ तैरना या साथ-साथ डूबना होगा। उन्हें फौलादकी तरह पक्के रहना होगा और शेरकी तरह बहादुरी दिखानी होगी और चाहे वे फाँसीपर क्यों न चढ़ा दिये जायें, जिस बातको वे सत्य समझते हैं उसे कहे बिना कभी न रहेंगे। ऐसे वक्तमें लोग अली भाइयोंकी जो बड़ीसे-बड़ी इज्जत कर सकते हैं वह यह है कि असहयोगके कार्यक्रमके एक-एक अक्षरका अनुसरण करें और इसी सालके भीतर स्वराज्य प्राप्त कर लें। उनके जेल जानेपर गुस्सा दिखाना सिवा पागलपनके और कुछ न होगा। हमने हिम्मतके साथ यह इरादा जाहिर किया है और इस बातकी तैयारी की है कि इस मौजूदा शासन-प्रणालीको नेस्तनाबूद कर दें और उसके हाकिमों और अफसरोंको चुनौती दी है कि वे हमारे लिए बुरेसे-बुरा जो कर सकते हैं, करें। ऐसी हालतमें अगर वे हमारी चुनौतीको स्वीकार कर हमारे साथ संजीदगीसे पेश आयें तो न हमें ताज्जुब करनेकी जरूरत है, न गुस्सा करनेकी। क्योंकि किसी-न किसी दिन या तो यह मानकर कि हम जो कहते हैं वैसा करनेका इरादा भी रखते हैं, उन्हें हमें उस परीक्षाकी आंचमें, जिसे हम खुद ही बुला रहे हैं, तपाना होगा और या हमारी मर्जीके मुताबिक उन्हें सुधार करना होगा। अगर, इस तरह हम अपनी ही बनाई तराजूपर तौले गये और हलके साबित हुए तो मतलब यह होगा कि हमने इस खेलके नियमोंको बुरी तरह तोड़ा। इसलिए, जब कभी कोई गिरफ्तार हो तो उस हालतमें असहयोगियोंके पास सिर्फ एक ही इलाज है और वह है असहयोग-के कार्यक्रमको पूरा करनेमें दूने उत्साह और दूनी सरगर्मीके साथ अपनी ताकतोंको लगाना। अर्थात् वे विलायती कपड़ेका बहिष्कार कर दें और अपनी जरूरत-भरका कपड़ा अपने ही घरोंमें तैयार करें। हाँ, हड़तालें तो हरगिज न की जायें।

श्री पेण्टर गुजरातपर थोपे जा रहे हैं

मैंने अभी-अभी सुना है कि श्री पेण्टरको जिन्होंने धारवाड़के लोगोंको अपने क्रूर व्यवहारसे दुःखी करके काफी कुकीर्ति कमाई है[1] तरक्की दी जानेवाली है और उन्हें कमिश्नर बनाकर गुजरातपर थोपा जा रहा है। एक ऐसा सरकारी अधिकारी जिसने जनताकी निगाहमें अपनी प्रतिष्ठा खो दी है, सरकारसे अपनी प्रशंसनीय सेवाओंके लिए इनाम पाता है—इसे विडम्बना ही कहना चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १–९–१९२१ का उप-शीर्षक "खादीके नाशका प्रयत्न"।

धारवाडके इस कलेक्टरको गुजरातपर थोपकर उसका जो अपमान किया जा रहा है, गुजरात उसके खिलाफ समुचित ढगसे अपनी नाराजी व्यक्त करेगा। अगर यह नियुक्ति सचमुच की जाती है तो गुजरातको यह दिखानेका एक अद्वितीय मौका मिलेगा कि असहयोगकी भावनाके अनुसार ऐसे किसी अपमानका जवाव किस तरह दिया जा सकता है। हमे व्यक्ति और कमिश्नरमे फर्क करना चाहिए। हमे कमिश्नरका तो वहिष्कार करना है किन्तु व्यक्तिके रूपमे श्री पेण्टरको अपनी सेवा अवश्य देनी है। इसलिए शारीरिक आराम और सुविधाकी दृष्टिसे एक व्यक्तिके रूपमे श्री पेण्टरको समुचित मर्यादाके भीतर जिन वस्तुओंकी आवश्यकता हो सकती है, वे वस्तुएँ तो हम उन्हे लेने देंगे लेकिन अपने पद और उसकी शानकी रक्षाके लिए, अगर जनता हमारे साथ है तो, उन्हे एक तिनका भी नही मिलेगा। इसलिए हमे लोगोको यह सिखाना होगा कि वे कमिश्नर पेण्टरको सलाम करनेसे इनकार कर दे। वे कमिश्नरको अर्जियाँ न भेजे। कमिश्नरकी तरह जव वे देहातोका दौरा कर रहे हो तो लोग उन्हे किसी भी तरहकी सुविधा न दे। शान्तिपूर्वक और शिष्टतापूर्वक हमे उन्हे यह महसूस करा देना है कि सरकारी अधिकारीके रूपमें गुजरातमे लोग उन्हे पसन्द नही करते। जिन नगरपालिकाओंमे असहयोगी हो उन्हे श्री पेण्टरको कमिश्नरके रूपमे किसी तरहकी मान्यता नही देनी चाहिए। अगर हममे सच्ची स्वतन्त्रताकी भावना और पुरुषोचित वीरता आई है तो हम एक ऐसे अधिकारीको कदापि सहन नही करेंगे जिसने लोगोका आदर खो दिया है। श्री पेण्टरने यह आदर खो दिया है। उदाहरणके लिए, यदि हमारे ऊपर कर्नल फ्रैंक जॉनसन या कर्नल डायर[1] थोप दिये जाये और हम इसे सह ले तो हमारे वारेमे क्या कहा जायेगा। स्वशासनकी अपनी क्षमता प्रमाणित करनेके लिए हमे कुछ कठिन परीक्षाओमे उत्तीर्ण होना चाहिए। एक परीक्षा यह है कि हम राष्ट्रीय अपमानकी कोई वात सहनेसे इनकार करे। सच तो यह है कि यदि यह क्षमता काफी मात्रामे हम प्राप्त कर चुके होते तो मैं उन कर्मचारियोसे, जिन्हे सीधे श्री पेण्टरके नियत्रणमे काम करना होगा, इस परिस्थितिके खिलाफ अपना विरोध जाहिर करनेके लिए इस्तीफा दे डालनेकी उम्मीद करता। हमे अपनी जीविकाके चले जानेका भय इतना ज्यादा है कि राष्ट्रीय अस्तित्वके लिए जो स्वाभिमान जरूरी होता है उसकी अपेक्षा नौकरीमे लगे हुए अपने देशवासियोसे हम अभी कर ही नही सकते, उनमे तो यह भावना सवसे वादमे ही आयेगी। लेकिन यदि जनतासे हमे अपनी माँगका पर्याप्त उत्तर मिला तो इसी वर्षमे स्वराज्यकी प्राप्तिके हमारे ध्येयमे नौकरीवालोकी अनिच्छाके कारण कोई खास वाधा नही आयेगी। समय आ गया है जब कि लोगोको व्यक्तिश और सघश अपने अधिकारोका आग्रह करना चाहिए, उनकी रक्षाके लिए अपनी ताकत लगानी चाहिए। और हमे अपने इस सघर्षका आरम्भ, अगर यह अधिकारी आता है तो, जिस समय वह अहमदावाद आये उस समय, शहरमे सम्पूर्ण हडताल मनाकर करना चाहिए, अलवत्ता हडताल विलकुल अनुशासित होनी चाहिए।

१ रेजिनाल्ड एडवर्ड हैरी डायर (१८६४–१९२७), अमृतसर क्षेत्रके कमाण्डिंग आफिसर जिन्होंने जलियाँवाला बागमें एकत्र हुई शान्त जनतापर गोलियाँ चलानेका हुक्म दिया था।

और चूँकि अभी काफी समय है इसलिए इस उद्देश्यको ध्यानमे रखकर गुजरातकी प्रान्तीय काग्रेस कमेटीको काग्रेसकी कार्यकारी समितिसे इस बातकी इजाजत ले लेनी चाहिए कि यदि श्री पेण्टर अधिकारीकी हैसियतसे गुजरात भेजे जाते है तो प्रान्तीय काग्रेस कमेटी सारे गुजरातमे हडताल करा सकती है। यह कहनेकी जरूरत नही कि यदि यह हडताल जरूरी हो जाये तो वह सर्वथा स्वेच्छाप्रेरित होनी चाहिए। मजदूर लोग उसमे मालिकोको पूर्व-सूचना देकर और उनकी अनुमति लेकर ही शामिल हो।

ढोंगका पर्दाफाश

सरकारी चिट्ठियाँ अभीतक अपनी बात बिना किसी रुकावटके नपे-तुले ढगसे पेश करती रही है, यह उनकी एक विशेषता रही है। अधिकारीका मशा बुरा-भला कहनेका, रोष दिखानेका रहा हो, तो भी ऐसा खुलकर कभी नही किया गया, उसे अत्यन्त सयमित भाषामे लपेटकर ही प्रस्तुत किया गया है। लेकिन अधिकारियोने अब इस नकाबको उतार फेका है और इसके बजाय कि उनका अभिप्राय उनके कार्योके द्वारा ही प्रकट हो वे भी सामान्य मनुष्योकी तरह अपनी खुशी और नाराजी खुलकर शब्दोमे व्यक्त करने लगे है। यह फर्क मैंने असम प्रदेशके सरकारी अधिकारियोके पत्र-व्यवहारमे तो देखा ही था लेकिन इसका बहुत ही उचित उदाहरण गुजरातमे भी मिला है। 'प्रजाबन्धु' पत्रके सम्पादकने नमक और आबकारीके डिप्टी कमिश्नरको एक पत्र लिखा था जिसमे उन्होने उनका ध्यान उनके मातहतो द्वारा धरना रोकनेके सिलसिलेमे बरती गई अनियमितताओकी ओर खीचा था। सम्पादकके इस पत्रमे ऐसी कोई बात नही थी जो बुरी लगे। उन्होने सीधी सरल सभ्य भाषाका ही उपयोग किया था। कोई विवाद खडा करनेकी कोशिश नही थी, सिर्फ एक सवाल पूछा था। लेकिन डिप्टी कमिश्नर तो धरनेसे नाराज हुए बैठे थे, उन्हे अपने दिलका गुबार निकालनेका मौका मिल गया और वह उन्होने इस तरह निकाला

> आपने मुझे अपने अखबारका उद्धरण भेजा है और आग्रहपूर्वक जवाब चाहा है इसलिए जवाब भेजता हूँ। [शराबकी दूकानोपर] धरना देनेका आपका यह तथाकथित अभियान सरकारको नुकसान पहुँचानेके घोषित उद्देश्यसे ही किया जा रहा है; उसे जनताके हितकी दृष्टिसे किये जा रहे सामाजिक कार्यका नाम नहीं दिया जा सकता। यह तो हाथीको नहलाने-जैसी बात है। मेरी जानकारी तो यह है कि आपके इस अभियानमें हिस्सा लेनेवालोकी — धरना देनेवालो-की — हिंसाके कारण अहमदाबादके आबकारी विभागके कर्मचारी, जिन्हें अपना सामान्य कर्तव्य तो करना ही पडता है, शान्ति और व्यवस्था बनाये रखनेके काममें इतने ज्यादा व्यस्त हो गये हैं कि अनुमति-पत्रोकी शर्तोके प्राविधिक भगसे सम्बन्धित आपकी शिकायतोकी जांच-पडतालके लिए उनके पास समय ही नहीं बचता। मैं तो ऐसा मानता हूँ कि आप यह शिकायत (जिसे विभाग निरा-धार मानता है) सरकारी अधिकारियोको और ज्यादा हैरान करनेके लिए ही कर रहे हैं और मैं ऐसे किसी प्रयोजनकी सिद्धिके लिए तो अपनी सत्ताका

उपयोग कदापि नहीं करूँगा। हाँ, आपका हेतु इससे भिन्न हो तो अपने अनुयायियोंके आपत्तिजनक व्यवहारका नियन्त्रण करनेके बाद आप अपनी शिकायत पुन पेश करें।

मैं तो इतना ही कहूँगा कि सम्पादक न तो धरनेका अभियान चला रहा है और न उसके कोई अनुयायी हैं। उसने तो शराबकी बिक्रीसे सम्बन्धित कानूनका शराब बेचनेवालोंके द्वारा जो भग हो रहा था और जो प्राविधिक न होते हुए भी गम्भीर है, उसकी ओर ध्यान खीचकर अपने सामाजिक कर्त्तव्यका पालन ही किया है।

[अंग्रेजीसे]

यग इडिया, ८–९–१९२१

३०. खिलाफतका अर्थ

खिलाफतके सवालमें मैं जो दिलचस्पी लेता हूँ, उसके विरुद्ध मुझे दूर-दूरसे चेतावनी-भरे पत्र मिलते रहते हैं। ऐसा ही एक पत्र नीचे दे रहा हूँ, जिसे न्यूजीलैंडसे एक पुराने मित्रने लिखा है

> ये चन्द लाइनें यह बतानेको लिख रहा हूँ कि मैं आपको भूला नहीं हूँ। अगर ऐसा कोई खतरा होता भी, तो हमारे समाचारपत्रोंमें जो तार अक्सर छपते रहते हैं, वे मुझे आपको भूलने न देते। मैं देखता हूँ आपके सामने भारतकी एक बहुत बडी समस्या है, जिसे हल करनेकी आप कोशिश कर रहे हैं। उसका मुकाबला आप सबसे अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण ढगसे कर रहे हैं या नहीं, मैं नहीं कह सकता, क्योंकि मैं इसका फैसला करनेकी स्थितिमें नहीं हूँ। मैं १० शिलिंगका पोस्ट आफिस ऑर्डर सलग्न कर रहा हूँ। आपका अखबार, मेरा खयाल है उसका नाम 'यग इडिया' है, यदि अंग्रेजीमें छपता हो तो यह रकम आप उसके प्रकाशकको दे दें। अन्यथा, अंग्रेजीका जो भी अखबार आपके पक्षका प्रतिपादन करता हो, उसके प्रकाशकको दें दे तो आभार मानूँगा। सम्भव है, मैं जो-कुछ कहूँ वह पूरी जानकारीपर आधारित न हो, लेकिन एक पुराने मित्रके नाते यदि मैं निस्सकोच भावसे अपनी बात कहूँ तो आशा है आप उसका बुरा नहीं मानेंगे। मुझे यह देखकर सदैव दुःख तो हुआ है कि आप जैसा व्यक्ति टर्की साम्राज्यका कट्टर समर्थक है, और ब्रिटिश सरकारकी जड खोदने, उसे पगु और कमजोर बनानेके लिए खिलाफतके सवालका राजनीतिक उद्देश्योंसे उपयोग किया जा रहा है। बलगेरियाई, यूनानी और आर्मीनियावालोंके प्रति टर्कीने जो अपराध किये हैं, उनका न्याय ईश्वरके दरबारमें होगा। हालके वर्षोंमें अपनी अखिल भारतीय खिलाफत काग्रेसमें मुसलमानोंने उन अत्याचारोंके विरुद्ध कोई रोष प्रकट किया है, और एक शानदार, उद्यमशील तथा नेक जाति (आर्मीनिय-

नो)का समूल नाश करनेकी टर्की-नीतिसे अपनेको अलग घोषित किया है, इसमें मुझे सन्देह है। इन शहीदोंका खून ईश्वरसे न्यायकी पुकार करेगा, और जो प्रभु एक गौरैयाकी भी खोज-खबर रखता है, वह टर्कीके इन अपराधोंमें से एक भी भूलेगा नहीं। यदि यह सत्य है कि टर्कीका इतिहास लूट-पाट और हत्याओंका इतिहास है, तो क्या उससे उसकी शक्ति छीन नहीं लेनी चाहिए? वह ऐसी शक्ति रखनेके योग्य नहीं है। यदि राजनीतिक सत्ताका उपयोग, अधिकृत जातियोंके लिए न्याय, स्वतन्त्रता और भ्रातृत्व बनाये रखनेके लिए नहीं बल्कि अत्याचार, उत्पीड़न, समूल नाश, लूटपाट और खून-खराबीके लिए किया जाता हो, तो क्या अन्य राष्ट्रोंको ऐसे राष्ट्रके अन्यायोंका प्रतिकार करनेके लिए उसकी दुष्ट सत्ता समाप्त नहीं कर देनी चाहिए? इस्लामकी राजनीतिक सत्ता छीननेका अर्थ उसे उसकी आध्यात्मिक शक्तियोंसे वंचित करना नहीं है, बशर्ते कि कोई आध्यात्मिक शक्ति उसमें हो। यदि उसमें आध्यात्मिक शक्तियाँ हैं तो उनके बलपर वह जिये। यदि नहीं है तो उसे मर जाने दीजिए। किसी भी धर्मके लिए राजनीतिक सत्ता अभिशाप है, और इतिहास बताता है कि इस शक्तिका उपयोग अक्सर अत्याचारके लिए किया गया है, उदाहरणार्थ रोमन कैथोलिक चर्च द्वारा।

मैं नहीं जानता कि असहयोगियोंके उद्देश्य ठीक-ठीक क्या हैं, लेकिन लगता यही है कि उन्हें देशमें एक भी अंग्रेज अधिकारीकी उपस्थितिपर आपत्ति होने लगी है। रोमका निर्माण एक दिनमें नहीं हो गया था, और किसी देशकी परिस्थितियाँ अनुकूल हों, उससे पहले ही उसका भावी संविधान नहीं बनाया जा सकता। मान लें कि तमाम ब्रिटिश अधिकारी बोरिया-बिस्तर समेटकर कल ही भारतसे चले जायें, और उनकी जगह भारतीय लोग ले लें, तो क्या जितना शुद्ध प्रशासन अब है, उतना ही शुद्ध वह रहेगा? क्या आपके महान देशकी अदालतोंके जरिये सभी जगह न्याय किया जायेगा? जहाँतक मैं समझता हूँ, भारतीय लोग देशी पुलिससे डरते हैं और पुलिसके भारतीय अधिकारी लोगोंमें घूसखोरी और भ्रष्टाचारकी प्रवृत्ति बहुत ज्यादा है। इससे पहले किसी जातिको स्व-शासनका अधिकार मिले, उसमें एक राष्ट्रीय चरित्र होना आवश्यक है, जिसकी बुनियादपर, और जिसकी सहायतासे स्व-शासन स्थापित किया जा सके। क्या आप समझते हैं कि अब ऐसा समय आ गया है कि जब नवशक्ति प्रदान करनेवाली और शुद्ध करनेवाली शक्तियाँ आपके देशके सामाजिक, शैक्षणिक और राजनीतिक जीवनमें व्याप्त हो गई हैं?

राजनीतिक प्रचार यदि क्रान्तिकारी ढंगका हो तो आसानीसे नीचतम और दुष्टतम लोगोंको अपनी ओर खींच सकता है, और यदि ऐसे लोग संगठन-यन्त्रपर कब्जा जमा लें, तो उनकी बात सुनने-माननेवाले लोगोंको ये अन्धे और

अन्धेसे भी वदतर लोग खड्डमें गिरा देंगे। मुझे विश्वास है कि व्यक्तिगत रूपसे आप स्वय अपने उच्च आदर्शोंसे, न्याय, देशभक्ति और आत्माकी मुक्तिकी निस्स्वार्थ भावनासे विमुख नहीं है, किन्तु आपके चारो ओर समाजमें सुषुप्तावस्थामें पडी ऐसी प्रवल शक्तियां जागृत हो सकती है जो आपको बुद्धिमत्तासे वहुत परे खींच ले जाये और आपसे ऐसे कार्य करा डाले जो राष्ट्रके सच्चे हितके विपरीत हो। आपके देशमें वे सारे तत्त्व मौजूद है जो भारतको रूस वना दे सकते है, या आयरलैंडके सिन-फैन आन्दोलनसे ग्रस्त वना सकते है, या उसे गृह-युद्धका मैदान वना सकते है, विभिन्न सम्प्रदायो और जातियोके वीच भयकर रक्तपात करवा सकते है। भारत जैसे देशमें विभाजनकी स्थिति फैला सकते है जिसमें आपके यहांके स्वतन्त्र रजवाडे दो दलोमें वँटकर एक-दूसरेके मुकावले उठ खडे हो, और सवपर नियन्त्रण और सवको मिलाकर रखनेवाली कोई ऐसी ताकत न हो जो शान्ति कायम रख सके, प्रगतिके कदम न रुकने दे, और एक अधिक पूर्ण राष्ट्रीय जीवनकी ओर समग्र देशको ले जा सके। आपके रास्तेमें चारो ओर छिपे हुए जाल और गढे है, जिनसे आप ईश्वरकी इच्छाका स्पष्ट वोध होनेपर और उस इच्छाका पालन करनेपर ही वच सकते है। यदि आप जनताकी इच्छाओंको सव-कुछ मानकर उसके हिसावसे चलेगे तो वहुतसे लोग आपकी जय-जयकार करेगे और आपके पथपर फूल-पत्तियाँ विछादेंगे। किन्तु यदि आप आग्रहपूर्वक ईश्वरकी इच्छापर चलते रहेंगे तो वे ही लोग शोर मचायेंगे और कहेगे "इसे सूलीपर चढा दो, इसको दूर कर दो।" आपको इसका उदाहरण मालूम ही है। ईसाने अविचल भावसे ईश्वरकी इच्छाका अनुसरण किया। नतीजा यह हुआ कि जनताने उन्हे ठुकरा दिया। ईसाके उद्देश्य परम पुनीत थे, उनका राज्य अत्यधिक आध्यात्मिक था, उनके तरीके वहुत ही दिव्य थे, जो जनताकी समझमें नहीं आये। वे मर गये, किन्तु ईश्वरने उन्हे फिर जिला दिया, और इस पुनरुज्जीवनको विश्व-चिन्तनका जीवन-सम्वल वना दिया। उन्हे मानव-मात्रकी आवश्यकताएँ पूरी करनेवाला त्राता वना दिया, अपना प्रतिनिधि और शास्ता वना दिया।

लडखडाओ मत भाई, साहस करो,
भले ही तुम्हारा पथ रातकी तरह अँधेरा हो,
लेकिन दीन लोगोका पथ-प्रदर्शन करनेवाला
एक तारा आकाशमे है,
ईश्वरमें आस्था रखो और सत्कर्म करो।

भले ही रास्ता उवड-खावड और कठिन हो
और मंजिल दूर हो,
शक्ति हो या पैर थक गये हो,

लेकिन बहादुरीके साथ कदम बढ़ाओ;
ईश्वरमे आस्था रखो और सत्कर्म करो।

छल प्रपंचका नाश होता है
प्रकाशसे भयभीत होनेवाली सभी चीजो
का नाश हो जाता है।
पराजयमें या विजयमें,
ईश्वरमे आस्था रखो और सत्कर्म करो।

किसी दल, सम्प्रदाय या गुटमे
विश्वास मत करो,
इस युद्धमें किसी नेताका भरोसा मत करो;
प्रत्येक शब्द और कर्ममे,
ईश्वरमें आस्था रखो और सत्कर्म करो;

भावनाओके मोहन रूपके
भुलावेमें मत आओ,
मित्र देवदूत-जैसे दिख सकते है;
किसी रीति-रिवाज, विचारधारा या फैशनका
भरोसा मत करो,
ईश्वरमें आस्था रखो और सत्कर्म करो।

कुछ तुमसे घृणा और कुछ प्यार करेगे
कुछ लोग चाटुकारिता,
और कुछ अपमान करेंगे,
मनुष्यकी ओर ध्यान मत दो,
ऊपरकी ओर देखो,
ईश्वरमें आस्था रखो और सत्कर्म करो।

सरल नियम और सर्वोत्तम पथ-प्रदर्शन,
आन्तरिक शान्ति और आन्तरिक शक्ति
यही हमारा पथ-प्रदर्शक ध्रुवतारा हो,
ईश्वरमें आस्था रखो और सत्कर्म करो।

लडखडाओ मत, भाई, साहस करो
भले ही तुम्हारा पथ अधकारमय हो,
लेकिन दीन लोगोका पथ-प्रदर्शन करनेवाला
एक तारा आकाशमें है।
ईश्वरमें आस्था रखो और सत्कर्म करो।

> सबसे बडी चीज दैवी प्रकाश, सिद्धान्तोमें देख सकनेवाली पैनी दृष्टि और सच्चे राजनीतिज्ञकी दूरदर्शी बुद्धि है। निस्सन्देह आप अब्राहम लिकनके जीवनसे, उनकी स्पष्टदर्शी दृष्टि, उनकी असदिग्ध ईमानदारी, कोमल सहृदयता, विनम्रता, विनोद और मानवीयतासे परिचित है।
>
> मै अपने मित्रोसे अक्सर कहता हूँ, "यदि आप श्री गाधीका पक्ष सुनें और वर्तमान प्रणालीके अन्तर्गत जो जबर्दस्त शिकायतें उनकी है, उन्हे सुनें तो आप उनके विरोधका कारण समझ जायेंगे।"
>
> प्रश्न यह है कि वर्तमान बुराइयोको दूर करनेके लिए भारतके सामने सबसे कल्याणप्रद तरीका क्या है। हडतालो, और हिंसासे लोगोमें क्रोध और घृणा और तरह-तरहकी सैकडो दुर्भावनाएँ और असन्तोष उत्पन्न होता है, और परिणामत ज्यादातर मामलोमें उनका उद्देश्य ही विफल हो जाता है। यदि प्राप्त होनेवाले लाभके साथ सद्भावनाएँ, एकता और शान्तिकी अपेक्षा हो, तो जरूरी है कि जो भी सुधार हो, वे वैधानिक तरीकेसे प्राप्त किये गये हो। विप्लवकारी तरीकोसे होनेवाली उपलब्धि सहज और प्राकृतिक नहीं है। इतनी दूर एक कोनेमें बैठा हुआ मै सच्चे मनसे यही प्रार्थना कर सकता हूँ कि ईश्वर आपका दिशा-दर्शन करे और आपको अपनी कृपा प्रदान करे, तथा आपको भारतके सच्चे कल्याणका साधन बनाये।

इन पक्तियोमे लेखककी हार्दिकता और सचाई स्पष्ट झलकती है। मैं जानता हूँ कि यह मित्र सच्चे और ईश्वर-भीरु ईसाई हैं। लेकिन जिसे टर्कीके सवालका तनिक भी ज्ञान है, वह देख सकता है कि पत्र-लेखकके मनमे टर्कीके खिलाफ जबर्दस्त पूर्वग्रह है। आर्मीनियनोको "एक शानदार उद्यमशील तथा नेक" जाति बताकर उन्होने इस प्रश्नके बारेमे अपनी अनभिज्ञता ही सिद्ध की है। इसके लिए उन्हे दोषी नही ठहराया जा सकता। अग्रेजी लिखने-पढनेवाली जनताके सामने टर्कीके पक्षकी बाते न आने पाये, इसकी पूरी कोशिश की गई है। विश्वके विभिन्न भागोमे फैले हुए इन नेकदिल ईसाइयोको केवल एक ही ढगकी चीजे पढनेको मिलती है। मिशनरी पत्रिकाएँ घोररूपसे, बल्कि मैं कहने जा रहा था, अपराधकी सीमातक टर्की-विरोधी और इस्लाम-विरोधी हैं। सन्त पॉलने उदारताके बारेमे इतना ज्यादा लिखा, लेकिन ईसाई धर्म प्रचारकोकी पत्रिकाओमे लिखनेवाले लोग जब इस्लाम और टर्कीके बारेमे कुछ लिखते है तो उनके मनमे उदारता शब्दका भी कही आभास नही मिलता। उनके विचारसे तुर्क लोग घोर अधर्मी हैं जिनका निर्माण ईश्वरने सिर्फ इसलिए किया ह कि दुनिया उन्हे कोसे, अभिशाप दे। यह पूर्वग्रह किन्तु ईमानदारी-भरा दृष्टिकोण ही सत्य और न्यायका रास्ता रोककर खडा हे।

मैं आर्मीनियनो या यूनानियोके मुकाबले तुर्कोका बचाव नही करना चाहता। तुर्कोंके कुशासन और उनके बुरे कार्योंसे मैं इनकार नही करता। लेकिन यूनानियो और आर्मीनियनोका इतिहास इसमे लाख दर्जे बुरा है। इससे भी बडी बात यह है कि

खिलाफतका पक्ष लेनेका मतलब है एक पवित्र और शुद्ध विचारका पक्ष लेना। पोप-वादके समर्थनमें इक्के-दुक्के पोपोंके आचरणके पक्षमें कुछ कहना आवश्यक नहीं है। तुर्कोंके कुशासनका आप हर तरहसे विरोध कीजिए, लेकिन तुर्कोंके कुशासनकी आड़ लेकर यूरोपसे तुर्कों और उनके साथ-साथ इस्लामको भी मिटा देनेकी कोशिश करना तो दुष्टता है।

जो बात इससे भी बुरी है वह यह कि धुरी राष्ट्रोंकी पराजयका उपयोग इस्लामको कुचलनेके लिए किया जाये। यह महायुद्ध, जिसमें शामिल होनेके लिए भारतके मुसलमानोंको भी आमन्त्रित किया गया था, क्या इस्लामके खिलाफ कोई धर्म-युद्ध था? जो ऐसा कहते हैं कि मुसलमान चाहे जिसे भी अपना धार्मिक प्रधान चुन सकते हैं, किन्तु तुर्कोंके विघटनमें उन्हें कोई दस्तदाजी नहीं करनी चाहिए, वे लोग खिलाफतका अर्थ नहीं जानते। खिलाफतको तो बराबर पैगम्बर मुहम्मदके धर्मका रक्षक बनकर रहना है, इसलिए जिस क्षण सम्बन्धित व्यक्तिको सारी दुनियाके खिलाफ इस्लामकी रक्षा करनेकी शक्तिसे वंचित कर दिया जाता है या वह उसकी रक्षा करनेकी शक्ति खो देता है, उसी क्षण वह खलीफा होने या बने रहनेके अयोग्य हो जाता है। सैद्धान्तिक तौरपर कोई भले ही खिलाफतकी मान्यताकी नैतिकतामें शंका कर सकता हो, लेकिन इंग्लैंड इस्लामके खिलाफ इस कारण नहीं पड़ा हुआ है कि वह अनैतिक है। उस हालतमें तो इंग्लैंडको उन करोड़ों आदमियोंसे अपना सम्बन्ध तोड़ना पड़ेगा जिनके धर्ममें [इंग्लैंडकी कल्पनाकी] नैतिकताके लिए स्थान नहीं है।

असली सवाल तो यह है कि अगर कोई धर्म राजनीतिक शक्ति प्राप्त करके अपनी रक्षा करनेकी कोशिश करे तो उसमें क्या कोई अनैतिकता है? व्यवहारतः ईसाई धर्मकी रक्षा भी क्या राजनीतिक शक्तिके बलपर ही नहीं होती रही है? और हिन्दू धर्मकी भी बात लें तो क्या राजपूत राजे उसके रक्षकका काम नहीं करते रहे हैं?

जो ईसाई अपने दिलसे वैसा ही मानते हों, जैसा मेरा यह मित्र मानता है, उनसे मैं यही निवेदन करूँगा कि वे एक विचारगत आदर्शके रूपमें खिलाफतकी रक्षाके प्रयत्नमें शामिल हों और इस तरह यह स्वीकार करें कि असहयोग आन्दोलन अधर्मके खिलाफ धर्मकी लड़ाई है।

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, इस मामलेमें मेरा मन बिलकुल साफ है। मेरा लक्ष्य न्यायसम्मत है। मैं किसी फरेब या अन्यायको शह देनेके लिए नहीं लड़ रहा हूँ। मेरा साधन भी उतना ही न्यायसम्मत है। यह लड़ाई सिर्फ सत्य और अहिंसा, इन दो हथियारोंसे ही लड़नी है। स्वेच्छासे कष्ट सहना अपने लक्ष्यके प्रति उत्कटताकी सबसे अच्छी कसौटी है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८–९–१९२१

३१. हिसा और अहिसा साथ-साथ नही चल सकती

हिसा और अहिंसा दो परस्पर विरोधी, एक दूसरेका विनाश करनेवाली शक्तियाँ है। अहिसा इसलिए कि सफलताके लिए पूर्णत अहिंसक वातावरणकी आवश्यकता है। मोपलाओके विद्रोहने वातावरण जितना खराब कर दिया है उतना असहयोग आन्दोलन के आरम्भसे अवतक किसी अन्य कारणसे नही हुआ। मै ये पक्तियाँ सिलहटसे लिख रहा हूँ। आज २९ अगस्त है। जबतक यह लेख छपेगा जनताके पास और अधिक जानकारी पहुँच जायेगी। जो-कुछ वहाँ हुआ है इसकी मुझे बहुत थोडी जानकारी है। मैने दैनिक समाचारपत्रोके तीन अक देखे है जिनमे 'एसोशिएटेड प्रेस' के तत्सम्बन्धी समाचार प्रकाशित है। इन समाचारोका जिस सावधानीसे सम्पादन किया गया है उसकी ओर बरबस ध्यान खिच जाता है। किन्तु यह स्पष्ट है कि मोपलाओके हाथो आधा दर्जन व्यक्ति मारे गये है और वहाँ उनके भी सैकडो व्यक्तियोकी जाने गई है। मलाबारमे फौजी कानून लागू है। अभी सरकार द्वारा बदला लेना बाकी है। विद्रोही जितने बहादुर होगे उन्हे उतना ही कठोर दड दिया जायेगा। सरकारोका यही कानून होता है। यदि मोपला पूरी तरह अहिसक बने रहते तो जितनी जनहानि उन्होने सही है उससे भी दस गुनी हानिकी मै परवाह नही करता। वैसा हुआ होता तो वे स्वराज्यको बहुत ही पास ले आते। स्वराज्यके लिए अपने जीवनमे हम जो भी कुछ दे सके थोडा है। मोपलाओके लिए तो इसका अर्थ खिलाफत-सम्बन्धी अन्यायका दूर होना भी हो सकता था। ईश्वर पुनीत बलिदान चाहता है। हमारे रक्तमे क्रोध या घृणाका लेश भी नही होना चाहिए। जो त्याग अपनी कीमत माँगे वह स्वेच्छासे किया गया त्याग नही है। मोपलाओने कीमत माँगी है। इससे बलिदानकी पवित्रता, उसकी शोभा बहुत हदतक नष्ट हो गई है। अब तो कहा जायेगा कि मोपलाओको ठीक ही सजा मिली।

यदि केवल मोपला ही मरते तो किसी भी प्रकारका फौजी कानून लागू न होता और यदि होता तो वह बहुत स्वागत-योग्य होता। उससे हमारे देशको बरबाद करने-वाली यह सरकार ही खतम हो जाती।

आजकल तो चाहे अकाल हो, या कुलियोका स्थानान्तरण अथवा मोपलाओका विद्रोह, हर विपत्तिके लिए असहयोगको ही उत्तरदायी ठहराना फैशन बन गया है। यह असहयोगकी व्यापकताका अत्युत्तम प्रमाण है। किन्तु इस अभियोगके समर्थनमे मद्रास सरकारने अभीतक कुछ नही कहा है।

हमारा कर्त्तव्य स्पष्ट है। असहयोगियोको स्पष्ट कर देना चाहिए कि इस उत्पात-मे उनका कोई हाथ नही है। हमारे व्यवहारसे कही भी यह जाहिर नही होना चाहिए कि मोपलाओने जो कुछ किया है उसका हम मानसिक रूपसे या गुप्त समर्थन करते है। हमे स्पष्ट जान लेना चाहिए कि हिसाका किसी भी प्रकारसे समर्थन करना हमारे लिए अशोभनीय होगा। हमे मोपलाओकी ओरसे हुई हिंसाकी गुरुताको कम करनेवाले

कारणोकी खोज नही करनी चाहिए। हमने अपने लिए एक कठिन आदर्श चुना है और हमे उसपर टिकना चाहिए। हमने प्रतिज्ञा की है कि चाहे कितनी भी उत्तेजक परिस्थितियाँ क्यो न हो हम किसी भी प्रकारकी हिसा नही करेगे। हम तो यह मानते है कि उत्तेजना दिलानेवाली गभीरतम परिस्थितियोमे हमारी अन्तिम परीक्षा होगी। इसलिए कहना पडता है कि इस्लाम तथा स्वराज्यके पवित्र कार्यको गुमराह मोपलाओने स्पष्ट ही बहुत हानि पहुँचाई है।

हम कह सकते है और अगर हमने ईमानदारीसे वैसा प्रयास किया हो तो — हमे कहना भी चाहिए कि अपने प्रयासोके बावजूद हम अपने समाजके उपद्रवी तत्त्वोको नियत्रित या अनुशासित नही रख पाये। लोगोको स्वेच्छासे स्वीकृत अहिसा और असहयोगके सहज नियत्रण अथवा सरकारके कठोर शासनके बीच किसी एकको चुनना है। अब सरकार अपनी बढी-चढी और प्रशिक्षित हिंसाके द्वारा हिसाकी शक्तियोका प्रतिकार कर सकनेकी अपनी शक्ति तथा सामर्थ्यका प्रदर्शन कर रही है। यदि हम यह नही दिखा पाते कि हमारा जनतापर अधिक प्रभाव है तो सरकारकी इस कार्रवाईका कोई जवाब नही दे सकते। हमे स्वय साफ-साफ देख सकना चाहिए और लोगोको दिखा सकना चाहिए कि सरकारके खिलाफ हमारा शक्ति-प्रदर्शन उस बालकके प्रयत्नके समान है जो एक तिनकेसे नदीके प्रवाहको रोकना चाहता है।

मुझे यह जानकर दु ख होता है कि हमारे लोगोमे अभीतक यह स्थिर विश्वास पैदा नही हुआ है कि केवल पूर्ण अहिसाके माध्यमसे ही स्वराज्य जल्दी मिल सकता है। हमे यह भी नही दिखता कि हिंसाके कारण हिन्दू-मुस्लिम एकता समाप्त हो जायेगी। हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरेका विश्वास नही करते उसका कारण इसके सिवा और क्या है कि उन्हे — हिन्दुओको मुसलमानोकी ओरसे और मुसलमानोको हिन्दुओकी ओर से — हिसाका भय है। और दोनोमे सच्ची हार्दिक एकताके बिना स्वराज्यकी कल्पना भी नही की जा सकती।

स्वराज्य-प्राप्तिमे जो चीज बाधक है वह हिसाका भय नही तो और क्या है? उसके लिए हमे जो कदम उठाना है उन्हे हम तुरन्त क्यो नही उठाते? क्या उसका कारण यही नही है कि हमे हिसाके भडक उठनेका भय है? अगर हमे यह विश्वास हो जाये कि हम दृढतापूर्वक अहिंसापर डटे रहेगे तो क्या हम सरकारको आज ही यह चेतावनी नही दे सकते कि या तो वह हमारे साथ सहयोग करे या यहाँसे निकल जाये? माडरेट लोग हमारे आन्दोलनसे दूर रहना चाहते है उसका कारण क्या यही नही है कि उन्हे अहिसाका वातावरण पैदा कर सकनेकी हमारी क्षमतापर विश्वास नही है? मोपलाओके इस उत्पातसे उनके इस डरको पोषण मिलेगा।

तब हमे क्या करना चाहिए? बेशक हमे निराश नही होना है। अपने साधनमे, अहिसामे हमारा विश्वास और प्रबल हो जाना चाहिए और इस प्रबलतर विश्वासको लेकर हमे अधिक उत्साहसे आगे बढना चाहिए, अधिक आशासे अपना कदम उठाना चाहिए। हमे अपने देशवासियोको, नादानसे-नादान देशवासीको, यह समझाना है कि खिलाफत-सम्बन्धी अन्यायके निराकरण तथा स्वराज्यकी प्राप्तिके लिए अहिसा ही एकमात्र और अनिवार्य उपाय है और अपने उस प्रयत्नमे हमे लगातार जुटे ही रहना चाहिए।

मोपला हमारे देशके वहादुरसे-वहादुर लोगोमे से है। वे खुदासे डरते है। हम उनकी वहादुरीको निखारकर शुद्ध करना है। मेरा विश्वास है कि यदि एक वार वे अपने धर्मको, अपने विश्वासोकी रक्षाके लिए, जिसके लिए अभी उन्होने जाने ली है, अहिंसाकी आवश्यकता समझ जाये तो विना किसी हिचकिचाहटके वे अहिंसाका पालन करेंगे। मोपले कितने वहादुर होते है, इसके प्रमाणमे एक साक्षी देखिए। 'इम्पीरियल गजेटियर आफ इडिया' का लेखक लिखता है —

> **उनके स्वभावमें एक चीज हमेशा होती हे, धर्मके मामलेमें अन्धी और उन्मत्त कट्टरता। वे झुकना तो जानते ही नहीं। लडने जायें उसके पहले ही भावी शहीदोको देवार्पित कर दिया जाता हे और मरनेके वाद उनका गुण-गान किया जाता है।**

ऐसे वहादुर लोग निश्चय ही ज्यादा अच्छे व्यवहारके हकदार है। लेकिन उनकी वहादुरीके प्रति सरकारका रवैया इस वातमे जाहिर होता हे कि उसने उनके खिलाफ वर्षो पहले एक विशेप कानून पास किया था। मौजूदा उपद्रवसे निपटनेके लिए उसने अपना चक्र गतिमान कर ही दिया हे। मोपला लोग निस्सन्देह मौतको हँसते-हँसते गले लगायेंगे। क्या ऐसा नही हो सकता कि हम उनकी इस वहादुरीको अहिंसाकी अधिक विशुद्ध और उदात्त वहादुरीमे वदल डाले? वह एक चमत्कार ही होगा और चमत्कार महज मानवीय प्रयत्नके द्वारा सम्भव नही है। लेकिन ईश्वर तो चमत्कार कर ही सकता हे। वहुत लोगोका खयाल है कि अगर हम इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त कर लेते है तो वह निस्सन्देह एक चमत्कार होगा। लेकिन उस चमत्कारके पहले हमे एक और चमत्कार कर दिखाना है। हमे भारतकी जनताका, उसके वहादुरसे वहादुर सपूतोका मन जीतकर उन्हे अहिंसाके मार्गपर कमसे-कम इस हदतक अवश्य लाना है कि वे स्वीकार कर लें कि भारतकी आजादी अहिंसाके द्वारा ही पायी जा सकती है।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, ८-९-१९२१

३२. गो-रक्षाका उपाय

मौलाना मुहम्मद अली तथा मौलाना आजाद सोवानीके साथ मेरी विहार-यात्राका उद्देश्य गायके प्रश्नपर फैली हुई गलतफहमीको रोकना था। कई स्थानोपर हमारे भाषण हुए। एक मित्रके सौजन्यसे, जिन्होने मेरे एक भापणका सार लिपिवद्ध किया था, अपने उसी भापणकी मुख्य-मुख्य वाते मै यहाँ पाठकोके लिए प्रस्तुत कर रहा हूँ।

> **अपने भाषणके प्रारम्भमें गाधीजीने लोगोकी 'चरण' छूनेकी आदतका उल्लेख करते हुए कहा कि यह मेरे लिए परेशानीकी चीज वन गई है।**

लोग इस कार्यको वीर-पूजाकी भावनासे करते है। और खासकर विहारमें यह वृत्ति वहुत ज्यादा है। लोग मेरे अवतार होनेकी वाततक कह डालते है। हिन्दू होनेके नाते मै अवतारोमे विश्वास जरूर करता हूँ। मेरा विश्वास है कि अपनी योजना

पूरी करनेके लिए परमात्मा समय-समयपर पृथ्वीपर अपने विशेष दूत भेजता रहता है। इनमे परमात्माका तेज या प्रताप विशेष रूपसे दृष्टिगोचर होता है। इन्हीको हमारे शास्त्रो मे अवतारका नाम दिया गया है। परन्तु प्रस्तुत परिस्थितिमे यह बात लागू नही है। मेरे विचारमे आज भारतकी स्थिति ऐसी है कि यहाँ अभी किसी भी अवतारका अवतरित होना सम्भव नही। किसी अवतारके अवतरित होनेकी कल्पनातक करनेसे पहले, हमे सही रास्तेपर चलते हुए कठोर परिश्रम करना चाहिए तथा इस तरह अपनेको तथा अपने देशको पवित्र बनाना चाहिए। और आजके भारतको जो वस्तु चाहिए वह वीरपूजा नही अपितु सेवा है। उत्तरोत्तर अधिक सख्यामे हमे देशसेवक चाहिए। जो स्वराज्य हम चाहते है उसका अर्थ वर्तमान राजाको खत्म करके किसी दूसरे व्यक्तिके शासनकी स्थापना करना नही है — चाहे वह गाधी हो या मेरे साथी मौलाना शौकत अली या मौलाना मोहम्मद अली। हम जानते है कि पिछले जमानेमे चाहे जो हुआ हो, परन्तु भारत अब इतना जाग चुका है कि अब इन बातोकी पुनरावृत्ति होनेवाली नही है। हम यह नही चाहते कि एक आदमी तो शासन करे और बाकी सब उसके दास बने रहे। हम काफी दासता भोग चुके है। हम जो चाहते है वह यह है कि अपनी निष्ठाके द्वारा लोगोमे देशसेवाकी सजीव भावना पैदा करे। हम चाहते है कि प्रत्येक भारतीय गाधी बने, मौलाना शौकत अली बने, मौलाना मुहम्मद अली बने और तब हमारी कल्पनाका स्वराज्य हमे मिल जायेगा — अपने सम्पूर्ण रूपमे। इसलिए मेरा आपसे निवेदन है कि आप चरण छूकर या जय-घोष करके अथवा अनावश्यक नारे लगाकर हमारे काममे बाधा न डाले। यह असम्भव है कि भीडका प्रत्येक व्यक्ति मुझे छू सके। परन्तु जब वे लोग जो मेरे निकट है मेरे पैरोपर झुकना आरम्भ कर देते है तो भीड भी ऐसा ही करनेके लिए लालायित हो जाती है। इससे अकथनीय गडबडी मच जाती है। इसलिए मेरे पास खडे लोगोको मेरे पैर कदापि नही छूना चाहिए। उन्हे तो मेरा आदर करनेके अभिप्रायसे मेरे आगे झुकना भी नही चाहिए। यही नही कि मुझे ऐसी बाते पसन्द नही, बल्कि ऐसा करनेसे मुझे काफी चोट पहुँचनेकी सम्भावना भी रहती है। मै चाहता हूँ कि देश पजाब एक्सप्रेसकी गतिसे भी अधिक तेज रफ्तारसे चले। हमे स्वराज्य इसी वर्ष लेना है ताकि हम आगामी दिसम्बरतक उसकी खुशियाँ मना सकें। मै एक बार फिर आपसे सविनय प्रार्थना करता हूँ कि आप ऐसा कोई भी काम न करे जिससे हमारे काममे रुकावट पैदा हो, क्योंकि इससे रुकावटके प्रमाणमें देशकी हानि ही होती है, और कुछ नही।

अब मै उस सवालपर आता हूँ जिसके लिए हम लोग यहाँ आये हुए है। ज्यो ही मै यहाँ पहुँचा मैने लोगोसे दरयाफ्त किया कि यहाँके हिन्दुओ और मुसलमानोमे अनबन तो नही है। और जब मैने यह सुना कि ससरामके हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच जरा भी मनोमालिन्य नही है, मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। परन्तु मुझे बताया गया है कि इस नगरके लोग कांग्रेसके कार्यके प्रति दिलचस्पी नही रखते। यहाँकी कांग्रेस कमेटी तथा खिलाफत समिति, दोनो ही शिथिल है। इन दोनोसे मेरा निवेदन यही है कि वे अपने-अपने कामोमें ज्यादा दिलचस्पी लें। मै अन्य अनेक बातोके बारेमे भी पूछताछ करनेवाला था, परन्तु मै इतना थका हुआ था कि ऐसा न कर सका। गो-रक्षाके सम्बन्धमे मेरा

विचार तो यह है कि गायकी रक्षा करना हिन्दुओका धर्म है। धार्मिक विश्वासोमे तथा धार्मिक एव सामाजिक रीति-रिवाजोमे हिन्दुओमे, आपसमे ही, बहुत अन्तर है, परन्तु गोरक्षाके विषयमे सब हिन्दू एकमत है। मै तो यहाँतक कहनेको तैयार हूँ कि गो-रक्षा हिन्दू धर्मकी एक केन्द्रीय और सर्वमान्य वस्तु है, यह एक ऐसी वस्तु है जो उसे दुनियाके दूसरे धर्मोसे अलग करती है। भारतवर्षमे गो-रक्षाकी बहुत बडी आवश्यकता है। लोग उसका दूध पीते है इतना ही नही, बल्कि उसकी नर सन्तान — बैल — से हम खेत जोतनेका काम लेते है। हिन्दू लोग गायके प्रति उतनी ही श्रद्धा रखते है जितनी ब्राह्मणके प्रति। परन्तु भारतके बाहर गायके प्रति ऐसी भावना नही है। इसीलिए हमारे मुसलमान भाइयोके मजहबमे गो-वध निषिद्ध नही माना गया है। और अगर हमारा कोई मुसलमान भाई किसी दिन — जैसे ईदवाले दिन — गो-वध करता है तो कोई हिन्दू उसे मारनेके लिए हाथ कैसे उठा सकता है? क्या शास्त्रोमे यह लिखा है कि गायको बचानेके उद्देश्यसे किसी मनुष्यके प्राण लिये जा सकते है? सच पूछिए तो शास्त्र ऐसा कोई आदेश नही देते। बल्कि ऐसा करना उनकी आज्ञाके विपरीत है। अग्रेज लोग गोमास खाते है परन्तु इस बातको लेकर कोई भी हिन्दू किसी अग्रेजपर हाथ नही उठाता और न कोई हिन्दू भारतमे रहनेवाले अग्रेजोके लिए आवश्यक गोमासकी पूर्ति के लिए कसाईखाने ले जाई जानेवाली लाखो गायोको ही वहाँ पहुँचनेसे रोकता है। मेरे कहनेका तात्पर्य यह है कि गायके प्राणोकी रक्षा करनेके लिए आप अपने प्राण न्योछावर कर सकते है, दूसरेके प्राण ले नही सकते और न आप उसके प्रति अपने मनमे रोष ला सकते है। मेरे भाई मौलाना मुहम्मद अलीने आज दिये गये अपने भाषणो-मे से एकमे जो बात कही उसे मै बिलकुल ठीक मानता हूँ। उनका कथन है कि भारतमे जो गो-वध हो रहा है उसके दोषका तीन-चौथाई भाग हिन्दुओके हिस्सेमे आता है और मुसलमानोके हिस्सेमे केवल एक चौथाई भाग। इसका कारण यह है कि जिन गायो का वध किया जाता है वे हिन्दुओसे ही प्राप्त की जाती है। मैने बम्बईमे जहाजोपर लादी गई हजारो गायोको कत्लके वास्ते विदेशोमे भेजा जाते देखा है। हिन्दू ही गायोकी बिक्री करते है, न कि मुसलमान लोग। मेरे भाईने जो यह सुझाव दिया है कि गायका कोई कृत्रिम मूल्य — जैसे सौ रुपये फी गाय — रख दिया जाये तो गोवध स्वत कम हो जायेगा, मुझे बहुत व्यावहारिक लगा है। सब-कुछ हम हिन्दुओपर ही निर्भर करता है। बम्बईमे तिलक स्वराज्य-कोषके लिए भेट की गई एक गायकी कीमत पाँच सौ रुपये आई और दूसरी उससे भी ऊँचे मूल्यपर बिकी। अगर खरी-दनेवाले तथा बेचनेवाले दोनोकी श्रद्धाको जगाया जाये तो यह सब काम बिलकुल सुगम और व्यावहारिक हो जायेगा। इसलिए हिन्दुओसे मेरा यही निवेदन है कि यदि आप लोग वास्तवमे गो-माताके प्राण बचाना चाहते है तो मुसलमान भाइयोसे झगडा मत कीजिए बल्कि उनके साथ शान्तिपूर्वक रहिए। उनको किसी बातके लिए विवश मत कीजिए। उनके इस सकट कालमे, बदलेकी इच्छा किये बिना उनकी सेवा सच्चे दिलसे कीजिए। मेरी नजरोमे मुसलमानोकी खिलाफतकी समस्या उतना ही महत्त्व रखती है जितना महत्त्व हिन्दुओके लिए गो-रक्षाका प्रश्न रखता है। मेरा यह पक्का

विश्वास है कि यदि पहली समस्या सुलझ गई तो दूसरी अपने-आप सुलझ जायेगी। मेरा यह कथन किसी सौदेबाजीके भावसे प्रेरित नही है। यदि हम अपने मुसलमान भाइयोको जो सहायता अर्पित करना चाहते है वह हार्दिक है और स्वेच्छाप्रेरित है, यदि हम उनके मजहबकी हिफाजतकी खातिर दरअसल अपनी जानोकी बाजी लगानेको तैयार है तो इसमे कोई शक नही कि लेन-देन के कानूनसे कोई उच्चतर कानून प्रवर्तित होने लगेगा और भारतमे गो-रक्षाकी समस्या सुलझे बिना न रहेगी।

अपना कथन समाप्त करनेके पहले मै आपका ध्यान एक और बातकी ओर दिलाना चाहता हूँ। मुझे मालूम हुआ है कि यहाँपर लगभग ५०० मुसलमान जुलाहा परिवार है। उनकी प्रवृत्ति अपना व्यवसाय छोडनेकी हो रही है, क्योकि दूसरे मुसलमान उनके प्रति हीनभाव रखते है। इस प्रवृत्तिकी रोकथाम करना अत्यन्त आवश्यक है। हम हिन्दुओमे कर्मपर आधारित सामाजिक भेदभाव मौजूद है, परन्तु जहाँतक मुझे मालूम है, इस्लाम ऐसे भेदको नही मानता। मुस्लिम समाज परिपूर्ण समानतापर आधारित है। इसलिए इन जुलाहोका समाजमे अप्रतिष्ठित समझा जाना मुझे असगत प्रतीत होता है। बुनकरका काम कोई ओछा काम नही है। मेरे विचारमे भारतकी बिलकुल अनिवार्य दो आवश्यकताएँ, जिनपर भारतका जीवन निर्भर है, कृषि तथा बुनाईका काम है। भारतके लिए उनका वही महत्त्व है जो जीवित व्यक्तिके लिए उसके दो फेफडोका होता है। यदि इनमे से एक निकम्मा हो जाता है या उसमे कोई रोग लग जाता है अथवा कोई खराबी आ जाती है, तो दूसरा फेफडा कुछ समयतक तो काम अवश्य चला सकता है परन्तु अधिक समयतक नही। ठीक ऐसी ही अवस्था भारतकी है। जैसे-जैसे बुनाई उद्योग समाप्त होता गया वैसे-वैसे हमारा देश भी कमजोर होता गया। और हमने स्वदेशीका जो कार्यक्रम आरम्भ किया है वह बीमार फेफडेके उपचार-जैसा है जिससे कि कमजोरी ठीक की जा सके और नए रक्तका सचार हो सके और वह फेफडा स्वस्थ एव शक्तिशाली बने। ज्यो ही भारतके लिए कृषि तथा बुनाईकी नितान्त आवश्यकता हमारी समझमे आ जायेगी त्यो ही हम इन कामोकी अवगणना या उनका तिरस्कार करना छोड देगे और तभी हमारी समझमे आयेगा कि ये दोनो उद्योग हमारे सर्वोच्च आदरके पात्र है। हमे यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि बुनकरोकी मददके बिना भारतमे स्वदेशीके कार्यक्रमको सफलता नही मिल सकती। स्वदेशीसे मेरा तात्पर्य है कि प्रत्येक प्रान्त अपना कपडा स्वय तैयार करे। यदि आप अपने कपडोके लिए बम्बईपर निर्भर रहेगे तो इसका मतलब यह होगा कि बिहारने स्वदेशीका अमल नही किया। इसलिए काग्रेस कमेटीसे मेरी प्रार्थना है कि वह शीघ्रातिशीघ्र बिहारके प्रत्येक घरमे चरखा पहुँचा दे। इस कामके पूरा हो जानेपर हमारा प्रत्येक घर कताईका कारखाना बन जायेगा। यदि इस पैमानेपर सूत काता जाये तो हम प्रत्येक गलीको आसानीसे बुनाईके कारखानेका रूप देनेकी उम्मीद कर सकते है। यह प्रश्न सारे भारतके लिए बहुत जरूरी है, किन्तु बिहारके लिए तो विशेष रूपसे है, क्योकि भारतके प्रान्तोमें बिहार सबसे अधिक गरीब है। यहाँ मै उडीसाको भी बिहारमें ही शामिल कर रहा हूँ। किन्तु यदि इन्हे अलग मानें तो [गरीबीमे] उडीसाका स्थान सबसे निम्न स्तरपर होगा तथा बिहार प्रान्तका बस उसके

ऊपर। चम्पारनमे अपना काम करते हुए मुझे बिहारकी गरीबीका अनुमान हो गया था। मुझे उन्ही दिनो पता लगा था कि बिहारकी अधिकाश स्त्रियाँ केवल एक वस्त्रसे ही काम चला लेती है। सच तो यह है कि जो वस्त्र वे पहनती है उसके अतिरिक्त उनके पास और कुछ होता ही नही। यह बात सीधे मुझे बतानेमे तो उन्हे शर्म लगती थी किन्तु उन्होने मेरी पत्नीसे कहा था कि यदि मै उनके घर जाऊँ तो मुझे पुराने चिथडोके अतिरिक्त और कुछ नही मिलेगा। उन्होने यह भी कहा था कि "गाधीजी हमे प्रतिदिन स्नान करनेको कहते है। किन्तु यदि उस वस्त्रको धोनेके लिए जिससे हम अपना तन ढाँकती है, हमे नग्न होना पडे तो यह काम हम गाधीजीके कहनेसे भी नही कर सकती।" बिहारकी गरीबीका यह हाल है। यदि इन स्त्रियोको चरखे दे दिये जायें तथा उन्हे दो-दो आना दैनिक मजदूरी मिल जाया करे तो मुझे पूर्ण आशा है कि वे यह काम पूरे उत्साहसे शुरू कर देगी और उसमे पूरी शक्तिसे लगी रहेगी। मुझे मालूम है कि नीलकी खेती करानेवाले जमीदार मजदूरोको मजदूरीमे प्रतिदिन ६ पैसे देते है। यदि उन्हे यह पता चले कि चरखेसे उन्हे छ पैसेकी जगह दो आना प्रतिदिन मिलेगा तो हमे समझाने-बुझानेकी भी जरूरत नही होगी और बात अपने-आप बन जायेगी। हमे अपना कार्य इन तरीकोसे तुरन्त आरम्भ कर देना होगा। बिहारसे मुझे बहुत आशा है। उसपर मेरा विशेष अधिकार है। आशा है कि वह मुझे मेरे अधिकारसे वचित नही करेगा। मै चाहता हूँ कि मैने जो बाते कही है, आप लोग गाँवोमे रहनेवालोको समझाये। ये बाते शायद गाँववाले न समझ पाये, पर आप लोगोको, जो शहरोके रहनेवाले है, दुनियाका विस्तृत अनुभव है। इसलिए यह आपका कर्त्तव्य है कि आप गाँवके लोगोको ये बाते समझाएँ। स्वराज्यके आन्दोलनके लिए तीन बाते बहुत महत्त्व रखती है। इनको पूरा किए बिना हम अपने सघर्षमे आगे नही बढ सकते। पहली है सम्पूर्ण हिन्दू-मुस्लिम एकता। हिन्दुओ और मुसलमानोमे भाईचारेकी भावना पैदा होनी चाहिए। स्वराज्य आन्दोलनकी सफलताकी यह पहली शर्त है। दूसरी बात यह है कि हमारा यह शान्तिपूर्ण तथा अहिंसात्मक आन्दोलन हमेशा शान्तिपूर्ण तथा अहिंसात्मक ही रखा जाये। जो आदमी इस विषयपर थोडा-सा भी विचार करेगा, वही आसानीसे समझ सकता है कि हम हिंसा द्वारा कभी भी सफल नही हो सकते। यदि हम तलवार खीचेगे तो हम केवल अपनी ही हानि करेगे, क्योकि दूसरे कारणोको चाहे हम न माने लेकिन यह तो मानना ही होगा कि हमारे पास हवाई जहाज आदि जैसे युद्धके आधुनिकतम साधन नही है। इसलिए किसी भी परिस्थितिमे आप शान्ति भग न करे। हमे अग्रेजोके साथ और स्वय अपने बीच, सहयोगियो और असहयोगियोके तथा जमीदार और रैयतके बीच, मनसा, वाचा और कर्मणा शान्ति बनाये रखनी है। तीसरी बात यह है कि हमे विदेशी कपडेका बहिष्कार तुरन्त ही करना है और अपनी आवश्यकताके लिए अपने घरो तथा गाँवोमे कपडा उत्पादन करना है। तभी हम अपने तीन लक्ष्योकी प्राप्ति कर पायेगे।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, ८–९–१९२१

३३. भाषण : हरीश पार्क, कलकत्तामें

८ सितम्बर, १९२१

. . .श्री गाधीने कहा कि कुछ महीने पहले जब मै तिलक स्वराज्य कोषके लिए चन्दा करने कलकत्ता आया था तब मैंने कहा था कि अपेक्षित रकम पिछले ३० जूनसे पहले इकट्ठी हो जानी चाहिए और मुझे यह सुनकर प्रसन्नता हुई है कि वह काम पूरा हो गया है। इस बार मै इसी ३० सितम्बरसे पहले विदेशी चीजोका पूर्ण बहिष्कार चाहता हूँ। अन्य सभी प्रान्तोमें स्वदेशी पूरे जोरोपर है और मै बगालके भाई-बहनोसे इस बातका आश्वासन चाहता हूँ कि मेरी इस नई योजनामे आप लोग मेरी मदद करे। स्वदेशीके मामलेमें बगाल अन्य सभी प्रान्तोसे पिछडा हुआ है। मुझे इस बातका दुःख है कि बगालने इस कार्यक्रमके सम्बन्धमें बहुत कम उत्साह दिखाया है। मै जानता हूँ कि बगाल बौद्धिक दृष्टिसे काफी सम्पन्न है और अन्य प्रान्तोसे बढा-चढा है, किन्तु मेरी समझमें नहीं आया कि इस महान कार्यमें वह क्यो पिछडा हुआ है। बंगालने ही स्वदेशी धर्मको पहले-पहल अपने यहाँ चलाया। पुराने जमानेमें बगालमें ही अच्छा बारीक हाथका कता कपडा तैयार हुआ करता था और मुझे यह सुनकर आश्चर्य होता है कि यह काम बगाल अब नहीं कर पा रहा है। मुझे विश्वास है कि जब बगाली लोग यह समझ जायेंगे कि स्वदेशीके इस्तेमालसे स्वराज्य मिलना सम्भव है तो वे इस महीनेके शेष २४ दिनोमें ही यह महान कार्य पूरा कर दिखायेंगे। मुझे दु ख है कि वकील लोग अभीतक वकालत जारी रखे हुए हैं परन्तु जिस समय श्री दास और पण्डित मोतीलाल नेहरूने[1] अपनी वकालत छोडी थी उसी समय मेरा उद्देश्य पूरा हो गया था। दुर्गा पूजा बिलकुल पास आ रही है और यह हिन्दुओका एक बहुत बडा उत्सव है। इस अवसरपर काफी कपडे खरीदे जाते हैं। मै आप लोगोसे करबद्ध प्रार्थना करता हूँ कि आप एक पैसेके भी विदेशी मालकी, खासतौरपर कपडोकी, खरीद न करें। मुझे आशा है कि यदि लोग तत्काल ही मेरे निवेदनपर अमल करेंगे तो वे ईश्वरके आशीर्वादके भागी बनेंगे।

(आगे बोलते हुए श्री गाधीने कहा कि बगालके विभाजनके समयके स्वदेशी आन्दोलनमें और वर्तमान आन्दोलनमें काफी फर्क है। बगालके विभाजन-कालमें यदि कोई प्रतिबन्ध थे भी, तो सख्त नहीं थे, और वे विदेशी वस्त्रके बहिष्कारतक ही सीमित थे। विदेशी वस्त्रोका अर्थ था लन्दनमें बने कपडे, किन्तु जापानमें बनी चीजोके इस्तेमालकी छूट थी। वर्तमान स्वदेशी धर्मका अर्थ हर तरहके विदेशी वस्त्रका पूर्ण बहिष्कार है और केवल हाथके कते सूतसे बुने कपडे ही स्वदेशी माने जायेंगे। उस

1. (१८६३-१९३१), वकील और प्रमुख राजनीतिज्ञ, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके दो बार अध्यक्ष।

समयका आन्दोलन कुछ कष्टोके निवारणके लिए शुरू किया गया था, परन्तु वर्तमान आन्दोलनका उद्देश्य अधिक ऊँचा और महान् है, अर्थात् स्वराज्यकी प्राप्ति है। आप लोग विदेशी मालका पूर्णरूपसे वहिष्कार कीजिए उन्हे जला डालिए। कुछ लोगोने मुझसे कहा है कि इन कपडोको खुलनाके अकाल पीडित लोगोको भेज दिया जाये। मै इस सुझावके विरुद्ध हूँ क्योकि मै नहीं चाहता कि इन गरीब लोगोका कलेवर विदेशी वस्त्ररूपी जहरसे दूषित हो। यदि आप इन लोगोकी मदद करना चाहते है, तो आप अपने स्वदेशी कपडे भेजिए और स्वय लुगियां धारण कीजिए।

[अग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ९-९-१९२१

३४. तार : फरीदपुरकी काग्रेस और खिलाफत समितियोंको

[१० सितम्बर, १९२१ के पूर्व]

बादशाह मियां आबू खलीद रशीदुद मियांको[1] उनकी गिरफ्तारीपर मुबारकबाद। उनके हजारो अनुयायियो और मित्रोके उत्तेजित हो उठनेकी सम्भावना है। मै उनसे अनुरोधपूर्वक कहूँगा कि वे तत्काल ही स्वदेशी अपनाकर अर्थात् सभी विदेशी-वस्त्रोका वहिष्कार और हाथकी कती और हाथकी बुनी खादीका उत्पादन करके नेताओके प्रति अपना आदरभाव व्यक्त करे। मेरा विश्वास है कि लोग निरुद्विग्न, शान्त और मर्यादित रहेगे। लोगोको शान्त करनेके लिए मौलाना आजाद सोबानी कुछ मित्रोके साथ फरीदपुर रवाना हो रहे है।

गाधी

[अग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १०-९-१९२१

१ बगालके एक धार्मिक पुरुष।

३५. परोपकारी पारसी

[१० सितम्बर, १९२१][1]

मै पारसियोकी उदारताका विचार जव-जव करता हूँ तब-तब मुझे यह लगता है कि मुट्ठी-भर पारसियोने दुनियामे जो इतनी कीर्ति कमाई है वह केवल अपनी दानशीलतासे कमाई है। प्रसिद्ध जातियोमे सबसे अल्पसख्यक जाति पारसियोकी है। इन अस्सी हजार स्त्रियो और पुरुषोका इतना खयाल दुनिया क्यो करती है? पारसियोके पास शस्त्र-बल नही है, उनमे कोई ढोग या पाखण्ड नही है और उनके पास कोई जादू नही है अथवा यदि कोई जादू है तो वह यह दानशीलताका ही जादू है।

यदि पारसी लोग करोडो रुपये कमानेपर भी उन्हे पेटियोमे बन्द करके रख देते तो उनका अस्तित्व कभीका मिट गया होता। दानशीलता आत्मशक्ति है और आज पारसी अपनी इस आत्मशक्तिसे ही अपना अस्तित्व बनाये हुए है और कीर्ति प्राप्त कर रहे है।

किन्तु पारसियोकी दानशीलता धनकी है। धन तो आता-जाता रहता है। यदि पारसी धन कमाना बन्द कर दे तो उनकी क्या दशा होगी? धनकी दानशीलता आत्मशक्तिका एक अश-मात्र है। मैने अपने पारसी मित्रोसे बात करते हुए बहुत बार कहा है कि पारसियोकी परीक्षा तो इस समय हो रही है। यदि वे अपने करोडपतियोकी सख्यासे ही अपनी कीर्ति कायम रखना चाहेगे तो नही रख सकेगे। असीम धनसे पारसियोका आत्मविकास रुक जानेका पूर्ण भय है। मेरा पारसी जातिपर बहुत अनुराग है, यह बात हर पढे-लिखे पारसीको मालूम है। मैने अपने इस अनुरागका कारण भी बता दिया है। अपने इस अनुरागके कारण ही मैने पारसियोमे अवनतिके जो चिह्न देखे है उनसे मुझे दुख होता रहा है।

कोई जाति केवल अनुकरण करके अपना अस्तित्व कायम नही रख सकती। कोई जाति विलासितामे पडकर जीवित नही रह सकती। मैने देखा है कि पारसियोकी जिन्दगी आरामतलबीकी हो गई है। पारसियोके लिए अस्पताल, पारसियोके लिए आराममे रहनेका इन्तजाम, पारसियोके लिए अलग कोष। मै घबरा गया। मैने देखा कि दानशीलताने ऐसा रूप ग्रहण किया है कि इससे पारसियोकी जाति शायद पिछड जायेगी। जो जाति दान-पुण्यके सहारे जीवित रहती है उसका नाश ही हो जाता है। अपने शरीरके पसीनेसे प्राप्त सुविधाएँ ही मनुष्यको पच सकती है। जो मनुष्य अपनी जातिकी दी हुई सुख-सुविधाओका कमसे-कम उपयोग करता है उसीका पुरुषार्थ बढता है। मनुष्यको कठिनाइयोकी निहाईपर ही परखा जाना चाहिए।

मनुष्य एक-दूसरेकी नकल करनेके लिए ही नही जन्मा है। एक बालकका भी विशेष व्यक्तित्व होता है। खान-पान आदि क्रियाएँ तो पशुओमे भी होती है। हम

१ यह लेख पहले साँझ वर्तमानके पतेती-अंक (नववर्षांक) में प्रकाशित हुआ था। १९२१ में पतेती १० तारीखको थी।

पशुत्वसे ऊँचे उठ गये है उसका एक ही कारण है—हममे बुद्धि है, विवेक है, सार-असारके विवेचनका गुण है। जिस कार्यको हम ज्ञानपूर्वक करते हैं उसको पशु अज्ञान-पूर्वक करते है। हम चाहे तो एक चीटीके व्यवहारको देखकर उसकी उद्योगशीलता-का अनुकरण कर सकते है, किन्तु यदि हम इस अनुकरणको ज्ञानपूर्वक करेगे तो उसमे विविधता होगी। ज्ञानपूर्वक किये गये अनुकरणमे नकल नही होती, किन्तु जब एक गुलाम मालिककी नकल करने बैठता है तब वह नीचे ही गिरता है।

इसलिए जब पारसी युवक भाइयो और बहनोने असहयोगमे भाग लेना आरम्भ किया तो मुझे प्रसन्नता हुई। असहयोगका हेतु सरकारको अथवा सरकारके अन्यायको पराजित करना भले ही हो, किन्तु पारसी भाइयो और बहनोके मस्तिष्कमे मै उसका मुख्य हेतु ही बैठाना चाहता हूँ। असहयोगका अर्थ है आत्मशुद्धि। चिकित्सा-शास्त्रका नियम है कि जिसके शरीरमे बिलकुल शुद्ध रक्त है उसपर रोगके कीटाणुओका प्रभाव नही हो सकता। शुद्ध रक्त स्वय रोगके कीटाणुओका नाशक है। इसी प्रकार यदि हम स्वय शुद्ध होकर न्यायशील बन जाये तो अन्याय हमारी क्या हानि करेगा? अन्यायीको दण्ड देना अनुचित नीति है। हमे उसके अन्यायके वश न होकर स्वय दु ख भोगना चाहिए और उसका उत्पीडन सहना चाहिए, यही उचित नीति है, क्योकि इस प्रकार कसौटीपर चढनेके बाद हमारा उत्पीडन कोई नही कर सकता।

आत्मशुद्धिकी कोई हद नही। किन्तु हमने अपने लिए आत्मशुद्धिकी जो हद रखी है वह तो इतनी करीब है कि वहाँतक तो एक बालक भी पहुँच सकता है।

१ हम अपनी छोडकर परायेकी फिक्र क्यो करे? भारतमे करोडो लोग भूखे मरे और हम बाहरके लोगोके साथ व्यापार करे यह अपनोके प्रति हमारा अत्याचार है। इस अत्याचारको दूर करनेके लिए हमे अपने देशका बना कपडा ही पहनना चाहिए और विदेशी कपडा चाहे कितना ही सुन्दर लगता हो, फिर भी त्याग देना चाहिए। ऐसा करनेके लिए हम सबको पीजने, कातने और बुननेका काम करने लग जाना चाहिए। इस तरहका आचरण करके हम स्वावलम्बी बन जायेगे।

२ इस तरहके शुद्ध स्वदेशी-व्रतका पालन करनेके लिए हमे सादगी अपनानेकी बहुत जरूरत है। सादगी अपनानेमे हमारा कपडे पहननेका हेतु भी बदलेगा। हमे कपडा सजावटके लिए नही बल्कि शरीरको ढकनेके लिए पहनना चाहिए। इसलिए हमे वैसे ही और उतने ही कपडे पहनने चाहिए जैसे और जितने कपडे हमारे देशकी जलवायुके लिए उपयुक्त है। भारतके लिए सफेद रग सबसे ठण्डा रग है। वह आँखको भी सुहाता है। सफेद कपडेमे मैल तुरन्त दिखाई देता है, इसलिए सफेद कपडा पहनने-पर हमारे लिए साफ रहना जरूरी हो जाता है। बनियान, कमीज और वास्कट पहनना और उनके ऊपर कोट डाल लेना यह तो शरीरपर अत्याचार करने जैसा है। यदि बनियानके साथ दूसरा कोई कपडा पहनना हो तो वह कुरता हो सकता है। इससे अधिक कपडे पहनना व्यर्थ है। अग्रेजी पतलून खादीके पाजामेका मुकाबला नही कर सकती। हमारे देशमे कुर्सियोकी जरूरत नही है। अधिक ठण्डी और तरल जलवायुके देशमे उनकी जरूरत भले ही हो। हम लोग कलफसे कडी बनी हुई और तग पतलून पहन ही नही सकते। हमारे लिए तो ढीला और नरम पाजामा पहनना ही अच्छा

है। इससे हमे जमीनपर बैठनेमे दिक्कत नही होती। इस देशके लिए मोजेसे गदी चीज शायद दूसरी नही। गर्मीमे मोजे दो घटे पहननेके बाद दुर्गंध देने लगते है। पैर नगे रखे जाते है तो अधिक अच्छे रहते है और उनको ढकनेमे कोई सुन्दरता नही है। जिन अगोको देखनेसे अपनी वृत्तियाँ मलिन हो सकती है उनके सिवा बाकी अगोको ढकनेमे मर्यादाकी रक्षाका कोई सवाल नही उठता। इस देशमे बूट पहनना भी शरीरपर अत्याचार ही है। चप्पल अथवा स्लीपरसे हमारे पैरोकी कीचडसे पूरी रक्षा हो जाती है। इसीलिए हमारे देशमे तो जूतेका नाम पदत्राण है।

३ पारसियोमे शरावखोरीकी लत कहाँसे आ गई, यह मै नही जानता। महात्मा जरतुश्तने शराब पीनेकी अनुमति दी होगी, ऐसा मै नही कह सकता। किन्तु जो बात बुद्धि-विरुद्ध हो वह शास्त्रके अनुकूल मानी जाती हो तो भी शास्त्रसम्मत नही हो सकती। जो अनीति सिखाये वह शास्त्रसम्मत नही हो सकता। उत्तरी ध्रुवमे शराबकी जरूरत हो सकती है, किन्तु समशीतोष्ण कटिबन्धमे शराब पीना महापाप ही है। इग्लैडमे मै एक पारसी समारोहमे गया था। उसमे पहले सब बाते मर्यादित रूपमे चली गाना-बजाना हुआ, फिर शराबके प्याले चले। मर्यादा टूटी, मुझे वहाँ बैठनेमे शर्म मालूम हुई और मै वहाँसे भाग आया। मैने इग्लैडमे हिन्दुओ और मुसलमानोके समारोहोमे ऐसा ही देखा है। जहाजोमे मुसाफिर शराब पीकर मस्त हो जाते है और मर्यादासे बाहर व्यवहार करते है। इस बातको जहाजमे यात्रा करनेवाला कौन मुसाफिर नही जानता? सीमाके भीतर रहकर शराब पीनेवाले 'मॉडरेट ड्रिंकर' मैने काफी देखे है। वे नालियोमे नही लोटते, यह सच है, परन्तु —?

इसलिए पारसी भाई-बहनोको शराब बिलकुल छोड देनेकी प्रतिज्ञा अवश्य करनी चाहिए।

४ मै तो मासाहार करता नही। अज्ञानावस्थामे किया तो उसके लिए पछताता हूँ। मैने उसका बहुत प्रायश्चित्त किया है। पति और पत्नी — दोनोने मरणासन्न हालतमें और डॉक्टरके कहनेपर भी मास खानेसे इनकार किया है। मास भक्षण करके मै एक पल भी जीवित नही रहना चाहता। मैने मुसलमानोसे बातचीत की है। उससे मुझे पता लगा है कि उनमें भी परहेजगार फकीर होते है जो अपने क्रोधपर और अपनी इन्द्रियोपर काबू पानेके लिए मास खाना छोड देते है। किन्तु मै पारसी भाइयो और बहनोसे निरामिष-भोजी होनेके लिए नही कहता। उनके भोजनमे मास और मुर्गेकी बहुलता रहती है ऐसा मैने उनके निकट सम्पर्कसे जाना है। मै अपने पारसी भाइयो और बहनोसे अपनी स्वादेन्द्रियोपर अकुश रखनेकी दृष्टिसे यह निवेदन अवश्य करता हूँ कि वे मास-मुर्गेका अति सेवन न करे। करोडो मुसलमान नित्य मास नही खाते। इससे उनको कोई हानि नही होती, ऐसी मेरी मान्यता है।

मैने पारसियोंने विनोदमे "पा [illegible]"[1] कहा है। मै अस्सी हजार लोगोकी इस जातिसे आत्मज्ञान और आत्मशक्तिकी बहुत अधिक आशा रखता हूँ। उनकी संख्या ज्यादा नहीं है इसलिए उनमे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन जल्दी हो सकते है। इस परिवर्तनको

१ [illegible] "पाव [illegible]", एक चौथाई [illegible]।

करके आप पारसी भारतके पूरे आधुनिक ऋषि बने, यही मेरी इच्छा है। महात्मा जरतुश्तका जीवन नीतिसे भरा हुआ है। मैं चाहता हूँ कि पारसियोमे नीतिका पूरा विकास हो। स्वराज्यमें नीतिवान, निर्भय, सीधे-सादे, वीर, सच्चे और दृढ चरित्र स्त्री-पुरुषोकी जरूरत है।

अब मेरा खयाल है कि हम दानशीलताका नया अर्थ ग्रहण करनेके लिए तैयार हो गये हैं। दानशीलताका अर्थ केवल धन देना ही नही है बल्कि दानशीलताका अर्थ है तन, मन, धन देना। पारसी भाई और बहन अपनी इन समस्त शक्तियोको भारतके हितार्थ अर्पण करे, मैं उनसे यह माँग पारसी नववर्ष-दिवस — पटेटीकी बधाई देते हुए करता हूँ। उससे पारसियोकी दानशीलता और भी चमकेगी और पारसी सदा परोपकारी माने जायेगे। मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि पारसी भाई ऐसे बने।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५–९–१९२१

३६. भाषण: कलकत्ताके खिलाफत स्वयसेवकोकी सभामें

१० सितम्बर, १९२१

शनिवारकी शामको खिलाफत समिति और बडा बाजार काग्रेस कमेटीके लगभग ५०० स्वयसेवकोकी सभा श्री चित्तरजन दासके निवासस्थानपर हुई। श्री गाधी, मौलाना मुहम्मद अली और पण्डित मोतीलाल नेहरूने उनका निरीक्षण किया। स्वयसेवकोके समक्ष भाषण देते हुए श्री गाधीने कहा कि मैं आपसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। मेरा विश्वास है कि स्वयसेवकोकी मददसे मैं स्वराज्य प्राप्त कर सकूँगा। मैं जानता हूँ कि स्वयसेवकोने स्वराज्य और खिलाफत तथा पजाबकी खातिर अपने प्राण न्यौछावर करनेकी तैयारीके साथ अपने नाम दर्ज कराये हैं। उन्होने स्वयसेवकोसे कहा कि आप लोग अनुशासन बनाये रहे। . मुझसे बाहरी लोगोने और मारवाडियोने भी शिकायत की है कि स्वयसेवक लोगोका व्यवहार कभी-कभी खराब रहा है। स्वयसेवकोके ऐसे आचरणका, यदि उन्होने वास्तवमें ऐसा किया है तो, मुझे बहुत खेद है।

धरनेका उल्लेख करते हुए श्री गाधीने कहा कि स्वयसेवक लोग धरना देना जारी रखेंगे परन्तु उसमें दया, सौजन्य, और मैत्रीभाव होना चाहिए। वे कोई भी ऐसा काम न करें जो किसीकी भी भावनाको चोट पहुँचाये क्योकि अन्यथा वे हमारे उद्देश्यको बहुत बडी क्षति पहुँचायेंगे और उसका भारी अहित करेगे।

अली भाइयोकी सम्भावित गिरफ्तारीके बारेमें बोलते हुए उन्होने कहा कि मैं जानता हूँ कि मेरे ये दोनो भाई शीघ्र ही गिरफ्तार होनेवाले है, और वे जेल भेज दिये जायेंगे। मुझे आशा है कि यदि ऐसी नौबत आ ही जाये तो उन्हे उत्तेजित नहीं होना चाहिए और अपना क्रोध काबूमें रखना चाहिए ।

[अग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ११–९–१९२१

३७. भेंट : संवाददाताओंको

[११ सितम्बर, १९२१ या उसके पूर्व]

डाक्टर रवीन्द्रनाथ ठाकुर और श्री गाधीकी भेंटके[1] प्रकाशित विवरणोके वारेमें एक प्रेस सवाददाता द्वारा यह पूछे जानेपर कि आपमें और उनमें क्या वार्तालाप हुआ था गाधीजीने कोई भी वक्तव्य देनेसे यह कहकर इनकार कर दिया कि यद्यपि हमारी भेंटमें कुछ भी गोपनीय नहीं था फिर भी दो सार्वजनिक व्यक्तियोकी आपसी भेंटमें क्या-क्या बातें हुई यह जाननेका जनसाधारणको क्या हक है? उन्होने इसलिए भी कोई वक्तव्य देनेसे इनकार किया कि उनके कथनके अनुसार सभी मनगढन्त विवरणोमें[2] मुझे और मेरे उद्देश्यको बदनाम करनेकी कोशिश की गई है, किन्तु मै जानता हूँ कि मेरा उद्देश्य और मै, दोनो ही कविके हाथोमें सुरक्षित है, अखवारोंमें चाहे जो-कुछ कहा गया हो।

[अंग्रेजीसे]

अमृतवाजार पत्रिका, ११-९-१९२१

३८. असमके अनुभव — २

ब्रह्मपुत्रपर

जहाज नदीपर चल रहा है। मेरा तीसरे दर्जेमे मुसाफिरी करना तो कभीका बन्द हो चुका है। हम सब पहले दर्जेके डेकपर बैठे हुए हैं। जब कभी तीसरे दर्जेकी याद आती है, पहले या दूसरे दर्जेमे अपनी यात्रापर शर्म मालूम होती है। किन्तु यह भी ठीक है कि ऐसे लम्बे दौरेमे जहाँ विश्रामकी गुजाइश नही है, मेरा स्वास्थ्य तीसरे दर्जेकी यात्रा बर्दाश्त नही कर सकता। तथापि, मै यह मानता हूँ कि हम लोगोको तीसरे दर्जेमे सफर करने लायक मजबूत होना चाहिए और हमारे शरीरको इस सबका खासा अभ्यास होना चाहिए। जबतक हम तीसरे दर्जेसे डरकर दूर रहेगे तबतक उसकी हालत नही सुधर सकती, वहाँकी मुसीबतें जैसीकी-तैसी बनी रहेगी। सैकडो कार्यकर्त्ता अगर पहले-दूसरे दर्जेमे ही मुसाफिरी करने लग जाये तो जनता बेचारीका सारा पैसा उनके सफर खर्चमे ही लग जाये और हमारी स्वराज्यकी नैया तिलभर भी आगे न बढ सके। रैयतका पैसा खर्च करते समय हमे हर बार विचार करना चाहिए। मै यह इसलिए कह रहा हूँ कि इस सम्बन्धमे एक धनी आदमीकी कही गई बात मै भूल नही पाता। वे स्वय एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ता हैं। मेरे खादीकी बात

१. ६ सितम्बरको कलकत्तामें।

२. १०-९-१९२१ के स्टेट्समैनमें।

छेडते ही उन्होंने मुझसे कहा कि "हम लोगोका हाल आपको मालूम नही होता। क्योकि आपको तो जब चाहे तभी बैठनेको मोटर तैयार। एक प्याला माँगते ही दस प्याले बकरीका दूध हाजिर। खादी भी लोग आपको घर आ-आ कर दे जाते है। लेकिन मुझ-जैसे पैसेवाले आदमीको भी जब हर वक्त मोटरका और होटलोका किराया देना पडता है और अपनी जरूरत-भरकी खादीके दाम चुकाने पडते है, तब तो जनताकी सेवा हमें अखरने लगती है और महँगी मालूम पडती है।" ये महाशय अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके सदस्य है और देशकार्यमे पैसा खर्चते हुए हिचकते भी नही, लेकिन मै यह समझ सकता हूँ कि वे जब बम्बई जाते होगे, बीस रुपये रोजसे कम खर्च न आता होगा। मुझे उनकी दलीलमे काफी सार मालूम होता है। लेकिन इस समय तो मै निरुपाय हूँ। मै कमजोर हो गया हूँ और यह भी जानता हूँ कि इससे मेरी सेवा करनेकी शक्ति घट गई है। इसीलिए अब सब लोगोको पैदल सफर करनेकी सलाह देनेकी हिम्मत नही पडती। चूंकि मै खुद कमजोर हूँ, इस कारण कई बार दूसरोको भी कमजोर समझकर उनपर नाहक ही ममता कर बैठता हूँ। वरना जनताकी सेवा करनेवालोको ज्यादा खर्च करनेकी जरूरत ही नही पडती। तीसरे दर्जेका किराया इतना नही होता कि भारी जान पडे, अलबत्ता जहाँ दुकान करे वहाँ वाहन आदि पर खर्च न किया जाये। भोजन और पोशाक भी सादे ही रहे। किन्तु हमने खुद अपनेको इतना आरामतलब बना लिया है कि लाखो आदमी जो काम रोज करते है, उसके लिए हम अपनेको असमर्थ मानते है।

मुझे करना तो था नदीका वर्णन, और मै लिख गया वह सब जो भीतर खटकता रहता है। खैर! नदी समुद्रकी तरह विशाल जान पडती है। बहुत दूरीपर दोनो तरफके किनारे दिखाई देते है। नदीका पाट लगभग दो मील या इससे भी कुछ अधिक होगा। १५ घटेका सफर है। नदीकी भव्य शान्ति मनोहर प्रतीत होती है। बादलोमे छिपा हुआ चन्द्रमा, पानीपर अपनी हल्की रोशनी बखेरे है। स्टीमर बढ रहा है और उसके पखोमे पानी काटनेकी मन्द ध्वनि कर्णगोचर हो रही है। इसे छोडकर सर्वत्र शान्ति छाई हुई है। पर फिर भी मेरे मनको चैन कहाँ? क्योकि यह स्टीमर और यह महानद मेरे नही है। जिस सत्ताके अत्याचारने मेरी आँखे खोल दी है, जिसकी करतूतोने देशको घायल, निस्तेज और भिखारी बना दिया है, उसी सत्ताकी मेहरबानीसे मै नदी-पर इस जहाजमे बैठा हुआ यात्रा कर रहा हूँ — इस सारी शान्तिके बीच यह विचार मुझे विकल बनाये हुए है। तथापि मै सत्ताको दोष नही दे सकता। तीस करोड हिन्दुस्तानी यदि अपने कर्त्तव्यको न समझे तो इसके लिए मै सत्ताको दोषी कैसे कहूँ? सूदखोर मुझसे मनमाना वसूल करता है, इसके लिए उसे दोष दूं या खुद अपनेको — जो उसे उतना सूद देता है। व्यापारीका तो धन्धा ही व्यापार करना है। मै उससे लेन-देनका व्यवहार रखूं या न रखूं यह तो मेरी मर्जीकी बात है। मै उससे सम्बन्ध ही क्यो जोड़ूं? अगर मै न चाहूँ तो विदेशी कपडा मेरे गले कौन मढ सकता है? इसलिए यह समझकर कि व्यापारीकी पीठपर जिस सत्ताका हाथ है, उसे दोष देना मेरी कमजोरी है, मैं शान्त हो जाता हूँ, और इस खयालसे कि मुझे जनसाधारणमे ही काम करना है, अपने कर्त्तव्यपालनमें लग जाता हूँ।

असमका हाथी

असम जिस प्रकार अपनी बुनाईकी कलाके लिए मशहूर है उसी तरह हाथियोंके लिए भी। भोजपत्रपर लिखी हुई, दो सौ वर्ष पुरानी हस्ति-विद्याकी एक पुस्तक भी मुझे दिखाई गई थी। उसमें मजमूनके अलावा हाथी वगैराके कई खूबसूरत चित्र भी थे। उनके रंग अनूठे थे। वैसे सुहावने रंग क्वचित् ही दिखाई देते हैं। चित्रोंमें तारतम्यका खयाल भी इतना रखा गया है कि देखनेवालेके मनमें असमकी प्राचीन कलाके प्रति अभिमान उत्पन्न हुए बिना नहीं रह सकता।

एक हाथीकी कीमत ६,००० रुपयेतक आंकी जाती है। और वह बोझ ढोने और शिकारके अवसरोंपर काममें लाया जाता है। एक अनुभवी आदमीने मुझसे कहा कि जंगली हाथीको पकड़ते समय उसके साथ बड़ी क्रूरता बरती जाती है। हाथी संगीतप्रिय होता है, इस कारण कभी-कभी महावत गाना सुनाकर उसे अपना बना लेनेका प्रयत्न करता है। हाथीको हमारी भाषाकी अच्छी परख है। यहाँतक कि वह गुस्से या प्रेमके शब्दोंको भी पहचान लेता है। उसने मुझसे यह भी कहा कि 'शाबाश' शब्दसे असमका हरएक हाथी परिचित है। हाथीदांत तो असममें बहुतायतसे होना स्वाभाविक ही है। मैं यह जानकर बहुत खुश हुआ कि असममें हाथीदांतके लिए हाथी नहीं मारे जाते। यही नहीं, इसके लिए हाथियोंको मारनेकी मनाही भी है।

असमका रेशम

असममें दो तरहका रेशम होता है। और दोनों ही तरहका रेशम कीड़ोंसे पैदा होता है। एकका नाम है——अंडीकेरी और दूसरेका नाम मूंगा। अंडीका रेशम तैयार करनेमें कीड़ेका नाश नहीं किया जाता। उसका कोया रुईकी तरह काता जाता है। मूंगेका रेशम मूंगा खुद ही कातता है। जब कताई खतम हो जाती है तब मूंगेको धूपमें रखकर मार डालते हैं। इसके बाद कोयेको पानीमें उबालकर रेशम चरखीपर लपेट लिया जाता है। यह काम हमारे सामने करके भी दिखाया गया। दोनों तरहका रेशम असममें बहुतायतसे तैयार किया जाता है। इस उद्योगके चलते हुए भी वहाँ विदेशी रेशमका चलन बहुत बढ़ गया है, और बहुतसे जुलाहे स्त्री-पुरुष दोनों, तानेमें सिर्फ विदेशी रेशमका ही इस्तेमाल करने लगे हैं।

रुईकी क्रिया

रुईकी क्रिया भी मैंने देखी। मैं समझता हूँ कि आन्ध्रकी तरह महीन कपड़ा असममें भी तैयार होने लग जायेगा। हाल ही में तैयार किया हुआ ऐसा एक कपड़ा मुझे दिया गया है। दो सौ वर्ष पुरानी सूतकी महीन साड़ियाँ भी मुझे दिखाई गईं। अब कितनी ही जगह मिस्रकी कपासके पौधे भी लगाये जा रहे हैं। और मैंने सीधे उसकी बौंड़ीसे ही सूत कतते देखा। दूसरी तरहकी रुई आन्ध्रकी प्रणालीसे काती जाती है। हरएक बीजको पहले तो मछलीके दाँतसे सँवारते हैं, ताकि उसके सब रेशे अलग-अलग हो जायें। दाँतोंमें जो रुई रह जाती है उसे वैसी ही कातकर उस सूतसे खादी बुनते हैं। इसके बाद बिनौलोंमें चिपकी हुई रुईको अलग करके धुना जाता है। हर बौंड़ीपर यही किया जाता है। इस तरहकी रुईको कातकर महीनसे-महीन

सूत तैयार किया जाता है। अगर असमकी स्त्रियोंमें उत्साह पैदा हो तो उनसे मिल सकनेवाली सहायताका पारावार ही न रहे। स्वदेशीके पालनमें मदद करनेकी असमकी शक्ति मुझे तो पंजाबसे भी ज्यादा मालूम होती है। असमकी औरतें पैसेकी गरजसे नहीं, बल्कि देशप्रेमके कारण ही कातेंगी और बुनेंगी। यहां भी स्त्रियां अपनी रुई स्वयं ही तैयार कर लेती हैं।

शोणितपुर

अब हम तेजपुर आ पहुंचे हैं। इसका पुराना नाम शोणितपुर है। कहा जाता है कि किसी अंग्रेज हाकिमको 'शोणितपुर' शब्दका उच्चारण कठिन मालूम हुआ। उसने जब शोणितका असमिया भाषामें अर्थ पूछा तो उसे मालूम हुआ कि असमिया लोग शोणितको 'तेज' कहते हैं। इसलिए उसने शोणितपुरका नाम तेजपुर रख दिया। कहा जाता है कि तेजपुर पहले बाणासुरकी राजधानी था, इसीसे पुराण-लेखकोंने उसे शोणितपुर लिखा है। आख्यायिका है कि उषाके लिए चित्रलेखा, अनिरुद्धको द्वारिकासे यहां उठाकर लाई थी। कहते हैं, अर्जुन ठेठ मणिपुरतक गया था। ब्रह्मपुत्रके पूर्वी किनारेपर पहला शहर पाण्डु है। पाण्डव लोग अज्ञातवासके समय वहांतक आये थे। पाण्डुसे पांच मीलके फासलेपर ब्रह्मपुत्रके किनारे ही गोहट्टी है जहांसे हम तेजपुर पहुंचे हैं। गोहट्टीका भी प्राचीन नाम है। कहते हैं, हरिहरयुद्ध तेजपुरके पास ही हुआ था और श्रद्धालु लोग, जहां रुद्रने खड़े होकर युद्ध किया था, वहां उनकी पादुका भी बतलाते हैं। इस तरह मैं जहां जाता हूं, वहीं इस बातके प्रमाण मिलते हैं कि पहले हिन्दुस्तान एक था।

बागान-मालिक-राज्य

तेजपुरकी आबादी ६ हजार होगी। लेकिन वहां नगरपालिका है, रेलवे और बिजलीकी रोशनी है और पानीके नल भी हैं। यह सब क्यों है? इसका उत्तर फौरन ही दिया जा सकता है। तेजपुरके नजदीक ही चायके बड़े-बड़े बागान हैं। बस इसी चायको ढोनेके लिए रेलें हैं और इस बन्दरगाहके रास्तेसे चाय भेजी जाती है। लोग यही मानते हैं कि असममें बागान-मालिकोंका राज्य है और अंग्रेजी राज्य तो है ही लेकिन कर्त्ता-धर्त्ता सब बागान-मालिक ही हैं। चांदपुरमें गरीब मजदूरोंपर जो ज्यादती हुई थी वह मि० एन्ड्र्यूजका कहना है कि इन बागान-मालिकोंके ही लिए हुई थी।

ब्रह्मपुत्रका पानी गंगाकी तरह आरोग्यवर्धक नहीं माना जाता। इस कारण असममें कितनी ही जगह दरवाजेके सामनेसे नदीके बहनेपर भी लोग नलका पानी ही काममें लाते हैं। इसे कुछ खारोंसे नियारकर काममें लाया जाता है। खास तेजपुरमें ९० फुट ऊंचा एक हौज बनाया गया है, उसमें पानी नियारा जाता है और फिर वह नलके द्वारा लोगोंतक पहुंचाया जाता है।

पूर्व बंगालके अनुभव

अवर्णनीय दृश्य

डिब्रूगढ़ छोड़नेके बाद रेलगाड़ी ऐसे कितने ही प्रदेशोंसे होकर गुजरी, जिनकी शोभा अभीतक आंखोंके आगे बनी है। लमडिंग जंक्शनको असमकी हद कह सकते

हैं। इसके बाद रेल धीरे-धीरे ऊपरको चढ़ती है और एकके बाद दूसरे पहाड़पर लगातार चढ़ती ही जाती है। पूनाके रास्तेमें पड़नेवाले घाट, कह सकते हैं इनके आगे कोई चीज नहीं। हवा एकदम बदल जाती है। बीमार आदमी भी तरोताजा हो जाता है। जहाँ देखिए वहीं हरीभरी पहाड़ियाँ। इस हिस्सेमें बादलोंका तो अन्त ही नहीं है। कई बार तो बादल टेकड़ियोंके नीचे ही रह जाते हैं। कभी-कभी भापके गोले ऊपर जाकर बादलोंमें मिलते हुए साफ तौरपर नजर आते हैं। पहाड़ोंमें से निकलनेवाली बड़ी-बड़ी नदियाँ तो मानो रेलके साथ शर्त बदकर दौड़ती हुई नजर आती हैं। ऐसा दृश्य मैंने तो दुनियामें और कहीं नहीं देखा। आफ्रिका, इंग्लैंड वगैरहके भिन्न-भिन्न दृश्य मैंने काफी देखे हैं, परन्तु इसके मुकाबलेमें टिकने लायक कोई भी दृश्य मुझे नहीं दिखा।

हमें सिलचर जाना था। सिल्चरमें पानी खूब बरसता है। दो सौ इंचमें तो कोई शक ही नहीं है। इससे वहाँ बेहद नमी है। जहाँ देखिए वहीं तालाब भरे हुए हैं। सिलचर पहाड़की तलहटीमें बसा है। इससे वहाँ हम गर्मीसे परेशान हो रहे थे। परन्तु लोगोंके दिलमें इतना प्रेम उमड़ रहा था कि बरसते पानीमें भी खुले मैदानमें हजारों आदमी जमा हो गये थे। अभिनन्दनपत्र तो हर जगह खादीके ही वस्त्रपर दिया जाता है। आडम्बर-भरे अभिनन्दनपत्रोंका तो जमाना ही अब चला गया। मुझे अन्देशा था कि इस तरफके लोग अंग्रेजी भाषाकी पुकार मचायेंगे। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। लोग हिन्दुस्तानी भाषाके बहुत आदी हो गये हैं — इतने कि बंगालमें तो अब अंग्रेजी बोलनेवालेको ही शरमाना पड़ता है। सिलचरमें हम बाबू कामिनीकुमार चन्दाके यहाँ ठहरे थे। असहयोग आन्दोलनके पहले आप शाही परिषद्के मेम्बर थे, और वकालत करते थे। अब आपने दोनों काम छोड़ दिये हैं और असहयोगका काम कर रहे हैं। उनकी धर्मपत्नी, उनकी लड़कियाँ, सब चरखा कातती हैं। यहाँके चरखोंकी बनावट काम करनेकी दृष्टिसे सुविधाजनक नहीं है। चरखे बहुत छोटे और कमजोर, पटिया बहुत ही छोटी। उसपर सूत भी कम निकलता है। तो भी राष्ट्रीय पाठशाला इत्यादि कई जगहोंपर चरखेने अपना आसन तो बिछा ही लिया है।

एक दिन सिलचर रहकर हम लोग सिलहट गये। यहाँ मुसलमानोंकी आबादी कोई ५५ प्रतिशत है। इस तरफके मुसलमानोंमें दूसरी जगहकी बनिस्बत जागृति कम है। इससे, मुसलमानोंकी इतनी ज्यादा तादाद होते हुए भी, खिलाफतके स्मर्नाके चन्देमें सिर्फ २१६ रुपये जमा हुए। सिलहटमें एक मुसलमान वकील हैं — मौलवी मुहम्मद अब्दुल्ला। सारे कामका भार उन्हींपर है। उनके प्रयत्नसे वहाँ एक बुनाईकी पाठशाला स्थापित हुई है। उसीके सिलसिलेमें बढ़ईगिरीका काम भी होता है। वहाँ चरखे और करघे बनाये जाते हैं। ये सब काम असहयोग आन्दोलनके बाद ही हुए हैं। सिलहटमें सभा ईदगाहमें की गई थी। मौलाना मुहम्मद अली कहते थे कि ऐसी खूबसूरत ईदगाह तो हमने कहीं नहीं देखी। ईदगाह जिस टेकड़ीपर है वह सिलहटकी सुन्दरसे-सुन्दर टेकड़ी है। उसपर कोई पाँच हजार आदमी बैठ सकते हैं। चारों ओर हरियाली बिछी हुई है। नीचे खुला मैदान और उसमें तालाब है। पूरी पहाड़ीपर, नीचे-ऊपर सब दूर लोग खचाखच भरे थे। सिलहटकी आबादी २० हजार होगी। पर उस

सभामे तो २० हजारसे भी ज्यादा लोग रहे होगे क्योंकि वहां तमाम जिलेके लोग उमड पडे थे।

चाटगांग

सिलहटसे हम चटगांव पहुंचे। इसका वगला उच्चारण ऊपर लिखे अनुसार है। यह वहुत वडा और सुहावना वन्दरगाह है। यह चार गांवोंसे मिलकर वना है, इसीसे वह चटगांव कहलाता है। वहुतसे अरवी लोग वहां रहते हैं और एक वडे पीर भी वहां हो गये हैं, इससे वह इस्लामावाद भी कहा जाता है। कितने ही वौद्ध भी वहां आकर वस गये थे, इससे वौद्धोंने भी उसका एक अलग नाम रखा था। चटगांव के पास ही विशाल नदी वहती है और उससे कुछ ही दूरी पर वगालकी खाडी है। यहां अनेक पहाडियां हैं। इससे यहांका प्राकृतिक सौन्दर्य देखते ही वनता है। यहां जो वडी-वडी पहाडियां हैं उनपर अदालतो और रेलवेके दफ्तर हैं। यहांके नामी वकील श्रीयुत एन० गुप्तने वडा काम किया है। अपनी भारी वकालत छोड दी है। अब आप स्वयसेवकोंके कप्तान हैं। वगालके सैकडो स्वयसेवक खादीके कुरते और स्वराज्यकी टोपी पहनते हैं। वम्वईकी तरफके स्वयसेवक धोतीको काममें असुविधाजनक मानते हैं। यह वात यहांके स्वयसेवकोमें नही पाई गई। पूर्व वगालके लाखो मुसलमान भी धोतियां ही पहनते हैं। हिन्दू लोग ज्यादातर नगे सिर रहते हैं। हां, मुसलमान भाई अलवत्ता टोपी लगाते हैं। दोनोंमे इतना ही भेद दिखाई देता है। परन्तु खादीका प्रचार होनेके वादसे तो कितने ही वगाली हिन्दू-स्वयसेवक भी टोपी लगाने लगे हैं।

अलीभाई गिरफ्तार हो तो?

सिलहट पहुंचनेके वाद मैंने अलीभाइयोकी गिरफ्तारीके वारेमें तार पढा। तभीसे मैंने अपने भाषणोंमे उनके भी विषयमे कुछ कहना शुरू किया। मुझे पूर्ण विश्वास है है, कि ये दोनो भाई विलकुल निर्दोष हैं। वल्कि जवतक वे शान्तिमय असहयोगमे शामिल हैं तवतक वे कभी तन, मन और वचनसे न अशान्ति चाहेंगे, और न करेंगे, वरन् वे दूसरोको वैसा करनेसे रोकेंगे। इस प्रतिज्ञापर वे अटल हैं। और वे वहादुर तो हैं ही। डरके मारे वे अशान्तिका प्रचार न करते हो या स्वय शान्ति भग न करते हो, सो वात नही है। वल्कि वे तो वुद्धिपूर्वक अपने गुस्से और जोशको रोके हुए हैं। ऐसे वेगुनाह लोगोके जेल भेजे जानेपर लोगोके दिलको चोट पहुंच सकती है। पर ऐसे समय लोग अगर सीधी-सच्ची राह पकड ले तो नैया पार हो जाये, और अगर वदहवास होकर उलटे रास्ते जाने लगे तो वरवादी ही समझिए। अतएव अगर अलीभाई जेल भेजे गये तो उस दशामें लोगोके लिए यही एक मार्ग है कि वे शान्तिका पूर्ण अवलम्वन करे और स्वदेशीके पालनमे अवतक जो शिथिलता उन्होने दिखलाई है उसे दूर करके तीव्रता दिखाये तथा अपने पास जो-कुछ विदेशी कपडा रख छोडा हो उसे 'स्वाहा' कर दे। जिन लोगोने अवतक चरखा कातनेमे आलस्य किया हो वे आलस्य छोड दे और अपना कुछ समय सूत कातनेमे दे। जो लोग अवतक सरकारी मदरसोमें अपने लडकोको भेजते रहे हैं वे, इस पापसे छुटकारा

पा लें। जिन लोगोकी हिम्मत आजतक वकालत छोडनेकी नही हुई, वे वकालतको ठोकर मार दें। जब सभी लोग ऐसा करेंगे तभी और सिर्फ तभी, खिलाफतका काम बनेगा और स्वराज्य मिलेगा, एव हम अपने ही हाथोंसे तुरन्त जेलके दरवाजे खोलकर अपने बेगुनाह भाइयोको और उन लोगोको जो सरकारके कोपके शिकार होकर जेलमें बन्द हैं, बाहर ले आ सकेंगे। यह बात मैंने श्रोताओंको खूब अच्छी तरह समझाई।

स्वयसेवक

चटगाँवमे मैंने स्वयसेवकोंके कामको बढता हुआ पाया। उनमें नियमोका पालन करनेकी शक्ति अधिक देखी। यहाँ बडा भारी जुलूस निकाला गया था। तो भी मोटरके पीछे भीड नही हुई। हजारो लोग शान्तिके साथ कतार-बन्द खडे थे और मोटर बिना बाधाके चलती रही। जयघोष इत्यादिकी बन्दी कर दी गई थी। इससे वह दृश्य मुझे बडा भव्य लगा।

हडताली रेल-मजदूर

हडताली रेल-मजदूरोके विशाल समुदायसे मेरी भेट यहीं हुई। उनके साथ मैंने काफी समय बिताया। उनके समक्ष किया हुआ भाषण[1] 'नवजीवन' मे प्रकाशित होगा इसलिए यहाँ उसके बारेमे कुछ नही लिखता।

बारीसाल

चटगाँवसे रवाना होकर हम बारीसाल गये। बारीसाल जाते हुए रास्तेमे चाँदपुर पडता है। चाँदपुरमे उस स्थानको देखा जहाँ गुरखाओने बेचारे बेकस मजदूरोपर ज्यादती की थी। देखकर हृदय रो उठा। अपनी गुलामीकी याद आई। ये तो गरीब मजदूर थे। उनके लिए जो हडतालें हुईं उनसे हिन्दुस्तान कुछ चौंका। परन्तु अगर बडे आदमियोको बन्दूकके कुदे मार-मारकर आधी रातको घरसे बाहर निकाला होता तो आज सारे हिन्दुस्तानमे हाहाकार मच जाता। स्वराज्यके तो मानी यह है कि राजा और रक सबके साथ एक-सा इन्साफ हो। क्या हमारे स्वराज्यमे ऐसा होगा? न हो तो वह स्वराज्य हरगिज नही हो सकता।

बारीसाल, प्रख्यात बुजुर्ग, बाबू अश्विनीकुमार दत्तका शहर है। इस प्रान्तमे धानकी फसल बहुत अधिक होती है। श्रीयुत अश्विनीकुमार दत्तने चालीस वर्ष पहले ५० हजार रुपया लगाकर एक बडी पाठशाला स्थापित की थी। वह आज राष्ट्रीय पाठशाला है। उसके मुख्य अध्यापक हैं श्रीयुत जगदीश बाबू। आप बाल ब्रह्मचारी हैं। इस समय उनकी अवस्था ५० वर्षसे ज्यादा है। सब लोगोने मुझसे कहा कि वे बहुत ही सच्चरित्र और निरभिमानी विद्वान् पुरुष हैं।

बारीसालमे, कह सकते हैं कि, स्वदेशीका काम ठीक चल रहा है। पूर्वोक्त पाठशालाके विद्यार्थियोका काता हुआ सूत मुझे दिखाया गया था। वह बहुत ही महीन था। एक करघा-विभाग भी है। उसमे कोई ८० करघे चलते हैं। उनके पास इस

१. देखिए "भाषण: चटगाँवमें, रेल कर्मचारियोंके समक्ष", ३१-८-१९२१।

समय १५ हजार रुपयेसे ऊपर करघोपर तैयार हुआ माल है। इस करघा-गृहमें जितनी सफाई मैंने देखी उतनी सूरतमें श्रीयुत जोशीके कारखानेके सिवा और कही नही देखी। सूतका एक धागा या तिनकेका एक टुकडातक मैंने जमीनपर पडा हुआ नही देखा। काम भी साफ-सुथरा था। इसी वर्षमें उस बुनाईशालाका जन्म हुआ है।

वारीसालमें चटगांवकी भी अपेक्षा स्वयसेवकोमें अधिक नियमवद्धता पाई गई। सभा वडी भारी थी तो भी व्यवस्था भरपूर थी। हम लोगोंके जानेका रास्ता स्वयसेवकोंने खुला रख छोडा था। पांव न छूनेका अनुरोध तो लोगोसे पहले ही से कर दिया गया था। इससे हमे वहुत सुविधा हुई।

वारीसाल एक ऐसा शहर है जहां वग-भगके आन्दोलनोके दिनोमे हिन्दू और मुसलमान दोनों, आपसी कलहके रहते हुए भी, मिलजुल कर काम करते थे। सब लोग इसका श्रेय वावू अश्विनीकुमार दत्तको देते थे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ११–९–१९२१

३९. पतित वहनें

मुझे वारीसालमे अनेक उल्लेखनीय अनुभव हुए। उन सवका वर्णन करने योग्य समय तो नही है, फिर भी एक प्रसगका उल्लेख न करना असम्भव है। वह है वारीसालकी पतित वहनोका। इस दृश्यको मैं कभी नही भुला सकता। वारीसालकी कितनी ही पतित वहनोके नाम काग्रेसके सदस्योकी तरह दर्ज हैं। उन्होंने तिलक स्वराज्य कोषमे भी चन्दा दिया है। उनकी सख्या ३५० के करीव होगी। उन्होंने मुझे पत्र लिखा था कि हम आपसे मिलना चाहती हैं। वे काग्रेसमें कुछ अधिक कार्य करना चाहती थी। उनका कहना था कि वे क्यो न चुनावके लिए खडी हो और चुनकर आ जानेपर काग्रेसमे कोई पद क्यो न सँभालें? ज्यो ही मैं रातको सभासे आया, मैंने कोई सौ वहनोको एक कोनेमें खडे देखा। मुझे ध्यान आ गया और मैं वडे आदरके साथ उन्हे छतपर ले गया। एक दुभाषियेको साथ रखकर शेष पुरुषोको विदा कर दिया। मैंने उनसे कहा कि तुम दिल खोलकर अपनी वात मुझसे कहो। उनमें चार पांच दस वर्षकी लडकियां भी थी। कुछ प्रौढ और वाकीकी वीससे तीस वर्षके अन्दर होगी। उनके साथ मेरी जो वातचीत हुई, मैं उसका सार सवादके रूपमें यहां दे रहा हूँ

सवाल वहनो, तुम यहां आई यह वहुत अच्छा हुआ। मैं तो तुम्हे अपनी वहन और वेटियोके समान समझता हूँ। मैं तुम्हारे दु खमें हाथ वँटाना चाहता हूँ, लेकिन यदि तुम मुझसे कुछ छिपाकर रखोगी तो मैं तुम्हे सहायता देनेमें असमर्थ हो जाऊँगा।

जवाब आप जो कुछ पूछेंगे हम उसका उत्तर विलकुल सही-सही देंगी।

सवाल: तुममे से कुछकी उम्र ज्यादह मालूम होती है। क्या वे भी अबतक तुम्हारे इस पेशेमे अटकी हुई है?

जं०: नही, जिनकी उम्र ज्यादह हो गई है, वे भीख मांगकर अपना पेट भरती है।

स०: ऐसा करना शोभा देता है?

ज०: यह पेट सब-कुछ कराता है।

स०: ये लडकियां तो छोटी-छोटी है। क्या इनका भी यही हाल है?

ज०: हम तो यह आशा करके आपके पास आई है कि आप कोई रास्ता बतायेगे। हममे से कोई भी इस पेशेको नही करना चाहती।

स०. अच्छा, जो जवान है उनका क्या विचार है? इस पेशेकी भोग-सामग्री पर उनका मन ललचाता तो नही?

ज० जी हां, कुछ ऐसी अवश्य है।

स०: तुम लोगोके बाल-बच्चे भी होते होगे?

ज०. जी, किसी-किसीको होते है।

स० यहाँ तुम्हारी कुल सख्या कितनी होगी?

ज० तीन सौ पचास।

स० इसमे बाल-बच्चे कितने है?

ज०: कोई दस।

स०: लडके या लडकियां?

ज० कोई छ लडकी और बाकी लडके।

स० लडकोका क्या करती हो?

ज०: एक लडका बडा है। उसकी शादी हममे से ही एकके साथ कर दी गई है।

स० तुम अपनी लडकियां मुझे दोगी?

ज० अगर आप परवरिश करे तो हम दे देंगी।

स०: कितनी बहने इस पेशेको छोडना चाहती है?

ज०: हम सभी।

स० जो काम मै बताऊँ उसे करोगी?

ज० हम जानती है, आप क्या काम बतायेगे। हममे से कुछने तो सूत कातना शुरू भी कर दिया है।

स०: यह सुनकर तो मुझे बडा सन्तोष हुआ। पर जिन बहनोने कातना शुरू किया है उन्होंने अपना पेशा छोड दिया है या नही?

ज०. पेशा तो हमारे लिए आवश्यक बना हुआ है। केवल सूत कातकर हम अपना पेट कैसे पाल सकती है?

स० आजकल तुम कितना कमा लेती हो? तुम जवाब देनेमे शरमाती हो। तुम्हारी शर्मका मतलब मै समझ सकता हूँ। मै तुम्हारे साथ बात तो कर रहा

हूँ, पर मेरे दिलमें आग लग रही है। जो बात हो वह इस वक्त तो तुम मुझसे कह ही दो।

ज० बहुत-सी साठ रुपया महीना पैदा कर लेती हैं। २ रु० रोज पडते हैं।

स० यह तो मैं जानता हूँ कि इतनी आमदनी सूत कातकर तुम नही कर सकती। परन्तु तुम जो अनेक प्रकारके मनमोहक शृंगार विलास करती हो, इन्हे तो अब छोड ही देना होगा। मैं अकेले तुम्हीसे यह बात कहता हूँ, सो नही। मेरी धर्मपत्नीने भी शृंगारोका त्याग कर दिया है। मेरे यहाँ कम उम्रकी लडकियाँ हैं। उनके माँ-बाप उन्हे बढिया कपडे-गहने दे सकते हैं। तो भी वे खादीकी धोतियाँ पहनती हैं और गहना तो किसी तरहका भी नही पहनती। इस कारण तुमसे बनाव-शृंगार छोड देनेका इसरार करते हुए मुझे जरा भी दुःख नही होता।

ज० हम अपना जीवन सादा बनानेके लिए कोशिश करेंगी, कोई तुरन्त, कोई धीरे-धीरे। हममे से इस बहनने तो अपना सब कुछ रामकृष्ण मठको अर्पण कर दिया है और खुद अब भिक्षा माँगकर रहती है।

स० इस बहनकी मैं वन्दना करता हूँ। अच्छा किया जो उसने सर्वस्व त्याग दिया। परन्तु मैं देखता हूँ कि (उसकी ओर रुख करके) तुम्हारे हाथ पैर अच्छे हैं। अगर तुम सूत कातती हुई सादगीसे रहो तो और भी पुण्य हो। मैं तो यह चाहता हूँ कि हिन्दुस्तानका ऐसा एक भी भाई या बहन, जिसके हाथ-पैर दुरुस्त हो, भीख न माँगे—भीख माँगना एक शर्मकी बात समझे। ऐसा कहनेका समय अब आ गया है। चरखा कामधेनु है। यह हमारे हाथ लग गई है। तुम बहनोके महज सूत कातने-भरसे मुझे सन्तोष नही हो सकता। तुम्हे बुनना और धुनना भी सीखना चाहिए। तब तुम अपनी आजीविका पूरी तरह प्राप्त कर सकोगी।

ज० आप हमे रास्ता बताइये। हम जरूर उसके मुताबिक चलेंगी।

स० तुम कितनी बहने कल ही से अपना पेशा छोड देनेको तैयार हो?

इसके जवाबमे ११ बहने उसी वक्त खडी हो गईं। मैंने उनसे कहा कि खूब विचार कर लो। उन्होने कहा कि हम अपने निश्चयपर कायम रहेंगी। विचार तो पहले ही से हमने कर रखा था। अब उसके अनुसार काम किस तरह करे, इसी उलझनमे थी। इसलिए मैंने कहा

"अब तुम शादीका तो खयाल ही छोड दो। पर अगर तुम सचमुच शुद्ध हो जाओ तो भूतकालमे तुमने जो कुछ किया है ससार उसे भूल जायेगा। तुम गृहस्थाश्रमसे अलग होकर सन्यासिनी हो सकती हो और भारतवर्षकी सेवा कर सकती हो। अगर तुममे से बहुत सी बहने रोज बारह घटेतक, ईश्वरका भजन करती हुई काता-बुना करे तो प्राय सारे बारीसालको अकेली तुम ही कपडा दे सकती हो। तुम्हारी श्रेणीकी हिन्दुस्तानकी सारी बहने अगर यह गन्दा काम छोडकर कातनेका पुण्य कार्य करने लगे तो सहज ही भारतवर्षका उद्धार हो जाये। इसलिए मैं उम्मीद करता हूँ कि तुम ग्यारह बहने अपने निश्चयपर दृढ रहोगी। मैं तो मुसाफिर हूँ। पर

मैं यहाँके अगुओंसे जोर देकर सिफारिश कर जाऊँगा और मुझे यकीन है कि यहाँकी कांग्रेस कमेटी तुमको पूरी-पूरी मदद देगी। ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे।"

पाठको, आप चाहे भाई हों, चाहे बहन, मैं नहीं कह सकता कि इसे पढ़कर आपके मनपर और हृदयपर क्या असर होगा। मैंने आपके सामने पूरा वर्णन नहीं दिया है। यह तो अपनी शक्तिके अनुसार उसकी छाया-भर अंकित की है। चीजकी असलियत तो प्रत्यक्ष देखनेसे ही मालूम होती है। मैं तो स्त्रियोंके प्रति किये गये पुरुषोंके अपराधकी नाप-तौल करता हुआ मारे शर्मके मरा जा रहा था। ये बहनें जानबूझकर इस पापमें नहीं पड़ीं। पुरुषोंने उन्हें इसमें गिराया है। अपने विषय-भोगके लिए उसने स्त्री-जातिके ऊपर घोर अत्याचार किया है। जिनको इस बातपर दर्द होता हो उन्हें चाहिए कि वे प्रायश्चित्तके रूपमें इन पतित बहनोंको हाथ बढ़ाकर सहारा दें। जब जब इन बहनोंका चित्र मेरी आँखोंके सामने आता है तब-तब मुझे खयाल होता है कि अगर ये मेरी ही बहनें या लड़कियाँ होतीं तो—? और 'होतीं तो' क्यों, हैं ही। उनको उठाना मेरा काम है, प्रत्येक पुरुषका काम है। इसीसे मुझे चरखेका स्वर बड़ा प्यारा लगता है। यह स्त्रियोंकी सुरक्षा करनेवाला किला है। हिन्दुस्तानमें रहनेवाली ऐसी बहनोंको सहारा देनेवाली दूसरी कोई चीज मुझे नहीं दिखाई देती। परन्तु जबतक हरएक शहरके रहनेवाले साधु पुरुष यह काम उठा न लें तबतक यह हो नहीं सकता। बारीसालमें इन बहनोंतक पहुँचनेवाले साधुचरित शरत्कुमार घोष और उनके साथके एक असहयोगी वकील भूपति बाबू हैं। मैंने तो सिर्फ उनके तैयार किये हुए क्षेत्रसे लाभ उठा लिया।

बहनो, अब यह सब मालूम हो जानेके बाद तो तुमको भी इसपर विचार करना है। पतित बहनोंके हृदय-मन्दिरमें तो तुम्हीं प्रवेश कर सकती हो। जबतक ऐसी पतित बहनोंके उद्धारके लिए स्वयं तुम कमर न कसोगी तबतक मुझ जैसे लोगोंके प्रयत्न भी निष्फल होंगे।

स्वराज्यका अर्थ है—पतितोंका उद्धार।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ११–९–१९२१

४०. टिप्पणियाँ

बालकोंका आशीर्वाद

मुझे बहुतसी बहनें और नवयुवक तो पत्र लिखा करते हैं, परन्तु बालकोंके पत्र शायद ही कभी आते हैं। एक पत्र अनायास आ गया है, उसे यहाँ देता हूँ —

> आपकी आज्ञाके अनुसार मैं बहुत-कुछ करना चाहता हूँ। मैंने खादी पहनना शुरू कर दिया है। मैं और [1] पहले ही से असहयोगको मानते हैं। [2] मानता नहीं था, पर उसे अब इसमें पूरा विश्वास हो गया है। यदि हिन्दुस्तानके सारे बालकोंको आप असहयोगमें शामिल कर ले तो जरूर विजय प्राप्त करेंगे।

मैं जहाँ कहीं जाता हूँ, इस धर्म युद्धमें बहनोंके आशीर्वाद माँगता हूँ। क्योंकि मेरा विश्वास है कि उनका हृदय कोमल और पवित्र होता है। उनके दिलमें दाँव-पेंच और भेद-भाव नहीं रहता। वे तो इस संग्रामको पूरी तरह धर्म-युद्ध मानती हैं।

परन्तु बालकोंका हृदय तो बहनोंके हृदयसे भी अधिक निर्दोष होता है। बालकोंका आशीर्वाद किस तरह प्राप्त किया जाये? बिना अपने माँ-बापकी आज्ञाके भला वे एक कदम भी रख सकते हैं? इसलिए मैंने बालकोंके साथ सिवा विनोदके और कुछ नहीं किया। पर जब यह पूर्वाकित पत्र मिला तब तो मुझे बड़ा हर्ष हुआ। मैं यह जानता हूँ कि उसकी भाषा किसी बालककी लिखी हुई नहीं है। यह पत्र बहुत करके उनके मास्टर साहबकी प्रेरणाका फल होगा। परन्तु मेरी माँग और मेरी इच्छा यही रही है कि माँ-बाप अपने बालकोंको सामान्य धर्मकी शिक्षा दें, पापके साथ असहयोग करना और शान्तिके शस्त्रका प्रयोग करना सिखायें, एवं इस धर्म-कार्यमें उनका आशीर्वाद प्राप्त करें।

इस संग्राममें क्या स्त्रियाँ, क्या बच्चे, क्या लूले-लँगड़े, सब शामिल हो सकते हैं, और ऐसा ही होना भी चाहिए। जितनी ही अधिक संख्या उनकी होगी उतनी ही जल्दी विजय प्राप्त होगी। इनमें न कोई ऊँचा है, न कोई नीचा, न कोई छोटा, न कोई बड़ा। बड़ा तो वही है जिसका हृदय बड़ा है, और जिसका हृदय छोटा है वही छोटा और अपाहिज है। इसलिए बालकोंका आशीर्वाद मुझे बड़ा मधुर मालूम होता है। वाइसरायकी मेहरबानीसे चाहे स्वराज्य न मिले, परन्तु बालकोंके निर्मल हृदयसे निकले आशीर्वचनोंसे अवश्य मिल सकता है।

दिवाली किस तरह मनायें

एक सज्जन कहते हैं कि इस बारकी दिवाली किस तरह मनाई जाये, इसके विषयमें यदि आप पिछले सालकी तरह कुछ न लिखेंगे तो बहुतसे लोग गफलतमें रह जायेंगे और बेकाम बहुत-सा खर्च कर डालेंगे। उन्होंने मुझे यह अच्छी याद दिला

१ तथा २. साधन सूत्रमें नाम नहीं दिये गए हैं।

दी। दिवालीको अभी दो महीने हैं। इस बीच तो हम स्वराज्य प्राप्त करके सच्ची दिवाली मना सकते हैं। अतएव हम ऐसा करें कि इस मासमें विलायती कपडेका पूरा बहिष्कार कर डालें, और ऐसी स्थिति प्राप्त कर लें जिसमें अपना आवश्यक कपडा चरखेके द्वारा तैयार हो सके और फिर आतुरतासे स्वराज्य प्राप्त करके हम सच्ची दिवाली मना सकते हैं। दिवाली मनानेकी असली तैयारी तो यह है कि हम दिवालीके पहले ही स्वराज्य प्राप्त कर लें। इतने दिनोंमें हम स्वराज्य क्यों नही प्राप्त कर सकेंगे? इसमें अगर कोई कठिनाई है तो वह महज हमारी कमजोरीकी ही है।

लेकिन यदि दिवालीके पहले स्वराज्य न मिल सके तो फिर हमें क्या करना चाहिए? बस, मातम मनाना चाहिए। न बढिया खाने बनाये जायें, न दावतें दी जायें, न नाच-गान किया जाये। बस, संयमके साथ रहकर ईश्वर-प्रार्थना की जाये। भरतने जब चौदह वर्षतक तपस्या की थी तब कहीं दिवाली मनानेका समय आया था। अब क्या हम इससे उलटा चलें? कु-समयमें गाना किस कामका? बिना भूखके खाना किस कामका? स्वराज्यके बिना उत्सव किस बातका? दिवालीके दिन सादेसे-सादा भोजन करना चाहिए, प्रातःकाल उठकर भगवान्‌का भजन करना चाहिए और तमाम दिन चरखा कातना चाहिए। उस रोज खादीके सिवा दूसरा कोई कपडा बदनपर न डाला जाये। और कोई वस्त्रदान करना चाहे तो वह भी खादीका ही किया जाये। पटाखे तो हम छोड ही कैसे सकते हैं?

इस तरह दिवाली मनानेकी दो विधियाँ हैं — एक स्वराज्य प्राप्त करके दिवाली मनाई जाये, और दूसरी, स्वराज्य प्राप्त करनेकी तैयारी की जाये। अब इन दोमें से किस रीतिसे दिवाली मनायें, यह बात तो हमारी शक्तिके ऊपर अवलम्बित है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ११-९-१९२१

४१. भाषण : मिदनापुरमें[1]

१३ सितम्बर, १९२१

श्री गांधीने कहा :

मिदनापुरमें मेरा जिस तरहका स्वागत किया गया है उसे देखकर मैं यह नहीं मान सकता कि बंगालका शिक्षित वर्ग मुझसे विलग हो गया है या यह कि उसने स्वराज्य प्राप्तिके लिए मेरे आन्दोलनको पसन्द नहीं किया है।

इसके बाद उन्होंने मिदनापुरके निवासियोंको स्वदेशी अपनाने, अपने प्रचारकार्यमें अहिंसात्मक प्रकृति कायम रखने, और हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए प्रयत्न करनेको कहा। यदि ये तीनों बातें लोगोंके मन, वचन और कर्ममें सर्वोपरि रहें तो मेरा

१ एक स्थानीय कालेजके खेलके मैदानमें।

विश्वास है कि -- आगामी अक्तूबरतक यदि नहीं तो -- चालू वर्षके अन्ततक तो स्वराज्य प्राप्त हो ही जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १५-९-१९२१

४२. तार: डाक्टर टी० एस० एस० राजनको

[१४ सितम्बर, १९२१ के पूर्व]

आप एक छोटे दौरेकी[1] व्यवस्था करें लेकिन प्रतिदिन तीन घंटे मौन रहूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ११-१०-१९२१

४३. पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको

मद्रास जाते हुए
१४ सितम्बर, [१९२१]

मेरे प्यारे चार्ली,

महादेवने मुझे शान्तिनिकेतनका सजीव विवरण दिया है। उससे मुझे दु:ख हुआ है। वहाँ पारस्परिक मतभेद और कटुता है। उसने यह भी कहा है कि तुम भी उस आन्तरिक झगड़ेसे घबरा उठे हो। मैं जानता हूँ कि तुम अपनी शान्ति हासिल कर लोगे। इस संघर्षमें तुम मेरा साथ दो चाहे न दो, तुम मेरे लिए वैसे ही बने रहोगे जैसे कि पोलक हैं। मुझे यह भी ज्ञात है कि तुम अपनी अन्तरात्माके निर्देशके अनुसार ही चलोगे। मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे कारण दु:खी न हो।

महादेवने मुझे बताया है कि तुमने मेरा बनारसीदासको बुला लेना नापसन्द किया है। किन्तु मैं ऐसा कहाँ कर रहा हूँ। उसने मुझे लिखा था और मुझसे जबानी भी कहा था कि जहाँतक तुम्हारा सवाल है तुमने उससे कह रखा है कि वह आजाद है, जहाँ रहना चाहे, रहे। उसे जो काम करना है उसकी दृष्टिसे मैंने उसे सलाह दी है कि बम्बईमें रहना बेहतर रहेगा। और उसने फैसला कर लिया है। किन्तु वह शान्तिनिकेतनमें रहनेके लिए स्वतन्त्र है और मैं अब भी, जबतक वह प्रवासियोंके हितके लिए काम करता रहेगा, उसके लिए धन जुटानेकी कोशिश करूँगा।

तुम्हारी पूर्वी आफ्रिकाकी प्रस्तावित यात्राके बारेमें नटराजनका[2] पत्र संलग्न करता हूँ।

१ मद्रास प्रान्तका दौरा।

२ बम्बईके इंडियन सोशल रिफॉर्मरके सम्पादक।

मैं मद्रासमें आठ दिन ठहरनेकी उम्मीद कर रहा हूँ।

सस्नेह

तुम्हारा,
मोहन

[पुनश्च] मार्फत काग्रेस कार्यालय

मैंने सलग्न पत्र अभी देखा है। मैंने 'स्टेट्समैन'[1] में इसका मूल विवरण पढा है। मुझे लगा कि कविका कोई सम्वन्धी इस प्रकारकी असत्य वात नही लिख सकता। भेंटके[2] समय कोई सम्वन्धी उपस्थित नही था और मैंने इसकी ओर ध्यान नही दिया। परन्तु जाहिर है कि इसके पीछे किसी सम्वन्धीका हाथ जरूर है, नही तो वगाली लोग इसे महत्व कदापि न देते। क्या कवि इसे नही पढेगे और यदि यह असत्य है तो क्या वे इसका खण्डन नही करेगे? तुम भी कर सकते हो। परन्तु कृपया कविसे परामर्श कर लो और जो कर सको, करो।

अग्रेजी पत्र (जी० एन० ९८७) की फोटो नकलसे।

४४. सन्देश: बम्बईके नागरिकोंको[3]

[१४ सितम्वर, १९२१ के पश्चात्][4]

मौलाना मुहम्मद अलीको वाल्टेयरमे धारा १०७ और १०८ के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया गया और उनसे एक वर्षतक अच्छे आचरणके लिए मुचलका देनेको कहा गया। मुकदमेके स्थान और तारीखका अभी पता नही है।

गिरफ्तारीके वाद वेगम साहिवा और श्री हयातको उनसे मिलनेकी इजाजत दी गई।

मैं और वे स्टेशनके वाहर एक सभामे भाषण देनेके लिए जा रहे थे। वे गिरफ्तार कर लिये गये। मैं सभाकी ओर वढता चला गया और मैंने भाषण दिया।

रज मनानेका कोई कारण नही है, वल्कि मौका मुवारकवादका है। कोई हडताल नही होनी चाहिए। पूरी शान्ति और स्थिरता रखनी चाहिए। यदि हम कुछ मोपलाओके द्वारा किये गये पागलपनके वावजूद अहिंसात्मक रहे, हिन्दू-मुस्लिम एकता वनाये रख सके और स्वदेशी-कार्यक्रम पूरा कर पाये तो मैं इस गिरफ्तारीको स्वराज्य पानेकी

१. १०-९-१९२१ के **स्टेट्समैन**में।

२ ६ सितम्वर, १९२१ को कलकत्तेमें, जिसमें एन्ड्रयूज भी मौजूद थे।

३. गाधीजी द्वारा वम्वईको भेजा गया यह विवरण वाल्टेयरसे **अमृतबाजार पत्रिका**को भी भेजा गया था, किन्तु वहाँ नही पहुँचा।

४. पत्रमें मुहम्मद अलीकी जिस गिरफ्तारीका उल्लेख है वह १४ सितम्वरको हुई थी।

और खिलाफत सम्बन्धी अन्याय और पजाबके साथ हुए अन्यायके निवारणकी पूर्व-पीठिका मानता हूँ।

मैं आशा करता हूँ कि प्रत्येक भारतीय, स्त्री हो या पुरुष, विदेशी वस्त्रोका पूर्ण बहिष्कार करेगा और फुरसतके समयमे कताई या बुनाई करेगा।

मौलानाकी तरह कोशिश करके अपने धार्मिक और राष्ट्रीय अधिकारोकी रक्षा करनेके सकल्पपर डटे रहिए।

हमे कारावास यात्राके योग्य बनना चाहिए। मैं मौलानाकी निर्दोषिताको जानता हूँ और मुझे पूरा विश्वास है कि बेकसूर लोगोके कैद किये जानेसे राष्ट्र वाछित लक्ष्यपर पहुँच सकेगा।

मौलाना पूर्ण रूपसे शान्त थे और उसी तरह बेगम साहिबा भी शान्त हैं। वे यात्रामे मेरे साथ रहेगी और मौलाना आजाद सोबानी भी साथ रहेगे।

गाधी

[अग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १८-९-१९२१

४५. टिप्पणियाँ

हडतालका प्रभाव

श्री कोडा वेकटप्पैया अपने एक पत्रमे, जो मुझे अभी-अभी मिला है, हडतालका समर्थन करते है। इस पत्रमे उन्होने अन्य उपयोगी जानकारी भी दी है। पाठकोके लाभार्थ मैं उसे यहाँ उद्धृत करता हूँ।[1]

> हडतालको आपने गलत कदम बताया है। लेकिन मुझे यह कहनेकी अनुमति दीजिए कि हडतालके इन चन्द दिनोमें गण्टूरमें जो जन-जागृति हुई है वह वर्षोके परिश्रमपूर्वक किये गये प्रचारकार्यसे भी नहीं हो सकती थी। इसके सिवा इस स्वल्पकालमें लोगोमें सयम और आत्म-नियन्त्रणके गुणोका भी बहुत अच्छा विकास हुआ है। हम लोगोकी रिहाईका कारण यह नहीं है कि हमारे खिलाफ जो साक्ष्य था उससे भिन्न कोई ऐसे नये तथ्य प्रकाशमें आये हैं जिनसे साक्ष्यका खण्डन हो जाता है। कारण यह है कि जनमत उसके [डिप्टी मजिस्ट्रेटके] खिलाफ हो गया था। व्यापारियोने अपनी दुकानें बन्द कर दी थीं; वकीलोने अदालतोमें जाना छोड दिया था और सबसे बडी बात तो यह थी कि लोग रोज बडी-बडी सभाएँ कर रहे थे और उनमें इस सारी कार्रवाईके खिलाफ जोरदार आवाज उठा रहे थे। सरकारी दफ्तरोमें क्लर्क लोग अपनी जगहोसे

482

१ केवल सम्बन्धित भाग ही उद्धृत किया गया है।

इस्तीफा देनेकी बात सोचने लगे थे। शहरके प्रायः प्रत्येक व्यक्तिको यह लग रहा था कि कार्रवाई अन्यायपूर्ण है। हमारी रिहाईके असली कारण ये थे। ऐसी हालतमें हड़तालके महत्त्व और उसकी उपयोगिताके बारेमें जितना कहा जाये कम है। जिस शक्तिने लोगोंमें ऐसी अद्भुत एकता पैदा कर दी वह आई कहाँसे? मेरी नम्र रायमें यह शक्ति अधिकांशमें उस हड़तालसे ही प्रकट हुई जो व्यापारियोंने बहुत खुशीसे की और जिसे सामान्य जनताने खूब ही सराहा। गरीब और गरजमन्द लोगोंके लिए उनकी जरूरतकी वस्तुएँ मुहैय्या करनेके लिए उपयुक्त प्रबन्ध कर दिया गया था। उनके लिए कुछ दुकानें खुली रखी गई थीं। कारखानों, दुकानों और रेलवेके माल-गोदामोंके मजदूरोंकी एक बड़ी सभामें लोगोंने उनमें से जिन्हें जरूरत हो उन्हें राहत पहुँचानेके लिए मदद देनेकी इच्छा जाहिर की थी किन्तु उन्होंने मदद लेनेसे इनकार कर दिया। उन्होंने कहा कि अपने ध्येयके लिए हम खुशीसे कष्ट सहेंगे, मदद नहीं लेंगे।

मुझे उम्मीद है कि ऊपर मैंने जो तथ्य पेश किये हैं उनसे यदि और कुछ नहीं तो हमारी गलतीकी गुरुता अवश्य कुछ कम हो जाती है . . .

कार्य-समितिकी अनुमति लिए बिना हड़ताल करनेके खिलाफ मेरा जो विरोध है वह तो इसके बाद भी कायम ही है। गण्टूरमें हुई हड़तालका फल अच्छा निकला है, यह बात गण्टूर और उसके कार्यकर्त्ताओंके लिए प्रशंसाकी है। लेकिन श्री वेंकटप्पैयाने उसका जो वर्णन किया है उसीसे यह प्रकट हो जाता है कि हड़तालमें खतरा है और उसके सफल संचालनके लिए बहुत कौशल और चतुराई चाहिए। गण्टूरमें जो-कुछ हुआ उसका मेरा विश्लेषण यह है कि हड़तालके पहले जो गिरफ्तारियाँ हुई उनका गण्टूर-निवासियोंपर बड़ा प्रभाव पड़ा और वे सक्रिय हो उठे। हड़तालसे सरकार आतंकित हो गई और उसने घबराकर नेताओंको रिहा कर दिया — यह कोई ठीक बात नहीं हुई। मैं तो ऐसा मानना चाहूँगा कि उनकी रिहाई वकीलोंके त्याग और सरकारी दफ्तरोंके क्लर्कोंके इस्तीफा देनेकी तैयारीके फलस्वरूप हुई। हाँ, वकीलोंने जो त्याग किया वह यदि हड़तालका परिणाम था, तो हड़ताल निश्चय ही शुभ थी। हमें जरूरत इस चीजकी है कि लोग असहयोगके ठोस कार्यक्रममें अधिकाधिक योग दें, अगर हड़तालोंके द्वारा यह प्रयोजन सिद्ध होता हो तो मैं हमेशा हड़तालोंकी सिफारिश करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-९-१९२१

४६. कपड़ोंकी होलीका विरोध

सम्पादक
'यंग इंडिया'

महोदय,

आपके इस विचारसे कि १ अगस्तको इकट्ठे किये गये सभी विदेशी कपड़ोंको या तो जला दिया जाये या स्मर्ना भेज दिया जाये, और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने अपनी पिछली बैठकमें आपके इस विचारको जो समर्थन दिया उसमें मैं हैरान रह गया। इसके साथ जो सवाल जुड़े हुए हैं, वे इतने महत्वपूर्ण हैं कि मैं यह पत्र लिखे बिना नहीं रह सकता। पहली अगस्त आई और चली गई, और जो-कुछ नष्ट हो चुका उसे अब लौटाया नहीं जा सकता। लेकिन अपने अपेक्षाकृत शान्त क्षणोंमें हम अपने कार्योंपर नयी दृष्टिसे विचार कर सकते हैं, और इस तरह हम उन चीजोंकी पुनरावृत्ति रोक सकते हैं, जो इस प्रकार सोचनेपर हमें गलत लगें।

असहयोग आन्दोलनसे यदि उसकी अनावश्यक बातोंको निकाल दिया जाये और इससे सम्बन्धित मत-मतान्तरोंकी अस्थायी उलझनका खयाल न किया जाये तो यह आन्दोलन मुझे बराबर भारतके नवोदयके प्रतीक-जैसा लगा है, इसमें मुझे इस देशकी आत्माके स्वरकी प्रबल प्रतिध्वनि सुनाई पड़ी है — उस स्वरकी जिसे वर्षोंतक आदर्श-हीन जीवन बितानेके कारण, शक्ति-श्रीसे हीन हो जानेके कारण तथा स्वार्थपरता और अज्ञानके वशीभूत होकर भुला दिया गया था। इस आन्दोलनकी कल्पना अहिंसाकी जिस भावनासे की गई थी उसे मैं जीवनकी समस्त व्याधियोंका उपचार मानता हूँ, बशर्ते कि मनुष्य उस ऊँचाईतक उठ सके। लेकिन लोकमान्य तिलककी स्मृतिमें सभी विदेशी कपड़ोंकी होली जलानेके कामको मैं उन उच्च आदर्शोंके उपहासके अलावा और कुछ नहीं मान सकता जो मेरी नम्र सम्मतिमें असहयोग आन्दोलनकी प्रेरक शक्ति थे।

कहा जाता है कि सभी विदेशी कपड़ेको जला देना चाहिए, क्योंकि (१) विदेशी कपड़ा परतन्त्रताका प्रतीक है और गरीब-अमीर दोनोंके लिए गुलामीका बिल्ला है, तथा (२) यह पापका परिधान है जिसे ईस्ट इंडिया कम्पनीने हम-पर दुष्टतापूर्वक थोप दिया और जो हमारी असहायावस्था और अज्ञानके कारण चलता रहा। दोनों ही बातोंमें हम इसके विनाशके द्वारा ही इससे छुटकारा पा सकते हैं, और हममें से गरीबसे-गरीब लोगोंके भी तन ढँकनेके लिए इस कपड़ेका उपयोग करना उतना ही पापपूर्ण होगा जितना कि भूखेको सड़ा-गला

और विषैला भोजन देना। लेकिन बडी विचित्र विसंगति है कि साथ ही हमसे यह कहा जाता है कि यह कपडा स्मर्नाके लोगोके लिए भेजा जा सकता है।

उपर्युक्त दलीले जिन मान्यताओके आधारपर पेश की गई है, उनपर मैं विचार नहीं करना चाहता। मैं स्वदेशीकी आवश्यकता महसूस करता हूँ, खादीके नैतिक तथा अंशतः आर्थिक महत्वमें भी मेरा विश्वास है और इसी तरह चरखे-को फिरसे अपनाने तथा भारतके इस प्रमुख उद्योगके पुनरुद्धारमें भी विश्वास करता हूँ। लेकिन, मेरे विचारसे यह बात आसानीसे सिद्ध की जा सकती है कि जबतक विदेशी कपडेके मुकाबले कुल मिलाकर चौगुने मूल्यका दूसरा माल भारतमें बाहरसे आता रहेगा तबतक अपनी अन्य जरूरतें पूरी करनेके लिए हम उसी परिमाणमें परमुखापेक्षी रहेंगे, और इसलिए उस विदेशी मालको भी जला देना चाहिए। और यह बात तो और भी आसानीसे समझाई जा सकती है कि विदेशी लेखको द्वारा विदेशी भाषाओमें लिखी पुस्तकें, मशीनें, औषधियाँ तथा आधुनिक विज्ञान और मानवी कौशल तथा मेधाके बलपर — अर्थात् उन गुणोके बलपर जिनमें वे आज हमसे बहुत आगे निकल गये है — तैयार की गई चीजें, विदेशी कपडेके मुकाबले, हमारी परतन्त्रताका कहीं अधिक गहरा निशान है और हमारी शारीरिक और मानसिक गुलामीके कहीं अधिक विरूप बिल्ले है, अत हमें उन्हे नष्ट करके उनसे भी छुटकारा पा लेना चाहिए। और फिर, जैसा कि कुछ लोगोका विचार है, हम विदेशियोको नष्ट करके उनसे भी क्यो न छुटकारा पा ले? आखिर वे ही तो हमारी इन सारी व्याधियोकी जड है!

फिर, अगर ईस्ट इडिया कम्पनीके समयके भारतीय और उनके कारण उनकी आजकी सन्तान इसलिए पापकी भागी है कि वे उस कम्पनीकी दुष्टताके आगे झुक गये, जिसने हमारे बुनकरोको निकम्मा बनाया और हमारे इस उद्योगको बर्बाद कर दिया; और उस पापका प्रायश्चित्त तो सिर्फ उनके अपराधके मूल कारणकी होली जलाकर ही हो सकता है तो दूसरे कपडेको छोडकर अग्रेजी कपडेको ही क्यो न जलाया जाये? फिर, अगर किसी गरीब और भूखे भारतीयको सडा-गला और विषाक्त भोजन देना ठीक नही है तो क्या किसी असहाय तुर्कको वही भोजन देना ठीक है? अपने उतारे हुए विदेशी कपड़ोको स्मर्नाके लोगोंके लिए भेजना मुझे अपने देशभाइयोको वह कपड़ा देनेसे भी अधिक पापपूर्ण लगता है; क्योकि किसी भी राष्ट्रका किसी दूसरे राष्ट्रको अपना उच्छिष्ट और फटा-पुराना देना स्वय उस देनेवाले राष्ट्रके लिए लज्जाजनक है। इसके सिवा विदेशियोने, मित्र-शक्तियोने, इस्लामके प्रति जो अन्याय किया है वह ईस्ट इडिया कम्पनीने हमें जो हानि पहुँचाई है उसके मुकाबले अधिक ताजा है और बहुतसे लोगोके विचारसे अधिक बडा भी है। तब क्या हम इस बातको किसी भी तरह

नैतिक या उचित मान सकते हैं कि उन्हीं विदेशियो द्वारा तैयार किये गये और पापका परिधान मानकर अपने बदनपर से उतारे गये कपडोको हम स्मर्नाके लोगोंको भेजें ? ऐसा दान तो दाता और ग्रहीता दोनोके लिए लज्जाजनक माना जायेगा।

महोदय, अन्तमें मैं यह भी कहूँगा कि सडे-गले भोजन तथा विदेशी कपडेकी तुलना करना समीचीन नहीं है, और जबतक स्वय हमारे हजारो देश-भाइयोके तनपर सचमुच कोई वस्त्र नहीं है और उनके तनको ढकनेके लिए पर्याप्त खादी तैयार नहीं की जाती, तबतक ऐसे बहुतसे लोग होंगे जो एक गज भी विदेशी कपडा जलाना, या उसे ऐसी हालतमें, जब कि हमारे घरमें ही उसकी अधिक तीव्र आवश्यकता है, बाहर भेजना पाप मानेंगे।

मैं यह स्वीकार करता हूँ कि इस तरह कपडेको आगमें होमनेके दृश्यका लोगोके मनपर बडा जबरदस्त असर होता है, यह भी मानता हूँ कि इससे जनताका मन आकर्षित होता है, और अस्थायी रूपसे ही सही, किन्तु तत्काल उसमें उत्साहकी लहर दौड जाती है। लेकिन मैं यह नहीं मानना चाहता कि आपने यह कार्यक्रम हमारे इतने सारे गरीब, नगे तथा अकाल-पीडित देशभाइयोकी आकुल आवश्यकताका खयाल न करके केवल इन्हीं इरादोसे प्रेरित होकर अपनाया है।

भवदीय,
एन० बी० बडानी[1]

हैदराबाद, सिन्ध
३ अगस्त, १९२१

मैं श्री वडानीका यह तर्कपूर्ण पत्र यहाँ प्रसन्नतापूर्वक प्रकाशित करता हूँ। मैं पहले ही स्वीकार कर चुका हूँ कि विदेशी कपडोको स्मर्ना भेजनेके पीछे जो दलील दी जाती है, वह कमजोर है। लेकिन इसके पीछे भावना मुसलमानोके मतका आदर करनेकी रही है। फिर भी, इतना तो है ही कि विदेशी कपडेका उपयोग भारतके लिए विषके समान है किन्तु स्मर्नाके लिए नही, क्योकि वस्त्र उद्योग जिस तरह भारतीय अर्थ-व्यवस्था की रीढ रहा है उस तरह वह स्मर्नाकी अर्थ-व्यवस्थाकी रीढ नही रहा। विदेशी कपडा जलानेका मतलब है महीन, सुन्दर विदेशी कपडोके अपने मोहको जलाना। अगर हम शुरूमें इग्लैंडके बजाय जापानके लालच-पाशमे फँस गये होते तो इसका असर भी भारतके लिए उतना ही बुरा होता। विदेशी कपडोकी होली जलानेमे हमारा उद्देश्य विदेशियोको नही अपनेको ही दण्ड देनेका है। हम अग्रेजी कपडोका नही, बल्कि सभी विदेशी कपडोका बहिष्कार कर रहे हैं। सभी विदेशी कपडोका बहिष्कार एक पवित्र कर्त्तव्य है, इसलिए उसके बिना ब्रिटिश कपडोके बहिष्कारका कोई अर्थ नही रह जायेगा। विदेशी कपडोकी होलीके विचारके पीछे घृणाकी नही, बल्कि अपने अतीतके

१ दिल्लीके हिन्दू कालेज तथा हैदराबाद (सिन्ध) के नेशनल कालेजके प्रिंसिपल, शिक्षाशास्त्री तथा मिस्टरी ऑफ द महाभारतके लेखक।

पापोके लिए प्रायश्चित्तकी भावना रही है। पत्र लिखनेवाले सज्जन एक क्षणको भी सोचकर देखे तो उनके सामने स्पष्ट हो जायगा कि विदेशी कपडे जला देनेसे हममे अधिक तत्परता आयेगी और इस तरह हम और ज्यादा कपडा तैयार करनेकी ओर प्रवृत्त होगे, जैसा कि हुआ भी है। रोग इतना गहरा पैठ गया था कि शल्य-चिकित्साके अतिरिक्त उसका कोई उपचार नही बचा था। अध-नगे या नगे भारतीयोको दान या दयाकी जरूरत नही है। उन्हे जरूरत है ऐसे धधेकी जो वे अपनी झोपडियोमे आसानीसे कर सके। क्या गरीबोमे आत्म-सम्मान और देशभक्तिकी कोई भावना नही है? क्या स्वदेशीका सन्देश केवल सम्पन्न लोगोके लिए ही है?

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १५-९-१९२१

४७. विचारकी उलझन

सम्पादक

'यग इंडिया'

प्रिय महोदय,

धरना देनेकी उपयोगितापर मैने आपकी दलीले पढीं। बगालके असहयोगी विद्यार्थी जब कानूनके परीक्षार्थियोको परीक्षामें बैठनेसे रोकनेके उद्देश्यसे कलकत्ता विश्वविद्यालय, कालेज तथा सिनेट भवनके फाटकोपर लेट गये थे, उस समय उनके मनमें यही दलीले काम कर रही थीं। उन्होने हाथ जोडकर अपने परीक्षार्थी भाइयोसे सोनेके घडेमें रखे इस विषका पान न करनेका अनुरोध किया था। धरना देनेके इस नये तरीकेसे कितनी सफलता मिली, यह आपको मालूम ही है। परीक्षा-भवन बिलकुल वीरान हो गये थे और बादमें फिरसे परीक्षा लेनी पडी थी। लेकिन तब आपने ही धरना देनेसे असहमति प्रकट की थी और फलत सारा प्रयत्न छोड देना पडा था। इतने शानदार तरीकेसे जो सफलता प्राप्त हुई थी, सब मिट्टीमें मिल गई, और आज बगाल इस बातके लिए पछताता है कि उसके नौजवानोके भालपर विफलताकी कुख्यातिका टीका लगा हुआ है। जब धरना देनेवाले फाटकके सामने लेट गये थे, तब उनके पीछे इस दलीलका बल था कि "किसी बीमार आदमीके न चाहनेपर भी हमें उसका इलाज करना ही है।" आधुनिक शिक्षाके बारेमें आपकी सलाहको सचमुच समझकर तथा अपने कालेज छोडनेका साहस दिखाकर उन्होने अपने-आपको कृतार्थ माना। लेकिन तब भाइयोकी हैसियतसे अपने भाइयोको परीक्षामे बैठनेसे मना करना भी उन्हे अपना अनिवार्य कर्त्तव्य जान पडा। कोई आदमी गलत काम कर रहा हो तो जमीनपर लेटकर उसका रास्ता रोकना, उसे समझाने-बुझानेका पूर्वके देशोमें प्रचलित एक मान्य नैतिक तरीका है, इसमें तो कोई सन्देह

नहीं। उन्होने जो कुछ किया, वह सच्ची विनयके सिवा और क्या था? अगर सचमुच मेरी भावना ऐसी हो कि शराबखोरी एक भयकर बुराई है और हर व्यक्तिको इसके पजेसे बचाना है तो अगर मै शराबखानेके सामने लेट जाऊँ और पीनेकी इच्छा लेकर वहाँ आनेवालोसे कहूँ कि आप मेरे शरीरको कुचल कर ही शराब पीने जा सकते है तो क्या इसका मतलब बलप्रयोग होगा? यह तो उसके हृदयको जगानेकी कोशिश ही है। और नैतिक रूपसे समझाने-बुझानेका मतलब मै इस तरह हृदयकी भावनाको जगाना ही समझता हूँ। सिनेट भवनके सामने लेटकर इन धरना देनेवालोने परीक्षार्थियोके हृदयकी भावनाको जगानेकी कोशिश की थी और निश्चय ही वह उन्हे समझाने-बुझानेका एक तरीका था। चूँकि बगालके ये धरना देनेवाले किसी प्रकारके शरीरबलका उपयोग नहीं कर रहे थे, बल्कि परीक्षार्थियोके हृदयकी भावनाको जगानेकी ही कोशिश कर रहे थे, इसलिए अगर आप यह बतानेकी कृपा करे कि आपने उनके तरीकेसे असहमति क्यो प्रकट की थी तो मुझे बडी प्रसन्नता होगी।

बनारस, भवदीय,
१२ जुलाई, १९२१ एस० एन० राय

उपर्युक्त पत्र लिखनेवाले सज्जनने बिना किसी कारणके यह मान लिया है कि उन्होने जिस ढगसे धरना देनेकी बात लिखी है, शराबकी दुकानोपर उस ढगसे धरना देनेका समर्थन मै करूँगा ही। अगर धरना देनेवाले रास्ता रोकनेका यह अशोभन कार्य आग्रहपूर्वक करते ही रहते तो देशमे इसकी इतनी प्रतिकूल प्रतिक्रिया होती कि असहयोग आन्दोलन पूरी तरह बदनाम हो जाता। इसके अतिरिक्त शिक्षाकी तुलना शराबखोरीसे करना दूरकी कोडी भिडाना है। शिक्षाके सम्बन्धमे बात दो विचारोके सघर्षकी है, और असहयोग इस पीढीके लिए एक नया विचार है। लेकिन मद्यपानके सम्बन्धमे सघर्ष सयम और एक ऐसी बुराईके बीच है जिसे सभी बुराई मानते है। पहले उदाहरणमे जिस नौजवानको कालेजमे जानेसे रोका जाता है, वह सरकारी कालेजमे जानेको एक अच्छा कार्य मानता है, लेकिन शराबखोर शराबखोरीको एक बुरी लत ही मानता है। पढे-लिखे नौजवान अखबार पढते है और उन्हे पक्ष-विपक्षकी सारी दलीले ज्ञात रहती है। लेकिन शराबखानेमे जानेवाले लोग कुछ नही पढते और वे चूँकि सभा आदिमे भी नही जाते, इसलिए उन्हे वैसी कोई बात सुननेको भी नही मिलती। इसलिए कालेजो और स्कूलोपर धरना देना न केवल अनावश्यक था बल्कि जिस तरीकेसे धरना दिया गया वह एक तरहकी हिंसा थी, जिसका किसी भी हालतमे कोई औचित्य नही ठहराया जा सकता। और असहयोगियोके लिए तो वैसा करना अपनी प्रतिज्ञा भग करना था। इसलिए अगर मेरी तीव्र आलोचनाके कारण धरना उठा दिया गया तो मुझे इस बातके लिए खुशी है

[अंग्रेजीसे]

यग इडिया, १५–९–१९२१

४८. हमारी पतित बहनें

जो स्त्रियाँ पापकी कमाईपर गुजर करती है उनसे मिलनेका पहला अवसर मुझे आन्ध्र प्रान्तमे कोकोनाडामे आया था। वहाँ सिर्फ छ बहनोसे कुछ ही देर मुलाकात हुई थी। दूसरा मौका बारीसालमें[1] आया। वे सौसे ज्यादा थी और पहलेसे समय तय करके मिलने आई थी। उन्होने पहले ही चिट्ठी भेजकर मुलाकात मांग ली थी और यह भी लिख दिया था कि हम काग्रेसकी सदस्य बन गई है और हमने तिलक स्वराज्य कोषमे चन्दा दिया है, लेकिन हम यह नही समझ पाई कि आपने हमे काग्रेस कमेटियोमे पद न लेनेकी सलाह क्यो दी। अन्तमें उन्होने लिखा था कि हम अपनी आगेकी भलाईके बारेमे आपकी सलाह लेना चाहती है। जो सज्जन यह चिट्ठी लाये थे उन्हे उसे मुझे देते हुए बहुत सकोच हो रहा था। उन्हे डर था कि कही मै उसे पाकर नाराज न होऊँ। मैने उनका भय दूर करते हुए उन्हे यह आश्वासन दिया कि यदि मुझसे हो सके तो इन बहिनोकी सेवा करना मै अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

इन बहनोके साथ मैने जो दो घटे बिताये वे मुझे हमेशा याद रहेगे। उन्होने मुझे बताया कि २०,००० स्त्री, पुरुष और बच्चोकी आबादीमे उनकी सख्या ३५० से ऊपर है। वे बारीसालके पुरुषोके पापकी निशानी है और जितना जल्दी बारीसाल इस पापको धो डाले उतनी ही उसकी नेकनामी है। मुझे भय है कि जो हाल बारीसालका है वही हर शहरका है। इसलिए बारीसालका उल्लेख तो मैने सिर्फ उदाहरणके तौर पर किया है। इन बहनोकी सेवाका विचार करनेका श्रेय बारीसालके चन्द नौजवानो-को है। मै आशा करता हूँ कि इस बुराईको मिटा देनेका श्रेय भी बारीसाल ही लूटेगा।

पुरुषके हाथो जो दुष्कर्म हुए है उनमे कोई इतना जघन्य और पाशविक नही है जितना नारी-जातिका यह दुरुपयोग। स्त्रियोको मै अबला नही, मनुष्य-जातिका बेह-तर अर्द्धाश मानता हूँ। पुरुषो और स्त्रियोमे, मै स्त्रियोको ज्यादा सुसस्कृत मानता हूँ क्योकि वे आज भी सारे सद्गुणोकी आगार है। उनमे त्याग है, मूक बलिदानकी शक्ति है, नम्रता, आस्था, ज्ञान आदि सब-कुछ है। पुरुष अहकारपूर्वक स्त्रीसे ज्यादा ज्ञान रखने-का दावा करता है किन्तु स्त्रीकी सहज-बोधकी शक्ति उसके इस ज्ञानसे अकसर ज्यादा सही साबित हुई है। हम जो सीताका नाम रामके पहले या राधाका कृष्णके पहले लेते है सो अकारण नही है। हमे भ्रममे पडकर यह नही मान बैठना चाहिए कि चूँकि यह पापका व्यापार सभ्य यूरोपमे फैला हुआ है और कही-कही सरकारी इन्तजाममे भी होता है, इसलिए हमारे विकासमे भी इसके लिए गुजाइश है। इस पापको हमे हिन्दु-स्तानकी पुरानी नजीरे देकर भी स्थायी नही बनाना चाहिए। जब हम पुण्य और पापमे भेद करना छोड देते है और जिस प्राचीन कालकी हमे पूरी जानकारी नही है

१. देखिए "पतित बहनें", ११-९-१९२१।

उसकी अन्धी नकल करने लगते हैं, उसी घडी हमारा विकास बन्द हो जाता है। पुराने जमानेमें जो कुछ ऊँचीसे-ऊँची और अच्छीसे-अच्छी चीज थी हमें उसके वारिस होनेका गर्व है। हमें पिछली भूलोंकी सख्या बढाकर उस विरासतका अपमान नही करना चाहिए। क्या स्वाभिमानी भारतमें हर स्त्रीके सतीत्वकी हर पुरुषको उतनी ही चिन्ता न होनी चाहिए जितनी उसे अपनी सगी बहनकी इज्जतकी है? समाजका अर्थ ही यह है कि हम हिन्दुस्तानके हर निवासीको अपने भाई-बहनकी तरह समझें।

और इसलिए पुरुष होनेके नाते इन सौ बहनोंके आगे मेरा सिर शर्मके मारे झुक गया। इनमें से कुछ अधेड थी, ज्यादातर २० और ३० वर्षोंके बीचकी थी। और दो या तीन बारह सालसे कम उम्रकी लडकियाँ थी। उन्होंने मुझे बताया कि उन सबकी मिलाकर छ लडकियाँ और चार लडके थे, जिनमें से सबसे बडेकी शादी उनके ही वर्गकी किसी एक लडकीसे हुई थी। अगर और कोई उपाय न बन पडा तो उनकी लडकियोंको उन्हींकी-सी जिन्दगी बितानेकी तालीम दी जायेगी। यह देखकर कि ये स्त्रियाँ ऐसा समझती हैं कि उनका तो उद्धार हो ही नही सकता कलेजेमें घाव-सा लगा। परन्तु वे थी समझदार और हयावाली। उन्होंने बातचीत मर्यादाके साथ की और जवाब सीधे और साफ दिये। और उस वक्त तो उनका निश्चय भी ऐसा ही पक्का था जैसा कि किसी सत्याग्रहीका होता है। उनमें से ग्यारहने तो यह भी कहा कि यदि उन्हें आवश्यक मदद मिले तो वे दूसरे ही दिनसे मौजूदा जीवन छोडकर कताई-बुनाईका धन्धा करने लगेंगी। औरोंने कहा कि हमें सोचनेका कुछ समय चाहिए, क्योंकि हम आपको धोखा नहीं देना चाहती।

यह काम बारीसालके नागरिकोंके करनेका है। यह काम हिन्दुस्तानके सभी सच्चे सेवकोंका है, भले वे स्त्रियाँ हो या पुरुष। अगर २०,००० की आबादीमें ऐसी ३५० अभागी बहनें हैं, तो भारत भरमें कदाचित् ५२,५०,००० होगी। लेकिन मैं यह मानकर अपने मनको समझा लेता हूँ कि हिन्दुस्तानकी जो चार-पचमाश आबादी गाँवोंमें रहती है और सिर्फ खेतीका धधा करती है, वह इस पापसे अछूती होगी। इसलिए सारे देशमें अपनी इज्जत बेचकर गुजर करनेवाली औरतोंकी कमसे-कम सख्या १०,५०,००० होगी। इन अभागी बहनोंका इस पतनसे उद्धार करनेके लिए दो शर्तें पूरी होनी जरूरी हैं। एक तो हम पुरुषोंको अपने विकारोंपर काबू करना सीखना चाहिए, और दूसरे इन औरतोंको कोई ऐसा धन्धा ढूंढ देना चाहिए जिससे वे इज्जतके साथ रोजी कमा सकें। अगर असहयोग-आन्दोलनसे हमारी शुद्धि नही होती और हममें बुरे विकारोंको रोकनेकी शक्ति नही पैदा होती, तो इस आन्दोलनका कोई अर्थ नही। और कातने-बुननेके सिवा कोई ऐसा धन्धा नही है जिसे सब लोग अपना लें और फिर भी भीड न हो। इनमें बहुत-सी बहनोंको तो ब्याह करनेका विचार करनेकी जरूरत नही। उन्होंने मजूर भी किया कि जरूरत नही है। इसलिए उन्हें भारतकी सच्ची सन्यासिनियाँ बन जाना चाहिए। सेवाके सिवा जीवनकी और कोई चिन्ता न होनेके कारण वे जी-भरकर कात और बुन सकती हैं। दस लाख पचास हजार स्त्रियाँ आठ घटे रोज लगनके साथ बुनाई करे, तो इसका मतलब यह हुआ कि इस कगाल मुल्कको रोज उतने ही रुपयोंकी कमाई होगी। इन बहनोंने

मुझे बताया कि वे दो रुपये रोज तक कमा लेती है। लेकिन उन्होंने माना कि पुरुषकी लम्पटताको सन्तुष्ट करनेके खातिर उन्हे ऐसी कई चीजोकी जरूरत होती है जिन्हे वे कताई-बुनाईका धन्धा और फिरसे स्वाभाविक जीवन अपना लेनेपर छोड सकती है। मेरी मुलाकात खतम होनेसे पहले ही वे मेरे कहे बिना यह जान गई कि अगर वे अपना पापका धन्धा न छोडे तो वे कांग्रेस कमेटियोंकी ओहदेदार क्यो नही बन सकती। स्वराज्यकी यज्ञशालामे कोई भी ऐसा आदमी अधिकारी बनकर नही बैठ सकता जो अपने हाथ और दिलको साफ करके न आया हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-९-१९२१

४९. सिन्धमें दमन-चक्र

श्री घनश्यामदास जेठानन्द शिवदासानीने[1] निम्नलिखित टिप्पणी[2] जूनके अन्तमे तैयार कर ली थी लेकिन अपनी यात्राओमे दूसरे कई कागजोकी तरह मै उसपर कोई ध्यान नही दे सका और वह मेरे पास यो ही पडी रही। पाठक मटियारीके गोली-काण्डसे तथा जूनके बाद स्वामी कृष्णानन्द[3] तथा अन्य व्यक्तियोपर चलाये गये मुकदमोसे तथा उन्हे दी गई सजाओसे तो परिचित ही है।

[अंग्रेजी]

यंग इंडिया, १५-९-१९२१

५०. अपील: हिन्दी-प्रेमी मित्रोंसे

मद्रास

१५ सितम्बर, १९२१

प्यारे हिन्दी-प्रेमी भाइयो,

तीन वर्ष हो गये, मद्रास प्रान्तमे हिन्दी-प्रचार हो रहा है। खास इस कामके लिए बम्बईमे रुपये वसूल किये गये थे। लेकिन आज काम इतना बढा है कि उससे और मद्रास प्रान्तसे जो रुपये मिलने लगे है, उससे यह काम पूरा नही हो सकता। मुझे विश्वास है कि मद्रासमे काम सन्तोषजनक हो रहा है।

१. सिन्ध कांग्रेस असेम्बली पार्टीके उप-नेता, लोक सेवक मण्डल, बम्बईके मन्त्री।

२. यह टिप्पणी **यंग इंडिया**के १५-९-१९२१ और २२-९-१९२१ के अंकमें प्रकाशित हुई थी, उसे यहाँ उद्धृत नही किया गया है।

३. देखिए "न्यायका स्वाँग", २५-८-१९२१ तथा परिशिष्ट १ भी।

अगर आपको भी सन्तोष हुआ हो और इस महान कार्यकी ओर सहानुभूति हो तो मेरा साग्रह अनुरोध है कि आप नि संकोच भावसे भरसक आर्थिक सहायता दें।

आपका,
मोहनदास करमचंद गाधी

मूल प्रति (एस० एन० ८१५६) की फोटो-नकलसे।

५१. भेंट: 'डेली एक्सप्रेस' के प्रतिनिधिको

मद्रास
१५ सितम्बर, १९२१

असहयोग आन्दोलनके नेता श्री गाधी मद्रास आये हुए है। इस अवसरका लाभ उठाकर गुरुवारकी सुवह 'डेली एक्सप्रेस' के एक प्रतिनिधिने श्री गाधीसे मुलाकात की। उसने उन वहुतसे सवालोपर उनसे वातचीत की जिन्होने आज जन-मानसको आन्दोलित कर रखा है और जिनसे श्री गाधी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे सम्वद्ध है।

यह पूछनेपर कि तिलक स्मारक स्वराज्य कोषके लिए एक करोडका जो लक्ष्य है, उसमें से कितनी रकम जमा हुई और कहाँ रखी गई है, श्री गाधीने वताया कि वहुत वडी रकम जमा हो गई है और वह प्रान्तीय समितियोके जिम्मे है। जहाँतक मैं समझता हूँ प्रान्तीय समितियोने इन रुपयोको विभिन्न वैकोमें जमा किया है। सवसे ज्यादा रुपया वम्वईमें जमा है।

[सवाददाता] यह धन किस कामके लिए खर्च किया जायेगा?

[गाधीजी] इस धनका उपयोग मुख्यत स्वदेशीके लिए किया जा रहा है। तात्पर्य यह है कि उसका उपयोग राष्ट्रीय शिक्षण-सस्थाओमे सूत कातने तथा कपडा वुननेके कार्यको वढावा देने, अकालमे सहायता पहुँचाने, नशाखोरी रोकने और अछूत जातिका उद्धार करनेके लिए किया जा रहा है। आप ऐसा मान सकते है कि कोषका साधारणत ५० प्रतिशत धन सूत कातने तथा कपडा वुननेके कार्यमे खर्च किया जायेगा।

आपको मालूम है कि मलावारमें और अन्य स्थानोपर हिंसात्मक घटनाएँ हुई है। ऐसी हालतमें लोग अहिंसापर दृढ रहे, इसके लिए आप क्या कदम उठायेंगे?

इसका तो मै केवल यही उत्तर दे सकता हूँ कि इस कार्यको मै व्याख्यानो, निजी तौरपर होनेवाली वातचीतो, चिट्ठी-पत्री, तथा कताईके प्रचारके द्वारा करूँगा। मैं कताईको हिंसाका सवसे कारगर उपचार मानता हूँ। यदि मै समस्त भारतको सूत कातनेके कार्यमे लगा सकूँ तो इस आन्दोलनमे हिंसा पूर्णत समाप्त हो जायेगी।

क्या आप समझते है कि अहिंसाके पालनमें कुछ अपवाद भी होंगे, जैसा कि मोपलोके मामलेमें हुआ?

हाँ, अपवाद अवश्य होंगे, लेकिन मेरा यह निश्चित मत है कि यदि इस प्रकार असहयोग आन्दोलन द्वारा अहिंसाका निरन्तर प्रचार न किया गया होता तो भारतमें और भी भयकर और व्यापक हिंसात्मक कार्रवाइयाँ होती। मेरे इस उत्तरसे जो शकाएँ उठ सकती है, मै उनको भी पूरी तरह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ, ताकि मेरी स्थिति विल्कुल साफ हो जाये।

अब धरना देनेका प्रश्न ही लीजिए। मै समझता हूँ, एक काफी शक्तिशाली लोकमत इसके खिलाफ है। यदि अनुभवसे आपको लगे कि दो प्रतिपक्षी शक्तियोके आमने-सामने होनेपर किसी-न-किसी रूपमें उपद्रव अवश्य होगा, तब भी क्या आप चाहेगे कि धरना देना जारी रहे?

जबतक धरना देनेवाले स्वय कोई हिंसा नही करते तबतक तो यह जारी रहेगा। शराब बेचनेवाले या शराब पीनेवाले लोग जो हिंसा कर सकते है, उसका विचार मै नही करूँगा--ऐसा ही एक तीसरा पक्ष है सरकार। बिहार प्रान्तमे कही-कही तो लोगोको मजिस्ट्रेटने अपने पाससे कुछ पैसे दे दिये और कहा कि 'जाओ शराब पियो, क्योकि यह तो तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है।" इसलिए इस प्रकारकी हिंसाकी मै तबतक कोई परवाह नही करूँगा जबतक अहिंसाकी प्रतिज्ञासे बँधा पक्ष अपने सिद्धान्तोसे विचलित नहीं होता। हाँ, यदि वह पक्ष अपने सिद्धान्तोसे च्युत हो जायेगा तो जरूर ही धरना देनेका कार्य बन्द कर दिया जायेगा।

फिर विदेशी वस्त्रोके बहिष्कारका सवाल है। इस सम्बन्धमें मुझको यह मालूम हुआ है कि बम्बईमें जो भारतीय माल आता है, उसका दाम बढ़ गया है। यदि विदेशी मालका बहिष्कार इसी तरह जारी रहा तो खुद मुझे ऐसा लगता है कि भारतमें बने मालका मूल्य और बढ जायेगा। यदि मूल्य बढा, तो क्या इसका आपके आन्दोलनपर प्रभाव पडेगा?

इसका मेरे आन्दोलनपर कोई प्रभाव नही पडेगा, क्योकि यहाँ सवाल, दरअसल मिलोका नही है। मै बार-बार जनताको यही समझानेका प्रयत्न करता रहा हूँ कि स्वदेशीका वास्तविक अर्थ है अपना सामान घरमे बनाना। इसलिए मै यह चाहता हूँ कि जनता मिलके बने हुए मालकी परवाह न करे।

हिन्दुस्तानी मिलोंकी भी नहीं?

हाँ, उनकी भी। वैसे तो अभी मै हिन्दुस्तानी मिलोका बहिष्कार नही कर रहा हूँ क्योकि इसकी आवश्यकता नही है। लेकिन यदि जनता हिन्दुस्तानी मिलोके ही भरोसे बैठ जायेगी तो मै इनका भी बहिष्कार करूँगा, क्योकि इनसे अन्तिम प्रश्न हल नही होता। मुझे मालूम है कि स्वदेशीका सन्देश अभी लोगोने नही समझा है। निश्चय ही अभी सभी कार्यकर्त्ताओने इसको पूरी तरह ग्रहण नही किया है, आलोचकोकी तो बात ही क्या।

आपका अभिप्राय क्या भारतीय मिलोंके बने हुए वस्त्रोंके उपयोगका भी कतई समर्थन न करनेका है? यहाँ एक हिन्दुस्तानी मिलमें आजकल हड़ताल चल रही है, जिसमें पाँच-छः हजार कर्मचारी काम छोड़कर निकल आये हैं। क्या आपके ही कार्य-क्रमके अनुसार यह सम्भव नहीं है कि उन सबसे फिर मिलमें वापस जानेका आग्रह न करके उनमें से अमुक संख्याको करघे दिये जायें?

यह तो मैं कर रहा हूँ। असम-बंगाल रेलवेमें हड़ताल[1] करनेवालोंके लिए मैंने इसी प्रकारका बन्दोबस्त किया है। उन लोगोंने असमके चाय-बागानके अन्यायपीडित कुलियोंके प्रति सहानुभूति प्रकट करनेके लिए हड़ताल की थी। सरकारने उनपर जो अन्याय किया था उसका कोई परिशोधन न करके उनके साथ दुर्व्यवहार जारी रखा है। यदि मैं उन सब हड़तालियोंको असम-बंगाल रेलवे तथा स्टीमर कम्पनियोंके हड़तालियोंकी तरह कामपर लौटनेसे रोक सका तो रोकूँगा और कांग्रेस कमेटीको यह सलाह दूँगा कि प्रत्येक हड़तालीको एक चरखा, कुछ हड़तालियोंके बीचमें एक करघा, तथा उनको सब प्रकारकी सुविधा देनेके लिए उनकी एक बस्तीका बन्दोबस्त कर दिया जाये। जब मैंने सुना कि कुछ मिलोंमें औरतोंने हड़ताल की है, तब उनको भी मैंने यही सन्देशा भेजा। हम महिला मजदूरोंकी संख्या घटानेका प्रयत्न कर रहे हैं।

कर्मचारियोंको जैसी हालतमें काम करना पड़ता है, आपका विरोध सिर्फ उससे है, या आप पश्चिमी यन्त्रोंके प्रवेशका विरोध करते हैं? यदि सभी हिन्दुस्तानी मिलोंकी अवस्था एक हदतक सुधर जाये और कर्मचारियोंके रहनेके लिए अच्छे मकान बनाये जायें और उनको सन्तोषजनक मजदूरी भी दी जाये तब भी क्या आप मिलमें बने हुए वस्त्रोंके उपयोगका विरोध करेंगे?

हाँ, मैं विरोध करता रहूँगा, क्योंकि मैं पश्चिमी यन्त्रोंके प्रति वैर-भावसे विरोध नहीं करता। इस विषयमें पश्चिम और पूर्वका तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। पश्चिम और पूर्वका प्रश्न मेरे मनमें बराबर बना रहता है, लेकिन यन्त्रोंके सम्बन्धमें आपने जैसा सवाल पूछा है, उसका खयाल करते हुए मैं यह कहूँगा कि जिस तरह मैं यह नहीं चाहता कि खाना बनानेका काम सिर्फ कुछ होटलोंमें ही हो, उसी तरह मैं यह भी नहीं चाहता कि कपड़े बनानेका काम चन्द लोगोंके हाथमें रहे। हिन्दुस्तानके करोड़ों आदमी पहले कमसे-कम आठ घंटे किसी अच्छे तथा लाभदायक कार्यमें लगाते थे। लेकिन अंग्रेजी शासनका आज यह दुष्परिणाम हुआ है कि दो करोड़से ज्यादा मनुष्य सालमें छः महीने मजबूरन बेकार रहकर बिताते हैं, हालाँकि मैं जानता हूँ कि यह स्थिति आये, ऐसा कोई इरादा अंग्रेजोंका नहीं था।

यदि भविष्यमें उपद्रव नहीं रोके जा सके तो क्या आप, जिस तरह पिछले साल आपने सविनय अवज्ञा आन्दोलनको[2] स्थगित कर दिया था, उसी तरह असहयोग आन्दोलनको भी स्थगित कर दीजिएगा?

१ देखिए "भाषण: चटगाँवमें, रेलवे कर्मचारियोंके समक्ष", ३१-८-१९२१।
२ देखिए खण्ड १५ पृष्ठ संख्या २५१-५२ और ४८३-६।

मुझे खेद हे कि इस बार मै वैसा नही कर सकता। उस समय सविनय अवज्ञा आन्दोलन एक विशेष कानूनके विरुद्ध चलाया गया था। असहयोग आन्दोलन तो एक पूरी शासन-पद्धतिके विरुद्ध है, अतएव इसको स्थगित करना मेरे लिए सम्भव नही है। आन्दोलन स्थगित कर दूंगा, ऐसा कह सकना भी मेरे लिए सम्भव नही है, क्योकि यह एक विशाल आन्दोलन हे और इसमे बडे-बडे खतरे मोल लेने है ताकि जो सबसे बडा खतरा है, अर्थात् इस शासन-प्रणालीका जारी रहना, उसे खतम किया जा सके।

यदि भारतको ब्रिटिश सरकार अधिराजत्वका दर्जा देनेको तैयार हो तो ऐसी किसी प्रस्तावित व्यवस्था की, आपके खयालसे, क्या विशेषताएँ होनी चाहिए?

ब्रिटिश सरकार अधिराजत्वका दर्जा देनेको तैयार हो, तो मै ऐसी किसी व्यवस्थाके मार्गकी दो बाधाएँ हटानेपर अवश्य आग्रह करूँगा, अर्थात् खिलाफत और पजाबके सवाल।

जिस तरह इग्लैंड तथा फ्रासने साइलेशियाके बारेमें मजूर किया, उसी तरह यदि खिलाफतका पूरा प्रश्न भी पच-फैसलेके लिए राष्ट्रसघको सौंप दिया जाये तो क्या आप उसके फैसलेको स्वीकार करेगे?

मै ऐसा नही कर सकता, क्योकि यह तो समस्यासे सीधी तरह निबटना नही होगा। मुझको मालूम है कि इस बातका फैसला श्री लॉयड जॉर्जपर[1] निर्भर है। श्री लॉयड जॉर्ज इस मामलेमे उसी हदतक जा सकते है जिस हदतक राष्ट्र उन्हे जाने देगा। मै यह नही मानता कि श्री लॉयड जॉर्ज जानबूझकर यह शरारत कर रहे है। वे ब्रिटिश साम्राज्यके प्रतिक्रियावादी तत्त्वोके जालमे फँस गये है।

लेकिन यदि इस विवादको राष्ट्रसघको सौंप दिया गया तब तो उसपर उनका कोई वश नहीं रह जायेगा?

हाँ, लेकिन राष्ट्रसघकी कार्यवाहीको तो वे तब भी प्रभावित कर सकेगे। इसका मै एक उदाहरण देता हूँ। यदि प्रधान मन्त्री मेसोपोटामियासे सब फौज हटाना चाहें तथा उससे कोई सम्बन्ध न रखना चाहे तो उन्हे इससे कौन रोक सकता है? मेसोपोटामिया और फिलिस्तीनका शासनादेश (मेंडेट) तो ब्रिटिश राष्ट्रके पास है। मुझे बडा आश्चर्य होता है कि जब वे निष्कपट है तो मेसोपोटामियामे बने रहनेके लिए उनका इतना आग्रह क्यो है?

क्या आप यह बात स्वीकार कर लेगे कि राष्ट्रसघके मेंडेट द्वारा विवादग्रस्त क्षेत्रोको टर्कीके अधिकारमें कर दिया जाये?

इसमे मुझे कोई आपत्ति नही है, लेकिन ऐसा करनेसे कई प्रकारकी कठिनाइयाँ उपस्थित होगी। मेरा कहना यह है कि वह सम्पूर्ण प्रायद्वीप पूर्णरूपसे सिर्फ मुसलमानोके नियत्रणमे रहे और उसपर किसी अन्य बडी शक्तिका प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूपसे कोई नियत्रण न रहे और न टर्कीके ऊपर ही कोई दबाव रहे। यदि अरब-निवासी टर्कीसे कोई सम्बन्ध नही रखना चाहते है तो वे स्वय इसका निपटारा लडकर कर ले।

१. ब्रिटिश राजनयिक, १९१६-२२ में इग्लेंडके प्रधान मन्त्री।

यदि अंग्रेज बसराको अपने कब्जेमें रखें और मेसोपोटामियाके बाकी हिस्सेको छोड़ दें तो क्या आप सन्तुष्ट हो जायेंगे?

यह नहीं हो सकता। बिना किसी राजनैतिक हस्तक्षेपके व्यापार जारी रहने दिया जाये।

प्रश्नका ऐसा हल न निकलनेकी हालतमें क्या आप मौलाना मुहम्मद अलीकी इस बातसे सहमत हैं कि अहमदाबादमें होनेवाली आगामी कांग्रेसको भारतके लिए एक स्वतन्त्र लोकतन्त्रका लक्ष्य घोषित करना चाहिए?

नहीं, क्योंकि सिर्फ स्वतन्त्रताकी घोषणासे मुझे सन्तोष नहीं होगा। एक स्वतन्त्र लोकतन्त्रकी घोषणासे मुझे सन्तोष नहीं होगा। स्वतन्त्र होनेके लिए ब्रिटिश सरकारसे लड़नेकी हममें शक्ति होनी चाहिए, लेकिन अस्त्र-शस्त्रकी लड़ाई नहीं, अहिंसाकी लड़ाई। इसके लिए अभी हम लोग पर्याप्त रूपसे संगठित नहीं हैं। लॉर्ड सैलिस्बरी जब कुछ प्रश्नोंसे चिढ़ जाते थे तब कहते थे "इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। अभीतक किसी-न-किसी तरह हम लोग सफलता प्राप्त करते आये हैं, इसलिए माननीय सदस्यको चिन्ता नहीं करनी चाहिए।" इसी तरहसे हम लोगोंने भी कार्य किया है। अहिंसात्मक असहयोग जारी रखनेका पूरा श्रेय मैं स्वयं नहीं लेता। ईश्वरने हमारी सहायता की है।

यदि भारतको उपनिवेशोंके ढंगका स्वराज्य मिल जाये तो पंजाबको लेकर उठे प्रश्नका तो स्वतः निपटारा हो जायेगा न?

हाँ, हो जायेगा।

तब समस्याके निपटारेके लिए क्या आपकी यह राय है कि भारत सरकारको पूर्णरूपसे भारतीय व्यवस्थापिकाके प्रति उत्तरदायी बना दिया जाये?

भारतीय व्यवस्थापिकाके प्रति — हाँ, बेशक।

क्या आप सेनाका भी पूरा नियन्त्रण तुरन्त लेना चाहते हैं, अथवा इस विषयमें आपका रुख उससे भिन्न होगा?

मेरा विश्वास है कि हम लोग सेनाका पूर्ण नियन्त्रण लेनेको बिलकुल तैयार हैं। इसके माने यह होंगे कि हम लोग तीन-चौथाई सेनाको बरखास्त कर देंगे। मैं तो इतनी ही सेना रखना पसन्द करूँगा — जितनी भारतमें शान्ति-रक्षाके लिए आवश्यक होगी।

यदि सेना इस हदतक घटा दी जायेगी तो क्या आपको सीमावर्ती क्षेत्रोंसे आक्रमण होनेका भय नहीं होगा?

नहीं।

मुझे सैनिक सूत्रोंसे मालूम हुआ है कि सीमान्त क्षेत्रोंमें इस समय पाँच लाखसे अधिक सशस्त्र लोग मौजूद हैं।

आपकी बात ठीक है। ये कबीले अबतक हिन्दुस्तानपर हमला करते रहे हैं।

अबतक क्यों? आप ऐसा क्यों मान लेते हैं कि भारतमें स्वराज्य होनेपर वे हमला करनेसे बाज आयेंगे?

पहली बात तो यह कि समस्त संसारमें अब विचारका परिवर्तन हो गया है। दूसरे, अफगानिस्तानमें अभी जो तैयारियाँ हो रही हैं वे सब वास्तवमें खिलाफतके समर्थनमें हो रही हैं। जब खिलाफतके मामलेका फैसला हो जायेगा, तब अफगान लोगोंकी भारतपर निगाह नहीं रह जायेगी। जो लड़ाकू कबीले लूट-मार करके ही जीवन-यापन करते हैं, उन्हें अभी लाखों रुपया बतौर सहायताके दिया जाता है। मैं भी उन्हें कुछ आर्थिक सहायता देना चाहूँगा। जब चरखा भारतमें सुदृढ़ स्थान पा जायेगा, मैं उसका प्रचार अफगान-कबीलेमें भी करूँगा और इस तरह उसे भारतपर हमला करनेसे रोकूँगा। मेरा विश्वास है कि ये कबायली लोग भी अपने ढंगसे ईश्वर-भीरु लोग हैं।

मोपलोंके उपद्रवका उल्लेख करते हुए श्री गांधीने आगे कहा :

इस उपद्रवका बुनियादी कारण अभीतक पूरी तरहसे मैं नहीं समझ सका हूँ। बस, इतना ही जानता हूँ कि इनके सामने उत्तेजनाका कारण — बहुत बड़ा कारण — खड़ा किया गया था। मेरा खयाल है, वह कारण था मसजिदको घेर लेना। हिन्दुओंके इतने ज्यादा घरोंको क्यों लूटा गया, यह मैं नहीं जान पाया हूँ। जब मैं कलकत्तेमें था तो मुझे पक्की खबर लगी थी कि जबर्दस्ती धर्म-परिवर्तनकी कुल तीन वारदातें हुई हैं। लेकिन अब मुझे मालूम हुआ है कि इस किस्मके कुछ और मामले कांग्रेस कमेटीको मालूम हुए हैं। यह बड़े दुःखकी बात है। मोपलोंके उपद्रवसे हम बहुत पिछड़ गये हैं, लेकिन मैं नहीं समझता कि इसका हिन्दू-मुसलमानोंकी एकतापर कोई गम्भीर असर पड़ सकता है।

इससे यह साफ मालूम पड़ता है कि अहिंसावादी असहयोगियोंने कितना बड़ा काम अपने कन्धेपर उठाया है। ऊपरसे देखनेवालेको ऐसा लग सकता है कि आजकल हिंसा या शक्तिका बिना कुछ प्रयोग किये इस तरहके उपद्रवकारी तत्त्वोंको नियन्त्रणमें नहीं रखा जा सकता। इसको मैं नहीं मानता और यही कारण है कि स्वदेशी कार्यक्रमको मैंने एक अनिवार्य शर्तके रूपमें प्रधान स्थान दिया है। यदि स्वदेशीका प्रचार हो गया तो मेरे खयालसे, उतने ही से इतनी शान्ति और प्रेम उत्पन्न हो जायेगा जिससे हिन्दुस्तानकी काया पलट जायेगी।

जहाँतक मोपलोंका प्रश्न है उन्होंने तो कपड़ा बनानेके बदले हथियार बनाये हैं?

लेकिन इससे तो ब्रिटिश शासकोंका ही दोष प्रकट होता है कि उन्होंने इन झगड़ालू जातियोंको वशमें करके उन्हें शान्तिप्रिय बनानेके बजाय अपने क्षुद्र उद्देश्योंकी सिद्धिके लिए इनका उपयोग किया है। अंग्रेजी शासनके खिलाफ भविष्यके इतिहासकारको यह दुखमय बात लिखनी होगी। अब मैं नेपालियोंके भी सम्पर्कमें आ रहा हूँ। वे बड़े शानदार लोग हैं। एक नेपाली बालिकासे मेरी भेंट हुई जो परसों ही मुझसे विदा हुई है। वह नेपालियोंमें अहिंसाके ज्ञानका प्रसार कर रही है, क्योंकि अभीतक उन्हें शान्तिप्रिय बनानेका कुछ भी प्रयत्न नहीं किया गया है।

यदि यह बात सच है कि ब्रिटिश सरकार मोपलोंको अहिंसक बनाकर नहीं रख सकी है तो क्या यह बात भी सच नहीं है कि आपका असहयोग आन्दोलन भी उन्हें शान्तिप्रिय बनानेमें विफल हुआ है?

मैं यह नहीं कह सकता कि सरकार मेरे आन्दोलनके कारण विफल हुई है। अभी साल-भर भी नहीं हुआ है, जब बड़ी विपरीत परिस्थितियोंमें मेरा आन्दोलन आरम्भ हुआ था। एक तरफ तो हमपर सरकार हँसती थी, दूसरी तरफ हमारे भाई हँसते थे। उन्हें 'असहयोगी' शब्दको समझा पाना मेरे लिए बहुत कठिन हो गया था। किसी सुधारकको इतनी कठिनाइयोंका सामना नहीं करना पड़ा है, जितनी मेरे सामने हैं। मैं जानता हूँ कि इन कठिनाइयोंको मैंने स्वयं आमन्त्रित किया है, मगर मेरे लिए और कोई रास्ता नहीं था। अतएव, जब मैं कहता हूँ कि अहिंसा तो महज एक नीति है, तब वे नहीं समझते कि यह कैसी नीति है। हिन्दू-मुसलमानोंकी एकता-की समस्याके समाधानका प्रयत्न करते समय अहिंसा ही हम लोगोंका अन्तिम सिद्धान्त होना चाहिए। यदि उसको मैं कर सका तो हम लोग अति शीघ्र अपनी मुराद हासिल कर लेंगे। यदि कोई असहयोगी मोपलोंके जिलोंमें जाता है तो सरकार हस्तक्षेप करती है। उन्हें रोक दिया जाता है। हम लोगोंका तो कहना ही यह है कि उपद्रव उन्हीं जगहोंमें हुआ है जहाँ असहयोगियोंकी पैठ सबसे कम हो पाई थी।

क्या आप यह नहीं मानते कि मोपले धार्मिक नेताओंके कहनेमें हैं, राजनीतिक नेताओंके नहीं?

यह बात सच है। इसीलिए तो मैं धर्म और राजनीतिको मिला रहा हूँ। मैंने इन धार्मिक पण्डितोंको यह समझानेका प्रयत्न किया है, और बहुत सफल प्रयत्न किया है कि उनके लिए देशके राजनीतिक जीवनसे प्रभावित हुए बिना रहना असम्भव है। यदि वे उस प्रभावको ग्रहण नहीं करते तो अधिकांश जनतापर वे अपना सारा नियन्त्रण खो बैठेंगे। एक इतना बड़ा उपद्रव जारी रहा है। यदि यह सरकार ईमानदारीसे काम करती होती तो मैं अलीभाइयोंमें से एकको ले जाता और तुरन्त इसको शान्त करा देता। अगर हम लोग शान्ति स्थापित नहीं करा सकते तो जीवित भी नहीं बचते। हम लोग मारे जाते। यह सरकारके लिए भी अच्छा होगा और हमारे लिए भी। लेकिन हमारी मृत्युके बाद हमारी खाकमें से अहिंसाकी भावनाका जन्म हुआ होता।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६–९–१९२१

५२. भेंट: 'मद्रास मेल' के प्रतिनिधिको[1]

[१५ सितम्बर, १९२१]

[प्रतिनिधि:] "विदेशी वस्त्रके बहिष्कार आन्दोलनको यद्यपि उसमें मौजूदा विदेशी वस्त्रके स्टॉकका विनाश निहित है, क्या आप असहयोगका एक रचनात्मक कार्य मानते है?"

[गांधीजी] मैं स्वदेशीको असहयोग आन्दोलनका एक रचनात्मक कार्य इसलिए मानता हूँ कि उसको अपनानेके फलस्वरूप हमारा देश अपनी जरूरत-भरका सारा कपडा हाथसे कात और बुनकर तैयार करने लगेगा।

श्री गांधी, क्या आप देशकी वर्तमान परिस्थितियोको देखते हुए लोगोकी जरूरत-भरका पूरा कपड़ा तैयार होना सम्भव मानते है?

निश्चय ही, जिस तरह हमारे लिए प्रतिदिनकी जरूरतका भोजन पका लिया जाना सम्भव है उसी तरह यह भी सम्भव है, बशर्ते कि कपडेका उत्पादन इसी तरह हमारे हाथमे हो जैसा सिर्फ दो या तीन सौ साल पहले था।

क्या अन्य कारणोके अलावा, मशीनके प्रचलनसे परिस्थितियाँ काफी हदतक बदल नहीं चुकी है?

वास्तवमें मशीनोसे कोई ऐसा परिवर्तन नही हुआ है जो सुधारा नही जा सकता। मानसिक स्थितिको ही ठीक करना है। वे हाथ या वे सब घटे जिन्हे राष्ट्र कपडा बनाने और सूत कातनेमे लगाता था, अब किसी अन्य अथवा बेहतर काममे लग रहे हैं सो बात नही है। वे घटे और वे हाथ अब भी फालतू ही पडे है।

क्या आपका खयाल है कि देशकी आवश्यकताकी पूर्तिके लिए घरो और झोंपड़ियोमें हाथ-कताई और हाथ-बुनाई करके हम उतना ही माल और उसी कुशलताके साथ तैयार कर सकते है जितना कारखानों द्वारा तेजीके साथ तैयार हो जाया करता है?

निश्चय ही!

दूसरे शब्दोंमें शायद आपका विचार यह है कि यह सवाल केवल इतना ही है कि चन्द कारखानोमें जो माल प्रचुर मात्रामें थोड़े ही समयमें बन जाता है वही माल ग्रामीण क्षेत्रोंमें हाथकी कताई और हाथकी बुनाई द्वारा तैयार करवाया जाये।

निश्चय ही ऐसा है।

क्या आप समझते है कि हमारी सभी आधुनिक जरूरतें पूरी तरह और कुशलताके साथ मशीनरीके प्रयोगके बिना पूरी की जा सकती है?

जहाँतक कपडेका सवाल है, आधुनिक जरूरते अवश्य पूरी की जा सकती है, परन्तु सक्रमण कालमे राष्ट्रको तबतक सीमित मात्रामे सुलभ होनेवाले मालसे काम

१. यह भेंट सान थोममें रामजी कल्याणजीके निवास स्थानपर हुई थी।

चलाना होगा तबतक कि भारतका यह नामी और सुन्दर कपड़ा फिर नहीं बनने लगता।

किन्तु श्री गांधी, इस उद्देश्यको पूरा करनेके लिए देशमें इस समय जो विदेशी कपड़े पहले ही से इस्तेमाल हो रहे हैं, उन्हें नष्ट करनेकी जरूरत क्यों है?

इसका कारण यह है कि राष्ट्रने अपने गृह-उद्योगोंको नष्ट करके विदेशी कपड़ा अपनानेका जो पाप किया है उसकी उसे प्रतीति करनी है और हृदय-परिवर्तनकी अभिव्यक्तिके लिए यह एक आवश्यक प्रायश्चित्त है।

प्रायश्चित्तका मतलब श्री गांधी, यह है कि लोगोंमें अपनी रोजमर्राकी आदतों या आदर्शोंको त्यागनेकी भावनाका उदय हो गया है?

निश्चय ही!

क्या आप सोचते हैं कि इस देशके लोगोंने स्वयं ही गृह-उद्योगोंका विनाश कर दिया? क्या आप ऐसा नहीं मानते कि हाथके काम और मशीनरीके बीच किसी भी तरहकी स्पर्धामें गृह-उद्योगोंको नष्ट होना ही पड़ता है?

उस समय जब कि स्पर्धाका कोई प्रश्न नहीं था, लोगोंने जानबूझकर अपने राष्ट्रीय उद्योगोंकी बलि दे दी, हालांकि यह नहीं है कि ऐसा उन्होंने क्रूरतापूर्ण दबावके कारण किया।

श्री गांधी! मैं आपकी बात ठीक तरह समझ नहीं पाया हूँ।

यह बात इतिहासमें अनुमोदित है कि जब हमने अपने गृह-उद्योग त्यागे उस समय हाथ-करघा और मशीनरीमें कोई स्पर्धा नहीं थी।

परन्तु मेरा ख्याल तो ऐसा था कि लोगोंने स्वेच्छासे अपने उद्योग नहीं छोड़े थे, बल्कि उन्होंने देशमें आयातकी गई मशीन-निर्मित वस्तुओंसे मुकाबला करनेमें अपने आपको असमर्थ पाया था?

मेरे कहनेका मतलब यह है कि ईस्ट इंडिया कम्पनीको जो राजनैतिक सुविधा प्राप्त हो गई थी, उसकी बदौलत वह मशीनकी बनी चीजें इस देशके लोगोंपर थोप सकती थी।

परन्तु क्या ये मशीनकी बनी चीजें घरेलू-उत्पादनकी चीजोंसे सस्ती नहीं पड़ती थीं?

कदापि नहीं। देशके लोगोंको कपड़ा तैयार करनेका अपना धन्धा छोड़नेके लिए बार-बार आतंकित और विवश किया गया। मसलन, जब बुनकरोंको जबरन बहुत ज्यादा कपड़ा बनानेके लिए विवश किया गया तब तंग आकर उन्होंने अपने हाथोंके अँगूठे स्वयं काट डाले।

यह सब अत्याचार क्या इतने बड़े पैमानेपर जारी रहा होगा कि तमाम गृह-उद्योगोंका विनाश ही कर डाले?

निश्चय ही जबतक लोग उन घरेलू उत्पादनोंको अपने धर्मका एक अंग ही न मान लेते, तबतक इस प्रक्रियाके एक अमुक समयतक जारी रहनेका वैसा असर पड़ना ही था।

आपकी रायमें क्या आज राजनैतिक परिस्थितियाँ उन गृह-उद्योगोके पुनरुत्थानके लिए अनुकूल हैं, जिन्हे आपके विचारके अनुसार ईस्ट इडिया कम्पनीने नष्ट कर दिया था?

मैं परिस्थितियोको बहुत अनुकूल मानता हूँ, क्योकि लोग महसूस कर रहे हैं कि यदि अब हाथ-कताई और हाथ-बुनाईका पुनरुत्थान नही किया गया तो उनके लिए दिनो-दिन अधपेट भूखो मरनेके सिवाय और कोई चारा नही है।

तो इसी दिशामें जनताको प्रयत्नपूर्वक चलाना क्या आपके कार्यक्रमका अग है?

हाँ! यह काम बहुत बडे पैमानेपर किया जा रहा है।

भले ही लोग देशप्रेम और बचतके खयालसे हाथ-कताईपर ध्यान देने लगें तो भी यदि साथ ही फैक्टरी व्यवस्था और मशीनकी बनी चीजोका भारतमें आना जारी रहा, तो क्या आप विशेष रूपसे आन्दोलनके सफल होनेकी आशा करते हैं?

इसका उत्तर स्वयं आपका प्रश्न ही दे रहा है। यदि लोग देशभक्ति और बचतकी भावनासे यह काम करने लगते हैं, तो यह हो सकता है।

परन्तु हमारे लोगोका और उनकी वर्तमान दशाका आपने जो अध्ययन किया है, क्या उससे आपको यह आशा बँधती है कि देशभक्तिकी भावना इतनी बलवती सिद्ध होगी कि राज्यकी मददके बिना ही बडे पैमानेपर घरेलू उत्पादनको जबर्दस्त प्रोत्साहन दिया जा सके?

हाँ, अवश्य। इसीलिए म कहता हूँ कि यदि लोग हाथ कताई और हाथ बुनाईको बडे पैमानेपर अपना ले तो उससे स्वत ही हम स्वराज्यकी ओर अग्रसर होगे।

परन्तु आन्तरिक उपद्रव, जैसे कि मलाबारमें हुए, अहिंसात्मक असहयोगकी गतिमें बहुत ही बडी बाधा है, यह तो आप मानेंगे ही?

मेरा उत्तर 'हाँ' है।

क्या आप यह भी नहीं मानते कि मलाबारके इस दगेका आपके आन्दोलनसे बहुत-कुछ सम्बन्ध था?

जो जानकारी मैंने प्राप्त की है, और जिसपर मुझे सन्देह करनेका कोई कारण नही है, वह इसी तथ्यको प्रमाणित करती है कि हिसा उन स्थानोपर भडकी जो हमारे असहयोगियोकी कार्रवाइयोसे लगभग अछूते ही बचे थे। और मेरी जानकारीमे तो यह भी है कि असहयोगियोको जानबूझकर इन उपद्रवग्रस्त क्षेत्रोमे जानेसे रोका गया था।

यद्यपि आपके दलके बाहरके प्रतिष्ठित नेताओने असहयोग आन्दोलनको बडे पैमानेपर चलानेके दुष्परिणामोंकी ओर ध्यान आकर्षित करते हुए आपके आन्दोलनका विरोध किया था तथापि क्या आपकी अब भी यही धारणा है कि असहयोग भारत-जैसे देशको स्वराज्य दिलानेका, एकमात्र न सही, तो भी मुख्य साधन अवश्य है?

हाँ, यही एकमात्र उपाय है, भारत किसी अन्य उपाय द्वारा सौ सालोमे भी स्वराज्य नही पा सकता।

देशमें लाखो करोडो लोग ऐसे हैं जो प्रत्यक्ष रूपसे आपके प्रभावमें नहीं हैं, लेकिन जो अखबारो और सभाओके जरिये असहयोगके बारेमें पढते और सुनते हैं। इन लोगोको यही माननेको कहा जाता है कि देशमें जो भी बुराइयाँ हैं वे सब वर्तमान सरकारके कारण हैं। इन बुराइयोको किस प्रकार दूर किया जाये, यह बताये बिना उनका जिक्र करते रहना, सत्तारूढ लोगोके प्रति लोगोमें दुर्भाव उत्पन्न करना है। क्या आप ऐसा नहीं सोचते कि असहयोग आन्दोलनका सुविचारित उद्देश्य भी यही है?

यह प्रश्न ऐसा मानकर चलता है कि कोई भी व्यक्ति वास्तवमे अहिंसाके विषयमे लोगोको नही समझाता।

आप इसे अपनी प्रशसा-मात्र न समझें तो मैं समझता हूँ कि आप मेरी इस बातसे सहमत होंगे कि जहाँ कहीं किसी पकारका कोई ऐसा झगडा उत्पन्न होता है जो असहयोगके सिद्धान्तके प्रसारके कारण उत्पन्न हुआ माना जाता हो वहाँ शान्ति स्थापित करनेके लिए गाधीकी आवश्यकता होती है।

मैं यह सोचकर अपनी तारीफ नही करूँगा कि हर जगह शान्त वातावरण बनानेके लिए मेरी निजकी उपस्थिति जरूरी हुई, क्योकि मैं जानता हूँ कि ऐसे बहुत-से लोग हैं जो उस प्रकारका वातावरण बना सके और उसे कायम भी रख सके। मेरा पक्का विश्वास है कि यदि सरकारने श्री याकूब हसनको मलाबार जानेकी अनुमति दे दी होती, तो वहाँ बादमे जो-कुछ हुआ वह रोका जा सकता था और मुझे पूरा विश्वास है कि यदि सरकार मुहम्मद अलीको वाल्टेयरमे न पकडती बल्कि उन्हे मलाबार भेजती, तो वे पूर्ण शान्ति स्थापित कर सकते और बहुत-सी जाने बच जाती तथा बहुतेरे हिन्दू परिवार धर्मान्ध मोपलाओके उन्मादसे बच गये होते।

परन्तु आपके खयालसे श्री मुहम्मद अलीकी गिरफ्तारीका आपके आन्दोलनपर क्या असर पडेगा? क्या आपके मुसलमान अनुयायियोको यह हिंसाके लिए प्रेरित करेगा?

मैं आशा करता हूँ कि नही करेगा, और मेरा विश्वास है कि यदि भारत अहिंसात्मक रहता है, और साथ ही दृढ भी तो मैं जानता हूँ कि स्वराज्य करीब है। यह देखते हुए कि सरकार जनताकी राय नही लेना चाहती, सरकारके पास केवल एक रास्ता रह जाता है और वह यह कि वह उन लोगोको समाप्त कर दे जो जनताकी रायका, भले कुछ समयके लिए ही, प्रतिनिधित्व करते हैं।

आप जो कह रहे हैं, सरकार क्या वही कर रही है?

इस बारेमे मेरे मनमे कोई सन्देह नही है।

परन्तु जबतक आपके आदर्शके अन्तर्गत ये बडी-बडी शर्तें बनी हैं, तबतक आप लोगोको ऐसी आशका करनेसे नहीं रोक सकते कि आपकी तमाम नेकनीयतीके बावजूद हिंसाके अवसर आ सकते हैं क्योंकि उनके अन्दर आप-जैसी दार्शनिक वृत्ति या आत्मसयमका दृढसकल्प नहीं है?

हाँ, खतरा तो हमेशा है, और कोई भी सुधारक अबतक बडे खतरोके बिना सुधार कार्य पूरा नही कर पाया है।

जब इतने बड़े खतरे मौजूद हैं, तो क्या आपकी समझसे सरकार द्वारा ऐसे तरीके अपनाना उचित नहीं है, जो उसकी बुद्धिसे जरूरी है?

यह देखते हुए कि सरकार जनताकी न्यायपूर्ण आकाक्षाओका विरोध कर रही है, सरकारके कार्योको किसी तरह उचित नही कहा जा सकता।

परन्तु क्या यह मामला ऐसा नहीं है जिसपर खुद भारतीयोमें बड़ा मतभेद है?

मेरा उत्तर यह है कि खिलाफत और पजावके वारेमे लोगोकी माँगोके सम्बन्धमे कोई मतभेद नही है। इसका उल्लेख मैं इसलिए करता हूँ कि यदि सरकारका कुछ भी इरादा खिलाफतकी माँगे पूरी करनेका होता तो वह मौलाना मुहम्मद अलीको कैद हरगिज न करती।

मलाबारके उपद्रवोके बावजूद, क्या आप हिन्दू-मुस्लिम एकताके प्रति निराश नहीं होते?

मेरे निराश न होनेका सीधा-सा कारण यह है कि कोई भी समझदार मुसलमान, चन्द मोपला लोगोने जो भी किया है उसे ठीक नही मानता है। जब आपका मानवके बहुत बडे-बडे समूहोसे वास्ता पडता हो तब ऐसी उम्मीद करना बहुत ज्यादा होगा कि एक भी व्यक्ति कोई गलती नही करेगा।

इसी बातको लेकर आपके असहयोगका विरोध किया जाता है।

हाँ, लेकिन क्या सरकारने अपने शब्द-भण्डारसे 'खतरा'—यह शब्द मिटा दिया है?

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-९-१९२१

५३. भाषण: मद्रासमें

१५ सितम्बर, १९२१

"स्वदेशी" पर महात्मा गांधीका भाषण सुननेके लिए कल सायंकाल साढे पाँच बजे प्रेसिडेंसी कालेजके सामने समुद्रतटपर विशाल सभा हुई। . . .

श्री एस० कस्तूरीरंगा आयंगारके[1] प्रस्तावपर श्री याकूब हसनको सभापति बनाया गया।

महात्मा गांधी बोलनेको उठे तो लोगोने तीव्र हर्षध्वनिसे उनका स्वागत किया। महात्माजी घंटे-भरसे अधिक समयतक बोले और बहुत स्पष्ट तथा खनकती हुई आवाजमें। लोगोने उनका भाषण बड़े ध्यानसे सुना। भाषण अंग्रेजीमें दिया गया, किन्तु शुरूमें

१ मद्रासके कांग्रेसी नेता, सविनय अवज्ञा जाँच समितिके सदस्य, हिन्दूके सम्पादक।

ए० रामास्वामी आयगार[1] और फिर श्री एस० सत्यमूर्ति[2] एक-एक वाक्यका अनुवाद करके बोलते गये। महात्माजीने कहा :

सभापति महोदय और मित्रो,

सदाकी भाँति मैं आपसे क्षमा माँगना चाहूँगा कि शारीरिक दुर्बलताके कारण मैं खडा होकर नही बोल सकता। पीछेके सभी श्रोताओसे मैं कहना चाहता हूँ कि यदि वे मेरी वाते सुनना चाहते है तो पूरी शान्ति बनाये रखे। और मैं समस्त श्रोताओसे अनुरोध करूँगा कि वे न तो ताली बजाये और न "शर्म-शर्म" चिल्लाये। सितम्बरमे राष्ट्रीय काग्रेसने नागपुरमे देशके सामने जो कार्यक्रम प्रस्तुत किया, यदि आप उसे सचमुच पूरा करना चाहते है, तो विश्वास करे कि करतलध्वनि करके या "छि छि" कहकर आप उसे पूरा नही कर सकते। अब हमे प्रदर्शनसे बचकर पहलेसे कही अधिक गम्भीरतासे अपने काममे जुट जाना चाहिए। अपने कार्यक्रमको पूरा करने तथा स्वराज्यकी स्थापना करनेके लिए हमारे पास अब केवल कुछ महीनेका ही समय है। खिलाफत और पजाबके अन्यायोका परिशोधन करानेके लिए समयकी मानवीय दृष्टिसे, हमारे पास बहुत ही कम समय है। लेकिन खुशीकी बात यह है कि प्रतिदिन अपने चारो ओर मुझे इस बातके सकेत मिलते है कि ईश्वर हमारे साथ है। मैं जानता हूँ और नि सन्देह आप भी जानते है कि हम भले ही मानवीय दृष्टिके अनुसार सबसे कमजोर दिखते हो, फिर भी ईश्वर चाहे तो हमे सफल बना सकता है।

मैं ऐसा मानता हूँ कि वाल्टेयरमे मौलाना मुहम्मद अलीकी गिरफ्तारी भी हमारे लिए वरदान बनकर आई है। ईश्वर ही जानता है कि जो भी सच्चे और वैध तरीके किसी असहयोगीके लिए उपयुक्त है, उन सभी तरीकोसे मौलाना मुहम्मद अलीने, उनके भाईने और मैंने इस बातकी हरचन्द कोशिश की कि वे जेल न जाये। इस सीधे और सँकरे पथपर चलनेके लिए एक बहादुर आदमी जो-कुछ कर सकता है, मुहम्मद अलीने वह सब किया। और यह तो वाइसराय महोदय ही बता सकते है कि उस समय जब कि वे शान्ति और सद्भावना यात्रापर निकले हुए थे, ऐसी कौन-सी नई स्थिति उत्पन्न हो गई थी जिससे उनकी गिरफ्तारीका औचित्य सिद्ध होता है। अलीबन्धुओके हस्ताक्षरसे जारी किये गये उस प्रसिद्ध और बहुचर्चित वक्तव्य[3]-के बादसे मौलाना मुहम्मद अली लगभग बराबर मेरे साथ ही रहे है। मैं अपने श्रोताओको, और इन श्रोताओके जरिये समस्त भारतको यह विश्वास दिलाता हूँ कि मौलाना मुहम्मद अलीने खुदाके नामपर भारतसे जो यह वादा किया था कि वे हिंसा नही भडकायेगे, उस वादेसे वे तिल-भर भी नही हटे है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि निजी बातचीतमे या खुले तौरपर, बवक्तन-फवक्तन मौलाना मुहम्मद अलीने इस बातपर जोर दिया कि भारतके लोगोके लिए अहिंसाका पूरी तौरपर

१ पहले मद्रासके तमिल दैनिक **स्वदेशमित्रन्** और बादमें **हिन्दू**के सम्पादक, १९२६-२७ में काग्रेसके महा-सचिव, विधान सभाके सदस्य।

२ १८८७-१९४३, मद्रासके एक प्रसिद्ध काग्रेसी नेता और वक्ता।

३ देखिए खण्ड २०, पृष्ठ ९२।

पालन करना जरूरी है। उनसे जो लोग मिले उन्हे और जिन बहुत सारी सभाओमे वे बोले, वहाँ लोगोको उन्होने यही समझाया है कि स्वराज्य हो, या खिलाफत अथवा पजाब विषयक अन्यायका परिशोध –– हमारी सफलताकी एकमात्र और अनिवार्य शर्त यही है कि भारतके लोग पूरी तरह अहिसाकी भावना बनाये रहे। लेकिन अलीबन्धु कायर नही है। अगर किसीकी ऐसी कल्पना या ऐसा विचार रहा हो कि उनके "वक्तव्य" का अर्थ उनके रवैये या उनकी भाषामे कोई परिवर्तन है, तो यह उसका भ्रम ही था। इन दोनोसे ज्यादा बहादुर और सच्चे लोग मेरे देखनेमे कभी नही आये। मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि ये दोनो भाई बाहर-भीतर हर तरफसे शालीन और ईमानदार है। लेकिन मै यह भी स्वीकार करता हूँ कि वे कठोर भाषाका प्रयोग कर सकते है, और इसका प्रयोग करना और खरी बात कहना उन्हे बहुत प्रिय है। (श्रोताओमे दबी हँसीकी आवाज) वे दोनो खुद बहादुर और शक्तिवान है और अपने श्रोताओमे भी अपनी थोडी-बहुत बहादुरी और शक्ति पैदा करनेकी उन्होने सफल कोशिश की है। लेकिन अपने अनुयायियोमे अपनी जैसी शक्ति और बहादुरीकी भावना उत्पन्न करनेके साथ-साथ ही उन्होने अपने अनोखे ढगसे अपनी शक्ति-भर खुदको अनुशासित भी किया है। मेरा दृढमत है कि इन दोनो भाइयोने समस्त भारतमे अहिसाका वातावरण बनाये रखनेके लिए जितना प्रयास किया है उतना मुसलमानोमे अन्य किसीने भी नही किया है, और इसीलिए अगर मै सरकारपर यह आरोप लगाऊँ कि मौलाना मुहम्मद अलीको गिरफ्तार करके उसने खिलाफतको ही गिरफ्तार किया है या करनेकी कोशिश की है तो उसे इसमे आश्चर्य नही होना चाहिए।

वैसे तो सरकार खुद ही शक्तिशाली है, फिर भी अगर वह चाहती तो अलीबन्धुओ-को और मुझे उपद्रवग्रस्त क्षेत्रमे जानेका न्यौता दे सकती थी, कि हम उस उपद्रवग्रस्त क्षेत्रमे शान्ति-सुव्यवस्था स्थापित करे। मुझे विश्वास है कि इस तरह बहुत-से निर्दोष लोगोकी जान बच गई होती। मुझे विश्वास है कि बहुतसे हिन्दू परिवारोको बरबादीसे बचाया जा सकता था। मुझे माफ किया जाये, लेकिन मै सरकारपर फिर आरोप लगाता हूँ कि वह लोगोको हिसाके लिए भडकाना चाहती थी। जिस प्रकारकी शासन-पद्धतिके अन्तर्गत हमपर शासन किया जा रहा है उसमे शक्तिशाली, बहादुर और सच्चे आदमियोके लिए कोई जगह नही है। सरकारके पास ऐसे आदमियोके लिए अगर कही कोई जगह है तो वह जेल ही है।

मलाबारमे जिन लोगोको इतना अधिक दु ख भोगना पडा है, मेरा हृदय उनके लिए रोता है। मै जानता हूँ कि एक जमानेसे हमारे मोपला भाई अनुशासनविहीन जीवनके आदी रहे है, और इसलिए उनपर पागलपन सवार हो गया है। मै जानता हूँ कि उन्होने खिलाफत और अपने देशके प्रति एक भयकर अपराध किया है। समस्त भारतके ऊपर आज इस बातकी जिम्मेदारी है कि वह गम्भीरसे-गम्भीर उत्तेजनाके बावजूद अहिसा बरते। हिन्दू परिवारोकी जो तबाही हुई है उससे मै साफ देखता हूँ कि अहिसात्मक असहयोगका कल्याणकारी सन्देश उस क्षेत्रमे मोपला परिवारोतक नही पहुँच सका था। और मेरे पास ऐसे प्रमाण है, जिनपर सन्देह करनेका कोई कारण नही है, कि जिन भागोमे हमारे मोपला देशभाइयोने पागलपन दिखाया, वहाँ असहयोग-

की भावना नही पहुँच पाई थी। मै जानता हूँ कि असहयोगियोको जानबूझकर उन भागोमे अधिकारियोने नही जाने दिया। किन्तु मै आशा करता हूँ कि मेरे हिन्दू देश-भाई अपना मानसिक सन्तुलन नही खोयेगे। यद्यपि मै यह माननेको तैयार नही हूँ, लेकिन अगर यह मान भी लिया जाये कि सरकारी सूत्रोसे जबरिया धर्म-परिवर्तनकी जो कहानियाँ हमारे कानोतक पहुँची है वे सब सही है, तो भी इस श्रोता-समुदायमे जो हिन्दू मौजूद है, मै उनसे यह विश्वास करनेका अनुरोध करूँगा कि इस बातसे ही हिन्दू-मुस्लिम एकताके सिद्धान्तके प्रति हमारी आस्था भग नही हो जानी चाहिए। हमें यह अपेक्षा नही करनी चाहिए कि सभी हिन्दू और सभी मुसलमान एकाएक इस सिद्धान्तके कट्टर अनुयायी हो जायेगे। मेरे जाननेमे एक भी ऐसा समझदार मुसलमान नही है जो छिपे तौरपर या खुले आम जबरिया धर्म-परिवर्तनकी इन घटनाओको ठीक बताता हो, और हमे अपने इन भाइयोके भविष्यके प्रति भी कोई चिन्ता करनेकी जरूरत नही है।

शास्त्रोंका जो अध्ययन मैने किया है, उससे मेरी पक्की धारणा बनी है कि जिस व्यक्तिको बल-प्रयोग द्वारा कोई काम करनेके लिए विवश किया गया हो, उसे प्रायश्चित्त करनेकी जरूरत नही है। हमारे मित्र श्री याकूब हसनने तमिल जनताको बताया है कि ये लोग जिनका जबरन धर्म परिवर्तन किया गया है, इस्लाम-धर्ममे प्रविष्ट नही किये जा सकते। एक सच्चे हिन्दूके नाते, एक ऐसे हिन्दूके नाते जो कोई बात कहते समय अपनी जिम्मेदारी पूरी तरह जानता है, मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि उनमे से एक भी हिन्दू ऐसा नही है, जिसने हिन्दू-समाजमे रहनेका अधिकार खो दिया हो। मुझे पता है कि विपत्ति-ग्रस्त हिन्दू घरोको सहायता पहुँचानेवाले काग्रेस और खिलाफतके कार्यकर्त्ताओके रास्तेमे सरकार हर प्रकारकी बाधा खडी कर रही है, और इसके साथ ही मुझे बताया गया है कि सरकार स्वय इन लोगोके लिए जो भूख-पीडित है, कुछ नही कर रही ह। सरकार हमे अनुमति दे या न दे, मुझे इसमे सन्देह नही कि हमारा स्पष्ट कर्त्तव्य है कि जितना पैसा हम इकट्ठा कर सके उतना पैसा इन कष्ट-पीडितोके लिए इकट्ठा करे, और ऐसी व्यवस्था करे कि उन्हे जिन चीजो-की जरूरत है, वे उन्हे मिले। काग्रेस कमेटीने इन कष्ट-पीडितोकी मददके लिए अमुक धनराशि इस निमित्त देना निश्चित किया है और मै जानता हूँ कि खिलाफत समिति भी एक अमुक राशि देनेकी कोशिश कर रही है। किन्तु मै मद्रास अहातेके मुसलमान देशभाइयोसे कहूँगा कि यदि वे अपने हिन्दू-भाइयोकी सहायताके लिए प्रत्येक घरसे पाई-पाई भी इकट्ठा करे तो यह एक बहुत ही उदारताका काम होगा।

मै जानता हूँ कि आज यह अहाता भारत-भरमे शायद सबसे ज्यादा सकट-ग्रस्त अहाता है। हम अभीतक पूरी तरह नही जानते कि इस क्षेत्रमें जनताकी प्रबल और उठती हुई भावनाओको दबानेके लिए सरकार क्या कदम उठा रही है। आज सुबह मुझे दी गई इस सूचनापर अविश्वास करनेका मेरे पास कोई कारण नही है कि मलाबारमे ठहरे बहुए बहुत-से नौजवानोको इस कारण अपमानित किया गया कि वे खद्दरकी टोपी और सदरी पहने थे। मुझे मालूम हुआ है कि भारतमे शान्ति-रक्षाके इन ठेकेदारोने खद्दरकी शुद्ध सदरियोको फाड-फूड डाला और उन्हे जलाकर राख

कर दिया। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि मलाबारके सरकारी अधिकारी पजाबके अधिकारियोसे आगे भले न बढ पाये हो, लेकिन अपमानित करनेके नये-नये तरीके उन्होने जरूर ईजाद किये है। आन्ध्र प्रदेशमे नये सुधारके अनुसार बने मन्त्रिमण्डलके सदस्य भी जनतापर लाल-पीले हो रहे है।

उन्होने जनताकी अनिच्छाके बावजूद उसके ऊपर एक नगरपालिका थोप दी है। आन्ध्र देशके एक दूसरे भागमे व्यापक विरोधके बावजूद उन्होने जबरन चराई-कर वसूलनेकी कोशिश की है। और मेरी जानकारीके अनुसार इन मन्त्रियोके एक फतवेके अधीन निर्दोष गायोको उनके बछडोसे अलग करके काजीहाउसोमे डाल दिया गया है, जहाँ उन्हे खाने-पीनेके लिए घास और पानी भी नही मिलता। तो इन दमनकारी कार्यवाहियोके मुकाबले जिनमे सिर्फ अग्रेज प्रशासकोका ही नही, बल्कि तथा-कथित उत्तरदायी मन्त्रियोका भी हाथ है, क्या हम हिंसासे उत्तर दे? हम निश्चित तौरपर जानते है कि उसका परिणाम क्या होगा। हम जानते है कि जिस देशकी जनताने हिंसा न करनेकी शपथ ली हो, उस देशकी जनता द्वारा हिंसा करनेका परिणाम निश्चित विनाश है। यदि आप मौलाना मुहम्मद अलीको जेलसे रिहा कराना चाहते है, यदि आप उन निर्दोष गायोको मुक्त कराना चाहते है, यदि आप चाहते है कि मलाबारमे हमारे देशभाइयोको जिस तरह कानून, व्यवस्था और शान्तिके नामपर अपमान मिल रहा है, उससे हम बचे, यदि आप चाहते है कि चिरला-पेरलामे हमारे साहसी देशभाइयोपर जो दबाव डाला जा रहा है, उसका प्रतिरोध करे, तो आपके सामने एक ही रास्ता है, और वह यह कि आप अहिंसाका पूरा-पूरा पालन करे। राष्ट्रीय स्वाभिमानका तकाजा है कि मौलाना मुहम्मद अलीको और इस सरकार द्वारा नाजायज तौरपर बन्द किये अन्य सभी लोगोको भी रिहा करानेके लिए एकमात्र तरीका स्वराज्यकी स्थापना है, और स्वराज्यमे इस देशकी ससदका सर्वप्रथम कार्य यह हो कि वह समुचित आदर और सम्मानके साथ इन निर्दोष कैदियोकी रिहाईके लिए कानून पास करे। हमे इस सरकारसे किसी रियायतकी माँग नही करनी है, और न उसकी हमे अपेक्षा ही करनी चाहिए। हमे चाहिए कि हम इस सरकारको चुनौती दे दे कि वह हदसे-हद जो करना चाहती है करे, और हालाँकि सरकारको अन्तमे दृढ-सकल्प लोगोकी इच्छाके सामने झुकना ही होगा, लेकिन हमे समझ रखना चाहिए कि इससे पहले कि वह झुके, वह हमारी चुनौतीको स्वीकार करेगी, और उसका वैसा ही जवाब देगी जिसकी अपेक्षा एक निरकुश और शक्तिमदमे चूर सरकारसे की जाती है।

लेकिन मै चाहता हूँ कि आप अपने मनको टटोल कर देखे। इसी वर्ष स्वराज्य-प्राप्तिके लिए हमे क्या करना है? अपने देशभाइयोके सामने रखनेको मेरे पास अहिंसा, हिन्दू-मुस्लिम एकता और स्वदेशीके सुपरीक्षित कार्यक्रमके सिवा दूसरा कोई कार्यक्रम नही है। हमारी अहिंसा और हिन्दू-मुस्लिम एकताके प्रति हमारी लगनकी अभिव्यक्ति स्वदेशीके जरिये होनी चाहिए। इसीलिए इस सभामे इतने कम लोगोको स्वदेशी वस्त्र पहने देखकर मुझे दुःख होता है। और जब मै एक ओर बेगम मुहम्मद अली साहिबाको देखता हूँ और दूसरी ओर अपने सामने बैठी बहनोको देखता हूँ

तो मेरा दिल टूट जाता है। बेगम साहिवाका लालन-पालन भी उतने ही कोमल ढगसे हुआ है जितने कोमल ढगसे मेरी इन वहनोका। लेकिन इसके बावजूद वे भारी खद्दर धारण करनेमे लज्जा नही, बल्कि गर्वका अनुभव करती है। और मेरी प्यारी वहनो, यदि आपने मेरी बाते ध्यानसे सुनी है तो मुझे आशा है कि आप कलसे अपना मन वदल लेगी। और विदेशी रेशमी वस्त्र और विदेशी साज-सज्जाको फेककर शुद्ध तथा पवित्र खद्दर ही धारण करने लगेगी। और जहाँतक पुरुषोकी वात है, मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना शौकत अली, दोनो भाई, भले ही पसीनेसे लथपथ हो जाये, किन्तु दिन-रात खद्दरके ही कपडे पहने रहते है। मौलाना शौकत अलीके लिए तो और भी परेशानी है, क्योकि वे डील-डौलमे अपने भाईसे ज्यादा मोटे और भारी-भरकम है। इसलिए फिर जब मै एक ओर इन दोनो भाइयोके बारेमे सोचता हूँ और दूसरी ओर इस विशाल श्रोता-समुदायपर नजर डालता हूँ तो मेरा दिल उसी तरह टूट जाता है। यहाँ आप लोग जैसी भावनाका प्रदर्शन कर रहे है, उस भावनासे तो स्वराज्य नही मिल सकता। देश आपसे अपेक्षा करता है कि आप अपने विदेशी और सुन्दर बारीक वस्त्र छोड दे, विदेशी कपडेसे बनी अपनी टोपियाँ और विदेशी सूतसे वनी बारीक धोतियाँ भी छोड दे। देश प्रत्येक मर्द, औरत और बच्चेसे, यह अपेक्षा रखता है कि उसे जितना समय मिले, उसमे वह सूत काते। जबतक चरखेका शान्ति-पूर्ण और पवित्र सन्देश भारतके प्रत्येक घरमे नही पहुँच जाता तबतक अहिसात्मक तरीकोसे स्वराज्य नही प्राप्त किया जा सकता।

इस जगह सभाको दस मिनटके लिए स्थगित कर दिया गया ताकि मुसलमान श्रोतागण शामकी नमाज पढ सके। इस बीच सभामें पूरी शान्ति वरती गई। नमाजके वाद महात्माजीने अपना भाषण जारी करते हुए कहा

मेरे लिए चरखा प्राचीन समृद्धिकी पुनर्स्थापना और आत्म-विश्वासका प्रतीक है। चरखा इस वातकी सबसे खरी कसौटी है कि हमने अहिंसाकी भावनाको कहाँतक आत्मसात् किया है। चरखा एक ऐसी चीज है जो हिन्दू और मुसलमानोको ही नही, वल्कि भारतमे रहनेवाले अन्य धर्मावलम्बियोको भी एक सूत्रमे बाँध देगा। चरखा भारतीय नारीके सतीत्वका प्रतीक है। मै इस बातकी साक्षी देता हूँ कि चरखेके अभावमे हमारी हजारो गरीव बहने लज्जा और पतनका जीवन अपनानेको विवश है। चरखा विधवा नारीका सखा है। और यह चरखा ही है जिससे भारतके लाखो ग्रामवासियोके अपर्याप्त साधनोकी पूर्ति होती थी। चरखा न जाने कितने लोगोकी आत्मशुद्धिमे सहायक हुआ है। और हमारे घरोमे चरखेका व्यापक रूपसे अपनाया जाना मेरी दृष्टिमे इस बातका निश्चित द्योतक होगा कि हमने अब दिमागको ही सब-कुछ मान लेना वन्द कर दिया है। इसलिए मेरे लिए चरखा इस वातका द्योतक है कि जो लोग चरखा चलाते है वे शारीरिक श्रमकी सर्वोच्चताको स्वीकार करते है। हमने अछूत मानकर अभीतक जिनका तिरस्कार करनेका पाप किया है, चरखा उनके लिए सान्त्वनाका स्रोत है। चरखा ही वह चीज है जिसे भारतमे कही भी पतनके गर्तमे पडी वहने रोजी कमानेके एक सम्मान-जनक साधनके रूपमे अपना सकती है। और

जब चरखा हमारे देशके घर-घरमे अपनी पक्की जगह बना लेगा तभी भारतके लिए व्यापक पैमानेपर सविनय अवज्ञा आन्दोलन प्रारम्भ करना सम्भव होगा। जब हमारा खून क्रोधसे उबल रहा हो, और जब हम उत्तेजित हो उस समय देशमे कानूनकी अवज्ञाका कोई आन्दोलन सविनय तो हो ही नही सकता। अगर हम इसी वर्ष मुक्ति पानेके उद्देश्यसे सारे भारतमे अहिंसाकी भावना भरना चाहते है तो चरखेके अलावा हमारी शुद्धिका और कोई उपाय नही है। आपको अपना तन ढँकनेके लिए बम्बई और अहमदाबादकी मिलोपर निर्भर नही रहना चाहिए, बल्कि आपमे इतनी क्षमता, इतना आत्मसम्मान होना चाहिए कि आप अपने पवित्र हाथोसे तैयार किये गये वस्त्रसे ही अपना तन ढँकनेपर आग्रह रखे। लेकिन मै आशा करता हूँ कि इस श्रोतासमूहमे से कोई भी मेरी बातोकी आड लेकर अपनी कमजोरी नही छिपायेगा, और न इनका प्रयोग श्रोताओको मै जिस तरह विदेशी वस्त्र पहने देख रहा हूँ, उसी तरह विदेशी वस्त्र पहनना जारी रखनेके लिए करेगा। इसके विपरीत, अगर मेरी ही तरह आप भी ऐसा महसूस करते हो कि हमने पिछले दिसम्बर महीनेमे जो सकल्प किया उसे पूरा करनेको हम एक पवित्र कर्त्तव्य-बन्धनसे बँधे हुए है तो आप ध्यान रखेगे कि जबतक आप अपना पसीना बहाकर अपने लिए कपडा तैयार नही करते तबतक आप चैन नही लेगे, भले ही तबतक आपको मद्रासकी सडकोपर लँगोटी पहनकर ही क्यो न चलना पडे। अलीबन्धु आपसे हडतालकी अपेक्षा नही करते। वे यह भी नही चाहते कि आप सार्वजनिक सभाओका आयोजन करके प्रदर्शन करे। वे आपसे जो चाहते है वह इतना ही कि आप एक निश्चित ढगसे अपनी वीरता और उत्साह, निर्भीकता और सत्य-परायणता तथा अहिंसाका परिचय दे। वे चाहते है कि उनकी बात सुननेके लिए श्रोतासमूहमे शामिल होनेवाले स्कूली लडकोमे अगर उनके प्रति तनिक भी भाव और सम्मान हो तो वे उनका अनुरोध स्वीकार करे और उस सरकारकी स्कूलोमे जाना बन्द कर दे जिसे उखाड फेकनेके लिए वे कृतसकल्प है। वे चाहते है कि जो कमजोर दिल खिताबयाफ्ता लोग, कौसिलोके सदस्य लोग और वकील असहयोगमे विश्वास तो रखते है लेकिन उनके पास जो-कुछ है उसे छोडनेका साहस नही रखते, वे अब उनके आवाहनका उत्तर दे और बहादुरीके साथ उत्तर दें।

लेकिन ये खास वर्ग अपने कर्त्तव्यका अनुभव करे या नही, या अपने कर्त्तव्यका अनुभव करके वे अवसरकी माँगके अनुकूल आचरण करे या नही, लेकिन यहाँ एकत्र हुए हम लोगोके लिए स्वदेशीका सन्देश अस्वीकार कर देनेका कोई कारण नही है। हम स्वराज्य कुछ खास वर्गोके लिए नही, बल्कि आम जनताके लिए चाहते है, जिसमे अस्पृश्य तथा देशके दीनसे-दीन स्त्री-पुरुष भी शामिल है। ईश्वरकी कृपा है कि हमारी सेना ऐसी है जिसमे स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढे, कोढी-रुग्ण सभीको विशेष सुविधा प्राप्त स्थितिवाले लोगोके साथ-साथ उनके जैसा ही सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त है। कारण, क्या हमारा यह दावा नही है, क्या हमने हजारो मचोपर से यह नही कहा है कि वर्तमान सरकार शैतानकी सरकार है? और क्या हम यह दावा नही करते कि हम एक असुर-राज्यके स्थानपर राम-राज्य स्थापित करनेका प्रयत्न कर रहे है? और ईश्वरके राज्यमे क्या हममे से छोटेसे-छोटेको बडेसे-बडेकी बराबरीका दर्जा प्राप्त नही है?

इस लहराते सागरके तटपर ईश्वरके नामपर मैने कई बार कहा है कि तमिल और तेलुगु लोगोकी धार्मिक प्रवृत्तिमे मेरा निश्चित विश्वास है क्योकि दक्षिण आफ्रिकामे उनके साथ खाने-पीने, सोने-बैठने और कष्ट सहनेका जो सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ उसमे मैने ऐसा ही देखा। मै आशा करता हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि भावी इतिहासकारोको ऐसा न लिखना पडे कि द्रविड देशके लोग बाते तो ईश्वरके राज्यकी करते थे, लेकिन चल रहे थे शैतान-राज्यवाले तौर-तरीकोपर। हम ऐसा न करे जिससे हमारे विरोधियोका यह आरोप सही सिद्ध हो जाये कि अहिंसा और सत्यकी दुहाई देते हुए हम कई बार हिंसा और असत्यका आचरण करते है। जैसा कि तिलक महाराजने कहा है, स्वराज्य हमारा पुनीत और जन्मसिद्ध अधिकार हे, खिलाफत हमारे मुसलमान देश भाइयोके लिए एक पवित्र थाती है, और पजाबके साथ किये गये अन्यायका परिशोध करना हमारा पावन कर्त्तव्य है। अब हम ऐसा न करे कि जिस सिद्धान्तको हमने पिछले वर्ष दो-तीन बार अपने धर्मकी तरह स्वीकार किया उसके साथ दगा करके हम अपने जन्मसिद्ध अधिकार, अपने धर्म और कर्त्तव्यसे विमुख हो जाये। हमने अपने सामने एक मानदण्ड रखा है और हमे उसपर दृढ रहकर अपने-आपको उसके योग्य सिद्ध करना है। अपने स्वीकृत सिद्धान्तके साथ दगा करके हम भावी पीढियोकी भर्त्सनाके भागी न बने।

अगले कुछ महीनोमे हमे अवश्य ही बहुत उथल-पुथल, कष्ट, कारावास और ऐसी ही बहुत-सी अन्य बातोका भी सामना करना पडेगा। सारी दुनियामे प्रभातके पहले अन्धेरा बहुत घना होता हे, और मै चाहता हूँ, आप अपनी आस्थाकी आँखोसे प्रकाशकी उन किरणोको देखे जो हमारे देशपर छाये इस घने अन्धकारको चीर कर आ रही है। और मै इस महान् प्रान्तके नारी-पुरुष, सभीसे कहता हूँ कि आप सब अपने दायित्वका निर्वाह ऐसी ईमानदारीके साथ करे कि भावी पीढियाँ कह सके कि मद्रास प्रान्त अपना कर्त्तव्य पूरा करनेमे किसी भी प्रान्तसे पीछे नही था। मै ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह हम सबको शक्ति और साहस दे, एक निश्चित सकल्प दे, जिससे हम अपने लक्ष्यतक पहुँच सके।

बेगम साहिबा आपसे दो शब्द कहनेवाली है। कृपया उनकी बातोको पूरे आदर और ध्यानसे सुनियेगा। उनके बाद मौलाना आजाद सोबानी बोलेगे। वे एक बहुत बडे मुल्ला है। जब केन्द्रीय खिलाफत समितिने, गत सितम्बर माससे बहुत पहले, असहयोग करनेका फैमला अन्तिम रूपसे किया था, तब खिलाफत समितिने खिलाफतके सिद्धान्तका प्रतिपादन करनेके लिए उन्हीको चुना था। इसलिए मुझे भरोसा है कि जितने धैर्यके साथ आपने मेरी बात सुनी है, उतने ही धैर्यके साथ उनकी बात भी सुनेगे। अन्तमे आपसे मै अनुरोध करूँगा कि आप सब किसी प्रकारकी नारेबाजी या प्रदर्शन आदि न करे — सिर्फ इसी सभामे नही, बल्कि सभी सभाओमे। अहिंसाके नियमका तकाजा है कि हमे निरर्थक प्रदर्शनो, चीख-पुकार और हाथ-पैर आदि पटककर अपना खून नही गर्म करना चाहिए। मै अपने विस्तृत अनुभवके आधारपर यह कह रहा हूँ कि जब सभी लोग बातचीत कर रहे हो और शोर-गुल मचा रहे हो — भले ही वे ऐसा स्नेह-वश ही क्यो न कर रहे हो — तब सदा शान्ति बनाये रखना असम्भव हो

जाता है। मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि यह जानते हुए भी कि हमारे विरोधी क्या-कुछ कर रहे हैं, हमारे वे देशभाई जो हमारे खिलाफ खडे हैं वे क्या कर रहे हैं, आप लोग उनके साथ भी सम्मान और सहिष्णुताका बरताव करे। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि विनम्रता और प्रेमसे हमारे बहुत-से ऐसे शत्रु हमारे मित्र बन जायेंगे, जो आजतक हमारे खिलाफ लडते रहे हैं। जैसे-जैसे हम आगे बढेंगे, हमारे सामने अपने विरोधियोके लेखो, भाषणो और कार्योसे उत्तेजित हो उठनेके बहुत-से मौके आयेंगे। वैसी हालतमे मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि उनकी इस बुराईके उत्तरमे — अगर हम उसे बुराई मानते हो तो — आप भी वैसी ही बुराईका आचरण न करे। वे तो मेरी और आपकी तरह अहिसाके किसी सिद्धान्तसे बँधे हुए नही है, और इसलिए उनके किसी कामपर हमे आश्चर्य नही होना चाहिए, क्रोध नही करना चाहिए। हमे अपने आचार-व्यवहारकी ही चिन्ता करनी चाहिए। फिर तो हम भविष्यके बारेमे भी पूरी तरह आश्वस्त हो सकते हैं। आपने जिस ध्यानसे मेरी बाते सुनी है, उसके लिए आपको हृदयसे धन्यवाद देता हूँ।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, १६–९–१९२१

५४. भाषण: स्त्रियोंकी सभा, मद्रासमे

१६ सितम्बर, १९२१

गत शुक्रवारको तीसरे पहर पौने पॉच बजे सौन्दर्य महलमें सार्वजनिक मित्र-मण्डलके तत्वावधानमें बुलाई गई एक सार्वजनिक सभामे, जो केवल स्त्रियोके लिए थी, महात्मा गाधीने भाषण दिया। . . .

. . महात्माजी गुजरातीमे बोले। उन्होने स्वदेशी वस्त्र धारण करनेकी वाछनीयता और जरूरत बताते हुए इस बातपर दु ख प्रकट किया कि सभी उपस्थित स्त्रियॉ विदेशी कपडे पहने हुए हैं। उन्होंने कहा, यदि आप लोगोको जापान या इग्लैंडमे पकाई गई रोटियॉ दी जायें तो वे चाहे कितनी ही स्वादिष्ट क्यो न हो, आप कदापि नही खायेंगी। इसी तरह आपको विदेशी कपडे और तडक-भड़कवाली चीजे कतई इस्तेमाल न करना अपना धर्म मान लेना चाहिए, क्योकि ये हमारे राष्ट्रीय पतनके साधन-स्वरूप है। आप लोग अपने विदेशी कपडे जला डालिए और अपने हाथके कते सूतसे हाथ-करघोपर बुने स्वदेशी कपडे ही पहननेका दृढ सकल्प कीजिए। इतना कह चुकनेके बाद गाधीजीने चरखेकी उपयोगिता समझाई और कहा कि यह विधवाओके जीवनका सहारा है, किसी भी असहाय नारीका साथी है और अब तो प्रत्येक आत्म-सम्मानिनी भारतीय महिलाको चाहिए कि वह चरखेको अपना प्रिय मित्र समझे। चरखा एक ऐसा यन्त्र है जिसे चलानेके लिए ज्यादा ताकत या विशेष हुनरकी जरूरत नहीं होती। एक गरीब कमजोर बालक भी इसे चला सकता है।

श्रीमती मुहम्मद अलीका परिचय कराते हुए गाधीजीने कहा कि स्त्रियोको बेगम साहिबाके उदाहरणका अनुकरण करना चाहिए। इनके पतिको हाल ही में सरकारने गिरफ्तार कर लिया है परन्तु इन्होने जरा भी भय या बेचैनी नहीं दिखाई। बेगम साहिबा खद्दर पहने हुए हैं। परन्तु खद्दरका जितना बोझ इनके शरीरपर है उतना आप लोगोमें से किसीको नहीं धारण करना होगा। स्त्रियोको सुन्दर चीजें बहुत अच्छी लगती हैं परन्तु उन्हे हमेशा यह याद रखना चाहिए कि सुन्दरता बाहरकी चीज नहीं हुआ करती। कोई स्त्री यदि नेक और कर्त्तव्यपरायण है तो वह सुन्दर है अन्यथा असुन्दर है। यदि आपमें जरा भी आत्म-सम्मानकी भावना है और यदि आप अपने बच्चोका और राष्ट्रका सम्मान बनाये रखना चाहती है, तो आपको तडक-भडकके प्रति अपनी रुचि अवश्य त्यागनी होगी, और सादा और सयत जीवन बिताना होगा। सीता-जीको जब अशोक वाटिकामें बन्दीके रूपमें रखा गया था तब रावणने उनके सामने हर तरहकी सुन्दर वस्तुएँ प्रस्तुत की थीं। परन्तु उन्होने तिरस्कारपूर्वक किसी भी चीजको स्वीकार करनेसे इनकार कर दिया था और फल खाकर तथा वल्कल-वसन पहनकर रहना अधिक पसन्द किया। तो जबतक भारत गुलामीकी जजीरोमें जकडा हुआ है और जबतक धर्मराज्यकी स्थापना नहीं होती, तबतक भारतके प्रत्येक स्त्री-पुरुषको ऐसे विदेशी वस्त्रोको घृणापूर्ण नजरसे देखना चाहिए मानो वे वास्तवमें एक अस्पृश्य वस्तु हैं।

अपने भाषणका अन्त करते हुए उन्होने उत्तर भारतीय महिलाओसे कहा कि वे अपनी मद्रासी बहनोके साथ स्वच्छन्दतापूर्वक हेलमेल पैदा करे और अपने बच्चोका पालन-पोषण ठीक तरहसे करे। वे अपने बच्चोमें वीरता और साहसके भाव भरे।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-९-१९२१

५५. भाषण: कपड़ा व्यापारियोकी सभा, मद्रासमे

१६ सितम्बर, १९२१

कल शामको मद्रासके कपडा व्यापारी सघकी एक महत्वपूर्ण आम सभा, सघके भवनमें, महात्मा गाधीके साथ विदेशी कपडेके बहिष्कारके सम्बन्धमें बातचीत करनेके लिए हुई। सभामें सघके सदस्य काफी बडी सख्यामें उपस्थित थे। मौलाना आजाद सोब्रानी, सर्वश्री याकूब हसन, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी और टी० एस० एस० राजन् भी सभामें उपस्थित थे। भाषण अग्रेजीमें हुए और श्री राजगोपालाचारीने तमिलमें उनका अनुवाद कर सुनाया।

सघकी ओरसे श्री रामजी कल्याणजीने महात्माजीका स्वागत किया। गाधीजीने जवाबमें कहा:—

सज्जनो,

आज आप लोगोसे यहाँ मिलकर मुझे बहुत खुशी हुई है। सौभाग्यसे कपडा-व्यापारियोसे मेरे बहुत ही मधुर सम्बन्ध रहे हैं। जैसा कि आप जानते हैं, बम्बई और कलकत्तामे उनके साथ मेरी कई बैठके हुई है और भारतके विभिन्न भागोमे दौरा करते समय मैंने सब जगह व्यापारी-समाजसे मिलनका विशेप ध्यान रखा है। आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि इन सब स्थानोमे इस महान् स्वदेशी आन्दोलनके प्रति उनमे पूर्ण सहानुभूति थी, जो कि उचित ही है। आपको यह जानकर भी खुशी होगी कि कलकत्ताको छोडकर अन्य शहरोके व्यापारी बहुत बडी सख्यामे अब भविष्यमे विदेशी-वस्त्रका आयात बन्द करनेको राजी हो गये है। मुझे मालूम हे कि कलकत्ताके व्यापारियोको कुछ कठिनाइयाँ अनुभव हुई है। उन्होने यह सुझाव रखा है कि वे सिर्फ ३१ दिसम्बरतक ही विदेशी कपडेका आयात बन्द रखेगे और आपसमे अपने मौजूदा मालके साथ विदेशी सूतको बेचने या उसकी अदला-बदली करनेकी स्वतन्त्रता उन्हे होगी। मै इस सुझावको स्वीकार नही कर सकता था क्योकि मुझे लगा कि यह तो चालबाजीके सिवाय और कुछ नही है और उनकी बात मानकर मै इन छिपे सौदोमे उन व्यापारियोका एक अनिच्छुक सहायक बनता। इस तरहके आन्दोलनमे, जिसके शुद्ध और धार्मिक होनेका हम दम भरते है, वास्तवमे गोपनीयता या लुक-छिपकर काम करनेके लिए कोई स्थान नही होता। इससे तो कही बेहतर यह होता है कि जो लोग विदेशी कपडेका आयात बन्द नही कर सकते, बजाय इसके कि जाहिरा कुछ कहे और गुप्त रूपसे उसके सर्वथा विपरीत आचरण करे, वे नि सकोच होकर साफ-साफ ऐसा कह दे ओर अपना व्यापार जारी रखे। परन्तु कलकत्ताके व्यापारी मेरी सहानुभूतिके पात्र है क्योकि वे भारत-भरमे सबसे ज्यादा विदेशी वस्त्र आयात करनेवाले लोग है। परन्तु आपको यह सुनकर खुशी होगी कि वे भी अब पहलेसे अधिक देशभक्तिपूर्ण रवैया अख्तियार कर रहे है। श्री जमनालालजीने, जो कलकत्तामे उन बडे-बडे व्यापारियोके साथ बातचीत करनेके लिए खास तौरपर रुके हुए थे, आज मुझे इस आशयका तार भेजा है कि उनमे से कइयोने अब इस मामलेमे, राष्ट्रीय हितचिन्तन और विवेकशीलताका परिचय दिया है। इस प्रकार आप देखेगे कि सारा भारत वास्तवमे स्वदेशी आन्दोलनका पक्ष लेता जा रहा है। और इसलिए इस आन्दोलनमे आपकी सहानुभतिका आश्वासन पाकर मुझे प्रसन्नता हुई, और आपने अपने वक्तव्यमे जो वचन दिया है कि अब आगेसे आप विदेशी कपडेका आयात नही करेगे, यदि आप केवल इसीका पालन करे तो हम जिस उद्देश्यको पूरा करना चाहते है, वह बहुत हदतक पूरा हुआ ही समझिए। मै जानता हूँ कि सारे भारतमे हमारे पास लगभग ४० करोडके मूल्यका कपडा बिकनेके लिए उपलब्ध है। इतनी बडी आबादीवाले भारतमे ४० करोड रुपयेकी कीमतका विदेशी कपडा खप जानेमे मै कोई कठिनाई नही देखता, परन्तु इस मतसे मै कदापि सहमत नही हो सकता कि जो माल आपके पास अभी पडा हुआ है वह साराका-सारा भारतके बाहर नही जा सकता। जैसा कि आप जानते है, बहुत-सा विदेशी कपडा पुन निर्यात किये जानेके लिए ही मँगाया जाता है। मुझे मालूम

है कि कपडेकी कुछ ऐसी किस्में होती हैं जो भारतसे बाहर थोडे बहुत मुनाफेपर भी नहीं बेची जा सकती। परन्तु फिर भी नि सन्देह मालका बहुत बडा भाग ऐसा है जो जिस तरह भारतमें बेचा जा सकता है उसी तरह भारतके बाहर भी। मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि आप लोग सोचकर कोई ऐसा रास्ता निकालिए कि जिससे कमसे-कम थोडा-बहुत विलायती माल बाहर भेज दें। उदाहरणके तौरपर आपके पास जो भी विदेशी सूत है वह सबका-सब भारतसे बाहर भेज देनेमें मैं कोई कठिनाई नहीं देखता। परन्तु यदि मेरी तरह आप हमारी स्थितिपर उदारताके साथ और राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे विचार करें तो मैं अभी एक और सुझाव देना चाहूँगा। परन्तु मैं जानता हूँ कि मेरे सुझावको अमलमें लानेसे पहले आपको भी मेरी ही तरह उसमें गहरा विश्वास रखना होगा। यदि भारत-भरके सारे व्यापारी देशके प्रति सच्चे हों, और स्वराज्य प्राप्तिके लिए अपनी पूरी शक्ति और शानदार योग्यतासे काम लें और यदि वह योग्यता और शक्ति अविलम्ब ही संगठित काममें लगाई जा सके, यदि आपका भी मेरी तरह यह विश्वास हो कि स्वराज्य इसी सालके अन्दर प्राप्त किया जा सकता है, और यदि आप-जैसे समझदार लोग उसे प्राप्त करनेकी दिशामें काम करनेका इरादा रखते हों, तो आप अपना माल जमा भी रख सकते हैं ताकि स्वतन्त्र देशकी केन्द्रीय सरकार अपनी प्रथम संसदके द्वारा उसे ठिकाने लगाये, यदि आप कोई ऐसा निर्णय करें तो आपको श्रेय मिलेगा और देशका भी बडा हित होगा। परन्तु मैं जानता हूँ कि मेरी यह सलाह आदर्श है और इसलिए अननुकरणीय कहकर टाली जा सकती है। लेकिन साथ ही याद रखिये अन्य देशोंने कहीं ज्यादा और बडे काम कर दिखाये हैं। मैं जानता हूँ कि जब अंग्रेजोंसे युद्ध चल रहा था, तब दक्षिण आफ्रिकामें क्या हुआ था। दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए डच लोग बहादुर और ईश्वरसे डरनेवाले लोग थे। उनको अपने देशके भाग्यमें अडिग आस्था थी, अत उन्होंने अपने देशकी आजादीको कायम रखनेके लिए किसी भी कीमतको ज्यादा नहीं माना। परन्तु जैसा कि मैंने कहा है, यदि आप धीरज नहीं रख सकते और यदि आपको ऐसा विश्वास नहीं है कि हम इसी सालके अन्दर स्वराज्य ले सकते हैं, तो आप विदेशी कपडेका आयात सीधे या छिपे तौरपर करना बन्द कर दें, और आपसके सौदे भी न करें। इससे मौजूदा जरूरतें सर्वथा पूरी हो जायेंगी। मैं आपके सामने कुछ गणित-सम्बन्धी समस्याएँ रखना चाहता हूँ। आज आयात करनेवाले लोग वास्तवमें कमीशन एजेंटों या दलालोंके सिवा कुछ नहीं हैं। आपको शायद १०० रु० के कपडे पर ५ रु० मिलते हैं। परन्तु ९५ रुपये तो पूरी तरह आपके मुख्य मालिकोंकी जेबोंमें पहुँच जाते हैं। अब आप कल्पना कीजिए कि भारतमें हमें जिस कपडेकी जरूरत है, आप ही उसके निर्माता हैं। उस दशामें सौके-सौ रुपये भारतमें ही रहेंगे और आप देखेंगे कि फिर भी हमें उस सब कपडेकी जरूरत पडेगी, जिसका अबतक हम बाहरसे आयात करते रहे हैं। प्रतिवर्ष ६० करोड रुपयोंका व्यापार कौन करेगा? यह बतानेकी जरूरत नहीं कि आप लोग ही करेंगे। आप सामर्थ्यवान् हैं। आप आँकडोंका मूल्य जानते हैं। आप अपने देशकी जरूरतसे भी परिचित हैं। तो जब मैं आपको यह सुझाव देता हूँ कि आपको

पूरे स्वदेशी आन्दोलनकी जिम्मेदारी ले लेनी चाहिए तो क्या कोई असम्भव प्रस्ताव आपके समक्ष रखता हूँ ? अपने देशको आप अपने एजेटो या गुमाश्तोसे भर दे, इसके लिए क्या आपमे कोई बहुत विशेष बहादुरीकी जरूरत है ? आप तो सिर्फ चरखे और हाथ-करघे बाँट देंगे और भारतके हजारो लोगोसे सूत इकट्ठा करेंगे तथा बेचेंगे और उस सूतसे भारतके लिए कपडा बुनवायेंगे। देश-भरमे सर्वत्र हाथकी कताई-बुनाईको सुसगठित करना वास्तवमे आपका विशेष अधिकार और कर्त्तव्य है। इसलिए मै आपसे कहूँगा कि देशके भविष्यके बारेमे, और विदेशी-वस्त्रोका पूर्ण बहिष्कार होनेपर भारतमे आयातके भविष्यके विषयमे निराशा महसूस न करे। मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि स्वराज्यमे भारतका भविष्य उज्ज्वलतम होगा। इस बारेमे मुझे जरा भी सन्देह नही कि शीघ्र ही भारतमे बहुत-से लोग इस बातपर हँसेगे कि वे इतनी सरल-सी बातकी खूबी भी नही समझ पाये और बहुत पहले ही उनकी समझमे क्यो नही आया कि यह काम उन्हे कर लेना चाहिए। मै चाहता हूँ कि जिस तरह बम्बई, कलकत्ता और अन्य जगहोमे आपके साथी व्यापारियोने मुझसे प्रश्न किये उसी तरह आप भी अपनी शकाओका समाधान मुझसे माँगे। खुलकर बातचीत करनेसे कठिनाई जितनी ज्यादा सुलझती है उतनी किसी और तरहसे नही। आप सबके आज यहाँ इकट्ठे होने तथा इस सभामे हमे भाषण देनेको आमन्त्रित करनेके लिए मै आभारी हूँ।

इसके बाद एक सामान्य परिसंवाद शुरू हो गया . . प्रत्येक व्यापारीको उसके प्रश्नका उत्तर देते हुए महात्मा गाधी इस रायसे सहमत हुए कि ग्राहकोको पहल करनी चाहिए। उन्होने यह भी कहा कि मेरे कथनमें इस बातका जरा-भी सकेत नही है कि आप अपने किये हुए अनुबन्ध तोड दें। मातृभूमिके हितमे स्वदेशी कार्यक्रमको सफल बनानेके लिए सारे भारतसे सहयोग करना आपका कर्त्तव्य है। मैं चाहता हूँ कि व्यापारी लोग भविष्यमे और विदेशी कपड़ा न मँगायें। उन्होने कहा कि यदि आप जनताकी रुचि बदल सके, जिसकी मुझे आशा है कि आप अवश्य कर सकेगे, तो लोग निश्चय ही आपके पास आयेगे। कपड़ा व्यापारियोको ठोस प्रचार कार्य करनेकी जो सुविधा प्राप्त है वह अन्य किसीको प्राप्त नही है। गाधीजीने व्यापारियोमे प्रचलित उधार-खातेकी प्रथाकी निन्दा करते हुए कहा कि यह प्रथा आपके उद्योग और औद्योगिक नैतिकताके लिए घातक है, और इसलिए उधार-खातेकी प्रथाको, विलायती कपडेके आयातको बन्द करनेकी दिशामें कोई ऐसी बाधा न मानना चाहिए, जो पार नहीं की जा सकती। स्वराज्य मिलना तो निश्चित है और उसके साथ नये आर्थिक नियम अमलमें आयेगे ही। बहिष्कार धीरे-धीरे होना चाहिए, इस सुझावके सम्बन्धमें महात्माजीने कहा कि इसकी पर्याप्त पूर्व-सूचना काफी पहले -- एक साल पूर्व -- दी जा चुकी थी और कोई ईमानदार व्यापारी उधार-प्रथा छोड़नेके बाद आर्थिक कठिनाइयोके उपस्थित होनेका कोई कारण नही पायेगा। महात्माजीने इसका दृष्टान्त दक्षिण आफ्रिकामे श्री काछलियाके मामलेका उल्लेख करके दिया जो पहले बड़े पैमानेपर उधार-खातेपर व्यापार चलाते थे और जब उनके यूरोपीय ग्राहकोने राज-

नैतिक कारणोसे उनके ऊपर अपना हिसाब साफ कर देनेके लिए बहुत दबाव डाला तो उन्होने निडरतापूर्वक अपनी सब सम्पत्ति बेच डाली और अपने महाजनोकी पाई-पाई चुका दी। इसके बाद उन्होने उधार-प्रथाका सहारा न लेते हुए व्यापार शुरू किया और इतने समृद्ध हो गये कि उन्हीं यूरोपीय व्यापारियोको अपना माल उन्हे फिर उधार देनेका प्रलोभन हुआ। यह एक ऐसा दृष्टान्त है जिसका आप अनुकरण करे तो अच्छा होगा। इससे अधिक साहसी व्यापारी आपको नहीं मिलेगा। नि सन्देह व्यक्तिगत कठिनाइयां रहेगी ऐसा मैं अवश्य मानता हूँ, परन्तु स्वराज्यका अर्थ ही बलिदान करना है और एक व्यापारीसे भी अपने धन्धेमें नि स्वार्थ दृष्टिकोणकी आशा की जाती है। अब चूंकि दीपावली आ रही है, आपको तडक-भडक वाले कपडो-की ओर ध्यान नहीं देना चाहिए। तब आपको मालूम होगा कि लोगोकी आस्था बदल चुकी है। दीपावलीका अर्थ अब अधिक आत्म-निषेध और त्याग होगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७–९–१९२१

५६. भाषण : मद्रासके मजदूरोंकी सभामें

१६ सितम्बर, १९२१

महात्मा गाधीने शामको पौने सात बजे मजदूरोकी (जो हडतालपर हैं) एक बडी सभामें भाषण[1] दिया। उन्होने कहा

मित्रो।

मैं यहाँ ठीक साढे छ बजे नही आ सका। मैं अपने व्यापारी मित्रोंसे बात करता रह गया और उन्होने जितना मेरा अन्दाज था उससे अधिक समयतक मुझे व्यस्त रखा। पिछली बार जब मुझे आप लोगोंसे मिलनेका सौभाग्य मिला था, उस समय जो दृश्य मेरे देखनेमे आया था, वह मुझे अच्छी तरह याद है। मैं स्वय एक मजदूर ही हूँ, इस नाते मेरा दिल हमेशा मद्रासके मजदूरोंके कष्ट और दु खमे उनके साथ रहा है। मैं अब बिना किसी औपचारिकताके आज जिस विषयपर मुझे बोलना है उसपर अपना कथन शुरू कर देना चाहता हूँ।

मैं जानता हूँ कि लगभग दस हजार मजदूरोने हडताल की है। मुझे यह देखकर दु ख हो रहा है कि आप परेशानियोंमे घिरे हुए हैं। मुझे इसमे भी दु ख होता है कि आप दो दलोमे बँटे हुए हैं। मुझे इस बातमे और भी ज्यादा दु ख हो रहा है कि दो दल दो दृष्टिकोणोंका प्रतिनिधित्व नही करते वरन् दो विभिन्न जातियोका प्रतिनिधित्व करते हैं। मुझे मालूम हुआ है कि आदि द्रविड लोग, अर्थात् हमारे पचम कहलानेवाले मित्र लोग, एक ओर हैं और अन्य लोग अर्थात् आप, दूसरी ओर हैं। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि इन पचम भाइयोने कामपर जाना शुरू कर दिया है, जब कि

१ गाधीजीके भाषणका तमिल अनुवाद स्वदेशमित्रन्के श्री एम० एस० सुब्रह्मण्यम् अय्यरने किया।

आप लोगोने, जो वहुत वडी सख्यामे है, वैसा नही किया है। और मुझे यह भी वताया गया है कि आपमेसे कुछ लोगोने उन भाइयोपर जो कामपर वापस लौट आये है, जोर-दवाव डाला है। मुझे यह भी ज्ञात हुआ है कि इन दोनो दलोमे वरावर टटे-वखेडे वने ही रहते है। इसलिए मै यहाँ वहुसख्यकोको अल्पसख्यकोपर थोडा-सा भी दवाव न डालनेकी चेतावनी देने आया हूँ। मै मजदूरोको २५ वर्षोसे, वल्कि करीब-करीव ३० वर्षोसे — जानता आया हूं। मैने वडी-वडी हडताले कराई है जिनका असर एक वक्त मे ५०,००० से भी ज्यादा लोगोके ऊपर पडा है। अत मै जानता हूँ कि मजदूरोका नैतिक ह्रास और किसी वातसे इतना नही होता जितना एक भी मजदूरके प्रति वलप्रयोग करनेसे। हममे से सवसे छोटेको भी, सवसे-कम सख्यावालोको भी अपनी स्वतन्त्र इच्छाके अनुसार चलनेका हक जरूर होना चाहिए, भले ही आपको ऐसा लगे कि उसने गलती की है। इसलिए मै आपसे आग्रहपूर्वक कहूँगा कि अपने उन ३,००० भाइयोको कतई मत छेडिए। मै आपसे आग्रह करूँगा कि उनको नीच न समझे। मै यह भी आग्रह करूँगा कि आप उनके प्रति सहृदयता वरते। निश्चय ही आप उनको कभी गालियाँ या वद दुआ न देगे। मै आपसे कहूँगा कि उन्हे नौकरीसे अलग हो जानेको राजी करनेके लिए भी आप उनके पास न जाये। मेरी वातका विश्वास कीजिए कि जव वे देखेगे कि आप उनपर कोई दवाव नही डालते, आप उनके प्रति जरा भी दुर्भाव नही रखते तो वे अपनी खुदकी मर्जीसे आपके समीप आ जायेंगे। आपको यह खयाल भी अपने मनमे नही लाना चाहिए कि वे नीची जातिके है और आप ऊँची जातिवाले है।

मै उन सभी लोगोको जो हिन्दू है, चेतावनी देता हूँ कि हिन्दू-धर्ममे ऊँची जाति और नीची जाति है, ऐसा सोचनेसे बाज आये। हिन्दू-धर्ममे नि सन्देह जाति-प्रथा है किन्तु जाति हमे कर्त्तव्य भावना प्रदान करनेके लिए वनाई गई है, विशेष सुविधाओ और अधिकारोके लिए नही वनाई गई। प्रत्येक जातिका प्रादुर्भाव मानव-जातिकी सेवाके लिए हुआ है। ब्राह्मण अपने ज्ञानसे सेवा करता है, क्षत्रिय रक्षा कर सकनेकी अपनी शक्तिसे, वैश्य अपने वाणिज्यसे, और शूद्र अपने हाथ-परसे। मेरी यह बात सच मानिए कि ईश्वरकी निगाहमे ये सव वरावर है और जो सवसे अच्छी तरह मानवताकी सेवा करता है वही सवसे ज्यादा महान् है। पचम जाति-जैसी कोई चीज हिन्दू-धर्ममे है ही नही। छुआछूतकी भावना ईश्वर और मानवता दोनोके प्रति अपराध है। यह हिन्दू धर्मका कलक है। मेरे साथी मजदूरो, मै आपसे आग्रह करता हूँ कि अपने दिलसे यह भावना निकाल दे कि पचम भाई अछूत या किसी औरसे नीचे है। यदि हम उनके साथ घृणाका व्यवहार न करते, यदि हम उनके साथ बुरा बर्ताव न करते — जैसा कि हमारा कहना है कि जलियाँवाला बागमे हमारे साथ बुरा वर्ताव किया गया — तो स्वराज्य प्राप्त करनेमे कोई कठिनाई न होती। विश्वास कीजिए, जबतक हिन्दू लोग महाप्रयास करके अस्पृश्यताके अभिशापसे मुक्त नही हो जाते तबतक यह दु खी देश कभी भी सुखी नही हो सकेगा। इसलिए हर दृष्टिसे समूचे प्रश्नपर विचार करते हुए मै आपको दृढतापूर्वक यह सलाह देता हूँ कि पचम भाइयोके किसी भी काममे आप दस्तन्दाजी न करे।

मेरी रायमे आपका रास्ता बिलकुल साफ और सीधा है। अगर मालिक लोग आपको फिरसे नौकरीपर लेना चाहते हैं तो आपको यह माँग करनेका हक और विशेष अधिकार है कि उनसे कहे कि या तो आप सबको ले या किसीको भी न लिया जाये। आप जिससे सलाह लेना पसन्द करे उससे लेनेका आपको हक है और मालिक लोग आपको आदेशके रूपमे यह नही कह सकते कि आप बाहरवालोसे सलाह न ले। अपने सघके अध्यक्ष पदके लिए या सभापति पदके लिए आप जिसे चाहे— चाहे वह व्यक्ति आपके सघका सदस्य हो अथवा बाहरवाला हो— उसे चुननेका मौलिक अधिकार रखते है, इस बातको आप दृढतापूर्वक कहे और उसपर आग्रह करे। देशके मामलोकी परिस्थितिका लिहाज रखते हुए आप कामपर वापस जानेकी शर्तें निश्चित करनेका अधिकार रखते हैं। आपको ऐसी मजदूरी या तनख्वाह माँगनेका अधिकार है जो आपको जीवन-यापन करने, अपने बच्चोको शिक्षा देने और अच्छे लोगोकी तरह रहने योग्य बनानेमे सहायक हो। आप उसी स्वच्छ पानी और स्वच्छ वायुके हकदार हैं जिसका उपयोग आपके मालिक करते हैं। आपको हक है कि आप इस बातका आग्रह करे कि आपको अवकाश और मनोरजन पानेका अधिकार है। परन्तु आपको साथ-ही-साथ अपने कर्त्तव्य भी निभाने हैं। आपको अपने मालिकोका काम अच्छे ढगसे और ईमानदारीके साथ करना चाहिए। आपको अपने मालिकोकी सम्पत्तिकी देखभाल इस तरह करनी है जैसे कि वह सम्पत्ति आपकी अपनी ही हो। आपको एक भी कर्मचारीको अपने कामपर न जानेके लिए फुसलाना न चाहिए। आप बिना इजाजत गैरहाजिर न हुआ करे। इन सीधे और सरल अधिकारो और कर्त्तव्योको एक बार समझ लेनेपर अधिकारोपर सदा दृढ रहना, और कर्त्तव्योका पालन करते रहना चाहिए।

इसलिए जो दूसरा प्रश्न उठता है वह यह है कि यदि मालिक लोग आपको आपकी शर्तोंपर नौकरीपर वापस नही लेते तो आपको क्या करना चाहिए। अपने मालिकोके सामने अपनी बात विनयपूर्वक रख चुकनेके पश्चात् उसके बारेमे आगे कुछ न सोचे। परन्तु आपको अपनी आजीविकाके लिए कुछ काम शुरू कर देना चाहिए। इसलिए मैंने अहमदाबादमे मिल-कर्मचारियो और असम-बगाल रेलवे तथा रिवर स्टीम नेवीगेशन कम्पनीके कर्मचारियोको यह सुझाव दिया हे कि हमेशा उनके पास एक अतिरिक्त पेशा होना चाहिए, जिससे वे अपना काम चला सके, और रुई धुनना, चरखेपर सूत कातना, करघोपर बुनाई करना ही एक ऐसा काम है, जिसमे हमारे देशवासी हजारोकी सख्यामे लग सकते हैं और जो काम उपयोगी भी है। ये तीनो काम जितने आसान हैं उतने ही सबके करने योग्य भी हैं। मैं आपको यकीन दिलाता हूँ और आपसे कहता हूँ कि एक अनुभवी कातने-बुननेवालेका आश्वासन मान लें। यदि आप इस काममे मेहनतके साथ कमसे-कम आठ घटे रोज लगायेंगे, तो आपमे से हर व्यक्ति लगभग एक रुपया रोज कमायेगा। कातनेवालेके रूपमे तो आप शायद प्रतिदिन तीन आने ही कमा सकेंगे। परन्तु एक पक्के बुनकर बनकर आप एक रुपया रोज पा सकेंगे। आपकी पत्नियाँ, बहनें, माताएँ, आपके सात-आठ सालके छोटे बच्चे इस तरहके काम द्वारा जीविका कमानेमे आपके सहायक हो सकते हैं। आप जितने ज्यादा लोग

ऐसे कामोमे लगेगे, उतना ही ज्यादा आप कमायेंगे। इसलिए जिन लोगोका परिवार बडा है उनका प्रश्न स्वत सुलझ जाता है और जब आप अपनी स्थितिकी मानमर्यादा समझ जायेंगे और जब आप यह भी समझ लेंगे कि आपके पास निर्वाह कर लेनेके लिए एक अतिरिक्त व्यवसाय है तो आप अपने मालिकोके प्रति अथवा उनके प्रति जो मालिकोके अधीन काम करना पसन्द करते है, किसी प्रकार हिंसात्मक व्यवहार न करेगे। यदि आप मेरी सलाहपर अमल करे तो आप देखेंगे कि आप न केवल आत्मनिर्भर बन जाते हैं बल्कि आपके और मालिकोके बीच सम्बन्ध बहुत स्वस्थ ढगके हो जायेंगे। जब देशमे प्रत्येक मजदूर, स्त्री हो या पुरुष, स्वराज्यके और आत्मशुद्धिके बारेमें सोचेगा, तो मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि मेरी राय मानकर आप स्वराज्य-का दिन नजदीक लायेंगे। यदि आप मुसलमान हैं तो आप देखेंगे कि आप लोग बा-इज्जत अपनी रोजी कमा रहे हैं और इतना ही नही बल्कि आप अत्यन्त ईमानदारीसे इस्लामके प्रति अपना कर्त्तव्य भी निभा रहे हैं।

मैं जानता हूँ कि आरम्भिक चरणोमे यदि आप मेरी सलाह मान भी ले तो आपको शुरू करनेके लिए थोडी पूँजीकी जरूरत होगी, परन्तु मुझे जरा भी सन्देह नही कि आपमे से प्रत्येक ईमानदार काम करनेवालेको एक हाथ करघा, एक चरखा, या एक धुनकी प्राप्त करनेमें कोई कठिनाई नही होगी। आप इसे मानें या न माने, कृपया याद रखिए कि आपके द्वारा की गई कोई भी हिंसा, अथवा किसी प्रकारका उपद्रव आपके अपने ही सिरोंपर दुगुनी ताकतसे लौटेगा। आपके प्रति जनताकी सारी सहानुभूति समाप्त हो जायेगी, और हर आदमी आपके प्रतिकूल होगा। इसलिए आप मिलोके करीब न जानें, और अपने पचम भाइयोसे न भिडनेका निश्चय करे, बल्कि आप चुपचाप अपने आपको कामके लिए सगठित करनेमे जुट जाये। मजदूरोके लिए भीख माँगनेका कोई कारण नही।

अपना कथन समाप्त करनेके पूर्व एक बात और कहना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि आप सब लोग, आपकी पत्नियाँ व बच्चे इस महान राष्ट्रीय आन्दोलनमें, जो देशमे इस कोनेसे उस कोनेतक सर्वत्र फैल रहा है, अपना-अपना कर्त्तव्य निभायेंगे। हमारा देश हमसे जिस बातकी अपेक्षाएँ करता है, वे हममे से हर एकके करने योग्य हैं। मैं चाहूँगा कि आप ईश्वरकी साक्षीमे शपथ ले कि अपने देशकी स्वतन्त्रताके लिए या हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच झगडे निपटानेके लिए हिंसाका सहारा नही लेंगे और ईश्वरको साक्षी करके यह सकल्प करे कि कुछ मोपला देशवासियो द्वारा प्रदर्शित पागलपनके बावजूद हम हिन्दू और मुसलमान हमेशाके लिए एकताकी डोरमें बँधे रहेंगे। आप एक पवित्र शपथ ले कि आगेसे हम कभी विदेशी वस्त्र न तो पहनेंगे और न किसी भी घरेलू कामके लिए इस्तेमाल करेंगे। और हम वही कपडा पहनेंगे जो हाथके कते सूतसे हथकरघेपर बुना गया हो। यदि हमारा यह दावा है कि हम धर्म-युद्धमें सलग्न हैं तो हम मदिरापान अथवा व्यभिचार करके अपने शरीरको अपवित्र नही कर सकते। हम जुआ नही खेलेंगे, हम चोरी नही करेंगे और न हम किसीको धोखा देंगे। मैं निर्भीकतापूर्वक कहता हूँ कि यदि मद्रासकी मिलोके आप १० हजार मजदूर गम्भीरताके साथ यह प्रतिज्ञा करेंगे और उसीके अनुसार चलेंगे, तो आप

अध्यायकी समाप्तिपर देखेंगे कि स्वराज्यकी प्राप्तिमे और खिलाफत तथा पजाब-की समस्याओके हल करानेमे आपका योगदान कम नही रहा है। ईश्वर आप लोगो-को वैसी बुद्धि और साहस दे जिसकी प्रत्येक भारतवासीसे अपेक्षा की जाती है। यदि आप कल समुद्र तटकी सभामे मौजूदा रहे होगे तो आपने मुझसे सुना होगा कि मौलाना मुहम्मद अली वाल्टेयरमे गिरफ्तार हो गये है। वे आपके तथा मेरे लिए गिरफ्तार किये गये है और जेलमे बन्द कर दिये जायेगे। हम-आप जानते है कि वे एक ईमानदार मुसलमान और बहादुर भारतीय है। हम और आप जानते है कि वे अपने धर्मको और देशको प्यार करनेवाले व्यक्ति है। उन्होने और उनके भाईने पहले ही अपने देश और धर्मकी खातिर कष्ट झेले है, और इन भाइयोके प्रति हमारा स्नेह और आदर हमसे हिंसाकी या क्रोधकी अपेक्षा नही करता, वरन् यह चाहता है कि हम कार्यक्रमको सफल बनानेका दृढ निश्चय करे। वे कोई हडताल नही चाहते और न कोई हिंसापूर्ण व्यवहार ही चाहते है। वे चाहते है कि हम एकतामे बँधे रहे और, चाहे हर एकको लँगोटी-भरके लिए कपडेसे ही सन्तोष क्यो न करना पडे, विदेशी वस्त्रका बहिष्कार करे। वे हमसे आशा करते है कि हम निर्भयतापूर्वक ईश्वरोन्मुख होकर इसी सालके भीतर स्वराज्य स्थापित करे और स्वराज्यकी ससद्के प्रथम प्रस्तावके अधीन उन्हे जेलसे रिहा करायें।

आपने जिस अनुकरणीय धैर्यके साथ मेरी बात सुनी है उसके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। मौलाना आजाद सोबानी, जैसा कि आपमे से कुछ लोग जानते है, एक महान् धर्मविद् मुसलमान है, अब आपसे कुछ शब्द कहेगे जिसपर आप आदर सहित ध्यान देगे, ऐसा मुझे विश्वास है।

सभाकी समाप्तिपर विभिन्न प्रकारके कपडोकी होली जलाई गई।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७–९–१९२१

५७. भाषण : कडालोरमे[1]

१७ सितम्बर, १९२१

अध्यक्ष महोदय तथा मित्रो,

आज मुझे भेट किये गये अभिनन्दन-पत्रो तथा तिलक स्वराज्य कोषके लिए दी गई थैलीके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। स्मर्ना-सहायता कोषके लिए मुसलमान मित्रोने जो थैली भेट की है, उसके लिए भी मै आपका आभारी हूँ। मै जानता हूँ कि मौलाना मुहम्मद अली यह थैली लेनेके लिए यहाँ मौजूद होते तो आपको ज्यादा खुशी होती। परन्तु यदि हमारे बीच मुहम्मद अली नही है, तो उनकी जगह धर्मविद्

१ गिडलाम मैदानमें एस० श्रीनिवास आयगारकी अध्यक्षतामें हुई सभामें गाधीजीके अंग्रेजीमें दिये गये भाषणका एम० के० आचार्यने तमिलमें अनुवाद किया।

मौलाना आजाद[1] है। और यदि मुसलमान भाई खिलाफत और 'कुरान' के बारेमें सब कुछ जान लेनेके इच्छुक है तो आजाद साहबके रूपमें एक विश्वसनीय पथ-प्रदर्शक और मित्र उनके बीच आया हुआ है।

निश्चय ही, यदि हमें इसी सालके अन्दर स्वराज्य प्राप्त करना है, और खिलाफत तथा पंजाबके प्रति किये गये अन्यायोंका निराकरण करवाना है तो हमें जरा भी गड़बड़ी और उलझन उत्पन्न किये बिना, अहिंसात्मक असहयोगका अनुसरण करना चाहिए। जो प्रेम व्यवस्थाहीनतामें व्यक्त होता है, वह अन्धा प्रेम है। और भारतको आज सबसे ज्यादा जरूरत जिस चीजकी है वह है विवेकपूर्ण प्रेमकी। और विवेकपूर्ण प्रेम शोर-गुलवाले प्रदर्शनों द्वारा नहीं, वरन् वास्तविक और ठोस कार्योंके रूपमें प्रकट होता है। प्रत्येक भारतीयका आत्म-सम्मान इस बातकी अपेक्षा करता है कि जबतक मौलाना मुहम्मद अली और शौकतअली हमारे खुदके प्रयत्नों द्वारा जेलसे रिहा नहीं कर दिये जाते, हमें एक मिनट भी चैनसे नहीं बैठना चाहिए। यदि उनकी रिहाई हमारे स्वराज्य पा लेनेके फलस्वरूप हो, तो वह सही ढंगकी रिहाई होगी। और स्वराज्यका अर्थ यदि और कुछ नहीं तो निस्सन्देह अनुशासन तो है ही। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि यहाँके नेता लोग नागरिकोंको सार्वजनिक सभाएँ अनुशासित ढंगसे चलानेका व्यावहारिक पदार्थपाठ देंगे ताकि आदेशोंका पालन पूर्णरूपसे हो सके। हम जान चुके हैं कि कांग्रेसने, एकके बाद एक, दो अधिवेशनोंमें हमें स्वराज्य पानेका रास्ता दिखा दिया है। और वह रास्ता अहिंसाका है। हम तबतक सफल नहीं हो सकते जबतक हम पूरी तरह जान-बूझकर अहिंसाका आचरण नहीं करते। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि कडालोर जिलेके लोगोंको प्रचार और व्यवहार द्वारा प्राथमिक पाठकी शिक्षा मिलेगी। आज हम उत्तेजनाकी हालतमें हैं, इसमें सन्देह नहीं। एक ओर तो सरकारका दमन हमारे मनमें सन्ताप उत्पन्न करता है, दूसरी ओर भविष्यमें कुछ अच्छा होनेकी आशा हमारा सन्तुलन नष्ट कर देती है। यह ठीक वैसी ही स्थिति है जो हिंसाके पूर्व हुआ करती है, और असहयोगियोंके द्वारा की गई हिंसा निश्चय ही स्वराज्यके रास्तेमें रुकावट डालती है।

मेरी नम्र रायमें हमारे पास, सन्तुलन और व्यवस्था उत्पन्न करनेवाली सबसे बड़ी ताकत चरखा है। जरा सोचिए, यदि आप इतनी देरतक मेरा इन्तजार करनेके बजाय ईश्वरके नामपर और राष्ट्रके निमित्त अपना यह सारा समय चरखा चलानेमें लगाते, तो क्या ही बढ़िया चीज हाथ लगती? अब उचित यही है कि भाषण सुनने और नेताओंके दर्शन करनेकी व्यर्थकी उत्सुकता त्याग दें। और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि मुझे ऐसा आश्वासन न दिया गया होता कि यहाँ आनेसे स्वदेशीकी पूर्ण स्थापना हो सकेगी, तो मैं इस लम्बी यात्राका खयालकर यहाँ आनेसे इनकार कर देता। मैं देखता हूँ कि यहाँ उपस्थित स्त्रियों और पुरुषोंमें अधिकतर लोग एक न एक विदेशी वस्त्र पहने ही हुए हैं। परन्तु मैं आशा करूँगा कि आप अपने शरीरपर से तथा अपने सन्दूकोंमें से विदेशी वस्त्र फेंक देनेका दृढ़ निश्चय करेंगे और आप इस बातका

१. मौलाना आजाद सोबानी।

प्रबन्ध करेंगे कि हर घरमें चरखा चलने लगे और अपना कपड़ा मैन्चेस्टर और जापानसे या बम्बई तथा अहमदाबादसे प्राप्त करनेके बजाय आप उसे स्वयं तैयार कर लिया करेंगे।

सफलता पानेकी तीसरी शर्त हिन्दू-मुस्लिम एकता है। परन्तु जो-कुछ मैंने देखा है उससे मैं इसी निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि यदि घरोंमें चरखा चलने लगा तो वह हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच एकता पैदा करेगा। हम अपने आन्दोलनको आत्मशुद्धिका आन्दोलन कहते हैं। और इसलिए डा० राजनसे[1] यह जानकर मुझे खुशी हुई कि इस प्रान्तमें नशाबन्दी आन्दोलनकी पर्याप्त प्रगति हुई है। मैं आशा करता हूँ कि आप अपने बीचसे मद्यपानका अभिशाप पूरी तरह दूर कर देंगे।

मुझे अपने देशके हिन्दू स्त्री-पुरुषोंसे एक बात और कहनी है। शायद छुआछूतका अभिशाप भारतके अन्य किसी भागमें इतना नहीं जितना कि इस प्रान्तमें है। धार्मिक श्रद्धा और देव-पूजाके इस प्रदेशमें कलंक — छाया आपके दामनको नापाक कर रही है। इसी पवित्र भूभागमें अछूतोंके साथ उससे भी ज्यादा बुरा बर्ताव किया जाता है, जिस बर्तावकी शिकायत हमें अपने शासकोंसे है। यदि भारतकी जनसंख्याके छठे भागको हम हमेशाके लिए मताधिकारसे वंचित कर देते हैं, तो स्वराज्य एक अर्थहीन शब्द है। मैं एक सनातनी हिन्दू होनेका दावा करता हूँ, और इस हैसियतसे बोलते हुए कहता हूँ कि हमारे शास्त्रोंमें अस्पृश्यताके लिए किंचित् भी प्रमाण नहीं है। और यह सोचकर मुझे दुःख होता है कि एक ऐसे देशमें जहाँ शंकर और रामानुजने जन्म लिया और शिक्षा दी, वहाँ यह हो रहा है। मैं अपनी वह घोषणा फिरसे दोहराता हूँ जो मैं कई मंचोंसे व्यक्त कर चुका हूँ कि हम जबतक इस प्रकारका कलंक नहीं मिटा देते, तबतक भारतको स्वराज्य नहीं मिल सकता। कर्मका फल अवश्य मिलता है इस बातमें मेरा पूरा विश्वास है, और इसीलिए कहता हूँ कि अपने छठे भागको अन्त्यज बनाये रखनेका उचित प्रतिफल भगवानने संसारमें हमें अन्त्यज बनाकर दिया है। संसारके सभी महान धर्म — हिन्दू, इस्लाम, ईसाई — आज एक क्रान्तिमय और अस्थिर अवस्थामें हैं। मेरा विश्वास कीजिए, यदि हम अस्पृश्यताके दोषसे छुटकारा नहीं पा सकते तो हिन्दूधर्मका स्थान इस सूचीमें सबसे नीचे होगा। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप लोग और विशेष रूपसे नेतागण तथा बहनें मेरा निवेदन सुनेंगी और अस्पृश्यताके सम्बन्धमें पास किये गये कांग्रेस-प्रस्तावपर पूरी तरहसे ध्यान देंगी। आपने मेरी बातें जिस धैर्यके साथ सुनी है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ और आशा करता हूँ कि आप हमारे मित्र मौलाना आजाद [सोबानी] के विचार आदरसे सुनेंगे, वे हिन्दुस्तानीमें बोलेंगे।

कुछ समय पश्चात् अग्नि प्रज्वलित की गई और लगभग एक हजार रुपये मूल्यके विदेशी कपड़े 'महात्माकी जय', 'वन्दे मातरम्' और 'अल्लाहो अकबर' के

१ डा० टी० एस० एस० राजन्, जो उस सभामें उपस्थित थे।

नारोंके साथ जला दिये गये। इसके उपरान्त गाधीजी पोर्टोनोव होते हुए कुम्भकोणम् जानेके लिए वहाँसे विदा हुए।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, १९–९–१९२१

५८. गश्ती चिट्ठी

[१७ सितम्बर, १९२१ के पश्चात][1]

प्रिय मित्र,

मौलाना शौकत अली, मुहम्मद अली तथा अन्य लोगोकी गिरफ्तारीको देखते हुए हममे से कुछ लोगोका मिल बैठकर स्थितिपर विचार करना जरूरी हो गया है। कार्य समितिकी बैठक अहमदावादमे ६ अक्तूबरको होने जा रही है। किन्तु अच्छा हो, यदि हम लोग ४ अक्तूबरको बम्बईमे लेबर्नम रोडपर दिनमे ठीक १ बजे बैठक करे। क्या कृपया आप मुझे बम्बईके पतेसे सूचित करेंगे कि आप शरीक होगे अथवा नही? मै २ अक्तूबरको बम्बई पहुँच रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

[पुनश्च]

आपके प्रान्तमे मैंने केवल आपको और . . को आमन्त्रित किया है। आप कृपया किसी अन्य मित्रको जिसकी उपस्थितिसे कुछ मदद मिल सके, लेते आइयेगा।

मद्रास	याकूब हुसैन
सयुक्त प्रान्त	ख्वाजा
बम्बई	श्रीमती नायडू
यू० पी०	मौलाना अब्दुल बारी
विहार	अबुलकलाम आजाद
पजाव	स्टोक्स
वगाल	दास
मध्य प्रदेश	जमनालालजी
पजाव	लालाजी
दिल्ली	हकीमजी
दिल्ली	डा० अन्सारी
सिन्ध	जयरामदास
मद्रास	राजगोपालाचारी

१. पत्रमें उल्लिखित शौकत अलीकी गिरफ्तारी १७ सितम्बरको बम्बईमें हुई थी। देखिए "भाषण त्रिचनापल्लीमें", १९–९–१९२१।

मद्रास	कस्तूरी
यू० पी०	जवाहरलाल
आन्ध्र	वेंकटापय्या
महाराष्ट्र	केलकर
कर्नाटक	गंगाधरराव
गुजरात	वल्लभभाई
गुजरात	विट्ठलभाई
बिहार	राजेन्द्र
यू० पी	हसरत
आन्ध्र	टी० प्रकाशम्

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७६२८) की फोटो-नकलसे।

५९. कलकत्ताके कड़वे अनुभव

पूर्व बंगालकी यात्राका कुछ हाल मैं पहले ही लिख चुका हूँ। वहाँ यद्यपि हजारों आदमियोंकी भीड़ होती थी तो भी उससे मैं परेशान नहीं होता था। लेकिन कलकत्तेमें तो मैं बिलकुल थक गया हूँ। एक तो आधी-आधी राततक सोनेको नहीं मिलता और दूसरे यह जयघोष — जो होता ही रहता है। ये बातें अब मुझे नागवार मालूम होती हैं। दिन-भर 'जयघोष' को सुनते-सुनते मैं थक जाता हूँ। कान उसे गवारा नहीं कर सकते। फिर, इसमें कुछ मतलब भी नजर नहीं आता। इससे मुझे यह दुस्सह मालूम होता है। इस तरहकी आवाजोंसे लोगोंको कोई फायदा नहीं पहुँचता, यह बात मैं अच्छी तरह जानता हूं। जब लोगोंको ज्ञान नहीं था, जब वे बोलते हुए भी डरते थे, तब तो जरूर इस जय-जयकारसे उनके दिलोंमें जोश उमड़ता होगा। इस बातका अनुभव मुझे चम्पारनमें मिला था। वहाँ सैकड़ों आदमी सिर्फ इसीलिए मुझे घेरकर बैठ जाते थे कि उन्हें स्फूर्ति मिले। इस कारण, यद्यपि उनका प्रेम मुझे हैरान तो कर देता था, लेकिन फिर भी मैं उसे सह लेता था। यहाँ भी प्रेम तो वैसा ही है। पर इस जय-जयकारसे तो अन्ध मोह प्रकट होता है। इसमें न लोगोंका फायदा है और न मेरा।

यह तो मैंने अपने स्वार्थकी दृष्टिसे जयघोषपर विचार किया। लेकिन चरणस्पर्श भी उतना ही दुःखदायी है। कितनी ही बार मुझे चोट लग जाती है, और कभी-कभी तो मैं गिरते-गिरते बचता हूँ। सभाओंमें जाते हुए मेरा कलेजा काँपता है।

लेकिन जयघोषमें तो मुझे खतरा भी नजर आता है। क्योंकि जब लोग प्रेमोन्मत्त होकर बराबर चिल्लाते रहते हैं तब वे अपने कानसे किसी दूसरी बातको सुन नहीं सकते, और न आँखोंसे कुछ देख ही सकते हैं। अब मान लीजिए कि ऐसे मौकेपर किसीने दंगा-फसाद खड़ा कर दिया और दो तीन लाठियाँ भी चल पड़ीं। मैं खड़ा हुआ यह

सब देख रहा हूँ और हाथोसे तथा मुँहसे मारपीट रोकनेके लिए प्रयत्न भी कर रहा हूँ। लेकिन नक्कारेमे तूतीकी आवाज सुनता कौन है! मान लो कि इसी बीच मारपीट बढ गई, लोग दल बाँधकर लडने लगे और खूनकी नदी बह चली। ये सब बाते बिना किसी इरादेके हो सकती हैं। अमृतसरमें[1] मेरा खयाल है ऐसा ही हुआ था। मैं यह नही मानता कि किसीने पहलेसे ही उस बेकसूर बैंक मैनेजरका खून करनेका इरादा किया होगा। लेकिन उस समय लोगोका खून उबल रहा था सो किसी शैताननें इस परिस्थितिका लाभ उठा लिया।

इसीलिए मैं समझता हूँ कि हमारे इस शान्तिमय युद्धमे जयघोषोके लिए कोई स्थान नही है, और अगर है भी तो वह मुनासिब ढगसे और जरूरतके वक्तपर, और बहुत ही कम सख्यामे।

मालूम होता है कि कलकत्तेमे स्वय-सेवकोको सभाके नियम पालनेकी तालीम नही दी गई क्योकि मैंने देखा कि अगर लोगोको शुरूसे ही हिदायते मिल जायें तो वे उसके अनुसार चल सकते हैं। गला फाड-फाड कर चिल्लानेसे ही प्रेम दिखाई दे सकता हो, सो बात नही है, बल्कि चुप रहना भी शुद्ध प्रेमका — अदबका चिह्न है। यह बात अगर लोगोको समझाई जाये तो जरूर ही वे इसका मर्म समझ सकते हैं। मैंने दो-एक सभाओमे ऐसा करके भी देखा है। भीडको पार करते हुए मेरे पैर कुचल गये और जयघोषसे मैं हैरान भी हुआ। एक जगह तो मुझे अपने स्थानतक पहुँचनेमें २० मिनट लग गये। इन दोनो जगहोमे अपने भाषणका चौथाई हिस्सा तो मैंने केवल सभामे चुप रहने — शान्ति बनाये रखने — और नेताओके लिए रास्ता देनेका उपदेश करनेमे ही लगाया। लेकिन दोनो ही जगह इसका नतीजा यह निकला कि लौटते वक्त हमे रास्ता मिल गया। शोर भी न मचा और जबतक हम वहाँसे चले न गये तबतक लोग अपनी जगहसे उठेतक नही। इस तरह जहाँ भीडको पार करनेमे मुझे बीस मिनट लगे थे, वहाँ लौटनेमे सिर्फ एक ही मिनट लगा।

इन बातोसे मैं देखता हूँ कि अगर लोगोको शुरूसे ही ठीक तौरपर समझा दिया जाये तो जरूर ही वे उसे मानेंगे और उसपर अमल करेंगे। मुझे यह विश्वास है कि आम तौरपर लोग शान्तिके सबकको समझते हैं और उसको अमलमे लानेका इरादा भी रखते हैं।

अब मैं अपने ऊपरवाले उदाहरणकी उलटी स्थितिका अनुमान करता हूँ। मान लीजिए कि सभामे सब लोग चुपचाप बैठे हैं, सबका ध्यान मुख्य नेताकी तरफ है। ऐसी शान्त सभामे अगर कुछ लोगोमे कही लडाई-झगडा खडा हो जाये, और फिर भी अगर सब लोग चुपचाप ही बैठे रहे तो नतीजा यह होगा कि मुख्य नेताकी आवाज सबके कानोतक पहुँचेगी। इतना ही नही, वह उन लडनेवालोके पास जाकर उन्हे शान्त कर सकेगा। ऐसा न हो पाये तो भी कमसे-कम अनजानमे झगडा नही फैलेगा और शान्ति-भगका दोष भी हमारे सिर न आने पायेगा। फौजमे ऐसा ही होता है। सब सिपाही अपनी-अपनी जगहको सँभाले रहते हैं। बिना हुक्मके वे अपनी

१. अप्रैल १९१९ में।

जगहसे जरा भी आगे पीछे नही हट सकते। दूसरे किसी काममे पड ही नही सकते। हम भी तो स्वराज्यकी एक शान्तिमय सेना ही है। हमे भी अपने-अपने स्थानोपर रहकर अपने-अपने कर्त्तव्योका पालन करना चाहिए। दूसरे लोग क्या कर रहे है, इनका विचार करना हमारा काम नही। हम यह जानते है कि उस बातका प्रबन्ध उस क्षेत्रके कार्यकर्त्ता कर लेगे। शान्तिकी सेनामे तो अशान्तिकी सेनासे भी अधिक सयमकी और अधिक व्यवस्थाकी जरूरत है, अथवा होनी चाहिए।

कलकत्तेमे जिन तरहके प्रेमका कडवा अनुभव हुआ उसी तरह अनबनका भी हुआ। मुझे मालूम होता है कि जितना पक्ष-द्वेष कलकत्तामे हे उतना दूसरी जगह शायद ही हो। जो अग्रेजी अखबार असहयोगका विरोध करते है उनमे मुझे सिवा जहरके और कुछ भी नही दिखाई देता। असहयोगियोके लेखोकी बे-मतलब और वाहियात नुक्ताचीनी और उनके विषयमे फैलाई बिल्कुल झूठी अफवाहोका तो पार ही नही। उनमे भी कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरके लेखो और व्याख्यानोका तो इतना कुछ जहरीला उपयोग किया जाता है कि मेरी समझमे नही आता कि लोग ऐसा करनेकी हिम्मत कैसे करते होगे। कितनी ही बार ऐसी बातोको देखकर रावण-राज्यकी तस्वीर मेरी आँखोमे खिच जाती है। जहाँ साधनकी पसन्दगी मनमाने ढगपर की जाती हो वहाँ छल-कपटका उपयोग कौन अचम्भेकी बात है? सीताजीका हरण राक्षसके वेषमे नही हो सकता था। वह तो साधुके वेषमे ही हो सका। और जहाँ साधुताका इस तरह दुरुपयोग हो, वहाँ नाश होते जरा भी देर नही लगती। मै यहाँ अग्रेजी अखबारोमे सत्यके नामपर झूठको फैलते हुए अपनी आँखोसे देख रहा हूँ। असहयोगी इससे इस तरहके झूठमे बचनेका सार ग्रहण करे इसीलिए मैने इस जहरीली हवाका यह सारा हाल लिखा है। हमारा शस्त्र तो सत्य और शान्ति हे, यह बात हमे हरगिज नही भूलनी चाहिए।

यहाँके राष्ट्रीय महाविद्यालयमे चरखोकी नुमाइश की गई थी। वहाँ मैने कोई १५ किस्मके नये चरखे देखे। इसमे नई-नई तरकीबोका तो पार ही नही। बहुतसे नवयुवक अपनी शक्तियोका सुन्दर प्रयोग कर रहे है। कितने ही चरखे बडे सुन्दर थे, कितने ही छोटे-छोटे भी थे। एक तो इतना छोटा था कि एक छोटी-सी पेटीमे ले जाया जा सकता था। और एक ऐसा था कि वह सन्दूकमे ले जाया जा सकता था। एक अन्यमें बाजा बजनेकी भी तरकीब लगाई गई थी। परन्तु मुझे एक भी चरखा ऐसा न दिखाई दिया जो अधिक सूत कातनेमे पुराने चरखेका मुकाबला कर सकता हो। हाँ, इन सब आविष्कारोको देखकर मैने यह नतीजा जरूर निकाला कि आजकल चरखा खूब लोकप्रिय हो गया है और अनेक कारीगरोकी बुद्धिको उसने अपने सुधारके काममे लगा रखा है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १८-९-१९२१

६०. गुजरातको क्या करना चाहिए?

हम इस वातपर विचार कर चुके है[१] कि स्थूल दृष्टिसे हम काग्रेसके आगामी अधिवेशनको कैसे सफल बना सकते है। अब हम इस सम्बन्धमे सूक्ष्म दृष्टिसे विचार करते है।

कोई प्रान्त काग्रेसको अपना अधिवेशन उसके क्षेत्रमे करनेका निमत्रण दे, इसका अर्थ यह है कि उस प्रान्तको निमन्त्रण देनेका अधिकार है और उसमे उस अधिकारके अनुरूप योग्यता है। ऐसा अधिकार तो हर प्रान्तको होता है, किन्तु योग्यता हो भी सकती है, और नही भी हो सकती।

काग्रेसके अधिवेशनको निमन्त्रण देनेसे हमारा दायित्व बढ गया है, इस तरह हमने उसके प्रस्तावोपर अधिकसे-अधिक अमल करनेकी प्रतिज्ञा की है और उस अमलमे अपनी समस्त शक्ति लगा देनेका निश्चय प्रकट किया है।

काग्रेसके प्रस्तावके अनुसार हमे इस वर्षमे खिलाफतके सवालका फैसला कराना है। और इसी वर्ष पजावके मामलेमे न्याय भी कराना है। इस कार्यको हम कैसे कर सकते है इसके साधन हमे काग्रेसने बताये है। इनको हम कैसे अमलमे लाये यह काग्रेसकी महासमितिने इस प्रकार बताया है

१ शान्तिकी रक्षा करके।

२ हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यको मजबूत करके।

३ विदेशी कपडेका सर्वथा बहिष्कार करके और हर गाँव और शहरमे अपनी जरूरतकी खादी तैयार करनेके लिए चरखा और करघा दाखिल करके।

श्री विट्ठलभाई पटेल सूरत जिलेमे दौरा करके काग्रेसकी कार्यसमितिकी बैठकमे भाग लेनेके लिए कलकत्ता गये थे। वहाँ उन्होने कहा कि गुजरात और उसमे भी सूरत जिला खास तौरसे स्वराज्य लेनेके लिए तैयार हो गये है — स्त्री और पुरुष दोनो।

मैंने पूछा, "क्या कुछ स्त्री और पुरुष जेल जाने और शेष शान्तिकी रक्षा करनेके लिए भी तैयार हो गये है?"

श्री विट्ठलभाईने उत्तर दिया, "सूरत जिलेमे तो हजारो स्त्रियाँ और हजारो पुरुष जेल जायेगे और इसके बावजूद शेष लोग वहाँ शान्ति कायम रखेगे।"

इस उत्तरको सुनकर मुझे जितना आनन्द हुआ उतना ही आश्चर्य भी हुआ। मै ऐसा उत्तर सुननेके लिए तैयार न था। गौरवशाली गुजरातकी हजारो स्त्रियाँ जेलमे जानेके लिए तैयार है, यह बात मानने योग्य नही लगती। किन्तु ईश्वर जो चाहे कर सकता है। वह तो ऐसी बाते करता ही रहता है जो मानने योग्य नही मालूम होती। उसकी पृथ्वीकी धुरी कभी घिसती ही नही। उसका सूर्य कभी उदित होना नही

१ देखिए "अधिवेशनकी तैयारी", ४-९-१९२१।

भूलता। ये सब बातें हमारी आँखोंके सामने न हो रही होती तो क्या हम विश्वास करते?

किन्तु गुजरात अथवा सूरत सचमुच तैयार हो तो उन्हे इसकी निशानी पहलेसे बतानी होगी। सूर्योदय होनेके लक्षण दो घंटे पहलेसे दिखाई देने लगते हैं। उसी प्रकार हमें दासताके अन्धकारके विलय और स्वराज्यके सूर्योदयके बीचकी सधि-वेलाका दर्शन होना चाहिए। रुपया इकट्ठा हो गया यह इसकी एक निशानी थी। किन्तु उसकी सच्ची निशानी तो स्वदेशीका व्यवहार ही है। क्या गुजरातने विदेशी कपडा सब जला दिया या त्याग दिया? क्या उसने विदेशी कपडा मँगाना बन्द कर दिया? क्या गुजरातके गाँव अपने हाथकी बनाई खादी पहनने लग गये हैं? क्या गुजरातके बुनकर केवल हाथका कता सूत ही बुनते हैं? क्या गुजरातके कपडा-एजेंटोने कपडेके लिए बम्बई आना-जाना बन्द कर दिया है? क्या गुजरातके मेघवालोने अपना छोडा हुआ बुनाईका धन्धा फिर अपना लिया है? क्या गुजरातकी सब बहनें अपना धर्म समझकर सूत कात रही हैं? और क्या गुजरातकी विदेशी कपडेकी दूकानें बन्द होने जा रही हैं? इन प्रश्नोके उत्तरपर ही गुजरातकी योग्यता या अयोग्यता निर्भर करती है।

हम जबतक खादी नही पहनने लगते, जबतक हमारे भाइयो और बहनोमे विदेशी कपडा पहननेका चाव मौजूद है तबतक यदि यह कहा जाये कि वे जेल जानेके लिए तैयार हो गये हैं तो उसपर विश्वास कौन करेगा? मुझे आशा है कि कोई यह न कहेगा, "मुझमे जेल जानेका साहस है, किन्तु मेरी हिम्मत खादी पहननेकी नही होती, मुझे चरखा चलानेमे लज्जा आती है और कपडा बुननेमे झुंझलाहट लगती है।" यदि हममे शान्ति कायम रखनेकी शक्ति आ गई हो, तो हममे से सभा-समारोहोमे शोरगुल करनेकी शक्ति भी चली जानी चाहिए। हजारो लोग चुपचाप चल सकें, ऐसा होना चाहिए। जबतक हम इतना न सीख जाये तबतक हम हिंसाके लिए भडकाये जानेपर भी हिंसा नही करेंगे, यह कैसे माना जा सकता है?

श्री विट्ठलभाईने मुझे ऊपरकी खबर देते हुए यह भी कहा था, "यदि आप मानते हो कि अस्पृश्यताका मैल जाना भी जरूरी है, तब तो स्वराज्य इस वर्ष नही मिलेगा, क्योकि आपकी एक भी शाला भगी या ढेढ बालकको भर्ती करनेके लिए तैयार नही है।"

मैं तो अवश्य ही यह मानता हूँ कि यदि हम भगी या ढेढके प्रति मनमे मैल रखेंगे तो हमे ईश्वर कभी स्वराज्य न दिलायेगा और अग्रेजोके मनसे हमारे प्रति तिरस्कारका भाव कभी न जायेगा। आत्मशुद्धि हमारे स्वराज्यकी नीव है। स्वराज्य लेना स्वर्गमें जानेके समान है। युधिष्ठिरने अपने कुत्तेको साथ लिये बिना स्वर्गमे जानेसे इनकार कर दिया था। क्या हम अपने भगी भाइयोको पीछे छोडकर और भागकर स्वराज्यके मन्दिरमे घुसनेकी आशा करते हैं? यदि हम अपने भगी भाइयोको अपनेसे भिन्न मानते होगे तो हमे कटु अनुभव ही होगा। हम जैसे ही द्वारपर पहुँचेगे वैसे ही देखेंगे कि वह तो बन्द है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १८-९-१९२१

६१. टिप्पणियाँ

जूते कहाँ उतारेंगे?

लोगोको ऐसी उम्मीद या आशका है कि अहमदाबादमे काग्रेसके अधिवेशनके समय एक भी कुर्सी नही दिखेगी। इसलिए एक मित्रने पूछा, "किन्तु इतने सारे लोग अपने जूते कहाँ उतारेगे?" मैंने उत्तर दिया, "सब अपने-अपने जूते उतारकर बगलमे दबाकर ले जा सकेगे और इसके लिए हम जूते रखनेकी खादीकी थैलियाँ बेचेगे।" सब अपनी-अपनी थैलियाँ साथमे लाये तो भी कोई आपत्ति नही। यदि जूते इन थैलियोमे रख लिये जाये तो तनिक भी कठिनाई न होगी। दूसरा तरीका यूरोपका है और वह यह है कि सब अपने-अपने जूते एक जूता सभालनेवालेको दे दे और उससे नम्बर ले ले। लोग उस नम्बरको देकर उससे कभी भी अपने-अपने जूते वापस ले सकते है। इनमे अच्छा तरीका तो थैलीका ही है, इस सम्बन्धमे मेरे मनमे कोई शका नही। हर छोटी-छोटी बातके बारेमे पहलेसे व्यवस्था करनेमे ही हमारी कुशलताकी परीक्षा है।

भोजनकी व्यवस्था

भोजनके सम्बन्धमे विचार करनेपर मुझे ऐसा लगा है कि हम भाषा क्षेत्रोके अनुसार भोजनालय रखेगे और प्रान्तोके मन्त्रियोको कहेगे कि वे अपने-अपने भोजनालयोके लिए रसोइये स्वय लावे। हमारी जिम्मेदारी सामान जुटाने, पानी पहुँचाने और पकाने-खानेके बर्तन देनेकी होगी। मैंने यहाँ जिन लोगोसे बातचीत की है उन्हे यह विचार पसन्द आया है। ऐसी व्यवस्था करनेसे भोजनके सम्बन्धमे शिकायतका कारण नही रह जाता। प्राय एक प्रान्तके लोगोको दूसरे प्रान्तका भोजन ठीक नही पचता। मासाहारी लोगोके लिए सभवत खिलाफत समितिके शिविरमे व्यवस्था की जायेगी। जो लोग यूरोपीय ढगसे रहते-खाते है उनकी व्यवस्था हम शिविरमे नही करेगे, इसके बजाय हम होटलोके मालिकोसे बातचीत कर लेगे और उनके भाव और नाम आदि ऐसे लोगोके प्रान्तोको लिख भेजेगे। वे उनसे अपना सीधा बन्दोबस्त कर लेगे। यदि हम इस तरहकी व्यवस्था करेगे तो बहुत-सी खटपटसे बच जायेंगे और सब लोगोको पूरा आराम भी मिलेगा। ऐसा करनेके लिए हमे आजसे ही प्रान्तोसे पत्र-व्यवहार आरम्भ करके बन्दोबस्त कर लेना चाहिए। हमे हर प्रान्तको वही सलाह देनी चाहिए जो हमे उसके लिए ठीक लगे और उसके सम्बन्धमे उसकी राय जानकर पीछे व्यवस्था पक्की कर देनी चाहिए।

कितने लोगोंका इन्तजाम?

प्रेक्षक और प्रतिनिधि मिलकर १० हजार लोग होगे, ऐसा हम मानते है। किन्तु हमे यह समझकर चलना चाहिए कि इसे एक किस्मका मेला या तमाशा मानकर जो लोग उसे मात्र कुतूहलकी दृष्टिसे देखने आयेगे उन्हे मिलाकर अहमदाबादमे उस

समय कमसे-कम एक लाख लोगोंकी आबादी बढ़ जायेगी। हम इन सब लोगोंके रहने-खानेकी व्यवस्था करनेके लिए बंधे हुए हैं। लोग चाहे जहाँ रहे, चाहे जहाँ ठहर जायें इसकी अपेक्षा उनके लिए पहलेसे आवश्यक व्यवस्था करना बहुत जरूरी है।

प्रदर्शनी

कांग्रेस अधिवेशनके साथ प्रदर्शनी तो अवश्य की जायेगी। मुझे लगता है कि हमें इस प्रदर्शनीमें केवल भारतकी प्राचीन कलाके नमूने और खादी और रुईकी समस्त क्रियाओंसे सम्बन्धित वस्तुएँ रखनी चाहिए। हमें मिलोंके कपड़ोंको प्रदर्शनीमें रखनेकी बिलकुल जरूरत नहीं है। बम्बईकी प्रदर्शनीमें मुझे यह त्रुटि दिखाई दी थी। हाथके सूतके ताने-बानेसे हम जिस-जिस किस्मका कपड़ा बना सकते हैं, प्रदर्शनीमें उसीको रखना उचित है। अहमदाबाद आज भी प्राचीन कलात्मक वस्तुओंका संग्रह स्थान है। हम लकड़ी और हाथी-दांतकी खुदाईकी वस्तुएँ और प्राचीन चित्र भले ही रखें, किन्तु कपड़ेकी हदतक हमें दृढ़तापूर्वक खादी और खादीके निर्माणमें सम्बन्धित उपकरणोंके अतिरिक्त अन्य एक भी वस्तु प्रदर्शनीमें नहीं रखनी है। मैं ये सब बातें समितिके सामने विचारार्थ रखता हूँ। मुझे आशा है कि ये विचार मेरे हैं इसलिए इनको मान ही लेना चाहिए इस आग्रहके साथ इनपर चर्चा नहीं की जायेगी, बल्कि मैं चाहता हूँ कि समिति अन्य बहुतसे विचारोंके साथ-साथ मेरे विचारोंपर भी निष्पक्ष रूपसे चर्चा करे।

स्वयंसेवक

स्वयंसेवकोंकी शिष्टता, नम्रता और चतुराईपर बहुत-कुछ निर्भर रहेगा। मैंने बंगालमें देखा था कि वहाँ स्वयंसेवक केवल धोती ही पहनते हैं। पूर्वी बंगालमें मैंने मुसलमान और हिन्दू दोनोंको ही धोती पहने देखा है। मुसलमान टोपी लगाते हैं और हिन्दू नंगे सिर रहते हैं। मैंने यह बात तो कहीं नहीं सुनी कि पायजामेके बिना स्वयंसेवकोंको अपना काम करनेमें अड़चन आती है। मैंने इस सम्बन्धमें बहुत अनुभवके बाद यह देखा है कि अहिंसाका पालन करनेवाले स्वयंसेवकोंका वेश कमसे-कम सशस्त्र सैनिकों या पुलिसके सिपाहियोंके समान तो नहीं होना चाहिए। असहयोगके स्वयंसेवकोंमें अहिंसाका आभास मिलना चाहिए। सैनिकवेशसे अहिंसा नहीं झलकती और वह अहिंसाकी भावनाके विरुद्ध दिखता है। कुछ स्वयंसेवकोंने तलवार या अन्य शस्त्र पास रखना सीख लिया है, यह छोड़ देना चाहिए। हावड़ाकी एक सभामें एक स्वयंसेवकके पास किर्च थी। मौलाना मुहम्मद अलीने उससे किर्च ले ली थी। यदि हमें किसीको मारना नहीं बल्कि स्वयं मरना सीखना है तो हमें तलवार किसलिए चाहिए? वह किस चीजकी निशानी है?

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १८-९-१९२१

६२. भाषण : कुम्भकोणम्मे

१८ सितम्बर, १९२१

मित्रो,

मै आपको इन सारे अभिनन्दन-पत्रो और उनमे व्यक्त की गई भावनाओके लिए धन्यवाद देता हूँ। मुझे दु ख है और मै जानता हूँ कि मौलाना मुहम्मद अली और उनकी वेगमकी अनुपस्थितिके कारण आप भी दुखी होगे। खुश-किस्मतीसे मेरे साथ कानपुरके मौलाना आजाद सोवानी है। मै समझता हूँ कि इस शोरगुलमे आप उनका व्याख्यान सुन सकनेका अवसर शायद ही पायेगे। यदि हम इसी साल स्वराज्य पाना चाहते है और खिलाफत तथा पजावके अन्यायोका निराकरण कराना चाहते है तो उसके लिए तीन अनिवार्य शर्ते है।

वे है, एक तो हिन्दुओ और मुसलमानोमे पूरी एकता। चन्द मोपलाओके पागल-पनसे भरे हुए कामोके बावजूद दोनो ही जातियाँ अपने मधुर सम्बन्ध बनाये रहे। दूसरी शर्त अहिसा और तीसरी शर्त स्वदेशी है। यह दुर्भाग्यकी बात है कि इस प्रान्तमे स्वदेशीकी प्रगति सबसे कम हुई है। आप सब लोगोको विदेशी वस्त्रका बहिष्कार अवश्य करना चाहिए और कताई-बुनाई शुरू कर देनी चाहिए। एक चौथी शर्त भी है जो हिन्दुओको अवश्य पूरी करनी चाहिए और वह है, अस्पृश्यताका कलक मिटाना। जबतक हम यह कलक नही मिटाते, तबतक स्वराज्य पाना सर्वथा असम्भव है।

मै जानता हूँ कि अस्पृश्यताके सम्बन्धमे मद्रास भारतके सभी भागोसे अधिक बुरा है। इसलिए मै आशा करता हूँ कि कुम्भकोणम्के लोग इस मामलेमे अपने यहाँ आवश्यक सुधार करनेकी सावधानी बरतेगे। हम हिन्दू समाजके पाँचवे भागको समाजसे बाहर रखे और स्वराज्य पानेका दावा भी करे — यह ठीक नही है। मैने आपसे जिन शर्तोका उल्लेख किया है, उन्हे पूरा करना आसान है और मै ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको और मुझे उन शर्तोको भली प्रकार पूरा कर सकनेका विवेक और साहस दे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-९-१९२१

६३. पत्र : सिडनी बर्नको[1]

[१८ सितम्बर, १९२१ के पश्चात्]

महोदय,

आपका १८ तारीखका लिखा हुआ पत्र मिला। चेट्टिनाड जाते हुए रास्तेमें पुडु-कोट्टाई राज्यसे गुजरनेका मेरा इरादा था। परन्तु आपके पत्रको[2] ध्यानमें रखते हुए मैं अब दूसरे रास्तेसे होकर जाऊँगा।

आपका,

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७६१८) की फोटो-नकलसे।

६४. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

त्रिचनापल्ली
मौनवार, १९, सितम्बर, १९२१

शान्तिका पाठ सीखे बिना हिन्दू-मुसलमान कभी एक नहीं हो सकते।

अहमदाबादमें स्वतन्त्रताकी घोषणा करनेकी बातपर मैंने ध्यान ही नहीं दिया है। वैसा करने योग्य हमारे पास बल ही नहीं है। और जहाँ बल ही न हो वहाँ बात करनेसे क्या लाभ? यदि हममें बल हो तो मैं स्वतन्त्रताकी घोषणा करनेके लिए अवश्य सहमत हो जाऊँ।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी

१ सर सिडनी बर्न, आई० सी० एस०, पुडुकोट्टाई स्टेटके शासनाधिकारी, बादमें मद्रास उच्च न्यायालयके जज।

२ पत्र इस प्रकार था "... आपको इस राज्यसे गुजरनेकी अनुमति नहीं दी जायेगी। यदि आप ऐसा करनेका प्रयत्न करेंगे तो पुलिस आपको सीमापर रोक देगी।"

६५. भाषण : त्रिचनापल्लीमे[1]

१९ सितम्बर, १९२१

मित्रो,

इस ऐतिहासिक नगरमे आप लोगोसे परिचय ताजा करते हुए मुझे बहुत खुशी हो रही है। मैं नगरपालिकाको उसके अभिनन्दन-पत्रके लिए धन्यवाद देता हूँ और कांग्रेस कमेटीका भी उसके अभिनन्दन-पत्रके लिए आभार मानता हूँ। मै जानता हूँ कि आप सबको इस बातका क्षोभ है कि मौलाना मुहम्मद अली आज रात हमारे बीच नही है; और न बेगम साहिबा ही है। परन्तु आप मेरी दाहिनी ओर मौलाना आजाद सोबानीको बैठे देख रहे है। वे एक विद्वान् मुसलमान धर्माचार्य है। वे आज दिनभर त्रिचनापल्लीके मुसलमानोसे मिलते-जुलते रहे है। मुझे जरा भी सन्देह नही कि त्रिचनापल्लीके मुसलमान समझते है कि इस्लाम और अपने देशके प्रति उनका कर्त्तव्य वास्तवमे क्या है। आप सबको शायद मालूम नही कि गत १७ तारीखको मौलाना शौकत अली भी बम्बईमे गिरफ्तार किये गये और पजाबमे डा० किचलूको[2] भी वैसा ही गौरव प्राप्त हुआ है। मै नही जानता कि सरकारने डा० किचलूको किन कारणोसे प्रेरित होकर गिरफ्तार किया है, परन्तु बम्बई सरकारने अलीभाइयोको गिरफ्तार करनेका कारण जनताको बतानेकी शिष्टता बरती है। बम्बई सरकार द्वारा बताये गये कारणोमे पहला तो यह है कि अलीभाइयोने सेनाकी वफादारीको डिगानेकी कोशिश की। सरकारी विज्ञप्ति यह भी सूचित करती है कि आगे चलकर उन्होने यह काम किस रूपमे किया है। अलीभाई कराचीकी एक सभामे उस प्रस्तावको पास करानेवालोमे से थे जिस प्रस्तावमे मुसलमानोसे निवेदन किया गया था कि हर मुसलमानको चाहिए कि वह सेनामे नौकरी न करे और यह कहा गया था कि प्रत्येक मुसलमान सिपाहीसे कहा जाये कि इस्लामके अनुसार ब्रिटिश सेनामे काम करना हराम है। मुझे खेद है कि कराचीकी उस ऐतिहासिक सभामे मै उपस्थित नही था और यदि मै वहाँ होता और यदि सभा मुझे अनुमति देती तो मै भी उस प्रस्तावका समर्थन करनेवालोमे से एक होता। (हर्षध्वनि) मौजूदा समयमे मुसलमानोके लिए ब्रिटिश सेनामे काम करना गुनाह है या नही, यह तो केवल मुसलमान ही बता सकता है किन्तु एक हिन्दू और एक भारतीय होनेके नाते मै जानता हूँ कि मेरा और प्रत्येक हिन्दू या प्रत्येक भारतीयका ऐसे मौकेपर क्या कर्त्तव्य होना चाहिए। मै जानता हूँ कि किसी भी भारतीयका ब्रिटिश-सेनामे या इस सरकारके किसी भी असैनिक-विभागमे काम करना पाप है और इस तरहकी सार्वजनिक घोषणा, भले ही वह सिपाहियोकी मौजूदगीमे की गई हो, यदि ब्रिटिश-सेनाके सिपाहियोकी वफादारीके साथ हस्तक्षेपका अपराध बन जाती है तो

१. गाधीजीके अग्रेजी भाषणका डा० टी० एस० एस० राजनने तामिलमें वाक्यश अनुवाद किया।
२. पजाबके एक काग्रेसी कार्यकर्त्ता।

मै इस सभाको और इस सभा द्वारा भारत सरकारको वता दूं कि मैने अनेक वार ब्रिटिश-सेनामे काम करनेवाले सिपाहियोकी वफादारीमे खलल पहुँचाया है और यह कोई नया अपराध भी नही है। यह अपराध पिछले साल सितम्बरमे मैने जानबूझकर किया था, और यही अपराध कलकत्तामे[1] भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसने सितम्बरमे किया था और नागपुरमे[2] इसे जानबूझकर दोहराया गया था। यदि काग्रेस या मै सिपाहियोके पास या सरकारी विभागोके कर्मचारियोके पास निजी तौरपर नही गये, तो इसका कारण इच्छाकी कमी नही वरन् सामर्थ्यकी कमी थी। हमारे अभागे देशमे जहाँ गरीबी दिनोदिन बढती जा रही है, जिसमे हमारे देशके लाखो पुरुष-स्त्री भुखमरीमे सघर्ष करते है, हम अभीतक सिपाहियोसे व्यक्तिगत रूपसे मिल नही सके है और उनसे कह नही पाये है कि अपने देशके लिए अपनी नोकरी छोड दे और अपना कर्त्तव्य करे। मै सरकारको जो चेतावनी देना चाहता हूँ वह यह है कि जैसे देशने चरखेका और स्वराज्यका सिद्धान्त ग्रहण कर लिया ओर आत्ममात् कर लिया वैसे ही यदि सिपाही तथा अन्य लोग चरखा ओर हाथ करघा चलानेको तैयार हो जाते है, तो मै वायदा करता हूँ कि यदि मुझमे तव भी शक्ति वाकी रही और वह व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य, जो इस सरकारने मुझे अनुग्रहपूर्वक प्रदान किया हे, वना रहा तो मै प्रत्येक सिपाहीके पास और सरकारके असैनिक विभागोमे काम करनेवाले हर व्यक्तिके पास इसलिए जाऊँगा कि वह अपनी नौकरी छोड दे और चरखेको अपनाये, परन्तु अभी इस समय भी मै हर-एक सिपाहीका और सरकारी नौकरीमे लगे हर व्यक्तिका जो अपनेको भारतीय कहता है, आवाहन करता हूँ कि यदि उसने स्वदेशीका सन्देश समझ लिया है तो उसका परम कर्त्तव्य हे कि वह इस सरकारकी नौकरी छोड दे, जिसने कि इस देशको दुर्वल वना दिया है, जिसने इस्लामपर वन्धन लगा दिये है और जो जलियाँवाला वागकी दुर्घटना-के लिए स्वय जिम्मेदार हे। मै कहता हूँ कि इस सरकारकी सेवा करना किसीके भी लिए पाप है और यदि उन्हे स्वदेशीमें आशा है, तो इस सरकारकी नौकरी छोडकर वे अच्छा ही करेगे।

वम्वई सरकारने दूसरा कारण यह वताया है कि अलीभाइयोने हिंसा भडकाने-वाले भाषण दिये हैं। मै इन भाइयोको जानता हूँ। उन्होने जितने भाषण दिये है लगभग उन सबसे मै परिचित हूँ ओर मै इस मचसे उस [सरकारी] आरोपका पूरी तरह खण्डन करता हूँ। इन भाइयोने हमेशा, जहाँतक मुझे मालूम हे, अकेलेमे और सार्वजनिक रूपसे लोगोको किसी भी प्रकारकी हिंसात्मक प्रवृत्ति अपनानेमे रोका हे। परन्तु मै आपको वह कारण वताऊँगा कि सरकारने दोनो भाइयोको क्यो कैद किया है। वे वहादुर है, वे सच्चे है और वे अपने धर्म तथा अपने देशके प्रेमी है और भारतीयोके दिलोमें उनका इतना प्रभाव पैदा हो चुका है कि जितना अपने जीवनकालमें किसी भी भारतीयका नही हो पाया है। उनका नाम एक ऐसा नाम है जो मुसल-मानोके हृदयोमे सम्मोहनभाव जगाता हे और उन्होने लाखो हिन्दुओ और मुसलमानोके

१ देखिये खण्ड १८।

४ देखिए खण्ड १९, परिशिष्ट १।

दिलोमे घर बना लिया है। हिन्दू-मुस्लिम एकताके जितने बडे हामी ये है उतना बडा अन्य कोई मुसलमान नही है। इस सरकारमे बहादुर लोगोके लिए, निडर लोगो और ऐसे लोगोके लिए जो सच्चे है, अपने देश और धर्मके प्रेमी है, और जिनका जन-समूह पर असर हे, कोई स्थान नही है। परन्तु जहाँ मै इस सरकारकी भावनाका विश्लेषण करना अपना फर्ज समझता हूँ ओर जहाँ मै आपका ध्यान इस सरकारके कुकृत्योकी ओर दिलाना जरूरी समझता हूँ, वहाँ मै आपको उत्तेजित न होनेकी और हिंसापर उतारू न होनेकी चेतावनी भी जरूर दूँगा। देशके सामने उत्तेजित होनेके इतने उग्र कारण प्रस्तुत किये गये, फिर भी देशने जो ऐसी शान्ति बरकरार रखी जिसे मै दैवी शान्ति कहता हूँ, उसके लिए मै देशभरके भाइयोको बधाई देता हूँ। मै आशा करता हूँ कि भारतमे जो शान्ति आज छाई हुई है वह ब्रिटिश-तलवारके भयके कारण नही, वरन् अपनी बढती हुई शक्तिके भानसे और सितम्बरमे ली गई व दिसम्बरमे दोहराई गई अपनी ही शपथके ज्ञानके फलस्वरूप है। मोजूदा भडकानेवाली बातोके बावजूद और आगे भी जो भडकानेवाली बाते हो उन सबके बावजूद यदि हम अपने वचनोका पालन करे और अन्ततक यह शान्ति बनाये रखे, तो मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यही सरकार खिलाफतके प्रति किये गये अन्याय, पजाबके प्रति अपने अत्याचार और अलीभाइयोके साथ किये गये अन्यायके लिए भारतसे क्षमा माँगेगी। हमे समझ लेना चाहिए कि इस सरकारका ध्येय क्या है। इस सरकारने इतने लम्बे अरसेतक आतककी प्रणालीका अन्तिम भरोसा करके अपनेको कायम रखा है। पिछले १२ महीनोसे हम बराबर सरकारको चुनौती देते आये है कि जितना अत्याचार उससे सम्भव हो वह करे। यदि हम जानबूझकर आगमे कूदे तो आगने हमे जलाया, इसकी शिकायत हरगिज न करे। हम पहलेके तजुर्बेसे जान चुके है कि कुछ खास परिस्थितियोमे सरकार किस हदतक जा सकती है। हमने सरकारके रोषको भडका दिया हे और अब हमे कायरोकी तरह उससे भागना नही चाहिए और यदि आज हम जिस कठिन स्थितिमे गुजर रहे है, उसे झेल लेते है तो मै वायदा करता हूँ कि तीन महीनेके भीतर ही आप भारतमे स्वराज्यकी स्थापना कर लेगे और आप अपने देशको एक स्वतन्त्र देश कहने लगेगे। अहिंसा कमजोरका ही नही, बलवानोका भी अस्त्र है, जैसे कि अलीभाइयोका था। जब सरकारकी समझमे यह आजायेगा कि भडकानेवाली बडीसे-बडी स्थितिमे भी हम अपना सन्तुलन नही खो बैठेगे बल्कि यह दिखायेगे कि हमने भविष्यमे समझदारीसे काम करनेका निश्चय कर लिया है तो आप देखेंगे कि हमे हमारे उचित स्थानसे हटानेमे सरकार सर्वथा असमर्थ हो जायेगी। यदि हिन्दुओ और मुसलमानोने अलीभाइयोकी काम करनेकी भावनाको समझ लिया है और यदि उन्होने असहयोगके सन्देशकी भावना हृदयगम कर ली है और यदि वे अपने धर्म और अपने देशके प्रेमी है, तो मै हिन्दुओ और मुसलमानो — दोनोसे कहता हूँ कि आप झुंझलाये नही वरन् शान्त रहे और धर्म तथा देशके सम्मानकी रक्षा करनेके अपने निश्चयमे दृढ रहे।

भारतके प्रत्येक स्त्री-पुरुषको केवल एक ही काम करना है और वह यह कि हम उन सभी विदेशी वस्त्रो तथा विदेशी भडकीली वस्तुओका, जो अबतक हमारी दासताके

चिढ़ रहे है, बहिष्कार करे। इतना ही काफी नही कि आप अपने घरोसे और अपने सन्दूकोसे कुछ चिथडे निकाल फेंके, बल्कि त्रिचनापल्लीकी स्त्रियोको तो यह चाहिए कि वे अपनी बढ़िया-बढ़िया साड़ियाँ जो विलायती सूतसे बनी है और जो उन्होंने अबतक अपने पास बडे चावसे सजोकर रखी है, त्याग दे। इससे मुझे पता चल जायेगा कि अपने धर्मके प्रति आपको कितना प्रेम है, अपने देशके प्रति तथा अलीभाइयोके प्रति आपके हृदयमें कितना स्नेह है। त्रिचनापल्लीके लोग, चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान, इसी मापदण्डसे अपनेको परखने दे और कल सुबहतक वे इस कसौटीपर खरे उतरे। और आपमें मौलाना शौकत अली-जैसी अथक परिश्रमशीलता और संगठन करनेकी विलक्षण क्षमता तथा मुहम्मद अली-जैसी भाषण देनेकी शक्ति चाहे न हो, परन्तु प्रत्येक हिन्दू और मुसलमान अपने धर्म और देशके लिए संसारके प्रत्येक सुखको त्याग देनेके उनके गुणका अनुकरण सुगमतापूर्वक कर सकता है। उनकी तरह आप भी अपने पासका सारा विदेशी वस्त्र त्याग सकते है। आप भी उतना मोटा खद्दर पहन सकते है जितना कि ये दोनो बहादुर भाई पिछले छः महीनोसे पहनते आये है। उनके प्रति आपके स्नेहकी सच्ची कसौटी यही होगी। सच्ची अहिंसा और हिन्दू-मुस्लिम एकताको आप मान्यता देते है उसका भी स्पष्ट प्रमाण मिल जायेगा, क्योंकि ज्यो ही हम यह दिखा देते है कि हमारा और उनका एक ही उद्देश्य है त्यो ही हम एकताके सूत्रमे बँध जाते है।

कुम्भकोणम्के विद्यार्थियो और मद्रासके विद्यार्थियोने भी मुझसे पूछा है कि देशके इतिहासके इस नाजुक मौकेपर उनका क्या कर्त्तव्य है। उनका अत्यन्त स्पष्ट कर्त्तव्य सितम्बरमे और फिर दिसम्बरमे उनके सामने रख दिया गया था। और वह यह था कि विद्यार्थीगण प्रत्येक ऐसे स्कूलको, जो या तो सरकारके प्रबन्धमे या उसकी मददसे चलता हो छोड दें। मै त्रिचनापल्लीके उन विद्यार्थियोको बधाई देता हूँ जिनमे विश्वास-का बल था, और जो सरकारी स्कूलोको छोडनेकी जरूरत समझ पाये थे। इन महीनोमे शानदार काम कर डालनेके उपलक्ष्यमे मैं उन्हे बधाई देता हूँ। मै उन विद्यार्थियोके प्रति भी अपनी सहानुभूति व्यक्त करता हूँ जो किसी-न-किसी कारणवश अपने पुराने स्कूल छोडकर बाहर नही आ सके। परन्तु यदि वे चाहे तो अपने देशकी सेवा आज भी कर सकते हैं। वे भारतके लिए एक या दो घटे, अपनी स्थितिके अनुसार, धर्मकी भावनासे कताई करनेको अलग रख सकते है। अन्य सब लोगोकी तरह वे भी खद्दर पहनना शुरू कर सकते है। स्वदेशीकी वेदीपर हम सहयोगियो और असहयोगियोको, जो सरकारकी नौकरीमे है और जो सरकारकी नौकरी नही कर रहे है उनको — बल्कि उन सबको भी जो अपनेको भारतीय कहनेका दम भरते है, आमन्त्रित कर सकते है। जिस तरह भारतमे पैदा होनेवाला और भारतमे पकाया गया अन्न ही खाना हमारा प्रथम कर्त्तव्य है, उसी तरह हम वे ही कपडे पहने जो भारतमे काते गये सूतसे भारतमे ही बुने गये हो, और जिस तरह हम स्वभावत अनुभव करते है कि अर्थ-शास्त्रका सच्चा नियम यही चाहता हे कि हमे अपना खाना अपने घरोमे पकाना चाहिए उसी तरह अर्थशास्त्रका नियम स्वभावत हमसे इस बातकी भी अपेक्षा करता है कि हम अपना कपडा अपने घरोमे कात और बुनकर तैयार करे।

विद्यार्थियोकी तरह बगाल, मद्रास और कुम्भकोणम्मे भी वकीलोने मुझसे अपना कर्त्तव्य पूछा है। यदि उन्होने वकालत नही छोडी है तो उनकी ओर तिरस्कारपूर्वक अँगुली उठाना हमारा काम नही है। परन्तु मै उनसे स्वदेशीका सिद्धान्त अपनाने और हर सम्भव तरीकेसे स्वदेशी आन्दोलनकी मदद करनेका अनुरोध करूँगा। कमसे-कम उनसे इतनी आशा तो की ही जा सकती है कि वे अदालतोमे खद्दरकी पोशाकमे जानेका साहस दिखायेगे। यदि उन्हे स्वराज्यमे विश्वास है तो मै उनसे और उनके परिवारवालोसे यह आशा अवश्य करता हूँ कि प्रतिदिन धार्मिक भावनासे सूत कातनेके लिए एक या दो घटेका समय अलग निकाले। यदि आज विभिन्न गुणोवाले लोग सार्वजनिक मचोपर आये है तो मै आशा करता हूँ कि वकील लोग धैर्यसे काम लेगे और श्रमका महत्व तथा जनताकी सेवाका गौरव समझेगे। साहस, लगन और विशेष रूपसे निर्भीकता तथा खुशीके साथ त्याग करनेकी भावना — ये ऐसे गुण है जिनकी भारतमे नेतृत्वके लिए बहुत जरूरत है। मेरे मनमे इसके बारेमे जरा भी सन्देह नही कि एक अपढ पचम भाई, जो इन गुणोका पूर्ण परिचय दे, इस तरहके आन्दोलनका नेतृत्व करनेके लिए मेरे जैसे कमजोर व्यक्तिकी अपेक्षा अधिक योग्य है। क्योकि जिस वस्तुको प्राप्त करनेके लिए हम लालायित हो रहे है वह कोई पेचीदा चीज नही बल्कि एक बिलकुल सादी-सी वस्तु है। वह वस्तु है स्वराज्य — जो हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। मेरे मनमे जरा भी सन्देह नही कि कोई भी सीधी-सादी और ईश्वरको माननेवाली स्त्री, यदि उसमे ये गुण, जिनका मैने उल्लेख किया है, मौजूद है तो वह इस तरहका आन्दोलन चला सकती है। मै त्रिचनापल्लीकी औरतोको अपना फर्ज अदा करने और त्यागकी वेदीपर अपना पूरा योग देनेके लिए आमन्त्रित करता हूँ। यह देखते हुए कि हमारा युद्ध अहिसात्मक है, मै इस श्रोतासमुदायमे से प्रत्येक व्यक्तिको आगाह करता हूँ कि वह अपने मनमे असहिष्णुताकी भावनाको हावी न होने दे। जिन विद्यार्थियोने स्कूल या कालेज छोड दिये है, या जिन वकीलोने वकालत छोड रखी है, वे बडप्पनकी भावना न अपनाये, और जिन विद्यार्थियो अथवा वकीलोने काग्रेसके प्रस्तावपर अमल नही किया है, उन्हे नफरतकी निगाहसे न देखे। स्वराज्यके मचपर सबसे दुर्बल और सबसे सशक्त भारतीय, दोनोके लिए जगह है। अहिसाकी सेनामे बच्चे और अपग व्यक्ति भी, यदि उनका दिल सच्चा है, तो शरीक किये जा सकते है।

मोपला विद्रोहके सम्बन्धमे दो शब्द कहकर मै अपना कथन समाप्त करूँगा। मै जानता हूँ कि मलाबारमे जो-कुछ हुआ है, उसके कारण हममे से वे सभी जो वहाँकी स्थिति समझ सके है, चिन्तामे घुले जा रहे है। हमारे मोपला भाई पागलपन कर बैठे यह सोचकर मेरा हृदय अत्यन्त क्षुब्ध है। उन्होने अधिकारियोको मार दिया है यह सुनकर हमे दु ख होता है। यह जानकर कि उन्होने हिन्दू घरोको लूटा है और कई सौ पुरुष और स्त्रियोको निराश्रय कर दिया और वे दाने-दानेको मोहताज कर दिये गये है, दु ख होता है। मुझे यह सोचकर क्षोभ होता है कि उन्होने हिन्दुओको जबर्दस्ती मुसलमान बना लिया है। इन सभी कामोसे उन्होने देशकी भारी हानि की है। परन्तु फिर भी हमे दृष्टि-सतुलन रखना चाहिए। उनके ये काम भारतके तमाम मुसलमानोके काम नही है, और ईश्वरको धन्यवाद है कि ये काम सभी मोपलाओके भी नही है।

प्रत्येक प्रतिष्ठित मुसलमानने जिसे मै जानता हूँ, मोपलाओके हरएक कामकी निन्दा की है। इसलिए हिन्दू-मुस्लिम एकताके प्रति हमारी निष्ठा दृढ और अडिग बनी रहनी चाहिए। इस आदर्शके प्रति हमारी निष्ठाको शायद किसी भी तरहका धक्का नही लगना चाहिए। हमे एक क्षणके लिए भी यह नही सोचना चाहिए कि यदि ब्रिटिश तलवार न होती तो मलाबारमे कभी शान्तिकी पुन स्थापना नही हो सकती थी। सारे ससारमे जहाँ भी स्त्री-पुरुष बसते है, वे कभी-कभी आपसमे लड बैठते ही है। कभी-कभी वे रक्तपात भी करते है, और आपेसे बाहर होकर पागलपन कर डालते है। परन्तु अपने झगडे निबटानेमे उन्हे कभी कोई कठिनाई नही हुई। जब पहला मोपला खूरेजीपर उतारू हुआ था उस समय सरकार और उसकी पुलिस कहाँ थी? ऐसी सरकारसे क्या लाभ जो केवल झगडे हो जानेके बाद दण्ड देना तो जानती है लेकिन झगडेकी प्रारम्भिक अवस्थाओमे जीवन-रक्षा करना नही जानती। ऐसी सरकारसे क्या लाभ है जिसकी पुलिससे कभी जरा भी जोखिम उठानेकी आशा नही की जाती और जो एक जानके बदले हजारो जाने लेती है। ऐसी सरकारसे क्या लाभ जो बरसो-से मोपलाओका स्वभाव जानते हुए भी उन्हे शान्तिके मार्गपर नही ला सकी। और ऐसी सरकारसे क्या लाभ जिसने बेचारे हिन्दुओको नि शस्त्र रखकर आत्मरक्षा कर सकनेमे बिलकुल लाचार बना दिया है। मै जानता हूँ कि मोपला लोगोके नजदीक अहिंसा अन्तिम आदर्श नही है, जैसा कि मेरा है। मोपला उपद्रवका अलीभाइयोकी गिरफ्तारीसे सम्बन्ध जोडकर बम्बई सरकारने हमारी आँखोमे धूल झोकी है। भारतमे असहयोगके आरम्भसे पूर्व भी ऐसे उपद्रव सब जगह होते थे और उपद्रवकी आरम्भिक हालतमे सरकार जान-मालकी रक्षा करनेमे असमर्थ होती रही है, जैसा कि तीन साल पहले शाहाबादमे जान-मालकी रक्षामे वह बुरी तरह असफल रही।[1] इसकी सरक्षण-शक्ति उस वक्त कहाँ चली गई थी जब, यदि मेरा खयाल ठीक है, लगभग एक हफ्ते तक या कमसे-कम ३–४ दिनोतक मुसलमानोके प्रति भयकर क्रोधसे भरे हुए हिन्दुओ द्वारा गाँवके-गाँव लूटे जा रहे थे? इसलिए मै आशा करता हूँ कि यह विशाल सभा मोपला उपद्रवसे यही एकमात्र सम्भव सबक ग्रहण करेगी कि अपने निश्चित कार्यक्रमसे हमे तिलभर भी नही डिगना है, प्रत्युत अपने प्रयासको दुगना करते हुए आगे बढना है और इसी सालके अन्दर उसे पूरा भी करना है ताकि हम स्वराज्यकी स्थापना कर सके।

मुझे पता चला है कि एक थियेटर मैनेजरके मामलेमे उठ खडे हुए एक किस्मके दगेके सिलसिलेमे लगभग ४० आदमी गिरफ्तार किये गये है। मै यह जरूर स्वीकार करूँगा कि इस प्रकारकी गिरफ्तारी ठीक थी। हर काग्रेस-जनको, हर काग्रेस-नेताको अपने गाँव और जिलेमे शान्ति कायम करनेके लिए अपने आपको जिम्मेदार मानना चाहिए, और चाहे हम अमुक दगेमे मौजूद रहे हो या न रहे हो, लेकिन सरकारको कही भी हुए ऐसे किसी भी दगेके लिए हमे ही जिम्मेदार मानने दीजिए क्योकि

१ यहाँ सकेत शाहाबादमें सितम्बर–अक्तूबर, १९१७ में हुए उपद्रवोकी ओर है। देखिए खण्ड १३ और १४।

इसमे कोई सन्देह नही कि भारतमे जीवन एव जागृति पैदा करनेकी जिम्मेदारी हमारी ही है। लोगोको अपनी खुद ही की शक्ति पहचानने योग्य बनानेके लिए भी हमे अपनेको ही जिम्मेदार मानना चाहिए और इसलिए निस्सन्देह हर व्यक्तिका कर्त्तव्य हो जाता है कि वह इस बातका ध्यान रखे कि लोग अनुशासन कायम रखे। हम अपनी कानूनी जिम्मेदारी भले ही न माने परन्तु कही भी किसी प्रकारकी हिंसाके विस्फोटके लिए अपनी नैतिक जिम्मेदारी माननेसे मुँह न मोडे। हम कोई शोर भरे प्रदर्शन न करे, नारे न लगाये, असहयोग आन्दोलनमे शरीक न होनेवाले किसी भी व्यक्तिपर दबाव या जोर न डाले। शान्तिप्रिय लोगोको यही शोभा देता है। हम जब सभाओमे शरीक होते है तब हम कोई शोरगुलवाला प्रदर्शन न करे। शान्तिसे चरखा चलाते रहे और यदि सम्भव हो तो विदेशी वस्त्रका इसी महीनेके अन्दर बहिष्कार पूरा करे। हमारे पास जितना भी फालतू समय हो, उसका उपयोग सूत कातने और कपडा बुननेमे करना चाहिए। मै स्वराज्य पानेका कोई दूसरा रास्ता नही जानता और न अलीभाइयो तथा उन सबको जो बेगुनाह होते हुए भी जेलमे पडे हुए है, रिहा करानेका कोई दूसरा उपाय जानता हूँ।

आप लोगोने जिस अनुकरणीय धैर्यके साथ मेरी बात सुनी है, उसके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ और आशा करता हूँ कि आप मौलाना आजाद सोबानीकी बात भी उतने ही धैर्यसे सुनेगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २२-९-१९२१

६६. सन्देश : करूरकी कांग्रेस कमेटीको

त्रिचनापल्ली
२० सितम्बर, १९२१

मुझे खेद है कि पूर्व-निश्चित कार्यक्रमके कारण मेरा करूर आ सकना सम्भव नही है। मै जानता हूँ कि आप लोगोने नशाबदीके लिए कितनी अच्छी तरह काम किया है। परन्तु यह जानकर मुझे दुःख हुआ है कि एक थियेटरके प्रबन्धकपर तिलक स्वराज्य कोष या शायद एक मन्दिरके लिए चदा देनेके सम्बन्धमे दबाव डाला गया। यदि हमे इसी सालके भीतर स्वराज्य प्राप्त करना है तो हमे अपने बीच मौजूद उच्छृंखल तत्त्वोको काबूमे रखने योग्य बनना चाहिए और किसी भी कारणसे हिंसा नही होने देनी चाहिए। मैने सुना है कि चालीससे अधिक ऐसे नागरिक गिरफ्तार किये गये है, जिनका थियेटरको घेरनेकी वारदातमे जरा भी हाथ नही था। फिर भी, जो लोग गिरफ्तार हुए है मै उन्हे बधाई देता हूँ। मेरे विचारसे यह गिरफ्तारी हमारा अभिनन्दन है। इससे जाहिर होता है कि सरकार हमसे इस बातकी आशा करती है कि असहयोगसे कोई भी ताल्लुक न रखनेवाले लोगोसे भी हम शान्तिका पालन

कराय। मैं आशा करता हूँ कि सच्चे असहयोगियोके नाते वे जेल जायेगे। मैं यह आशा भी करता हूँ कि सरकार चाहे जो भी करे, लोग हर हालतमे अहिसाका पालन निष्ठाके साथ करते रहेगे, और अतमे मैं इस वातकी भी आशा करता हूँ कि जो लोग गिरफ्तार किये गये है, उनकी पत्नियाँ और उनके सम्वन्धी दृढ रहेगे और उन्हे किसी भी तरहका वचाव पेश किये वगैर जेल जाने देगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २६-९-१९२१

६७. भाषण: मानपत्रके उत्तरमें[1]

२० सितम्वर, १९२१

महात्माजीने अपने सक्षिप्त भाषणमें मानपत्रका उत्तर देते हुए कहा कि मुझे जो चाँदीकी तश्तरी भेंट की गई है, उसकी विक्रीसे मिलनेवाला पैसा तिलक स्वराज्य कोष-में जमा किया जायेगा, क्योंकि मेरे पास तो ऐसे उपहार रखनेके लिए कोई जगह ही नहीं है। श्रीरगम् नगरपालिकाका ध्यान, वलिक अपने अस्तित्त्वका औचित्य सिद्ध करनेकी सामर्थ्य रखनेवाली हर नगरपालिकाका ध्यान, मै तीन वातोकी ओर दिलाना चाहता हूँ। एक तो यह है कि अगर आप राष्ट्रीय पुनरुत्थानके इस महान आन्दोलनमें भाग लेना चाहते है तो आपको ध्यान रखना चाहिए कि श्रीरगम्का कोई भी नाग-रिक विना खद्दरके न रहे और किसी भी नागरिकके घरमें कोई विदेशी कपडा नहीं रहे। दूसरे, आपको अपने वीचसे मद्यपानके अभिशापको विलकुल मिटा देना चाहिए। तीसरे, अस्पृश्यताका कलक भी न रहने पाये। इस कलकमय प्रथाको हिन्दू धर्ममें कहीं भी स्वीकृति नहीं दी गई है। यह भारतकी जीवन-शक्तिको ही अपना आहार वनाती जा रही है। मेरा निश्चित मत है कि जिस समय आप इस अभिशापसे छुट-कारा पा लेगे, आप स्वराज्यके अधिकारी वन जायेंगे। जव वाईस करोड हिन्दू इस राक्षसी अन्धविश्वासके शिकार है तो हिन्दुओसे अलग रहकर मुसलमानोके लिए प्रगति करना असम्भव है। इसलिए मै आप, श्रीरगम्के लोगोसे अनुरोध करता हूँ कि आप अस्पृश्यताके विचारको दूर भगाइए। आपके नगरमें जो वहुतसे भव्य मन्दिर है, वे आपको वरावर अपने कर्त्तव्यका स्मरण दिलाते रहेगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २२-९-१९२१

१ यह मानपत्र श्रीरगम्की नगरपालिकाने भेंट किया था।

६८. भाषण: श्रीरंगम्‌की सार्वजनिक सभामे

२० सितम्बर, १९२१

मित्रो,

इस सुन्दर मानपत्रके लिए मै आपको हृदयसे धन्यवाद देता हूँ। मैंने इसे सुन्दर इसलिए कहा कि यह पत्रोपर छपा हुआ है। लेकिन मै आपको यह बता दूँ कि एक कारणसे इसकी सुन्दरतामे कमी आ गई है। वह यह है कि आपन मानपत्र अपनी मातृभाषा या राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानीके बजाय एक ऐसी भाषामे लिखा या छापा है जिसका हमारे राष्ट्रीय सम्पर्ककी भाषाके रूपमे कोई महत्व नही है। अग्रेजी कूटनीति और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारकी भाषा है। मै जानता हूँ कि अगर मै आपसे अग्रेजीका प्रयोग एक महानतम विश्व-भाषाके रूपमें ही करनेका अनुरोध करूँ तो आप मुझे गलत न समझेगे। मै समझता हूँ, अग्रेजी साहित्यमे ऐसा बहुत-कुछ है, जिसका अध्ययन करके हम लाभ उठा सकते है। लेकिन, जैसे गलत स्थानमे रखी गई चीजोको कचरा कहते है, वैसे ही जहाँ अग्रेजीके लिए कोई स्थान नही हो सकता, जैसा कि यहाँ हुआ, वहाँ उसका प्रयोग गर्हित है। जब-जब मुझे अपने देशभाइयोको अपने विचारोसे अवगत करानेके लिए अग्रेजीका प्रयोग करना पडता है, जब-जब मुझे हमारी आपसी बातचीतमे अग्रेजी सुननेको मिलती है, तब-तब इस उत्तरोत्तर बढते हुए अपमानका दश मुझे और अधिक चुभने लगता है। इसलिए, जैसा कि आप जानते है, आपके प्रान्तमे हिन्दीके प्रचारके लिए मारवाडी भाइयोसे मैंने ५०,००० रुपया चन्दा इकट्ठा किया है। अत मुझे पूरी आशा है कि अग्रेजी भाषामे महारत हासिल करनेकी बेकार कोशिशके बजाय हम ईमानदारीके साथ अपनी-अपनी मातृभाषा और राष्ट्रभाषामे कुशलता हासिल करनेकी कोशिश करेगे। आजके इस अनास्थाके युगमे सस्कृतकी मधुर ध्वनि सुननेका सौभाग्य तो शायद ही कभी मिल पाता है। मै उस घास-पातकी कुटियामे रहनेवाले अन्धे कविका अपना अनुभव बताता हूँ। उसने जो श्लोक सुनाये, वे यद्यपि दुर्भाग्यमे मेरी ही प्रशसामे लिखे गये थे, फिर भी, मै सच बताता हूँ, उन श्लोकोको उसके मुँहसे इतने सुन्दर ढगसे उच्चरित होते सुनकर मुझे बहुत आनन्द हुआ। अगर हमें अपने देशसे सचमुच प्रेम है तो उसमे जो-कुछ अच्छा है, जो-कुछ उदात्त है, उसके प्रति हमे अपने भीतर रुचि जगानी चाहिए। इसलिए जब मै अपने देशकी स्त्रियोको रग-बिरगे विदेशी वस्त्रोसे सजकर बाहर आते देखता हूँ, तो मुझे बडा दुःख होता है। आपका स्वच्छ शरीर जिसके ऊपरी हिस्सेपर आपने कोई कपडा नही डाल रखा है, और आपके भालपर रचा हुआ तिलक देखकर मुझे बहुत अच्छा लगता है। लेकिन जब मै आपको भी बडे प्रेमसे विदेशी कपडे धारण किये देखता हूँ तो अपने देशके बारेमे मेरा मन निराशासे भर उठता है। आप लोग, जो इस छोटेसे खुशहाल द्वीपमें सुख और समृद्धिका जीवन बिताते जान पडते है, यह नही महसूस

करते कि यहाँ विदेशी कपडेके दाखिल होनेसे भारतका कितना अहित हुआ है। इसने लाखो-करोडो भारतीय परिवारोको बरबाद कर दिया है, भुखमरीकी अवस्थामे पहुँचा दिया है। सेनापर भारतका इतना धन बहाया जा रहा है, जिन लोगोने भारतको अपना घर नही बनाया उनकी पेंशनके रूपमे जो धन बहकर विदेश चला जा रहा है, भारतकी तथाकथित सेवा करनेवाले अंग्रेजोके लिए जो पैसा इग्लैंड भेजा जाता है,[1] वह सब तो बुरा है ही, लेकिन यहाँके लोगोको वस्त्र-उद्योगसे वचित करके उनपर थोपी गई बेकारीने इस राष्ट्रको जितना खोखला बना दिया है, उतना और किसी चीजने नही बनाया है। भारतकी आयके इस दूसरे बडे साधनके समाप्त हो जानेका नतीजा यह हुआ है कि हजारो स्त्रियोको लज्जाजनक और पतित जीवन बितानेको मजबूर होना पडा है। इसने हमे इस योग्य नही रखा है कि हम अकाल और बीमारियोके प्रकोपको रोक सके। और इस तरह हम आज एक ऐसी भयकर परिस्थितिमे पड गये है, जिसका उदाहरण दुनियामे और कही नही मिल सकता। वह परिस्थिति यह है कि प्राय भुखमरीकी स्थिति झेलनेवाले यहाँके करोडो लोग, जो दुनियाकी किसी भी जातिके मुकाबले कम सुसस्कृत नही है, लगभग स्थायी तौरपर सिर्फ एक लाख अंग्रेजोके दास बनकर रह गये है। आप जो सहानुभूति दर्शाते है, वह अगर आपके हृदयसे निकली सहानुभूति है और यदि यहाँ अलीभाइयोकी अनुपस्थिति आपको भी उतनी ही अखर रही है जितनी मुझे, तो आप विदेशी कपडेसे बुनी पोशाकोको छोडनेमे तनिक भी आगापीछा नही करे, और आपके बीच जो विद्वान्से-विद्वान् लोग है, वे भी एक धर्मकार्य मानकर चरखेको अपना लेनेमे कोई सकोच नही करे। फिर यदि आपके हिन्दूधर्मके बाहरी आचार-व्यवहार आपकी आन्तरिक पवित्रताके ही प्रतीक है तो आप अस्पृश्यताके अभिशापसे मुक्ति पा लेगे। एक सनातनी हिन्दूके नाते मै दावेके साथ कहता हूँ कि हिन्दू-धर्ममे ऐसा कुछ नही है जिसके आधारपर अस्पृश्यताको सही माना जा सकता हो। मुझे तो आश्चर्य होता है कि शकर और रामानुजके इस देशमे इस चीजने कैसे इतना विषैला रूप धारण कर लिया। अगर आप ऐसा सोचते हो कि उन्होने पचम भाइयोकी छायातक को अपवित्र माना होगा, तो मै कहता हूँ, सच मानिए, आपने उनकी शिक्षाका अर्थ गलत समझा है। इसलिए मै आशा करता हूँ कि आप लोग अस्पृश्यताके भूतको अपने बीचसे मार भगायेगे और पचम भाइयोको अपने सगे भाइयोकी तरह गले लगायेगे। हमारा आन्दोलन आत्मशुद्धिका आन्दोलन है, यह तो इसी बातसे स्पष्ट है कि मद्यपानकी बुराई हमारे बीचसे समाप्त होती जा रही है। इस अभियानमे आप जो योग देते रहे है, उसके लिए मै आपको बधाई देता हूँ। आशा है, आप सभी दिशाओमे और अधिक प्रयत्न करेगे और स्वदेशी, मद्य-निषेध तथा अस्पृश्यताके क्षेत्रोमें उचित योगदान करेगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २२-९-१९२१

१ अंग्रेजोंकी तथाकथित सेवाओंके लिए इग्लैंडमें दिया जानेवाला धन।

६९. 'इंडियन डेली टेलिग्राफ' के सम्पादकके प्रश्नोंके उत्तर

[२१ सितम्बर, १९२१][1]

"इंडियन डेली टेलिग्राफ" के सम्पादक श्री जे० एम० मैकेंजी द्वारा पूछे गये कुछ और प्रश्नोंके उत्तर श्री गांधीने दिये हैं।

[प्रश्न :] १ : भारत अपनी एक ही माँग स्वीकार करानेके खयालसे साम्राज्यीय सम्मेलनमें शामिल हुआ था, लेकिन दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यने उसे भी अस्वीकार कर दिया। क्या आप इसके लिए गणराज्यको प्रतारणाका पात्र समझते हैं? क्या यह नहीं हो सकता कि जिस देशमें आपने अपने प्रारम्भिक दिनोंमें सफलता पाई थी, उस देशमें एक बार फिर जायें ताकि सारा भारत आश्वस्त होकर बैठ सके?

[उत्तर] भारतमें आज जो सवाल मौजूद है, वह दक्षिण आफ्रिकी सवालका ही वृहत्तर रूप है। अगर मैं यहाँ सफल हो जाता हूँ तो वहाँका सवाल तो अपने-आप हल हो जायेगा।

२ : स्वयं आप भी अबतक आत्म-शासनकी अवस्था प्राप्त नहीं कर पाये हैं, इसलिए ऐसे घोर पतनकारी वातावरणमें इधरसे उधर ठोकरें खानेवाले हम शेष लोगोंकी दयनीय स्थितिका तो आप सहज ही अनुमान लगा सकते हैं?

स्वयं मुझमें भी बहुत-सी कमियाँ हैं, इसलिए मैं आदमीकी कमियोंको बेशक महसूस करता हूँ, और अहिंसामें मेरे विश्वासका कारण भी यही है।

३ : यदि आप अपने प्यारे देशके लोगोंको गरीबी और फकीरीकी तकलीफदेह जिन्दगीके अलावा और सब-कुछ छोड़ देनेको मजबूर कर दें तो क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि उनका भी वही हाल होगा जो रूसकी जनताका हुआ?

रूसकी जनताका हाल क्या हुआ, मैं नहीं जानता। लेकिन भारतको मैं अच्छी तरह जानता हूँ। आजतक हम लोग मजबूरन गरीबीमें जीते रहे, लेकिन अब गरीबी और फकीरीकी जिन्दगीको हम धीरे-धीरे अपनी खुशीसे अपनाते जा रहे हैं। अपने सिद्धान्तपर मैं स्वयं आचरण कर रहा हूँ, इसलिए मेरा अनुमान गलत नहीं हो सकता।

४ : निराशाके गर्तमें तो वह भी गिरा जो 'दुराग्रही' था और वह भी जो समझाने-बुझानेसे बात मान लेनेवाला था। इसलिए क्या आप सोचते हैं कि "रुकनेको तैयार रहनेवाले" के तरीकोंके समर्थनमें अथवा "दोनों ओर रुख किये रहनेवाले" के भी तरीकोंके पक्षमें कुछ कहा जा सकता है? या कि आप सारा बोझ लेकर ही "दिव्य नगरके द्वार" तक पहुँचनेको कृतसंकल्प हैं?

१. यह प्रश्नोत्तर एसोसिएटेड प्रेस द्वारा उसी दिन लखनऊसे जारी किया गया था।

आपने मुझे दो बुराइयोंके ही बीच चुनाव करनेको कहा है। मै दुराग्रही और समझाने-बुझानेसे मान जानेवालेको, रुकनेको तैयार रहनेवाले और दोनो ओर रुख किये रहनेवालेकी अपेक्षा अधिक पसन्द करता हूँ, लेकिन मै समझता हूँ, स्वय मै इनमे से किसी वर्गका नही हूँ। हां, मै यह स्वीकार करता हूँ कि आपने जिन एकाकी चरित्रोका उल्लेख किया है, वैसे बहुत-से लोग मेरे साथ है। आप अन्तमे देखेगे कि मै "लाइट वेट चैम्पियन" हूँ। अपना सारा बोझ मैने यात्राके प्रारम्भमे ही उतारकर रख दिया था।

५ अब तो आपने चन्देसे काफी पैसा इकट्ठा कर लिया है। इसलिए जिस सम्राज्ञीके भारत-प्रेमने आपके जीवनके उष कालमें निश्चय ही आपको बहुत ही रुचिर भावनाओसे अनुप्राणित किया होगा, उसके प्रति सम्मान प्रकट करनेके खयालसे अगर आप रानी विक्टोरियाके स्मारकके लिए कुछ पैसा दे दें तो क्या आपको नहीं लगता कि आपके देशवासी यह बात बहुत पसन्द करेगे?

मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आपके मनमे जिस स्मारककी बात है, स्वर्गीया महारानीके लिए मै उससे कही अच्छा स्मारक तैयार करनेमे लगा हुआ हूँ।

६. वर्तमान परिस्थितियोको देखते हुए, आप दक्षिण आफ्रिकी समस्याका क्या समाधान सोचते हैं?

मेरा समाधान तो यह है कि भारत जो चाहता है, वह उसे दे दिया जाये। बुनियादी दोषको दूर कीजिए, छोटे-छोटे दोष तो अपने-आप दूर हो जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २२-९-१९२१

७०. भाषण: मानपत्रके उत्तरमें[1]

२१ सितम्बर, १९२१

डिंडीगल नगरपालिकाके अध्यक्ष महोदय तथा सदस्यगण,

आपने जो मानपत्र भेट किया है और उसमे जो उद्गार व्यक्त किये गये है, उनके लिए मै आपको हृदयसे धन्यवाद देता हूँ। मै तो सिर्फ यही आशा कर सकता हूँ कि यह मानपत्र आपकी इस इच्छाकी अभिव्यक्ति है कि आज समस्त भारतमें त्याग-बलिदानकी जो भावना फैलती जा रही है, उसमे आप पूरा योग देना चाहते है। जैसा कि मैने अन्य स्थानोमे कहा है, आपसे भी तीन बातोकी ओर ध्यान देनेको कहूँगा। इन्हे आप बहुत लाभदायक ढगसे, भारतके राजनीतिक दर्जेको कोई नुकसान पहुँचाये बिना, कर सकते है। ये तीन बाते है — मद्यनिषेध, स्वदेशी और अस्पृश्यता-निवारण। डिंडीगलके नागरिकोके और पचम भाइयोके प्रतिनिधि होनेके नाते आप उनके भी स्वास्थ्य और हितोके सरक्षक है। इसलिए आपको अस्पृश्यताके अभिशापसे छुटकारा

१ यह मानपत्र डिंडीगलकी नगरपालिकाने दिया था।

पाना चाहिए। यह स्वराज्य पानेके उपायोमे से एक है। इसी तरह आप विदेशी कपडेके बहिष्कार और स्वदेशी कपडेके उत्पादनके लिए भी ऐसे ढगसे सगठित प्रयास कर सकते है, जैसे सन्तोषजनक ढगसे कोई सत्ता यह काम कर सकती है, क्योकि डिंडीगलके नागरिक आपके नियन्त्रणमे हैं। यही बात मद्यनिषेध अभियानपर भी लागू होती है। मै आशा तो यही करता हूँ कि लोगोके सामने अपने आचरणका उदाहरण रखकर, अपनी परिषद्मे प्रस्ताव पास करके तथा पूरे यन्त्रको नये सिरेसे क्रियाशील बनाकर आप ये तीनो लक्ष्य प्राप्त कर लेगे। मानपत्रके लिए एक बार फिर मै आपको धन्यवाद देता हूँ।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, २६–९–१९२१

७१. भाषण : डिंडीगलकी सार्वजनिक सभामे[1]

२१ सितम्बर, १९२१

डिंडीगलके नागरिकोने स्मर्ना तथा तिलक स्वराज्य-कोषके लिए महात्माजीको एक थैली भेंट की। उसके बाद गाधीजीने निम्नलिखित भाषण दिया। डा० टी० एस० एस० राजन्ने उसका तमिल अनुवाद सुनाया :

जब त्रिचनापल्लीमे आपके प्रतिनिधियोको मौलाना साहब और मुझसे इस नगरमे आनेका आग्रह करते देखा तो सोचा कि यहाँ अवश्य ही असहयोगके कुछ असाधारण परिणाम देखनेको मिलेगे। मैने आशा की थी कि आप सब हाथका कता-बुना खद्दर पहने होगे। मुझे उम्मीद थी कि डिंडीगलके प्रत्येक घरमे एक चरखा जरूर होगा। परन्तु यहाँ तो मै केवल शोर-शराबा और कोरा उत्साह ही देख रहा हूँ। यदि हम स्वराज्य या अलीभाइयो और उनके साथियोकी रिहाई चाहते है, तो हमे अपने उत्साहको सही अभिव्यक्ति देनी चाहिए। डिंडीगलमे केवल तीन सौ चरखे है। आपके नगरकी जन-सख्या तीस हजार है, जिनमे से दस हजार मुसलमान और बीस हजार हिन्दू है। एक परिवारमे औसतन पाँच व्यक्ति गिने तो यहाँ ६,००० परिवार होने चाहिए और उनमे कमसे-कम छ हजार चरखे रोजाना चलने चाहिए। स्वदेशीके बिना स्वराज्य सम्भव नही। स्वदेशीका अर्थ केवल अपने देशकी जरूरतका सामान तैयार कर लेना नही, बल्कि खिलाफत और पजावके प्रति किये गये अन्यायोका अहिंसात्मक ढगसे निराकरण कराना भी है। मुझे मालूम हुआ है कि आप लोग छोटे-छोटे गुटोमे बँटे हुए है। यदि हर व्यक्ति अपने-अपने कामसे ही सरोकार रखेगा तो निश्चय ही स्वराज्य नही मिल सकता। इसी तरह यदि हिन्दू अपनी उच्चताकी झूठी धारणापर आग्रह करते रहेगे या पचम लोगोको अपनेसे पृथक समझते रहेगे तो स्वराज्य मिलना असम्भव है।

१ सभा चट्टानके निकटवाले मैदानमें हुई थी।

इस अहातेमे अपनी यात्राके दौरान जो चीज देखकर मेरा मन सबसे अधिक व्यथित हुआ वह है अस्पृश्यता। मै अपने धर्मके प्रति अपने दायित्वको समझनेवाला एक सनातनी हिन्दू होनेका दावा करता हूँ। और उसी नाते मै यह कहनेकी हिम्मत करता हूँ कि हिन्दू शास्त्रोमे कही भी ऐसी कोई बात नही है जिससे अस्पृश्यताको उचित माना जा सके। इसलिए जबतक हम (हिन्दू) लोग मनुष्यके साथ कुत्तोसे भी बुरा व्यवहार करनेसे बाज नही आते तबतक हमे स्वराज्य पानेका कोई हक नही है। मैंने आपको स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए तथा पजाब और खिलाफत-सम्बन्धी अन्यायोको दूर करानेके लिए सभी जरूरी शर्ते बता दी है। यदि मुसलमानोको खिलाफत प्राणोकी भाँति प्यारा है, यदि मुसलमान और उनके हिन्दू भाई अलीबन्धुओके प्रति प्रेम रखते है और यदि हिन्दू और मुसलमान स्वराज्य चाहते है तो सबको नियमित रूपसे सूत कातना और कपडा बुनना शुरू करना चाहिए। हिन्दुओ और मुसलमानोको एक-दूसरेके साथ सगे भाइयो-जैसा व्यवहार करना चाहिए। दोनो अपने-अपने धर्मपर दृढतासे डटे रहे, किन्तु साथ ही एक-दूसरेके लिए त्याग-बलिदान करनेको भी तैयार रहे। हम सबको उत्तेजनाके गम्भीरसे-गम्भीर कारणोके बावजूद अहिंसा धर्मपर दृढ रहना चाहिए। हिन्दुओको अस्पृश्यता समाप्त करके अपने पचम भाइयोको गले लगा लेना चाहिए। मै यह नही चाहता कि आप उनके साथ रोटी-बेटीका सम्बन्ध करे। परन्तु आपके हिन्दू-धर्मका तकाजा है कि आप मानव-मात्रको समान अधिकार प्रदान करे। मै चाहता हूँ कि आप पचमोको भी वही अधिकार दे जिसे कोई अन्य मनुष्य आपसे माँगनेका हक रखता है और जो आप शेष समाजसे खुद अपने लिए माँगते है। इस बातमे मुझे रचमात्र भी सन्देह नही है कि यदि ये शर्ते पूरी कर दी जाये तो हमे इसी साल स्वराज्य मिल जायेगा। ईश्वर हमारे प्रयासोके फलीभूत होनेमे हमारी सहायता करे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २६–९–१९२१

७२. भाषण : मदुरामे[1]

२१ सितम्बर, १९२१

मित्रो,

आपने इस समय जो अभिनन्दन-पत्र भेट किये है, उनके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। लेकिन दस हजार अभिनन्दन-पत्र भेट करके भी हम स्वराज्य प्राप्त नही कर सकते। इतना शोरगुल सुनकर मुझे बहुत कष्ट होता है। मै आपके समक्ष ऐसा व्याख्यान नही देना चाहता, जिसे सुनते-सुनते आप लोग ऊब जाये। अपने अभिनन्दन-पत्रोमें आपने कहा है कि यह एक धर्म-युद्ध है। इस प्रकारके प्रदर्शन और इस तरहका शोर-गुल स्वराज्यके मार्गमे बाधक है। मदुरामे यह सब गडबड देखकर मै बहुत दुखी हूँ।

१ अब इसे मदुरई कहा जाता है।

क्या मैं यही सब देखने यहाँ आया था? मुझे आशा है कि आपके नेता आपको बतायेंगे कि स्वराज्य हासिल करनेके लिए आपका कर्त्तव्य क्या है। यदि आप भारतमें धर्म-राज्य चाहते हैं तो आपको चरखा जरूर चलाना चाहिए, क्योंकि यह शान्ति और हिन्दू-मुस्लिम एकताका प्रतीक है। आपको अस्पृश्यता समाप्त कर देनी चाहिए, क्योंकि धर्म उसकी अनुमति नही देता। आपको कोशिश करनी चाहिए कि नशाखोरी बिलकुल बन्द हो जाये। मुझे आशा है कि आपके नेता लोग आपको इन सब बातोंके बारेमें आपके कर्त्तव्यका भान करायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २६-९-१९२१

७३. टिप्पणियाँ

बंगाल

बंगाल एक बडा प्रान्त है, इसलिए पाठकोंको यह देखकर आश्चर्य नही होना चाहिए कि इन टिप्पणियोंमें मुख्य रूपसे बंगालके ही कार्योंपर विचार किया गया है। व्यक्तिगत बातचीतमें तो मैंने बेहिचक ऐसा कहा है कि स्वदेशीकी दृष्टिसे बंगाल सभी प्रान्तोंसे पिछडा हुआ है। वहाँके गाँवों या नगरोंके जन-साधारणपर तो स्वदेशीकी छापका कोई आभास नही मिलेगा। खादी बंगालमें सबसे कम देखनेको मिलती है। लेकिन वहाँ स्वदेशीके पुनरुज्जीवनके लक्षण अवश्य दिखाई दे रहे हैं। अन्य स्थानोंकी तरह यहाँके जीवनमें चरखेकी जड गहरी नही जम पाई है। लेकिन सर्वत्र इसका एक आम चलन तो होता ही जा रहा है। मैंने सिलचर और सिलहटमें इसे छोटे रूपमें देखा, लगभग खिलौने-जैसा ही था। सूत कताईके लिए वैसे यह ठीक है, लेकिन इससे सूत बहुत कम तैयार होता है। चटगाँवमें अधिक चरखे देखनेको मिले और जरा बेहतर किस्मके भी। वहाँ वालोंने एक हलका-सा सफरी चरखा भी तैयार कर लिया है, जिसे लडके-लडकियाँ ज्यादा पसन्द करते हैं। यह बहुत साफ-सीधा, सुन्दर और सस्ता है। लेकिन सिलचर-किस्मके चरखोंकी तरह ही इसपर भी उतना सूत नही कत पाता जितना कि पुराने किस्मके चरखोंपर कतता है। दूसरी ओर बारीसालमें हमने देखा कि वहाँ एक बहुत कौशलपूर्ण ढंगका चरखा ईजाद किया गया है, जिसके चक्केको पैडलसे चलाया जाता है। वे हमें यह नही बता सके कि इसपर एक खास समयमें कितनी कताई हो सकती है, लेकिन अगर पुराने किस्मके चरखे जितनी ही होती हो, तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा। इन आविष्कारोंसे पता चलता है कि चरखेकी लोकप्रियता बढ रही है और अब चरखा चलाना लोग जारी रखेंगे। इसके अतिरिक्त, बारीसालमें बहुत ही बारीक और एक-सा सूत देखकर बडी खुशी हुई। यह सूत वहाँके राष्ट्रीय स्कूलके लडकोंने काता था। जितनी मात्रामें सूत दिखाया गया, वह भी बुरा नही था। बारीसालकी कताईशाला सुन्दर और साफ थी और उसमें जगह भी काफी थी। करघे

श्रीरामपुर फिरकेके उनन-फिरकीवाले थे। संगठनकर्त्ताओंके अधीन कोई ८० करघे हैं। बंगालके कमरेमें करीब १५,००० रुपयेके मालका स्टाक था। वे अभीतक यह नहीं समझ पाये हैं कि ताना-बाना दोनोंमें हाथसे कते सूतका ही प्रयोग करना नितान्त आवश्यक है। मैं सभी खादी संगठनोंसे यह समझ लेनेका अनुरोध करता हूँ कि ताना-बाना दोनोंके लिए हाथ-कते सूतका ही प्रयोग करना सबसे जरूरी बात है। मिलमें तैयार सूत और हाथकते सूत दोनोंकी मिलावटसे बना कपड़ा तो बाजारोंमें पहलेसे ही मिलने लगा है। और कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंको ऐसी चीजोंपर अपना समय बरबाद करनेकी न जरूरत है और न उन्हें ऐसी चीजोंपर समय बरबाद ही करना चाहिए, जिनकी व्यवस्था एक साधारण व्यापारी भी कर सकता है।

लेकिन कहनेकी जरूरत नहीं कि मैंने जो ये थोड़ेसे करघे और चरखे देखे, उनसे पूरे बंगालकी कपड़ेकी जरूरत पूरी नहीं हो सकती। और अगर बंगालको अपनी कपड़े-की जरूरत पूरी करनेके लिए बम्बई और अहमदाबादपर ही निर्भर रहना पड़ा तो वह स्वराज्य आन्दोलनमें मदद नहीं कर सकता। जैसे उस आदमीको, जिसे जबरदस्ती भूखा रखा जाये, ईश्वरके बारेमें सोचनेको प्रेरित नहीं किया जा सकता, वैसे ही अध-भूखे रहनेको मजबूर लाखों-करोड़ों बंगाली स्वराज्यके बारेमें सोच नहीं सकते, उसकी खूबियोंको समझ नहीं सकते। स्वराज्यकी पहली अनिवार्य शर्त यह है कि हर प्रान्त खाद्य और वस्त्रके मामलोंमें आत्म-निर्भर हो जाये।

लेकिन एक बार पूरी तरह जग जानेपर बंगाल किसीसे पीछे नहीं रहेगा। उसकी रचनाशक्ति बहुत अच्छी है। उसके गांव अब भी अपनी सादगी कायम रखे हुए हैं। बंगाली धरतीके बेटे बड़े होशियार और उद्यमी हैं, बेटियाँ बहुत शीलवती, भोली और प्यारी हैं। स्त्री-पुरुष दोनोंमें गहरी धार्मिक प्रवृत्ति है। उनकी आस्थामें मनुष्यको ऊपर उठानेका बल है। चरखेकी स्मृति उनके मनमें जीवित है। बंगालको सिर्फ इस बातको महसूस करना है कि वह न केवल अपने लिए, न केवल भारतके लिए बल्कि बाहरी दुनियाके लिए भी सुन्दर और महीनसे-महीन कपड़े तैयार करता था, और यद्यपि इस क्षेत्रमें उसने अतीतमें बड़ा शानदार काम किया है, किन्तु अब वह उससे भी अच्छा काम करके दिखायेगा। बंगाल अब यह महसूस करने लगा है कि यद्यपि वहाँकी लाखों स्त्रियोंने कताईकी कलाको भुला दिया है लेकिन दूसरा कोई धन्धा नहीं अपनाया है, और उसकी तथा सारे भारतकी गरीबीका मूल कारण किसान वर्गकी वह बेकारी है, जिसे उसे मजबूर होकर स्वीकार करना पड़ता है। मुझे पूरा विश्वास है कि बंगाल अब चरखेके सन्देशको समग्रत हृदयगम करनेवाला है, और फिर तो वह भारतमें धूम मचा देगा।

जैसा कि एक मित्रने कहा, बंगालको अभी बहुत-सी बातें भुलानी भी हैं। अन्य कई प्रान्तोंकी तरह बंगालके सामने भी स्थिति ऐसी नहीं है कि वह तत्काल नये सिरेसे काम करना शुरू कर दे, उसे भी बहुत-सी मौजूदा बातोंको मिटाना है। उदा-हरणके लिए, उसे यह समझना होगा कि ढाकामें विदेशी सूतसे जो कपड़ा बुना जाता है, वह स्वदेशी नहीं है।

हड़तालोंके बारेमें

असम-बंगाल रेलवे तथा जहाजोके कर्मचारियोकी हडताले सामान्य हडतालोसे भिन्न थी। जैसा कि मुझे लगा है, मजदूर सघसे बाहरके लोगोके प्रति सहानुभूतिमे हडताले करनेका यह पहला प्रयत्न था। इस तरह ये हडताले दूसरोके प्रति सहानुभूतिसे प्रेरित होकर की गईं मानवतावादी और राजनीतिक हडताले थी। मुझे पूरी रेलवे लाइनपर हडतालियोसे मिलनेका मौका मिला, लेकिन गौहाटी, चटगाँव और बारीसालमे खास तौरसे। उनसे मेरी खुलकर बातचीत हुई और उस बातचीतके बाद मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि उन लोगोको, इस हडतालकी क्या कीमत चुकानी होगी, इसका पूरा अहसास नही था। किसी बाहरी आदमीके लिए ऐसा कह देना कि अगर इस मामलेका सचालन मेरे हाथोमें होता तो मैं ऐसा करता, वैसा करता, एक खतरनाक और अनुदारतापूर्ण बात है। लेकिन अगर मैं अपनी राय दूँ तो यही कहूँगा कि मेरी समझसे मजदूर परमार्थवश की जानेवाली इस हडतालके लिए तैयार नही थे। मेरे विचारसे भारतके मजदूरो और शिल्पियोमे वैसी राष्ट्रीय जागृति नही आई है, जो दूसरोके प्रति सहानुभूतिमे की गई हडतालकी सफलताके लिए जरूरी है। दोष हमारा ही है। हम राष्ट्र-सेवाके कार्यमे लगे लोगोने अभी कुछ समय पहलेतक इन वर्गोकी आवश्यकताओ और आकाक्षाओका अध्ययन करनेकी चिन्ता नही की और न उन्हे राजनीतिक परिस्थितियोकी सही जानकारी देनेकी ही फिक्र की। अबतक हम यही मानते रहे है कि जो लोग हाई स्कूलो और कालेजोकी शिक्षा प्राप्त कर चुके है, वे ही राष्ट्रका काम करनेके लायक है। इसलिए यह अपेक्षा करना ठीक नही है कि मजदूर और शिल्पी लोग एकाएक दूसरोके हितोका खयाल करके उनके लिए त्याग और बलिदान करने लगे। हमे राजनीतिक अथवा अन्य उद्देश्योके लिए उनसे नाजायज फायदा नही उठाना चाहिए। अभी हम उनकी जो सबसे अच्छी सेवा कर सकते है, उनसे जो सबसे अच्छी सेवा ले सकते है वह यह कि उन्हे अपनी सहायता आप करनेकी शिक्षा दे, उन्हे अपने कर्त्तव्यो और अधिकारोका बोध कराये, और उन्हे इस लायक बनाये कि वे अपनी उचित शिकायते स्वय ही दूर करा सकें। राजनीतिक, राष्ट्रीय या मानवतावादी कार्यो और सेवाओके लिए वे तभी तैयार होगे — उससे पहले नही।

इसलिए अगर सही स्थिति आनेसे पूर्व सहानुभूति-प्रेरित हडताले कराई जाती है तो उनसे हमारे उद्देश्यका अहित ही होगा। अपने अहिंसात्मक कार्यक्रममे इस विचारको हमे कोई स्थान नही देना है कि हम सरकारको परेशानीमे डालकर कुछ लाभ उठाये। अगर हमारा व्यवहार शुद्ध है और सरकारका अशुद्ध तो सरकार यदि स्वय शुद्ध नही बनती तो हमारी शुद्धता ही उसकी परेशानीका कारण होगी। इस तरह शुद्धीकरणके आन्दोलनसे दोनो पक्षोको लाभ है। लेकिन जो आन्दोलन सिर्फ ध्वसात्मक है, उसमे ध्वसकारीका शुद्धीकरण नही हो पाता और वह गिरकर उन्ही लोगोके धरातलपर आ जाता है जिन्हे वह ध्वस करनेका प्रयत्न करता है।

इसलिए हमारी सहानुभूति-प्रेरित हडतालोको भी आत्मशुद्धिकी हडतालें होना चाहिए, अर्थात् उन्हे भी असहयोगके ढगका होना चाहिए। और इसलिए जब हम

किसी अन्यायके निराकरणके लिए हडतालकी घोषणा करते हैं तो दरअसल हम उस अन्यायमे हिस्सा लेना बन्द कर देते हैं, और इस प्रकार अन्यायीको अपने ही बल-बूतेके भरोसे छोड देते हैं। दूसरे शब्दोंमे हम उसे ऐसी स्थितिमे डाल देते हैं जिससे वह अन्याय जारी रखनेकी गलती देख सके। ऐसी हडताल तभी सफल हो सकती है जब इसके पीछे दुबारा उस कामपर न जानेका सकल्प हो।

इसलिए बहुत बडी-बडी सफल हडतालोंके सचालककी हेसियतसे, मैं हडतालके नेताओके मार्गदर्शनके लिए उन सिद्धान्तोको एक बार फिर नीचे दे रहा हूँ, जो इस पत्रके पृष्ठोंमे पहले भी छप चुके हैं।

१ सच्ची शिकायतके बिना कोई हडताल नही होनी चाहिए।

२ अगर हडताल करनेवाले लोग अपनी बचतके पैसेसे या बुनाई, कताई तथा धुनाई-जैसा कोई और काम करके कुछ कालके लिए अपनी जीविकाकी व्यवस्था स्वय करनेमे समर्थ न हो तो हडताल नही होनी चाहिए। सार्वजनिक चन्दे या अन्य प्रकारके दानके भरोसे हडताल कभी नही करनी चाहिए।

३ हडतालियोको अपनी न्यूनतम माँगे निश्चित कर लेनी चाहिए जिनमे किसी परिवर्तनकी गुजाइश न हो, और हडताल प्रारम्भ करनेसे पूर्व उसकी घोषणा कर देनी चाहिए।

अगर शिकायत सच्ची हो ओर हडतालियोमे अनिश्चित कालतक कामसे अलग रहनेकी सामर्थ्य हो तब भी, अगर उनके बदले काम करनेको दूसरे मजदूर कर्मचारी मिल जाये तो हडताल विफल हो सकती है। इसलिए कोई भी समझदार आदमी उस हालतमे हडताल नही करेगा जब उसे लगता हो कि उसकी जगह काम करनेवाला आदमी आसानीसे मिल जायेगा। लेकिन कोई परोपकारी और देशभक्त व्यक्ति अगर अपने पडोसीके दुखसे दुखी होगा और उसमें उसका हमदर्द बनना चाहेगा तो वह उस हालतमे भी हडताल करेगा जब वह देख रहा हो कि जितने मजदूरोकी माँग है उससे ज्यादा मजदूर उपलब्ध हैं। कहनेकी जरूरत नही कि मैंने जैसी विनयपूर्ण हडतालका वर्णन किया हे, वैसी हडतालमे त्रास-धमकी, आगजनी या अन्य प्रकारकी हिसात्मक कार्रवाइयोके लिए कोई स्थान नही है। इसलिए अगर यह सच हो कि अभी हालमे चटगाँवमे रेलगाडीको पटरीसे उतारनेका जो वाकया हुआ है वह किसी हडतालीकी शरारत थी तो मुझे बहुत दुख होगा। इस मामलेको, जो कसौटी मैंने सुझाई है, उस कसौटीपर परखनेपर स्पष्ट हो जाता है कि जो लोग हडतालियोके मित्र हैं उन्हे हडतालियोको कभी भी यह सलाह नही देनी चाहिए थी कि वे अपनी जीविका चलानेके लिए काग्रेस-कोषसे या अन्य सार्वजनिक कोषोसे पैसा लेनेके लिए अर्जी दे या उनसे पैसे ले। हडतालियोने जिस हदतक बाहरसे पैसेकी सहायता पाई या स्वीकार की, उसी हदतक उनकी सहानुभूतिका मूल्य कम हो गया। सहानुभूति-प्रेरित हडतालकी खूबी इस बातमे समाई हुई हे कि सहानुभूति प्रदर्शित करनेवाला व्यक्ति कितनी असुविधा झेलता हे, कितनी क्षति उठाता हे।

जहाँतक यह सवाल है कि जो हडताली धमकियो और प्रलोभनोके बावजूद मर्दानगीसे अपनी टेकपर डटे रहे हैं — और ऐसे हडताली ५० प्रतिशतसे अधिक हैं —

उनके लिए क्या किया जाये, या वे स्वय क्या करे, तो इस सवालपर बगाल प्रान्तीय काग्रेस कमेटीको अपने विचार मै पहले ही बता चुका हूँ। अपनी उसी रायपर मै अब भी कायम रहना चाहूँगा। अगर इन हडतालियोने चाँदपुरके अन्याय-पीडित कुलियो-के प्रति सहानुभूतिसे ही प्रेरित होकर हडताल की और अपने भाइयोको डराया-धमकाया नही, तो उन्हे ऐसा करनेका पूरा नैतिक अधिकार था, और उन्होने ऐसी देशभक्ति और साथियोके प्रति ऐसी हमदर्दीका परिचय दिया जिसकी उनसे आशा भी नही की जाती थी। मै आशा करता हूँ कि वे अब तबतक फिर कामपर नही जायेगे जबतक कि सरकार पूरी तरहसे और साफ तौरपर क्षमा-याचना नही करती, और सम्बन्धित पक्षोको अपने-अपने घर वापस जानेके लिए कुलियोको जो पैसा देना पडा है, वह पैसा उन्हे नही दे देती।

शरारत-भरी तवज्जह

बारीसालमे एक जिला प्रचार समिति है। अगर सिर्फ तवज्जह देनके लिए ही किसीकी बडाई की जा सकती हो तो यह सस्था बडाई करने लायक है। लेकिन अनुभवसे तो यह सिद्ध होता है कि तवज्जहके पीछे जब शरारत हो तो वह बडाई नही, हिकारतके लायक बन जाती है। मुझे लगता है कि बारीसालकी जिला प्रचार समितिका काम इसी दर्जेका है। यह समिति असहयोगकी कट्टर विरोधी है। जब हम लोग बारीसाल पहुँचे, मुझे एक रजिस्टर्ड पत्र दिया गया। उसमे कुछ सवाल पूछे गये थे जिनका जवाब मुझे सार्वजनिक सभामे देनेको कहा गया था। उसमे मै और मौलाना मुहम्मद अली बोलनेवाले थे। सवाल छपे हुए थे। मुझे व्यक्तिगत रूपसे हाथो-हाथ भी वे सवाल दिये गये। मैने उनमे से एक-एकका पूरा जवाब दिया। लेकिन दूसरे दिन आश्चर्य हुआ जब मुझे उन प्रश्नोके अपने उत्तरोकी एक रिपोर्ट ठीक करनेके लिए दी गई। यह रिपोर्ट क्या थी, मेरे उत्तरोका उपहास-मात्र थी। उसके बाद एक सन्देशवाहक आया। उसने मुझे कुछ और कागज-पत्र दिये जिन्हे पढकर मुझे उनमे लिखी बातोका स्पष्टीकरण करना था। लेकिन आजतक मै यह नही जानता कि वे पत्र किसने लिखे थे। सभी बिना हस्ताक्षरके थे। मैने तो कभी किसी भी सार्वजनिक सस्थाको ऐसी गैर-जिम्मेदाराना हरकत करते नही देखा है। मुझे बताया गया कि यह सब काम सरकारी अधिकारियो द्वारा किया गया। इस तरह इसपर जनताका पैसा बरबाद किया गया। मेरी तरफ जो इतनी ज्यादा तवज्जह दी गई, उसमे मुझे न कही ऐसा लगा कि लोग अपना ज्ञान बढानेको उत्सुक है और न यही दिखाई दिया कि वे मुझे अपनी भूलकी प्रतीति कराना चाहते है। अगर समितिने मुझे और मेरे साथियोको बहस-मुबाहसेके लिए बुलाया होता तो एक बात होती। उससे भी अच्छा यह होता कि एक सार्वजनिक सस्थाके नाते वह हमारी उपस्थितिका उपयोग सम्बन्धित पक्षोको एक जगह मिलानेके लिए करती। इस सारी तवज्जहमे मुझे एक ही चीज दिखाई दी स्थानीय असहयोगियोके कामको लोगोकी नजरमे नीचा दिखानेकी एक नापाक ख्वाहिश। उनकी इन हरकतोको, मैने अपने बगालके दौरेमे जो-कुछ देखा, उसीको ध्यानमे रखकर परखा है। मुझे तो लगता है कि जानबूझकर और द्वेष-भावसे प्रेरित होकर असहयोग

और असहयोगियोको गलत रूपमे पेश किया गया है। देखता हूँ, मेरे विचारोको भी गलत रूपमे पेश किया गया है। मेरे भाषणोसे वाक्योको उनके सन्दर्भसे अलग करके ले लिया जाता है और तोड-मरोडकर प्रस्तुत किया जाता है। इसका सबसे ताजा उदाहरण कवि-गुरुके साथ मेरी बातचीत है। अखबारोमे उस बातचीतकी सर्वथा काल्पनिक और अनधिकृत रिपोर्ट प्रकाशित हुई है। बातचीतमे कुछ भी गोपनीय नही था, लेकिन उसे गोपनीय मान लिया गया है। यह हमे एक-दूसरेसे अलग कर देनेके प्रयत्न-जैसा लगता है। लेकिन कवि-गुरु इतने महान् है कि इन बातोका उनपर कोई असर नही हो सकता। असहयोगियोको उन बातोका विश्वास कदापि नही करना चाहिए, जो कवि-गुरुपर झूठ-मूठ आरोपित की गई है। हमारे बीच मतभेद है। लेकिन उनके कारण कवि-गुरुके प्रति मेरे सम्मान-भावमे कोई फर्क नही पडता। कवि-गुरुको भी भारतसे उतना ही प्रेम है जितने प्रेमका दावा मै करता हूँ, और वह प्रेम ही हमारे पारस्परिक सम्बन्धके लिए हर दृष्टिसे पर्याप्त है। इसलिए उस बातचीतको लेकर जो बवाल मचाया जा रहा है, उससे मै सकल्पपूर्वक अलग रहूँगा।

लेकिन अब फिर उन सवालोकी बात ले। मुझे लग रहा था कि ये सवाल शरारतसे पूछे गये है, फिर भी जैसा कि मै बता चुका हूँ, सार्वजनिक सभामे मैने उनके जवाब दिये। यहाँ मै अपने जवाब विस्तारपूर्वक नही देना चाहता। लेकिन पाठक इन सवालोको देखकर खुद ही इस बेशकीमती प्रचारका रग-ढग समझ जायेंगे।

[प्रश्न] १ आपने राजनीतिक हडतालोकी निन्दा की है। यहाँ आपके अनुगामियोंने जहाजी मजदूरोकी हडतालका समर्थन किया है और हडतालियोको खिलाने-पिलानेपर काग्रेस कोषके हजारो रुपये खर्च किये है। क्या यह ठीक किया है?

[उत्तर] हडतालोके सम्बन्धमे मेरे विचार देखिए।

२ आपके आदेशसे सैकडो लडकोने स्कूल-कालेज छोड दिये है, और अब वे शान्तिप्रिय और विधि-पालक जनताका अपमान करने, उसे डराने-धमकानेमें अपना समय बिताते है। इन लडकोका भविष्य क्या होगा? वे अपनी जीविका कैसे कमायेंगे?

अगर लडके वैसे लोगोको अपमानित करते फिरते है, डराते-धमकाते रहते है तो यह गलत है। लेकिन मै नही मानता कि उनमे से ज्यादा लोग ऐसा कह रहे है। लडकोका भविष्य उज्ज्वल है, क्योकि अब वे स्वतन्त्र है। वे अपनी जीविका अपना पसीना बहाकर कमायेगे। वे अब भी किताबी शिक्षा पा सकते है और पा रहे है।

३ आपने हडतालोकी भर्त्सना की है। यहाँ आपके अनुगामियोने कई हडताले की है और वे दुकानदारोको भडका रहे है कि सरकारी अधिकारियो तथा सरकारके प्रति वफादार लोगोके हाथ वे कोई सौदा न बेचे। क्या आप इसे बुरा मानते है?

मैने हर तरहकी हडतालको कभी भी बुरा करार नही दिया है। जब हडताल हो, तो हडतालियोकी सेवाका लाभ किसीको नही मिलना चाहिए। लेकिन कुछ खास वर्गों या लोगोको ही इस सेवाका लाभ न देना गलत होगा। यह सही है कि हडताल बहुत कम और खास मौकोपर ही करनी चाहिए।

४. हालकी हड़तालके दौरान असहयोगियोने नगरपालिकाके मेहतरोको दो दिनो तक काम नहीं करने दिया, जलकी आपूर्ति बन्द करवा दी और लोगोके स्वास्थ्यके लिए बहुत खतरा पैदा कर दिया। क्या यह ठीक काम था?

मुझे लगता है कि इस सवालमे जो जानकारी दी गई है, वह कमसे कम अशत सच हे। हम अपने विरोधियोको जीवनके लिए आवश्यक सामाजिक सेवाओके लाभसे वचित करना नही चाहते। जैसे सूरज बिना कोई भेद-भाव किये सबको प्रकाश बाँटता है, वैसे ही ऐसी सेवाओका लाभ सबको मिलना चाहिए।

५. बाबू शरत्‌कुमार घोषको जब इस कारण गिरफ्तार किया गया कि वे सरकारके प्रति वफादार लोगोका अपमान करनेके लिए भीडको उकसा रहे थे तो उन्होने कहा कि शहरको पानी मत पहुँचाओ, उसके लिए रोशनीका इन्तजाम मत करो और उसे मेहतरोकी सेवाका लाभ भी मत दो, उसे श्मशान बनाकर रख दो। उनका ऐसा कहना ठीक था या गलत?

समितिके सौजन्यसे मैंने बाबू शरत्‌कुमार घोषका वह भाषण अब पढ लिया है। उसमे ऐसे अश भी है, जिनका वह अर्थ लगाया जा सकता है जो इस सवालमे लगानेकी कोशिश की गई है। लेकिन मुझे शरत् बाबूके उच्च चरित्र और आध्यात्मिक प्रवृत्तिका जो सुन्दर और शानदार विवरण मिला है, उसको देखते हुए मै यह माननेको तैयार नही हूँ कि शरत् बाबूमे हिसाका भाव है। मुझे पूरा विश्वास है कि अगर उनसे कोई चूक हुई है तो वे सबसे आगे बढकर अपनी गलती स्वीकार करेगे।

६. यह सब आपके नामपर किया गया और उन लोगोके द्वारा किया गया जो "गाधी महाराजकी जय" का नारा लगाते थे। क्या आप यह सब पसन्द करते है? अगर नही, तो आप अपने अनुगामियोको भविष्यमें ऐसा करनेसे किस तरह रोकनेकी सोचते हे?

मुझे आशा है कि "मेरे अनुगामी" अहिसाकी भावनाको हृदयगम कर रहे है। लेकिन अगर कभी ऐसा हो कि वे अहिसाकी आडमे हिसापर उतर आये तो मै आशा करता हूँ कि उनकी हिसाका पहला शिकार मै ही होऊँगा। लेकिन अगर दैव-दुर्योगसे या अपनी ही कायरताके कारण मै जीवित रह जाऊँ तो मेरे लिए सिर्फ हिमालयके हिमाच्छादित प्रान्तरोमे ही स्थान होगा।

७, ८ व ९ क्या देशमें इतना स्वदेशी कपडा है जिससे सारे देशवासियोका तन ढका जा सके? क्या विदेशी कपडेके बहिष्कारसे कीमत नही बढेगी? क्या कीमत पहलेसे ही बहुत ऊँची नहीं है? क्या बहिष्कारके कारण गरीब लोग बहुत मुसीबतमें नहीं पड जायेंगे, और फिर क्या वे, जैसा कि पहले हुआ है, लूटपाटपर नहीं उतर आयेंगे? क्या खुलनाके बाशिन्दोको पहलेसे ही कपडेकी कमी नहीं है? क्या इस बहिष्कारसे उन्हे कोई मदद मिलेगी? जो कपडा उन गरीबोको अपना दुःख दूर करनेके लिए दिया जा सकता था, उस कपडेकी होली जलाना क्या ठीक हे?

क्या युद्धकालमें विदेशी कपडेकी कमी हो जानेके कारण कपडेकी कीमत चढ जानेसे बम्बईके मिल-मालिकोने भारी मुनाफा नहीं कमाया? अब अगर विदेशी कपडेका

बहिष्कार किया जाता है तो क्या वे और ज्यादा मुनाफाखोरी नहीं करेंगे? क्या गरीबोंसे पैसा लेकर अमीरोंकी थैलीमें डालना कोई ठीक काम है?

सभी बड़े राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारपर निर्भर करते हैं। अगर आयात बन्द कर दिये जाते हैं तो निर्यात भी बन्द हो जायेंगे और भारतीय व्यापारी बरबाद हो जायेंगे। क्या आप ऐसा चाहेंगे? आप भारतको मजबूत राष्ट्र बनाना चाहते हैं या कमजोर?

ये सवाल या तो सर्वथा अज्ञानवश पूछे गये है या विद्वेषसे प्रेरित होकर। स्वदेशी-पर पूछे गये इन सभी सवालोके जवाब इस अखबारमे विस्तारसे दिये जा चुके है। अगर जिला प्रचार समिति ऐसे सवाल उठानेके बदले सिर्फ चरखो और करघोकी सख्या बढानेमे ध्यान लगाये तो जरूरतके लायक काफी कपडा, बल्कि जरूरतसे ज्यादा भी तैयार होने लगेगा, क्योकि तब अकाल अतीतकी एक चीज बनकर रह जायेगा। क्या खुलनामे पैसेका अकाल नही है? अगर लोगोके पास पैसे होते तो उन्हे चावल मिल सकता था। वे चरखा और करघा चलानेकी दृष्टिसे शरीरसे काफी सक्षम है। उनमे से हर एक चरखा चलाकर अपने भोजनके लिए पर्याप्त कमाई कर सकता है। हाँ, यह ठीक है कि बम्बईके मिल मालिकोने पहले काफी मुनाफा कमाया। लेकिन वर्तमान स्वदेशी आन्दोलनका तो तकाजा यह है कि हर प्रान्त खुद ही अपनी जरूरतके लायक पर्याप्त कपडा तैयार करे, पर्याप्त सूत काते। विदेशी कपडेके बहिष्कारका मतलब पूरे विदेशी व्यापारका ही बहिष्कार नही है। भारतको अपने विकासके लिए जिन चीजोकी जरूरत है, उनका आयात वह अवश्य करेगा, और जिन चीजोकी उसे जरूरत नही है, उनका निर्यात भी करेगा। भारत आज जितना कमजोर और असहाय है उससे अधिककी गुजाइश नही है। ईश्वरकी कृपासे स्वदेशी उस कमजोरीको अब दूर कर रही है।

१० तिलक स्वराज्य कोषके लिए एक करोड़ रुपयेमें से कितना सचमुच जमा किया जा चुका है? कितनेके लिए सिर्फ वचन ही दिये गये हैं? स्कूलो, कालेजो, अस्पतालो, धर्मार्थ कार्यो आदि के लिए ऐसी कितनी रकम देनेका वचन दिया जा चुका है, जिसका उपयोग वास्तवमें स्वराज्य-सम्बन्धी सामान्य कार्योंके लिए उपलब्ध नहीं होगा? और बम्बईके मिल-मालिकोने विदेशी कपडेके बहिष्कारसे लाभ उठानेकी आशासे कितना दिया है?

तिलक स्वराज्य कोषका हिसाब-किताब उचित समयपर प्रकाशित किया जायेगा। सवाल तैयार करनेवालोको यह जानकर खुशी होगी कि बम्बईके मिल-मालिकोने बहुत ज्यादा नही दिया है। सिर्फ मौलाना हाजी यूसुफ सोबानीने एक मोटी रकम दी है, क्योकि वे एक पक्के असहयोगी है और उन्होने अपना एक बेटा इसी कामके लिए दे दिया है। अधिकाश मिल-मालिकोने कुछ नही दिया।

एक बात मै और कहना चाहूँगा। बारीसालमे मुझे मालूम हुआ कि जब सुरेन्द्र बाबू[1] वहाँ गये तो उनके खिलाफ हल्ला-गुल्ला मचाया गया। यह सुनकर मुझे बहुत दु ख

१ १८४८–१९२५, कांग्रेसके संस्थापकोंमें से एक और १८९५ और १९०२ में उसके अध्यक्ष।

हुआ। असहयोगियोके लिए किसीको — अपने कट्टरसे-कट्टर शत्रुको भी — दुत्कारनेकी छूट नही है। दुत्कारना भी आखिरकार एक प्रकारकी हिंसा ही है। लेकिन सुरेन्द्र नाथ बनर्जीको दुत्कारनेका मतलब है अपने-आपको भूल बैठना। आज उनसे हमारा मतभेद है। लेकिन हमे उनकी अतीतकी सेवाओको नही भुलाना चाहिए। एक समय वे वगालके आदर्श थे। तब उन्होने हमारी भावनाओको स्वर दिया था। क्या अब हमें उन्हे दुत्कारना चाहिए? यह तो मानना ही पडेगा कि हमसे मतभेद रखनेवाला हर नेता देशका दुश्मन नही है। हम चाहे तो उसकी सभाओमे न जाये, और जाये भी तो मर्जी होनेपर हम उसका विरोध कर सकते है। लेकिन हमे अपना विरोध और असहमति शिष्टताके साथ, बल्कि आदरपूर्वक प्रकट करनी चाहिए — विशेषकर तब, जब कि हम जिसका विरोध कर रहे हो वह कोई जाना-माना, पुराना-प्रतिष्ठित नेता हो।

ईसाई असहयोगी

एक ईसाई विद्यार्थी लिखता है:

> **वैसे तो हम ईसाई विद्यार्थी है, किन्तु आप हमारे राष्ट्रीय नेता है और हम महसूस करते है कि आपसे हमे यह सीखना चाहिए कि भारतका आदर्श और सिद्धान्त क्या है और उसकी आध्यात्मिक विरासत क्या है। इसलिए क्या आप ईसाई-धर्मके सगठन, पूजा-विधि और पोप-पादरी व्यवस्थाके सम्बन्धमें रचनात्मक सुझाव देते हुए पाश्चात्य ईसाइयतकी आलोचना करनेकी कृपा करेंगे?**

इस विद्यार्थीको यह नही मालूम था कि वह मुझसे जिस विषयपर जिज्ञासा कर रहा है, वह विषय मेरे क्षेत्रसे बाहर पडता है। फिर भी यह मेरे लिए बहुत खुशीकी बात है कि भारतीय-ईसाई राष्ट्रीय आन्दोलनमे अधिकाधिक दिलचस्पी ले रहे हैं। मुझे मालूम है कि वम्बईमे सैकडो ईसाइयोने तिलक स्मारक स्वराज्य कोषमे अपनी शक्ति-भर दान दिया है। मुझे मालूम है कि वहुत-से शिक्षित ईसाई लोग अपनी शानदार प्रतिभाका उपयोग राष्ट्रीय कार्योमे कर रहे है। इसलिए जिस व्यक्तिने मुझसे जिज्ञासा की है, उसकी जिज्ञासाको मैं शान्त करना चाहता हूँ — लेकिन उस तरहसे नहीं जैसा वह चाहता है, वल्कि उस ढगसे जिस ढगसे मै कर सकता हूँ।

निकट भविष्यमे भारतका उद्देश्य सभी धर्मोके प्रति पूर्ण सहिष्णुताका व्यवहार है, उसकी आध्यात्मिक विरासत, सादा जीवन और उच्च विचार है। मेरे विचारसे पाश्चात्य ईसाइयतका जो व्यावहारिक रूप है, वह ईसाकी ईसाइयतको झुठला रहा है। मै इस वातकी कल्पना नही कर सकता कि ईसा मसीह अगर हाड-मासका शरीर धारण किये आज हमारे वीच मौजूद होते तो वे आधुनिक ईसाई सगठनो, सार्वजनिक पूजन या आधुनिक पोप-पादरी व्यवस्थाको पसन्द करते। अगर भारतीय ईसाई सिर्फ 'सरमन ऑन द माउट' के उन सन्देशोमे अनुरक्त रहे, जो ईसाने सिर्फ अपने शान्त-चित्त शिष्योको ही नही, वल्कि समस्त सतप्त ससारको दिये थे, तो वे कभी गलत रास्तेपर नहीं जायेगे। और वे देखेंगे कि कोई भी धर्म झूठा नही है, वे देखेंगे कि वे अगर अपने-अपने ज्ञानके प्रकाशमे ईश्वरका भय रखते हुए आचरण करते है तो उन्हे धर्म-

संगठनों, पूजाकी विधियों और पोप-पादरी व्यवस्थाकी चिन्ता करनेकी कोई जरूरत नहीं है। फैरिसियोंके पास यह सब तो था ही, किन्तु ईसा मसीहको उनमें से कुछ नहीं चाहिए था, क्योंकि फैरिसी लोग अपने धर्म-पदका प्रयोग पाखण्ड और उससे भी बुरी चीजपर परदा डालनेके लिए कर रहे थे। अच्छाईकी शक्तियोंके साथ सहयोग और बुराईकी शक्तियोंके साथ असहयोग, अच्छे और पवित्र जीवनके लिए इन्हीं दो चीजोंकी आवश्यकता है — फिर चाहे आप उस जीवनको हिन्दू जीवन-पद्धति कहिए अथवा मुसलमान जीवन-पद्धति या कि ईसाई जीवन-पद्धति।

क्या करें?

एक अग्रलेखमें[1] मैंने मौलाना मुहम्मद अलीकी गिरफ्तारीके बारेमें काफी विस्तारसे लिखा है। उसमें मैंने केवल उन्हीं बातोंका उल्लेख किया है जो इस सालके भीतर स्वराज्य पानेके लिए सर्वथा अनिवार्य हैं। लेकिन बहुत-सी दूसरी बातें भी हैं जिन्हें करके हम और जल्दी स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं।

उदाहरणके लिए खिताबयाफ्ता लोग अपने खिताब छोड़ सकते हैं, वकील वकालत बन्द कर सकते हैं, और बड़े तथा समझदार विद्यार्थी स्कूल-कालेज छोड़कर चरखा चलाना शुरू कर सकते हैं, तथा कौंसिलोंके सदस्य अपनी सदस्यता छोड़ सकते हैं।

यह धर्म और अधर्मकी लड़ाई है। इसलिए हमसे शराब, जुआ और असमयसे दूर रहनेकी अपेक्षा की जाती है। अस्पृश्यता शैतानका काम है। हमें उसका त्याग करना चाहिए। फिर तो हमें अक्तूबर महीना समाप्त होनेसे भी पहले स्वराज्य मिल जायेगा। मुहम्मद अलीकी गिरफ्तारीको मैं ईश्वरका वरदान मानता हूँ। हमें इसका अधिकसे-अधिक लाभ उठाना चाहिए।

क्या नहीं करें?

और जैसे यह सब काम हममें से प्रत्येक कर सकता है और प्रत्येकको करना चाहिए, वैसे ही कुछ ऐसे काम हैं जो हमें कदापि नहीं करने चाहिए। हमें हड़ताल नहीं करनी चाहिए, सार्वजनिक भवनोंमें आग नहीं लगानी चाहिए, किसीको मारना नहीं चाहिए, किसीको अपशब्द नहीं कहना चाहिए, हमें आपसमें झगड़ना नहीं चाहिए, अपनेसे भिन्न दृष्टिकोण रखनेवालोंके प्रति असहिष्णुतासे काम नहीं लेना चाहिए। धर्ममें जबर्दस्तीके लिए कोई जगह नहीं है और जबरन् धर्म-परिवर्तन जिस प्रकार इस्लामके लिए ठीक नहीं है उतना ही असहयोगके मामलेमें भी ठीक नहीं है। हमें किसी बातसे, किसी व्यक्तिसे डरना नहीं चाहिए — डरना चाहिए सिर्फ अपनी कमजोरीसे।

मेरा साक्ष्य

मित्रगण मुझसे पूछ रहे हैं कि वाइसराय महोदयने जो मौलाना मुहम्मद अलीकी गिरफ्तारीका मौन समर्थन किया है, उसे क्या मैं विश्वासघात नहीं मानता। मैं लॉर्ड रीडिंगपर विश्वासघातका आरोप नहीं लगा सकता, क्योंकि मुकदमा उठा लेनेका उनका

1. देखिए "आखिरी काम", २२-९-१९२१।

आश्वासन स्वेच्छापूर्वक दिया गया था। अलबत्ता स्पष्ट करके यह दिखाना उनका काम है कि मौलाना मुहम्मद अलीके शिमलाके भाषणके बाद ऐसी कौन-सी नई परिस्थितियाँ उत्पन्न हो गई है जिनके कारण उनकी गिरफ्तारी उचित ठहरती है। निश्चय ही वे मौलाना साहबसे यह अपेक्षा नही रखते थे कि वे अब अपने ओठ सी रखेगे या अपने भाषणोका स्वर मुलायम कर लेगे। उनकी क्षमा-याचना बहादुर और निर्भीक आदमियोके योग्य ही थी। आवेगके क्षणमे अगर उनके मुँहसे कोई ऐसी बात निकल गई जिसका मतलब लोगोको हिंसाके लिए भडकाना लगाया जा सकता था तो उन्होने उसपर खेद प्रकट कर दिया। मै जानता हूँ कि अलीबन्धु बहादुर है, ईमानदार है और धर्मभीरु है। उस प्रसिद्ध वक्तव्यके बादसे मौलाना मुहम्मद अली मेरे साथ ही दौरा करते रहे है। उन्होने बहुत-से भाषण दिये है। ये सभी भाषण उन्होने बहुत ओजपूर्ण ढगसे दिये, फिर भी इनमे उन्होने अहिंसाके सन्देशका खयाल बराबर रखा है। वे व्यक्तिगत तौरपर अहिंसाके लिए और भी ठोस काम करते रहे है। अलीबन्धु लोगोको बलवानोकी अहिंसाका सन्देश देते रहे है, और उन्होने दूसरोसे जैसा करनेको कहा है, वैसा स्वय करके भी दिखाया है। मद्रास सरकार जानती थी कि हम शान्ति-यात्रापर निकले थे। वह जानती थी कि मौलाना मुहम्मद अली निश्चय ही हिन्दू-मुस्लिम एकताका सन्देश देगे। उनका सन्देश मोपलोतक अवश्य पहुँचता, और इससे मोपलोकी धर्मांधतापर एक अकुश लग सकता था। अगर उन्हे उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रमे जाने दिया जाता तो वे एक बूद खून बहाये बिना शान्ति स्थापित कर देते। लेकिन कठिनाई यह थी कि उससे सरकारकी प्रतिष्ठाकी अपूरणीय क्षति होती और अहिंसाकी विजय सिद्ध हो जाती।

प्रमाण

अगर मेरे निष्कर्षके समर्थनमे प्रमाणकी आवश्यकता हो तो वह मद्रास पहुँचनेपर मुझे मुख्य सचिवका जो पत्र मिला उससे पूरी हो जाती है। यह है उस पत्रका पाठ

> **अगर आप मलाबार जिलेमें जानेका विचार करे तो उस हालतमें मुझे आपको यह सूचित कर देनेका निर्देश दिया गया है कि सैनिक अधिकारियोके विचारसे मार्शल लॉके अधीन आनेवाले क्षेत्रकी स्थिति ऐसी है कि आपका वहाँ जाना या ठहरना वाछनीय नहीं है। मुझे आपको यह बता देनेको भी कहा गया है कि सैनिक अधिकारियोने इस आशयके निर्देश जारी कर दिये है कि अगर आप मार्शल लॉवाले इलाकेमें आयें तो आपको वापस लौटा दिया जाये।**

अभीतक सरकार यह मानती आई है कि मेरे इरादे नेक है। मेरे इरादोमे उसने कभी कोई शक जाहिर नही किया है। हर किसीने इस बातकी साक्षी दी है कि मै जहाँ कही गया हूँ, मेरी उपस्थितिका शान्तिके हकमे अच्छा प्रभाव हुआ है। यह प्रतिबन्धक आदेश — क्योकि आदेश तो यह है ही — मुझे ऐसा माननेको मजबूर कर देता है कि सरकार शान्ति नही चाहती, उसकी ओरसे बातोको जो तिलका ताड बनाकर पेश किया जाता है उसका भण्डाफोड होने देना वह नही चाहती, और जो बात सबसे बुरी है वह यह कि पजाबके जिस दुष्काण्डकी पुनरावृत्ति अभागे मलाबारमे की जा रही है उसे वह रोकना नही चाहती।

खादी पहननेका अपराध

मेरे कहनेका मतलब क्या है, उसका मैं केवल एक उदाहरण देना चाहता हूँ। इज्जतदार नौजवानोकी खादी सदरियाँ और टोपियाँ उनके बदनसे उतरवा ली गईं और उनके सामने ही उनमे आग लगा दी गई। एक आदमीकी टोपीमें थूक दिया गया और तब फिर उसे वह पहननेको मजबूर किया गया। क्या इसमे [अधिकारियों-के] हृदय-परिवर्तन या परिवर्तित तरीकोंकी कोई झलक मिलती है? ऐसी बर्बरता की और भी कहानियाँ मुझे मालूम है। लेकिन उनकी पुष्टि नही हुई है, इसलिए उन्हे दुहरा नही रहा हूँ। जिन लोगोंके बारेमें जानते थे कि उन्होने लूटपाट रोकनेकी कोशिश की उन्हे भी सिर्फ इसलिए गिरफ्तार कर लिया गया कि वे कांग्रेसी थे। कालीकटके श्री केशव मेनन-जैसे प्रतिष्ठित व्यक्तिको कालीकटसे बाहर जानेसे रोक दिया गया। मेरी यात्राकी खबर प्रकाशित होनेके बाद उनपर हुक्म जारी किया गया। अगर श्री मेनन उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रसे बाहर आते तो उससे सार्वजनिक सुरक्षाका अहित किस तरह होता? मुझे जो विवरण मिले हैं, उन सबसे यही पता चलता है कि श्री टामस, जो मलाबारकी विपदाके जनक है, सर माइकेल ओ'डायरके[1] ही चरणचिह्नोंपर चल रहे है। बलवत्ता उनमे ओ'डायरवाली स्पष्टवादिताका अभाव है। सो शायद इसलिए कि उन्हे अपना मुँह बन्द ही रखनेको कहा गया है। मैं उनके साथ शायद अन्याय कर रहा हूँ। मद्रासके गवर्नरने लार्ड चेम्सफोर्डवाली स्थिति अपनायी है। उन्होने सब-कुछ अपने लेफ्टिनेंटके भरोसे छोड दिया है।

धरना और प्रेम

एक व्यक्तिने अखबारमे लिखते हुए नाराजगीके साथ खुला सवाल किया है "मैं अपने प्रेमके सिद्धान्तके साथ धरनेदारीका मेल कैसे बैठा सकता हूँ। क्या धरना देना एक प्रकारकी हिंसा या अनुचित दबाव नही है?" बेशक धरना देना हिंसा और अनुचित दबाव माना जा सकता है। मुझे दुःखके साथ कहना पड़ता है कि कई मामलोंमें वास्तविकता यही रही है। लेकिन, मैं जानता हूँ कि एक प्रेम-प्रेरित कार्य-की तरह भी धरना दिया गया है। बहुत-सी बहनें और नवयुवक विशुद्ध प्रेमभावसे प्रेरित होकर धरना देते रहे हैं। मुझपर किसीने मारवाड़ियोसे घृणा करनेका आरोप नही लगाया है। कोई भी व्यक्ति सेठ जमनालालजीपर अपने जाति-भाइयो और साथी व्यापारियोसे घृणा करनेका आरोप नही लगा सकता। फिर भी तथ्य यही है कि मैं और वे, हम दोनो, मारवाड़ियोकी विदेशी कपडेकी दुकानोपर धरनेदारीका समर्थन करते रहे हैं। जब बेटी बापको बुरा काम करनेसे रोकती है तो वह विशुद्ध प्रेमसे ही प्रेरित होकर वैसा करती है। वास्तविकता यह है कि कुछ ऐसे काम हैं जो सामान्य रूपमे सभी वर्गोंके लोग करते हैं। और जब वे काम अपने-आपमे आपत्तिजनक नही हो तो उनकी अच्छाई या बुराईकी कसौटी यही होती है कि वे काम किस इरादेसे किये जाते हैं। मेरी अपनी स्थितिमे तनिक उलझन आ जाती है, क्योकि मुझे ऐसे

1. पंजाबके लेफ्टिनेंट गवर्नर, जो जलियाँवाला बागके दुष्काण्डके लिए जिम्मेदार थे।

लोगोको सहयोग देनेके लिए आमन्त्रित करना पडता है और उनके सहयोगपर निर्भर करना पडता है, जिनमे सभी प्रेमकी भावनासे ही प्रेरित नही होते।

स्वराज्यके अन्तर्गत

एक दूसरे लेखक महोदयने मोपलोके उपद्रवकी ओर इशारा करते हुए यह दिखानेकी कोशिश की है कि असहयोगियोकी कल्पनाका स्वराज्य तो मोपला-राज ही होगा। मै उस उपद्रवपर एक बेहतर निष्कर्ष निकालता हूँ। मोपला उपद्रवसे हमे बहुत स्पष्ट रूपसे समझ जाना चाहिए कि वर्तमान सरकार तत्त्वत क्या है। तीन बातें तो बिलकुल स्पष्ट है

१ समस्त आधुनिक विध्वसक हथियारोसे लैस रहनेपर भी, यह सरकार जान-मालको सुरक्षा नही दे पाई है। घटना हो चुकनेके बाद उसने फिर व्यवस्था कायम कर दी, यह इसका कोई उत्तर नही है।

२. सरकार इतने समयसे राज करती आई है, फिर भी मोपलोको शान्तिप्रिय नागरिक नही बना सकी। इसकी यह विफलता अपराधकी कोटिकी है।

३ एक ओर जहाँ वह मोपलोके शौर्यको सही मार्ग देकर उसका उपयोग शान्ति और धर्मके कार्योंमे करनेमे असमर्थ रही है, वहाँ दूसरी ओर उसने हिन्दुओको अपने इन उच्छृखल भाइयोसे अपनी रक्षा करनेके लिए प्रशिक्षित करनेकी कोई फिक्र नही की।

असहयोगियोने अभी स्वराज्य हासिल नही किया है। उनपर भले ही यह आरोप लगाया जा सकता हो कि वे बुराईकी तमाम ताकतोपर काबू नही पा सके है, किन्तु मलाबारकी वारदातोका गुनाह तो ईमानदारीसे कोई भी उनके मत्थे नही मढ सकता। मान लीजिए, वहाँ असहयोगियोने ही उपद्रव भडकाया, लेकिन सरकारका तो यह कर्त्तव्य था कि वह उपद्रवको भडकनेसे रोकनेका पूर्वोपाय करती और अव्यवस्था फैलने न देती, पूर्वोपायका सबसे साफ तरीका था उन अन्यायोका निराकरण कर देना जिन्हे असहयोगियोने इतनी सफलताके साथ अपने आन्दोलनका आधार बना रखा है।

लेकिन यह बताना बहुत आसान है कि असहयोगियोकी छत्रछायामे स्वराज्य कैसा होगा। अव्वल तो ऐसा कोई काम ही नही किया जाता जिससे लोगोमे इतना गम्भीर असन्तोष फैले। दूसरे, स्वराज्यके अन्तर्गत मोपलोको अच्छी बाते सिखाई जाती, और तीसरे यह कि यदि तब भी ऐसा उपद्रव खडा हो जाता तो सुलह-समझौता कराने-वाले लोग अपनी जान खतरेमे डालकर भी शान्ति स्थापित करनेके लिए वहाँ जाते। आज जैसे दो असमान पक्षोका सघर्ष चल रहा है, वैसा सघर्ष स्वराज्यके अधीन असम्भव होता।

"पूर्वधारित विद्वेष"

सरकारके लिए अपने आलोचकोपर पूर्वविद्वेषसे प्रेरित रहनेका आरोप लगाना एक आम बात है। लेकिन मद्रासमे मुझे सरकारके पूर्वविद्वेषसे प्रेरित रहनेका एक साफ उदाहरण मिला है। पिछले मई महीनेमें 'देशभक्तन्' नामक एक तमिल पत्रमे प्रकाशित एक लेखके कारण मुद्रक, मालिक, प्रकाशक और तीन सम्पादक, सभीको गिरफ्तार कर

लिया गया है। साधारण पाठकोंकी नजरसे तो इस लेखमें सिर्फ अहिंसाका पालन करनेका ही अनुरोध किया गया है। अलीबन्धुओंके वक्तव्यपर वाइसराय महोदयने जो घोषणा की थी, उससे सभी लोग ऐसा मानने लगे थे कि सरकार-विरोधी लेखोंमें जबतक हिंसा भड़कानेवाली कोई बात नहीं कही गई हो तबतक उनके कारण मुकदमे नहीं चलाये जायेंगे। लेकिन मुकदमा चलाया गया, यह उतनी बड़ी बात नहीं है। हम कह सकते हैं कि यह सरकारकी नीतिमें एक परिवर्तनका द्योतक है। आखिरकार वाइसरायकी घोषणा उन्हें कुछ अनन्त कालतक तो बांधकर रखनेवाली चीज नहीं थी। पर जो चीज विद्वेषपूर्ण है वह है उक्त पत्रके निर्दोष मुद्रक, प्रकाशक, मालिक और तीनों निर्दोष सम्पादकोंपर मुकदमा चलाना। सरकार लेखके असली लेखकका पता लगाकर उसे सजा दे सकती थी। अगर सरकारको असली लेखकका पता नहीं था तो वह घोषित सम्पादकसे उसका नाम बतानेको कह सकती थी। लेकिन वह तो राजद्रोहके आरोपमें मुकदमा चलानेकी आड़में एक प्रभावशाली देशी अखबारका प्रकाशन बन्द कराना चाहती थी। अगर ये सभी छः अभियुक्त अपना बचाव करते तो वे शायद रिहा कर दिये जाते। लेकिन सरकारको उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। उसका उद्देश्य तो जैसे हो 'देशभक्तन्'को कुचल देना था। इस उद्देश्यमें वह सफल हो गई है और जब वह खुश है। इसे मैं पूर्वधारित विद्वेष कहता हूँ। प्रेस-कानून भले ही समाप्त हो गया हो, उसके पीछे जो भावना थी वह तो बनी हुई ही है।

कांग्रेस अधिवेशन कोई तमाशा नहीं

स्वागत समितिने दर्शकोंके टिकटोंकी संख्या तीन हजारतक सीमित करके जो बुद्धिमानीका काम किया है, उसके खिलाफ कुछ शिकायतें देखनेको मिली हैं। अगर हम कांग्रेस अधिवेशनको एक सालाना तमाशा नहीं, बल्कि हर साल राष्ट्रके लिए अगले बारह महीनोंका कार्यक्रम तय करनेवाली एक काम-काजी समिति मानकर चलना चाहते हैं तो मेरे विचारसे तीन हजार दर्शक भी बहुत ज्यादा हैं। प्रतिनिधियोंकी संख्या कम करनेका मतलब ही यह है कि दर्शकोंकी संख्या भी कम करनी पड़ेगी। जब कोई सभा इतनी बड़ी हो जाती है कि उसपर काबू रखना कठिन हो जाय तो उसमें शान्तिपूर्ण ढंगसे विचार-विमर्श करना और इसी तरह ठीक ढंगसे लोगोंके मत लेना असम्भव हो जाता है। इसलिए मैं तो यही मानता हूँ कि स्वागत समितिने दर्शक-टिकटोंकी संख्या सीमित करके ठीक ही काम किया।

लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि इस वार्षिक आयोजनका प्रदर्शनात्मक स्वरूप खत्म कर दिया जाये। इसलिए स्वागत-समिति लोक रुचिके अनुकूल विषयोंपर व्याख्यानोंका आयोजन कर रही है। वक्ताओंमें सिर्फ प्रमुख कांग्रेसी ही नहीं, अन्य प्रसिद्ध लोग भी हैं। स्वदेशीकी एक प्रदर्शनीका भी आयोजन किया जा रहा है, जिससे काफी-कुछ सीखा जा सकता है। दर्शकोंके लिए संकीर्तन भी होंगे। मेरा खयाल है, समिति एक लाख दर्शकोंके लिए इन्तजाम कर रही है। इस अवसरपर अहमदाबाद आनेवाले लोगोंको हर तरहकी सुविधा दी जायेगी, और कार्यक्रमके काम-काजसे सम्बन्धित हिस्सेमें कोई व्यवधान डाले बिना उन्हें काफी कुछ सिखाने और उनका मनो-

रजन करनेकी व्यवस्था की जायेगी, इस तरह स्वागत समितिने अपने सामने जो आदर्श रखा है वह है काम-काजको मनोरजनसे अलग करके भी दोनोपर अधिक जोर देना।

सिन्धमें दमन

नीचे सिन्धसे प्राप्त एक तार दिया जा रहा है, जो अपने-आपमे बिलकुल स्पष्ट है।

> सिन्धमें दमन बढ़ता जा रहा है। जनता दृढ़। २४ अगस्तको दादूके महाराज द्वारकाको एक सालकी सजा दी गई। ९ तारीखको कराचीके मौलवी फतह अलीको एक सालकी सजा दी गई। ३ सितम्बरको शेख अब्दुल मजीदको २ सालकी और 'हिन्दू' के सम्पादक महाराज विष्णु शर्माको तीन सालकी सजा दी गई। इनके अलावा कराची और सक्खरमें बहुतसे धरने-दारोको जेल भेज दिया गया है।

इसके अतिरिक्त मुझको अखबारोकी कुछ कतरने भी मिली है, जिनमे उस प्रान्तमें चल रहे भयकर दमनचक्रका वर्णन किया गया है। मै तो यही आशा कर सकता हूँ कि दमन बढनेके साथ-साथ इसी वर्ष स्वराज्य पानेका लोगोका सकल्प भी बढता जायेगा। अपने कार्यक्रमको पूरा करनेके लिए हमें समझदारी और कठिन श्रमकी जितनी जरूरत है, उतनी बलिदानकी नही।

अलघ्य दीवार

अगर अस्पृश्यता कायम रही तो वह हमारी प्रगतिके मार्गमे बराबर एक अलघ्य दीवार बन कर खडी रहेगी। अत हमें इस दीवारको अधिकसे-अधिक प्रयत्न करके गिराना है। हममे से बहुत-से लोगोके मनमे ऐसा विचार आता दिखता है कि हम अस्पृश्यताको कायम रखकर भी स्वराज्य हासिल कर सकते है। उनको इस विचारमे निहित अन्तर्विरोध भी नही दिखाई देता। स्वराज्यपर जितना "स्पृश्यो"का हक है उतना ही "अस्पृश्यो"का भी है। नारायणवरम्से एक व्यक्ति लिखता है

> हमारे इलाकेमें पचमोके साथ हिन्दू लोग —— और खासकर ब्राह्मण —— बहुत बुरा बरताव करते हैं। गाँवोंमें उन्हे उन गलियोसे नहीं चलने दिया जाता, जिनमें ब्राह्मणोंकी आबादी है। ब्राह्मणोसे बातचीत करते समय उन्हे उनसे एक खासी दूरीपर खड़े रहना पड़ता है।

आप तनिक ब्राह्मणोकी जगह साहबोको और पचमोकी जगह भारतीयोको रख-कर देखिए कि आपको कैसा महसूस होता है। और मुझे तो इसमे कोई शक नही है कि कुछ साहब कुछ ब्राह्मणोसे लाख दर्जे अच्छे है। जबतक हम अपने किसी भाईको उसके जन्मके कारण वर्ण-बहिष्कृत मानकर उसके साथ व्यवहार करते है तबतक ईश्वर हमे स्वराज्य नही प्राप्त करने देगा। उनका कहना है कि कोई मनुष्य जो-कुछ है वह अपने कर्म-फलके कारण ही है। लेकिन मेरा कर्म तो यह नही है कि मैं पतितोपर पत्थर फेकूँ। धर्मका उद्देश्य मनुष्यको उसके कार्यके भारके नीचे दबाये रखना नही, बल्कि उसका उद्देश्य मनुष्यका उत्थान करना है। किसी नीच कुलोत्पन्न

मनुष्यको कर्मके सिद्धान्तकी आड लेकर नारकीय स्थितिमें डाल देना कर्मके उक्त गरिमामय सिद्धान्तका भयकर दुरुपयोग है। रामने केवटका सम्मान-सत्कार पाकर खुदको सौभाग्यशाली माना था। हिन्दू-धर्म उच्चात्मा और महान् व्यक्तियो द्वारा अपने अभागे भाइयोको दु खसे त्राण देनेके उदाहरणोसे भरा पडा है। क्या आजसे हिन्दू अपने महान् पुरखोका अनुकरण करके हिन्दू-धर्मपरसे अस्पृश्यताके कलकका वह टीका सदाके लिए मिटा नही देगे, जो इस धर्मको इस तरह विरूपित कर रहा है?

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २२–९–१९२१

७४. नकली माल

सम्पादक

यग इडिया,

महोदय,

हम 'यग इडिया' के १८ अगस्तके अकमें "नकली माल"[1] शीर्षकसे छपी टिप्पणीकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करते हैं, और निवेदन करते हैं कि उसमें जो अस्पष्टता है उसे स्पष्ट करनेकी कृपा कीजिए।

आपने अपने पत्रके उपर्युक्त अकमें मद्रासके आये जिस पत्रको उद्धृत किया है, उसमें यद्यपि केवल बॉम्बे स्वदेशी स्टोर्स द्वारा मद्रासमें बेची जानेवाली १० से १५ आना गजवाली खादीका उल्लेख है, फिर भी उसमें बाम्बे स्वदेशी स्टोर्सका उल्लेख होनेके कारण, हमारे बहुतसे ग्राहक उसके बारेमें पूछताछ कर रहे हैं और उसका जवाब माँग रहे हैं, क्योंकि हमारा स्टोर आम तौरपर "स्वदेशी स्टोर्स' या "बॉम्बे स्वदेशी स्टोर्स" के नामसे प्रसिद्ध है।

हमारे सामने यह बिलकुल स्पष्ट है कि उक्त पत्रका हमसे कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि मद्रासमें हमारी न तो कोई शाखा है, न कोई एजेन्सी ही, और न हम लोग ऐसा सामान अपने स्टोरमें रखते हैं। परन्तु हमारे ग्राहको तथा आम जनताके दिमागसे सन्देह या गलतफहमी दूर करनेके लिए हम इस आशा और विश्वाससे आपको लिख रहे हैं कि आप इसपर तत्काल ध्यान देंगे और अपने अगले अकमें इस मुद्देको स्पष्ट कर देनेकी कृपा करेंगे।

आपका,

प्रबन्धक

बॉम्बे स्वदेशी कोऑपरेटिव स्टोर्स क०, लिमिटेड

१ देखिए खण्ड २०, पृष्ठ ५४०।

उपर्युक्त पत्र मैं सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ। मेरी टिप्पणी निश्चय ही मद्राससे मिली एक शिकायतपर आधारित थी।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-९-१९२१

७५. आखिरी काम

मौलाना मुहम्मद अलीकी गिरफ्तारीकी चर्चा बहुत हुई है। उनकी गिरफ्तारी जब हम मद्रास जा रहे थे, वाल्टेयरमे हुई। यह लेख मैं रेलगाडीम, कुछ तार लिखनेके तुरन्त बाद लिख रहा हूँ। गाडी वाल्टेयरमे पच्चीस मिनटसे कुछ अधिक समय तक रुकी। मौलाना मुहम्मद अली और मैं एक सभामे भाषण देने स्टेशनसे वाहर जा रहे थे। अभी हम फाटकसे कुछ ही कदम आगे बढे थे कि मौलाना मुहम्मद अलीने मुझे पुकारकर वह नोटिस पढकर सुनाया, जो उन्हे दिया गया था। मैं उनसे कुछ कदमकी दूरीपर उनके सामने खडा था। गिरफ्तार करनेवालोके दलमे दो गोरे और आधे दर्जन पुलिसके भारतीय जवान थे। उस दलके मुख्य अधिकारीने मौलाना साहवको पूरा नोटिस पढने भी नही दिया और झपटकर उनका हाथ पकड लिया और उन्हे वहाँसे ले चला। उन्होने मुस्कराते हुए अलविदा कहा। उसका मतलव मैं समझ गया। मुझे झडा उठाये रखना था। ईश्वर मुझे अपने-आपको उस साथीके सन्देशके योग्य सिद्ध करनेमे सहायता दे, जिसके साथ काम करना सचमुच गौरवकी वात थी।

मैं सभा-स्थल तक गया। वहाँ मैंने लोगोसे शान्त रहकर काग्रेसका कार्यक्रम पूरा करनेको कहा। फिर मैं वापस लौटा और वहाँ गया, जहाँ मौलाना साहवको हिरासतमे रखा गया था। मैंने गिरफ्तार करनेवाले दलके मुख्य अधिकारीसे पूछा कि क्या मैं मौलाना साहवसे मिल सकता हूँ। उसने वताया कि उसे तो आदेश है कि उनकी पत्नी और सेक्रेटरीके अलावा और किसीको नही मिलने दे। मैंने वेगम मुहम्मद अली और सेक्रेटरी श्री हयातको हिरासतके कमरेसे वाहर आते देखा।

वाल्टेयर आन्ध्रका एक सौन्दर्य-स्थल है। यह एक सेनेटोरियम ही है। मौलाना साहव इतने सुन्दर स्थानमे गिरफ्तार हुए, इससे मुझे उनसे ईर्ष्या हुई। वे वाल्टेयरमें कुछ दिन रुककर आराम करने और शिष्टमण्डलका विवरण पूरा कर डालनेकी वात सोच रहे थे। लेकिन वगालमे उन्हे अप्रत्याशित रूपसे वहुत ज्यादा दिन रुक जाना पडा था और उधर मोपलोका उत्पात शुरू हो गया था, इसलिए उनकी यह योजना असम्भव ही हो गई थी,

लेकिन ईश्वरकी कुछ और ही मर्जी थी। वह मौलाना साहवको मजवूरीका आराम देना चाहता था। और मैं जानता हूँ कि वे नजरवन्दीमे खुश है।

नीचे गिरफ्तारीके वारटकी नकल दी जा रही है

श्री एफ० ई० कनिंघम
पुलिस उप-महा-निरीक्षक,
सी० आई० डी० और रेलेव विभाग,
मद्रास

चूंकि मुहम्मद अलीसे यह कैफियत माँगी जानी है कि दण्ड प्रक्रिया सहिताके खण्ड १०७ व १०९ के अन्तर्गत उनसे एक सालतक शान्ति बनाये रखने या अपना व्यवहार ठीक रखनेके लिए मुचलका क्यो नहीं लिया जाये, इसलिए आपको निर्देश दिया जाता है कि आप उक्त मुहम्मद अलीको गिरफ्तार करके मेरे सामने पेश कीजिए। इसमें चूक नहीं होनी चाहिए।

जे० आर० हगिन्स
जिला मजिस्ट्रेट

विशाखापट्टम
१४ सितम्बर, १९२१

मौलाना मुहम्मद अली न केवल स्वय सदा शान्तिपूर्ण आचरण करते रहे है, वल्कि दूसरोके वीच भी शान्ति वनाये रखनेका प्रयत्न, और सफल प्रयत्न, करते रहे है। अच्छे व्यवहारके तो वे प्रतीक ही है। फिर क्या यह बात बिलकुल हास्यास्पद नही है कि ऐसे व्यक्तिसे एक मदान्ध सरकार "शान्ति बनाये रखने और अपना व्यवहार ठीक रखनेके लिए मुचलका" देनेको कहे? जो सरकार स्वय बुरी है, उसके राज्यमें अच्छे पुरुषो और स्त्रियोके लिए जेलोके अलावा और कही स्थान नही है।

यह निश्चित है कि जैसा छोटेभाईके साथ हुआ वैसा ही बडे भाईके साथ भी होगा। वे अपनेको स्यामी जुडवाँ कहते है। दोनो एक दूसरेके अभिन्न अग है। और अगर एकका व्यवहार ठीक नही रहा है तो दूसरेका भी नही रहा होगा। मुझे आशा है कि इस लेखके छपते-छपते भारतको मौलाना शौकत अलीकी गिरफ्तारीका समाचार मालूम हो चुका होगा।

मौलाना मुहम्मद अलीको गिरफ्तार करके सरकारने खिलाफतको गिरफ्तार किया है। कारण, ये दोनो भाई खिलाफतके सबसे अच्छे प्रतिनिधि है। जबतक खिलाफत लगभग एक कैदीकी हालतमें पडा हुआ है और मुसलमानोके तीर्थस्थान वस्तुत गैर-मुसलमानोके नियन्त्रणमे है, तबतक वे चैन नही ले सकते। दोनो भाइयो या दोनोमे से किसीकी भी गिरफ्तारीका मतलब है खिलाफतकी माँगको मजूर करनेसे साफ इनकार कर देना।

लेकिन सरकार देखेगी कि वह दोनो भाइयोकी आत्माको बन्दी नही बना पाई है, और उनकी गिरफ्तारीके कारण खिलाफत आन्दोलन और भी तेजीसे चलेगा। दोनो भाइयोकी आत्मा सभी सच्चे हिन्दुओ और मुसलमानोमे समाहित रहेगी और वे खिलाफतकी मशालको निष्कम्प और प्रदीप्त रखेगे।

लेकिन, अलीबन्धु आज खिलाफतके अलावा कुछ और भी उद्देश्य लेकर चल रहे हैं। वे स्वराज्य चाहते हैं और उन्हे जितनी चिन्ता खिलाफत सम्बन्धी अन्यायका निराकरण करानेकी है, उतनी ही चिन्ता पजावके साथ किये गये अन्यायके परिशोधनकी भी है। वे अपनी शान और ईमानके इतने पक्के हैं कि खिलाफत सम्बन्धी अन्यायके निराकरणके बदले भी अपने-आपको बेच नही सकते। उनके लिए तो तीनों सवाल अभिन्न हैं, जिन्हे कभी अलग नही किया जा सकता। और कुछ अन्यथा होना सम्भव भी नही है, क्योकि एक माँग स्वीकार करने या एक चीज पा लेनेका मतलब है शेष माँगोका भी स्वीकार किया जाना और शेष चीजे भी पा लेना।

मेरे विचारसे यह गिरफ्तारी एक शुभ लक्षण है। जबतक सरकार साधारण कार्यकर्त्ताओको गिरफ्तार कर रही थी, तबतक तो वह इस समस्याके साथ खिलवाड कर रही थी। जो सरकार लोक-इच्छाके आगे झुकना नही चाहती, ऐसी हर सरकार लोकनेताओको गिरफ्तार करके जन-भावनाको कुचलनेकी कोशिश करती है। भारत-सरकारने अपनी प्रतिष्ठाका नियम यही बना लिया है कि वह नेताओको गिरफ्तार करती है, उन्हे सजा देती है और जब लोक-इच्छाके आगे झुकनेमे कोई शोभा नही रह जाती तब झुक जाती है।

इसलिए इस गिरफ्तारीको स्वराज्य स्थापनाकी पूर्व पीठिका माना जा सकता है। केवल स्वराज्य ससद् ही जेलके दरवाजे खोल सकती है, वही अलीबन्धुओ और उनके साथी कैदियोको उपयुक्त सम्मानके साथ जेलसे छुटकारा दिला सकती है, क्योकि यह लडाई अब बिना अन्तिम फैसला हुए रुकनेवाली नही है।

अलीबन्धुओ और उनके साथी कैदियोको हम जो सबसे अच्छी श्रद्धाजलि दे सकते है वह यह कि हम समस्त शका, भय तथा आलस्यको त्याग दे। हम इस बातमें शका करते रहे हैं कि हम अहिंसा और स्वदेशीके बलपर अपने लक्ष्यतक पहुँच सकते हैं। हमें इस बातमे सन्देह रहा है कि हम इसी साल अपना कार्यक्रम पूरा कर सकते है। हमारे मनमे भय यह रहा है कि हम शायद आवश्यक बलिदान नही कर पायेंगे, और हम अपने कार्यक्रमपर बहुत सुस्तीसे अमल करते रहे हैं। तो अब आइए, हम अलीबन्धुओके साहस और विश्वासका, निर्भीकता और सत्यपरायणताका तथा जागरूक रहकर निरन्तर कर्म-रत रहनेके गुणका अनुकरण करे। फिर तो हमे स्वराज्य मिलकर ही रहेगा। मजिस्ट्रेटने आदेशके अन्तमे लिखा था, "इसमे चूक नही होनी चाहिए।" ठीक है, सम्बन्धित अधिकारीसे "चूक नही हुई।" बहुतसे अग्रेज अधिकारियोने न चूकनेके प्रयत्नमे अपने प्राण गँवा दिये, और इसके लिए वे प्रशसाके पात्र हैं। कांग्रेस और खिलाफत भी आपको आदेश, दायित्व, सलाह या इसे जो भी कहिए, देता है कि "इसमें चूक नही होनी चाहिए।" अब हमारे पास जितना समय रह गया है, उसमें क्या हम इस ढगसे काम करेगे जिससे कांग्रेसको बता सके कि "हमसे चूक नही हुई"। आदेश स्पष्ट है

१ लाख उत्तेजनाके बावजूद अहिंसापर अटल रहिए।

२ कैसी भी कठिन परिस्थिति हो, हिन्दू-मुस्लिम एकताको कायम रखिए।

३ विदेशी वस्त्रोके प्रयोगका वहिष्कार कीजिए, भले ही आपको सिर्फ लँगोटी पहनकर ही गुजारा क्यो न करना पडे। जो भी समय वचे, उसमे चरखा चलाइए।

जव हम ये शर्तें पूरी कर देगे तभी हम सविनय अवज्ञाके लिए तैयार माने जायेंगे, जो जवरदस्तसे-जवरदस्त सरकारको भी जनताकी इच्छाके आगे झुकनेको मजवूर कर देगी।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २२-९-१९२१

७६. आवश्यकता है — विशेषज्ञोकी

हाथ-कताईकी वडी आलोचना की गई है, फिर भी मैं अपने इस विश्वासपर दृढ हूँ कि यह सुन्दर कला जवतक भारतके घर-घरमे प्रवेश नही कर जाती तवतक स्वराज्य प्राप्त नही हो सकता। इस मान्यताके पीछे जो दलील है, वह अत्यन्त साफ-सीधी है। जवतक भारतका घर-घर आत्म-निर्भर नही हो जाता, भारत जीवित नही रह सकता। और भारतके सभी घर तवतक आत्मनिर्भर नही हो सकते जवतक उनके पास कोई पूरक धन्धा नही होता। इसलिए अगर हमारा सारा कपडा मिलोमें ही तैयार होने लगे तो उससे कोई काम नही वनेगा। अगर हाथ-कताईका प्रचलन घर-घरमें हो जाता है तो प्रत्येक परिवार वस्त्र-उत्पादनसे होनेवाली करोडो रुपयेकी आयमे हिस्सेदार होगा, और इसके वितरणके लिए किसी उलझनभरी व्यवस्थाकी भी जरूरत नही होगी। भारतमे अपनी जरूरतका सारा कपडा तैयार करनेकी सामर्थ्य तो है ही। यह मानी हुई वात है कि जव कताईका काम घर-घरमे होने लगेगा तो लाखो वुनकर और धुनिये अपने पुराने पेशेको फिरसे अपना लेगे।

यह है हाथ-कताईका आर्थिक पहलू।

यह हमारी स्त्रियोको, जिन्हे मजवूर होकर अपनी पवित्रता भग करनी पडती है, उससे वचायेगी। इससे आजीविकाके लिए भीख माँगना वन्द हो जायेगा, और वह वन्द हो जाना चाहिए। यह हमारी मजवूरीकी वेकारी दूर करेगी। यह हमारे मनमें स्थिरता लायेगी। और मैं तो सचमुच यहाँतक मानता हूँ कि जव करोडो लोग इसे एक धर्म-कार्य मानकर अपनायेंगे तो यह हमे ईश्वरोन्मुख करेगी।

यह है हाथ-कताईका नैतिक पहलू।

और जव इसका प्रचार सर्वत्र हो जायेगा और विदेशी कपडेका व्यापार एक गई-गुजरी वात वन जायेगा तो यह इस वातका द्योतक होगा कि भारतमे अपने उद्देश्यके प्रति उत्कटता है, उसमे धीरता और गम्भीरता है, और वह अपने सघर्षके अहिंसात्मक और धार्मिक स्वरूपमे विश्वास करता है।

इस समय वाहरके लोगोको यह विश्वास नही हो रहा है कि हममें विदेशी कपडेका वहिष्कार करनेकी क्षमता है और हम हाथ-कताई और हाथ-वुनाईसे इतना कपडा तैयार कर सकते है जिससे हमारी जरूरते पूरी हो जाये। लेकिन जव यह एक निश्चित तथ्यका रूप ले लेगा तव भारतकी राय भी एक ऐसी ताकत वन जायेगी जिसे

दवाया नही जा सकेगा। लेकिन केवल तभी, यदि जरूरत हुई तो इस हठीली सरकारको अपनी इच्छाके आगे झुकानेके लिए भारत सविनय अवज्ञा भी कर सकता है।

यह है इसका राजनीतिक पहलू।

इसलिए मुझे यह देखकर वडा दु ख हुआ कि सारे बगालमे ऐसा एक भी आदमी नही है जो कताईका विशेषज्ञ हो और अपना सारा समय और ध्यान हाथ-कताईके सन्देशके प्रचारमे ही लगा रहा हो — लोगोको इसकी शिक्षा दे रहा हो, उन्हे इसके लिए सगठित कर रहा हो और सलाह दे रहा हो। मैने देखा कि आम जनता तो वहाँ यह काम हाथमे लेनेको तैयार है, किन्तु उसे यह नही मालूम है कि वह इसे करे किस तरह। और जो बात बगालको लागू होती है, वही शायद अधिकाश प्रान्तोको भी लागू होती है। हर प्रान्तमे एक खास स्तरका चरखा होना चाहिए, और विशेषज्ञोका एक सगठन होना चाहिए, जिससे लोग सलाह और मार्गदर्शन ले सके। अगर विशेषज्ञोके ज्ञानका लाभ सुलभ हो तो बहुत-से लोगोमे ऐसी सुन्दर, शानदार प्रतिभा है, जिसका बहुत अच्छा उपयोग किया जा सकता था। कलकत्तेके राष्ट्रीय कालेजके हॉलमे पन्द्रह नये-नये किस्मके चरखोका प्रदर्शन किया गया। अब उनकी उपयोगिता अनुपयोगिताका निर्णय कौन करे? मैने सब जगह अलग-अलग किस्मके चरखोका प्रयोग होते देखा। लेकिन ऐसा नही देखनेमे आया कि इन चरखोकी क्षमता जाँचनेकी कोई कोशिश की गई हो। आज बगालमे हजारो लोग कताई कर रहे है, लेकिन उनके कामको मापनेवाला कोई नही है। इसलिए सभी काग्रेस कमेटियोको मेरी सलाह है कि प्रत्येक काग्रेस कमेटी कमसे-कम ऐसे छ पुरुषो और छ स्त्रियोको, जिन्हे अपने उद्देश्यमे आस्था हो, इसी दिशामे काम करनेके लिए अलग चुन ले। उन्हे व्यक्तिगत मार्गदर्शनके लिए सत्याग्रह आश्रमका मुँह जोहनेकी जरूरत नही है। जो-कुछ बताया जा सकता है, वह इस पत्रमे हर हफ्ते प्रकाशित विशेष लेखो द्वारा बता दिया जाता है। जो लोग इस विषयके विशेषज्ञ बनना चाहते हो, उनसे मेरा अनुरोध है कि वे उन्हे ध्यानसे पढें। लेकिन कोई ऐसा न माने कि केवल उन लेखोको पढकर ही विशेषज्ञ बना जा सकता है। पूर्णता तो अभ्यास करके ही हासिल की जा सकती है। करोडो लोग इस कारण कताई करेगे कि दूसरे कामकाज करनेके बाद भी उनकी कमाईमें जो कमी रह जाती है, उसे पूरा कर सके, कुछ लोग एक धर्म-कार्य मानकर भी कताई करेगे, लेकिन कुछको कताईको वैज्ञानिक रूप देनेके लिए भी यह काम करना चाहिए। ऐसे लोगोको हर दिन कमसे-कम आठ घटे अवश्य कताई करनी चाहिए। और जैसे-जैसे वे अधिक कताई करते जाये, उन्हे पहलेके काते सूतको बादमे काते सूतसे मिलाकर यह भी देखते जाना चाहिए कि वे पहलेकी तुलनामे अब कैसा सूत कातते है। उन्हे धुनाई और बुनाई भी सीखनी चाहिए। उन्हे अलग-अलग किस्मकी रुईकी पहचान होनी चाहिए और अलग-अलग किस्मके चरखोका भी ज्ञान होना चाहिए। उन्हे चरखोकी साधारण मरम्मत करना भी आना चाहिए।

जबतक हम अपने-आपको सलीके और समझदारीसे सहकारी ढगपर सगठित नही करते तबतक हमे स्वराज्य नही मिल सकता। स्वदेशीका मतलब है राष्ट्रीय जीवनके दूसरे बडे क्षेत्रमे असहयोग।

हम वहिष्कार इसलिए कर रहे है कि अव हम हाथ-कताई और हाथ-बुनाईके जरिये अपनी जरूरतका कपडा तैयार करनेकी स्थितिमे है। लेकिन जवतक इस सक्रान्ति कालमे हममे से प्रत्येक व्यक्ति कताई नही करने लगता, और जवतक हर प्रान्त अपनी जरूरतका कपडा तैयार करनेके लिए आवश्यक व्यवस्था स्वय नही करने लगता तवतक हम वहिष्कारको चालू नही रख सकेगे। और यह सव तभी हो सकता है जव हर प्रान्तमे एक खास सख्यामे इस विपयके विशेषज्ञ हो।

[अंग्रेजीसे]

यग इडिया, २२-९-१९२१

७७. सन्देश : लँगोटीके सम्बन्धमें[1]

मदुरा
२२ सितम्बर, १९२१

अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीने विदेशी कपडेके वहिष्कारका जो कार्यक्रम निर्धारित किया था, उसे पूरा करनेके लिए अव हमारे पास कुछ ही दिन शेप है। अगर काग्रेसका प्रत्येक कार्यकर्त्ता, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, पूरा ध्यान वहिष्कारकी ओर ही लगाये तो अब भी वहुत देर नही हुई है। अगर हर कोई इस वातका अनुभव करे कि स्वदेशीके विना — अर्थात् विदेशी कपडेका वहिष्कार और जरूरतके सभी कपडेका उत्पादन हाथ-कताई और हाथ-बुनाईसे किये विना — स्वराज्य नही मिल सकता, और स्वराज्य मिले विना खिलाफत तथा पजावके साथ किये गये अन्यायोका परिशोधन नही हो सकता, तो विदेशी कपडेका यह वाछित वहिष्कार करनेमे तथा जरूरतका सारा कपडा स्वय तैयार करनेमे कोई कठिनाई नही होनी चाहिए।

मै जानता हूँ कि वहुत-से लोगोके लिए विदेशी कपडा छोडकर एकाएक स्वदेशी अपना लेना कठिन होगा। करोडो लोग इतने गरीव है कि वे छोडे हुए विदेशी कपडेकी जगह उपयोगके लिए काफी खद्दर खरीद ही नही सकते। उन्हे मै वही सलाह देता हूँ जो मैने उस दिन मद्रासके समुद्र-तटपर उपस्थित लोगोको दी थी।[1] वे एक लगोटीसे — सिर्फ घुटनोतक की धोतीसे — ही सन्तोप करे। हमारे यहाँकी जलवायु ऐसी है कि गर्मियोंके दिनोमें शरीर-रक्षाकी दृष्टिसे कुछ ज्यादा कपडे जरूरी नही होते। पहनावेके वारेमे कोई मिथ्या शिष्टाचार वरतना आवश्यक नही है। भारतने सस्कृतिकी कसौटीके रूपमे पुरुषो द्वारा अपना सारा तन ढँकनेपर कभी भी आग्रह नही रखा है।

यह सलाह मैं अपनी जिम्मेवारी अच्छी तरह समझते हुए दे रहा हूँ। इसलिए एक उदाहरण सामने रखनेके लिए मै खुद ही, कमसे-कम ३१ अक्तूवरतक के लिए, टोपी और सदरी त्यागकर सिर्फ एक लँगोटी और शरीर-रक्षाके लिए जरूरी होनेपर चद्दर-से ही काम चलाने जा रहा हूँ। अपने पहनावेमें यह परिवर्तन मै इसलिए कर रहा

१. देखिए "भाषण मद्रासमें", १५-९-१९२१।

हूँ कि दूसरोको कोई ऐसा काम करनेकी सलाह देनेसे बराबर बचता रहूँ जो मै स्वयं न कर सकूँ। इसका एक कारण यह भी है कि मै आगे बढकर उन लोगोके लिए रास्ता आसान बना देना चाहता हूँ जिन्हे विदेशी कपडेसे बनी पोशाक छोडनेके बाद अपने पहनावेमे परिवर्तन करना मुश्किल लग रहा है। इस त्यागको मै एक शोक-चिह्नके रूपमे भी अपने लिए जरूरी मानता हूँ। देशके जिस हिस्सेमे मै रहता हूँ उस हिस्सेमे नगे सिर और नगे बदन रहना शोकका चिह्न माना जाता है। और हम शोककी स्थितिमे है, यह बात तो इस तथ्यको देखते हुए मेरे सामने अधिकाधिक स्पष्ट होती जा रही है कि वर्षका अन्त निकट है और हमे अभीतक स्वराज्य नही मिल पाया है। लेकिन, मै यह स्पष्ट बता देना चाहता हूँ कि जबतक मेरे साथी कार्यकर्त्ताओको अपने कामके खयालसे जरूरी न लगे तबतक मेरी ऐसी कोई ख्वाहिश नही है कि वे भी टोपी और सदरी पहनना छोड दे।

मेरा निश्चित मत है कि अगर पर्याप्त कार्यकर्त्ता हो तो प्रत्येक प्रान्त और प्रत्येक जिला एक ही महीनेमे अपनी जरूरतके लायक काफी कपडा तैयार कर सकता है। और मेरी सलाह है कि इस उद्देश्यको ध्यानमे रखते हुए एक महीनेके लिए स्वदेशीके अलावा और सभी गतिविधियाँ स्थगित रखी जाये। शराबखोरोपर इस बातके लिए भरोसा कर सकते है कि वे स्वय इस शुद्धीकरणकी नई भावनाको पहचानेगे। मै तो धरनेदारोको भी शराबकी दुकानोसे हटा लेना चाहता हूँ। हर असहयोगीको मैं सलाह दूंगा कि कारावासको वह अपने जीवनकी एक साधारण बात माने और उसकी कोई परवाह न करे। यदि अक्तूबर मास-भर सभी सभा-सोसाइटी तथा उत्तेजनात्मक भाग-दौडके कार्योसे अलग रहकर हम सिर्फ स्वदेशी कपडेके उत्पादन और लोगोसे विदेशी कपडे माँगकर इकट्ठा करनेका काम करेगे, तभी हम ऐसा शान्त और उद्वेगविहीन वातावरण तैयार कर सकेगे जिसमे जरूरत पडनेपर सविनय अवज्ञा प्रारम्भ कर सके। लेकिन मेरा यह निश्चित विश्वास है कि यदि हम पूर्ण स्वदेशीके लिए आवश्यक चरित्र-बल, सगठन-क्षमता तथा आदर्श आत्म-सयमकी शक्तिका परिचय देगे तो और कुछ किये बिना हमे स्वराज्य मिल जायेगा।

मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-९-१९२१

७८. भाषण : तिरुप्पत्तूरमें

२२ सितम्बर, १९२१

तिरुप्पत्तूरके नागरिकोंने महात्माजीको तमिलमें एक अभिनन्दन-पत्र तथा एक थैली भेंट की। महात्मा गाधीने उत्तरमें कहा कि भारतमें बाईस करोड़ लोगोके पास सालमें छ महीने कोई काम नहीं रहता, और यदि हर घरमें एक चरखा हो, जिसे घरका प्रत्येक सदस्य फुर्सतके समय कुछ घटे चलाया करे, तो नि.सन्देह हम सारे भारतको पर्याप्त स्वदेशी वस्त्र प्रदान कर सकते है। बत्तीस करोड़ लोगोके वस्त्रके लिए जितनी कपासकी जरूरत है, देशमें उससे ज्यादा ही पैदा होती है। जबतक सभी भारतीयोके लिए हाथका कता-बुना कपडा नहीं मिलता, तबतक हमें एक लँगोटी पहनकर भी बाहर निकलनेको तैयार रहना चाहिए। हमें हाथका बना कपडा पहननेमें गर्व अनुभव करना चाहिए, भले ही वह कितना ही खुरदरा हो। इसके बाद महात्माजीने अपना पहनावा बदलनेका कारण स्पष्ट करते हुए कहा कि जबतक अमीर-गरीब सभीको जरूरतके लायक पूरा स्वदेशी कपडा नहीं मिलने लगता, मै तबतक कपड़ेका एक छोटासा टुकडा ही पहना करूँगा। फिर महात्माजीने कहा कि अभिनन्दन-पत्रमें जो यह बताया गया हे कि तिरुप्पत्तूरके नागरिकोने शराब पीना लगभग बिलकुल छोड़ दिया है उससे मुझे बहुत ज्यादा खुशी हुई है। मुझे आशा है कि न केवल तिरुप्पत्तूरमें, वरन् इसके आसपासकी जगहोंमें भी शराब पीना बिलकुल बन्द हो जायेगा। इसके बाद उन्होंने श्रोताओसे पचम लोगोके साथ बराबरीका व्यवहार करनेका अनुरोध किया।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, २६-९-१९२१

७९. भाषण : कनाडुकातनमे

२२ सितम्बर, १९२१

मित्रो,

आप लोगोने मुझे जो अभिनन्दन-पत्र और थैलियां अभी भेट की है, उनके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। परन्तु केवल थैलियां और अभिनन्दन-पत्र भेट करनेसे हमे स्वराज्य नही मिल सकता। यदि आप स्वराज्य चाहते है, यदि आप पजाब तथा खिलाफतके साथ किये गये अन्यायोका निराकरण कराना चाहते है, अगर आप अली-बन्धुओकी रिहाई चाहते है तो आपको स्वदेशी-व्रत धारण करना चाहिए और सभी विदेशी वस्त्र त्याग देने चाहिए। यह काम पुरुषो और स्त्रियो, दोनोको करना चाहिए। आपको हर घरमें कातना और बुनना शुरू करवाना चाहिए। आपको अपने धनपर

गर्व नही करना चाहिए, और जो लोग वहुत गरीब है, उन्हे एक लँगोटीमे खुश रहना चाहिए। सरकार हमारे सामने उत्तेजनाका चाहे जो कारण प्रस्तुत करे, हम सबको वहुत धैर्यसे काम लेना चाहिए और अहिसा धर्मपर दृढ रहना चाहिए। हिन्दुओ और मुसलमानोके वीच पूरी एकता रहनी चाहिए। हिन्दुओको छुआछूतकी भावना छोड देनी चाहिए। हिन्दू शास्त्रोमे ऐसा कुछ नही है जिसके आधारपर छुआछूतको ठीक माना जा सकता हो। मै यह बात एक ऐसे सनातनी हिन्दूके नाते कह रहा हूँ जो चालीस वर्षोसे अधिक समयसे एक सच्चे हिन्दूकी तरह रहता आ रहा है। हमे शराब नही पीनी चाहिए, जुआ नही खेलना चाहिए। हमे अपनी पाशविक वृत्तियोपर अकुश रखना चाहिए। यदि हम ऐसा करेगे तो बेशक हमे स्वराज्य भी मिलेगा, पजाब तथा खिलाफत-सम्बन्धी अन्यायोका निराकरण भी हो जायेगा और हम अली-बन्धुओको रिहा भी करा लेगे।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, २६-९-१९२१

८०. भाषण : कोट्टायुरमें

२२ सितम्बर, १९२१

मित्रो,

मै अभिनन्दन-पत्र तथा थैली भेट करनेके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। जब आप अपने विदेशी वस्त्रोको त्याग देगे तव मै आपको और अधिक धन्यवाद दूँगा। यदि आपको जरूरतके लायक काफी खद्दर न मिले तो सिर्फ एक लँगोटी पहन कर ही रहिए।

वहनो, दक्षिण आफ्रिकाकी जेलमे मेरे साथ आप-जैसी अनेक वहने थी। मै नही चाहता कि आप अभी जेल जाये। परन्तु मै यह जरूर चाहता हूँ कि आप सूत काते और विदेशी कपडा पूर्ण रूपसे त्याग दे। आप चाहे जिस रगमे खद्दरको रग सकती है। जवतक हम स्वदेशीको नही अपनाते, जवतक शराब पीना नही छोडते, जवतक देशमें पूर्ण शान्ति नही स्थापित होती, जवतक हम अपनी पाशविक वासनाओपर काबू रखनेमें समर्थ नही होते और जवतक हिन्दुओ और मुसलमानोमे पूरी एकता नही होती तवतक स्वराज्य नही मिल सकता।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, २६-९-१९२१

८१. भाषण : देवकोट्टामें

२२ सितम्बर, १९२१

मित्रो,

मुझे जो अभिनन्दन-पत्र और थैलियाँ अभी भेंट की गई है, उनके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। चूंकि मैं कोई कीमती उपहार स्वीकार नही करता, इसलिए आपकी चाँदी और सोनेकी तश्तरियाँ तिलक स्वराज्य-कोषको दे दी जायेगी। इस सबमे निहित आपके स्नेह की मैं कद्र करता हूँ, किन्तु साथ ही मैं आपसे यह अवश्य कहूँगा कि इनसे बहुत कम सन्तोष मिल पाता है। इस हाथसे कते बढिया सूतको देखकर और यह जानकर कि आपके यहाँ चालीस चरखे रोज चलते है मुझे कुछ सन्तोष अवश्य मिलता है। लेकिन इतनी बडी जगहके लिए चालीस चरखे समुद्रमे बूंदके समान है। जिस तरह यहाँ हर घरमे एक घोडा है, उसी तरह हर घरमे एक चरखा भी जरूरी होना चाहिए। और मैं हर स्त्री-पुरुषसे आशा करता हूँ कि अपने विगत पापोके प्रायश्चित्त-स्वरूप वह प्रतिदिन फुर्सतके वक्त थोडी देर सूत कातेगा। जबतक मैं आपको विदेशी सूतसे बनी धोतियाँ पहनते देखूंगा, मैं सन्तुष्ट नही हो सकता। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि आप मेरी तरह मोटेसे-मोटा कपडा पहना करेंगे, तो भी आप अपना लेनदेनका व्यापार न केवल भारतमे वरन् रगूनमे और अन्य स्थानोमे भी अच्छी तरह चला सकेंगे। परन्तु यदि आप बढिया पोशाक पहनते है और यदि आप हमारी बहनोके हाथसे कते-बुने वस्त्र पहननेसे इनकार करते है तो भारतको स्वराज्य नही मिल सकता। यदि आपका मन्तव्य स्वदेशी कार्यक्रमको पूरा करनेका है तब तो माना जायेगा कि आपके अभिनन्दन-पत्र और थैलियाँ अच्छी चीजे है। लेकिन अगर ये अभिनन्दन-पत्र और थैलियाँ इस बातकी सूचक न हो कि स्वराज्य प्राप्त करने, पजाब तथा खिलाफतके साथ किये गये अन्यायोका निराकरण कराने और अली-बन्धुओको रिहा करनेके प्रयत्नमे सहयोग करनेका आपने पूर्ण और अन्तिम सकल्प कर लिया है तो ये बिलकुल बेकार है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि कलसे आप अपने सभी विदेशी कपडोको छोड देंगे और केवल हाथके कते-बुने कपडे ही इस्तेमाल करेंगे। मैं यह उम्मीद भी करता हूँ कि आपके गाँवमे नशाखोरी नही है। यदि हो तो मुझे आशा है कि आप उस अभिशापको दूर भगायेंगे। हिन्दू धर्ममे अस्पृश्यता-जैसी कोई चीज नही है और अपने पचम भाइयोके साथ अपने सगे भाइयोकी तरह बर्ताव करना हमारा धर्म है। आन्ध्रकी तरह यहाँ भी मैं देखता हूँ कि मर्द लोग हीरेकी अँगूठियाँ और बालियाँ पहननेके शौकीन है। मेरी आकाक्षा है कि मैं आपको अपनी प्राचीन सादगी पुन अपनानेके लिए राजी कर सकूं और वे सब आभूषण तिलक स्वराज्य-कोष या ऐसे ही किसी अन्य कोषमें भिजवा दूं। मै एक बार फिर आपको इन अभिनन्दन-पत्रो और थैलियोके लिए धन्यवाद

देता हूँ और इस आशाके साथ अपनी बात समाप्त करता हूँ कि आप सब स्वदेशीके कार्यक्रमका अनुसरण करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २६–९–१९२१

८२. पत्र : महादेव देसाईको

२३ सितम्बर, १९२१

भाईश्री महादेव,

मद्रास आनेके बाद मुझे तुम्हारा एक भी पत्र नहीं मिला है। स्वदेशीके सम्बन्धमें तो मद्रासमें कुछ भी नहीं किया गया, ऐसा कहा जा सकता है। देखना है कि अब क्या होता है? मैंने पोशाकमें भारी फेर-बदल किया है, तुमने देखा ही होगा। मुझसे रहा नहीं गया।

मद्रासमें राजगोपालाचारीने खूब मेहनत की है तथापि मद्रास मुझे बंगालसे भी अधिक पिछड़ा हुआ जान पड़ा। भ्रमणसे और जयघोषके नारोंसे अब मैं ऊब गया हूँ। उम्मीद है, तुम्हारी तबीयत अच्छी होगी। चार तारीखको बम्बई आ सको तो आना।

सरकारकी ओरसे कालीकट न जानेका आदेश पत्र[1] प्राप्त होनेके बाद मेरे लिए सविनय-भंग करना अत्यन्त आसान हो गया है।

यह पत्र मैं तुम्हें तिन्नेवेली जाते हुए लिख रहा हूँ। राजगोपालाचारीकी तबीयत बहुत खराब रहती है। उन्हें हल्का ज्वर, खाँसी और दमा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४१५) की फोटो-नकलसे।

१. पत्रके पाठके लिए देखिए "टिप्पणियाँ", २२–९–१९२१ का उप-शीर्षक "प्रमाण"।

८३. भेंट : 'देशाभिमानी' के सम्पादकको

तिन्नेवेली
२३ सितम्बर, १९२१

क्विलनसे प्रकाशित 'देशाभिमानी' के सम्पादक श्री टी० के० माधवनने तिन्नेवेलीमें महात्मा गांधीसे मुलाकात की। श्री माधवन त्रावणकोरकी एजहवा[1] या तय्या[2] जातिके नेता भी हैं। गांधीजीसे उनकी बातचीतका विवरण नीचे दिया जा रहा है

टी० के० माधवन महात्माजी, आपने मुझे दर्शनका सौभाग्य दिया, इसके लिए बड़ा आभारी हूँ। आपके चरखा-आन्दोलनसे मेरी जातिको बड़ा लाभ हुआ है -- आर्थिक लाभ तो हुआ ही है, लेकिन उससे भी बहुत ज्यादा नैतिक लाभ हुआ है। बुनाई और ताड़ी खींचना, ये दोनों मेरी जातिके पुश्तैनी धन्धे हैं। मलाबारमें सबसे ज्यादा मजदूर हमारी ही जातिके हैं। जब आपने स्वदेशी आन्दोलन तथा विदेशी कपड़ोंके बहिष्कारका कार्यक्रम शुरू किया, उससे पहले दूसरी जातियोंके लोग हमारा मजाक उड़ाते थे। आपने भारतमें बने कपड़ेके प्रति जो उत्साह जगाया है, एक हदतक उसके कारण भी, बुनाईके कामके प्रति लोगोंके मनमें जो हिकारत थी, वह दूर हुई है। हम लोग बुनाईके कामको उत्तेजन देनेकी कोशिश कर रहे हैं। . .

महात्माजी यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि आप लोग इस कामको प्रोत्साहन दे रहे हैं।

हमारे कार्यक्रमका एक मुख्य अंग है पूर्ण मद्य-निषेध। हमारे गुरु परम पुनीत ब्रह्म श्री नारायण गुरु स्वामीने गत वर्ष अगस्त माहमें अपने जन्मदिवसके अवसरपर एक सन्देश जारी करके हमें शराबसे कोई भी वास्ता न रखनेकी सलाह दी। . हम लोग अपनी शक्ति-भर कोशिश कर रहे हैं कि ताड़ी निकालनेका काम हमारी जातिके लोग छोड़ दें . । हम अपने लोगोंको यह सलाह भी दे रहे हैं कि आबकारी अधिकारियों द्वारा शराबकी दुकानकी अगली नीलामीके अवसरपर कोई भी आदमी बोली न लगाये। . . ताड़ी निकालना बन्द करनेसे सम्बन्धित आन्दोलनको लेकर त्रावणकोर-सरकार भी कुछ कम परेशान नहीं जान पड़ती। . .

यह जानकर बहुत खुशी हुई कि आपके गुरु, लोगोंको मद्य-निषेधकी सलाह दे रहे हैं। आशा है आप पूरी शक्तिसे उनके सन्देशको कार्यान्वित करेंगे।

हम लोग आपके आभारी हैं कि आपने अस्पृश्यता-निवारणको अपने कार्यक्रममें सबसे प्रमुख स्थान दिया है। आप ठीक ही कहते हैं कि जबतक भारतकी आबादीके

१ और २ अछूत मानी जानेवाली जातियाँ।

सातवें हिस्सेको अस्पृश्य माना जाता रहेगा . . . तबतक भारतको पूर्ण स्वराज्य नहीं मिल सकता।

हाँ, मेरा कहना यही है कि जवतक भारतसे अस्पृश्यताको दूर नही किया जाता, उसे पूर्ण स्वराज्य नही मिल सकता। यही कारण है कि अपने कार्यक्रममे मैंने इसे सवसे आगे रखा है।

त्रावणकोरके हम एजहवा लोग अस्पृश्यताके कलकको दूर करनेके लिए एक काम कर रहे हैं। हम कोशिश कर रहे हैं कि सार्वजनिक मन्दिरोके द्वार सभी वर्गोके हिन्दुओके लिए खोल दिये जायें। . . इसे हम हिन्दूधर्ममे सुधारका एक काम मानते हैं। . . . अस्पृश्यता-निवारण एक अमूर्त विचार है। सभी वर्गोके हिन्दुओका मन्दिरोमे प्रवेश उस विचारका मूर्त रूप है।

हाँ, जव आप मन्दिरोमे प्रवेश करनेके अधिकारकी माँग करते है, तव अस्पृश्यता-निवारणका अमूर्त विचार मूर्त रूप ले लेता है। फिर भी, नीति-निपुणताकी दृष्टिसे मैं तो आपको सलाह दूँगा कि मन्दिरोमे प्रवेशकी वात अभी छोडिए और सार्वजनिक कुओसे शुरुआत कीजिए। इसके वाद आप सार्वजनिक स्कूलोको ले सकते हैं।

लगता है, आप शायद भ्रमवश यहाँके समाजमें हमारी स्थिति वैसी ही मान रहे हैं जैसी कि ब्रिटिश भारतमे पंचमोकी है। आधे दर्जन स्कूलोके अलावा, इस राज्यके शेष सभी सार्वजनिक स्कूलोके द्वार हमारे लिए खुले हुए हैं। इन आधे दर्जन स्कूलोमें त्रिवेन्द्रमका वह स्कूल भी है जो महाविभव महाराजाके महलकी विलकुल वगलमें स्थित है। . . .

अगर वात ऐसी है, तव तो आप लोग मन्दिरोमे प्रवेशपर आग्रह करनेकी स्थितिमे अवश्य ही हैं।

त्रावणकोर-सरकारने पिछले साल सरकारी और गैर-सरकारी व्यक्तियोकी एक समिति नियुक्त की थी। उसने हाल ही में अपनी रिपोर्ट पेश की है, जिसमें कहा गया है कि त्रावणकोरके वहुतसे मन्दिर सरकारी खर्चसे चलाये जाते हैं और उन्हे इसी तरह चलाते रहना सरकारका कर्त्तव्य है . . .।

हाँ, यहाँ भी एक नागरिक अधिकारका प्रश्न है।

श्रीमूलम् जन-सभा (पॉपुलर एसेम्वली) के पिछले अधिवेशनमें मैं भी एक सदस्यकी हैसियतसे शामिल हुआ था। . . त्रावणकोर उच्च न्यायालयने मेरी जातिके कुछ लोगोको एक मन्दिरमें जाकर प्रार्थना करनेके कारण इस आधारपर सजा दे दी कि त्रावणकोर दण्ड सहिताके खण्ड २९४के अन्तर्गत उन लोगोका मन्दिरमें जाना, मन्दिरको "अपवित्र करना" था। . . . जन-सभामें हमने उसके प्रति विरोध व्यक्त किया है और सरकारसे प्रार्थना की है कि जापानकी प्रवुद्ध और देशभक्त सरकारकी तरह वह भी एक फरमान जारी करके अस्पृश्यताको समाप्त करे। नायर समाजम्ने भी अस्पृश्यताके खिलाफ प्रस्ताव पास किया है। . . इस

प्रकार ऐसी परिस्थितियोंमें हमारा मन्दिरोंमें प्रवेश पानेका आन्दोलन चल रहा है। अब इस सम्बन्धमें आपकी क्या सलाह है?

मैं तो आपको सविनय अवज्ञा करनेकी सलाह दूंगा। आपको मन्दिरोंमे प्रवेश करना चाहिए, और यदि कानून इसके खिलाफ हो तो खुशी-खुशी गिरफ्तार हो जाना चाहिए। धर्मके आधारपर आपको मन्दिरोंमे प्रवेश करनेसे रोकना गलत है। आपको निष्ठाके साथ अहिंसा धर्मपर डटे रहना चाहिए। सामूहिक रूपसे मन्दिरोंमें प्रवेश नही करना चाहिए। अकेले-अकेले जाकर यह काम कीजिए। और आपको बहुत कठोर आत्म-संयमसे भी काम लेना होगा।

इस मामलेमें कांग्रेसका रवैया क्या है? शंकर मेननके[1] अध्यक्षीय भाषणका सार तो यह था कि वे यह कहनेकी स्थितिमें नहीं थे कि कांग्रेसके अधिकारियोंसे सलाह लिये बिना कांग्रेस कमेटी इस सवालको हाथमें ले सकती है या नहीं।

अगर श्री शंकर मेननने ऐसा कहा कि कांग्रेस कमेटी मन्दिरोंमे प्रवेशका प्रश्न अपने हाथमे नही ले सकती तो उन्होंने गलत कहा।

एक श्रोताने पास ही बैठे एक सज्जनकी ओर इशारा करके कहा, "यह आदमी भी नाडार है।"

टी० के० माधवन मलाबारके समाजमें हमारी स्थिति भी हर तरहसे वैसी ही है जैसी कि तमिल समाजमें नाडारोंकी है।

श्रोता हमारे जिलेमें भी कांग्रेस कमेटीके सामने यही कठिनाई है। यहाँके अधिकांश लोगोंको नाडारोंके मन्दिरोंमें प्रवेश करनेपर आपत्ति है।

आपको इसकी चिन्ता नही करनी चाहिए कि इसके बारेमे अधिकांश लोग क्या सोचते हैं। क्या आप सिर्फ इसी कारणसे अपने सिद्धान्त छोड देंगे कि अधिकांश लोग आपके विरुद्ध हैं?

टी० के० माधवन. क्या आप इस विषयपर त्रावणकोरकी कांग्रेस कमेटीको लिखनेकी कृपा करेंगे?

हाँ, हाँ, बडी खुशीसे, किसको लिखना होगा?

मेरा खयाल है, अच्छा हो, आप श्री सी० शंकर मेनन, बी० ए०, बी० एल० को लिखें।

हाँ, लिखूंगा।

क्या आप जाति-प्रथाके पक्षमें हैं?

हाँ, हूँ।

क्या आप रोटी-बेटीके सम्बन्धके पक्षमें हैं?

इन दोनों ही मामलोंमे जाति-प्रथाका समर्थन मैं स्वास्थ्य-सम्बन्धी कारणों और आध्यात्मिक कारणोंसे करता हूँ। खाना उतना ही गंदा काम है, जितना शौच आदि करना। फर्क सिर्फ इतना है कि शौच करनेसे शरीरको आराम मिलता है। जिस कढीके

१ विद्वान् वकील, त्रिवलन कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष।

साथ आपको भात खाना हो, उसमे भातको मिला दीजिए। क्या कुछ मिनट बाद आप उसे कोई स्वच्छ चीज मानेंगे? क्या आप उसे छूना भी पसन्द करेंगे? स्वास्थ्यकी दृष्टिसे उसे छूना ठीक नही है। मै किसी दूसरेके साथ नही खा सकता, अपने बेटेके साथ भी नही खा सकता। अगर कोई कहे कि वह घृणावश अमुक व्यक्तिके साथ नही खायेगा तो मै उसका विरोध करूँगा। आपको इस घृणा-भावसे छुटकारा पाना है।

अन्तर-जातीय विवाहके बारेमे आपका क्या खयाल है?

इसका विरोध मै आध्यात्मिक कारणोसे करता हूँ। मान लीजिए, आपको अपनी पत्नीका चुनाव करोडो औरतोमे से करना हो। उस हालतमे अपनी इस वासनाका प्रयोग आप उतनी ही अधिक स्त्रियोपर करेंगे। किन्तु, यदि आपके चुनावका दायरा सीमित हो, तो उसी हदतक आपकी वासनाका प्रयोग भी सीमित हो जाता है। इस तरह अपने लिए पत्नी चुननेका क्षेत्र सीमित करके आप आध्यात्मिक दृष्टिसे लाभान्वित होते है। अत, इस चुनावको अपनी जातितक ही सीमित रखना अच्छा है।

मान लीजिए कि एक जातिका पुरुष किसी दूसरी जातिकी स्त्रीसे प्रेम करने लग जाता है और वह स्त्री भी उससे प्रेम करती है। उस हालतमे क्या आप उनके विवाहके मार्गमें रुकावट बनेंगे?

मै रुकावट नही बनूंगा, लेकिन नही बनूंगा तो सिर्फ अहिंसा-धर्मका खयाल करके ही नही बनूंगा। मान लीजिए मेरा बेटा मेरी बेटीसे शादी करना चाहता है। उस हालतमे मै उनके मार्गमे रुकावट तो नही बनूंगा, लेकिन एक काम जरूर करूँगा — उन्हे अपने घरमे स्थान नही दूंगा।

चूंकि मुलाकातका समय पूरा हो रहा था, अतः श्री माधवनने महात्माजीसे मन्दिरोमें प्रवेशके प्रश्नपर अपने विचारका अधिकृत विवरण देनेका अनुरोध किया। महात्माजीने तत्काल एक पूरे कागजपर अपने विचार लिखकर श्री माधवनको दे दिये। उसे पढनेके बाद श्री माधवनने कहा "इसमें इस बातकी तो कोई चर्चा की ही नहीं गई है कि इस आन्दोलनमें कांग्रेसको क्या करना चाहिए।" इसपर पहले लिखे विवरणमें महात्माजीने इतना और जोड़ दिया:

यह पूछनेपर कि एजहवा तथा अन्य लोगोंके अधिकारोके मामलेमे स्थानीय कांग्रेस कमेटीको मदद करनी चाहिए या नही, गांधीजीने जोर देकर कहा कि इसमे मदद करना उसका कर्त्तव्य है।

इसे पढ लेनेपर श्री माधवनने पूछा. "क्या इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि कांग्रेस कमेटीको मन्दिरोमें प्रवेशके सवालको अपने व्यावहारिक कार्यक्रमका एक अंग मानना चाहिए?"

हाँ, उसमे यह बात बिलकुल साफ कर दी गई है। उसमे "चाहिए" शब्दका प्रयोग हुआ है।

श्री माधवनने अभिवादन करके विदा ली।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३०-९-१९२१

८४. भाषण: तिन्नेवेलीमें

२३ सितम्बर, १९२१

महात्मा गांधी सिर्फ घुटनोतक की एक लँगोटी पहने सभामें आये। . उन्होंने बहुत प्रभावोत्पादक भाषण दिया, जिसे श्री टी० आर० महादेव अय्यर तथा डा० राजन्ने तत्काल अनुवाद करके सुनाया। .

मित्रो,

आपने जो मानपत्र और तिलक स्वराज्य कोषके लिए थैली भेंट की, उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। किन्तु उससे भी ज्यादा आभारी इसलिए हूँ कि आपने अपने उत्साहका कोई शोरगुल-भरा प्रदर्शन नहीं किया। ये प्रदर्शन यद्यपि आपके स्नेहके प्रतीक हैं और उनके पीछे कोई शरारतका मंशा नहीं होता, फिर भी मुझे कहना पड़ेगा कि इनसे मैं परेशान हो उठता हूँ। कुछ तो इस कारणसे कि ऐसे ही प्रदर्शन बार-बार देखनेको मिलते हैं और कुछ इस कारणसे कि मेरे स्वास्थ्यकी हालत नाजुक है, मुझमें इन शोरगुल-भरे प्रदर्शनोंको बर्दाश्त करनेका धीरज और क्षमता बिलकुल नहीं रह गई है। इनसे अगर मुझे खिलाफत तथा पंजाबके साथ किये गये अन्यायोंका निराकरण करानेमें जरा भी मदद मिल सकती है तो मैं इस सबकी परवाह नहीं करता। लेकिन, मैं जानता हूँ कि अगले तीन महीनोंमें हमें जैसा जबरदस्त काम करना है उसके लिए यह शोरगुल अनावश्यक ही नहीं, बल्कि जिस उद्देश्यकी मुझे और आप सबको ऐसी लगन लगी हुई है उसके लिए यह अहितकर भी है। अगर हमें इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना है, खिलाफत तथा पंजाबके साथ किये गये अन्यायोंका निराकरण कराना है, और अली-बन्धुओंको जेलसे छुड़ाना है तो हमें अपना सब काम प्रभावकारी ढंगसे चुपचाप और संकल्पपूर्वक करना चाहिए। इसलिए मैं आपको तथा इस महान् सभाके आयोजकोंको भी इस बातके लिए हृदयसे बधाई देता हूँ कि यहाँ किसी तरहका शोर-गुल नहीं हो रहा है। अगर सारे भारतमें सभाओंका आयोजन इस सभाकी तरह ही शान्तिपूर्ण और सुचारु ढंगसे होने लगे तो मुझे हमारा भविष्य सभी दृष्टियोंसे आशामय ही दिखाई देता है। हमने इस सभामें सोच-समझकर स्वेच्छा और समझदारीसे जो शान्ति बना रखी है, वह हमारे अहिंसा-धर्मके सर्वथा अनुरूप ही है। अली-बन्धुओंकी गिरफ्तारीके बाद भी भारत शान्त और निरुद्विग्न रहा है — यह बहुत ही हर्ष, सन्तोष और आशाकी बात है। अगर उनकी गिरफ्तारीपर भारतके किसी हिस्सेमें किसी खास कामपर लगे लोगोंने हड़ताल की होती, अथवा उस हिस्सेमें या समस्त भारतमें व्यापक हड़ताल ही क्यों न हुई होती, तो अली-बन्धु जिस आदर और स्नेहके पात्र हैं, उसे देखते हुए उस हड़तालका कोई मूल्य नहीं होता। यह हमारा सौभाग्य है कि हमें अलीबन्धु-जैसे बहादुर, साहसी, आस्थावान्, शक्तिवान्, धर्मनिष्ठ तथा देश-प्रेमी नेता प्राप्त हैं। किन्तु हम अपने आपको इस सौभाग्यके उपयुक्त पात्र तो तभी साबित कर सकते

है, जब हम उनका अनुकरण करे। अभी कुछ समय पहले तक अलीबन्धु एक मर्यादाके भीतर आराम और विलासकी जिन्दगी बिताते थे, किन्तु अब वे खद्दर पहन रहे है, डील-डौलमे मोटे होनेके कारण उन्हे खद्दर भी मोटे किस्मका पहनना पडता है। हमे उन्ही-की तरह इस बातका अहसास होना चाहिए कि स्वराज्य तथा खिलाफत और पजाबके साथ किये गये अन्यायोका निराकरण इस बातमे निहित है कि हम अपने घरोमे चरखेको अपनाये, विदेशी वस्त्रोका पूरा बहिष्कार करे, और वही पहन कर सन्तोष करे जो हम अपने घरोमे तैयार कर सके। इसलिए मुझे बडा दु ख हुआ, जब सत्याग्रहके दिनो-के मेरे एक मित्र और सहयोगी विदेशी कपडे पहने हुए मुझे एक मोटा-सा पुष्पहार भेट करने आये। मैने उनसे पूछा कि आपने खद्दर क्यो नही पहन रखा है, क्यो आपने अपने पूरे शरीरपर विदेशी वस्त्र ही धारण कर रखा है? उन्होने जो जवाब दिया, वह भी दु खद था। उन्होने कहा कि पर्याप्त खद्दर उपलब्ध ही नही है। और आप देख रहे है कि ऐसी ही आपत्ति करनेवालोको उत्तर देनेके लिए मै अब सिर्फ एक लँगोटी पहनता हूँ और मौलाना आजाद सोबानी भी उतना ही कपड़ा पहनते है जितना उनके धर्मकी दृष्टिसे जरूरी है। तो अब क्या आप मुझसे यह कहेगे कि आपके जिलेमे इतना खद्दर भी नही मिलता जिससे आप लोग एक-एक लँगोटी भी धारण कर सके? आपका जिला तो भारतमे सबसे अधिक कपास पैदा करनेवाले जिलोमे से है। इसलिए अगर इस जिलेके लोग कहते है कि उनके पास एक लँगोटी लपेटने लायक भी खद्दर नही है तो यह वैसा ही होगा जैसे बहुत बढिया और काफी गेहूँ पैदा करनेवाले लोग कहे कि उन्हे खानेको पर्याप्त भोजन नही मिलता। अभी डेढ सौ वर्ष पहले तक भारत-की लगभग हर औरत सुन्दर सूत कातना जानती थी और लाखो भारतीय उस सूतसे कपडा बुनना जानते थे। और मै चूँकि भोजन बनाना और बुनाई करना, य दोनो काम जानता हूँ, अत मै कह सकता हूँ कि बुनाई भोजन बनानेसे आसान काम है। यदि आप सदियोकी इस यातनापूर्ण गुलामीसे छुटकारा पाना चाहते है, यदि आप खिलाफतके साथ किये गये अन्यायका निराकरण करानेमे मुसलमान भाइयोकी मदद देना चाहते है, यदि यहाँके मुसलमानोके हृदयमे खिलाफतके लिए कोई स्थान और प्रेम है—और मुझे सन्देह नही कि ऐसा है—तो ऐसी अपेक्षा करना क्या बहुत ज्यादा सोचना होगा कि आप अपनी आवश्यकताओको घटाकर कमसे-कम कर दे और सादेसे-सादा खद्दर पहने? हमने जिस बातकी ठानी है वह कोई खिलवाड नही, बल्कि एक गम्भीर बात है। नागपुर काग्रेसमें भारतके सभी हिस्सोसे आये १४,००० प्रतिनिधियोने जब इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करनेके सकल्पकी घोषणा की और एक ठोस कार्यक्रम बनाया, जिसके एक प्रमुख अगके रूपमे स्वदेशीको स्थान दिया, तो वे देशके साथ कोई मजाक नही कर रहे थे। अपने बुढापेके दिनोंमें हकीम अजमल खाँने[1] खद्दर अपनाया। डा० अन्सारी[2],

1. १८६५-१९२७, प्रसिद्ध हकीम और राजनीतिज्ञ, जिन्होंने खिलाफत आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष, १९२१।

2. मुख्तार अहमद अन्सारी (१८८०-१९३५), राष्ट्रवादी मुस्लिम नेता, इंडियन मुस्लिम लीगके अध्यक्ष, १९२०, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष, १९२७।

मौलाना अब्दुल बारी[1] तथा बहुतसे अन्य प्रतिष्ठित मुसलमानोने भी खद्दरको अपनाया। पण्डित मोतीलाल नेहरूका जन्म एक ऐसे परिवारमे हुआ, जिसे हर तरहकी सुख-सुविधा प्राप्त थी, किन्तु उन्होने भी बुढापेमे खद्दर अपनाया। चित्तरजन दास वकालतके धन्धेमे भारतके किसी भी वकीलसे पीछे नही थे, किन्तु उन्होने भी खद्दर पहनना शुरू कर दिया। इन सभी महानुभावोने जब खद्दरको अपनाया तो वे कोई मजाक तो नही कर रहे थे। और न उनकी पत्नियाँ ही ऐसा कोई मजाक कर रही थी, जब उन्होने धर्म मानकर प्रति दिन चरखा चलाना और वैसा ही मोटा खद्दर पहनना शुरू किया जैसा मोटा खद्दर पहने आप मुझे, मौलाना साहबको तथा डा० राजनको देख रहे है। मै चाहता हूँ कि इस श्रोता-समूहमे उपस्थित प्रत्येक स्त्री और पुरुष इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना अपनी प्रतिष्ठाका प्रश्न माने और हमारे इन प्रतिष्ठित देशभाइयोकी तरह ही अपने मनमे यह बात बैठा ले कि स्वराज्य चरखा चलानेसे ही मिल सकता है, और अगर इस विषयमे आपका इरादा सच्चा है तो आप ऐसा काम करेगे जिससे इस जिलेके सभी बढई चरखा और करघा बनानेमे ही व्यस्त दिखाई देने लगे, सभी बुनकर विदेशी, बल्कि भारतीय मिलोके सूतसे भी बुनाई करना छोड दे, और इस जिलेके घर-घरमे कुछ निश्चित घटोतक रोज चरखा चलने लगे। चरखेसे यह सब हो सकता है, ऐसा मै इसलिए मानता हूँ कि यह अहिसा और हिन्दू-मुस्लिम एकताका प्रतीक है, और इसलिए कि मै जानता हूँ, जबतक हम अहिंसाधर्मका पालन नही करते और ऐसा विश्वास नही रखते कि इससे हमारे सारे दुख दूर हो सकते है तबतक हम चरखा-अनुष्ठानको सफल नही बना सकते। जैसे मैने यह बताया कि आपको वह कौन-सा काम करना है जो सबसे अधिक सम्भावनाओमे पूरित है, वैसे ही मुझे यह भी मालूम है कि हिन्दुओके सामने कुछ बहुत बडी समस्याएँ मौजूद है, और अगर हम इस साल स्वराज्य प्राप्त करना चाहते है तो उनका समाधान जरूरी है। आपके सामने ब्राह्मण-अब्राह्मणका सवाल है, नाडारोका सवाल है और पचमोका सवाल है। मेरे विचारसे ये सभी सवाल एक ही सवालमे समाये हुए है — अर्थात् अस्पृश्यताके सवालमे। एक सनातनी हिन्दू होनेका दावा करते हुए मै इस समस्त श्रोता-समूहसे यह कहनेकी हिम्मत करता हूँ कि हमारे समस्त शास्त्रोमे कही भी अस्पृश्यताकी व्यवस्था नही की गई है। एक हिन्दूके नाते ऐसा खयाल रखना मै पाप मानता हूँ कि मनुष्यके स्पर्शसे कोई व्यक्ति अपवित्र हो सकता है। मुझे बडी लज्जाका अनुभव होता है, जब मुझसे कोई कहता है कि आपके मन्दिरोमे, जिन्हे आप ईश्वरका स्थान कहते है, नाडारोका प्रवेश करना वर्जित है। मेरे विचारसे ब्राह्मण-अब्राह्मण समस्याका समाधान आश्चर्यजनक रूपसे सरल है। शास्त्रोके अध्ययनसे मै जिस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ, वह अगर सही हो तो मेरे खयालसे ब्राह्मण कभी भी अपने लिए किसी विशेष सुविधा या अधिकारका आग्रह नही करता और उसके जीवनका सार चार अक्षरोके एक शब्दमे निहित है — "कर्त्तव्य"। उसका गौरवपूर्ण अधिकार तो यह है कि प्रतिष्ठा और पैसेवाले

१ १८३८–१९३६, लखनऊके एक राष्ट्रवादी मुसलमान जिन्होंने खिलाफत आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया।

पद और स्थान वह उन्हे दे दे जिन्हे इनकी इच्छा है। वह स्वय तो इसी एक तथ्यमे विश्वास रखकर सर्वथा आश्वस्त रहता है कि अपने ज्ञानसे मानवताकी जो सेवा वह कर रहा है वही उसे जीवनमे सम्मानास्पद स्थानका पात्र बना देती है। मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही कि यदि हमे स्वराज्य पाना है——चाहे इस साल हो या सौ साल बाद——तो वह हम तभी पा सकते है जब हिन्दुओमे परस्पर एकता हो और वे अपनी सारी गन्दगी, भूल, अन्धविश्वास और पाप धो डाले। इस्लाममे जो-कुछ उत्तम है उसकी दृष्टिसे यदि मै अपने मुसलमान भाइयोसे स्पर्धा नही कर सका तो मैं अपने आपको उनका अयोग्य सहभागी मानूंगा। इस प्रकार आप देखते है कि सभी समस्याएँ अन्तत दो ही बातोमे समाहित है पहली तो यह कि हिन्दुओ और मुसलमानो ——दोनोको स्वदेशी कार्यक्रमको कार्यान्वित करना चाहिए और विदेशी वस्त्रोका पूरा बहिष्कार करना चाहिए, और दूसरी यह कि हिन्दुओको अस्पृश्यताके अभिशाप और उससे सम्बन्धित सभी दोपोसे छुटकारा पाना चाहिए। अली-बन्धुओ और उनके सहयोगियोकी तो यही इच्छा है कि अब अगर वे जेलसे छूटें तो स्वराज्य-ससदके प्रथम कानूनके आदेशसे ही छूटे। अब मै यही कामना करता हूँ कि ईश्वर आपकी और मेरी सहायता करे ताकि हम इसी वर्ष स्वराज्यकी शर्त पूरी कर सके, खिलाफत और पजावके प्रति किये गये अन्यायोका निराकरण कर सकें और आज जेलमे पडे अली-बन्धुओको मुक्त देख सके। मुझे आशा और विश्वास है कि आप मौलाना सोबानीकी बात भी उतने ही ध्यानसे सुनेंगे जितने ध्यानसे आपने मेरी बात सुनी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २७-९-१९२१

८५. भारतके मुसलमानोंसे

मदुरा

२४ सितम्बर, १९२१

प्यारे देशभाइयो,

वैसे तो मौलाना शौकत अली और मौलाना मुहम्मद अलीकी गिरफ्तारीसे हर भारतीयका हृदय दुखी है, किन्तु मैं जानता हूँ कि आप लोगोपर क्या गुजर रही होगी। दोनो बहादुर भाई पक्के देशप्रेमी है, किन्तु वे पहले मुसलमान है और बादमे और कुछ। और हर धार्मिक वृत्तिके आदमीके साथ बात ऐसी ही होनी चाहिए। दोनो भाइयोका जीवन पिछले कई वर्षोसे उन सभी चीजोका प्रतीक रहा है जो इस्लामके सबसे अच्छे और उदात्त गुण माने जाते है। भारतमे इस्लामकी प्रतिष्ठा बढानेके लिए जितना इन दोनो भाइयोने किया उतना अन्य किन्ही दो मुसलमानोने नही किया है। उन्होने खिलाफतके पक्षको इतना आगे बढाया है जितना किन्ही दो भारतीय मुसलमानोने नही बढाया है, कारण, वे सत्यपर डटे रहे है, और जब वे छिन्दवाडामे नजरबन्द थे तब भी उन्होने जैसा महसूस किया वैसा स्पष्ट कहनेका साहस दिखाया। उनकी

लम्बी नजरबन्दीमे उनका उत्साह किसी तरह कम नही हुआ, उनमें कोई कमजोरी नही आई। जो बहादुरी उनमे नजरबन्द होते समय थी, वही बहादुरी उससे छुटकारा पाते समय भी थी।

नजरबन्दीसे छूटनेके बादमे वे बराबर सच्चे राष्ट्रवादी बने रहे है, और आप सबको उस बातपर गर्वका अनुभव होता रहा है।

अपनी सादगी, विनय और असीम स्फूर्तिसे उन्होने भारतीय जन-मानसको जिस तरह झकझोर दिया है, वैसा और कोई मुसलमान नही कर पाया।

इन सभी गुणोके कारण वे आपके बहुत प्रिय हो गये है। आप उन्हे अपना आदर्श पुरुष मानते है। इसलिए आपको इस बातसे दुःख है कि वे आपसे जुदा हो गये है। आपके अलावा और भी बहुतसे लोग है, जिन्हे उनकी सुखद और प्रेरणाप्रद उपस्थिति-का अभाव खलता है। मेरे तो वे अभिन्न अग ही हो गये है। मुझे लगता है, जैसे मेरी दोनो भुजाएँ मुझसे अलग हो गई है। मुसलमानोसे सम्बन्धित सभी विषयोमे शौकत अली मेरे पथप्रदर्शक और सहायक थे। उन्होने कभी भी मुझे गलत सलाह नही दी। उनकी निर्णय-बुद्धि बहुत ठोस थी और अधिकाश मामलोमें उसमे चूक नही होती थी। जबतक दोनो भाई हमारे बीच थे, मुझे हिन्दू-मुस्लिम एकता बिलकुल सुरक्षित लगती थी। इस एकताका मूल्य जितना वे पहचानते थे, उतना हममे से बहुत कम लोग पहचानते होगे।

लेकिन यद्यपि हम सभीको उनकी कमी खलती है, फिर भी हमे अपने ऊपर दुःख या निराशाको हावी नही होने देना चाहिए। हममे से हरएकको बिलकुल अकेला रहकर भी डटे रहना सीखना चाहिए। केवल ईश्वर ही हमारा ऐसा पथ-प्रदर्शक है जिससे कभी चूक नही हो सकती, जो सदा हमारे साथ है।

निराश होनेका मतलब सिर्फ यही नही है कि हम अली-बन्धुओको पहचान नही पाये, बल्कि, अगर धृष्टता न समझें तो कहूँ, यह भी है कि हम अपने धर्मको भी नही पहचानते।

कारण, क्या सभी धर्म हमें यह नही बताते कि हमारे प्रियजन जब शारीरिक रूपसे हमे छोडकर चले जाते है, तब भी उनकी आत्मा हमारे साथ रहती है? इस मामले-में तो बात सिर्फ इतनी ही नही है कि अली-बन्धुओकी आत्मा हमारे साथ है, बल्कि यह भी है कि वे हमारे बीच उपस्थित रहकर हमे साहस, आशा और स्फूर्तिसे अनुप्राणित करते हुए देशकी जितनी सेवा करते, उससे कही अधिक सेवा वे जेलका कष्ट सहकर कर रहे है। अहिंसा और असहयोगका मर्म हमारे यह अनुभव करनेमें निहित है कि हम अपने लक्ष्यतक कष्ट-सहन द्वारा ही पहुँच सकते है। खिताबो, कौंसिलो और अदालतो तथा स्कूलोका परित्याग करना कष्ट-सहन (और दरअसल बहुत मामूली कष्ट-सहन) नही तो और क्या है? यह प्रारम्भिक त्याग उस बडे कष्ट-सहनकी शृखला-की पहली कडी है जिसमें हमे जेल-जीवनकी यातनाएँ सहनी पडेगी और जरूरत हुई तो फाँसीके तख्तेपर चढकर अन्तिम बलिदान भी करना होगा। हम जितना अधिक कष्ट सहन करेगे और हममें से जितने अधिक लोग कष्ट सहन करेगे, हम अपने लक्ष्यके उतने ही निकट पहुँचेगे।

482

हमे जो चीज विजय दिलायेगी वह बडी-बडी सभाओ और प्रदर्शनोका आयोजन नही, बल्कि शान्ति और धीरजके साथ कष्ट सहन करना है। हम जितनी जल्दी और जितने स्पष्ट रूपसे इस तथ्यको पहचानेगे, हमारी विजय उतनी ही अधिक निश्चित हो जायेगी और हम उतनी ही जल्दी विजयी होगे।

मैने आपके पक्षको अपना पक्ष मान लिया है, क्यो कि उसे मै न्यायसम्मत मानता हूँ। आपके श्रेष्ठ और अग्रणी लोगोसे मैने जाना है कि खिलाफत एक आदर्श है। आप किसी अन्यायको या किसी कुशासनको कायम रखनेके लिए नही लड रहे है। आप तुर्कोका समर्थन इसलिए कर रहे है कि वे यूरोपके सभ्य-शिष्ट बाशिन्दे है और यूरोपीयो तथा विशेषकर अग्रेजोके मनमे उनके प्रति पूर्वग्रह समाया हुआ है — जिस पूर्वग्रहका कारण यह नही है कि तुर्क लोग मनुष्यके रूपमे दूसरोसे बुरे है, बल्कि यह है कि वे मुसलमान है और कमजोर लोगोका तथा उनके देशका शोषण करनेकी आधुनिक भावना उन्हे गँवारा नही है। तुर्कोके पक्षमे लडनेका मतलब यह है कि आप अपने धर्मकी प्रतिष्ठा और पवित्रताको बढानेके लिए लड रहे है।

इसलिए स्वाभाविक है कि आपने अपने लक्ष्यतक पहुँचनेके लिए भी पवित्र तरीके ही अपनाये है। इस बातसे इनकार नही किया जा सकता कि हिन्दू और मुसलमान दोनोने अपनी नैतिक शक्ति बहुत हदतक खो दी है। हम दोनो अपने-अपने धर्मके अयोग्य प्रतिनिधि-मात्र रह गये है। बजाय इसके कि हममे से प्रत्येक ईश्वरकी सच्ची सन्तान बने, हम दूसरोसे हमारे धर्मकी रक्षा करने, बल्कि हमारे लिए मर मिटने तक की अपेक्षा रखते है। लेकिन अब हमने एक ऐसा तरीका चुना है जो हमे, हममे से प्रत्येकको, ईश्वरकी ओर उन्मुख होनेको बाध्य करता है। असहयोगकी मान्यता है कि हमारा विरोधी जिसके साथ हम असहयोग कर रहे है, ऐसे तरीकोका सहारा ले रहा है जो उतने ही आपत्तिजनक है जितना आपत्तिजनक वह उद्देश्य है जिसे वह पूरा करना चाहता है। इसलिए हम ईश्वरकी कृपाके भागी तभी होगे जब अपने सघर्षके लिए अपने विरोधियोसे भिन्न तरीके चुनेगे। हमने अपने लिए यह बहुत बडा दावा किया है, और अगर हमारे तरीके सरकार द्वारा अपनाये गये तरीकोसे सचमुच सर्वथा भिन्न होगे तो हम उतने ही कम समयमे सफलता प्राप्त कर सकेगे जितना कम समय हमने इसके लिए निर्धारित किया है।

अत हमारे आन्दोलनकी आधारशिला पूर्ण अहिंसा है, जब कि सरकारका अन्तिम आश्रय हिंसा है और जिस प्रकार बिना प्रतिरोधके कोई ऊर्जा उत्पन्न नही होती, उसी प्रकार जब हम सरकारकी हिंसाका प्रतिरोध नही करेगे तो यह गतिशून्य हो जायेगी। लेकिन हमारी अहिंसा सच्ची अहिंसा तभी मानी जायेगी जब हम मन, वचन और कर्म, हर तरहसे अहिंसक बरताव करे। अगर आपने अहिंसाको एक कार्य-साधक नीतिके रूपमे अपनाया हो, तो उससे भी कोई फर्क नही पडता। जबतक आप अहिंसाकी प्रतिज्ञासे बँधे हुए है, तबतक अगर आप किसीके प्रति मनमे भी हिंसाका भाव लाते है तो वह उस प्रतिज्ञाका उल्लघन होगा। इसके विपरीत, अपने अहिंसाके कार्यक्रममे हमारी [illegible]-आस्था होनी चाहिए, और अहिंसाका यह कार्यक्रम इस बातका आग्रह करता है कि मन, वचन और कर्ममे परस्पर कही कोई असगति नही होनी

चाहिए। आज यद्यपि क्रोधका सबसे बडा कारण मौजूद है, फिर भी मैं हर मुसलमानसे यह महसूस करनेको कहूँगा कि हम अहिंसासे ही पूरी विजय पा सकते है, और इस सालके भीतर भी पा सकते हैं।

ऐसी बात भी नही कि अहिंसाका कार्यक्रम कोई कल्पना-लोककी चीज है। जरा सोचिए तो कि सात करोड मुसलमानो (अगर हिन्दुओकी बात रहने दें तो भी) के एकमत होकर कोई सकल्प करनेका मतलब क्या होता है। अगर सभी खिताब-याफ्ता लोगोने अपने खिताब छोड दिये होते, सभी वकीलोने अपनी वकालत छोड दी होती, सभी विद्यार्थियोने स्कूल छोड दिये होते और सभीने कौंसिलोका बहिष्कार किया होता, तो क्या हमे पहले ही सफलता नही मिल गई होती? लेकिन हमे यह मानना होगा कि हममे से बहुतसे लोगोके लिए मोह और लोभ छोड सकना सम्भव नही हो सका है। यहाँके सात करोड लोग मुसलमान कहे जाते हैं और बाईस करोड लोग हिन्दू कहे जाते है, किन्तु उनमें से बहुत कम लोग सच्चे मुसलमान या सच्चे हिन्दू हैं। इसलिए अगर हमे हमारा उद्देश्य प्राप्त नही हुआ है तो उसका कारण हमारे ही भीतर है। और अगर हमारा सघर्ष, जैसा कि हम दावा करते हैं धार्मिक सघर्ष है, तो हम अपने अलावा और किसीके प्रति उतावलापन नही बरत सकते — आपसमे एक-दूसरेके प्रति भी नही।

मुझे पूरा विश्वास है कि अली-बन्धु भी अहिंसाको भडकानेके मामलेमे उतने ही निर्दोष हैं, जितना निर्दोष मैं अपनेको मानता हूँ। इस तरह उनका बलिदान सर्वथा निष्कलक है। उन्होने इस्लाम और अपने देशके लिए, उनसे जो-कुछ हो सकता था, सब किया है। अब अगर खिलाफत और पजाबके प्रति किये गये अन्यायोका परिशोधन नही होता और इस सालके भीतर स्वराज्य स्थापित नही होता–तो उसमें दोष आपका और मेरा होगा।

हमें हर हालतमे अहिसापर दृढ रहना चाहिए, लेकिन निष्क्रिय नही रहना चाहिए। सिपाहियोके कर्त्तव्यके सम्बन्धमें जो कुछ कहनेपर अली-बन्धुओको जेल मिली, वही बात दुहराते हुए हमे खुशी-खुशी जेल जाना चाहिए। हममे से अच्छेसे-अच्छे लोग भी हमसे अलग कर लिये जाये तब भी ऐसा माननेकी जरूरत नही कि अब सघर्ष नही चलेगा। और अगर नही चल सकता, तो हम न स्वराज्यके योग्य है और न खिलाफत तथा पजाबके साथ हुए अन्यायोका निराकरण करानेे लायक हैं। हमे हजारो मचोसे यह कहना चाहिए कि चाहे सिपाहीकी हैसियतसे या किसी भी रूपमें मौजूदा सरकारकी सेवा करना हर मुसलमान और हिन्दूके लिए पाप है।

और सबसे बढकर तो हमे विदेशी कपडेके — चाहे वह इग्लैंडका हो या जापानका, अमेरिकाका हो या फ्रासका अथवा किसी देशका — पूर्ण बहिष्कारपर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए, और अगर अभीतक नही किया हो तो अबसे अपने घरोमे चरखे और करघेको दाखिल करना शुरू कर देना चाहिए और इस तरह अपनी जरूरतका सारा कपडा खुद बनाना चाहिए। हमारा यह काम हमारे देशकी स्वतन्त्रता और खिलाफतकी रक्षाके साधनके रूपमे अहिसामे हमारे विश्वासकी कसौटी होगा। यह हिन्दू-मुस्लिम एकताकी भी कसौटी होगा और हमारे अपने कार्यक्रममे हमारी

आस्थाकी सर्वांगीण कसौटी होगा। मै अपने इस विश्वासको एक बार फिर दुहराता हूँ कि विदेशी कपडोके पूर्ण बहिष्कारके एक महीनेके भीतर हम अपना सारा उद्देश्य पूरा कर सकते है। कारण, तब हम ऐसी स्थितिमे होगे जब हमे हिसाकी शक्तियोपर नियत्रण रखना, और जरूरत पडनेपर, सविनय अवज्ञा करनेकी अपनी योग्यतामे पूरा विश्वास होगा।

अतएव सरकारने आपको जो गहरे घाव लगाये है उन्हे ठीक करनेका एकमात्र मरहम मुझे यही दिखाई देता है कि आप विदेशी कपडेका बहिष्कार करके और अपने लिए अपने घरोमें ही कपड़ेका उत्पादन करके अहिसाको कार्यरूपमे परिणत करे।

आपका मित्र और साथी,

मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९-९-१९२१

८६. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

तिन्नेवेली

२४ सितम्बर, १९२१

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र[1] भटकता-भटकता मुझे यहाँ आ कर मिला है। आपने मुझे लिखा, इसमे मुझे खुशी ही हुई है। आपको लिखनेका अधिकार है। यद्यपि मै यह तो नही कह सकता कि मै आपको अच्छी तरह समझ गया हूँ तथापि मै अनेक वर्षोंसे आपको शुभचिन्तकके रूपमें जानता आया हूँ।

आप सबसे अधिक जोर राजकुमारके आगमनकी बातपर देते है। मुझे लगता है कि आपकी तत्सम्बन्धी दलील ही सबसे ज्यादा कमजोर है। वे इस शासनको महत्त्व प्रदान करनेके लिए आ रहे है। इस समय आना अप्रासगिक है। उन्हे मै इस शासन-तन्त्रसे बाहर नही मानता हूँ। व्यक्तिके रूपमे कोई उनका विरोध नही करेगा, लेकिन भविष्यमे इस शासनके राजाके रूपमे उन्हे कोई जगह नही दी जा सकती। आपने हमारे शास्त्रोमे वर्णित राजभक्तिके जो उदाहरण प्रस्तुत किये वे यहाँ लागू नही होते है। कहाँ राम और कहाँ रावण?

लेकिन आप अन्य विषयोपर जो-कुछ लिखते है उसका मुझपर जरूर असर होता है। माता-पिताके प्रति बालकोके भक्तिभावको मै तनिक भी कम नही करना चाहता। तथापि मै निस्सन्देह यह मानता हूँ, कि आप जिन दुःखद परिणामोकी चर्चा करते है वैसे दुःखद परिणाम घटित हुए है। लेकिन यह अविवेक क्षणिक है। इसके अतिरिक्त पिताके प्रति पुत्रमें जिस तरह भक्तिभाव होना चाहिए वैसे ही पुत्रके प्रति पितामें भी

1. १२-९-१९२१ के इस निजी और गोपनीय पत्रमें श्री पट्टणीने असहयोग आन्दोलनके दुर्गुणों और सार्वजनिक धन [illegible] किया था।

प्रेमभाव होना चाहिए, लेकिन मै इसका भी अभाव देखता हूँ। दु ख तो यह है कि दोनोमे धर्मका अभाव है। इतना कहने और स्वीकार करनेके बाद मै अपनी मान्यता भी बताये देता हूँ। स्कूल आदिके सम्बन्धमे हमने जो कदम उठाया है उससे जनताको समग्रत लाभ हुआ है।

भाई शुक्लके[1] त्यागपत्रके सम्बन्धमे मुझे कोई जानकारी नही है। मणिलालके[2] कडे स्वभावको मै अच्छी तरह जानता हूँ। इन बातोके सम्बन्धमे प्रत्येक स्थानपर जो कदम उठाये जाने चाहिए सो मै उठा रहा हूँ। यह भीषण युद्ध है, लेकिन अन्तत लोगोकी भावना धार्मिक हो जायेगी, यह सोचकर मै इसमे पडा हुआ हूँ। अनेक लोगोके जीवनमे जब मै सुन्दर परिवर्तन देखता हूँ तब मुझे बहुत आनन्द होता है। अनेक लोग सिर्फ दम्भका पोषण करनेके लिए ही इसमे दाखिल हुए है, यह देखकर मुझे दु ख होता है। लेकिन मै कौन हूँ? मै सिर्फ तटस्थ भावसे इस युद्धको चला रहा हूँ, इसीलिए निश्चिन्त हूँ। और इसी कारण मुझे विश्वास है कि ईश्वर मुझे पापोसे उबार लेगा।

आपने जो श्लोक[3] उद्धृत किया है वह आपने मुझे सुनाया था, ऐसा मुझे याद पडता है। उसे समझकर ही मै यह गाडी खीच रहा हूँ। गाडी टूटी हुई होगी अथवा उसमे बैठनेवाला गाफिल होगा तो इसके लिए ईश्वर मुझे दोष देगा?

किसी दिन हम मिलेगे तब विस्तारसे बातचीत करेगे।

मै दो तारीखको बम्बई पहुँचनेकी उम्मीद रखता हूँ।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१७६) की फोटो-नकल तथा जी० एन० ५८६३ से।

८७. अली-भाइयोकी जीत

अली-भाई गिरफ्तार कर लिये गये, इसे मै उनकी जीत मानता हूँ। और उनकी जीत हमारी जीत है, क्योकि मै यह मानता हूँ कि अब स्वराज्यके सूर्यकी किरणे फूट चुकी है। जब बच्चा जन्म लेता है तब माँको घोर कष्ट होता है। पौ फटनेसे पहले अन्धेरा बढ जाता है। इस प्रसगमे हम 'फटना' शब्दका प्रयोग करते है, उससे यही अर्थ सूचित होता है।

मै अली-भाइयोकी कैदके सम्बन्धमे भी ऐसा ही मानता हूँ। दूसरे बहुतसे लोग भी गिरफ्तार किये गये है। अभी और भी अधिक लोग गिरफ्तार किये जायेगे। महत्त्व तो उनकी गिरफ्तारीका भी है फिर भी अली-भाइयोकी गिरफ्तारीका जो महत्त्व है वह दूसरे लोगोकी गिरफ्तारीका नही है।

१ बैरिस्टर डी० बी० शुक्लने अपने सहयोगियोंके साथ तीव्र मतभेद होनेके कारण काठियावाड़ परिषद्से त्यागपत्र दे दिया था। यह मतभेद भागध्रामें, जहाँ परिषद् हुई थी, प्रकाशमें आ गया था।

२ मणिलाल कोठारी, गुजरातके एक राजनैतिक कार्यकर्त्ता।

३ "तानकृत्स्नविदो मन्दान् कृत्स्नविन्न विचालयेत्।" भगवद्गीता, ३–२९

अली-भाइयोने स्वराज्यकी प्राप्तिके निमित्त यथाशक्ति प्रयत्न किया है। मेरा दृढ विश्वास हे कि उनका बलिदान पवित्र है। उन्होंने अपनी अहिसाकी प्रतिज्ञाका पूरा पालन किया है। इसका अर्थ यह नही है कि उनके भाषणमे तीखापन या कडवापन नही होता था, किन्तु उन्होंने अपनी हिंसाकी भावनापर अकुश रखा। हिसाकी भावनापर अकुश रखनेका अर्थ सच्ची बात छिपाकर लोगोको शान्त रखना नही है, यह सरकार असह्य है ऐसा ज्ञान होनेपर भी अहिसक बने रहना, यह हिंसापर अकुश रखनेका सच्चा अर्थ है।

अली-भाइयोने अपना रोष प्रकट किया है। उन्होंने लोगोके सामने सरकारके काले कारनामोका नग्न चित्र खीचा सही किन्तु, इसके बावजूद लोगोको अपनी दलीलोसे और अपने कार्यसे अहिसक रहनेकी ही शिक्षा दी।

उन्होंने अहिसाको समयोपयोगी मानकर अपनाया है। वे मेरे जैसे लोगोकी तरह यह नही मानते कि अहिसा सार्वकालिक धर्म है और हमे हर समय और हर प्रसगपर अहिसक रहना चाहिए। इसके विपरीत वे मानते है कि इस समय और इस प्रसगपर अहिसा ही उनका परम धर्म हे। उन्होंने दूसरे लोगोको भी यह बात स्वीकार करनेके लिए प्रेरित किया हे। यदि वे चाहते तो खुद किसीका खून कर सकते थे या करा सकते थे, फिर चाहे इसमे उन्हे भी क्यो न मरना पडता। उन्होंने मृत्युका भय तो छोड ही दिया हे, किन्तु व्यवहारकुशल और धर्मपरायण होनेके कारण उन्होंने देखा कि गुस्सेमे आकर किसीको मार देना अपराध हे और इस्लाममे इसकी मनाही है। उन्होंने समझ लिया कि इस्लाममे ऐसे प्रसगोका उल्लेख हे जिनमे हिसा की जा सकती हे किन्तु वर्तमान अवसर उन प्रसगोमें नही आता और यह बात उन्होंने दूसरे लोगोको भी अच्छी तरह समझाई।

इसीलिए मै कहता हूँ कि उन्होंने अपनी अहिसाकी प्रतिज्ञाका पूर्ण पालन किया है और इसके बावजूद वे वीर है और निर्भय है। उनकी धर्मसेवा और लोकसेवापर कोई भी शका नही कर सकता। जहाँ निर्भयता, वीरता और सेवाका सगम होता है वहाॅं बलिदानकी चरम सीमा होती हे। बलिदानका परिणाम मनोवाछित फल देनेवाला होता है। इस कारण मै यह मानता हूँ कि अब हमारी जीतका, स्वराज्य पानेका, और खिलाफत एव पजाबके मामलोमे न्याय प्राप्त करनेका समय आ गया है।

किन्तु इस जीतकी शर्ते है। एक व्यक्तिके किये हुए यज्ञका फल दूसरे व्यक्तिको तभी मिलता है जब दूसरा व्यक्ति भी उस यज्ञको स्वीकार करता है। अली-भाइयोके यज्ञको जब हम अपना यज्ञ बना लेगे तभी हमारी जीत होगी। अपना बनानेका अर्थ है, जैसा उन्होने किया वैसा हम भी करे। हम उनके साहस, उनके अभय और उनके सेवाभावका अनुकरण करे। यदि मुसलमानोके मनमे ऐसा दुर्बल विचार आये कि वे तो जेल गये, अब खिलाफत आन्दोलनको कौन चलायेगा, तो इससे यही समझा जायेगा कि वे अली-भाइयोको नही समझ सके। हिन्दू अथवा मुसलमान कायरोकी तरह ऐसा सवाल नही उठायेगे कि वे तो जेल चले गये अब स्वराज्यकी गाडीको कौन खीचे। अब हमे नेताओकी, मार्गदर्शकोकी जरूरत कम ही रह गई है। यदि हम यह कहे कि बिलकुल नही रही है तो यह अतिशयोक्ति नही होगी। हमने मार्ग तो जान लिया है

और देख लिया है। हिन्दुओ और मुसलमानो, दोनो के लिए तीन शर्तोका पालन करना अनिवार्य है। शान्तिका पालन, हिन्दुओ और मुसलमानोकी एकता और स्वदेशीके कार्यक्रमका अमल। सभी धर्मोके लोगोको समान रूपसे इस कर्त्तव्यका पालन करना है। हिन्दुओको एक काम और करना है—उन्हे अस्पृश्यताके मैलको धोना है।

मोपलोने शान्ति-भग करके व्यर्थ ही आत्मनाश किया है। उन्होने यही सिद्ध किया है कि यदि हम शान्ति नही रखेगे तो हिन्दुओ और मुसलमानोकी एकताकी रक्षा नही की जा सकेगी। इसलिए सरकार हमे चाहे खिझाये तो भी हमे रोष नही करना चाहिए और अपनी स्थिरचित्तता नही छोडनी चाहिए।

जिस तरह शान्तिकी रक्षा करना हमारा धर्म है उसी तरह हिन्दुओ और मुसलमानोकी एकताको कायम रखना भी हमारा धर्म है। कुछ मोपले पागल वन गये इससे सब मुसलमान तो खराब नही माने जा सकते। तीन वर्ष पहले शाहाबादमे हिन्दू पागल हो गये थे, उससे सभी हिन्दू तो खराव नही माने जायेगे। किन्ही दो पक्षोमे एकता होनेका अर्थ ही यह है कि दोनो पक्षोमे झगडा हो जाये तो भी वे एक-दूसरेके शत्रु न वने और झगडेका निपटारा शान्तिपूर्वक कर ले। हम कह सकते हैं कि परिवारमे सामान्यत एकता होती है। किन्तु इसका अर्थ यह नही है कि परिवारके लोग आपसमे कभी लडते ही नही। मुझे इसमे कोई सन्देह नही है कि हम एकता कायम रखनेका प्रयत्न करते-करते कभी-कभी लड भी पडेगे। किन्तु आपसमे लडनेपर भी हमारे नेता ऐसे होगे कि वे हमे सदा अकुशमे रखेगे। यदि मुसलमान या मोपला नेता मोपलोके पागलपनकी सराहना करते और इसकी निन्दा न करते तो हिन्दुओ और मुसलमानोकी एकता जोखिममे पड जाती, यह सच है। किन्तु मुझे नही लगता कि ऐसा एक भी मुसलमान है जिसने मोपलोके पागलपनको अच्छा वताया हो। कमसे-कम मै तो ऐसे एक भी व्यक्तिको नही जानता। ऐसा हो या न हो किन्तु यह वात तो एक वालक भी समझ सकता है कि यदि हिन्दू और मुसलमान लडेगे तो हमे किसी तीसरेकी जरूरत पडेगी ही। इसलिए हिन्दुओ और मुसलमानोकी एकता स्वराज्यकी दूसरी जरूरी शर्त है।

इतनी ही जरुरी शर्त स्वदेशीका व्यवहार और चरखेका प्रचार है। चरखा हिन्दू-मुसलमान ऐक्यकी, हमारी अहिसाकी, हमारे नियमपालनकी, हमारी परिश्रमशीलताकी, योजना-शक्तिकी, हमारी व्यापारिक शक्तिकी, हमारी परोपकार-वृत्तिकी, निर्धनोके प्रति हमारे प्रेमकी और अपने स्त्रीवर्गकी रक्षा करनेकी हमारी इच्छाकी निशानी है। अकेले हिन्दू चरखा चलाते हैं तो हिन्दुओको लाभ होगा किन्तु उससे स्वराज्य नही मिलेगा। जिस समय हमे क्रोध आ रहा हो, हमारा रक्त उवल रहा हो उस समय हमे चरखा चलाना अच्छा नही लगता। चरखा अहिसाका प्रतीक है और अपनी आजीविका कमानेके सम्बन्धमे हमारे मनमे जो भय वैठ गया है उसको दूर करनेका साधन है। इसलिए जवतक घर-घरमे चरखा नही चलता तवतक यह सिद्ध नही होता कि हम अहिंसक हैं और हममे एकता है।

चरखेके अन्तर्गत करघा और पीजन आदि वस्तुएँ भी आ जाती हैं। जब चरखा चलेगा तब भारतमे फिर चमक आयेगी। यदि चरखा नही चलेगा तो विदेशी कपडेका

वहिष्कार नही होगा और यदि हो जायेगा तो वह टिकेगा नही। हम मिल-मालिकोंसे सहायता माँगते हैं और हमें विदेशी कपडेके व्यापारियोके सहयोग की जरूरत भी है, किन्तु अन्तमे तो हमारी सफलताका आधार हम स्वय ही है। "आप सच्चे तो जग सच्चा।" सच्चे मनुष्यको तो कोई ठग ही नही सकता, इसलिए हममें से हरएकको विदेशी कपडेका वहिष्कार करना चाहिए और कपासकी किसी भी प्रक्रियामें जुट जाना चाहिए।

अली-भाइयोकी रिहाईकी अनिवार्य शर्तें अव हमे मालूम हो गई हैं। ये शर्तें तीन होनेपर भी अन्तमे एक स्वदेशीमे ही आ जाती है, क्योकि इसमे पहली दो शर्ते छुपी हुई हैं। स्वदेशीको पूरी तरह अपनानेमे ही स्वराज्य निहित है। और स्वराज्य मिलनेपर स्वराज्य सभाके पहले अधिवेशनका पहला काम अली-भाइयो और दूसरे असहयोगी कैदियोको रिहा करना ही होगा।

ऐसी सीधी-सादी वातोमे हमे मार्गदर्शककी जरूरत नही होती। हमे स्वराज्य तभी मिलेगा जब हम अपने मार्गदर्शक स्वय वन जायेगे।

ये शर्तें हिन्दू और मुसलमान — दोनोके लिए है।

यदि हिन्दू अपने हिन्दुत्वको नही समझेगे तो भारतको कभी स्वराज्य नही मिलेगा। अस्पृश्यता दूर न होनेपर भी खिलाफतके सवालका फैसला हो सकता है, यह मैं देख सकता हूँ, किन्तु अस्पृश्यता दूर न होगी तो स्वराज्य नही मिलेगा। यदि २२ करोड हिन्दू अपने समाजके पाँचवे हिस्सेको दवाते रहते है तो वह स्वराज्य नही होगा; वल्कि रावण-राज्य होगा। यह धर्म नही वल्कि अधर्म होगा। मैं यह लेख मद्रास प्रान्तके कुम्भकोणम्[1] नामक स्थानसे लिख रहा हूँ। कुम्भकोणम् अपने मन्दिरोके लिए प्रसिद्ध है। यहाँ विद्वान् द्रविड लोग वसते हैं; किन्तु कुम्भकोणम्के ब्राह्मण भगीकी छाया पडनेसे भ्रष्ट हो जाते है। जिस भगीकी छाया पडती है उसे मार भी खानी पडती है और गालियाँ तो उसपर वरसती ही है। अस्पृश्यताकी डायरशाही जैसी मद्रासमे चलती है वैसी कही अन्यत्र नही चलती। अस्पृश्य लोग ब्राह्मणोकी गलीमे तो जा ही कैसे सकते हैं? अस्पृश्योको जानवूझकर अज्ञानमे रखा जाता है। कोई पशु वीमार पडता है तो उसकी सार-सँभाल भी कोई-न-कोई करता है, किन्तु अस्पृश्योका रक्षक तो भगवान ही है। हमको स्वराज्य नही मिलता इसका कारण निर्दोष अस्पृश्योकी हाय भी है। मद्रास अहातेमे तो यह प्रश्न दिन-प्रतिदिन उग्र होता जा रहा है। मद्रासके अन्त्यज मजदूरो और दूसरे लोगोके वीच वडा वैमनस्य है और वे एक-दूसरेसे मारपीट भी कर लेते हैं। हमे अस्पृश्योसे प्रेम करना चाहिए। उनको हमे सगे भाईकी तरह मानना चाहिए और उनसे छू जानेपर अपने आपको भ्रष्ट न समझना चाहिए। इससे हमे स्वराज्य मिलेगा इतना ही नही, इसीसे हिन्दू धर्मका उद्धार भी होगा। गो-रक्षक हिन्दू अन्त्यजोका त्याग नही कर सकते। अन्त्यज चाहे मैला हो, चाहे वह मुरदार माँस खाता हो, चाहे शराव पीता हो और चाहे उसमे पृथ्वीभरके सव दोष हो, फिर भी वह हमारा भाई है, ऐसा मानकर ही हमें उससे वरताव

१. गाधीजी १८ सितम्बर, १९२१ के दिन कुम्भकोणम्में थे।

करना चाहिए। जब हम ऐसा करेंगे तभी हम स्वराज्य-मन्त्रका उच्चारण करने योग्य बनेंगे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २५-९-१९२१

८८. मार्शल लॉ

मुझपर नोटिस

मैं जिन दिन मद्रास पहुँचा उसी दिन मुझे मद्रास सरकारकी ओरसे एक नोटिस मिला। नोटिसमें कहा गया है[1]

इन पत्रका जवाब मैंने अभीतक नही भेजा है। क्या भेजता? मैं तो यह एक ही जवाब भेज सकता हूँ — "आपका खत मिला। मैं वहाँ गये बिना नही रह सकता। आपसे जो हो सके सो कीजिए।"

लेकिन ऐसा जवाब मैं कैसे भेजूं? मैंने खुद ही तो सविनय कानून-भंगकी तजवीजको मुल्तवी किया और दूसरोंसे भी कराया है। लोग सविनय कानून-भंग और सामान्य कानून-भंगके भेदको आज भी समझते नही है, ऐसी परिस्थितिमें मैं एकाएक कानूनका सविनय-भंग भी कैसे कर सकता हूँ? इस खयालसे मैंने अभी उसका जवाब दिया ही नहीं है। सच पूछिए तो मुझे तो यह स्वराज्य प्राप्त करनेका मौका घर बैठे मिल गया था लेकिन मैं उसे इस आशासे छोड़ रहा हूँ कि मीयादके जो दिन अभी बाकी है उसमें लोग सविनय कानून-भंगके मर्मको समझ जायेंगे और हम निडर होकर कानूनका सविनय भंग कर सकेंगे तथा इस तरह सार्वजनिक स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे।

यह लेख मैं त्रिचनापल्लीसे[2] लिख रहा हूँ। यहाँ मुझे एक और भी हुक्म मिला है। वह पुद्दूकोटा नामकी देशी रियासतकी तरफसे आया है। उसपर उस राज्यके किसी अंग्रेज हाकिमके हस्ताक्षर हैं। मुझे उस राज्यकी हदमें से गुजरते हुए चेटीनादको जाना था। महज उसकी हदमें से मेरे गुजरने-भरसे कहीं वहाँकी प्रजापर मेरा असर न हो जाये, इस डरसे वहाँके हाकिम मुझे लिखते हैं 'राजा साहबने सुना है कि आप उनकी हदमें से होकर जानेवाले हैं। अगर आप ऐसा करेंगे तो सरहदपर तैनात सिपाही आपको वापस लौटा देंगे।' इसका जवाब तो मैंने दे दिया है 'आपका खत मिला। हाँ, मुझे आपकी हदमें होते हुए जाना तो था, पर आपका यह पत्र मिलनेसे अब मैं दूसरे रास्ते होकर चेटीनाद जाऊँगा।'

पर इन सबको मैं शुभ चिह्न समझता हूँ। अगर इन अवसरोंका उपयोग करना हमें आ जाये तो हम निश्चय ही इसी वर्षमें स्वराज्य प्राप्त कर लें। इसका उपाय

१ देखिए "टिप्पणियाँ", २२-९-१९२१ का उप-शीर्षक "प्रमाण"।
२ गांधीजी १९ सितम्बर, १९२१ को त्रिचनापल्लीमें थे।

भी कितना आसान है। बस, हम अपने काममे लगे रहे और जेलका स्वागत करे। जेल जानेकी योग्यता अभी हम लोगोमे नही है, चरखेके महत्वको हमने जाना नही है। हमारे कितने कार्यकर्ता अपना धर्म समझकर श्रद्धाके साथ चरखा कात रहे है? कितनोने अपने तमाम विदेशी कपडोका त्याग कर दिया है? और यह बात तो कोई अन्धा भी देख सकता है कि सरकार कपडेके बहिष्कारको गवारा कर ही नही सकती। वह ऐसी अनेक युक्तियाँ काममे ला रही है जिससे हम ऐसे बहिष्कारसे बाज आ जाये।

लडकोका स्कूल-कालेज छोडना, वकीलोका वकालत छोडना, शराबखोरोका शराब पीना छोडना, यह सब सरकारको खलता तो है, पर फिर भी वह इनको गवारा करती है। लेकिन स्वदेशीको तो वह किसी तरह गवारा नही कर सकती। इस विदेशी कपडे ही के लिए तो यह सरकार यहाँ तशरीफ लाई है और इसीके लिए वह हिन्दुस्तानपर हुकूमत भी करती है। और उसका हमपर बडेसे-बडा टैक्स बस यही विदेशी कपडा ही तो है। जहाँ यह टैक्स देना हमने बन्द किया कि तुरन्त यह सरकार 'हाकिम' के बजाय 'सेवक' बन जायेगी।

सितम्बरका अन्त पास आ रहा है। पता नही गुजरातमें बहिष्कार कहाँतक पहुँचा है। कितने चरखे चलने लगे है? मै तो अक्तूबरके पहले गुजरातके दर्शन न कर सकूँगा। लेकिन मुझे उम्मीद है कि जब मै गुजरातमे पहुँचूँगा तब प्रत्येक भाई और बहनके शरीरपर और उनके घरोमे खादी-ही-खादी देखूँगा और हर एक घरमे चरखा चलता हुआ नजर आयेगा।

हिन्दुस्तानके शरीरपर अभी खिलाफतका घाव तो ज्योका-त्यो बना ही हुआ है, पजाबका घाव अभी बह ही रहा है और अब यह मलाबारका एक ताजा घाव और हो गया। मुझे यकीन है कि अगर गुजरात चाहे तो इन घावोको सुखा सकता है। यह कहूँ तो अत्युक्ति न होगी कि इसी बातको अपनी आँखो देखनेके लिए मैने, जेलमे जानेका यह शुभ अवसर हाथसे जाने दिया है। मै जो इस समय खामोश रह गया हूँ, उसका एक कारण यह भी है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २५–९–१९२१

८९. हिन्दू-मुस्लिम एकता

एक परम मित्र लिखते हैं[1]

इस पत्रके लेखक हिन्दू है और हिन्दू-मुस्लिम एकताके पक्षपाती है। फिर भी उनके दिलमे शका पैदा हो गई है। जब इस एकताको दृढताके साथ माननेवाले एक सज्जनके दिलमे यह शक हो गया है, तब जिन लोगोके दिलमे हमेशा शक बना ही रहता है, उनका तो पूछना ही क्या? इसलिए मै यह मुनासिब समझता हूँ कि ऐसी शकाओका समाधान प्रकट रूपमे किया जाये। अगर हम दिनपर-दिन निडर होते जाते हो तो ऐसी परिस्थिति हो जानी चाहिए जिसमें हम तमाम शकाओका विचार जाहिरा तौरपर कर सके। पूर्वोक्त शकाको देखकर ऐसा साफ मालूम होता है कि लेखक अहिंसाका अर्थ नही समझ पाये है। न तो उन्होने इस्लामका अर्थ समझा है और न हिन्दू-मुस्लिम एकताका ही।

जो अहिंसाको अपना धर्म मानते है वे जानते हैं कि उसके सामने वैरभाव —बलात्कार—तो ठहर ही नही सकता। अगर मलाबारके हिन्दू अहिंसाका पालन करनेवाले होते तो क्या मजाल थी कि कोई मोपला उनपर जबरदस्ती कर सकता? यहाँ कोई यह कह सकता है कि सभी लोग अहिंसाके पाबन्द नही हो सकते। उनका कहना है तो ठीक, पर मै कहता हूँ कि अगर कुछ थोडे हिन्दू भी सचमुच अहिंसा-का पालन करे तो उतने ही से दूसरोकी रक्षा हो सकती है, अहिंसाका ऐसा प्रभाव है। इसपर अगर कोई यह कहे कि हिन्दू लोग अहिंसावादी नही है, तो फिर पूर्वोक्त सवाल रह नही जाता। क्योकि जो अहिंसावादी नही है वे तो लडकर अपनी रक्षा कर सकते है—फिर चाहे वे अकेले हो, चाहे अनेक हो। शस्त्र-बलके द्वारा जिन-जिन अर्थोकी सिद्धि हो सकती है वे सब अहिंसाबलसे भी साध्य हो सकते है। जो शस्त्र-बलका उपयोग करते है वे भी तो शूर तभी कहाते है जब बलवान्से सग्राम करते है। पर अहिंसावादी तो शस्त्रास्त्रके बिना ही जूझता है, इसलिए उसके बलकी तो सीमा ही नही है। जो धर्मका रक्षण नही कर सकता उसे धर्मका अधिकार ही नही हो सकता। जो लोग जबरदस्ती मुसलमान बनाये गये है उन्होने बलात्कारको क्यो सहन किया? उन्होने प्राण-त्याग क्यो नही कर डाला? वे लडते हुए जीतकर क्यो नही आये या मर क्यो नही गये? अगर अग्रेजोने उनको बचाया और उससे वे जीवित रहे तो उन्होने अग्रेजोका धर्म कबूल कर लिया। अगर मेरे बचानेसे जिन्दा रहते तो वे मेरा धर्म कबूल करते। उनका तो कोई धर्म ही नही था। धर्म तो एक व्यक्तिगत सग्रह है। मनुष्य स्वय ही उसकी रक्षा और स्वय ही उसका नाश कर सकता है। जिसकी रक्षा केवल समुदायमें हो सकती है वह धर्म नही, वह तो मत है।

१ पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है, उसमें पत्र-लेखकने यह शका प्रकट की थी कि खिलाफतके मामलेमें फतह मिलनेपर कहीं ऐसा न हो कि धर्मान्ध मुसलमान हिन्दुओंको बलात् मुसलमान बनानेका प्रयत्न करने लगें।

इस्लाम यह आज्ञा नही देता कि किसीको जबरदस्ती मुसलमान बनाया जाये। यही नही बल्कि वह तो बलात्कारका निषेध भी करता है। और यह कहना तो फिजूल है कि इस्लाममे जबरदस्तीसे काम लिया गया है। किसी धर्मके सभी अनुयायी उसका पूरा-पूरा अनुसरण नही करते। क्या गो-रक्षाके लिए मुसलमानोका वध करनेकी आज्ञा हिन्दूधर्ममे है? नही। फिर भी हिन्दू उन्मत्त होकर मुसलमानोके साथ झगडते है। क्या इस बातको हम नही जानते? अगर इस्लामधर्ममे जबरदस्ती करनेका विधान हो तब तो वह धर्म नही, बल्कि अधर्म माना जायेगा। मुझे तो यकीन है कि ऐसे बलात्कारकी आज्ञा इस्लाममे हरगिज नही है। अगर होती तो तमाम मुसलमान खुलम-खुल्ला यह बात कबूल करते। जबरदस्तीके बलपर आजतक कोई मजहब दुनियाके परदेपर नही टिका। मुसलमानोके शासन-कालका जो इतिहास हम लोगोको पढाया जाता है उसमे, मेरा मत है कि, बहुत-सी बाते बढाकर कही गई है। हॉ, खिलाफतकी फतहसे मुसलमानोका जोर जरूर ही बढेगा, उनका पराक्रम भी बढेगा, परन्तु इससे यदि हम यह माने कि मुसलमान लोग उसका उपयोग खुद हिन्दुओके ही खिलाफ करेगे तो इसका अर्थ तो यह है कि मुसलमानोमे शराफत-जैसी कोई चीज ही नही है, वे उपकारका बदला अपकारसे देते है, अर्थात् उनके यहाँ धर्म ही नही है। मुझे तो अबतक जो-कुछ अनुभव हुआ है वह बिल्कुल इसके उलटा है। अनेक मुसलमानोकी सचाई और शराफतका अनुभव मुझे है।

परन्तु हिन्दू और मुसलमानोकी एकताका यह अर्थ हरगिज नही है कि किसी मुसलमान या किसी हिन्दूसे कभी कोई गलती होगी ही नही। गलती हो जानेपर भी जब हम अटल बने रहे तभी यह माना जायेगा कि हमने एकता-धर्मका पालन किया है।

पर अभी इस सवालपर जरा और विचार करे। इस सरकारने हमारी चुटिया तो बेशक जबरदस्ती नही काटी है, परन्तु इसने हमारी आत्मा ही को कहाँ रहने दिया है? सरकारके बलात्कारके मुकाबलेमे तो मुझे मोपलाओका बलात्कार ना-कुछ मालूम होता है। सरकारके हाकिमोने तो एक क्षणभरमे लोगोसे खादी छीन ली और हिन्दू और मुसलमान दोनोको धर्म-हीन कर डाला। हिन्दू-मुसलमानोका पौरुष किसने हरण किया है? आज तो सरकारके शस्त्र-बलके सामने मुँह उठानेकी भी शक्ति हममे नही रह गई। मुगलोके जमानेमे हमारी ऐसी हीन स्थिति नही हुई थी। मोपलाओके शस्त्रबलका सामना शस्त्रोके ही द्वारा करनेकी तजवीज तो मै इसी घडी कर सकता हूँ, परन्तु मै अपनेको शस्त्र-शास्त्रका थोडा-बहुत ज्ञाता मानते हुए भी सरकारके शस्त्र-बलके सामने शस्त्र-प्रयोग करनेकी विद्याका आविष्कार न तो खुद ही कर सकता हूँ और न अली-भाई ही अबतक कर सके है।

इसके सिवा, हिन्दू और मुसलमानोकी एकताका टिकना दोनो द्वारा शान्ति-मार्गको स्वीकार करनेपर ही अवलम्बित है। और हर एक कौमके अगुआ लोगोको यह कबूल करना होगा कि हमारे आपसके झगडोका फैसला महज शान्तिके रास्ते अर्थात् पचोकी मारफत ही होना चाहिए।

अब अन्तमे, जो हिन्दू जबरदस्ती मुसलमान बनाये गये है वे मुसलमान नही माने जा सकते और न वे भ्रष्ट ही समझे जा सकते है। वे हिन्दू ही माने जाने

चाहिए, उन्हें इसका पूरा-पूरा अधिकार है। उन्हें किसी भी तरहके प्रायश्चित्तकी जरूरत नहीं।

मुझे इतना और भी कह देना उचित है कि जिन-जिन मुसलमानोंने मोपलाओंके अत्याचारोंकी बातें सुनी हैं उन्हें बड़ा ही अफसोस हुआ है और अगर आज हम लोग वहाँ जाने दिये जाते तो मोपला लोग खुद-ब-खुद आकर माफीकी याचना करते। मुझे पूरी उम्मीद है कि जब स्वराज्य मिल जायेगा तब वे लोग जरूर ही माफी माँगेंगे। वे तो सिर्फ एक बात जानते हैं — लड़ना। वे हमारे नादान भाई हैं। उन्हें सुधारनेका प्रयत्न सरकारने तो किया ही नहीं, पर हम लोगोंने भी नहीं किया। क्या इसमें मलाबारके हिन्दुओंका कुछ दोष नहीं है?

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २५-९-१९२१

९०. टिप्पणियाँ

मोपला उपद्रव

इसमें सन्देह नहीं कि मोपला उपद्रवसे हमें काफी हानि पहुँची है। मद्रास प्रान्तमें, हिन्दुओं और मुसलमानोंमें एकताके विषयमें लोगोंका विश्वास हिल गया है। अधिकारियोंको ऐसा लगने लगा है कि जनता अन्ततक शान्तिका पालन नहीं कर सकती। दूसरे डर गये हैं। उनका यह मतलब नहीं कि वे अब सभाओं आदिमें नहीं आते। किन्तु उनके मनमें यह भय अवश्य प्रवेश कर गया है कि अब क्या होगा? उपद्रवके दरम्यान सैकड़ों मोपले मारे गये और अभी मारे जा रहे हैं। नतीजा यह हुआ कि इस समय मलाबारमें स्वदेशी आन्दोलन बन्द हो गया है। सरकार तो यही चाहती थी। मार्शल लॉकी घोषणासे सरकारको स्वदेशीका नाश करनेका बहुत अच्छा मौका मिल गया। कहा जाता है कि मार्शल लॉ शुरू होनेपर खादीधारियोंके खादीके कपड़े फाड़े और जलाये गये हैं। खादीकी टोपियाँ और चरखे आदि भी जलाये गये हैं। फल यह हुआ कि कालीकटके बाजारमें जो खादीकी टोपियाँ और चरखे आदि दिखते थे वे एक दिनमें ही अदृश्य हो गये। यदि मोपलाओंने यह पागलपन न किया होता तो उसका इतना अनिष्ट परिणाम न होता। यदि उन्होंने रक्तपात न किया होता और फिर भी किसी सरकारी अधिकारीने खादीके कपड़े जलानेकी बदतमीजी की होती तो आज या तो वह अपने पदसे हटा दिया गया होता या खादीका प्रचार ऐसी घटनाओंसे और बढ़ गया होता। किन्तु मोपलाओंके पागलपनसे तो उलटा ही परिणाम निकला है। उन्हें तो स्वदेशीके महत्वका कोई ज्ञान ही नहीं था। दूसरे जो थे वे भीरु थे। वे खादी पहन सकते थे किन्तु उसके लिए मरनेकी शक्ति उनमें नहीं आई है। इसलिए डरके कारण उन्होंने खादी और चरखेका त्याग कर दिया। हमें इससे एक बड़ा सबक सीखना है। हम जो खादी पहनते हैं और खादीकी टोपी धारण करते हैं सो धर्मकी प्रेरणासे करते हैं। तब होना यह चाहिए कि कोई हमें धमकाकर या

डराकर हमसे खादी न छुडा सके। इसके लिए यानी स्वदेशीके लिए हमें मृत्युका आलिगन करनेकी तैयारी रखनी चाहिए और खादी-प्रचारके अपने कार्यमें अधिक उत्साही बनना चाहिए।

धन्य है यह धर्मपत्नी

मौलाना मुहम्मद अलीकी बेगम साहिबाके धीरजको देखकर मै तो दग रह जाता हूँ। वाल्टेयरमे जब उनके पति, मौलाना साहब, गिरफ्तार हुए तब वे उनसे मिलने गई थी। और जब मिलकर लौटी तब मैंने उनसे पूछा कि आपको घबराहट तो नही होती। उन्होने कहा "नही, मुझे जरा भी घबराहट नही। पकडे जानेवाले तो थे ही। यह तो उनका धर्म था।" मैने उनकी आवाजमे भी घबराहट नही पाई। उसके बाद भी वे हमारे ही साथ घूम रही है और अपनी हिम्मतका परिचय दे रही है। स्त्रियोकी सभाओमे और पुरुषोकी सभाओमे भी वे बुर्का ओढकर आती है और थोडेमे परन्तु ऐसा भाषण करती है कि वह ठेठ दिलकी तहतक पैठ जाता है। वे सबको शान्त रहने, चरखा कातने और खादी पहननेकी सिफारिश करती है और मुसलमानोसे स्मर्नाके लिए चन्दा भी माँगती है। कुछ ही महीने पहलेतक उनके बनाव-शृगारकी इन्तहा नही थी। महीन कपडेके बिना काम नही चलता था। पर आज वे मोटी खादीका हरा रँगा हुआ झगा पहनती है। हिन्दू स्त्रियोकी बनिस्बत मुसलमान-स्त्रियोको अधिक कपडे पहनने पडते है। उसमे भी बेगम साहिबाका बदन कुछ हलका नही है। तो भी वे अपने धर्मके लिए और देशके लिए इस तरह तपस्या कर रही है। इसका फल यह हो रहा है कि उनका दर्शन करनेके लिए अब जगह-जगहपर मुसलमान बहने भी आया करती है।

मद्रास प्रान्तकी मुसलमान बहनोकी पोशाक मुझे बहुत ही सादा नजर आती है। जहाँ हिन्दू-बहनोकी पोशाकमे तो रग-बिरगेपनका पार ही नही है, वहाँ मुसलमान-बहनोकी पोशाकमे मुझे मोटा सफेद कपडा ही नजर आता है। यह दृश्य मुझे बहुत पवित्र मालूम होता है। हिन्दू-बहनोकी रग-बिरगी साडियाँ इस समय तो मुझे बडी अटपटी मालूम होती है।

स्वदेशीका अभाव

मद्रासमे स्वदेशीका प्रचार बगालसे भी कम हुआ दीखता है और स्त्रियोमे तो, हम ऐसा भी कह सकते है कि वह है ही नही। लेकिन मुझे आश्वासन दिया गया है कि अब वह वेगसे बढेगा। गरीबोमे कातनेका शौक अपने-आप बढ रहा है। मद्रासके व्यापारियोने मुझसे कहा है कि उनकी दुकानोमे विलायती कपडेकी माँग बहुत कम है और स्वदेशीकी खपत खूब बढी है। हो सकता है, यह बात सच हो। और यदि यह सच हो तो इससे यह सिद्ध होता है कि प्रचारका यह कार्य काग्रेसके कार्यकर्त्ताओकी मार्फत कम हुआ है, जागृति अपने-आप ही हुई है।

मद्रासके नेता

स्वदेशीके प्रचारके इस अभावका दोष नेताओको अवश्य ही दिया जा सकता है। लेकिन मद्रासमे सेवक कम नही है। श्री राजगोपालाचारीकी योग्यताकी सीमा नही

है। इसी तरह डा० राजनकी शक्तिकी सीमा नहीं है। किन्तु इन सेवकोंको एक नया वातावरण पैदा करना था और उसमें उन्हें बड़ी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा। फिर भी वे टिके रहे हैं और अपना काम करते रहे हैं। यह बात जितनी सन्तोषजनक है, उतनी ही आश्चर्यजनक भी है। मद्रासके लोगोंकी धार्मिकताके प्रति मुझे आदर है। वहाँकी जनता दूसरे प्रान्तोंकी जनताकी ही तरह भोली है, उसके अध्यवसायका तो पार ही नहीं है। इसलिए यद्यपि मद्रास आज पीछे है लेकिन ऐसा नहीं कहा जा सकता कि वह अगली पंक्तिमें पहुँचेगा ही नहीं। मद्रासमें बुनकर बहुत हैं और उनका कौशल उत्तम कोटिका है। मैं उनके प्रमुख व्यक्तियोंसे कुम्भकोणम्में मिला था। उन्होंने मुझे वचन दिया है कि वे हाथसे काते हुए सूतका ही उपयोग करेंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २५–९–१९२१

९१. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

गाड़ीमें

२५ सितम्बर, [१९२१]

प्रिय चार्ली,

तुम्हारा पत्र मिला। बेशक विदेशी कपड़ोंकी होली जलाना आन्दोलनके लिए बहुत महत्वपूर्ण नहीं है। इन कपड़ोंकी होली जलाना नापसन्द करते हुए भी जो चाहे, इस आन्दोलनमें शरीक हो सकता है। महादेवकी बातसे मुझे ऐसा लगा कि शायद तुम सारे आन्दोलनकी सचाईपर ही सन्देह करने लगे हो। इसीलिए मैंने तुमको लिखा कि यदि सन्देह करते हो तो भी तुम्हारे प्रति मेरा प्रेम ज्यों-का-त्यों बना रहेगा, उसपर कोई आँच आनेकी नहीं।[1] परन्तु यह देखकर कि तुम आन्दोलनमें अब भी उतना ही विश्वास रखते हो जितना पहले, स्वभावतः मुझे सान्त्वना मिलती है। जिन मित्रोंका सहयोग मैं बनाये रख सकता हूँ, उन सभीका बनाये रखना चाहता हूँ। साथ ही मैं आन्दोलनकी सच्चाईमें इतना ज्यादा विश्वास करता हूँ कि मौका आनेपर अकेले खड़ा रहकर भी उसको बनाये रखनेमें मैं सन्तोष मानूँगा। हिंसा और उससे सम्बन्धित सभी गौण बुराइयोंकी पूजासे बचनेका अन्य कोई उपाय नहीं है।

आशा है, इस समुद्र-यात्रासे तुम्हें लाभ होगा।

श्रीमती पेटिट और श्री पेटिटको[2] मेरी याद जरूर दिलाना।

सस्नेह

तुम्हारा,
मोहन

१ देखिए "पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको", १४–९–१९२१।

२ सर दिनशा पेटिट (१८७३–१९३३), बम्बई विधान परिषद्के सदस्य।

[पुनश्च :]

मैंने आज तुम्हे एक तार[1] भेजा है।

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ९५५) की फोटो-नकलसे।

९२. पत्र : महादेव देसाईको

कोयम्बटूर जाते हुए
रविवार [२५ सितम्बर, १९२१]

भाईश्री महादेव,

मुझे तुम्हारा वह पत्र जो तुमने उर्मिला देवीको लिखे हुए पत्रके साथ भेजा है मिला। इससे पहलेका पत्र नही मिला।

यह सत्य है कि बंगालसे मुझे निराशा हुई, मद्राससे उससे भी अधिक। मैं इस बातको अच्छी तरह जनता हूँ कि हमारा असली कार्य कांग्रेसके कार्यकर्त्ताओंके दिलोंमें चरखेके प्रति विश्वास जमाना ही है। यह विश्वास मुझे बंगालमे नजर नही आया। यहाँ भी वह दिखाई नही देता इसीसे मैं घबरा गया हूँ। सामान्य जनताको उसमे विश्वास है, लेकिन उन्हे मददकी जरूरत है, कौशलकी जरूरत है। अगर सब कोई कुछ-न-कुछ करनेके लिए कहे और करनेवाला कोई भी न हो, तो क्या स्थिति होगी? वही हाल हमारा है। सरूप और रणजीतको तो क्या कह सकते है? लेकिन जवाहरलाल समझेगा, ऐसा मैं मानता हूँ। मैं आश्रममे बैठकर सिर्फ यही काम करने लगूँ, यह बात होनेमें देर नही लगेगी।

हिन्दुस्तानकी अधोगतिसे मुझे इतना परिताप होता है कि अगर हिन्दुस्तान इस वर्षके अन्ततक सचेत नही हो जाता तो यह परिताप कदाचित् मुझे जिन्दा ही जला डालेगा — मेरे इतना सब कहने और लिखनेका आशय यही है। मैंने अपनी श्रद्धाको तो छोडा नही है। मै तो जब बुद्धिका प्रयोग करके हिसाब करने बैठता हूँ तब मैं व्याकुल हो जाता हूँ। इतनेमें ही मेरे अन्तरसे आवाज आती है कि "करनेवाला तो ईश्वर है।" 'कछुआ और कछुवीका सवाद'[2] और 'मामेरू'[3] आदि को याद करता हूँ और शान्त हो जाता हूँ। मै दो तारीखको बम्बई पहुँचूंगा। तुम चार तारीखको आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४१९) की फोटो-नकलसे।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. भोजा भगत (१७८५-१८५०) का सुप्रसिद्ध गुजराती भजन।

३. कवि प्रेमानन्द (१६९२-१७९०) रचित गुजराती भक्तिकाव्य जिसमें भक्त नरसिंह मेहताकी पुत्रीके सीमन्तकी रस्म स्वयं भगवान द्वारा अदा किये जानेका मार्मिक वर्णन है।

९३. पत्र : मणिबहन पटेलको

रेलमें
२५ सितम्बर, १९२१

चि० मणि,

तुम्हारे दो पत्र मेरे पास रखे हैं। तुम्हारा काम ठीक चल रहा है। अब तो थोड़े दिनमें वहीं मिलेंगे, इसलिए उनके बारेमें कुछ नहीं लिखता।

कुमुदबहनका हाल पढ़कर मुझे दुःख होता है। उनसे मैं जरूर मिलना चाहता हूँ। ६ तारीखको मैं अहमदाबाद आ ही जाऊँगा। वहाँ कितने समय रहना होगा, यह तो नहीं जानता। परन्तु मैं वहाँ रहूँ उस बीचमें कुमुदबहन आश्रममें आयें तो मैं उनसे साथ बातचीत कर सकूँगा। मैं उनकी सेवा करना और उन्हें शान्ति देना चाहता हूँ। तुम उन्हें यह पत्र ही भेज दो तो काम चल सकता है।

२ तारीखको मैं बम्बई पहुँचनेकी आशा रखता हूँ। ४ तारीखतक तो वहाँ रहना ही है।

काका विट्ठलभाईका रास्ता अलग ही है। हमें उनकी चिन्ता नहीं करनी है। उन्हें जो ठीक लगे भले ही वे वही करें और कहें।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री मणिबहन
द्वारा श्री वल्लभभाई, बैरिस्टर
भद्र, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ मणिबहेन पटेलने

९४. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदीको

ट्रेनमे
२५ सितम्बर, १९२१

भाईश्री ५,

मै आपका पोस्टकार्ड अबी पड रहा हु आपको रुपये न भेज सका, अब तो मुबईमे दे दूगा मैं मुबईमे २ अक्टोबरको पहुचुगा चार तारीखतक रहुगा, इतनेमें आप आ जाये ऐसा चाहता हु

मोहनदास गाधी

बनारसीदास चतुर्वेदी एसक्यू[1]
शान्तिनिकेतन
बोलपुर
ई० आई० रेलवे

जी० एन० २५७८ की फोटो-नकलसे।

९५. भाषण : अभिनन्दनके उत्तरमे[2]

२७ सितम्बर, १९२१

मै आपको आपके इस सुन्दर अभिनन्दन-पत्र और जिस सुन्दर मजूषामे वह रखा गया है, उसके लिए हृदयसे धन्यवाद देता हूँ। जैसा कि आप जानते हैं, मेरे पास चाँदीके पात्र या मजूषा रखनेके लिए कोई स्थान नही है। इसलिए इस चाँदीका उपयोग सार्वजनिक कार्योमे किया जायेगा। अपने अभिनन्दन-पत्रमे आपने प्रगतिका जो लेखा प्रस्तुत किया है, उसके लिए मैं सेलम नगरपालिकाको बधाई देता हूँ — इसलिए और भी कि आपके स्कूलोमे पचम बच्चोको बेरोक-टोक दाखिल किया जाता है, और आपकी कौंसिलमे पचम जातिका एक सदस्य भी है। जिस स्थानने काग्रेसको उसका अध्यक्ष[3] और एक मुख्य सचिव दिया हो, उस स्थानसे इससे कमकी आशा भी नही की जा सकती। आपने कहा है कि असहयोगके लिए आप नगरपालिका सम्बन्धी नियमकी सीमाके अन्दर रहते हुए सभी कार्य करनेको तैयार हैं। आपने यहाँ उन तीन खास बातोका उल्लेख

१. जुलाई १९२० में चीफ्स कालेज, इन्दौरसे त्यागपत्र देकर शान्तिनिकेतनमें सी० एफ० एन्ड्रयूजके साथी हो गये, बादमें उनकी आत्मकथाके सह-लेखक।

२ यह अभिनन्दन सेलम नगरपालिका द्वारा किया गया था।

३ सी० विजयराघवाचार्य।

[illegible] मैं आपको एक बार फिर आपके अभिनन्दन-पत्रके लिए धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-९-१९२१

९६. भाषण : सेलमकी सार्वजनिक सभामे[1]

२७ सितम्बर, १९२१

महात्माजीने . . . कहा कि मुकदमा जितना अधिक अनुचित होगा, अलीवन्धु जितने ज्यादा वेगुनाह होगे, कष्ट सहकर अपना लक्ष्य प्राप्त करनेके हमारे प्रयत्न उतने ही अधिक सफल होगे। उन्होने कहा उनपर चलाये गये मुकदमेका जवाव तत्काल पूरी तरह विदेशी कपडेका वहिष्कार करके तथा घर-घर चरखा चलाना शुरू करके देना है। इसके वाद उन्होने अस्पृश्यता-निवारणपर वहुत ज्यादा जोर दिया। उन्होने कहा कि वर्णाश्रम-धर्मको जैसा मै समझता हूँ उसके अनुसार उसमें किसी मानवके स्पर्शसे दूषित हो जानेकी मान्यताके लिए कोई आधार नहीं है। वर्णाश्रम-धर्म सेवाकी एक योजना है, न कि विशेष अधिकारोकी। वुरे विचार, वुरे शब्द और वुरे कामसे ही कोई स्त्री या पुरुष दूषित होता है, किसी मनुष्यके स्पर्शसे नहीं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३०–९–१९२१

९७. भाषण : अभिनन्दनके उत्तरमें[2]

२८ सितम्वर, १९२१

महात्माजीने. . .उनसे कहा कि आप लोगोंको अपनी नगरपालिकामें स्वदेशीके सन्देशका प्रचार करना चाहिए, अपने सभी स्कूलोमे चरखा चलवाना प्रारम्भ कर देना चाहिए, नशाबन्दीका काम आगे वढाना चाहिए, अस्पृश्यताके अभिशापसे मुक्त होनेका यत्न करना चाहिए, और अकालका सामना करनेका उपाय करना चाहिए। आप ये सब रुचिकर काम नगरपालिकाके नियमोका उल्लंघन किये बिना कर सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ५–१०–१९२१

१ यह सभा नगरपालिका-छात्रावासके अहातेमें हुई थी। सभामें पहले तीन अभिनन्दन-पत्र पढ़े गये और इसके वाद श्री विजयराघवाचार्यको अध्यक्ष चुना गया। तदुपरान्त गाधीजीने भाषण दिया।

२ यह अभिनन्दन तिरुपति-नगरपालिकाने किया था।

९८. टिप्पणियाँ

पीडित मद्रास

मद्रास कई व्याधियोसे पीडित है। इसके सामने ब्राह्मण-अब्राह्मणकी समस्या है, पचमोकी समस्या है, मजदूरोका सवाल है, और इसे ऐसे कठोर दमनका सामना करना पड रहा है जैसे दमनका सामना ऐमे हर प्रान्तको करना पडता है, जहाँका गवर्नर सज्जन-सुशील तो हो, किन्तु साथ ही वहुत कमजोर और पूरी तरहसे अपने सलाहकारोपर निर्भर रहनेवाला हो। चिरला-पेरला दमनकी[1] वात मै पहले ही वता चुका हूँ। अव सरकार किसानोसे चरागाह-कर वसूल करनेकी कोशिश कर रही है, किन्तु किसान यह कर न तो देना चाहते है और न उनकी ऐसी हालत ही है कि वे दे सके। मालूम हुआ है, वसूलीकी पागलपन-भरी जिदमे सरकारने करीव २०० पशुओको काजी हाउसमे वन्द कर दिया, जिनमे मे कुछको अपने वछडोमे भी अलग कर दिया गया। पशुओको एक ऐमे काजी हाउसमे ले जाया गया जहाँ न पर्याप्त चारा था, न पानी। यह वात आन्ध्र प्रदेशकी है। यह टिप्पणियाँ मै त्रिचनापल्लीमे लिख रहा हूँ। इसके पास ही करूर नामक एक स्थान है, जिसकी आवादी २०,००० के आसपास है। यहाँके लोगोने मद्य-निषेधकी दिशामे वहुत अच्छा काम किया है। अव करीव चालीस व्यक्तियोको गिरफ्तार कर लिया गया है। ये सवके-सव स्थानीय काग्रेस कमेटीके सदस्य है। इनपर आरोप यह लगाया गया है कि वहाँके कुछ हुल्लडवाजो द्वारा थियेटरके मैनेजरके चन्दा देनेसे इनकार करनेपर थियेटरको घेर लेनेकी घटनामे इनका भी हाथ था। चन्दा किसी धर्मार्थ कार्य या तिलक स्वराज्य कोषके लिए — मुझे पता नही कि किसलिए — माँगा जा रहा था। हुल्लडवाजोने यह काम कुछ पहले ही किया था। भीडको तितर-वितर कर दिया गया था। लेकिन अव इन लोगोको गिरफ्तार किया जा रहा है। सर्वत्र दमनकी चर्चा है। और अली-वन्धुओकी गिरफ्तारीके वाद शायद यह चीज और भी वढेगी। लेकिन लोग शान्त रहे है। हिम्मतके साथ अहिंसापर डटे रहे है। मलावारका सकट तो असाधारण ही है, लेकिन उससे सरकारके पापका प्याला भर चुका है।

सरकार इतनी घवरा गई है कि कोई नही कह सकता, अभी अगले ही पल वह क्या कर वैठेगी। यहाँसे कुछ दूर एक पुडुकोट्टाई राज है। मुझे कुछ गाँवोका दौरा करना था। मै इस राजसे ही होकर गुजरनेवाला था। लेकिन, राजको इतना भी गवारा नही था। मुझको राजकी ओरसे निम्नलिखित पत्र मिला

> **हमारे सामने ऐसा माननेका कारण है कि आप इसी महीनेकी २० तारीखको तिरुचिरापल्लीसे चेट्टिनाड जाना चाहते है, हमें यह भी वताया गया है कि आप इस राजसे होकर सडकसे जाना चाहते है।**

१ देखिए "चिरला-पेरला", २५-८-१९२१।

> **यह मानते हुए कि यह जानकारी सही है, मैं आपको यह सूचित करनेके लिए लिख रहा हूँ कि आपको इस राजसे होकर नहीं जाने दिया जायेगा। अगर आप ऐसा करनेकी कोशिश करेंगे तो पुलिस आपको सीमापर रोक देगी।**

उत्तरमे मैंने सिर्फ इतना लिखा[1]

ये देशी-राज्य जो कुछ करते है, सबको मै सरकारका ही अप्रत्यक्ष काम मानता हूँ। लेकिन मै इन देशी-राज्योको प्रत्यक्ष रूपसे ब्रिटिश शासनमे रहनेवाली प्रजासे भी अधिक असहाय मानता हूँ, इसलिए मै बराबर यह जरूरी मानता आया हूँ कि इनके खिलाफ असहयोगी लोग सघर्ष न छेडे। इससे बेकारकी उलझन पैदा होगी। लेकिन किसीको किसी स्थानसे होकर गुजरने भी न दिया जाये, यह तो साफ पागलपन है। और अगर मै उस राज्यमे जाता भी तो वहाँकी प्रजाको मद्य-निषेध, स्वदेशी और अस्पृश्यतापर कुछ सीख-सलाह देनेके अलावा और क्या करता?

"पचम लोग"

लेकिन अभी तो मुझे इन विभिन्न समस्याओपर लिखनेका लोभ सवरण ही करना चाहिए। मद्रासमे दिये गये अपने भाषणोमे सबसे ज्यादा विचार मैंने पचमो, अर्थात् अस्पृश्योकी समस्यापर ही किया है, इसलिए मै इन टिप्पणियोमे उसपर सक्षेपमे लिखना चाहता हूँ। "अस्पृश्यो" के साथ जितना निष्ठुरतापूर्ण व्यवहार इस प्रान्तमे किया जाता है, उतना और कही नही किया जाता। उनकी छाया-मात्रसे ब्राह्मण अपवित्र हो जाते है। जिन गलियोमे ब्राह्मण रहते है, उन गलियोसे वे गुजर भी नही सकते। ब्राह्मणेतर जातियोके लोगोका सलूक भी पचमोके साथ इससे कोई अच्छा नही होता। इन दो जातियोके बीच पचम कहलानेवाले लोग पिस रहे है। फिर भी मद्रास भव्य मन्दिरो और धार्मिक निष्ठावाला प्रदेश है। लम्बा तिलक, लम्बे बाल, खुला बदन — इस रूपमे यहाँके लोग ऋषि-जैसे लगते है। लेकिन लगता है, उनका सारा धर्म इन्ही बाहरी विधि-विधानोमे सिमट कर रह गया है। जिस धरतीने देशको शकर और रामानुज-जैसी विभूतियाँ दी, उसी धरतीपर सबसे अधिक कर्मठ और उपयोगी नागरिकोके प्रति ऐसा डायरवादी जुल्म किया जाये, यह बात कुछ समझमे नही आती। और यद्यपि भारतके इस हिस्सेमे हमारे ही परिजनोके साथ ऐसा शैतानी बरताव किया जाता हो, फिर भी इन दाक्षिणात्य लोगोमे मेरा विश्वास बना हुआ है। मैंने उनकी सभी बडी-बडी सभाओमे उनसे स्पष्ट कहा है कि जबतक हम अपने बीचसे इस अभिशापको खतम नही करते तबतक स्वराज्य नही प्राप्त हो सकता। मैंने उनसे कहा है कि आज जो लगभग सारी दुनिया हमारे साथ सामाजिक कोढियोके जैसा व्यवहार करती है, उसका कारण यही है कि हमने भी अपनी जातिके पाँचवे हिस्सेके साथ वैसा ही व्यवहार किया है। असहयोग हृदय-परिवर्तनका आग्रह करके चलता है, और इस परिवर्तनकी अपेक्षा वह सिर्फ अग्रेजोके हृदयमे ही नही, बल्कि उसी हदतक हमारे हृदयमे भी रखता है। सच तो यह है कि मै अपेक्षा करता हूँ कि पहले हमारा हृदय बदले और तदनन्तर एक

१. यहाँ नही दिया गया, देखिए "पत्र सिडनी बर्नेको", १८-९-१९२१ के पश्चात्।

की अपनी पुरानी स्थितिमे प्रतिष्ठित कर दे। हम दोनोने उनसे कहा कि हम चाहते है कि वकील लोग काग्रेसके लिए काम करे, लेकिन जो लोग वकालत नही छोड़ना चाहते वे न तो नेता बन सकते है और न उन्हे बनना चाहिए। मोतीबाबूने कहा कि आपने वकीलो और मोचियोकी चर्चा एक साथ कर दी, उससे कुछ वकीलोके मनको चोट पहुँची है। यह सुनकर मुझे दु ख हुआ। 'यग इडिया'मे लिखी वह टिप्पणी[1] मुझे याद है, और निश्चय ही उसे लिखनेमे किसीको चोट पहुँचानेका इरादा नही था। वकीलोके बारेमे मैने बहुत-सी कडी बाते कही है, लेकिन ऐसा तो कभी नही माना कि वे जात-पातके सकुचित विचारसे ग्रस्त है। मुझे पूरा विश्वास है कि वकीलोने मेरी बातोके पीछे जो भावना है उसे समझा है। वैसे तो मै यही समझता हूँ कि अपने लेखोमे मै कही किसीको चुभनेवाली बात नही कहता। लेकिन, इस मामलेके बारेमे मै निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि जिस अनुच्छेदकी ओर मोतीबाबूका इशारा था, उसमे किसीको चोट पहुँचानेका मेरा कोई मशा नही था। मै तो खुद ही एक वकील रहा हूँ, और मै अपने-आपको इतना कैसे भूल जा सकता था कि इस तरह मनमाने ढगसे उसी पेशेके लोगोको चोट पहुँचाता? और फीरोजशाह मेहता[2], रानडे[3], तैयबजी[4], तेलग[5], मनमोहन घोष, कृष्णस्वामी अय्यर-जैसे वकीलोने देशकी जो शानदार और अपूर्व सेवा की, उसे भी मै कैसे भूल सकता हूँ? इन दिवगत सज्जनोके अलावा, हमारे बीच वर्तमान वकील लोग आज जो सेवा कर रहे है, उनकी बात तो रहने दीजिए। जब किसीमे कुछ बोलनेकी हिम्मत नही थी, तब वे जनताकी भावनाको स्वर दे रहे थे और देशकी स्वतन्त्रताके सरक्षकका काम कर रहे थे। और आज अगर उनमे से अधिकाशको जनता अपने नेताके रूपमे स्वीकार नही कर रही है तो उसका कारण यह है कि आजतक उन्होने नेतृत्वके जो गुण दिखाये, अब उनसे भिन्न गुणोकी अपेक्षा की जाती है। आज हमारे नेताओसे जिन गुणोकी अपेक्षा की जाती है, वे है साहस, सहनशक्ति, निर्भीकता और, सबसे बढकर, आत्म-त्याग। अगर दलित वर्गका ही कोई व्यक्ति इन गुणोका पूरा परिचय देता है तो निश्चय ही वह राष्ट्रका नेतृत्व कर सकेगा। लेकिन ओजस्वीसे-ओजस्वी वक्तामे भी अगर ये गुण न हो तो वह नेतृत्व नही कर सकता।

इस बातसे मुझे बडा सन्तोष हुआ है कि जो वकील वकालत नही छोड पाये है, उन्होने मेरी उक्त मान्यताको स्वीकार करके विनम्र सहायकोकी तरह काम

१. देखिए "टिप्पणियाँ", २५-८-१९२१ का उप-शीर्षक "वकालतमें लगे हुए वकील"।

२ १८४५-१९१५, भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके सस्थापकोमें से एक, १८९० में कांग्रेसके अध्यक्ष।

३ महादेव गोविन्द रानडे (१८४२-१९०१), अर्थशास्त्री, इतिहासकार और समाज-सुधारक, १८९३ में बम्बई उच्च न्यायालयके न्यायाधीश, काग्रेसके सस्थापकोंमें से एक।

४ गुजरातके एक राष्ट्रवादी मुसलमान, एक समयमें बड़ौदा उच्च न्यायालयके न्यायाधीश, पजाबके उपद्रवोकी जाँचके लिए काग्रेसकी पजाब उप-समिति द्वारा नियुक्त समितिके एक सदस्य।

५. भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके सस्थापकोमें से एक।

करनेमें ही खुशी मानी है। अगर किसी सेनापतिके साथ उसके छावनी-सेवक — अनुगामी — न हों तो उसका पूरा काम ही चौपट हो जायेगा।

इसपर मोतीबाबूने कहा, "लेकिन, हमारे आन्दोलनमें बहुत असहिष्णुता आ गई है। जिन वकीलोंने वकालत नहीं छोड़ी है उन्हें असहयोगी लोग अपमानित करते हैं।" मुझे लगता है कि आरोप एक हदतक सही है। असहिष्णुता स्वयं ही एक प्रकारकी हिंसा है और सच्ची धार्मिक भावनाके विकासके मार्गमें बाधा है। थोड़ा-सा त्याग करके या खादी पहनना शुरू करके कोई असहयोगी अहंकारपूर्वक अपने-आपको दूसरोंसे श्रेष्ठ मानने लगे, तो यह इस आन्दोलनके लिए सबसे खतरनाक चीज है। असहयोगी अगर विनम्र नहीं है तो वह कुछ नहीं है। जब किसी व्यक्तिमें आत्म-सन्तोषकी भावना आ जाये तो इसका मतलब है, उसमें विकासकी क्षमता नहीं बच पाई है और वह स्वतन्त्रताके लायक नहीं रह गया है। जो धार्मिक भावसे विनम्रता-पूर्वक थोड़ा त्याग करता है, उसे तत्काल अपने त्यागकी विपन्नता और न्यूनताका एह-सास हो जाता है। एक बार जब हम त्यागके मार्गपर कदम बढ़ा देते हैं, तो हमें इस बातका पता चल जाता है कि हममें कितना स्वार्थ है, और फिर हममें बराबर अधिकाधिक देनेकी इच्छा होनी चाहिए और तबतक सन्तोष नहीं मानना चाहिए जब-तक कि हमने अपना सर्वस्व न दे दिया हो।

इस बातका एहसास करते हुए कि हमने उतना कम त्याग करनेकी कोशिश की और जितना त्याग कर पाये वह उससे भी कम है, हमें विनम्र और सहिष्णु बने रहना चाहिए। दूसरोंसे अपनेको अलग रखकर और आसानीसे आत्म-तुष्ट हो जानेकी हमारी प्रवृत्तिके कारण ही बहुतसे ढुलमुल मनके लोग हमसे दूर रहे हैं। हम लोगोंको नम्रतापूर्वक समझायें-बुझायें, उनके मस्तिष्क और हृदयके धरातलोंपर उनसे निरन्तर अनुरोध करते रहें, और इसी तरह उनसे अपना मत स्वीकार करा लें, यही हमारा उद्देश्य होना चाहिए। इसलिए जिन लोगोंके विचार हमारे विचारोंसे भिन्न हैं, उनके साथ हमें बराबर शिष्टता और धैर्यसे पेश आना चाहिए, हमें अपने विरोधियोंको देशके दुश्मन माननेका सवाल अपने मनसे संकल्पपूर्वक अलग रखना चाहिए।

वकील तथा दूसरे ऐसे लोग जो असहयोगमें विश्वास रखते हों, लेकिन किसी कारणसे उन मामलोंमें असहयोग नहीं कर पा रहे हों, जो उनपर लागू होते हैं, वे स्वदेशीके मामलेमें सहायक सेनानियोंके रूपमें चुपचाप काम कर सकते हैं। इसके लिए अधिकसे-अधिक संख्यामें लगनेवाले कार्यकर्त्ताओंकी जरूरत है। कोई कारण नहीं कि वकालत करता हुआ कोई वकील अदालतोंमें भी खादी पहनकर उसका प्रचलन क्यों नहीं बढ़ाये। कोई कारण नहीं कि वह स्वयं और उसके परिवारके लोग अवकाशके समय कताईका काम न करें। वकालत करनेवाले वकील स्वराज्य प्राप्तिकी दिशामें और भी बहुतसे काम कर सकते हैं, जिनमें से यहाँ सिर्फ एकका ही उल्लेख किया गया है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि कोई भी वकालत करनेवाला वकील, और वकील ही क्यों, कोई सहयोगी विद्यार्थी भी, इस आन्दोलनमें वह जिस तरह भी सहायता दे सकता है, उस तरह सहायता देनेसे बाज नहीं आयेगा। सभी नेता नहीं हो सकते, लेकिन सेवक और अनुगामी सभी हो सकते हैं। और मुझे आशा है कि असहयोगी

लोग बराबर ऐसा आचरण करेंगे जिससे ऐसे देशभाई सेवा करनेको तत्पर हों और सेवा करें भी।

एक उचित सवाल

एक मित्रने हिन्दू-मुस्लिम एकतापर मोपला उपद्रवके प्रभावके बारेमें पत्र लिखा है। उसका भाव मैं नीचे दे रहा हूँ

> मैं हिन्दू-मुस्लिम एकताका पक्का हामी हूँ। लेकिन इस मोपला उपद्रवके कारण मेरे मनमें शंकाएँ उत्पन्न हो गई हैं। खिलाफतकी प्रतिष्ठाके लिए हम जो प्रयत्न कर रहे हैं, उसकी सफलताका मतलब है इस्लामका शक्ति-शाली होना। इस्लामके शक्तिशाली होनेका मतलब है दूसरे धर्मोके लोगोंसे इस्लाम स्वीकार करानेका प्रयत्न करना। क्या हमारे सामने अक्सर इस्लाम स्वीकार करने या मृत्युका वरण करनेका विकल्प नहीं रखा गया है? क्या मोपला-जैसे लोग अहिंसाकी खूबी सीख सकते हैं? और यदि वे अपने धर्मके लिए अहिंसाकी खूबी समझ भी लें तो क्या वे अपने धर्मके प्रचारके लिए हिंसाका प्रयोग नहीं करेंगे? हिन्दू-मुस्लिम एकताकी जरूरतमें मेरा विश्वास अब भी बना हुआ है। लेकिन मैंने जो सवाल उठाये हैं, उन्हें क्या आप उचित नहीं मानते?

सवाल सचमुच उचित हैं — भले ही कारण सिर्फ इतना हो कि वे उक्त पत्र-लेखक-जैसे एक समझदार व्यक्तिके मनमें उठे हैं। लेकिन, मेरे विचारसे इस पूरे सवाल-के बारेमें एक गलतफहमी हुई जान पड़ती है। अगर इस्लामका आधार शरीरबल होता तो हमारा खिलाफतका पक्ष-पोषण करना गलत होता। 'कुरान' में कहीं भी ऐसा कुछ नहीं कहा गया है जिसके आधारपर लोगोंसे इस्लाम कबूल करानेके लिए शक्तिका प्रयोग करना उचित माना जा सके। 'कुरान पाक' में स्पष्ट कहा गया है कि "मजहबमें जबरदस्तीके लिए कोई गुंजाइश नहीं है।" पैगम्बर साहबका सारा जीवन मजहबके मामलेमें जोर-जबरदस्तीकी अस्वीकृतिकी एक कहानी है। जहाँतक मैं जानता हूँ, किसी भी मुसलमानने जबरदस्तीकी ताईद नहीं की है। अगर इस्लामको अपने प्रसारके लिए बल-प्रयोगपर निर्भर करना पड़ा तो वह विश्व-धर्म नहीं रह जायेगा।

दूसरे, ऐतिहासिक दृष्टिकोणसे देखें तो इस्लामके अनुयायियोंके खिलाफ कोई ऐसा आरोप सिद्ध नहीं हो सकता कि उन्होंने एक समग्र समुदायके रूपमें इस्लामको कबूल करनेके लिए लोगोंके साथ जोर-जबरदस्ती की है। जब कभी बलपूर्वक लोगोंसे यह धर्म कबूल करानेकी कोशिश की भी गई है तब-तब जिम्मेदार मुसलमानोंने ऐसी कार्रवाईका प्रतिवाद किया है।

तीसरे, हिन्दू-मुस्लिम एकताकी कल्पनामें पहलेसे ही कुछ ऐसा नहीं मान लिया गया है कि इनमें से कोई भी पक्ष कभी कोई गलती नहीं करेगा। इसके विपरीत, इस एकताके विचारके पीछे कल्पना यह है कि हिन्दू-मुस्लिम एकताके प्रति हमारी निष्ठा मोपलों द्वारा लोगोंसे जोर-जबरदस्ती इस्लाम कबूल करानेके प्रयत्न-जैसे आघा-तोंको झेल लेगी, और ऐसे हर मामलेमें हम सम्बन्धित धर्मावलम्बियोंके समग्र समुदाय-को दोषी नहीं मानेंगे, बल्कि जो सचमुच दोषी हैं उनके द्वारा किये गये अन्यायका

प्रतिकार करेंगे, और यह प्रतिकार हम प्रतिशोधकी कार्रवाई करके नही, वल्कि पच-प्रणालीसे करेंगे।

चौथी वात यह है कि भारतको स्वतन्त्र करनेके लिए अहिंसाको स्वीकार करनेमे हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए भी अहिंसाको स्वीकार करनेकी बात समाई हुई है। मोपलोने नि सन्देह नियम तोडा है। लेकिन उसका कारण यह था कि उन्हे नई परिस्थितियोको जानने-समझनेका कभी मौका नही दिया गया। उन्होने खिलाफतके वारेमें अस्पष्ट रूपसे कुछ सुना तो था, किन्तु अहिसाके वारेमे वे कुछ नही जानते थे।

पांचवी वात यह है कि हमे स्वराज्यके अन्तर्गत भारतपर कोई अनिष्ट आ जानेकी आशका करनेकी जरूरत नही है, क्योकि यह किसी हदतक निश्चित ही है कि अगर काग्रेस तथा खिलाफतका काम करनेवाले कार्यकर्ताओको मोपलोके बीच जाने दिया जाता तो उन्होने इस अनिष्टको तभी दवा दिया होता जब वह अकुरकी अवस्थामे था। और जैसा हुआ उसके आधारपर प्रमाणपूर्वक कहा जा सकता है कि खिलाफतके कार्यकर्त्ता जहाँ-जहाँ जा पाये, वहाँ उन्होने लोगोको वहुत हदतक शान्त रखा। मेरे लिए तो मोपला उपद्रव हिन्दू-मुस्लिम एकताका एक प्रमाण है, क्योकि उस उपद्रवके वीच भी हम शान्त रहे। एक परिवारके सदस्यकी तरह हम आपसमे कभी-कभी झगडा-तकरार करेंगे ही, लेकिन वरावर हमारे वीच ऐसे नेता रहेंगे जो हमारे मतभेदोका समाधान करके हमे नियन्त्रित रखेंगे।

छठी वात यह है कि भविष्यमे ऐसे उत्पातोकी सम्भावना देखते हुए भी हिन्दू-मुस्लिम एकताका और कोई विकल्प क्या है? क्या अनन्तकालतक गुलाम वनकर रहना? अगर हम एक-दूसरेको अपना सहज शत्रु मानते हैं तो क्या हममे से किसीके सामने सदाके लिए विदेशियोकी गुलामी करनेके अलावा और कोई चारा है? क्या मौजूदा विदेशी हुकूमत जवरदस्ती धर्म-परिवर्तन करनेको मजवूर किये जाने या उससे भी किसी वुरी वातकी सम्भावनासे भी वदतर नही है? अगर हिन्दू-धर्म बलप्रयोगको झेल नही सकता तो फिर वह किस कामका है? इस मित्रने जैसा सवाल पूछा है, क्या मुसलमान भी वैसे ही सवाल नही पूछ सकते? क्या ऐसी कोई सम्भावना नही है कि, जैसा तीन साल पहले शाहावाद जिलेमे हुआ, वैसे ही हिन्दू लोग फिर लूटपाट और हत्याएँ करे? इसलिए क्या हर हालतमे स्पष्टत हिन्दू-मुस्लिम एकता ही इसका उपाय नही है? हिन्दुओ और मुसलमानोमे से कोई भी एक पक्ष जब अपना आपा खो दे तो दूसरे पक्षके सामने दो रास्ते है या तो वह प्रतिकारस्वरूप हाथ उठाये बिना वहादुरीसे मर मिटे, जिससे शरारत तुरन्त वन्द हो जायेगी, अथवा वह प्रतिकारस्वरूप हाथ उठाये और इस तरह वहादुरीके साथ जिये या मरे। व्यक्तियोके लिए ये दोनो रास्ते तवतक खुले रहेंगे जवतक इस दुनियाका अस्तित्व है। ये सारे सवाल इसलिए उठते है कि हम असहाय हो गये हैं। हम अपने धर्मके लिए अपना हाथ उठाये विना मर मिटनेकी दिव्य कला भूल गये हैं, और उसी तरह जानको खतरेमे डाल कर आत्म-रक्षाके लिए वल-प्रयोग करनेकी भी कला भूल गये हैं। और हिन्दू-मुस्लिम एकता यदि दो समुदायोके वहादुर स्त्री-पुरुषोके बीचकी साझेदारी नही है तो वह

एकता किसी कामकी नही। हमे बराबर एक-दूसरेमे विश्वास रखना चाहिए, लेकिन अन्तत तो हमे स्वय अपना और ईश्वरका ही भरोसा रखना चाहिए।

उचित भावना

एक बहनको मैंने स्वदेशीका काम और अधिक लगनसे करनेको लिखा था। उत्तरमे उन्होने लिखा है :

> **मैंने इन महीनोंमें जितना थोड़ा काम किया है, उसका सवाल आते ही मेरी आँखोंमें आँसू आ जाते हैं। क्या ही अच्छा होता, अगर मैं आपको अपना हृदय चीरकर दिखा सकती कि उसमें क्या है। अपने पहले पत्रमें आपने मुझसे यह काम धार्मिक भावनासे अपनानेको कहा था, और मैं आपको विश्वास दिलाती हूँ कि मैंने अपना धर्म मानकर ही उसे अपनाया है। अपने मनमें मैं धर्म और देशभक्तिको कभी अलग-अलग नहीं मान पाई हूँ। मेरे लिए दोनो एक ही हैं। हम दावा तो बहुत-कुछ होनेका करते हैं, किन्तु आत्मविश्लेषण करने-पर पाते हैं कि हम कुछ नहीं हैं. . . हमने अपनी अनुभूतिकी सारी शक्ति खो दी है। हम दासताकी व्यथाका पर्याप्त अनुभव नहीं करते, अन्यथा लोग इतने उदासीन कैसे रह पाते, जब कि समय इतनी तेजीसे भागा जा रहा है?**

यह सम्भव नही है कि पाठकोके लाभके लिए यह सुन्दर पत्र पूराका-पूरा प्रकाशित कर दूँ। जितना अश उद्धृत करनेकी हिम्मत कर सकता था, उतना कर दिया है। उद्देश्य पाठकोको — स्त्री-पुरुष दोनो वर्गोके पाठकोको — इस बहनके धार्मिक उत्साह-का अनुकरण करनेको प्रेरित करना है। पाठकोको यहाँ बता दूँ कि यह बहन अपने एक सुन्दर और नि स्वार्थ तरीकेसे देश-सेवा कर रही है।

एक बहादुर स्त्री

देशके कल्याणके लिए स्त्रियोके कामके बारेमे जानकर मुझे जो खुशी होती है, उससे पाठकोको अवगत कराते हुए मैं बेगम मुहम्मद अलीके कार्योके बारेमे अपने आह्लादकारी अनुभव बतानेका लोभ सवरण नही कर सकता। पिछली बार जब हम लोग बम्बईमे थे, तभी उन्होने अपने पतिके काममे सार्वजनिक रूपसे हाथ बँटाना शुरू किया। उन्होने प्रारम्भ किया स्मर्ना-कोषके लिए चन्दा माँगनेसे। उसके बाद हमारी बिहार, आसाम तथा पूर्वी और पश्चिमी बगालकी कठिन और अनवरत यात्रामे वे हमारे साथ रही। उन्होने महिलाओकी सभाओमे बोलना प्रारम्भ कर दिया। और मैंने देखा कि उनमे वक्तृत्वकी प्रतिभा अपने पतिसे कुछ कम नही है। उनके भाषण छोटे होते थे, किन्तु इस कारण उनके असरमे कोई कमी नही आती थी, और मेरे लिए तो यह कहना कठिन है कि वे अपने पतिको थोडेसे-थोडे शब्दोमे अधिकसे-अधिक कहनेकी कला सिखा नही सकती थी। पाठकोको यह मालूम होना चाहिए कि बेगम साहिबाकी सिरसे पाँवतक की सारी पोशाक मोटी खादीकी थी, और पोशाकके मामलेमे मुसलमान बहने हिन्दू बहनो की तुलनामे जरा कम ही खुशकिस्मत हैं, क्योकि उन्हे

वहुतसे ऐसे कपडे भी पहनने पडते है जो हिन्दू बहनोको नही पहनने पडते। फिर भी वे वुरका पहनती ही रही। अगर कोई मुल्ला कोई ऐसी नजीर ढूंढ निकाले जिसके बलपर सार्वजनिक काम करनेवाली महिलाओको बुरका — और खासकर जब वह वुरका भी खादीका हो — त्यागनेकी छूट मिल जाये, तो यह एक दयाका काम होगा। खैर, जो भी हो, असमकी दम घोटनेवाली गरमीमे भी वे सब-कुछ वहादुरीसे सहती रही।

लेकिन उनकी सबसे कठिन परीक्षा और सबसे बडी विजयकी घडी तब आई जब वाल्टेयरमे उनके पतिको उनसे अलग कर दिया गया। मैने उन्हे उस कमरेसे बाहर आते देखा था जिसमे उनके पतिको नजरवन्द करके रखा गया था। वे प्लेट-फार्मपर दृढ कदमोसे चल रही थी। और जब मैने उनसे पूछा कि आपको क्या इस बातसे खुशी नही है कि आखिरकार आपके पति गिरफ्तार हो गये, तो उन्होने तनिक भी विचलित हुए बिना जवाब दिया कि मै बेशक खुश हूँ, क्योकि वे खुदाके लिए और अपने वतनके लिए जेल जा रहे है। पाठकोको मालूम ही है कि उन्होने किन साहस भरे शब्दोके साथ अपने पतिको [जेलकी] उस गौरवपूर्ण यात्रापर विदा किया। हम लोग मद्रास-यात्रापर आगे बढे। वहाँ समुद्रके किनारे एक भारी सार्वजनिक सभा हुई। श्रोता लोग उनसे बिलकुल अनभिज्ञ थे। वे सभामे गईं और जरा भी लडखडाये विना ऊँची आवाजमे वहुत सुन्दर हिन्दुस्तानीमे बोली। और जब एकके बाद एक वाक्य उनके मुँहसे निकल रहे थे, मुझे अनायास कहना पडा कि वे एक बहादुर पतिकी वहादुर पत्नी है। वे हमारे साथ यात्रापर आई, इस बातसे मुझे गर्वका अनुभव हुआ। नीचे मै उनके भाषणका स्वतन्त्र अनुवाद दे रहा हूँ

> मेरे हिन्दू ओर मुसलमान भाइयो तथा बहनो, मुझे आपको यह बताते हुए बडी खुशी हो रही है कि अपने पतिकी गिरफ्तारीपर मै जरा भी दुःखी नही हूँ। मैने उनसे जेलमे खुश रहनेको कहा है और वादा किया है कि मै उनके कामको आगे बढानेके लिए अपनी लियाकत-भर पूरी कोशिश करूँगी। मुझे उम्मीद है कि हमारे हिन्दू और मुसलमान भाई, सभी लगातार काम करते रहेगे और इस तरह स्वराज्य हासिल करेगे। अगर आप मौलाना साहबको जल्द ही रिहा देखना चाहते है तो आप सबको खादी पहननी चाहिए, सभी बहनोको अपने धर्म और वतनकी खातिर रोज चरखा चलाना चाहिए। मौलाना साहबकी जगह इस्लाम और हिन्दुस्तानकी सेवा करनेके लिए बहुत सारे लोगोको आगे आना चाहिए। मै मुसलमान भाइयोसे यह मिन्नत भी करूँगी कि 'अकारा सहायता कोष' के लिए वे अपनी सामर्थ्य-भर पूरा चन्दा दे।

शाबाश नागपुर!

नागपुर नगरपालिकाने पूर्ण मद्य-निषेधके सवालपर जनमत सग्रह कराकर जनताकी जो सेवा की है उसके लिए वह बधाईकी पात्र है। मतसग्रहका परिणाम बहुत महत्वपूर्ण है। दो हजार तीन सौ तैतालीस मतदाताओने मत दिया। इनमे से दो हजार तीन सौ बत्तीस मतदाताओने पूर्ण मद्य-निषेधके पक्षमे मत दिया। छ व्यक्तियोने

अगर-मगरके साथ मद्य-निषेधके पक्षमे मत दिया था और केवल पाँच मद्य-निषेधके खिलाफ गये। पाठकोको यह जानकर दु ख होगा कि मद्य-निषेधके खिलाफ मत देने-वाले पाँच लोगोमे से दो स्नातक थे। लेकिन यह जो एक तथ्य सामने आया है, उसे कोई दूसरे दृष्टिकोणसे देखते हुए कह सकता है कि ये दोनो स्नातक अपने विश्वासके प्रति इतने ईमानदार थे कि उन्होने साहसपूर्वक लोकापवादका खतरा उठाकर भी अपनी अन्तरात्माके निर्देशके अनुसार मत दिया। ऐसे जनमत सग्रहके शैक्षणिक महत्वमे कोई सन्देह नही हो सकता। बडा अच्छा होता, अगर काग्रेस कमेटीके मन्त्रीने, जिसके कहने-पर मत-सग्रह किया गया, मतदाता सूचीमे मत देने योग्य सभी लोगोके नाम दर्ज कराये होते। आशा तो यही है कि दूसरी नगरपालिकाएँ भी नागपुरके दृष्टान्तका अनुकरण करेगी।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९–९–१९२१

९९. राजभक्तिसे भ्रष्ट करनेका आरोप[1]

कुछ समय पूर्व बम्बईके गवर्नर महोदयने लोगोको चेतावनी दी थी कि कोई इसे मजाक न समझे, मै जो कह रहा हूँ, करके छोडूँगा। उन्होने कहा था कि जैसे भाषण दिये जा रहे है, वैसे भाषणोको अब मै बरदाश्त करनेवाला नही हूँ। अली-बन्धुओ और दूसरोके सम्बन्धमे लिखी अपनी टिप्पणीमे उन्होने अपना आशय स्पष्ट कर दिया है। अली-बन्धुओपर यह आरोप लगाया जानेवाला है कि उन्होने सिपाहियोको राज-भक्तिसे भ्रष्ट करनेका प्रयत्न किया और राजद्रोहात्मक बाते कही। मुझे यह स्वीकार करना पडेगा कि मैने कभी नही सोचा था कि बम्बईके गवर्नर ऐसे दयनीय अज्ञानका परिचय देगे। स्पष्ट है कि गत बारह महीनोमे भारतमे क्या-कुछ हुआ है, उसकी ओर उन्होने ध्यान नही दिया। जाहिर है, कि वे नही जानते कि पिछले साल, सित-म्बर महीनेसे ही काग्रेसने सिपाहियोको राजभक्तिसे विमुख करनेका काम शुरू कर दिया था, केन्द्रीय खिलाफत समितिने उससे पहले यह काम शुरू कर दिया था और उससे भी पहले स्वय मै ऐसा करने लगा था। कारण, जिस व्यक्तिने यह बात सुझाई कि भारतको हर सिपाहीसे, बल्कि सरकारकी सेवामे किसी भी हैसियतसे लगे हर व्यक्तिसे खुलेआम ऐसा कहनेका अधिकार है कि वह सरकारके अन्यायोमे भागीदार है, वह व्यक्ति मै ही हूँ। उसके लिए प्रशसा या निन्दा जो मिले, मुझको ही मिलनी चाहिए। कराची कान्फ्रेसने तो इस्लामके सन्दर्भमे काग्रेसकी घोषणाको सिर्फ दुहराया-भर है। इस्लामकी ओरसे तो जो-कुछ कहना होगा, मुल्ला लोग ही कह सकते है, लेकिन हिन्दुत्व और राष्ट्रीयताकी ओरसे मै निस्सकोच कहूँगा कि चाहे सैनिकके रूपमे हो या गैर-सैनिक अधिकारीके रूपमे, किसी भी हैसियतसे किसी भी व्यक्तिके लिए उस

१. यह उन लेखोंमें से एक था जिनके लिए गाधीजीको छ सालकी सजा दी गई।

सरकारकी चाकरी करना पाप है, जिसने भारतके मुसलमानोंके साथ धोखेबाजी की है और जो पंजाबमें अमानवीय व्यवहार करनेकी अपराधी है। मैंने यह बात कई मचोंने कितने ही सिपाहियोंकी उपस्थितिमें कही है। अगर मैंने सिपाहियोंसे अलग-अलग यह अनुरोध नही किया है कि वे नौकरी छोड दें, तो उसका कारण यह नहीं है कि मैंने वैसा अनुरोध करना नही चाहा, उसका कारण सिर्फ इतना ही है कि हममें उनके भरण-पोषणकी सामर्थ्य नही है। मैंने बिलकुल निस्संकोच भावसे सिपाहियोंसे कहा है कि अगर आप नौकरी छोड देनेके बाद कांग्रेस या खिलाफतवालोंसे सहायता लिये बिना गुजारा कर सकते हो तो आपको तुरन्त नौकरी छोड देनी चाहिए। और मैं विश्वास दिलाता हूँ कि जिस समय भारतके हर घरमें चरखेको स्थायी रूपसे स्थान मिल जायेगा और जब प्रत्येक भारतीय महसूस करने लगेगा कि हर व्यक्ति जब चाहे बुनाईसे सम्मानजनक ढंगसे अपनी आजीविका कमा सकता है, उसी समय मैं, गोलीसे उडा दिये जानेका खतरा उठाकर भी, भारतीय सिपाहियोंसे अलग-अलग और व्यक्तिगत रूपमें कहूँगा कि वे नौकरी छोडकर बुनकर बन जायें। इसमें मैं तनिक भी आगा-पीछा नहीं करूँगा। कारण स्पष्ट है। क्या सिपाहियोंका उपयोग भारतको गुलामीमें रखनेके लिए नहीं किया गया है? चांदपुरमें उस भयंकर रात्रिमें क्या उनका उपयोग निरीह स्त्रियों, पुरुषों और बच्चोंको स्टेशनसे निकाल बाहर करनेके लिए नही किया गया है? क्या उनका उपयोग मैसोपोटामियाके स्वाभिमानी अरबोंको गुलाम बनानेके लिए नही किया गया है? और क्या उनका उपयोग मिस्रवालोंको कुचलनेके लिए नहीं किया गया है? जिस भारतीयमें मानवताका तनिक भी लेश होगा, जिस मुसलमानमें अपने धर्मका तनिक भी अभिमान होगा, उसकी भावना अली-बन्धुओंसे भिन्न कैसे हो सकती है? इन सिपाहियोंका उपयोग कमजोर और असहाय लोगोंकी स्वतन्त्रता या उनके सम्मानकी रक्षा करनेवाले सैनिकोंके रूपमें तो कम, किरायेके कातिलोंकी तरह ज्यादा किया गया है। गवर्नर महोदयने हमसे यह कहकर कि अगर ब्रिटिश सिपाही न होते तो मलाबारमें क्या-कुछ हो गया होता, हमारी बुरीसे-बुरी भावनाको उभारा है। मैं गवर्नर महोदयको बता देना चाहूँगा कि अगर बरतानियाकी संगीनोंकी सहायता न मिली होती तो मलाबारके हिन्दू उस मुसीबतको ज्यादा अच्छी तरह झेल लेते, अगर ब्रिटिश हुकूमत आडे न आई होती तो हिन्दुओं और मुसलमानोंने मिल-जुलकर मोपलोंको शान्त कर लिया होता, अगर खिलाफतका सवाल न होता तो मोपलोंने शायद कोई फसाद ही नही किया होता, हिन्दू लोग अपने अहिंसा-धर्मपर भरोसा करते हुए एक-एक मुसलमानको मित्र बना लेते, या नही तो हिन्दुओंके शौर्यकी परीक्षा ही हो गई होती। बम्बईके गवर्नर महोदयने हिन्दू-मुस्लिम विभेदको बढावा देकर अपना और अपने पक्षका (दोमें से जिसका भी हो) अहित किया है, और ऐसी टिप्पणी लिखकर, जिसका अर्थ यह लगाया जाता है कि हिन्दू लोग बिलकुल असहाय प्राणी हैं, जिनमें अपने घर-बार या धर्मकी रक्षा करनेकी सामर्थ्य नही है या उनके लिए उनमें मर मिटनेका साहस नही है, हिन्दुओंका अपमान किया है। लेकिन अगर गवर्नर महोदयका कहना ही ठीक हो तो हिन्दू लोग जितनी जल्दी इस दुनियासे मिट

जाये, मानवताके लिए उतना ही अच्छा होगा। लेकिन मैं गवर्नर महोदयको यह याद दिला देना चाहता हूँ कि आज ब्रिटिश शासनको भारतीय लोग पौरुषहीन लगते हैं, जो अपने आपको डाकू-लुटेरोसे नही बचा सकते, चाहे वे लुटेरे मोपला मुसलमान हो या आराके हिन्दू, तो यह कहकर उन्होने ब्रिटिश शासनकी सबसे बडी निन्दा की है।

गवर्नर महोदयने अली-बन्धुओको राजद्रोही कहा है। यह बात राजभक्तिमे खलल डालनेकी बातसे जरा कम आपत्तिजनक है। कारण, उन्हे मालूम होना चाहिए कि राजद्रोह काग्रेसका धर्म हो गया है। हर असहयोगी कानून द्वारा स्थापित इस सरकारके विरुद्ध अराजभक्तिका प्रचार करनेके लिए प्रतिज्ञाबद्ध है। असहयोग यद्यपि एक धार्मिक और विशुद्ध रूपसे नैतिक आन्दोलन है, फिर भी इसका सोचा-समझा हुआ उद्देश्य सरकारको उखाड फेकना है, और इसलिए भारतीय दण्ड-सहिताके अनुसार यह कानूनी तौरपर एक राजद्रोहात्मक आन्दोलन है। लेकिन यह कोई नई बात नही है। लॉर्ड चेम्सफोर्ड इसे जानते थे। लॉर्ड रीडिंग भी जानते थे। अत यह समझमे आने लायक बात नही है कि बम्बईके गवर्नर महोदय इसे नही जानते हो। लेकिन सभीने यह स्वीकार किया था कि जबतक यह आन्दोलन अहिसात्मक रास्तेसे चलता है, इसमें कोई दखल नही दिया जायेगा।

लेकिन अब यह कहा जा सकता है कि सरकारको जब लगे कि एक प्रणालीके रूपमे उसके अस्तित्वपर ही इस आन्दोलनसे खतरा आ पडा है, तब उसे अपनी नीति बदलनेका अधिकार है, उसके अधिकारसे मैं इनकार नही करता। मुझे आपत्ति गवर्नर महोदयकी टिप्पणीपर है, क्योकि उसकी शब्दावली ऐसी है जिससे नासमझ जनता यह समझ सकती है कि सिपाहियोकी राजभक्तिमे खलल डालकर और राजद्रोह करके अली-बन्धुओने ऐसे नये अपराध किये हैं जो गवर्नर महोदयके ध्यानमे पहले-पहल लाये गये हैं।

जो भी हो, काग्रेस और खिलाफतके कार्यकर्त्ताओका कर्त्तव्य स्पष्ट है। हम सरकारसे कोई रियायत नही माँगते, न हमे इसकी आशा है। हमने यह वचन भी तो नही माँगा था कि जबतक हम अहिसापर डटे रहेगे, हमे जेल नही भेजा जायेगा। सो अब अगर हमे राजद्रोहके कारण जेल भेजा जाये तो हमे शिकायत भी नही करनी चाहिए। इसलिए हमारे आत्मसम्मान और हमारी प्रतिज्ञाका तकाजा है कि हम शान्त, निरुद्विग्न और अहिसक बने रहे। हमे जिस रास्तेपर चलना है, वह निर्धारित कर दिया गया है। हम सैकडो हजारो मचोपर खडे होकर सिपाहियोके बारेमे अली-बन्धुओकी बाते दुहरायेगे, और जबतक सरकार हमे गिरफ्तार नही कर लेती, हम खुलेआम और सगठित ढगसे अराजभक्तिका प्रचार करते रहेगे। और हम यह कार्य क्रुद्ध होकर प्रतिशोधकी भावनासे नही, बल्कि अपना धर्म मानकर करते हैं। जैसे अलीबन्धु खादी पहनते है वैसे ही हमे भी खादी पहननी चाहिए और स्वदेशीका सन्देश लोगोके बीच फैलाना चाहिए, मुसलमानोको स्मर्ना-सहायता कोष और अकारा-कोषके लिए चन्दा जमा करना चाहिए। हमे अली-बन्धुओकी ही तरह स्वराज्य प्राप्त करने तथा खिलाफत और पजाबके साथ किये गये अन्यायोके परिशोधनके लिए स्वदेशी तथा अहिसाका प्रचार करना चाहिए।

सकट अब हमारे सिरपर लगभग आ पहुँचा हे। जो रोगी सकटको झेल लेता है, उसका कल्याण होता है। अगर हम एक ओर खतरेके सामने चट्टानकी तरह अडिग डटे रहते है और दूसरी ओर अधिकसे-अधिक आत्मसयमसे काम लेते है तो निश्चित है कि हम इसी वर्ष अपने लक्ष्यको पा लेगे।

[अग्रेजी]

यग इडिया, २९–९–१९२१

१००. भाषण : बेल्लारीमें

१ अक्तूबर, १९२१

मानपत्र पढे जा चुकनेके बाद, महात्माजीने हिन्दीमें उनका उत्तर दिया। उन्होने खिलाफत समिति द्वारा कोई मानपत्र न दिये जानेपर खेद प्रकट किया। उन्होने कहा, मैं नहीं जानता कि यहाँ कोई खिलाफत-समिति है भी या नहीं। यदि यहाँ कोई खिलाफत समिति है तो उसका मानपत्र न देना खेदजनक है। उन्होने कहा . मुझे बेल्लारीसे अनेक पत्र मिले हैं जिनमें कहा गया है कि वहाँ वकीलो, नगरपालिकाके सदस्यो, हिन्दुओ और मुसलमानोमें मतभेद हे। जबतक एकता और शान्ति नहीं होती, तबतक काग्रेसका काम आगे नहीं बढ सकता। इसलिए मेरा आपसे अनुरोध है कि आप सब अपने-अपने मतभेद मिटा दें और एक हो जायें। आन्ध्र और कर्नाटकके प्रश्नपर जो मतभेद हैं, उनके सम्बन्धमें उन्होने कहा कि यह प्रश्न स्वराज्य मिलनेपर हाथमें लिया जा सकता हे। उन्होने लोगोसे चरखा चलाने और खादी तैयार करनेकी अपील की। उन्होने बेल्लारी जिलेमें वकालत बन्द करनेके सम्बन्धमें लोगोकी बहुत कम, लगभग नहींके बराबर प्रतिक्रिया होनेपर खेद प्रकट किया। उन्होने अन्तमे कहा आधी रात हो जानेपर भी इतने लोग यहाँ आय हैं और मेरे स्वागतमें सम्मिलित हुए हैं, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, ३–१०–१९२१

१०१. मेरी लँगोटी

मैंने अपने जीवनमे जो भी परिवर्तन किये है, सभी किसी-न-किसी महान प्रसगको लेकर ही किये है। और ये परिवर्तन मैंने इतना सोच-विचार कर किये है कि वादमे मुझे शायद ही पछताना पडा हो। फिर, ऐसे परिवर्तन मैंने तभी किये है जब उन्हे किये बिना मै रह ही नही सकता था। ऐसा ही एक परिवर्तन मदुरामे मैंने अपनी पोशाकके वारेमे किया।

इसका विचार मेरे मनमे पहले वारीसालमे आया। खुलनाके अकाल-पीडितोकी ओरसे जब ताना मारते हुए मुझसे कहा गया कि उधर वहाँके लोग अन्न-वस्त्रके अभावमे मर रहे है और इधर आप कपडोकी होली जला रहे है, तो मुझे लगा कि एक लँगोटीसे ही मुझे सन्तोष करना चाहिए और अपना कुरता तथा धोती [खुलनाके लोगोके लिए] डा० रायको भेज देने चाहिए। किन्तु मैंने उस भावावेशपर नियन्त्रण कर लिया। कारण, उसमे अहकारका भाव था। मै जानता था कि उस तानेमे कोई सचाई नही है। खुलनाके लोगोको मदद दी जा रही थी और एक ही जमीदारमे उनके दु खके निवारणकी पूरी सामर्थ्य थी। इसलिए मेरा कुछ करना जरूरी नही था।

दूसरा प्रसग तब आया जब मेरे साथी मुहम्मद अली मेरे ही सामने गिरफ्तार कर लिये गये। उनकी गिरफ्तारीके बाद तुरन्त मै सभामे गया। उसी समय कुरता और टोपी उतार देनेका इरादा किया। लेकिन फिर ऐसा सोचकर कि इसमे दिखावटी-पनका दोष आ जायेगा, मैंने इस बार भी अपने भावावेशपर नियन्त्रण कर लिया।

तीसरा प्रसग मद्रास-यात्राके दौरान आया। लोग मुझसे कहने लगे कि हमारे पास तो पर्याप्त खादी ही नही है। और खादी मिलती है तो खरीदनेको पैसा नही है। "मजदूर लोग अगर अपने विदेशी कपडेकी होली जला दे तो फिर वे खादी लाये कहाँसे?" यह बात मेरे हृदयमे घर कर गई। इस दलीलमे मुझे सत्यका आभास मिला। "गरीब लोग क्या करे?"—इस विचारसे मै आकुल हो उठा। अपना दु ख मैंने मौलाना आजाद सोबानी, श्री राजगोपालाचारी, डा० राजन आदिको सुनाया और बताया कि अब मुझे सिर्फ एक लगोटी पहनकर ही रहना चाहिए। मौलाना साहबने मेरा दु ख समझा। उन्हे मेरा विचार बहुत पसन्द आया। दूसरे साथी चिन्तित हो उठे। उन्हे लगा कि इतने बडे परिवर्तनसे तो लोगोमे घबराहट छा जायेगी। कुछ लोग इसे समझ नही पायेगे, कुछ लोग मुझे पागल मानने लगेगे, और मेरा अनुकरण करना सभीको असम्भव नही तो कठिन अवश्य लगेगा।

मै चार दिनोतक इन विचारोका मथन करता रहा और दलीलोपर गौर करता रहा। अपने भाषणोमे लोगोसे कहने लगा कि अगर आपको खादी न मिले तो आप सिर्फ लगोटी पहनकर ही रहिए, किन्तु विदेशी कपडेको तो उतार ही फेंकिए। लेकिन ऐसा कहते हुए मुझे बडा सकोच होता था। जबतक मै धोती-कुरता वगैरह पहन रहा था तबतक मेरी इस बातमे कोई जोर नही आ सकता था।

फिर, मद्रासमे मैंने स्वदेशीका जो अभाव देखा उससे भी मुझे अकुलाहट हुई। लोगोमे प्रेम वहुत देखा, लेकिन वह प्रेम मुझे छूँछा लगा।

मै फिर परेशान हो उठा, फिर साथियोसे चर्चा की। उनके पास कोई नई दलील तो थी नही। इस वीच सितम्वरका अन्त निकट दिखने लगा। इस महीनेके अन्ततक वहिष्कारका कार्यक्रम तो पूरा होना ही चाहिए—यह कैसे हो? या मै इसके लिए क्या करूँ?

ऐसा सोचते हुए हम २२ तारीखको मदुरा पहुँचे। मैंने निश्चय कर लिया और इस कठिनाईका यह हल निकाला कि कमसे-कम अक्तूवरके अन्ततक तो मै सिर्फ लगोटी पहनकर ही रहूँगा। दूसरे दिन, प्रात काल मदुरामे वुनकरोकी सभा थी। उसमे मै मात्र एक लगोटी ही पहन कर उपस्थित हुआ। आज यह तीसरी रात है।

मौलाना साहवको तो यह वात इतनी पसन्द आई है कि उन्होने भी अपनी पोशाकमे, शरीअतके मुताविक जितना सम्भव था, उतना परिवर्तन कर लिया है। पाजामेकी जगह एक छोटी लुगी धारण की है और कुहनीतक के आस्तीनका कुरता पहना है। नमाज पढते समय सिरपर कुछ होना जरूरी है, इसलिए वे सिर्फ उसी समय टोपी पहनते है।

दूसरे सभी साथी शान्त है। मद्रासके आम लोग इस परिवर्तनको आश्चर्यसे देख रहे है।

लेकिन अगर सारा भारत मुझे पागल कहे तो उससे क्या? अथवा हमारे साथी मेरा अनुकरण न करे तो भी इम वातसे क्या फर्क पडता है? यह काम मैंने साथि-योके अनुकरण करनेके लिए तो किया नही है। इसका उद्देश्य सिर्फ जनसाधारणको धीरजका रास्ता दिखाना है, और अपना रास्ता साफ करना है। अगर मै खुद लँगोटी पहनकर न रहूँ तो दूसरोसे ऐसा करनेको कैसे कह सकता हूँ? भारतमे लाखो लोग नगे घूमते है। फिर यहाँ मुझे क्या करना चाहिए? जो भी हो, सवा महीने लँगोटी मात्र पहनकर रहनेका अनुभव क्यो न प्राप्त करूँ? मैंने अपने वश-भर कुछ उठा नही रखा, इतना सन्तोप तो प्राप्त करूँ?

ऐसा सोचकर मैंने यह कदम उठाया है। मेरे ऊपरसे तो वोझा उतर गया है। यहाँकी आवोहवामे वर्पके आठ महीने कुरता वगैरह पहननेकी तो जरूरत ही नही लगती। उसमे भी मद्रासके वारेमे तो हम कह सकते है कि यहाँ वारहो महीनोमें कभी सर्दीका मौसम आता ही नही। और मद्रासमे प्रतिष्ठित लोग भी धोतीके अलावा और कपडा वहुत कम पहनते है।

भारतके करोडो किसानोकी पोशाक तो लँगोटी ही है। वे इससे कुछ अधिक नही पहनते, ऐसा मैंने सव जगह देखा है।

यह सव मै सिर्फ इसी इच्छासे लिख रहा हूँ कि पाठक मेरे मनका ताप समझे। मै ऐसा नही चाहता कि मेरे साथी अथवा पाठकगण सिर्फ लँगोटी ही पहन कर रहे। लेकिन यह अवश्य चाहता हूँ कि वे सव विदेशी कपडेके वहिष्कारका पूरा अर्थ

समझे और वहिष्कार तथा खादीके उत्पादनके लिए उनसे जितना वन पड़े करे। वे समझे कि स्वदेशी ही सर्वस्व है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २–१०–१९२१

१०२. बहनोंसे

[२ अक्तूबर, १९२१]

प्यारी वहनो,

मै यह विचार कर रहा हूँ कि आज अपने जन्म-दिवसपर मै आपको क्या सन्देश भेजूं। मेरे जन्मदिवससे आप वहनोका क्या सम्वन्ध हो सकता है? मुझे भारतकी स्त्रियाँ क्यो जानती है? इस प्रश्नपर विचार करता हूँ तव मुझे लगता है कि वे मुझे, उनके प्रति मेरे प्रेमके कारण जानती है। वे यह बात जानती है कि मुझे स्त्रियोकी शील-रक्षा प्यारी लगती है और मैंने उन्हे उसका सवसे आसान और अच्छा उपाय वताया है। यह उपाय स्वदेशी है। स्वदेशी धर्मका पालन करनेमे जितनी सहायता स्त्रियाँ कर सकती है उतनी पुरुष नही कर सकते। जिस समय भारतकी पुत्रियाँ सूत कातकर अपना और दूसरोका शरीर ढका करती थी उस समय भारत चाहे निर्धन रहा हो, किन्तु वह आजकी तरह विलकुल कगाल न था। उस समय भारतीय स्त्रियाँ अपने सतीत्वकी रक्षा जैसे कर सकती थी वैसे आज नही कर सकती, यह मै देख सकता हूँ। इसलिए इसी बातको मै वहनोके सामने आज फिर रखता हूँ।

आप सब बहने नित्य कमसे-कम एक घटा सूत अवश्य काते। सब वहने सादगीसे रहना अपना धर्म समझे और उसीको अपना शृगार माने एव कन्याएँ जो सूत काते उसीसे बनाये गये कपडोको पवित्र माने और उसीसे अपने अग ढके।

मै इसीमे भारतके लिए स्वराज्य देखता हूँ और चाहता हूँ कि इसी तरह बहने भी देखे।

यदि हम किसी मनुष्यके प्रति अपना सम्मान और प्रेम प्रकट करना चाहते हैं तो उसका सर्वोत्तम उपाय यह है कि हम नित्य उसका अनुकरण करे।

मै भारतसे जो-कुछ माँग रहा हूँ उसका उद्देश्य केवल एक ही है, और वह यह है कि भारतमे सत्ययुग आ जाये।

हमे भारतमे जो काम करने है उनमे स्त्रियोकी शिक्षाका काम पहला है। यदि हम स्त्रियोको शिक्षा दे तो वे अपने शील–सम्मानकी रक्षा कर सकती है। इस तरहकी शिक्षा देनेके लिए वडी विद्वत्ता की नही, केवल चरित्रकी जरूरत है।

आज आपने मेरे प्रति जो प्रेम प्रकट किया है उसके आधारपर मै अब आपसे यह प्रार्थना करता हूँ कि आप मेरे ऊपर ऐसा प्रेम भी प्रकट करे जिससे यहाँ आप फिर सत्ययुग ला सके। भारत अवश्य ही अपनी रक्षा स्वय कर सकता है। यदि हम

अपने देशमे वनाये गये कपडेका ही व्यवहार करेगे तो यह निश्चय है कि हम कुछ ही दिनोमे अपने देशकी सुरक्षाकी व्यवस्था कर लेगे। इसीलिए मै चरखेके प्रचारका उद्योग कर रहा हूँ। चरखा चलानेसे स्त्रियोके शीलकी रक्षा होती है। इसके अतिरिक्त और कोई ऐसा धन्धा नही है जिसे करोडो वहने घर बैठे-वैठे कर सके और उसमें अपने अवकाशके समयका उपयोग कर सके। सूत कातनेमे कोई अधिक ज्ञान की भी जरूरत नही है। भारतके लोगोको स्वावलम्वी वनना सीखना चाहिए। जव भारतमे वीर स्त्री-पुरुष पैदा होगे तभी हम स्वावलम्वी हो सकेगे। हमें सत्याग्रहकी वीरता दिखानी है। इसमे शस्त्रकी वीरताकी अपेक्षा अधिक वीरताकी आवश्यकता होती है। यदि हममे यह वीरता आ जाये तो हम स्वतन्त्र हो ही जाये। इससे आप वाहर जानेवाले करोडो रुपयोको भारतमे ही वचा सकती है और अपनी वहनोकी रक्षा भी कर सकती है।

मैंने आपसे जो प्रार्थना की है यदि वह आपको उचित लगती हो तो आप अपने देशके लिए निम्न कार्य करनेके लिए तैयार हो जाये

१ आप गरीव लोगोमे घूमें और जहाँ अन्न-वस्त्रका कष्ट देखे वहाँ उनमे चरखा दाखिल करे, उनकी भुखमरीको दूर करे और उन्हे स्वावलम्वी वनायें।

२ जहाँ-जहाँ गन्दगी हो, रोगग्रस्त स्त्री-वच्चे हो, जहाँ लोग हीन दशामे दिखाई दे वहाँ आप लोगोको ऐसे साधन दे जिनसे वे सयममे रहकर स्वच्छ, स्वस्थ और शुद्ध जीवन विता सके और इस तरह आप उन्हे उनकी मौजूदा स्थितिका ठीक भान करायें।

३ जहाँ-जहाँ ज्ञान-प्रचारकी आवश्यकता हो या लोगोमे ज्ञान प्राप्तिकी अभिलाषा हो वहाँ आप उनको ज्ञान देनेके जरूरी साधन जुटाये और स्वय भी उनमे ज्ञान-प्रचारका प्रयत्न करे।

इन कार्योको करनेके लिए पहले आत्मशुद्धि, आत्मविकास, सवके प्रति भगिनी-भाव और विनयशीलताकी आवश्यकता है।

यदि भगिनी समाज[1] इन कार्योको करनेका निश्चय कर ले तो उसके सम्मुख कार्यका वहुत ही सुन्दर और फलदायी क्षेत्र पडा हुआ है। यह कार्यक्षेत्र इतना विस्तीर्ण है कि यदि उसमे ठोस कार्य किया जाये तो इससे अधिक वडी प्रवृत्ति उसके सम्मुख कोई दूसरी नही हो सकती और इससे आप "होमरूल" शब्दका उच्चारण किये विना ही उसकी भारी सेवा कर सकती है। जव छापेखाने नही थे, भाषण देनेकी सुविधा भी कम थी, जव हम आजकी तरह २४ घटेमे हजार मीलके वजाय २४ मीलकी यात्रा भी मुश्किलसे कर सकते थे तव अपने विचारोके प्रचारका एक ही मुख्य साधन माना जाता था — यह साधन था अपना आचरण। कहा जाता है कि उसका असर वहुत अधिक होता था। आज तो हम वायुके वेगसे चलते है, व्याख्यान देते है, लेख लिखते है तिसपर भी हम जो-कुछ सोचते है उसपर लोगोको अमल करानेमे असमर्थ रहते है। हर दिशासे लगभग निराशाका स्वर सुनाई देता है। मुझे तो लगता है कि पहलेकी

१ वम्वईकी एक समाजसेवी सस्था।

तरह आज भी अपने कार्यके द्वारा लोगोपर हम जितना प्रभाव डाल सकते हैं उतना भाषणो और लेखोसे नही डाल सकते। यह समाज मुख्यत मौन रहकर कार्य करे ऐसी आपसे मेरी नम्र प्रार्थना है।

हम इतनी सारी पुस्तके पढते हैं किन्तु जो-कुछ पढते हैं उसमें से कोई बात आचरणमें नही लाते तो सारा पढना व्यर्थ है। इसलिए ढेरकी-ढेर पुस्तके पढनेकी बजाय आप थोडा पढे और उसको अपने आचरणमें लानेका प्रयत्न करे।

ससारमे शास्त्र अनेक हैं। मैं उन सबके नाम गिनाना नही चाहता किन्तु यह माननेमें कोई हानि नही है कि आप किसी शास्त्रके जितने अशको अपने आचरणमें उतारती हैं, आपने उस शास्त्रका उतना ही रहस्य प्राप्त किया है।

हम बहुत-सी प्रतिज्ञाएँ करते हैं, किन्तु उनका पालन करनेका ध्यान नही रखते, यह उचित नही है। हम जो भी प्रतिज्ञा करे हमें उसका पालन सचाईसे करना चाहिए। चाहे हमें अपने प्राणोका त्याग करना पडे किन्तु हमें अपनी प्रतिज्ञाका भग नही करना चाहिए।

आप अपने जीवनको आदर्शमय बनाये। रोममें तो आदर्श बदल गये हैं। परन्तु अभी भारतने अपने आदर्श नही भुलाये हैं। हम हिन्दू हो चाहे मुसलमान, सभी अपने पूर्वजोके उत्तराधिकारी हैं। और हम अपने इस उत्तराधिकारकी रक्षा तभी कर सकेगे जब हम जीवनके आदर्शोको सतत अपने लक्ष्यमे रखे। हमारे पूर्वजोमें सात्विक प्रवृत्ति प्रधान होती थी, किन्तु आज तो वह नष्ट हो गई जान पडती है। जिधर देखते हैं उधर ही लोगोके जीवनमें दम्भ दिखाई देता है। सभी लोग व्यवहारमें पग-पगपर असत्य बोलने लगे हैं। हमें अपना यह दोष दूर करना चाहिए और अपना जीवन सत्यमय बनाना चाहिए।

आपका विनीत भाई,
मोहनदास करमचन्द गाधी

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ६-१०-१९२१

१०३. धर्म या अधर्म ?

कभी-कभी तो ऐसे लोग भी टेढ-मेढे सवाल पूछ बैठते है और अपने कडुवे अनुभव पेश करते है जो इस युद्धमें हमारी सफलता चाहते है और जो असहयोगके भी कायल है। ऐसे सवाल मुझे चौका देते है, पर साथ ही सावधान भी कर देते है। अपने एक मित्रके ऐसे एक पत्रका सार नीचे देता हूँ। उन्होने यह पत्र बडे प्रेमके साथ लिखा है। ये देशके हितचिन्तक है और वीर है। धर्म उन्हे प्रिय है। साथ ही, उन्हे मनुष्यके स्वभावका विस्तृत अनुभव है। उनके पत्रका आशय जितना मुझे याद रह गया है, अपनी भाषामे देता हूँ —

"आपकी नीयतके विषयमे तो किसीको जरा भी शक नही। आपके साधन भी निर्दोष है। परन्तु विद्यार्थियोसे जो आपने स्कूल-कालेज छुडवाये है, यह काम क्या आपको ठीक एव सराहनीय मालूम होता है? क्या इसका नतीजा बुरा नही होगा? मै तो आज ही देख रहा हूँ कि इसका बुरा असर हुआ है। आजादीका सबक सिखानेसे उनका जी घर-बारकी तरफसे उचट गया है और माँ-बापके प्रति लडकोका आदरभाव कम हो गया दिखाई देता है। स्वराज्य तो मिले लेकिन मर्यादा-धर्मका लोप हो जाये तो ऐसा स्वराज्य किस कामका? भला बच्चोको चरखा कातना कही शोभा देता है? हाँ, बडे हो जानेपर वे जो जी चाहे सो करते रहे। यदि लडके माँ-बापके साथ गुस्ताखीसे पेश आते है तो वे धर्म-भ्रष्ट हुए बिना तो रह ही नही सकते।

"असहयोगियोके प्रति आपका अच्छा खयाल होना तो स्वाभाविक ही है। पर कही इसमे आपको भ्रम तो नही हो रहा है? क्या आपको यह विश्वास है कि सब लोग आपके ही जैसे है? मुझे तो यह दिखाई देता है कि इनमे बहुतेरे लोग ढोगी है, मतलबी और घमण्डी है। अगर भले-भले आदमियोको खोकर आप उच्छृखल लोगोको अपने साथ लिये हुए हो तो क्या आप यह पसन्द करेगे? काश, मै आपको अपनी आँखे दे सकता और यह दिखा सकता कि दुनियाकी तमाम सफेद चीजे दूध नही होती।

"आपकी विजय कामनासे प्रेरित होकर ही मैने यह शका की है और आपका समय लिया है।"

लेखकने अपने पत्रमें जितनी सरलता और सभ्यतासे काम लिया है उसे मै यहाँ पूरी तरह प्रकट नही कर सका हूँ। उन्होने महज प्रेमवश होकर ही यह पत्र लिखा है। और ऐसे पत्र मुझे हमेशा इस पसोपेशमे डाल देते है कि कही सचमुच मर्यादाका लोप तो नही हो रहा है?

मुमकिन है, कुछ लडके गुस्ताख हो गये हो। जब 'गीता'के नामपर बम फेके गये है तब मेरे वचनोका अनर्थ हो, तो इसमे अचम्भेकी क्या बात है? पर मुझे तो यकीन है कि स्कूल-कालेजोके बहिष्कारके इस आन्दोलनका फल, समष्टि रूपसे अच्छा ही हुआ है। विचार तो अच्छा ही था। मुझे इस बातका पूरा निश्चय है कि इस

राक्षसी राज्यके स्कूलोमे पढना पाप है। सोलह सालसे कमके लडकोके लिए तो यह बात थी ही नही, और मेरी धारणा है कि सोलह सालसे ऊपरकी उम्रके युवकमे निर्णयशक्ति जागृत हो जाती है।

एक और भी खयाल मेरे दिमागमे चक्कर मारा करता है। क्या आजकल माँ-बाप यह समझते है कि उनका धर्म क्या है? भला जहाँ माँ-बाप खुद ही पतित हो वहाँ लडकोका धर्म क्या होगा? जहाँ खुद माँ-बाप ही व्यभिचारी हो और दुर्व्यसनी हो तो भला उनके जवान लडके-लडकियोको क्या करना चाहिए? गुलामोके लडके किस रास्तेपर चले?

ऐसे विषयोमे मर्यादा-शास्त्रका एकागी अर्थ करनेसे सिवा विषम परिणामके और क्या हाथ आ सकता है? घूसखोर माँ-बापकी औलादको घूसके पैसेपर अपना निर्वाह करना चाहिए या उसका त्याग? मान लीजिए कि हिन्दू माँ-बाप अपना धर्म छोड दे तो क्या उनके लडकोको भी अपना धर्म छोड देना चाहिए?

इस जमानेमे हमे जिस प्रकार राजभक्तिकी एक सीमा बाँधनी पडती है उसी प्रकार पितृभक्तिकी भी हद बाँध देनेपर ही काम चल सकता है।

जहाँ राजा व्यभिचारी हो, जहाँ राजा प्रजाको पीडित करता हो, जहाँ वह प्रजाके धन-सम्पत्तिपर तरह-तरहके भोगविलास करता हो, रक्षकके गुणको छोडकर भक्षक हो जाता हो, वहाँ राजभक्ति अगर पाप न मानी जाये तो फिर पुण्य ही पाप हो जायेगा। राजभक्ति तो रामभक्तिको ही कह सकते है, रावण-भक्तिको कदापि नही। हाँ, दशरथ वन जानेकी आज्ञा दे और राम खुशीसे जाये, यह तो सुसगत है, परन्तु हिरण्यकशिपु अपनी गद्दी दे और प्रह्लाद उसपर बैठ जाये तो धर्मका लोप ही होगा।

बापके कुएँमे तैरना तो चाहिए, पर डूब मरना तो न चाहिए।

इस सग्राममे युवकोको स्वच्छन्दताका पाठ नही पढाया गया है। जिन युवकोको मर्यादाका ज्ञान है, जो दु खोको सहन कर सकते है सिर्फ उन्हीको यह कहा गया था कि इस ज्ञानके मिलते हुए भी तुम सरकारी स्कूल-कालेज छोड दो। ऐसे लडके भी बहुत है जो अपने माँ-बापको खुश रखनेके लिए ही सरकारी मदरसोमे पडे हुए है। अपने माँ-बापकी इच्छाको अमान्य करके निकलनेवालोकी सख्या तो कम ही है और उनमे भी ऐसे लडकोकी सख्या तो और भी कम है जो बादमे स्वेच्छाचारी हो गये है।

अपनी अन्तरात्माके नामपर स्वच्छन्दताकी उपासना करनेवाले वीरोकी इस दुनियामे कोई कमी नही है। वे तो धर्मको बट्टा लगायेगे ही। परन्तु इससे क्या हमे अन्तरात्माका नाम लेते हुए डरना चाहिए? मुझे इस बातमे जरा भी सन्देह नही है कि बालकोको चरखा सौपकर मैने जनताकी बडी भारी सेवा की है। इसे तो मै एक नित्य कर्त्तव्य मानता हूँ। हमने तो बालकोको केवल बौद्धिक शिक्षण देकर उनके साथ अत्याचार किया है। शरीरके लालन-पालनमे ही हमारा बहुत-सा समय जाता है। तब उसके पोषणके साधनोकी तालीम भी हमे देनी ही चाहिए। इस तालीमकी अवहेलना करके हमने बडा पाप किया है। देश अब उसी हालतमे सुखी होगा जब हम फिरसे वैसी शिक्षा देने लगेगे। औद्योगिक शिक्षा देना हमारा कर्त्तव्य है। और चरखेके द्वारा यह शिक्षा देनेसे हमारे कई काम बन जायेगे।

लगोटीमें

इन मित्र महाशयकी दूसरी शकासे चित्त चिन्तित हो जाता है। यह सच है कि इस धार्मिक युद्धमे अगर पाखण्ड अपनी जड जमा ले तो धर्म कलकित होगा और जनताकी भी हानि होगी। अगर ऐसा हुआ तो फिर लोग या तो धर्मके नामसे कोसो दूर भागेगे या धर्मान्धिताको ही धर्म मानकर बैठ रहेगे।

मैं यह जरूर मानता हूं कि इस आन्दोलनमे वहुतेरा पाखण्ड घुस गया होगा। मैं यह भी जानता हूँ कि कुछ पाखण्डी लोग असहयोगके नामपर अपना स्वार्थ साधनेके लिए निकल पडे है, पर फिर भी मेरा यह विश्वास है कि इस आन्दोलनमे पाखण्डने प्रधान पद ग्रहण नही किया है। अगर पाखण्ड प्रधान पद ले ले तो हमारी स्थिति आजसे भी अधिक खराब हो जायेगी क्योकि उससे हमारी भीरुताको पोषण मिलेगा। जहाँ डर है वही दम्भके लिए गुजाइश है। पापकी जोखिम उठानेसे डरनेवाला पापी पुण्यवानका वेश बनाकर रहता हे और दूना पाप कमाता है। अपनी नास्तिकता-को छिपानेके लिए, अपना पेट पालनेके लिए लम्वा तिलक लगाता है और उतना चन्दन नष्ट करता है, इतना ही नही, पापमे ओर भी वृद्धि करता है। ऐसे लोग इस आन्दोलनमें प्रवेश न कर सके इसके लिए एक मनुष्य जितने प्रयत्न कर सकता है, उतने मैं समझता हूँ, किये गये है, और इसीलिए मैंने अपनी आखिरी स्वतन्त्रता कायम रख छोडी है। जव मैं देखूंगा कि अरे, अव तो चारो ओर ढोग-ही-ढोग है तभी मैं इस आन्दोलनसे जी छोडकर भाग निकलूंगा, क्योकि पाखण्डी मनुष्य असहयोगी नही होता और मैं तो असहयोगियोका दास हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २–१०–१९२१

१०४. टिप्पणियाँ

मद्रासी

मुझे अपनी मद्रासकी यात्रासे कुछ निराशा-सी हुई हे। मुझे मद्रासियोसे वहुत प्रेम है। मुझे दक्षिण आफ्रिकामे उनका जो मीठा अनुभव हुआ उसको मैं भुला नही सकता। उनमे मुझे कष्ट महनका सामर्थ्य वहुत दिखाई दिया। किन्तु स्वदेशीके प्रचारमे मद्रास पिछड गया हे। मुझे मद्रासकी स्त्रियोमे स्वदेशीका प्रचार वहुत कम दिखाई दिया। फिर भी यदि मद्रासके लोग जाग जायें तो वहुत-कुछ कर सकते हैं। मद्रासकी स्त्रियाँ वहुत क्रियाशील है, इस वातमे गुजरातकी स्त्रियाँ उनकी वरावरी नही कर सकती। मद्रासकी स्त्रियोमें समझदारी वहुत है। उनमे जो कला है वह भारतकी अन्य स्त्रियोमे नही है। वहाँकी स्त्रियोमें एक निकम्मी वस्तुको भी उपयोगी वना लेनेकी क्षमता है।

मद्रासमे कार्यकर्त्ता नही है, ऐसा भी नही है। वहाँ श्री राजगोपालाचार्य-जैसे वुद्धिमान, प्रामाणिक और चतुर कार्यकर्त्ता मौजूद है, उनके जैसे कार्यकर्त्ता हम लोगोमे

बहुत कम है। उन्होने हमारी इस लडाईका रहस्य भली-भाँति समझ लिया है और सकटके समयमे भी वे अपनी दृढता और धीरज कायम रख सकते है।

फिर भी मुझे मद्रासमे निराशा कैसे हुई? मुझे इसके दो कारण दिखाई देते है। इसका एक कारण तो यह है कि मद्रासमे अग्रेजी भाषाका प्रभाव इतना अधिक है कि अग्रेजीके जानकार मद्रासी तमिलकी बहुत कम परवाह करते है। बगालियोको भी अग्रेजीसे बहुत मोह है, किन्तु बगालियोने अपनी भाषाका त्याग नही किया है। उन्होने बगला भाषाका खूब विकास किया है और इस समय बगला भाषामे जितना साहित्य है उतना भारतकी किसी अन्य भाषामे शायद ही है। उतना साहित्य किसी भाषामे है तो शायद उर्दूमे है। मद्रासियोने तो तमिल भाषाको लगभग छोड ही दिया है। इसका नतीजा यह हुआ है कि तमिल भाषाकी उन्नति बहुत कम हुई है, इतना ही नही, बल्कि अग्रेजीके जानकार मद्रासियो और केवल तमिल जाननेवाले मद्रासियोके बीच बडा अन्तर पड गया है। श्री राजगोपालाचार्य और उनके साथी इस अन्तरको मिटानेके लिए बहुत प्रयत्न कर रहे है, किन्तु उन्हे इस पुलके बनानेमे देर तो लगेगी ही।

मुझे निराशाका दूसरा बडा कारण यह दिखाई देता है कि मद्रासियोमे धर्मके लिए भक्तिभाव होनेपर भी धर्मान्धता इतनी अधिक आ गई है कि वहाँ धर्मका बाह्य रूप मात्र रह गया है और धर्मका लोप हो गया है। मद्रासमे अन्त्यजोपर जितना अत्याचार किया जाता है उतना अन्यत्र शायद ही कही किया जाता हो। वहाँ ब्राह्मणो और अब्राह्मणोमे जितना भेदभाव है, उतना दूसरी जगह शायद ही कही हो। फिर भी विभूति, चन्दन और कुकुमका जितना उपयोग मद्रासमे किया जाता है उतना किसी दूसरी जगह शायद ही किया जाता होगा। मद्रासमे जितने देवमन्दिर है उतने शायद ही कही हो। मन्दिरोपर धन व्यय करना मद्रास ही जानता है। इससे वहाँ एक ओर जहाँ विद्वानोमे नास्तिकता आ गई है और जिसके फलस्वरूप वे निराशावादी हो गये है वहाँ दूसरी ओर आस्तिकोमे केवल अन्धकार फैला हुआ है।

किन्तु जहाँ ऐसी स्थितियाँ होती है वहाँ अन्धकार दूर होते ही प्रकाश होनेमे भी देर नही लगती। ज्यो ही सामान्य वर्गके लोगोको अपने अज्ञानकी प्रतीति होगी, वह एक क्षणमे अपने-आप नष्ट हो जायेगा।

इसीलिए मुझे निराशामे भी आशाकी किरणे छिटकती दिखाई देती है, क्योकि मुझे काग्रेसके कार्यकर्त्ताओने बताया है कि वहाँ लोग उनके प्रयत्न न करनेपर भी चरखा चलाने लगे है। जहाँ उन्होने कोई प्रयत्न नही किया है वहाँ भी खादी तैयार होने लगी है और हजारो लोग खादीकी टोपियाँ भी पहनने लगे है। काग्रेसके कार्यकर्त्ता स्वय तो प्राय खादी ही पहनते है। यदि मुझसे कोई यह पूछे कि मै अपने मद्रासके दौरेके अनुभवसे क्या निष्कर्ष निकालता हूँ तो मुझे कहना चाहिए कि मैने मद्रासके अनुभवके बाद भी इस वर्षमे स्वराज्य पानेकी आशा नही छोडी है।

जो धर्मकी दृष्टिसे लडता है वह आशा छोडता ही नही। जिसका कार्य शुद्ध है और जिसके साधन भी शुद्ध है उसे मानना चाहिए कि सफलता अवश्य मिलेगी। निर्धारित समयपर न मिले तो वह इतना ही कहेगा, मेरे अनुमानमे कही भूल थी, किन्तु इस मार्गसे सफलता तो मिलेगी ही।

मद्रासमें गुजराती

मुझे जहाँ-जहाँ गुजराती दिखाई देते है वहाँ-वहाँ मै यह देख रहा हूँ कि वे इस समय गुजरातकी कीर्ति बढा रहे है। वे जहाँ रहते है वहाँ लोगोमे अधिकसे-अधिक घुलते-मिलते है। उन्हे जितना धन देना चाहिए उतना धन देते है और यथाशक्ति असहयोगका प्रचार करते है। मै दूसरे लोगोसे पूछता हूँ तो वे भी उनके सम्बन्धमे अच्छी ही राय जाहिर करते है। गुजराती स्थानीय झगडोसे अलग रहते है। इस प्रकार वे सेवाधर्मको ही प्रधानता देते है। मेरे ऊपर गुजरातियोकी छाप ऐसी ही पडी है। दक्षिण आफ्रिका और पूर्व आफ्रिकासे भी गुजराती धन भेज रहे है और वहाँके आन्दोलनोमे भी भाग ले रहे है। इन गुजरातियोमे मै गुजराती-भाषी भारतीयो और मुसलमानोको भी गिन लेता हूँ, क्योकि मै देखता हूँ कि गुजराती भाषी मेमन भी इस दिशामे कुछ-न-कुछ प्रयत्न करते रहते है। मै जहाँ-कही इक्के-दुक्के पारसियोको भी देखता हूँ वहाँ मुझे उनके प्रेमका परिचय मिलता है। मुझे भारतके सुदूर उत्तर-पूर्वमे स्थित असममे भी यही देखनेको मिला है। वहाँ एक ही पारसी थे, किन्तु उन्होने भी असहयोगमे अपनी सहानुभूति प्रकट करनेमे कोई कमी नही रखी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २–१०–१९२१

१०५. एक ज्ञापनका मसविदा

४ अक्तूबर, १९२१

नीचे हस्ताक्षर करनेवाले हम लोगोका खयाल है कि बम्बई सरकारने तारीख

को अली-बन्धुओ और दूसरे लोगोके बारेमे जो विज्ञप्ति निकाली है उसमे ऐसे सिद्धान्त दिये है जो मतप्रकाशनकी समस्त स्वतन्त्रताके विरुद्ध है, और हम यह कहना चाहते है कि नागरिकोके लिए सरकारकी सेवा करना, चाहे वह सैनिक विभागमे हो या असैनिक विभागमे, उचित है या नही, इस सम्बन्धमे बिना किसी प्रतिबन्धके अपना मत व्यक्त करना प्रत्येक व्यक्तिका सहज अधिकार है।

हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले लोग अपनी यह सम्मति प्रकट करते है कि जिस सरकारकी व्यवस्थाके अन्तर्गत भारतका आर्थिक, नैतिक और राजनैतिक पतन हुआ है और जिस सरकारने सैनिको और पुलिसके सिपाहियोका उपयोग राष्ट्रीय आकाक्षाओ-को कुचलनेके लिए किया है, उदाहरणार्थ रौलट कानूनके विरुद्ध आन्दोलनके समय, और जिसने सैनिकोका उपयोग उन अरबो, मिस्रियो और तुर्कोके विरुद्ध उनकी स्वतन्त्र-ताको कुचलनेके लिए किया है जिन्होने भारतकी कोई हानि नही की है। सरकारी तन्त्रमे असैनिक अधिकारी और खास तौरसे सैनिकके रूपमे सेवा करना, मुसलमान धार्मिक नेताओ द्वारा घोषित इस्लाम धर्मके विरुद्ध ही नही, बल्कि भारतीयोके राष्ट्रीय स्वाभिमानके भी विरुद्ध है।

हमारा यह भी मत है कि प्रत्येक भारतीय सैनिक और असैनिक कर्मचारीका कर्त्तव्य है कि वह अपनी नौकरीसे त्यागपत्र दे दे और अपनी जीविकाका कोई दूसरा सम्मानजनक साधन ढूंढ ले।

और इस लक्ष्यको ध्यानमे रखकर हम सरकारी कर्मचारियोको यह सुझाव देते है कि वे सूत कातना और कपडा बुनना सीख ले। इससे राष्ट्रीय हित-साधनके साथ-साथ वे ईमानदारीसे और सम्मानजनक रूपसे अपनी जीविका कमा सकेगे।

हम समस्त देशसे अनुरोध करते हैं कि वह विदेशी कपडेके बहिष्कारका काम पूरा करे और सूत कातने और कपडा बुननेका काम हाथमे ले एव इन साधनोसे खद्दरके उत्पादन-कार्यको प्रोत्साहन दे।

विदेशी कपडेका पूर्ण बहिष्कार करने और हाथसे सूत कातने और कपडा बुननेसे हर आदमी सरकारी नौकरी किये बिना अपनी जीविका कमा सकेगा और तब काग्रेस, सैनिक और असैनिक कर्मचारियोको नोकरी छोडनेके लिए कह सकेगी और यहाँतक कि सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन भी आरम्भ कर सकेगी?[1]

अग्रेजी प्रति (एस० एन० ७६३३) की फोटो-नकलसे।

१०६. एक ज्ञापन

[बम्बई
साय ६ ५०, ४ अक्तूबर, १९२१][2]

बम्बई सरकारकी १५ सितम्बर, १९२१ की विज्ञप्तिमे बताये कारणोसे अलीबन्धुओ तथा अन्य लोगोपर चलनेवाले मुकदमेको ध्यानमे रखते हुए हम, नीचे हस्ताक्षर करनेवाले लोग, अपनी-अपनी निजी हैसियतसे बोलते हुए कहना चाहते हैं कि हर व्यक्तिका यह जन्मसिद्ध अधिकार है कि वह नागरिको द्वारा सरकारके सैनिक अथवा असैनिक किसी भी विभागके लिए, अपनी सेवाएँ अर्पित करने या उसकी सेवामे रहनेके औचित्य-अनौचित्यके बारेमे बिना किसी सयम-सकोचके अपना विचार प्रकट करे।

हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले लोगोके विचारसे यह बात किसी भी भारतीयकी राष्ट्रीय प्रतिष्ठाके खिलाफ है कि वह एक ऐसी शासन-प्रणालीके अधीन असैनिक और खासकर सैनिक सेवा करे जिस प्रणालीने भारतको आर्थिक, नैतिक तथा राजनीतिक दृष्टियोसे पतनके गर्तमे गिरा दिया है, जिसने सैनिको तथा पुलिसका उपयोग राष्ट्रीय आकाक्षाओका दमन करनेके लिए किया हो, जैसा कि रौलट अधिनियमके खिलाफ होनेवाले आन्दोलनके समय किया, और जिसने [भारतीय] सैनिकोका उपयोग अरबो, मिस्रियो, तुर्को और जिन दूसरे राष्ट्रोने भारतका कुछ भी नही बिगाडा उन सबकी स्वतन्त्रताका अपहरण करनेके लिए किया है।

१. बादके दो अनुच्छेद साधन-सूत्रमें काट दिये गये हैं।
२. ज्ञापनके मसविदेकी फोटो-नकलके आधारपर।

हमारा विचार यह भी है कि हर भारतीय सैनिक और असैनिक कर्मचारीका कर्त्तव्य है कि वह सरकारसे सारे सम्बन्ध तोड़ ले और अपनी जीविकाका कोई और साधन ढूंढे।

मो० क० गांधी

अबुल कलाम आजाद (कलकत्ता)
अजमल खाँ (दिल्ली)
लाजपतराय (लाहौर)
मोतीलाल नेहरू (इलाहाबाद)
सरोजिनी नायडू (बम्बई)
अब्बास तैयबजी
एन० सी० केलकर
विट्ठलभाई झवेरभाई पटेल
वल्लभभाई झवेरभाई पटेल (अहमदाबाद)
मुकुन्दराव रामराव जयकर (बम्बई)
डी० वी० गोखले (पूना)
एस० जी० बैंकर
जवाहरलाल नेहरू (इलाहाबाद)
गंगाधर बी० देशपाडे (बेलगाँव)
लक्ष्मीदास तेरसी
उमर सोबानी
जमनालाल बजाज
एम० एस० अणे (अमरावती)
एस० ई० स्टोक्स (कोटगढ, शिमला)
मुख्तार अहमद अन्सारी (दिल्ली)
खलीकुज्जमाँ (दिल्ली)
के० एम० अब्दुल गफूर (दिल्ली)
अब्दुल बारी (लखनऊ)
कृष्णजी नीलकण्ठ (बेलगाँव)
च० राजगोपालाचारी (मद्रास)
कोंडा वेंकटप्पैया (गण्टूर)
जी० हरिसर्वोत्तम राव (गण्टूर)
अनसूया साराभाई
जितेन्द्रलाल बनर्जी
मुशीर हुसेन किदवई (दिल्ली)
श्यामसुन्दर चक्रवर्ती (कलकत्ता)
राजेन्द्रप्रसाद (पटना)
आजाद सोबानी (लखनऊ)
हजरत मोहानी (कानपुर)
महादेवभाई हरिभाई देसाई
बरजोरजी बहरामजी भरूचा
याकूब हसन
बी० एस० मुंजे (नागपुर)
जयरामदास दौलतराम
एस० आर० चोलकर (नागपुर)
वी० वी० दास्ताने (भुसावल)
अहमद हाजी सिद्दिक खत्री (बम्बई)
गुड्डुर रामचन्द्रराव (आन्ध्र)
डी० एस० विजयराव (लाहौर)
वी० एल० सुब्रामैया (आन्ध्र)
मियाँ मुहम्मद हाजी जान मुहम्मद छोटानी

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ६-१०-१९२१

१०७. पत्र : 'बॉम्बे क्रॉनिकल' को

[५ अक्तूबर, १९२१ के पूर्व]

सेवामे
सम्पादक,
'बॉम्बे क्रॉनिकल'

महोदय,

मद्रासमे मुझे बराबर ऐसी अफवाहोकी सूचना मिली कि मै शीघ्र ही गिरफ्तार किया जानेवाला हूँ। ये अफवाहे विश्वस्त सूत्रोपर आधारित मानी जाती थी। और बम्बई आनेपर यही बात और जोर देकर मुझे बताई गई है। अगर इस अफवाहमे सचाई हो तो सरकार बधाईकी पात्र है। सो इसलिए कि इससे प्रकट होता है कि अली-बन्धुओ और उनके साथी कैदियोकी गिरफ्तारी करके उसने जिस नीतिका परिचय दिया उस नीतिपर वह कायम है, क्योकि अब वह तथाकथित या वास्तविक हिंसाके विरुद्ध या हिंसा-भडकानेकी कोशिशोके विरुद्ध नही, बल्कि असहयोगके उस सिद्धान्तके ही विरुद्ध लडाई छेड रही है जिसे कांग्रेस और खिलाफत समितिने अपनाया है। यह सिद्धान्त है मौजूदा सरकारके प्रति असन्तोष फैलाना, और सभी वर्गोको, जिसमे सैनिक और असैनिक सभी शामिल है, सरकारके साथ असहयोग करनेके लिए प्रोत्साहित करना। इस प्रचारकी सफलताका अर्थ स्पष्टत शासनकी मौजूदा प्रणालीका खात्मा होगा, इसलिए जो लोग पक्के असहयोगी है, उनके लिए यह मुनासिब नही है कि सरकार आन्दोलनको कुचलनेके लिए जो भी कदम उठाये, उसकी आलोचना करे। और यदि इस प्रणालीके अमलदार असहयोगियोकी इच्छाके अनुसार इसमे परिवर्तन करनेका इरादा करते हो तो बात दूसरी है, वरना मेरी समझमे सबसे तर्क-सगत बात यही होगी कि वे इस आन्दोलनके प्रणेताको गिरफ्तार कर ले। सारे देशने अली-बन्धुओ और अन्य लोगोकी गिरफ्तारीके बाद भी अपने शानदार और शान्त रवैयेसे दिखा दिया है कि उसने अहिंसाकी आवश्यकताका अनुभव कर लिया है। मै अपनी या अन्य किसी भी कार्यकर्त्ताकी गिरफ्तारीके बाद भी ऐसा ही शान्त वातावरण बने रहनेकी आशा रखता हूँ। यदि लोग सच्चे साहसका परिचय देना चाहते है, यदि वे यह दिखाना चाहते है कि अहिंसाका रहस्य उन्होने समझ लिया है और अपने देश या धर्मके लिए जेल जानेको वे एक स्पृहणीय सम्मानकी बात मानते है, तो उन्हे न केवल पूरी तरह शान्तिका पालन करना होगा बल्कि हडताल या इसी तरहके दूसरे प्रदर्शनोसे भी बचना होगा। मेरी या किसी भी अन्य कार्यकर्त्ताकी गिरफ्तारीपर हडताल करना अनुशासनका भग होगा, और इसलिए वह गिरफ्तार व्यक्तिके प्रति सम्मान या स्नेहका परिचायक नही होगा। अपने मनका आदर व्यक्त करनेका एक-मात्र तरीका यही है कि कांग्रेसके स्वदेशी-कार्यक्रमको और अधिक उत्साहके साथ कार्यान्वित किया जाये

और इस प्रकार स्वराज्यकी जल्दीसे-जल्दी स्थापना की जाये। अगर मैं गिरफ्तार कर लिया जाऊँ तो मैं भारतके प्रत्येक ऐसे पुरुष और स्त्रीसे, जो स्वदेशीके सिद्धान्तमें विश्वास रखता है लेकिन जिसने आलस्यवश या किसी कमजोरीके कारण अभीतक विदेशी वस्त्रोंका त्याग नहीं किया है और हाथसे कताई और बुनाई करना शुरू नहीं किया है, यह आशा करूँगा कि वह सभी विदेशी वस्त्रोंका त्याग कर दे और चरखे तथा हाथ-करघेको अपनाये। मैं प्रत्येक हिन्दूसे उम्मीद करूँगा कि वह खिलाफतके लिए अपने प्रयत्नोंमें किसी भी हालतमें ढील नहीं डालेगा या तथाकथित स्वराज्यकी खातिर खिलाफतका पक्ष नहीं छोड़ देगा, क्योंकि मेरी रायमें, मुसलमानोंकी सन्तुष्टि हुए बिना स्वराज्यकी कल्पना ही नहीं की जा सकती।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ५-१०-१९२१

१०८. सन्देश : रायलसीमाके[1] कार्यकर्त्ताओंको

५ अक्तूबर, १९२१

श्री हरिसर्वोत्तम रावने ५ अक्तूबरको बम्बईसे तार दिया है :

महात्मा गांधीने मुझे मद्रास सर्किल्स जिलोंके कार्यकर्त्ताओंको निम्न तार भेजनेकी अनुमति दी है :

स्वदेशी और बहिष्कारपर ध्यान केन्द्रित करें, सभाओंमें पूर्ण शान्ति रखें, सब प्रकारके प्रदर्शनोंसे बचें, सुविचारित शान्तिपूर्ण कार्रवाईके लिए आवश्यक अनुशासनके सबसे पहले नियम यही हैं। स्वयंसेवकोंको लाठियाँ नीचे रखना और कर्त्तव्यका पालन करना सिखायें। मैं सबसे अनुरोध करता हूँ कि वे इसी १४ तारीखको ताड़पत्रीमें मिलें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-१०-१९२१

१. हैदराबादकी रियासत द्वारा ब्रिटिश सरकारको सौंपे गये "उत्तरी सरकार" कहलानेवाले चार जिले जिनको ब्रिटिश सरकारने मद्रास प्रेसीडेंसीमें मिला लिया था।

१०९. टिप्पणियाँ

अकालकी दवा

मद्रासमे रायलसीमाके सफरमे मुझे ऐसे कई सबूत मिले जिनसे यह बात साबित होती है कि चरखा चलाना अकालको न आने देनेका तथा उससे लोगोकी रक्षा करनेका सबसे अच्छा जरिया है। इन जिलोके कुछ हिस्सेमे इन दिनो जोरोका अकाल है। एक कार्यकर्त्ताने मुझे बताया कि एक स्त्रीने तो अपना और अपने बाल-बच्चोका गुजर न कर सकनेके कारण, अपने लडको-बच्चोको डुबो दिया और खुद भी डूबकर मर गई। और यह मुमकिन नही कि सैकडो और हजारो लोगोकी गुजर केवल दान और चन्देपर चलाई जाये। फिर, जो लोग दानकी रोटीपर पेट पालते है वे अपने आत्मसम्मानसे हाथ धो बैठते है। यह बात नही है कि जहाँ-जहाँ अकाल है, वहाँ अनाज मिलता ही न हो। पर बात यह है कि लोगोके पास न तो काम है और न पैसा। हाँ, सरकारकी तरफसे अकाल-पीडितोकी सहायताके लिए पत्थर तोडने और ढोनेका काम दिया गया है। एक मित्रने बताया है कि सरकारने सडके तुडवाने और उन्हे फिर बनवानेका कार्य शुरू किया तब जाकर कही उन अकाल-पीडित पुरुषो और स्त्रियोके लिए काम निकला। सडके तोडी जाये या न तोडी जाये पर यह तो निश्चित है कि सरकारके पास लोगोको अकालसे राहत पानेकी दृष्टिसे देनेको एक ही काम है और वह है — सड़कोकी मरम्मत। मुझे यह भी मालूम हुआ कि दरअसल मजदूरी जो एक औरतके पल्ले पडती है, चार-पाँच पैसे है और मर्दको दस पैसेसे ज्यादा नही मिलते। इसके विपरीत मैंने देखा कि पचम औरतोको काग्रेस-कमेटी तीन आना रोज मजदूरी देती है, जिसपर वे आठ घटा रोज चरखेपर सूत कातती है और पचम औरतोके लिए जो किया जा रहा है वही अन्य हजारो अकाल-पीडित औरतो और मर्दोके लिए भी किया जा सकता है। इन जिलोमे मर्दको भी तीन आना रोज मजदूरी मिलना मानो एक बड़ी भारी नियामत है। परन्तु चरखेमे इतनी सम्भावनाएँ मौजूद है जितनी और किसी धन्धेमे नही है क्योकि चरखा चलानेमे उसके पहलेकी दो क्रियाएँ, ओटना और धुनना तथा बादकी क्रिया बुनना भी शामिल है। रायलसीमाके इन जिलोमे बुनाई सिखानेमे भी अधिक कठिनाई नही पेश आ सकती। और अगर कपडा तैयार करनेकी तमाम प्रक्रियाएँ इसी तरह सगठित की जा सके तो हजारो लोगोको घर बैठे मुस्तकिल तौरपर कामधन्धा मिल सकता है। हरएक कार्यकर्त्ताने खुले दिलसे यह बात की है कि हाँ, हम लोग तथा अकाल-पीडित लोग, दोनो इस बातको समझने लगे है कि चरखेसे कितने लाभ है, और लोगोके दिलोमें आशाका सचार होने लगा है तथा कार्यकर्त्ताओने हर जगह चरखा चलाने और कपडा बुननेके कामका सगठन शुरू कर दिया है। मुझे ऐसे लोग भी मिले जिन्होने कहा कि हम तो आपकी इस बातपर हँसते थे कि चरखा अकाल न पडने देनेका सर्वोत्तम साधन है, पर व्यवहारमे उसके अनुभवके बाद अब हम उसकी सचाई समझ गये है।

मैं जानता हूँ कि अभी तो इस परिवर्तनका श्री-गणेश ही हुआ है। पर जब यह सम्पूर्ण हो जायेगा तब किसी भी मर्द या औरतको, जिसके हाथ काम करने लायक हैं, न तो किसीके दरवाजेपर भीख माँगनेकी और न भूखों मरनेकी जरूरत होगी। आज तो हम देखते हैं कि अकालके दिनोंमें हजारों लोग, जो काम करनेके लायक हैं, काम न मिलनेके कारण दानकी रोटीपर जीते हैं या आधा पेट खाकर ही रह जाते हैं। यह दृश्य कितना नीचा गिरानेवाला है।

बस, एक ही काम

इसलिए मैं कांग्रेसके और खिलाफतके हरएक कार्यकर्त्तासे कहता हूँ कि आप अपने-अपने जिलोंमें बस, चरखा चलाने और करघोंपर कपडा बुनवानेका ही प्रबन्ध कीजिए, दूसरे तमाम कामोंको छोड दीजिए। जबतक हमारे यहाँ एक भी काम करने लायक मर्द या औरत बिना कामके और बिना खाने-दानेके है तबतक अगर हम पेट-भर खाते रहें और आरामसे बैठे रहें तो हमारे लिए यह बडे शर्मकी बात होगी। मैं धनवान लोगोंसे अनुरोध करूँगा कि वे बिना सोचे-विचारे कभी दान न दें और मुफ्तमें खाना न खिलायें। अगर हम भारतवर्षको भिक्षा देनेवाला और भिक्षा पानेवाला, इन दो भागोंमें बाँट देंगे तो अगली पीढी हमें कोसेगी। अगर हम चाहते हों कि हमारे राष्ट्रमें जरा भी आत्मसम्मान रहे तो हमें अवश्य ही इस बार-बारकी तंगीके लिए कुछ-न-कुछ व्यवस्था करनी ही होगी। अतएव जो लोग दीन-दुखियोंकी सहायता करना चाहते हैं, वे उनके हाथोंमें चरखा दें और उससे सम्बन्ध रखनेवाली विविध क्रियाएँ सीखनेकी सुविधाएँ जुटाएँ।

मत-प्रकाशन

जब किसी भी आन्दोलनमें पूरे आग्रहके साथ हिंसाका त्याग किया जाता है तब वह एक अत्यन्त शुद्ध प्रचार-आन्दोलन हो जाता है। ऐसे आन्दोलनको कुचलनेका कुछ भी प्रयत्न करना लोकमतको कुचलनेका प्रयत्न करना है। और वर्तमान दमनने ऐसा ही रूप धारण कर लिया है। जो बातें मैं अपने अन्तरतमसे स्वीकार करता हूँ, उन्हें प्रकट क्यों न करूँ? मैं यह साफ-साफ कहता हूँ कि—

(१) किसी भी हैसियतसे, खास करके सिपाहीकी हैसियतसे, इस सरकारकी नौकरी करना पाप है।

(२) शराब और दूसरी नशीली चीजोंका पीना पाप है।

(३) विदेशी कपडा पहनना पाप है।

(४) अनाज और रुईका सट्टा करना और जुआ खेलना पाप है।

सरकार भी असहयोग आन्दोलनके खिलाफ प्रचार कर रही है, इसलिए हो सकता है कि उसे अपनी मुलकी और फौजी नौकरियोंके लिए रंगरूट प्राप्त होते रहें, तरह-तरहकी तरकीबें लडाकर वह लोगोंको शराब पीने और विदेशी कपडा पहननेके लिए तथा अनाज और रुईका सट्टा करनेके लिए फुसला ले, और इस तरह तबतक अपनी हुकूमत कायम रहे जबतक कि लोग जान-बूझकर या अज्ञान-वश उसके साथ सहयोग कर रहे हैं। लेकिन जिस दिन लोगोंके दिलमें इसके विपरीत विश्वास हो

जायेगा उसी दिन उसकी सारी इमारत ढह जायेगी। और जिस प्रकार मैं शराबखोरो और सटोरिये लोगोमे अपने मतका प्रचार करता हूँ, जिससे कि वे इन बुरी बातोसे दूर रहा करे, ठीक उसी तरह मैं सिपाहियोसे भी उनके मुँहपर यह कहनेके हकका दावा करता हूँ कि मेरे मतके अनुसार उनका क्या कर्त्तव्य है। देशके अन्दर जो-कुछ हो रहा है, उसकी जानकारीसे फौजके लोग क्यो महरूम रखे जाने चाहिए? क्या सरकारको इस बातका डर है कि अगर सिपाही सच बात जान जायेगे तो उसकी नौकरी छोड देगे? जो सरकार "सरकार" कहलाने लायक है उसे तो सैनिकोको पूरी तरह शिक्षा और ज्ञान देकर भी उनकी राजभक्तिको कायम रखनेके योग्य होना चाहिए। लेकिन यहाँ भारतमे तो सब-कुछ शस्त्रके सहारे टिका हुआ है— शान्ति शस्त्रके सहारे कायम रखी जाती है, राजभक्ति शस्त्रके सहारे प्राप्त की जाती है और लोगोके मतोपर भी शस्त्रका ही अकुश है। निःशस्त्र अगर कोई है तो बस, प्रजा ही है। अतएव हमारा कर्त्तव्य स्पष्ट है। हमे दावेके साथ जैसा चाहे वैसा मत रखना और व्यक्त करना चाहिए फिर चाहे इसके लिए हमे सूलीपर भी क्यो न चढ जाना पडे। ध्यान सिर्फ इस बातका रखना है कि ऐसा करते हुए हम प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे भी हिंसा न करे। यही अहिंसात्मक असहयोगका सग्राम है। हमे यह लडाई अन्ततक लडनी होगी। मै यहाँ सब लोगोको आगाह किये देता हूँ कि "फौजकी राजभक्तिको डिगानेकी बिनापर" मुकदमा चलाना इस बातका पूर्व-सकेत है कि "विदेशी कपडोके प्रति लोगोकी भक्तिको डिगानेकी बिनापर" भी मुकदमे चलाये जायेगे। कालीकटमे जो नौजवानोकी खादीकी टोपियाँ और कुरते जलाये गये, वह किस बातका सूचक था? विशाखापट्टमके मेडिकल स्कूलके विद्यार्थियोके खिलाफ जो युद्ध शुरू किया गया है, वह खादीके खिलाफ किया जा रहा क्रूरतापूर्ण युद्ध नही तो और क्या है?

एकमात्र कसौटी

लेकिन अगर हमे स्वराज्य प्राप्त करना है तो बस यह ठीक उसी किस्मकी परीक्षा है, जिसमे हमे अवश्य ही पास होना होगा। अगर यह बात सच है कि इस सरकारका अस्तित्व अपने विशेष प्रकारके हितोकी रक्षाके ही लिए है, और ये हित अधिकाश प्रजाके हितोके विरुद्ध है, तो वह हर कीमतपर अपनी मौजूदा स्थिति कायम रखनेकी कोशिश करेगी और उसके लिए हमें इसपर हरगिज क्रोध न दिखाना चाहिए। स्वतन्त्र लोकमतकी बढतीके दमनके लिए उसका कोशिश करना कोई नई बात नही है। हम लोग तो पहलेसे ही सरकारकी इन विशेषताओको पहचानते है, और आज जो हम उसकी वर्तमान प्रणालीको नष्ट कर देना चाहते है इसका कारण यही है कि हमे इन विशेषताओका ज्ञान है। इस सरकारके अस्तित्वका उद्देश्य है— हिन्दुस्तानसे तथा उसके कच्चे मालसे धीरे-धीरे, परन्तु निश्चित रूपसे, नाजायज फायदा उठाना एव हिन्दुस्तानको इतना कमजोर कर देना जिससे वह सदाके लिए यहाँसे धन लूटकर ले जानेवाले विदेशी लोगोका एक साधन-मात्र बन जाये। दूसरे शब्दोमे वे हमे अपने ही घरोमे सदाके लिए कैद रखना चाहते है। और यह स्थिति प्राप्त करनेके लिए जो तरीका अख्तियार किया

गया है, वह है इनाम और सजाका तरीका — खिताबो और मोटी-मोटी तनख्वाहोंके रूपमे इनाम उन लोगोंके लिए जो इस प्रणालीको सहायता देते है, और सजा, बल्कि अत्याचारतक उन लोगोंके लिए जो इसे सुधारना या मिटाना चाहते है। ऐसी अवस्थामे सरकार उन तमाम विचारोकी अभिव्यक्तिको और उन तमाम आन्दोलनोको बन्द करनेका प्रयत्न प्राण-पणसे किये बिना नही रहेगी जो उसके विशेष हितोको आघात पहुँचा सकते है। हम इस भ्रममे न रहे कि सरकार उदारता धारण करके आखिरी दमतक चुप रही और जब हद हो गई तभी उसने अपना हाथ उठाया। हमको मानना होगा कि यह सरकार एक इतनी ताकतवर और साधन-सम्पन्न सस्था है, जितनी ताकतवर और साधन-सम्पन्न सस्था दुनियाने आजतक कभी न देखी होगी। यह मौका ताकती रहती है, यह अपने विपक्षियोको खेल खेलनेका मौका देती है, परन्तु ज्यो ही उनमें सजीदगीका भाव पाया कि यह तुरन्त ही वार करती है। जो डाकू अपनी लूटकी चीजोके मालिक-को अपनी चीजें वापस लेनेकी बचकाना कोशिशे करनेका मौका तो देता है, परन्तु ज्यो ही मालिक सजीदगीमे पेश आता है और सफल होता दिखता है त्यो ही उसका सिर धड़से अलग कर देनेके लिए तैयार हो जाता है, उसे उदार कौन कहेगा? जो डाकू इस प्रकार युक्तिपूर्ण ढगसे बरतता है उसे हम चालाक समझते है और जब वह अपने बिलकुल निरपराध और अत्याचारका शिकार होनेका ढोग करता है, तब हम उसे पाखण्डी कहते है। अब हमारी दक्षता इसी बातमे है कि हम इस सरकारके हाथ-की कठपुतली न बन जाये। वह चाहे हमे सख्त या सादी सजाएँ कितनी ही दे, हमे न तो अपने होश-हवास खो बैठना चाहिए और न मारकाट या खून-खराबीपर ही तुल जाना चाहिए। हमें फाँसीपर लटका दिया जाये तो भी न डगमगाना चाहिए। मैं अली-भाइयोको अपने सगे भाइयोकी तरह चाहता हूँ। पर अगर सरकारी न्याया-धीश उन्हे फाँसीकी सजा दे दे तो भी मैं सरकारके पास उनके लिए वकालत करने हरगिज न जाऊँगा। उनकी इस तरहकी मृत्युको मैं बड़ी शान-बानकी मृत्यु कहूँगा और इस बातका रश्क करूँगा कि उन्हे ऐसी खुशकिस्मती नसीब हुई। अगर उन्हे आजीवन कालेपानीकी सजा मिली तो मैं यह सोचूँगा कि मैं जितनी जल्दी हो सके, स्वराज्य स्थापित करके ही उन्हे वहाँसे छुड़वाकर घर लाऊँ।

हमारे पास इसकी बस एक ही दवा है (और वह बहुत ही कारगर दवा है) कि हम सरकारको वह जितना अत्याचार करना चाहे कर लेने दे, और यह विश्वास रखकर कि उसकी बुरीसे-बुरी करतूतोका फल देशके लिए अच्छेसे-अच्छा ही होगा, उसके दमनसे चित्तको जरा भी डाँवाडोल न होने दे तथा अपने निश्चित कार्यक्रमको पूरा करनेमे जी-जानसे लग जाये — इस अटल विश्वाससे कि इससे निश्चय ही हमारा अभीष्ट सिद्ध होगा। यह कार्यक्रम क्या है? यही कि घर-घरमें और गाँव-गाँवमे चरखो और करघोका प्रचार कर दिया जाये।

एक उपयुक्त कहानी

मौलाना आजाद सोबानी स्वदेशीके लिए अद्भुत कार्य करते रहे है। उन्होने मुझे मिस्रियोकी धीरता और बहादुरीकी एक रोमाचकारी कहानी सुनाई। उन्होने बताया

कि एक बार कुछ सिपाहियोंने सिक्खोंकी एक मसजिदको घेरकर उसके भीतर चल रहे धार्मिक प्रवचनको रोकना चाहा। मसजिदमें उपस्थित नमाजी लोगोंके सामने एक नौजवान भाषण दे रहा था। भाषण देनेसे वह बाज नहीं आया और सिपाहियोंने उसे गोली मार दी। सभा बिलकुल अविचलित रही। दूसरे नौजवानने बोलना शुरू किया, और जब वह बोल रहा था तभी उसे भी गोली मार दी गई। इसी तरह सात नौजवान गोलियोंके शिकार हुए, किन्तु उन्होंने प्रस्तुत विषयपर वार्ता समाप्त करके ही छोड़ी। और इस अवधिमें जब नौजवानोंकी यह शोकजनक घटना घटित हो रही थी, उपस्थित लोग बिलकुल अविचलित रहे। सिक्ख तो अहिंसामें विश्वास नहीं रखते। लेकिन ये बड़े अच्छे सिपाही हैं। वे नहीं चाहते थे कि वे बदलेकी कार्रवाई करें और उसके फलस्वरूप मसजिदकी ईंट-से-ईंट बजा दी जाये और उपस्थित सभी लोगोंको व्यर्थ मे मौतके घाट उतार दिया जाये। वे यह दिखाना चाहते थे कि वे डरनेवाले नहीं है और कोई भी आदेश उनके साहसको नहीं तोड़ सकता। और इसलिए वार्ता इस तरह पूरी की गई, मानो कुछ हुआ ही न हो। उन नमाजियोंने मृत्यु और जीवनको एक ही माना। इन आख्यानसे क्या सबक मिलता है, वह स्पष्ट है। हम जिन्होंने कि अहिंसाकी शपथ ली है उन सात नौजवानों तथा वहाँ उपस्थित नमाजियोंकी बहादुरी और धीरता सीखनेकी कोशिश कर रहे है। हममें अपने उद्देश्यकी प्राप्तिके प्रयत्नमे किसीको मारनेका खयालतक मनमे लाये बिना स्वयं मौतको गले लगानेका साहस होना चाहिए। फिर तो यह निश्चित ही है कि हम तीन महीनेके भीतर विजय प्राप्त करके ही रहेंगे।

साजिश सगीन होती जा रही है

साजिश सगीन होती जा रही है, क्योंकि सरकार हमारे खिलाफ अपनी सारी ताकतें सुसज्जित करती जा रही है। मुझे अभी-अभी बतलाया गया है कि असमके एक अभिजात कुलमे उत्पन्न बैरिस्टर श्री फूकनसे सरकारने शान्ति बनाये रखनेके लिए मुचलका देनेको कहा है। अपनी यात्राके दौरान मुझे उनसे मिलनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। वे एक बहादुर सिपाही है और खिलाड़ी-वृत्तिके हैं। लेकिन वे पक्के अहिंसा-वादी हो गये है। उनका खयाल है कि भारतके हृदयमे अगर कोई चीज आशाका सचार कर सकती हे तो वह अहिंसा ही हे, और इसीके बलपर एक वर्षके अन्दर स्वराज्य हासिल किया जा सकता हे। लेकिन श्री फूकन एक बहादुर कार्यकर्त्ता हैं। वे और उनके साथी कार्यकर्त्ता स्वदेशीको फिरसे पूरी तरह प्रतिष्ठित कर देना चाहते है, और असम सरकारको उनका यह खयाल पसन्द नही है। आन्ध्र देशके एक शक्तिशाली जमीदार, रम्पालागूडमके कुमारराजाके साथ भी सरकारने ऐसा ही व्यवहार किया है, क्योंकि उन्होने मद्य-निषेधके लिए काम करनेका साहस दिखाया। अपनी यात्राके दौरान मै जो अखबार पढ पाया, उनमे मुझे केवल ये दो उदाहरण मिले है। लेकिन मुझे तनिक भी सन्देह नही कि ऐसे बहुतसे कार्यकर्त्ताओके मुंह बन्द किये जा रहे है और बहुतसे अन्य कार्यकर्त्ताओके मुँह बन्द किये जायेंगे। यह सब शुभ समाचार है, बशर्ते कि हम लोग जो अभी जेलके बाहर है, जेल भेज दिये गये अपने अपेक्षाकृत अधिक सौभाग्यशाली भाइयोके कामको लगनसे करते रहे। मै उन्हे सौभा-

ग्यशाली इसलिए कहता हूँ कि मजलूम लोगोके लिए जेलोमे रहना सौभाग्यकी ही बात है। जहाँ आतकका शासन हो, वहाँ सच्चे और ईमानदार लोगोके लिए जेल एक सम्मानका स्थान है। जो लोग अत्याचारियोके मार्गमे या उद्देश्यमे बाधा डालते है, उनसे अत्याचारी यही कीमत वसूल करते है। इन सजाओसे हमे अपना प्रयत्न निरन्तर जारी रखनेकी प्रेरणा लेनी चाहिए। जब हमे साफ तौरपर रास्ता दिखा दिया गया हो तो नेताओकी कोई जरूरत नही रह जाती। आज हम जानते है कि हमे क्या करना है, कैसे करना है, और यह हमारा सौभाग्य है तो हमे अपने नेताओके जेल भेजे जानेपर हताश नही होना चाहिए, बल्कि प्रसन्न होना चाहिए और मिस्रके जिन नमाजियोकी कहानी मैने सुनाई, उन्हीके समान साहसके साथ अपना काम जारी रखकर अपने-आपको स्वराज्यके योग्य सिद्ध करना चाहिए।

अब लाठियोका उपयोग न करे

अपने मद्रास तथा रायलसीमाके दौरेके क्रममे और अन्यत्र भी हमने देखा कि अन्य स्थानोकी तरह ही वहाँ भी शक्ति व्यर्थ नष्ट हो रही है। हर जगह बडी-बडी भीडे सिर्फ एक झलक पानेके लिए घटो खडी रहती थी। चीख-पुकार तो इतनी थी कि सहना मुश्किल था। मैने यह भी देखा कि जहाँ-कही पहलेसे इन्तजाम कर लिया गया था, जैसे कि त्रिचनापल्ली, चेट्टिनाड, तिन्नेवेली, तथा अन्य स्थानोमे — वहाँ बहुत उपयुक्त और वाछनीय व्यवस्था थी, और हम लोग बिना किसी कठिनाईके बहुत सारा काम कर पाये। लेकिन रायलसीमामे हमने स्वयसेवकोको सात-सात फुट ऊँची बाँसकी लाठियाँ लिये देखा। उद्देश्य यह था कि मेहमानोको भीडसे बचानेके लिए उनके सहारे घेरा बना लिया जाये। लेकिन मैने देखा कि इन लाठियोसे सुविधाके बदले बाधा ही पहुँचती थी, इनके कारण लोग आसानीसे आ-जा नही सकते थे और वैसी भीडमे उनसे चोट लगनेका खतरा भी था। कई बार तो स्वय मेरी ही आँखोको चोट लगते-लगते बची। और स्वयसेवको द्वारा सरक्षण अनुभव करनेके बजाय मुझे तो यही डर लगा रहा कि इन लाठियोसे किसी भी क्षण मुझे चोट पहुँच सकती है। मैने स्वयसेवकोको बताया कि इस दृष्टिसे इन लाठियोकी अपेक्षा मजबूत रस्सी कही अधिक उपयोगी होगी। मौलाना आजाद सोबानीको मेरी बात जँच गई, और चूँकि अहिंसाकी प्रतिज्ञाके अनुसार किसीको चोट पहुँचानेके लिए लाठियोका उपयोग नही किया जा सकता था, इसलिए मौलाना सोबानीने ताडपत्रीमे स्वयसेवकोको लाठियाँ छोड देनेको राजी कर लिया। मै सभी स्वयसेवक दलोको ऐसे ही परिवर्तनकी सलाह दूँगा। चूँकि हमारा आन्दोलन जाने-माने तौरपर शान्तिपूर्ण है, इसलिए अगर हम लाठियाँ बिलकुल छोड दे तो यह और भी अच्छा रहेगा। चूँकि हम शान्ति-सेनाके सिपाही है, इसलिए पोशाकमे तथा अन्य मामलोमे भी हम जहाँतक हो सके, साधारण सिपाहियोकी कमसे-कम नकल करे।

प्रशिक्षणकी कमी

कई स्थानोपर स्वयसेवकोमे प्रशिक्षणकी कमी देखकर बडा दु ख हुआ। उपर्युक्त कुछ स्थानोको छोडकर उन्होने बराबर बाधा ही पहुँचाई हालाँकि उनका मशा पूरी

तरहसे सहायता पहुँचानेका ही था। वे यदि गाड़ियोंपर चढ़ते नहीं थे तो उन्हें घेर अवश्य लिया करते थे। उनका सबसे आगे चलनेका भी दुराग्रह रहता था, जिससे आने-जानेमें बड़ी बाधा पड़ती थी। वे कदम मिलाकर चलना नहीं जानते थे। अगल-बगल दो-दोका जोड़ा बनाकर वे नहीं चलते थे। उनतक कोई हिदायत पहुँचा पाना बहुत कठिन था। अब यह बहुत जरूरी हो गया है कि उनका अच्छी तरह संगठन किया जाये और उन्हें कुछ नियमोंका पालन करनेका निर्देश दिया जाये।

कुर्सियाँ ठीक नहीं लगतीं

अब आम तौरपर सार्वजनिक सभाओंमें कुर्सियाँ शायद ही देखनेमें आती हों। सभाएँ बिल्कुल खुले मैदानमें होती हैं। बीचमें एक छोटेसे मंचकी व्यवस्था अवश्य कर दी जाती है, जिसपर कभी चँदोवा होता है और कभी नहीं भी। चूँकि मैं खड़ा होकर नहीं बोल सकता, इसलिए आम तौरपर मेरे लिए एक कुर्सीका इन्तजाम कर दिया जाता है, और तब स्वभावतः मेरे अन्य साथियोंके लिए भी वैसा ही इन्तजाम कर दिया जाता है। ये कुर्सियाँ वहाँके परिवेशमें ठीक नहीं लगतीं और उसकी खूबसूरती कम कर देती हैं। मैं तो कहूँगा कि मेरे बैठकर बोलनेके लिए एक सीधी-सादी पुराने ढँगकी वर्गाकार मेज ही की व्यवस्था कर दी जाये। बेशक हम अपने सादे और स्वाभाविक परिवेशके अनुकूल अपनी पुरानी कलाको पुनरुज्जीवित कर सकते हैं। अपनी यात्राके दौरान मुझे यह देखकर बड़ी खुशी हुई कि छादन और सजावटके लिए सर्वत्र खादीका ही उपयोग किया गया था।

विनाशका नैतिक औचित्य

बड़ोदादा (द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर, शान्तिनिकेतन) ने मेरा 'विनाशका नैतिक औचित्य'[1] शीर्षक लेख पढ़कर निम्नलिखित प्रतिक्रिया भेजी है। मेरे लिए यह बड़े हर्षकी बात है कि एक इतने समादृत और विद्वान् व्यक्तिने मेरी उस नैतिक स्थितिसे सहमति प्रकट की है जो मैंने ऐसे लोगोंके भी विरुद्ध जाकर अपनाई है जिनके मतको मैं मूल्यवान और सम्मानके योग्य मानता हूँ। पाठकोंको यह देखकर खुशी होगी कि बड़ोदादाके रूपमें हमारे बीच एक ऐसा ऋषि विद्यमान है जो अपने शान्त एकान्तमें भी हमारे राष्ट्रीय आन्दोलनके प्रति किसी पच्चीस वर्षके नौजवानकी तरह रुचि रखता है और बराबर उसीके विषयमें सोचता रहता है तथा उसकी सफलताकी कामना करता है। यह है वह पत्र

> एक सौदागर था, जो एकाएक दिवालिया हो गया और गरीबीके चंगुलमें बुरी तरह फँस गया। उसकी पत्नीने उस समय खाट पकड़ रखी थी; वह गठियासे पीड़ित थी। एक अत्तार था। वह पेटेंट दवाएँ बेचा करता था और अपने ग्राहकोंसे बराबर नकद अदायगी चाहता था। एक डाक्टर मित्र उस महिलाको देखने आया, और उसी समय उसकी लड़की ससुरालसे अपनी बीमार माँको देखने आई। वह एक दस रुपयेका नोट भी लायी थी जिससे वह पेटेंट दवा खरीदी जा

१. देखिए "विनाशका नैतिक औचित्य", १–९–१९२१।

सके और उसकी माँकी तकलीफ जल्दी दूर हो जाये। उसने नोट डाक्टरको दे दिया, और डाक्टरसे पासकी अत्तारकी दुकानसे दवा मँगवा कर दे देनेको कहकर खुद चली गई। डाक्टरने कहा कि इसमें सन्देह नहीं कि दवासे उसे तत्काल राहत मिलेगी, लेकिन साथ ही उसके स्वास्थ्यपर उसका इतना बुरा असर होगा कि वह सदाके लिए अपग बनी रहेगी। डाक्टरने आगे कहा कि मै एक विद्युत्-चिकित्सकको जानता हूँ जो पास ही रहता है और गठियाको विद्युच्चिकित्सासे ठीक कर सकता है। उसकी रोजकी फीस १० रुपये है। एक महीनेमें वह रोगको जड़मूलसे उखाड देगा और महिलाके सामान्य स्वास्थ्यको भी कोई नुकसान नहीं पहुँचेगा।

लेकिन रोगीका आग्रह था कि उसे तत्काल आराम चाहिए, और इसलिए उसने डाक्टरसे बार-बार वह नोट देनेको कहा ताकि वह तुरन्त दवा मँगवा सके। लेकिन डाक्टरने भी बार-बार यही कहा कि उसकी अन्तरात्मा यह स्वीकार नहीं करती कि वह उस उद्देश्यसे वह नोट उसे दे दे और वह ऐसा करना पाप समझता है। लेकिन महिला गिडगिडाने लगी और नोट देनेके लिए मिन्नतें करने लगी। इसपर डाक्टरने अपनी जेबसे दियासलाई निकाली और उस नोटको जलाकर राख कर दिया। उसने महिलासे कहा कि तुम्हे डरनेकी जरूरत नहीं है, क्योंकि मै तुरन्त अपने खर्चपर उस विद्युच्चिकित्सकको लाने जा रहा हूँ, और यह पैसा तुम्हारे पति अपनी आर्थिक स्थिति सुधरते ही मुझे वापस दे देंगे। इस तरह जब क्षण-भरमें उसकी तात्कालिक राहत पानेकी आशा चली गई तो उसने डाक्टरसे कहा, "जैसा चाहे, करे।" इसपर डाक्टर विद्युच्चिकित्सकको ले आया, जिसने उसे विश्वास दिलाया कि अगर वह इलाज करने दे तो महीने-भरके अन्दर उसे स्थायी तौरपर ठीक कर दिया जायेगा। डाक्टरने सबके प्रति अपना वादा पूरा किया।

तब उस नोटका जलाना पुण्य था अथवा पाप?

उपर्युक्त दृष्टान्त बिलकुल वैसा ही है जैसा श्री गाधी द्वारा विदेशी कपडोंका जलाया जाना। श्री गाधी गरीबोंको वह तात्कालिक राहत देनेको तैयार नहीं है, जो उनके बीच विदेशी कपडे बाँटकर उन्हे दी जा सकती है। वे सदाके लिए दीन-हीन न बन जायें, इसलिए उन्होने स्वय उनके हाथो तैयार किये गये कपडे देनेकी व्यवस्था करके उन्हे सदाके लिए सुखी बनानेका वादा किया है।

[अग्रेजीमे]

यग इडिया, ६-१०-१९२१

११०. हिन्दू धर्म

अपनी मद्रास-यात्राके दौरान अस्पृश्यताकी समस्यापर बोलते हुए मैंने जितने जोरदार ढगसे अपनेको सनातनी हिन्दू बताया है, उतने जोरदार ढगसे ऐसा कोई दावा पहले कभी नही किया था। फिर भी हिन्दू धर्मके नामपर ऐसे बहुतसे काम किये जाते है, जो मुझे मजूर नही है। अगर मैं सचमुच वैसा नही हूँ तो मुझे सनातनी हिन्दू अथवा अन्य किसी ढगका हिन्दू कहलानेकी कोई ख्वाहिश नही है और निश्चय ही मेरी ऐसी कोई ख्वाहिश तो हरगिज नही है कि एक महान् धर्मकी आड लेकर मैं कोई सुधार या बुराई दाखिल करूँ।

इसलिए यह आवश्यक है कि सनातन धर्मका जो अर्थ मैं लगाता हूँ उसे एक बार अन्तिम रूपसे स्पष्ट कर दूँ। सनातन शब्दका प्रयोग मैं उसके स्वाभाविक और प्रचलित अर्थमें ही कर रहा हूँ।

मैं अपनेको सनातनी हिन्दू इसलिए कहता हूँ कि

१ मैं वेदो, उपनिषदो, पुराणो और हिन्दू धर्मग्रथोके नामसे प्रचलित सारे साहित्यमे विश्वास रखता हूँ, और इसलिए अवतारो और पुनर्जन्ममे भी।

२ मैं वर्णाश्रम धर्मके उस रूपमे विश्वास रखता हूँ, जो मेरे विचारसे विशुद्ध वैदिक है, लेकिन उसके आजकलके लोक-प्रचलित और स्थूल रूपमें मेरा विश्वास नही है।

३ मैं गो-रक्षामे उसके लोक-प्रचलित रूपसे कही अधिक व्यापक रूपमे विश्वास करता हूँ।

४ मैं मूर्तिपूजामे अविश्वास नही करता।

पाठक इस बातकी ओर ध्यान देंगे कि वेदोके सन्दर्भमे मैंने जानबूझकर अपौरुषेय या ईश्वरीय विशेषणका प्रयोग नही किया है। कारण, मैं ऐसा नही मानता कि सिर्फ वेद ही अपौरुषेय है — ईश्वरीय है। 'बाइबिल' 'कुरान' तथा 'जेन्द अवेस्ता' के पीछे भी मैं उतनी ही ईश्वर-प्रेरणा मानता हूँ। इसके अलावा, हिन्दू धर्मग्रन्थोमे मेरा विश्वास मुझे यह नही कहता कि मैं उनके एक-एक शब्द, एक-एक पक्तिको ईश्वर प्रेरित मानूँ। न मैं ऐसा ही कोई दावा करता हूँ कि मैंने इन अद्भुत ग्रन्थोका मूलरूपमे स्वय अध्ययन किया है लेकिन इतना दावा तो अवश्य करता हूँ कि तत्त्वत वे जो-कुछ सिखाते है उसके सत्यको मैं जानता हूँ और उसका अनुभव करता हूँ। उनकी चाहे जितनी पाण्डित्यपूर्ण व्याख्या की जाये, अगर वह मेरे विवेक और नैतिक बुद्धिको नही रुचती तो मैं ऐसी किसी भी व्याख्याका बन्धन स्वीकार करनेको तैयार नही हूँ। वर्तमान शकराचार्यो और शास्त्रियोके हिन्दू धर्मग्रन्थोकी सही व्याख्या देनेके किसी भी दावेको (अगर ऐसा दावा किया जाता है तो) मैं जोरदार शब्दोमे अस्वीकार करता हूँ। इसके विपरीत, मैं ऐसा मानता हूँ कि इन ग्रन्थोका हमारा वर्तमान ज्ञान बहुत ही अव्यवस्थित हालतमें है। हिन्दुओके इस सूत्रमे मेरा पूर्ण विश्वास है कि जिसने अहिसा, सत्य और ब्रह्मचर्यको

सिद्ध नही कर लिया, जिसने धन-सम्पत्तिकी प्राप्तिकी आकाक्षा या उसे रखनेकी लालसाका त्याग नही कर दिया, उसे वास्तवमे शास्त्रोके रहस्यका ज्ञान नही होता। मै गुरुमे विश्वास करता हूँ, किन्तु इस युगमें तो लाखो-करोडो लोगोको बिना गुरुके ही रहना होगा, क्योकि पूर्ण पवित्रता और पूर्ण ज्ञानका सयोग किसी भी एक व्यक्तिमें मिल पाना आजकल बहुत कठिन हो गया है। किन्तु, इसीसे किसीको ऐसा न मान बैठना चाहिए कि वह तो अपने धर्मके सत्यको कभी जान ही नही सकता। कारण, अन्य धर्मोकी तरह ही हिन्दू धर्मके भी बुनियादी सिद्धान्त सनातन है, और उन्हे आसानीसे समझा जा सकता है। हर हिन्दू ईश्वर और उसकी अद्वितीयतामे विश्वास करता है, पुनर्जन्म और मोक्षको मानता है। लेकिन जिस चीजने हिन्दू धर्मको अन्य धर्मोसे अलग करके दिखाया वह वर्णाश्रम भी नही, गो-रक्षा थी।

मेरे विचारसे, वर्णाश्रम मानव प्रकृतिकी एक सहज विशेषता है, और हिन्दू धर्मने सिर्फ इतना ही किया है कि उसे शास्त्रका रूप दे दिया है। वर्णाश्रमका सम्बन्ध निश्चय ही जन्मसे है। कोई व्यक्ति अपनी इच्छासे अपना वर्ण बदल नही सकता। अपने वर्णके बन्धनाको न मानना आनुवशिकताके नियमको अमान्य करना है। लेकिन यह जो हिन्दू समाजको असख्य जातियोमें विभक्त कर दिया गया है, उसे इस सिद्धान्त-के साथ बिना किसी कारणके मनमानी करना माना जायेगा। चार विभाग पर्याप्त है।

मै नही मानता कि दूसरी जातिवालोके साथ खाने-पीने या विवाह-सम्बन्ध करनेसे किसीका जन्मत प्राप्त दर्जा छिन ही जाता है। चार वर्ण लोगोके व्यवसायोको निर्धा-रित करते है, वे सामाजिक समागमको प्रतिबन्धित या नियमित नही करते। वे लोगो-के कर्त्तव्य निर्धारित करते है, किसीको कोई विशेष अधिकार प्रदान नही करते। मै मानता हूँ कि किसीका अपने-आपको ऊँचा मानने और किसी दूसरेको नीचा माननेकी धृष्टता करना हिन्दुत्वकी सहज प्रकृतिके विरुद्ध है। सभीका जन्म ईश्वरकी सृष्टिकी सेवा करनेके लिए हुआ है — ब्राह्मणको यह सेवा अपने ज्ञानसे करनी है, क्षत्रियको अपनी सरक्षणकी शक्तिसे, वैश्यको अपनी व्यापारिक क्षमतासे और शूद्रको शारीरिक श्रमसे। लेकिन इसका मतलब यह नही कि — उदाहरणके तौरपर — कोई ब्राह्मण शारीरिक श्रमसे या अपनी अथवा दूसरोकी रक्षाके कर्त्तव्यसे मुक्त हो गया। जन्मसे ब्राह्मण मुख्यत ज्ञानी और विद्यावान् पुरुष है और अपनी वश-परम्परा तथा प्रशि-क्षणकी दृष्टिसे वह दूसरोको ज्ञानका प्रकाश देनेके लिए सबसे उपयुक्त है। इसी तरह किसी शूद्रको, वह जो और जितना ज्ञान प्राप्त करना चाहे, उससे रोकनेवाली कोई चीज नही है। इतना अवश्य है कि वह शारीरिक श्रमके द्वारा ही सबसे अच्छी सेवा करेगा, और उसे अन्य वर्णोके लोगोके सेवोपयोगी विशिष्ट गुणोके प्रति ईर्ष्याका भाव रखनेकी कोई जरूरत नही है। लेकिन अगर कोई ब्राह्मण अपने ज्ञानके बलपर अपनेको दूसरोसे श्रेष्ठ मानता है तो यह उसके पतनका कारण बनता है, और ऐसा मानना चाहिए कि जो ऐसी श्रेष्ठताका दावा करता है, उसे सचमुच कोई ज्ञान नही है। और यही बात अपने विशिष्ट गुणोके बलपर अपनेको श्रेष्ठ माननेवाले अन्य वर्णोके लोगोके साथ भी लागू होती है। वर्णाश्रमका मतलब है, आत्मसयम, शक्तिका रक्षण और उसका सुव्यवस्थित उपयोग।

इस तरह, विभिन्न वर्णोके लोगोंके आपसमें खान-पान और शादी-विवाहका सम्बन्ध रखनेसे यद्यपि वर्णाश्रम धर्ममें कोई बाधा नही पहुँचती, तथापि हिन्दू धर्म ऐसे सम्बन्धोंका तीव्र विरोध करता है। हिन्दू धर्म आत्मसंयमकी पराकाष्ठातक पहुँच गया है। इस धर्मका मूल भाव निस्सन्देह आत्माकी मुक्तिके लिए ऐहिक सुखका त्याग है। अपने पुत्रके भी साथ भोजन करना किसी हिन्दूके कर्त्तव्यका कोई अंग नही है। और पत्नीका चुनाव एक खास वर्गतक सीमित रखकर वह ऐसा आत्मसंयम बरतता है जो शायद ही कही देखनेको मिले। हिन्दू धर्म मोक्ष-प्राप्तिके लिए विवाहित जीवनको आवश्यक नही मानता। जन्मकी तरह विवाह भी मनुष्यके पतनकी निशानी है। मोक्ष जन्मसे, और इसलिए मृत्युसे भी छुटकारा है। विभिन्न वर्णोंके पारस्परिक खान-पान और शादी-विवाहके सम्बन्धों-पर रोक लगाना तीव्र आत्मिक विकासके लिए आवश्यक है। लेकिन इस पाबन्दीका पालन वर्णकी कसौटी नही है। अगर कोई ब्राह्मण ज्ञानके बलपर सृष्टिकी सेवाके अपने कर्त्तव्यसे विमुख नही हो गया हो तो किसी शूद्र भाईके साथ भोजन करके भी वह ब्राह्मण ही रहेगा। ऊपर मैने जो-कुछ कहा है, उससे निष्कर्ष यही निकलता है कि भोजन और विवाह विषयक नियम जातीय श्रेष्ठताकी किसी भावनापर आधारित नही है। अगर कोई हिन्दू अपनेको श्रेष्ठ मानकर किसी अन्य व्यक्तिके साथ भोजन करनेसे इनकार करता है तो इसका मतलब है, वह अपने धर्मको गलत रूपमे पेश कर रहा है।

मगर दुर्भाग्यसे आज तो हिन्दू धर्म खान-पान सम्बन्धी विधि-निषेधोका ही धर्म बनकर रह गया जान पडता है। एक बार एक मुसलमान भाईके घर मैंने एक टोस्ट खा लिया। यह देखकर वहाँ उपस्थित एक धर्मनिष्ठ हिन्दू भाई हैरान रह गये। मुझे जब उन्होंने एक मुसलमान भाई द्वारा दिये प्यालेमे दूध डालते देखा तो उन्हे बडा दुःख हुआ, लेकिन मुसलमानके हाथका टोस्ट खाते देखकर तो उनकी व्यथाका अन्त न रहा। अगर हिन्दू धर्म क्या और किसके साथ खाना चाहिए, इसीसे सम्बन्धित नियमोंके विस्तृत जालमे फँस गया तो वह अपना मूलतत्त्व खो बैठेगा। मादक पेयो और द्रव्योके सेवनसे तथा तरह-तरहके खाद्यो, विशेषकर मास आदिसे परहेज रखना आत्माके विकासमे बडा सहायक है, लेकिन यह अपने आपमे कोई सिद्धि नही है। मासाहार करनेवाले और सबके साथ खानेपीनेवाले किन्तु ईश्वरसे डरकर चलनेवाले बहुतसे लोग उस व्यक्तिकी अपेक्षा मुक्तिके अधिक निकट हैं जो मासाहार तथा अन्य बहुत-सी बातोंसे तो धार्मिक निष्ठाके साथ परहेज रखता है किन्तु अपने हर काममे, आचरणमे ईश्वरकी अवहेलना करता है।

लेकिन हिन्दू धर्मका मूलतत्त्व गोरक्षा है। मेरे लिए गोरक्षाका विचार मानवताके विकास क्रममे एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कदम है। यह मनुष्यको अपनी जातीय परिधिसे बाहर ले जाता है। गायमे मैं समस्त मानवेतर प्राणियोका दर्शन करता हूँ। मनुष्यसे यह अपेक्षा की जाती है कि गायके माध्यमसे वह समस्त प्राणी-जगत्के साथ तादात्म्यका अनुभव करे। और गायको ही पूजाके लिए क्यो चुना गया, यह मैं स्पष्ट देख सकता हूँ। भारतमे गाय मनुष्यकी सबसे अच्छी साथी थी। वह समृद्धिका स्रोत थी। वह दूध ही नही देती थी, उसीके बलपर खेतीका काम भी चलता था। गाय करुणाका

काव्य है। इस निरीह प्राणीमे करुणाके दर्शन होते है। वह करोडो भारतीयोकी माँ है। गोरक्षाका मतलव है, ईश्वरकी सृष्टिके समस्त मूक प्राणियोकी रक्षा। प्राचीन ऋषियोने, वे जो भी रहे हो, मनुष्यके दया-भावको मानव जातिकी परिधिसे निकाल कर सृष्टिभरमे फैलानेका काम गायसे ही शुरू किया। मानवेतर प्राणियोके प्रति करुणा रखनेकी आवश्यकता इस कारण और भी वढ जाती है कि वे मूक है। गोरक्षा विश्वको हिन्दू धर्मकी देन है। और जवतक गोरक्षा करनेवाले हिन्दू दुनियामे मौजूद है तवतक हिन्दूधर्म भी जीवित रहेगा।

और गोरक्षाका तरीका है उसकी रक्षाके लिए अपने प्राणोकी आहुति देना। गायकी रक्षाके लिए मनुष्यकी हत्या करना हिन्दूधर्म और अहिसाधर्मसे विमुख होना है। हिन्दुओके लिए तपस्या द्वारा, आत्म-शुद्धि द्वारा और आत्माहुति द्वारा गोरक्षाका विधान है। लेकिन आजकलकी गोरक्षाका रूप विगड गया है। उसके नामपर हम वरावर मुसलमानोके साथ झगडा-फसाद करते रहते है, जव कि गोरक्षाका मतलव है मुसलमानोको अपने प्यारसे जीतना। एक मुसलमान भाईने कुछ दिन पहले मुझे एक पुस्तक भेजी थी, जिसमे गौओ और उनकी सन्तानोके प्रति वरती जानेवाली क्रूरताका विस्तृत वर्णन था। उसमे वताया गया है कि किस तरह हम उससे एक-एक वूँद दूध चूस लेते है, किस तरह हम उसे भूखो रखकर सुखा देते है, उसके वछडेके साथ हम कैसा वुरा वरताव करते है, किस तरह हम उन्हे उनके हिस्सेके दूधसे वचित कर देते है, वैलोके प्रति कितनी क्रूरता दिखाते है, किस तरह उन्हे वधिया कर देते है, मारते है और किस तरह उनपर शक्तिसे अधिक वोझा लाद देते है। अगर उन्हे वाणी होती तो हम उनके प्रति जो अपराध करते है उसकी वे ऐसी साक्षी देते कि दुनिया दाँतो तले अँगुली दवाने लगती। अपने मवेशियोके प्रति हम जो दुर्व्यवहार करते है, उनमे से एक-एक इस वात-का सूचक है कि हमारा न ईश्वरमे विश्वास है और न हम हिन्दू है। मै नही समझता कि मवेशियोकी हालत किसी भी देशमे उतनी वुरी है जितनी इस अभागे देशमे है। इसके लिए हमे अग्रेजोको दोष नही देना चाहिए। हम इसका दोष गरीवीके मत्थे भी नही मढ सकते। हमारे मवेशियोकी इस दयनीय स्थितिका एकमात्र कारण यही है कि हम उनकी उपेक्षा — अपराधपूर्ण उपेक्षा करते है। हमारे पिंजरापोल हमारे दयाभावके प्रमाण है सही, किन्तु साथ ही इस वातके सवूत भी है कि उस दयाभावको कार्य रूप देनेमे हम कितने ढीले है। ये पिजरापोल आदर्श दुग्ध-शालाएँ और देशके लिए लाभदायक सस्थाएँ वननेके वजाय वूढे और वीमार पशुओके लिए शरणस्थल वनकर रह गये है।

सच्चे हिन्दूकी पहचान तिलक नही है, मत्रोका सही उच्चारण नही है, तीर्था-टन नही है और न जाति-पाँतके नियमो और वन्धनोका सूक्ष्म पालन ही। उसकी पहचान तो उसकी गो-रक्षाकी क्षमता है। गो-रक्षाके धर्मको स्वीकार करते हुए भी हमने गौओ और उनकी सन्तानोको दासत्वकी स्थितिमे पहुँचा दिया है, और परिणामत हम स्वय भी दास वन गये है।

अव यह स्पष्ट हो गया होगा कि मै अपनेको सनातनी हिन्दू क्यो समझता हूँ। गायकी चिन्ता मुझे किसीसे कम नही है। मैने खिलाफतके मामलेको अपना इस-

लिए बना लिया है कि मैं देखता हूँ उसकी रक्षाके द्वारा मैं पूर्ण गो-रक्षा कर सकता हूँ। मैं अपने मुसलमान भाइयोंसे यह नही कहता कि मेरी सेवाओंका खयाल करके वे गोरक्षा करें। लेकिन मैं सर्वशक्तिमान् ईश्वरसे रोज ही यह प्रार्थना करता हूँ कि मैं जिस पक्षको सर्वथा न्याय-सम्मत समझता हूँ उसके लिए मैं जो-कुछ कर रहा हूँ वह उस सर्वशक्तिमानको इतना अच्छा लगे कि वह मुसलमानोंका हृदय परिवर्तित कर दे, और अपने हिन्दू भाइयोंके प्रति उनमें इतनी दया भर दे कि जिस पशुको हिन्दू अपने प्राणोंकी तरह प्यारा मानते हैं, उसकी रक्षाकी ओर वे स्वयं ही प्रवृत्त हो जायें।

जैसे अपनी पत्नीके बारेमें अपनी भावनाका वर्णन करना मेरे लिए कठिन है वैसे ही हिन्दूधर्मके बारेमे भी। उसका मुझपर जितना असर होता है, उतना संसारकी और किसी स्त्रीका नही हो सकता। ऐसा नही कि उसमे दोष है ही नही। मैं तो कहूँगा, मुझे उसमे जितने दोष दिखाई देते हैं, दरअसल उससे भी अधिक दोष उसमे होगे। लेकिन मुझे उसके साथ एक अटूट बन्धनका अनुभव होता है। मेरी यही भावना हिन्दू धर्मके बारेमे भी है, भले ही उसमे जो दोष हो, उसकी जो सीमाएं हो। हिन्दू धर्मकी दो ही पुस्तकें है, जिन्हे जाननेका दावा मैं कर सकता हूँ। वे है — 'गीता' और तुलसीकृत 'रामायण'। इन दोनोंका संगीत मेरे मनको जितना आह्लादित करता है उतनी और कोई चीज नही करती। एक बार जब मुझे लगा कि मेरी अन्तिम घडी आ पहुंची है, तब मुझे 'गीता' से ही सात्वना प्राप्त हुई थी। आजकल हिन्दुओके बडे-बडे मन्दिरोंमें जो बुराई चल रही है उसे मैं जानता हूँ। उनमे ऐसे दोष हैं, जिनका वर्णन भी नही किया जा सकता, फिर भी मुझे उनसे प्रेम है। उनमे मैं एक विशेष आकर्षणका अनुभव करता हूँ — ऐसा आकर्षण जैसे आकर्षणका अनुभव मैं और किसी चीजके प्रति नही करता। मैं आदिसे अन्ततक एक सुधारक हूँ। लेकिन ऐसा नही है कि मैं उत्साहातिरेकमे हिन्दूधर्मकी असली चीजोको भी छोड दूं। मैंने कहा हे, मैं मूर्ति-पूजामे अविश्वास नही करता। किसी मूर्तिको देखकर मेरे मनमें श्रद्धाका कोई भाव नही जगता। लेकिन, मैं समझता हूँ, मूर्ति-पूजा मानव स्वभावका अग है। प्रतीकोके प्रति हमारा सहज आकर्पण होता है। अन्यथा अन्य स्थानोकी अपेक्षा गिरजाघरमे कोई अधिक गम्भीर क्यो हो उठता? मूर्तियाँ पूजामे सहायक होती हैं। कोई भी हिन्दू मूर्तिको भगवान् नही समझता। मैं मूर्तिपूजाको पाप नही मानता।

ऊपर जो कुछ कहा गया है उससे स्पष्ट हो गया होगा कि हिन्दू धर्म कोई वर्जनशील धर्म नही हे। उसमे दुनियाके सभी नबियो और पैगम्बरोकी पूजाके लिए स्थान है। वह साधारण अर्थोमे प्रचारका ध्येय रखनेवाला धर्म नही हे। बेशक, इसके अचलमे कई जातियाँ समा गई हैं, लेकिन यह विकासकी स्वाभाविक प्रक्रियाकी तरह और अदृश्य रूपसे हुआ है। हिन्दूधर्म सभी लोगोको अपने-अपने धर्मके अनुसार ईश्वरकी उपासना करनेको कहता है, और इसलिए इसका किसी धर्मसे कोई झगडा नही है।

हिन्दूधर्मके विषयमे मेरी यह धारणा है और इसलिए मैं अस्पृश्यताको माननेके लिए अपने मनको कभी भी तैयार नही कर पाया हूँ। मैं बराबर इसे हिन्दूधर्मका एक भारी दोष मानता आया हूँ। यह सच है कि यह दोष हमारे यहाँ परम्परासे चला आ

रहा है, लेकिन यही बात दूसरे बहुतसे बुरे रिवाजोके साथ भी लागू होती है। यह सोचकर ही मुझे शर्म आती है कि लडकियोको लगभग वेश्यावृत्तिके लिए अर्पित कर देना[1] हिन्दूधर्मका एक अग था। फिर भी, भारतके कई हिस्सोमे यह आजतक प्रचलित है। मै कालीके आगे बकरेकी बलि देना अधर्म मानता हूँ और इसे हिन्दू धर्मका अग नही समझता। हिन्दूधर्म अनेक युगोका विकास फल है। हिन्दुस्तानके लोगोके धर्मको हिन्दू धर्मकी सज्ञा ही विदेशियोने दी। इसमे सन्देह नही कि किसी समय धर्मके नाम-पर पशु-बलि दी जाती थी। लेकिन यह कोई धर्म नही है, और हिन्दू धर्म तो नही ही है। और इसी तरह मुझे यह भी लगता है कि जब गोरक्षा हिन्दुओका धर्म बन गई तब गोमास खानेवालोका समाजसे बहिष्कार कर दिया गया। इसलिए निश्चय ही समाजमे भारी सघर्ष हुआ होगा। यह सामाजिक बहिष्कार सिर्फ इस धार्मिक बन्धनको न माननेवालोपर ही नही लागू किया गया, बल्कि उनके पापोका फल उनकी सन्तानो-को भी दिया गया। जो रिवाज आरभमे शायद अच्छे उद्देश्योसे शुरू किया गया वह बादमे कठोर परिपाटीके रूपमे बदल गया और हमारे धर्मग्रथोमें भी कुछ ऐसे श्लोक जोड दिये गये जिनसे यह परिपाटी सर्वथा अनुचित और अन्यायपूर्ण ढगसे स्थायी बन गई। मेरा यह अनुमान सही हो या न हो, अस्पृश्यता बुद्धिके तथा करुणा, दया या प्रेमकी भावनाके विरुद्ध है। जिस धर्मने गायकी पूजाका प्रवर्तन किया, वह मनुष्यके निर्दय और अमानवीय बहिष्कारका समर्थन कैसे कर सकता है, उसका औचित्य कैसे ठहरा सकता है? और भले ही कोई मेरे टुकडे-टुकडे कर दे, मै दलित वर्गोका साथ नही छोड सकता। जबतक हिन्दू अपने उदात्त धर्मको अस्पृश्यताके कलकसे दूषित रखेगे तबतक वे कभी भी स्वतन्त्रताके पात्र नही होगे और न उसे प्राप्त कर सकेगे। और चूंकि मै हिन्दूधर्मको अपने प्राणोसे भी अधिक प्यार करता हूँ, इसलिए यह कलक सहना मेरे लिए असम्भव हो गया है। अगर हम अपनी जातिके पाँचवे हिस्सेको हमसे बराबरीके दर्जेपर मिलने-जुलनेके अधिकारसे वचित करते है तो उसका मतलब है, हम ईश्वरकी सत्ताको अस्वीकार करते है।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, ६–१०–१९२१

१ देवदासी प्रथा।

१११. स्थिति बहुत ठीक नही है !

पन्द्रह मास पूर्व लोगोंने दमनात्मक कानून समितिकी रिपोर्टका हर्षके साथ स्वागत किया होता। लेकिन अब किसीको उसकी परवाह नही कि ये कानून रद्द किये जाते है या बरकरार रखे जाते है। हमें अब उनसे कोई डर नही लगता, क्योकि गिरफ्तारियो और जेलकी सजाओंका भय हमारे मनसे जाता रहा। अब हम किन्ही खास कानूनों और विनियमोंको रद्द करानेकी कोशिश नही कर रहे है, कोशिश कर रहे है उस प्रणालीको जड-मूलसे नष्ट कर देनेकी जिसके कारण उन कानूनों और विनियमोंका बनना सम्भव हुआ। अब हमें यह मालूम हो गया है कि (आम कानूनोंके अन्तर्गत भी) सरकार (तनिक भिन्न ढंगसे) वह सब-कुछ कर सकती थी जो उसने उन कानूनोंके अन्तर्गत किया है, जो रद्द किये जानेको है। आवश्यकता पड़नेपर सरकारके कानूनी सलाहकारोंने दण्ड प्रक्रिया संहिताके खण्ड १४४, १०७ और १०८ मे ऐसी सम्भावनाएं खोज निकाली है जिनका पहले सरकारको कोई एहसास नही था। तथ्य यह है कि अगर सामान्य कानूनको भी, भावनामे परिवर्तन लाये बिना, बदल लिया जाता है तो भारतके लोगोंको उससे कोई लाभ नही होगा।

इसलिए यद्यपि इस रिपोर्टमे जनताकी अभिरुचि नही है, फिर भी देशकी राजनीतिक स्थितिके अध्येताओंके लिए यह एक स्थायी महत्वका दस्तावेज है। कोई अत्यन्त प्रतिक्रियावादी असैनिक अधिकारी दस वर्ष पूर्व भी यह रिपोर्ट उसी भाषामे तैयार कर सकता था जैसी वह आज है। समितिका निष्कर्ष इस प्रकार है

> **हालकी वारदातो तथा उस सम्भावित घटनाक्रमको ध्यानमें रखते हुए, जिसे कोई भी अधिकसे-अधिक दुःशकाके भावसे ही देखेगा, उन्हे (राजद्रोहात्मक सभाओके निषेधका अधिनियम तथा भारतीय दण्ड विधान सशोधन अधिनियम, १९१८का भाग–२) कायम रखना जरूरी है।**

मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही कि जो भी दमनात्मक कार्रवाई की गई है उसकी स्वीकृति उसी "कठोर कर्त्तव्य-भाव" के अनुरोधसे दी गई है जिसके अनुरोधसे उपर्युक्त कानूनोको कायम रखना है।

मैं यह नही मानता कि जिन अधिकारियोंने ये सारे दमनात्मक कानून बनाये उन्हे दमनकार्यमे वहशियाना आनन्दका अनुभव होता था। लॉर्ड कर्जन[1] निश्चय ही यही मानते थे कि बगालका विभाजन सार्वजनिक हितमे है और जो लोग उसका विरोध करते है वे प्रगतिके विरोधी है। सर माइकेल ओ'डायर सच्चे मनसे मानते थे कि शिक्षित वर्गके लोग मूर्ख है, वे अपना हित-अहित भी नही समझते है और ऐसे मामलोमे दस्तन्दाजी करते है जिनके बारेमे उन्हे कोई जानकारी ही नही है, और दरअसल वे जन-साधारणके, जिसकी ओरसे बोलनेका वे दावा करते है, हित-

१. भारतके वाइसराय, १८९९–१९०५।

कामी नही हैं। जनरल डायर भी, नि सन्देह, यही मानते थे कि जबतक वे भारतीयो-को सबक न सिखा देंगे, यहाँ हर अंग्रेजकी जान खतरेमे है। अलबत्ता, इन तीनो मामलोमे हमने (और इस समितिके अधिकाश सदस्योने भी) यह माना था कि अधि-कारियोका दिमाग विकृत हो गया था। वे बगालकी स्वाभिमानपूर्ण भावनाको नही समझ सके थे। वे यह नही समझ सके थे कि उन शिक्षित भारतीयोका मन किस वेदनासे व्यथित हे जिन्हे अधिकारियोकी तुलनामे — जो सिर्फ सर्दियोमे मौज-मजे करनेके लिए पहाडोकी ऊँचाइयोपर से उतरकर जनताके बीच आ जाते हैं — सर्वसाधारणकी आवश्यकताओकी सहज ही कही अधिक अच्छी पहचान थी। वे नही समझ सके थे कि भारतीय कभी वैसा अमानवीय और कायरतापूर्ण आचरण कर ही नही सकते, जैसा कि एक सिपाही होते हुए भी जनरल डायरने उनके बारेमे सोचनेकी भूल की। उन दिनो हम ऐसा मानते थे कि भले ही जनता गलतीपर हो, लेकिन तब भी उसकी इच्छाकी अवहेलना करना अधिकारियोके लिए अनुचित है। हम पूरे विश्वासके साथ कहा करते थे कि अपने हिताहितके सबसे उपयुक्त निर्णायक हम स्वय है। लेकिन अब हममे से कुछके विचार बदल गये है। हममे से कुछ अब उसी स्थितिमे हैं, जो अधिकारियोकी हे। ये लोग अपने-आपको अज्ञानी जनसाधारणका "हित-रक्षक" समझते है और मानते है कि सिद्धान्तहीन आन्दोलनकारी, और यदि वे नही तो सचाईसे दूर कल्पना-लोकमे रहनेवाले कुछ व्यक्ति, उन्हे गुमराह कर रहे हैं, और इसलिए तीव्र (और शायद अज्ञानपूर्ण) विरोधके बावजूद वे "नई, सुधरी" कौसिलो-को चलाये जा रहे हैं, और इसीलिए मलाबारके विद्रोहको मूल्यवान रक्त बहाकर दबा रहे है, यद्यपि हम उन्हे मलाबारमे मोपलोको समझा-बुझाकर लूट-पाटके पागलपन भरे कामसे रोकनेके लिए नि शस्त्र लोग भेजनेको तैयार हैं। वे सचमुच मानते है कि ऐसा करके वे देशकी सेवा कर रहे हैं।

इस तरह हम पहलेसे कोई अच्छी स्थितिमे नही है, बल्कि शायद उससे बुरी स्थितिमे ही हैं। कारण, अब हमे न केवल एक विदेशी नौकरशाहीका सामना करना है, बल्कि एक राष्ट्रीय नौकरशाहीसे भी जूझना है। इस रिपोर्टका जोरदार विश्ले-षण करते हुए लाला लाजपतरायने ठीक ही कहा हे कि हम जो चाहते है वह यह नही हे कि हमारे शासक बदल जाये, हम तो शासन-प्रणालीमे परिवर्तन चाहते हैं, जनता और राज्यके सम्बन्धोमे तबदीली चाहते है। राज्य या तो जनताका प्रतिनिधि हो या फिर उसे खतम कर दिया जाये। रिपोर्टकी इस विचित्रताका कारण यह है कि गैर-सरकारी सदस्योपर कोई जिम्मेदारी तो हे नही, किन्तु वे सचमुच ऐसा मानते हैं कि वे हमारे हितोको हमसे अधिक अच्छी तरह समझते हैं। इसलिए जो जनसमु-दाय पूरी तरह जग गया हे, और जिसे अपना अधिकार समझता है उसे पानेके लिए वह कोई भी तकलीफ उठानेको तैयार हे, उस जनसमुदायकी आकाक्षाओको इस तरहकी टाँक-जोडसे कैसे तुष्ट किया जा सकता है?

[अंग्रेजीसे]

यग इंडिया, ६-१०-१९२१

११२. ३० सितम्बर

अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीने पूर्ण वाद-विवादके बाद विदेशी वस्त्रोंके पूर्ण बहिष्कारकी अन्तिम तिथि ३० सितम्बर नियत की थी। बहस इस बातपर थी कि तारीख ३० सितम्बर रखी जाये, या ३० अक्तूबर। जो लोग ३० सितम्बरके पक्षमें थे, उनका कथन था कि यदि हम ३० अक्तूबरतक बहिष्कारका कार्य पूरा कर सकते हैं, तो हम उसे ३० सितम्बरतक भी पूरा कर सकेंगे। हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि जो प्रस्ताव हमने पास किया था उसे पूरा करनेमें हम सफल नहीं हो सके। हाँ, निश्चय ही बहुत काम हुआ है। खादी बहुत लोकप्रिय हुई है और उसका चलन भी बहुत बढ़ा है। कितने ही स्थानोंमें उसकी किस्म भी सुधरी है। निश्चय ही अब अधिक चरखे चल रहे हैं, कई नये करघे तैयार किये गये हैं। जो उन्नति इस समयतक हुई है, उसे सन्तोषजनक अवश्य कह सकते हैं। पर जब हम यह खयाल करते हैं कि हम लोग इसे युद्धके पैमानेपर चला रहे हैं तब हमें यह प्रगति बिलकुल कम लगती है।

आखिर इस आन्दोलनकी सफलता उपभोक्ताओंपर ही निर्भर है। बाहरसे मँगा-नेवालोंने कुछ सहायता अवश्य की है, पर उपभोक्ताओंने केवल आंशिक बहिष्कारसे सन्तोष कर लिया है। प्रायः सब लोगोंने विदेशी टोपियाँ पहनना छोड़ दिया है, कुछने वास्केटें छोड़ दी हैं, पर धोतियोंका बहिष्कार तो बहुत ही कम लोगोंने किया है। उपभोक्ताओंने माल तैयार करनेवालोंकी कोई खास सहायता नहीं की है। सूत कातनेका काम कुछ गरीबोंने ही उठाया है। उपभोक्ताओंने पूर्ण परिवर्तनकी आवश्य-कता अनुभव नहीं की है। उपभोक्ता अभी पूरी तौरपर महसूस नहीं कर पाये हैं कि स्वराज्य प्राप्तिके बाद हमें किस प्रकार एक नये जीवनके तौर-तरीके अपनाने पड़ेंगे। टाल-मटोल करनेसे हमें सफलता नहीं मिलेगी। हमें इस मामलेमें सफलता पानेके लिए पूर्ण परिवर्तन करनेकी आवश्यकता है।

साथ ही बंगाल तथा मद्रासमें भ्रमण करते समय मैंने यह भी देखा कि लोग इसके लिए इच्छुक हैं। अधिकांश लोग आशान्वित थे और उनका यही कहना था कि थोड़ा और समय मिलनेपर वे पूरी तौरपर संगठन खड़ा कर लेंगे और बिना किसी कठिनाईके खादी तैयार करने लगेंगे। स्वदेशीके विषयमें स्त्रियोंको लेकर ज्यादा कठिनाई पड़ रही है। वे इस परिवर्तनको पुरुषोंकी भाँति खुशीसे स्वीकार करनेके लिए तैयार नहीं हैं। पर इन कठिनाइयोंको पार करनेसे ही हममें साहस, आशा, दृढ़ता और साथ ही भारतकी वास्तविक दशाका ज्ञान होगा। स्वदेशीके माने हैं वास्तवमें भारतका औद्योगिक पुनरुत्थान तथा फलस्वरूप बढ़ती हुई घोर दरिद्रताका विनाश। जब हम राज्यकी सहायताके बिना अपनी वस्त्रकी आवश्यकताएँ पूरी कर लेंगे और भारतकी गरीबीकी उस समस्याको हल कर लेंगे, जिसे हम लोग असाध्य समझते थे, तब

हममें यह आत्मविश्वास भी आ जायेगा कि हममे अपना प्रवन्ध आप कर लेनेकी योग्यता है।

आज सर विलियम विन्सेंट[1] हमे इच्छानुसार नाच-नचा सकते है। जो लोग अपने मनसे ही जनताके प्रतिनिधि वन बैठे है, उन लोगोंको वे यह समझाते है कि भारतके अल्पसंख्यक लोगोंके हितोंकी रक्षा केवल ब्रिटिश सरकार ही कर सकती है। उन्होंने उन लोगोंको यह विश्वास भी करा दिया है कि आजतक भारतीयोंमे से इतने भी अफसर और सैनिक नही निकल सके है जो विदेशियोंके आक्रमणसे देशकी सीमाओंकी रक्षा कर पाते।

पर जिस दिन सर विलियम विन्सेंट यह देखेंगे कि हम लोग अपनी मुख्य आवश्यकताओंकी पूर्ति ब्रिटिश सत्ताकी सहायताके विना और सच कहे तो उसके विरोधके बावजूद स्वयं करने लग गये है और उसके लिए हमे दूसरे देशोंकी सहायताकी आवश्यकता नही रह गई है, उसी दिनसे वे हमे नाच नचाना छोड देंगे और उनका रुख बदल जायेगा।

स्वदेशी हमारे लिए खिलाफत है, यही हमारी कामधेनु है। जिस समय हम स्वदेशीको सिद्ध कर लेंगे उस समय हममे इतनी शक्ति आ जायेगी कि हम खिलाफतकी रक्षा कर सकेंगे। उस समय हम अपने देशकी सीमाओंको वाहरी आक्रमणसे बचा सकेंगे और अपना प्रवन्ध भी आप कर सकेंगे।

मुझे विश्वास है कि यदि ३० करोड भारतवासी आज कृत-संकल्प हो जाये, यदि एक करोड कांग्रेस सदस्य ही आज जी-जानसे जुट जाये, तो हम इसी मासमे विदेशी कपडेका वहिष्कार कर सकते है और अपनी आवश्यकताके लायक स्वदेशी कपडा तैयार कर सकते है। उसके लिए तीन शर्तें पूरी करनी पडेगी। पहले हम हर तरहके विदेशी वस्त्रोंका परित्याग करे, दूसरे इस वीचके समयमे कमसे-कम वस्त्रोसे ही अपनी आवश्यकता पूरी करे, और तीसरे इस कमसे-कम आवश्यकताकी पूर्तिके लिए हम जितनी खादी आवश्यक समझे उसके लिए अपने हाथसे सूत कातकर तैयार करे या अपने पडोसीसे सूत कतवाएँ और उसे गाँवके जुलाहेसे वुनवा ले।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ६–१०–१९२१

१ गवर्नर जनरलकी कार्यकारिणी परिषद्के सदस्य।

११३. स्वदेशीमें विघ्न

ऊपर दिया गया पत्र[1] एक व्यापारी मित्रने लिखा है। उन्होंने आजतक जी-भर कर विदेशी कपडेका व्यापार किया है, फिर भी वे यह समझ गये है कि देशका हित किस वातमे है और चरखे और खादीका महत्त्व उनकी समझमे आ गया है। इस मित्रने जो भय वताये है वे हमारे लिए विचारणीय है।

मिलोके कपडेको उत्तेजन देना हमारी भूल है, इतना ही नही, वल्कि उसको खरीदनेके लिए दौडना भी भूल है। मिलोका कपडा तो खपता ही रहेगा। यदि हम मिलवालोको लालचमे डालेगे तो मालकी किस्म अवश्य विगडेगी और जो लोग इस कपडेका व्यापार मुनाफेके लिए ही करते है उनको कपडेका दाम वढानेका लालच हो जायेगा। जब देशके लोग स्वय देशहितका विचार करे तभी व्यापारियोसे भी यह आशा की जा सकती है कि वे देशहितकी ही खातिर व्यापार करे। मै खादी पहननेकी दिक्कत उठा लूं — यदि इसे दिक्कत कहूँ तो — और उसका दाम अधिक हो तो अधिक दाम भी दे दूं, यह ज्यादा आसान है या मिलमालिकोके लिए अपना करोडोका मुनाफा छोडना ज्यादा आसान है? यदि हम मालिकोसे कोई वहुत वडी आशा करे तो यह मूर्खता ही समझी जायेगी। हमे यही मान कर यह आन्दोलन चलाना चाहिए कि ये लोग सवसे पहले नही वल्कि सवसे पीछे जागेगे। इसमे उनका दोप निकालना मानव-स्वभावका दोप निकालनेके वरावर है। यदि उनके स्थानपर हम हो तो निश्चय ही हम भी ऐसा ही करे। इसलिए हममे से जो लोग स्वदेशीका व्यवहार धर्मके रूपमे करते है उनको मिलोका वना कपडा नही पहनना चाहिए।

इसका अर्थ यह है कि हमारे हिस्सेमे स्वभावत हाथके कते सूतकी और हाथकी वुनी खादी ही रह जाती है। "खादी" शब्दमे कोई चमत्कार नही है, उसके गुणमे चमत्कार है। खादीके रूपरगमे चमत्कार नही है। हाथके कते सूतका और हाथका वुना हुआ कपडा यदि खादी जैसा नही वल्कि मलमल जैसा लगता होता तो हम उसे पसन्द करते। हाथकी कती और हाथकी वुनी खादीका सार्वजनिक प्रचार करनेसे ही देशकी दरिद्रताका नाश होगा और उसके द्वारा ही स्वराज्य मिलना सम्भव है, यह वात हमे स्वर्णाक्षरोमे लिखकर रख लेनी चाहिये। कहनेका मतलव यह है कि जापान-से आई हुई अथवा हमारी मिलोमे वनी हुई खादी, खादी नही, वल्कि खादी-जैसा दिखनेवाला एक कपड़ा है। उस कपडेका तो त्याग ही किया जाना चाहिए।

खादी लेनेके लिए नडियादके लोगोको न अहमदावाद जाना चाहिए और न वम्वई। यह खादी तो उन्हे नडियादमे ही वनानी चाहिए क्योकि यह प्रयत्न है ही

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें उस खतरेकी ओर ध्यान खींचा गया था जो खादीकी तुलनामें कारखानोंके कपड़ेके प्रति लोगोंकी बढती हुई रुचिके कारण स्वदेशी आन्दोलनके लिए पैदा हो गया था।

इसलिए कि नडियादके लोगोका उतना पैसा नडियादमे ही रहे — अथवा उन्हे अपने जिलेमे काते हुए सूतकी और वहाँ बुनी हुई खादीका व्यवहार करना चाहिए। इसमे खादी महँगी नही होगी। घरकी वनी रोटी वाजारकी वनी रोटीसे सदा सस्ती ही होती है। यदि मै अपने पडौसी वुनकरको दो आने दूं तो यह माचेस्टर भेजे गये एक पैसेसे ज्यादा सस्ता है, क्योकि अपने पडोसी वुनकरको दिये गये दो आनेमे से मेरे पास कुछ वापस आ जायेगा। किन्तु यदि मै अपने पडोसी वुनकरको भूखो मारकर माचेस्टरके बुनकर या वम्वईके वुनकरको रोटी दूं तो इमसे मेरा पडोसी वुनकर मेरे लिए भार-रूप हो जायेगा और मुझे उसके लिए सदावर्तकी व्यवस्था करनी पडेगी। हम भारतमे इस तरहके सदावर्तकी व्यवम्था करके अपने मनको धोखा देते है कि हम पुण्य कमा रहे है। हमे सदावर्तकी व्यवस्था करनेकी जरूरत पडती है, इस स्थितिके मूलमे हमारा जो पाप हे वह हमे दिखाई नही देता — या ऐसा कहे कि उसे हम देखना नही चाहते। यदि कोई हमारी सम्पत्ति छीन कर हमारे लिए सदावर्त जारी कर दे तो हमे कैसा लगेगा? अथवा दीर्घकालके अभ्याससे हमे इस तरह भीख माँगनेकी आदत पड जाये तो जो लोग हमे देखेगे वे हमारे वारेमे क्या सोचेगे? फिर भी हम अपना कताई और वुनाईका प्राचीन वन्धा छोडकर भिक्षुक ही वन गये है, और यदि हम चेतेगे नही तो हमारा यह भिक्षुकपन और भी वढ जायेगा और अन्तमे 'जो लोग यज्ञ किये विना खाते है वे चोर है' इस नियमसे हम चोर ठहरेगे।

मुझे वगालके मिथ्याभिमानका भय नही है। यदि गुजरात अकेला ही स्वदेशी-व्रतका पालन करना सीख गया तो वगाल उमका अनुकरण अवग्य करेगा। मद्रासके लोगोको तरह-तरहके रगोका वहुत मोह है, उनके इस मोहको भग करना मुझे अवश्य ही कठिन लगता हे, किन्तु आजकी धर्म-जागृतिके समयमे जो आगे जाता हुआ दिखता है वह पिछडने लगे और जो पिछडता दिखता है वह आगे निकल जाये तो कोई आश्चर्यकी वात नही। वगालमे भी उद्योग तो किया ही जा रहा है।

इस पत्र-लेखकने वगालके धरनेके सम्वन्धमे ठीक जानकारी न होनेसे वगालियोके प्रति अन्याय किया है। मारवाडियोकी दूकानोके सामने धरना देनेवाले मारवाडी और खिलाफत समितिके स्वयसेवक थे। इसमे वगालियोका हाथ था ही नही। इस धरनेका आरम्भ शुद्ध हेतुसे किया गया था ओर वह अन्ततक सभ्यतासे ही चलाया गया था। इसमे सेठ जमनालाल वजाज-जैसे मारवाडी सज्जनोने प्रमुख भाग लिया था।

मुझे जो भय है वह केवल स्त्रियोके सम्वन्धमे है। हमने स्त्रियोको ऐसी महत्व-पूर्ण वातोसे भी वेजानकार ही रखा है। वे ऐसे कामोमे अभी-अभी रस लेने लगी है और जवतक विदेशी कपडेपर से उनका मोह नही जायेगा तवतक स्वदेशीका कार्य-क्रम पूरा न होगा। सौभाग्यसे स्त्रियोकी जागृति अचानक इतनी वढ गई है कि मै उनमे वहुत महत्वपूर्ण परिवर्तन होते देख रहा हूँ। किन्तु पुरुपोको अपनी उपेक्षाका वहुत वडा प्रायश्चित्त करना ही पडेगा। जव पुरुषोमे विदेशी कपडा ढूँढे नही मिलेगा तव स्त्रियोको उसका त्याग करनेमे तनिक भी देर नही लगेगी। अभी तो पुरुपोको भी सजने-धजनेकी जरूरत रहती है। उनका वारीक कपडेका मोह अभीतक नही गया है। उन्हे अभी धोतियाँ तो मिलकी ही चाहिए। उनको खादीका वोझा उठाने-

मे असुविधा प्रतीत होती है। जबतक पुरुष विदेशी कपडेका पूर्ण त्याग नही करते तबतक स्त्रियोसे ऐसी आशा कैसे की जा सकती है? इस तरह अनेक तरहकी बाधाएँ हमारे स्वदेशी प्रचारके मार्गमे खडी है। जब हम इनको दूर कर लेगे तभी स्वराज्यका सूर्य क्षितिजपर चमकता दिखाई देगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ६-१०-१९२१

११४. टिप्पणियाँ

पूर्व आफ्रिका

पूर्व आफ्रिकाके भारतीयोके कष्टोकी[1] कथा यहाँके अखबारोमे छपती है इतना ही नही बल्कि वहाँसे भी मित्र लोग मुझे समाचार देते रहते है। फिर भी मै "नवजीवन" या "यग इडिया" मे इस सम्बन्धमे शायद ही कभी कुछ लिखता हूँ। पूर्वी आफ्रिकाके भारतीय इसका अर्थ यह न समझे कि मुझे उनके कष्टोका ज्ञान नही है अथवा उनके प्रति मेरी सहानुभूति कम हो गई है। किन्तु जिसके ऊपर तलवारकी चोट पड रही हो वह सुईकी चुभनको कुछ नही मानता, मेरी स्थिति कुछ ऐसी ही है। मुझे भारतकी आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक स्थिति इतनी बिगडी हुई दिखाई देती है और उससे मेरा मन इतना दुखी होता है कि उसकी तुलनामे अन्य सब दुख मुझे कुछ नही लगते। मै यह भी जानता हूँ कि जबतक भारतके कष्टोका अन्त नही होता तबतक पूर्वी आफ्रिकाके भारतीयोके कष्ट दूर नही हो सकते। किन्तु जैसे कुएमे पानी भरता है तो चरईमे अवश्य ही आता है वैसे ही भारतका रोग जब मिट जायेगा तब पूर्वी आफ्रिकाके भारतीयोका रोग भी अवश्य मिट जायेगा। यदि हम भारतके रोगको दूर करनेका उचित उपाय न करते होते तो हम सभी पूर्वी आफ्रिकाके भारतीयोके कष्ट दूर करनेमे लग पडते।

इसका अर्थ यह नही है कि पूर्वी आफ्रिकाके भारतीय स्वय कोई पुरुषार्थ न करे। उनको तो पुरुषार्थ करना ही चाहिए। किन्तु भारतकी ठोस सहायता आज उन्हे उनके नामपर नही, बल्कि भारतके रोगको मिटानेके नामपर मिलेगी और मिल रही है। वे समझ गये है कि भारतका तेज इतना बढ गया है कि इससे उनको सहायता मिलती रहेगी। स्वय उनकी शक्ति भी बढी है।

पूर्वी आफ्रिकाके गोरोने मर्यादा तोड दी है। ऐसा जान पडता है उन्होने ब्रिटिश विधानको न माननेका निश्चय कर लिया है। कानूनका ऐसा भग कानूनकी अविनय अवज्ञा है। जब मनुष्य केवल अपना स्वार्थ सिद्ध करनेके लिए कानूनका भग करता है तब वह सविनय भग नही होता। अपने इस कार्यमे उन्होने जनरल स्मट्ससे सहायता माँगी थी, किन्तु वहाँसे उन्हे कोई सहायता नही मिली। मुझे विश्वास है कि यदि

१. रिहायशी और व्यापारिक क्षेत्रोंमें जातीय पृथक्करणके प्रस्तावोंके फलस्वरूप।

पूर्वी आफ्रिकाके भारतीय साहसी, विनयशील, मर्यादापालक और सत्यपर आरूढ रहेंगे तो उनको कोई आँच नहीं आयेगी। झूठा मनुष्य सदा कायर होता है। पूर्वी आफ्रिकाके अंग्रेज पाप करना चाहते हैं, इसलिए यदि भारतीय सत्यके ही मार्गपर स्थित रहेंगे तो अंग्रेजोंकी पापपूर्ण उद्धतता दबी रहेगी। भारतीय सत्यके मार्गपर स्थित रहें इसका अर्थ यह है कि वे अपना मामला मजबूत रखें, उसको बढ़ा-चढ़ाकर न बतायें और उनमें जो भी दोष हों, निकाल डालें। हमपर सदा एक आरोप लगाया जाता है और वह ठीक होता है। वह आरोप यह है कि हम गंदे रहते हैं, धन कमाते हैं फिर भी अपना घरबार मैला रखते हैं। हम बहुत गन्दगी फैलाते हैं और थोड़ी जगहमें बहुतसे लोग रहते हैं। इन आरोपमें जिस हदतक सत्य हो उस हदतक हमें अपने रहन-सहनमें सुधार कर लेना चाहिए।

हमारे ऊपर दूसरा आरोप यह लगाया जाता है कि हम हब्शियोंको ठगते हैं। इस आरोपमें कोई सचाई नहीं है, क्योंकि आरोप लगानेवाले लोग स्वयं बहुत धोखेबाज हैं। फिर भी हमें तो यह दोष भी, जिस हद तक वह सही हो निकाल ही देना चाहिए।

हमारे ऊपर तीसरा आरोप वे तो नहीं लगाते, किन्तु हम स्वयं उसे अनुभव करते हैं और वह यह है कि हममें एकता नहीं है। हममें यद्यपि जातीय अभिमान नहीं है, फिर भी हम अपना स्वार्थ सिद्ध करनेमें अपने समाजके हितोंका ध्यान नहीं रखते। जब हम विदेश जाते हैं और वहाँ कम संख्यामें होनेपर भी हममें यह दोष रहता है तो वह वहाँ साफ दिखाई देने लगता है और हम वहाँ बहुत बुरे रूपमें दिखाई देते हैं।

यदि पूर्वी आफ्रिकाके भारतीय इन सब दोषोंसे मुक्त हो जायें अथवा मुक्त रहें और अपना साहस बनाये रखें तो उनको कोई भी हानि नहीं पहुँच सकती।

हृषीकेश

हृषीकेश हरद्वारसे गंगोतरीके मार्गपर एक बड़ा तीर्थ है। यहाँसे यात्री धीरे-धीरे पहाड़ोंमें प्रवेश करते हैं। इसे प्रकृतिने सुन्दर बनानेमें कोई कमी नहीं रखी है। पहाड़, उछलती-कूदती गंगा, निर्मल जल और ऐसी ही अन्य बातोंको देखकर हमें ऋषियोंकी दूर दृष्टि, कलाकी परख और सरलताका पूर्ण भान होता है। किन्तु उनके उत्तराधिकारियोंने उसकी कैसी दुर्दशा की है, इसका कुछ-कुछ दुःखद अनुभव मुझे कुम्भ मेलेके अवसरपर हुआ था। हृदयके मलिन और नामके साधु श्रद्धालु यात्रियोंको ठगते थे। मलिन-शरीर और आलसी यात्री चाहे जहाँ शौचादि करके इस पवित्र स्थानको गन्दा करते थे। यह देखकर मेरा हृदय रोता था। पुराने ऋषि [शौचादिके लिए] जंगल जाते थे तो मीलों दूर एकान्तमें चले जाते थे। आज तो हृषीकेशमें बहुत बड़ी आबादी है। वहाँ लोग गंगाके किनारे बेशर्मीसे शौचके लिए बैठ जाते हैं और 'जंगल गये' ऐसी कल्पना कर लेते हैं। यह तो आलस, अज्ञान और गन्देपनकी हद हो गई। ये सब बातें मैंने वहाँ पाँच वर्ष पहले अपनी आँखोंसे देखी थीं, किन्तु अब एक लेखकने तीन महीने वहाँ रहनेके बाद अपने व्यक्तिगत अनुभवके आधारपर एक हृदयविदारक

विवरण भेजा है। इसे पढकर मेरा हृदय रो उठता है और मुझे लज्जा लगती है। इस पुण्य क्षेत्रमे पापकर्मोकी सीमा नही।

इस विवरणको जिसने भेजा है उसने अपना नाम-धाम भी दिया है और उसको छापनेसे मना भी नही किया हे, किन्तु उसका नाम-धाम देकर इसे छापनेकी मेरी हिम्मत नही होती। उसकी कुछ बाते तो छापने योग्य ही नही है। इसमे वहाँ रहनेवाले साधुओकी स्वेच्छाचारिताका, उनके वैभवका और उनकी व्यभिचार-लीलाओका यथार्थ चित्र दिया गया हे। उसमे यह भी वताया गया हे कि इससे उन्हे कैसे-कैसे रोग हो जाते है। और यह भी वताया हे कि गरीव यात्री कैसे लुटते है, तथा साधुवेशमे अनेक दम्भी लोग कैसी मौज करते है। इस गन्दगीको कौन दूर कर सकता है? पत्रमे कहा गया है कि इस सम्वन्धमे मुझे और शकराचार्यको प्रयत्न करना चाहिए। मै जानता हूँ कि मुझमे अभी तो इस गन्दगीको दूर करनेकी शक्ति नही हे। मुझमे तो केवल इस वर्णनका सार छाप देनेकी शक्ति हे। जो लोग वहाँ रहते है उनमे से कोई इसे देखकर कुछ कर सके तो अवश्य करना चाहिए। हिन्दुओके तीर्थस्थानोकी गन्दगी इतनी भयकर है कि उसे अधिकाश हिन्दुओके मनोको वदले विना दूर नही किया जा सकता। इस समय जो यह धर्मयज्ञ चल रहा हे, इसमे हिन्दुओका मन कितना वदलता है, इसीपर इन पाप-क्षेत्रोको पुन पुण्यक्षेत्र वनाना निर्भर है। इन स्थानोकी शुद्धि करना हिन्दू धर्मका पुनरुद्धार करनेके समान है। इस कार्यको करनेके लिए वहुत वडी तपस्याकी आवश्यकता है। उसके लिए स्थानीय लोगोका प्रभाव भी चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ६–१०–१९२१

११५. पत्र : गंगाधरराव देशपाण्डेको

[८ अक्तूबर, १९२१ के पूर्व][1]

प्रिय गगाधरराव[2],

मै सुन रहा हूँ कि जेल-महलमे रहनेका सौभाग्य पानेकी आपकी वारी आ गई है। आपके इस सौभाग्यसे मुझे ईर्ष्या होती है। आप जेल जानेवाले पीछे रहनेवालोका वोझ वढाते जाते है। किन्तु हम अपनी समस्त चिन्ताएँ ईश्वरको सौप देगे। आप जेलमे चरखा तो अलवत्ता माँग ही लेगे। वाकी, इस वरसके खत्म होनेके वाद हम आपको इस महलमे रहनेका सुख न उठाने देगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २०–१०–१९२१

१ यह पत्र ८ अक्तूबरको जेलसे छूटकर आनेके वाद १५ अक्तूबरको रँगराव रामचन्द्र दिवाकरने हुवलीकी सार्वजनिक सभामें पढा था। देखिए "भाषण वम्बईकी सार्वजनिक सभामें", १७–११–१९२१।

२. कर्नाटकके एक राजनैतिक कार्यकर्ता, लोगोंमें 'कर्नाटक-केसरी' के नामसे प्रख्यात।

११६. "टू अवेकिंग इंडिया" की प्रस्तावना

सत्याग्रह आश्रम
सावरमती
८ अक्तूबर, १९२१

इस पुस्तिकामे श्री स्टोक्सने विदेशी कपडेकी होली जलानेके समर्थनमे केवल अपना तर्क ही नही दिया है, वल्कि स्वदेशीका अर्थशास्त्र भी दिया है। यदि हम इतनी वात भी याद रखे कि किसी भी सुगठित विकासके लिए जितना उपयोगी और आवश्यक सर्जन है उतना ही विनाश भी, तो हमे यह समझनेमे कोई कठिनाई न होगी कि देशके सम्मुख जो फौरी कायक्रम रखा गया है उसकी पूर्तिके लिए विदेशी कपडेकी होली जलाना भी आवश्यक है। किन्तु ऐसे समयमे जव विदेशी कपडेकी होलीपर घोर आक्षेप किया जा रहा है, श्री स्टोक्सका प्रयत्न अवश्य ही सहायक सिद्ध होगा।

मेरी दृष्टिमे तो यह विरोध विदेशी महीन कपडेके प्रति हमने जो मोह अपने अन्दर पैदा कर लिया है उसकी तीव्रताका और विदेशी कपडेके उपयोगके फलस्वरूप भारतके करोडो घरोमे जो गरीवी पैदा हो गई है उसके अपर्याप्त ज्ञानका ही सूचक है। किन्तु मुझे वहसमे नही पडना चाहिए, मै ये पक्तियाँ केवल श्री स्टोक्सके योग्यतापूर्ण निवन्धोकी ओर पाठकोका ध्यान आकर्षित करनेके लिए ही लिख रहा हूँ।

मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]
टू अवेकिंग इडिया

११७. भाषण: अहमदाबादके मजदूरोकी पाठशालाओके समारोहमें[1]

८ अक्तूबर, १९२१

मै आपके पास वहुत दिनोके वाद आया हूँ। मै अवसे ढाई महीने पहले आपके पास आया था। इस वीचमे वहुत-सी घटनाएं हो गई है और अभी क्या-क्या होनेवाला है इसका पता मुझे या आपको नही है। हमे ईश्वर जैसे रखेगा वैसा ही रहना है।

आज देशमे जो-कुछ हो रहा है उसकी एक कल्पना देनेसे पहले मै आपके ही प्रश्नपर विचार करना चाहता हूँ। मैने सुना है कि मजदूर भाइयो और मिल-मालिकोके वीच कुछ मतभेद हो गये है। इस सम्वन्धमे अभी पचोकी वैठक होगी। जवतक पच

१ यह समारोह अनसूयावेनके सेवाश्रममे हुआ था और इसमें लाला लाजपतराय और चक्रवर्ती राजगोपालाचारी भी उपस्थित थे।

फैसला न दे दे तवतक आपको धीरज रखना चाहिए। एक वार मजदूर अधीर हो गये थे, किन्तु आखिर उन्होने अपने सलाहकारोकी वात सुनी और हड़ताल स्थगित कर दी।

सेठोने अनाजकी दुकाने खोलना स्वीकार किया था लेकिन वे ऐसा नही कर सके है। इस सम्बन्धमे जो-कुछ मुझसे हो सकेगा मै करूँगा। हमे अधीर होना उचित नही है। हमे हडताल एकदम नही कर देनी चाहिए। जो न्यायकी माँग करता है उसे राह देखनी चाहिए। हमने पचोसे मध्यस्थता कराना पसन्द किया है। इसलिए वे हमे जितना दे हमे उसे स्वीकार करना चाहिए। जो मजदूर, मजदूर-सघमे शामिल नही है, सम्भव है उनको अधिक लाभ मिलेगा। यदि वे सघमे होते तो उनको वह लाभ शायद न मिलता।

हम कितनी ही वार जो-कुछ माँगते है वह हमे मिल जाता है, किन्तु हमे अनुचित माँग नही करनी चाहिए। यदि हम अनुचित माँग करेगे तो आज जो आक्षेप मालिकोपर किया जाता है वही आक्षेप फिर हमपर किया जायेगा। उनके ऊपर आरोप यह है कि वे लोगोके कष्टोका अनुचित लाभ उठाते है। कपडेका भाव वढाने-का दूसरा अर्थ और क्या हो सकता है? हमे उनके जैसा नही बनना चाहिए। हमारी माँगे उचित होनी चाहिए। मजदूरोकी माँगे तो उचित ही होती है।

मजदूरो और मालिकोका सम्वन्ध भागीदारोके समान होना चाहिए। जैसा सम्वन्ध वाप और वेटेमे होता है वैसा ही सम्वन्ध मालिको और मजदूरोके वीच होना उचित है। जैसे वेटा वापके ज्ञान और अनुभवका लाभ उठाता है वैसी ही स्थिति मजदूरोकी होनी चाहिए। मै ऐसी स्थिति लानेका प्रयत्न कर रहा हूँ जिसमे मालिक मजदूरोका शोषण न करे और न मजदूर मालिकोको ठगे।

अब मै वर्तमान स्थितिपर आता हूँ। जैसा सम्वन्ध पिता-पुत्रमे होता है वैसा ही सम्बन्ध राजा और प्रजामे होना चाहिए। किन्तु सरकारकी नीयत तो ऐसी ही है कि वह भारतको यथाशक्ति लूटना चाहती है। हमे इस सरकारसे कुछ नही मिल सकता। यदि कुछ मिल सकता है तो जैसे अली-भाइयोको चुपचाप पकड लिया गया वैसा ही कुछ मिल सकता है। यह तो ऐसी स्थिति है जैसी मालिक और गुलामके बीच होती है। हमे अली-भाइयोको जेलसे छुडाना है। किन्तु हमे उनको सरकारसे गिडगिडा कर नही छुडाना है, अर्जियाँ दे कर भी नही छुडाना है, वल्कि स्वराज्य लेकर उस स्वराज्यके द्वारा मिले अधिकारसे हमे उन्हे छुडाना है। अभी एक विद्यार्थीने जो गीत गाया उसमे जैसा कहा गया है उस तरह हमे उनकी जजीरे खादीसे ही तोडनी है। अब जो हजारो निर्दोष लोग जेल जायेगे हमे उनको भी इसी तरह छुडाना है। यदि हम स्वदेशीको अपना ले तो यह कार्य कठिन नही है। किन्तु अभी तो हम विदेशी कपडेको त्यागनेके लिए ही तैयार नही हुए है। मजदूरोको तो खादी ही पहनना उचित है। मजदूर इतने अधिक गरीब नही है कि वे खादीका प्रयोग न कर सके। उन्हे यह शिष्ट वेश ही पहनना चाहिए। वे स्वय सूत कात सकते है, अपना चरखा रख सकते है, अपना करघा रख सकते है और अपने हाथसे खादी वुनकर पहन सकते है। जवतक वे ऐसा न कर सके तवतक उन्हे मेरी तरह लगोटी पहननी पडे तो भी अच्छा है।

मैं कहता हूँ कि आप बाजारकी खादी भी न पहनें, हाथकी बनी हुई और अपनी तैयार की हुई खादी ही पहनें। जब आप इतना कर लें तब आप मुझसे पूछें कि अली-भाई क्यों नहीं छूटे, स्वराज्य क्यों नहीं मिला और खिलाफतके प्रश्नपर न्याय क्यों नहीं मिला। मैं आपके इन प्रश्नोंका उत्तर देनेके लिए तैयार बैठा हूँ।

सरकार मुझे पकड़ेगी ऐसी अफवाह उड़ी है। सरकारको मुझे पकड़नेका अधिकार है। जैसी भाषाका प्रयोग अली-भाइयोंने किया वैसी ही भाषाका प्रयोग मैंने किया है। हमें सरकारसे नहीं, ईश्वरसे ही डरना चाहिए। हमारे धर्मके अनुसार खून-खराबी करना पाप है और जबतक हिन्दुओं और मुसलमानोंका समझौता कायम है तबतक मुसलमानोंके लिए भी हिंसा अथवा खून-खराबी करना हराम होना चाहिए। मैं गिरफ्तार कर लिया जाऊँ तो आप न मकान जलायें न गुस्सा करें और न किसीको गाली दें। यदि स्वदेशीको अपनानेमें आप अभी सुस्त हों तो मेरे गिरफ्तार होनेपर चुस्त बन जायें और मेरे पकड़े जानेपर दिन-रात चरखा चलायें। यदि हिन्दुओंके मनमें मुसलमानोंके प्रति कोई द्वेष हो तो हिन्दू उसे अपने मनसे निकाल दें। मुसलमानोंके मनमें भी हिन्दुओंके प्रति कोई द्वेष हो तो वे भी उसे निकाल दें। कोई मजदूर शराब न पिये, चोरी न करे, ढेढ और भंगीको अस्पृश्य न माने। मैं आपसे यही आशा रखता हूँ।

अब मैं इधर-उधर जाने-आनेमें वक्त लगाना नहीं चाहता। अब मेरे पास नये विचार भी नहीं हैं और न नयी भाषा है। अब मैं यही देखना चाहता हूँ कि कितना काम हुआ।

अब मैं ऐसे समारोहोंमें आ भी नहीं सकूँगा। मेरे लिए अब इतना समय बचाना भी कठिन है, इसलिए आपको चाहिए कि आप मुझे ऐसे कामोंसे मुक्त कर दें। मेरा मोह छोड़ दें और मैंने आपसे जो काम करनेके लिए कहा है उस काममें लग जायें। यदि आप ऐसा करेंगे तो स्वराज्य हाथमें आया रखा है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २०–१०–१९२१

११८. तार : गोपबन्धु दासको[1]

[८ अक्तूबर, १९२१ के पश्चात्]

केवल सच्चा साहसपूर्ण बयान दाखिल करें। परिणामका विचार कदापि न करें।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७६३६) की फोटो-नकलसे।

1 **समाज** नामक उड़िया साप्ताहिकके सम्पादककी हैसियतसे लिखे गये पत्रके उत्तरमें, जिसमें उन्होंने पूछा था कि उनपर मानहानिका जो आरोप लगाया गया है उसमें उन्हें अपना बचाव करना चाहिए या नहीं।

११९. यदि मै पकड़ा जाऊँ तो ?

मेरे पकडे जानेकी अफवाह उड रही है। सभी कहते है कि उन्हे निश्चित समाचार मिला है। मद्रासके एक सज्जनने तो यह तार भी दे दिया है कि मै पकड लिया गया हूँ।

लेकिन मै पकड लिया जाऊँ तो इसमे आश्चर्य क्या है? सरकारको मुझे पकडनेका हक है। जिस अपराधपर अली-भाई और उनके साथी पकडे गये है, वह अपराध तो मैने भी किया है। ऐसा भी कहा जा सकता है कि उस अपराधका मूल मै ही हूँ। मूलको छोडकर डालियोको काटनेका क्या अर्थ? लोगोको यह बात समझानेवाला मै ही तो हूँ कि सिपाहियोको खुल्लमखुल्ला यह कहा जा सकता है, "आप इस सरकारकी नौकरी करके पाप कर रहे है।" वर्तमान राजतन्त्रका नाश किया जाये यह बात भी मैने ही कही है। यदि अली-भाई इन्ही दो आरोपोमे पकडे गये है तो सरकार मुझे क्यो न पकडे?

यदि वह मुझे पकडे तो इसमे नाराजगीकी क्या बात है? सरकारको यह पता कैसे चलेगा कि इस तरहके विचार रखनेवाले लोग मुट्ठी-भर है या बहुत सारे? जो मनुष्य अपने विचारोके लिए दु ख सहता है वही उन विचारोको माननेवाला कहा जा सकता है। मै अपने विचारोको सचमुच मानता हूँ या नही, सरकार इसकी परीक्षा क्यो न करे?

असहयोगका नियम ही यह है कि या तो सरकार सीधी हो जाती है या असहयोगियोको जेल भेजती है, उनको पीडित करती है और फाँसीपर चढाती है।

यदि लोग सच्चे असहयोगी है, वीर है और समझदार है तो वे मेरे या किसी असहयोगीके जेल जानेसे न तो घबराये, न मारधाड करे और न हडताल करे। वे ऐसा समझकर प्रसन्न हो मानो कोई बात ही नही हुई है अथवा जैसी आशा थी वैसा ही हुआ है। उन्हे यह समझकर सन्तोष करना चाहिए कि अब हम मजिलपर जल्दी पहुँच जायेगे।

जो कोई नाराज होगा अथवा हडताल करेगा अथवा खूनखराबी करेगा वह मेरा अपमान करेगा, वह मुझे धोखा देगा और देशसे द्रोह करेगा। यदि ऐसा मनुष्य असहयोगी होनेका दावा करता है तो वह अपनी प्रतिज्ञाका भग करेगा।

अली-भाइयोके गिरफ्तार होनेपर भारतमे जो शान्ति कायम रही है उसे मै गौरवप्रद शान्ति मानता हूँ और उसमे अपनी जीत समझता हूँ। मै यह आशा करता हूँ कि मेरे पकडे जानेपर वैसी ही या उससे भी ज्यादा शान्ति रखी जायेगी। हमे किसीको मार कर नही, बल्कि स्वय मरकर जीतना है और जीवित रहना है।

मै चाहता हूँ और आशा रखता हूँ कि मेरे पकडे जानेका एक ही परिणाम हो अर्थात् जिस बातको समझानेमे मुझे अबतक मुश्किल हुई है उस बातको स्त्री-पुरुष मेरे गिरफ्तार होनेसे तुरन्त समझ जाये। जिस कामको करनेमे उन्हे अबतक आलस

लगता है अथवा अरुचि होती हे उसे वे तुरन्त करे और स्वराज्य प्राप्त करे। यदि हममे अभीतक कुछ विदेशी कपडेका मोह शेष है तो वे उसको निकाल दे, यह मेरी इच्छा है। आज तो लोग विदेशी कपडेमे से थोडा-सा ही जलाते है। मेरे बाद तो वे तत्काल अपने समस्त विदेशी कपडेकी होली कर दे। अगर ठीक कहे तो यह सब कार्य अली भाइयोकी गिरफ्तारीपर ही हो जाना उचित था। लोगोने उसके बाद स्वदेशीकी प्रवृत्तिको बढाया तो है, किन्तु पूरी तरह नही बढाया।

मै यह आशा अवश्य करता हूँ कि मेरे गिरफ्तार होनेपर सभी स्त्री-पुरुष और बालक जिन्होने अबतक चरखा चलाना शुरू न किया हो, चरखा चलाने लग जायेगे। मै यह आशा भी अवश्य ही रखता हूँ कि वे अन्त्यजोसे प्रेम करेगे, उनका स्पर्श करेगे और उनके दु खदर्दमे शामिल होगे।

मै यह भी आशा अवश्य रखता हूँ कि अन्त्यज लोग अपने जीवनमे सुधार करेगे, शराब पीना छोड देगे, दूसरे दुर्व्यसनोको भी छोड देगे, मासाहार न करेगे और साफ-सुथरे रहेगे। साथ ही वे सूत कातेगे, खादी बुनेगे और अपना गुजारा ईमानदारीसे करेगे।

सब लोग अहिंसाका पालन करे और दूसरोसे भी कराये।

हिन्दू मुसलमानोके लिए और मुसलमान हिन्दुओके लिए प्राण देनेके लिए तैयार रहे। वे एक दूसरेके धर्मका सम्मान करे और हिन्दू यह समझे कि खिलाफतकी रक्षा करना उनका धर्म है, और यह माने कि खिलाफतके लिए स्वराज्यको भी टालना पडे तो वे उसे टाल देगे क्योकि खिलाफतके बिना मुसलमानोके लिए स्वराज्यका कोई अर्थ ही नही है।

कोई यह न समझे कि गाधी जेल गये इसलिए अन्धेरा हो जायेगा। ऐसा मानना धर्म नही हे, ऐसा मानना तो कायरता हे। यदि हम स्वराज्यके लायक है तो हमे किसी नेताकी जरूरत इतनी नही लगनी चाहिए कि उसके बिना काम ही नही चलेगा। हरएक व्यक्तिमे देशका हित समझनेकी और उसकी रक्षा करनेकी योग्यता होनी ही चाहिए।

तिसपर भी हमें किसी-न-किसीको नेता बनाना ही होगा। इसलिए जिसका विचार, जिसका तर्क और जिसका चरित्र अधिकतर लोगोको पसन्द हो, हम उसको तुरन्त नेता बना सकते है। उसके साथ अनेक प्रसगोपर झगडा और वादविवाद भले ही हो, किन्तु उसे एक बार नेता बना लेनेपर हमे उसका पूरा अनुशासन मानना चाहिए और वह जैसा कहे वैसा करना चाहिये। जब हम यह जान लेगे कि स्वराज्य किन साधनो-से मिलेगा और खिलाफतकी सेवा कैसे होगी, तब हमे कोई परेशानी नही होगी। फिर हमारे लिए जानने योग्य और कोई बात नही रहती, केवल करनेका काम रह जाता है। भारत जैसा करेगा उसको वैसा फल मिलेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९–१०–१९२१

१२०. गुजरातकी परीक्षा

मैंने अपनी यात्रामे गुजरातकी जो प्रशसा सुनी है वह सच्ची है या झूठी यह देखनेके लिए मै गुजरातमे आ गया हूँ। गुजरातने सबसे पहले असहयोगको स्वीकार किया। मैने तभी कहा था कि यदि एक गुजरात ही पूरा असहयोग कर सके तो उसको अवश्य स्वराज्य मिल जायेगा और भारतको भी स्वराज्य मिल जायेगा। मै इस बात-पर आज भी कायम हूँ। यदि स्वराज्य इस वर्ष नही मिलेगा तो मेरी लाज तो जायेगी ही, समस्त भारतकी लाज भी जायेगी। सबसे अधिक लाज तो गुजरातकी ही जानी है। "आपने शर्तका पालन नही किया, मै क्या करूँ?" ऐसा कहकर मै तो छुट्टी पा लूंगा, किन्तु गुजरात क्या कहेगा? गुजरातके लोग तो यही कह सकते है, "हमने प्रतिज्ञा की थी, किन्तु हम उसे पूरा नही कर सके। हम इसी योग्य है।" गुजरातको ऐसी लजानेवाली बात स्वीकार न करनी पडे, इसका प्रयत्न प्रत्येक गुजरातीको करना चाहिए।

गुजरातकी प्रशसा तो मैने सुनी किन्तु मै देखता हूँ कि गुजरातियोने सरकारी पद नही छोडे है। वकालत भी कुछ ही वकीलोने छोडी है। हाँ, इनकी अपेक्षा विद्यार्थियोने कुछ ठीक किया है।

तब गुजरातने वास्तवमे ऐसा क्या काम किया है जिसके लिए वह इतनी प्रशसा-का पात्र है?

यह काम स्वदेशीका प्रचार है। उसके स्वदेशीके प्रचारके सम्बन्धमे इतना ही कह सकते है कि दूसरोकी तुलनामे उसने ज्यादा अच्छा काम किया है। इससे ज्यादा और उसके लिए क्या कहा जा सकता है? स्वदेशी एक ऐसी चीज है जिसमे हमारा विश्वास है। जबतक हरएक प्रान्त या जिला अपनी जरूरतके लायक सूत स्वय नही कात लेता और कपडा नही बुन लेता और विदेशी कपडेका बहिष्कार नही करता तबतक स्वराज्य मिलना असम्भव है। इसलिए गुजरातको जो यश मिल रहा है वह स्वदेशीके कारण ही मिल रहा है, यही कहना उचित है।

दूसरी बात अस्पृश्योके सम्बन्धमे है। इस सम्बन्धमे मैने अपनी टिप्पणियोमे सकेत किया है। हम इतना जरूर कह सकते है कि गुजरातमे अन्त्यज सभाओमे बिना किसी बाधाके आ सकते है। किन्तु क्या इससे कोई सन्तोष माना जा सकता है? हम अन्त्यजो-को छोडकर स्वराज्यका विचार भी नही कर सकते। यह तो ऐसी बात होगी — मानो हम अपने गुलामके तो मालिक बने रहना चाहते हो, किन्तु स्वय अपने मालिककी गुलामीमे से छूटना चाहते हो। क्या ईश्वर कभी इसे सहन कर सकता है? यह कभी सम्भव है? क्या ये गुलाम स्वय ही ऐसा सम्भव होने देगे? और क्या हमारे मालिक स्वय इतनी सावधानी न रखेगे कि हमारे गुलामोको अपनी ओर मिला ले और उन्हे हमसे भिडाये रखे? इसलिए हम गुजरातियोको स्वय ही यह विचार करना है कि

क्या हम सचमुच स्वराज्यके लिए तैयार हो गये है? क्या हममे उसके लिए पूरी योग्यता आ गई है?

मुझे मालूम है कि हमने तिलक स्वराज्य कोष सग्रह करनेमे अच्छा-खासा उद्योग किया है। हम सभाओकी व्यवस्था भी ठीक कर सकते है। हमने शराबबन्दीके मामलेमे भी अच्छा काम किया है। हम देखते है कि हमने खादीका भी काफी प्रचार किया है। सामान्यत देखे तो ये सब होते हुए गुजरातकी जागृतिके सन्तोषप्रद लक्षण है। किन्तु जैसे कोई मनुष्य नदी पार करनेके लिए बल लगा कर तैरे, किन्तु वह अन्तमे किनारेके पास पहुँचकर बल न लगा सके तो डूब जाता है और फिर उसके बारेमे यही कहा जाता है कि वह पर्याप्त बल नही लगा सका। इसी तरह हमे सोचना है कि क्या हमने स्वराज्य लेनेके लिए पूरा जोर लगाया है। मै इसका उत्तर हाँ या ना मे नही दे सकता, क्योकि अभी तो खादीके प्रचारका महीना समाप्त नही हुआ। इसकी समाप्ति तक तो हम बहुत कुछ कर सकते है। पहले इसकी अवधि सितम्बरतक रखी गई थी। वह समाप्त हो गई। इसमे कोई हानि नही, क्योकि वह तो मैने एक आशा व्यक्त की थी। किन्तु हमे याद रखना चाहिए कि इसी बातको दिसम्बरमे काग्रेसने बहुत सोच-समझकर स्वीकार किया था। सितम्बरसे दिसम्बरतक हमने इतनी प्रगति की थी कि प्रतिनिधियोने इसकी शक्यतापर विश्वास करके एक वर्षकी अवधि निश्चित कर दी। इसलिए लोगोकी प्रतिज्ञा तो दिसम्बरसे मानी जायेगी। और गुजरातने अबतक जो कुछ किया है उसको देखते हुए ढाई मासमे वह जोर लगा दे और इस कार्यको पूर्ण कर दे तो कोई आश्चर्यकी बात नही होगी। हाँ, यदि वह जोर न लगाये और इसे पूरा न करे तो यह दु खकी बात अवश्य होगी।

मुझे बताया गया है कि गुजरातके लोग जेल जानेके लिए तैयार है और उनमें से कुछ तो फाँसीसे भी न डरेगे। गुजरात अहिंसाका पालन तो अन्ततक करेगा ही, किन्तु यह अभी देखना शेष है। सच पूछो तो हमारे सम्मुख पिछले बारह वर्षोमे जेल जानेका अवसर तो आया ही नही है। किन्तु इसमे दु खकी बात नही है। हम नीति-नियमोका उल्लघन करके जेल जाना नही चाहते। हमारी मानसिक तैयारी जेल जाने की है, अभी इतना ही पर्याप्त है।

किन्तु हम जेल जानेकी तैयारीका अर्थ समझ ले। हम निरपराध हो तो जिस दिन जेल जाये उस दिनको शुभ माने। हमारे सगे सम्बन्धियो और प्रियजनोको भी हमारे जेल जानेपर दु ख मानने या रोने-धोनेका कोई कारण नही रहता। हमे जेलके कष्टोको सुख समझनेके लिए तैयार होना चाहिए।

फिर जेलकी तैयारीका अर्थ यह है कि यदि हमारे घर-द्वार बिके तो भी हम चिन्ता न करे। मैने ऐसे "वीर" भी देखे है जिनका कहना है, हम जेल तो जायेगे, किन्तु अपना घर-द्वार न बिकने देगे। यदि घर-द्वार जाये तो हम यह सहन नही कर सकते। यह स्थिति तो जेल जानेकी तैयारीकी सूचक नही है। अन्यायी राज्यमे अधिकाश लोगोके पास माल-मिल्कियत हो ही नही सकती। उसका भोग इनेगिने लोग ही कर सकते है और वे प्राय अन्यायीके सहयोगी होते है, अथवा सकटके समय

जब अन्यायी अपना स्वरूप बताता है, तब उसके सहयोगी वन जाते है। इसलिए जेल जानेकी तैयारीमे अपने-माल-मिल्कियतके जानेका डर छोड देना भी आ जाता है।

सच पूछो तो हम 'जेल' शब्दको दु खका सूचक मानते है। जेल जानेकी तैयारीका अर्थ है, सरकार चाहे जितना उत्पीडन करे उसे सहन करके भी उसके अधीन होनेसे इनकार करनेकी तैयारी। इसमे फाँसीकी तैयारी भी आ गई। फिर भी सामान्यत हम फाँसीको जेलके अन्तर्गत नही गिनते। फाँसी लगनेका भय होने पर भी जो देशके सम्मान और धर्मकी रक्षा करनेके लिए तैयार हो, ऐसे कितने लोग है, यह अभी देखना है।

हमे शुद्ध त्याग करना है। हमारी आत्मशुद्धिमे इतनी वाते तो कमसे-कम आती ही है।

१ स्वदेशी व्रतका पालन,
२ अस्पृश्यताका त्याग,
३ हर हालतमे सत्य ओर अहिसामे दृढ निष्ठा, और
४ हिन्दू और मुसलमानोमे मित्रता

मै चाहता हूँ कि प्रत्येक काग्रेस समिति और खिलाफत समिति अपना हिसाव इसी दृष्टिसे निकाले।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९–१०–१९२१

१२१. टिप्पणियाँ

दौरेकी समाप्ति

इन पिछले तेरह महीनोमे हिन्दुस्तानमे जितनी यात्रा करनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है उतना शायद ही किसीको हुआ हो। यात्रा क्या थी, हिन्दुस्तानकी पूरी परिक्रमा ही थी। और खासकर मुझे तो यह तीर्थयात्राके जैसी ही मालूम हुई। पश्चिममे कराचीसे लेकर पूर्वमे डिब्रूगढतक और उत्तरमे रावलपिडीसे लेकर दक्षिणमे तूतीकोरिन तक मैने यात्रा की। इस अवसरपर मुझे लोगोसे जो-कुछ कहना-सुनना था सो सब मैने कहा और सुना। अव कोई भी नई बात कहने-जानने लायक नही रह गई है। मैने यह भी बता दिया है कि खिलाफत, पजाबके प्रति न्याय और स्वराज्य प्राप्त करनेकी शर्तें क्या-क्या है। अव तो सिर्फ लोगोको काम करना वाकी रहा है। लोग स्वदेशीको अपनाये और स्वराज्य ले। स्वदेशीके बिना स्वराज्य कभी नही मिल सकता।

हाँ, अव कहीसे भी, मेरे पास बुलावे नही आने चाहिए। अव तो मेरे लिए यही ठीक है कि मै इन बाकी तीन महीनोमे एक ही जगह बैठ कर सोचूँ-विचारूँ, लिखूँ और शकाएँ दूर करता रहूँ।

इन तीन महीनोमे लोग बहुत-कुछ काम कर सकते है। अगर लोग अपना मुँह बन्द कर ले और सिर्फ काम ही काम करते रहे तो अवश्य अपना उद्देश्य सफल कर सकते है। स्वराज्य वाते वनानेसे नही, केवल काम करनेसे ही मिलेगा।

शान्ति ही आन्दोलन है

ईश्वरके मौनको कौन पहुँच सकता है? और फिर, उसकी क्रिया-बहुलताको भी कौन पा सकता है? वह तो अँगडाई लेनेकी भी फुरसत नही चाहता, और न नींद ही लेता है। हमारे सो जानेपर भी वह जागता ही रहता है। काममे लगा हुआ वह न खाता है, न पीता है। क्या उसके कभी विश्राम लेनेकी बात भी सोची जा सकती है? उसकी गतिकी तो कोई सीमा ही नही है? उसे आराम सदा ही नही है, उसे आरामकी दरकार भी कहाँ है? और इन अनन्त क्रियाओंको करते हुए उससे भूल नही होती। इस अनोखे स्वराज्यवादीने भूल करनेका अधिकार अपनी ही मर्जीसे छोड रखा है। अगर इससे हम लेश भी सीख ले तो बातकी-बातमे स्वराज्य ले सकते हैं। शान्ति रखते हुए भी यह अधिकसे-अधिक काम करता है। इससे हम यह सबक क्यो न लें कि शान्तिमे ही अधिकसे-अधिक शक्ति है? सरकार जो जीमे आये सो शौकसे करे, जो बकना हो, बका करे — हम तो बस अपना कर्त्तव्य ही करते चले जायेंगे। यही है कानूनका विवेकपूर्ण पालन और विवेकपूर्ण भग।

शान्तिका अर्थ

इस दिव्य शान्तिका अर्थ जडता, अज्ञानका अन्धकार अथवा असामर्थ्य नही है। यह तो शुद्ध चेतना, ज्ञान और शूरवीरता है। जो अपनी कायाको पत्थर बनाकर रहता है वह एक ही जगह बैठे हुए सारे ससारको हिलाया करता है। पत्थरको कौन मार सकता है? पत्थरको चाहे चकनाचूर कर डालिए, पर वह कभी माफी नही माँगेगा। तुम चाहो कि वह तुम्हारा घर बनानेमे जुट जाये तो यह भी नही हो सकता। तुम उसे चाहे जितनी चोट पहुँचाओ वह तुम्हारी गुलामी नही करेगा, और तुम थक जाओगे। जिस मनुष्यने अपने शरीरको पत्थर बना लिया हो उसको इस दुनियामे कौन परास्त कर सकता है। मनुष्यमे पत्थर और ईश्वर दोनोका योग होता है। मनुष्य क्या है, चेतनामय पत्थर है। इसीसे हमारे शास्त्र हमें यह शिक्षा देते है कि जिसने पूरी तरह अपना देह-दमन कर लिया है, पूरी विजय उसीकी है। इस तरह शान्तिका अर्थ है देह-दमन। हमने खुदको अपनी कायाका, शरीर-सुखका गुलाम बना लिया है, इसीलिए हमे सरकारका भी गुलाम होना पडा है। अब अगर हम अपनी कायाको जीत ले तो इस गुलामीके फेरमे छूट जाये। हम जितना ही अधिक शरीरके मोहका त्याग करेंगे उतनी ही अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त करेंगे।

सरकार हमें क्या दबायेगी? अगर हम उससे कुछ भी लाभ न चाहे तो फिर वह क्या कर सकती है? अगर हम उसके रुपये-पैसे, उसकी व्यवस्था और सुख-सुविधाओंसे कोई सरोकार न रखे तो हम गुलामीसे आज ही मुक्त हो सकते हैं।

शान्तिपर अमल

अलबत्ता हर एक आदमी पूर्ण शान्तिका पालन नही कर सकता, प्रत्येक मनुष्य अपनी कायाको पत्थरकी तरह नही बना सकता। इसलिए हम समाजमे रहकर थोडी-बहुत शान्तिका पालन करते हुए थोडा-बहुत सुख प्राप्त कर लेते हैं। स्वदेशीके

पालनमे हमने इस अल्प देह-दमनका मार्ग पाया है, और कोई कारण नही है कि छोटे-वडे सभी लोग इतना भी त्याग न कर सकें। थोडी देर कातना और बुनना लोगोको किसी भी तरह भारी नही जायेगा। इसीलिए चरखा हिन्दू-मुसलमानकी एकताका चिह्न है, यह एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा हमे यह वोध हो जाता है कि हम मद्रासी, कन्नडी, बगाली, मराठी, पजावी, सिन्धी सब भाई एक है। इस वातका ज्ञान रखते हुए भी जो चरखा तो नही कातता पर स्वराज्य माँगनेके लिए हाथ पसारता है, वह भिखारी है। उसे स्वराज्य माँगनेका कोई हक नही है। भिखारीको स्वराज्य कदापि नही मिलता। इसलिए जो लोग स्वराज्य चाहते हो उन्हे चाहिए कि वे चुपचाप ज्ञानपूर्वक हमेशा ईश्वरका नाम लेते हुए अपने मुल्कके खातिर सुवर्णमय सूत कातें। जव प्रत्येक हिन्दुस्तानी, जैसा कि वह अपने ही घरका पका हुआ खाना खाता है, अपने ही घरके कते सूतसे कपडा वुनने लगेगा, अथवा अपने पडौसीसे वुनवाकर पहनने लगेगा, इसके सिवा और कोई कपडा न पहनेगा उसी दिन स्वराज्य तैयार है, उसके पहले हरगिज नही।

यह एक वालककी शक्तिसे भी वाहर नही है, इस वातसे कौन इनकार कर सकता है, और इससे अधिक आसान दूसरी कोई शर्त हो भी क्या सकती है? हमने खुद ही इसे कठिन वना लिया है और फलस्वरूप तकलीफे उठाते है, अकालसे पीडित होते है, छुआछूतसे दु खी होते है और हिन्दू-मुसलमान एक दूसरेको अपना दुश्मन मानते है।

एक आदर्श

हासोट (गुजरात)मे एक डाक्टर है। वे तथा उनकी धर्मपत्नी रोज कमसे-कम तीन घटा कातते है। डाक्टरको चरखा कातना सीखे अभी चार ही महीने हुए है। दो ही महीनोके अभ्याससे वे ३० नम्वरका सूत कातने लगे है। दो महीनेमे उन्होने इतना सूत काता कि उससे उनके दो कुर्ते वन गये और फिर भी कुछ कपडा वच रहा। वे अपने इसी सूतके वने कुर्ते पहनते है। वचा हुआ टुकडा उन्होने वडे प्रेमके साथ मुझे दिया। इस टुकडेको मै अपने साथ रखता हूँ और जहाँ-तहाँ वडे हर्षके साथ लोगोको दिखाता हूँ। उनकी धर्मपत्नी तो और भी महीन सूत कातती है। डाक्टर साहव अगर अपना प्रयत्न जारी रखे तो एक वर्षमे २५ गज महीन खादी के लायक सूत कात लेगे। और इतना कपडा एक आदमीकी एक सालकी आवश्यकतासे ज्यादा ही है।

रुईका सग्रह

भाई लक्ष्मीदास पुरुषोत्तमने रुईके सम्वन्धमे जो चेतावनी दी है उसकी ओर मै पाठकोका ध्यान खीचता हूँ। उन्होने वताया है कि रुईके दाम बढे है और अभी वढते जा रहे है। कोई कहता है कि रुईके दाम वढनेका कारण रुईका सट्टा है। लेकिन मेरे एक परम मित्रके अनुसार उसका कारण यह है कि इस वर्ष अमेरिकामे रुई कम पैदा हुई है। सत्य इन दोनोके वीचमे है। दाम वढनेका कारण अमेरिकामें रुईका कम होना और यहाँ उसका सट्टा, दोनो है। मान लीजिए कि कल मेरे पास

कपास मन हुआ था और मैं उसे चालीस रुपये मनके भावसे बेच रहा था और प्रति मन चार रुपया लाभ उठा रहा था। आज मुझे खबर मिली कि अमेरिकामें फसल अच्छी नहीं हुई है और मैंने चालीसकी जगह उसका भाव अड़तीस रुपया मन कर दिया। ऐसे मौकेपर ज्यादा लेनेका भला मुझे क्या अधिकार है? इस उल्टे अर्थ-शास्त्रने, धनिकोंके शोषण और बेईमानी व्यापारकी इस रीतिने, सारी दुनिया तकलीफ पा रही है। यह मानना कि अमेरिकाकी आफतका हमारे लिए लाभ उठानेका उत्तम अवसर है, यह मानना मानुषी नहीं, राक्षसी ही कहा जा सकता है। इस जालमें से निकलनेका मार्ग भी स्पष्ट है। भाई लक्ष्मीदासने बताया है कि इस एक क्षेत्रमें हम [illegible]। यद्यपि भाव चढ़े हैं फिर भी हरएक आदमीको इस साल कुछ रुई खरीदकर अपने पास रख लेनी चाहिए, भले उसे कातना न आता हो तो भी। इसके सिवा, हमें हर किसानको चेतावनी देनी चाहिए कि अपनी सारी कपास बेच न दें। उसके पास उसकी जरूरतसे ज्यादा हो तो भले बेच दे। जो किसान तात्कालिक लाभके लिए, बड़े दाम पानेसे ललचाकर, अपनी सारी कपास बेचेगा, वह अदूरदर्शी ही कहा जायेगा। सच तो यह है कि हरएक किसान अपनी जरूरतका अन्न और अपनी जरूरतकी कपास संग्रह करे, इतना ही नहीं, उसे उनका संग्रह कमसे-कम अपनी सालभरकी जरूरतका खयाल करके करना चाहिए। ताकि यदि किसी वर्ष फसल अच्छी न आये तो उसे चिन्तित न होना पड़े।

मैं यह कोई नई बात नहीं कह रहा हूँ। हमारे जंगली नहीं, सभ्य और ज्ञानी पूर्वज सौ-डेढ़ सौ वर्ष पहले ऐसा ही करते थे। कई तो बीस वर्ष पहले तक भी ऐसा ही करते थे और इसीमें अपनेको सुखी मानते थे। आज हम अल्प दृष्टिवाले लोग अपनी कपास महँगे भावसे बेच देते हैं, फिर अपना समय बेकार नष्ट करते हैं, और बादमें महँगा कपड़ा खरीदकर अपनेको सभ्य मानते हैं। मैं तो अपने उन जंगली माने जानेवाले पूर्वजोंको ही ज्यादा समझदार और दूरदर्शी कहूँगा। हाँ, मैं यह जरूर चाहता हूँ कि हम पाटीदार होने या बननेके झूठे खयालोंको छोड़ दें और सच्चे किसान बनें।

रायलसीमाका इलाका

निजामने अपने प्रदेशका एक बढ़िया इलाका सरकारको दे दिया था। रायलसीमाका यह इलाका तेलुगू भाषी आन्ध्र प्रान्तका हिस्सा है। अंग्रेजीमें इसे 'सीडेड डिस्ट्रिक्ट' कहा जाता है। मैं जो दौरा कर रहा हूँ उसकी समाप्ति इसी इलाकेमें हुई। ऐसा कहा जा सकता है कि मेरे ये तीन दिन यहाँ सभाएँ करते हुए ही बीते हैं — दिनमें भी सभाएँ और रातमें भी सभाएँ। इन तीन दिनोंमें हम लोग कालीकारी, चित्तूर, तिरुपति, रेनीगुंटा, राजमपेट, कडप्पा, ताडपत्री, गुन्टकल, करनूल और बेल्लारी गाँवमें गये। इनमें से अधिकांश जगहोंमें कम या अधिक मात्रामें आजकल अकालकी स्थिति है। इलाकेकी आबादी लगभग २८ लाखकी है। अकालके कारण इतनी ज्यादा भुखमरी फैली है कि कहीं-कहीं तो लोग सकुटुम्ब डूबकर, आत्मघात करके, मर गये हैं। बाजारमें अनाज न मिलता हो ऐसी बात नहीं है। लेकिन अनाज खरीदनेके

लिए लोगोके पास पैसा नही है और वे पैसा कमा सके ऐसा कोई काम उनके पास नही है। सरकारने सडके बनाने या सुधारनेका यानी पत्थर ढोने और फोडनेका काम शुरू किया है लेकिन उसमे बहुत ही थोडे लोग जा सकते है। इस काममे स्त्रीको बहुत हुआ तो ५ पैसे और पुरुषको ८ पैसे मिलते है। इसके सिवा, मजदूरी तीन आने ही क्यो न हो उन्हे प्रति आना एक पैसा दस्तूरीके रूपमे मुकादमको तो देना ही पडता है। इस प्रदेशमे तीस वर्ष पहले लोग कातने और बुननेका काम करते थे। आज भी स्त्रियाँ उसे भूली नही है। ताडपत्री गाँवमे मैने अन्त्यज स्त्रियोको काग्रेस कमेटीके मकानमे अच्छी तरह कातते हुए देखा। इन स्त्रियोको आठ घटा कताईकी मजदूरी तीन आना मिलती है और ये तीन आने उन्हे पूरे मिलते है, कोई दस्तूरी नही देनी पडती, कोई बदमाश उनपर कुदृष्टि नही डाल सकता। इस तरह वे पत्थर फोडनेवालोकी अपेक्षा अधिक कमाती है। इस इलाकेके हजारो स्त्री-पुरुषोने चरखेका पुनरुद्धार करनेके लिए मुझे आशीर्वाद दिया। यदि हर जगह काग्रेस कमेटियाँ अपना काम पूरा करे तो आगामी वर्ष अकाल नही होगा। महँगाई तो होगी लेकिन लोग कातकर और बुनकर अनाज अवश्य खरीद सकेगे।

सरकारका द्वेषपूर्ण व्यवहार

एक परम मित्र कहते है कि जो लोग असहयोगकी निन्दा करते है वे यह भूल जाते है कि इतने वर्षतक यह सरकार हमारी सभ्यताके साथ, हमारी भाषाके साथ और हमारी जातिके साथ असहयोग ही तो करती रही है और अब यदि हम इस सरकारसे असहयोग नही करते तो हमारे जैसा बुद्धिहीन कोई नही होगा। सरकार हमारे साथ उक्त असहयोग आज भी कर रही है, उसका एक ताजा और द्वेषपूर्ण उदाहरण सेठ गोदरेजके प्रति उसके हालके व्यवहारमे मिलता है। इस उदार और दानी व्यक्तिने तिलक स्वराज्य कोषमे, केवल अस्पृश्योके लिए और शराबबन्दीके कामके लिए, काफी पैसा दिया है, इसलिए सरकारने एक गुप्त गश्ती चिट्ठी जारी की है कि किसी भी सरकारी विभागके लिए गोदरेजकी तिजोरियाँ न खरीदी जाये। एक ऐसा समय था जब सरकारी कार्यालयोमे ये तिजोरियाँ खासी सख्यामे ली जाती थी लेकिन सेठ गोदरेजने तिलक स्वराज्य कोषमे दान दिया इसलिए 'न्यायी' सरकारने उनकी तिजो-रियोके बहिष्कारका फरमान निकाल दिया। ऐसी दुष्ट और द्वेषपूर्ण सरकारसे जनता असहयोग न करे तो और क्या करे?

दीवाली

दीवालीके दिन रामकी विजयका उत्सव मनाया जाता है। रामकी विजयका अर्थ है धर्मकी विजय। धर्मकी विजयका उत्सव तो धर्मका पालन करनेवाले ही मना सकते है। उसे वही राष्ट्र मना सकता है, जो अपने स्वाभिमानकी रक्षा करता हो और स्वाश्रयी हो। इसलिए मै तो ऐसा समझता हूँ कि हमारा कर्त्तव्य है कि जबतक हमे स्वराज्य नही मिल जाता तबतक दीवालीके इन दिनोमे हमे किसी प्रकारका आमोद-प्रमोद नही करना चाहिए और न मिष्टान्न भोजन करना चाहिए। जिस समय अपने धर्म और देशकी सेवाके लिए हजारो निर्दोष लोग जेल गये हुए हो उस समय

हम किसी भी प्रकारके आनन्दका उपभोग कैसे कर सकते है? जिसका सगा भाई जेलमे बाजरेकी रोटी खा रहा हो वह बाहर श्रीखण्डका स्वाद कैसे ले सकता है? जिसके हजारो भाई-बहन भूखसे मर रहे हो वह नाचना-गाना कैसे कर सकता है? दीवालीके इन दिनोमे हम बहुत चमक-दमकवाले विदेशी कपडे खरीदते है। मेरी सलाह है कि कोई भी बेकार कपडा न खरीदे, जितनी जरूरत हो उतनी हाथकी कती-बुनी खादी ही खरीदे और उसे खरीदनेमे भी जितनी काट-कसर हो सकती हो करे।

चरखा —— अली-भाइयोका हमदम

अली-भाई जेलमे बैठे-बैठे भी चरखेका ध्यान किया करते है। उनका एक तार आया है, जिसमे वे कहते है कि हमने तथा हमारे कैदी-भाइयोने कुछ चरखे हमे देनेके लिए सरकारसे कहा है, जिससे कि हम लोग यहाँ फुरसतका वक्त सूत कातकर बिताया करे। इस प्रकार सब लोग अगर निश्चय कर ले तो जरूर ही स्वराज्य जल्द आ जाये। अब देखना है कि सरकारकी तरफसे इसका क्या जवाब मिलता है।

अन्त्यजोके बारेमें

अब हमे इस बातपर विचार करना चाहिए कि अन्त्यजोके लिए गुजरातमे हम क्या करते रहे है। हरएक काग्रेस कमेटी इस दिशामे कुछ करती है या नही? ताड-पत्रीकी काग्रेस कमेटीने अन्त्यज बहनोको अपने ही मकानमे काम दिया है। वहाँ सब लोग उनके बीचमे उठते-बैठते है और वे भी सब लोगोके बीचमे उठती-बैठती है। इस तरह ऐसे अनेक रास्ते है जिनसे हम अन्त्यजोको यह बता सकते है कि वे हमारे सगे भाई-बहन ही है। हाँ, हममे इस बातकी लगन होनी चाहिए। उनके लिए हमने कितने कुएँ खुदवाये है? कितनी पाठशालाएँ खोली है? उनके साथ हमारे घरमे कैसा व्यवहार किया जाता है? क्या हम उन्हे अपना जूठा भोजन देते है? यह अन्तिम सवाल स्त्रियोके लिए अधिक विचारणीय है। अस्पृश्यताके नाशका केवल इतना ही अर्थ नही है कि अन्त्यजका स्पर्श हो जानेपर हम अपनेको अशुद्ध नही मानते और नहाते नही। हमे अस्पृश्यताके अर्थपर गहरा विचार करना चाहिए। उसमे तिरस्कारकी जो जबरदस्त भावना है उसे हमे जडमूलसे उखाडकर फेक देना चाहिए। जबतक हमने अपने मनसे तिरस्कारकी इस भावनाको नही निकाल फेका तबतक अस्पृश्यता कायम ही है। और तिरस्कारकी यह भावना जिस दिन सम्पूर्ण नष्ट हो जायेगी उस दिन निश्चय ही प्रत्येक अन्त्यज भाई-बहन इस बातको पहचाने बिना नही रहेगा।

धर्मके नामपर अत्याचार

कल नवरात्रिका अन्तिम दिन है। गत वर्ष भद्रकालीके मन्दिरमे उस मन्दिरके पुजारीको शहरके महाजनोने बकरेका बलिदान नही करने दिया था और उसके साथ ऐसा समझौता किया था कि महाजन लोग उसे प्रति वर्ष छ सौ रुपये देगे और वह दूसरी पूजाएँ जो भी उसे करनी हो करेगा, किन्तु देवीको बकरा नही चढायेगा।

इस बार पुजारीका कहना है कि वह पिछले वर्षकी प्रतिज्ञासे बँधा हुआ नही है। यदि वह ऐसा कहता हो तो वह अपने पापमे प्रतिज्ञा-भगके एक दूसरे पापकी वृद्धि कर रहा है।

मैंने सुना है कि इस सम्बन्धमे पुजारीको बकरेका वध करनेसे रोकनेके लिए निषेधादेश भी निकलनेवाला है। लेकिन यह आदेश निकले या न निकले, उससे हमारा कोई सम्बन्ध नही है।

जो लोग अपनेको हिन्दू मानते है, वे ऐसे प्राणिवधमे कोई सहयोग नहीं दे सकते। मेरी दृढ मान्यता है कि धर्मके नामपर किसी प्राणीका वध करना अधर्म है। जिस मन्दिरमे ऐसा वध होता है वह मन्दिर ही नही है। ऐसे किसी भी मन्दिरमे हिन्दुओको जाना ही नही चाहिए। कालीमाता पशुवध नही चाहती। वह तो हमारा ही बलिदान चाहती है। अपने पापका, अपनी मलिनताका वध करके ही हम कालीमाताके समक्ष खडे हो सकते है। जो हिन्दू अष्टमीका होम करना चाहते है उनसे मै कहता हूँ कि "आप लोग हाथके काते हुए सूतकी खादी पहनकर सत्यका, अहिसाका और इन्द्रिय-सयमका व्रत लीजिए।" मुझे विश्वास है कि जो लोग ऐसा करेगे वे शुद्धतम बलिदान करेगे। इतना ही नही वे स्वराज्यके योग्य भी बनेगे। इसलिए मुझे आशा है कि यदि यह पुजारी बकरेका वध करनेकी अपनी हठपर कायम रहता है तो कोई भी हिन्दू उस मन्दिरमे जाकर और प्राणिवधके इस पापमे सहयोगी होकर ईश्वरकी निन्दा करनेके पापका भागी नही होना चाहेगा।

शनिवार आश्विन सुदी ७ (८ अक्तूबर, १९२१)

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ९–१०–१९२१

१२२. भाषण: बम्बईसे कार्यसमितिके प्रस्तावके सम्बन्धमे

९ अक्तूबर, १९२१

श्रीमती नायडूने सभाकी अध्यक्षता की और सभाके सम्मुख प्रस्ताव महात्मा गाधीने रखा। प्रस्तावका समर्थन लाला लाजपतराय, मौलाना आज़ाद सोबानी, बाबू राजेन्द्रप्रसाद, आदि नेताओने किया . .। प्रस्ताव कराची-प्रस्तावसे मिलता-जुलता था। उसे सब लोगोने खडे होकर मंजूर किया। उसके बाद महात्मा गाधीने विदेशी कपडोके ढेरमें आग लगाई और वह पटाखोकी आवाजके साथ और आगकी लपटोमे जल उठा।

महात्मा गाधीने प्रस्ताव रखा

बम्बईमे इसी ५ तारीखको हुई बम्बईके नागरिकोकी यह सभा काग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमे स्वीकृत किये गये निम्न प्रस्तावका समर्थन करती है

कार्य-समिति अली-भाइयो और उनके साथियोको जेल जानेपर बधाई देती है और इस सरकारके अधीन फौजमें नौकरी करनेके सम्बन्धमें कराचीके खिलाफत सम्मेलनके प्रस्तावपर विचार करनेके पश्चात् कार्य-समिति यह सम्मति

प्रकट करती है कि इस प्रस्तावमें तत्वतः उसी सिद्धान्तका समर्थन किया गया है जिसे कांग्रेसने अपने कलकत्ताके विशेष अधिवेशनमें और पिछले वर्ष नागपुरके सामान्य अधिवेशनमें निर्धारित किया था। इस प्रस्तावमें कहा गया है कि इस सरकारकी किसी हैसियतमें नौकरी करना भारतीयोंके राष्ट्रीय सम्मान और राष्ट्रीय हितके विरुद्ध है, क्योंकि सरकारने हमारे सैनिकोंका उपयोग मिस्रियों, तुर्कों, अरबों और अन्य राष्ट्रोंकी राष्ट्रीय भावनाको कुचलनेके लिए किया है। कार्य-समितिने कांग्रेसकी ओरसे सैनिकों और असैनिक कर्मचारियोंको नौकरी छोड़नेका निर्देश इसलिए नहीं किया है कि सरकारी नौकरी छोड़ने और अपनी आजीविकाका साधन ढूंढनेमें असमर्थ ऐसे लोगोंके भरण-पोषणका भार लेनेके लिए कांग्रेस अभी तैयार नहीं है। किन्तु कार्य-समितिकी राय है कि कांग्रेसके असहयोग सम्बन्धी प्रस्तावकी भावनाके अनुसार सभी कर्मचारियोंका, फिर चाहे वे सैनिक हों या असैनिक, यह कर्त्तव्य है कि उनमें से जो लोग कांग्रेसकी सहायताके बिना अपना निर्वाह कर सकते हों वे अपनी नौकरी अवश्य छोड़ दें।

कार्य-समिति समस्त भारतीय सैनिकों और पुलिसके सिपाहियोंका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करती है कि थोड़े ही समयतक प्रशिक्षण लेनेके बाद रुई धुनने, सूत कातने और हाथसे कपड़ा बुननेसे उनको स्वतन्त्र आजीविकाका एक सम्मानपूर्ण साधन मिल सकता है। कार्य-समितिकी राय यह भी है कि ऊपर बताये गये कराचीके प्रस्तावके सिलसिलेमें लोगोंपर मुकदमा चलाने और सजा देनेके जो कारण बताये गये हैं उनसे लोगोंकी धार्मिक स्वतन्त्रतामें अनुचित हस्तक्षेप होता है।

इस प्रस्तावको प्रस्तुत करते हुए, महात्मा गांधीने कहा :

प्रस्तावके दो भाग हैं। पहला भाग कराचीवाले प्रस्तावके सम्बन्धमें है और उसका उद्देश्य राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे उस प्रस्तावका समर्थन करना है। और यदि प्रस्ताव-का समर्थन करना अली-भाइयों और उनके साथी कैदियोंके लिए अपराध है तो वह मेरे लिए और इस सभामें प्रस्तुत श्रोताओंके लिए भी अपराध है, जिनकी ओरसे यह प्रस्ताव रखा जा रहा है और स्वीकार किया जा रहा है। मैं सैनिकोंको यह बतलाना अपना कर्त्तव्य मानता हूँ कि जिस सरकारने देशका विश्वास खो दिया है, उसकी सहा-यता करना अनुचित है। मुझे बताया गया है कि लोग इस प्रस्तावको एक वकीलकी चतुराईसे बनाया हुआ बताते हैं जिससे कानूनकी पकड़से बचा जा सके। यह कहा गया है कि यह प्रस्ताव खिलाफत-सम्बन्धी प्रस्ताव जैसा नहीं है और इसमें सैनिकोंको हथियार डालनेके लिए कहना सभीके लिए अनिवार्य नहीं है। इस रायसे मेरा मतभेद है। मेरी राय यह है कि जो भी व्यक्ति इस प्रस्तावका समर्थन करते हैं वे सैनिकोंसे कहते हैं कि यदि वे किसी अन्य साधनसे अपना निर्वाह कर सकें तो सरकारकी

नौकरी छोड देना उनका कर्त्तव्य हे। यदि मेरी वाणी सैनिकोतक पहुँच सके, तो मैं उनसे अवश्य ही कहता हूँ कि वे चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, यदि अपने धर्म और देशमे उनका विश्वास है तो वे इस नौकरीको छोड दें, फिर चाहे उन्हे पत्थर तोडकर भी अपनी जीविका क्यो न कमानी पडे। जो मनुष्य भारतका सैनिक बनना चाहता है वह इस सरकारका, जिसने भारतका अहित किया है, सैनिक नही बन सकता। जिन लोगोने जलियाँवाला बागमें निर्दोष लोगोकी हत्या की वे सैनिक नहीं हैं, बल्कि पशु है। जो लोग बिना कोई खतरा उठाये केवल हत्या करते है, वे लोग सैनिक नहीं होते, पशु होते है। इसलिए मुझे इस सभाकी ओरसे सिपाहियोसे यह कहनेमें कोई झिझक नही है कि यदि उन्हे देश और धर्मका कुछ भी ध्यान है तो वे इस सरकारसे सम्बन्ध तोडनेमें एक क्षण भी न खोयें।

प्रस्तावमें एक बातका निषेध किया गया है और वह है गुप्त प्रचार। अहिंसाकी पुस्तकमें से गोपनीयता निकाल दी गई है। हम जिस बातको खुल्लमखुल्ला कहनेके लिए तैयार नहीं, उसे गुप्त रूपसे कहनेमें हमे शर्म आती है। इसलिए यदि सरकार असहयोगके ध्येय और सिद्धान्तके पठनको अपराध मानती है, तो मै उससे कहता हूँ कि वह आज ही इस सायकालीन सभाकी कार्रवाईमें भाग लेनेवालोको गिरफ्तार कर ले। यदि सैनिकोसे यह कहना अपराध है कि धर्म और राष्ट्रीय हितकी दृष्टिसे उनके लिए सरकारकी नौकरी करना अवैध है, तो मै सरकारसे कहता हूँ कि वह मुझे गिरफ्तार कर ले और जिन लोगोने इस प्रस्तावका समर्थन किया और इसे मजूर किया है उन्हे भी पकड़ ले।

प्रस्तावके दूसरे भागमे सैनिकोको सम्मानपूर्वक आजीविका कमानेका मार्ग बताया गया है। उसमें स्वदेशीका उल्लेख है। मै श्रोताओसे कहता हूँ कि यदि उनको विश्वास न हो कि स्वदेशी वस्तुओका प्रयोग लाभप्रद है और चरखेमे देशकी गरीबी दूर करनेकी शक्ति है, तो वे इस प्रस्तावको स्वीकार न करे। प्रस्तावमे सैनिकोसे कहा गया है कि वे रुई धुनकर और कपडा बुनकर अपनी आजीविका कमा सकते है। मै मौलाना मुहम्मद अलीकी तरह सचमुच यह विश्वास करता हूँ कि हमे गोलियो और बारूदकी जरूरत नहीं है। सूतके गोले हमारी गोलियाँ है, और चरखे हमारी बन्दूके। मैंने पिछले सितम्बरमें कहा था कि यदि हम कुछ शर्तोको पुरा कर ले तो बारह महीनेमे स्वराज्य लेना और खिलाफत और पंजाबके अन्यायोका प्रतिकार कराना हमारे लिए सम्भव है। बारह महीने तो बीत गये; किन्तु स्वराज्य नहीं मिला। इसमे दोष हमारा ही है। हमने काम बहुत किया है, किन्तु हमसे जो न्यूनतम शर्ते पूरी करनेकी अपेक्षा की गई थी वे पूरी नही हो सकीं। इस दोषमें मैं अपनेको भी शामिल मानता हूँ।

मुझे दु ख है कि मुझमे प्रत्येक वकीलको यह समझानेकी शक्ति नही है कि जिन अदालतोसे न्याय नहीं मिलता उनमे वकालत करना अनुचित है। मुझे दु ख है कि

मेरी तपस्या इतनी नहीं कि मैं छात्रोंको विश्वास दिला सकूं कि सरकारी स्कूलोंसे सम्बन्ध रखना अनुचित है। मैं जानता हूं कि मैं बम्बईके सब स्त्री-पुरुषोंको यह विश्वास नहीं दिला सका हूं कि खद्दरके सिवा दूसरा और कोई कपड़ा पहनना पाप है। किन्तु आपको मेरा खयाल करनेकी जरूरत नहीं। यदि देश इस महीनेमें भी स्वदेशीके कार्यक्रमको पूरा कर ले, तो स्वराज्य इस वर्षके अन्दर निश्चित मिल जायेगा और खिलाफत और पंजाबके अन्यायोंका प्रतिकार भी हो जायेगा। चरखेमें मेरा विश्वास वैसा ही बना हुआ है। मुझे कोई सन्देह नहीं कि भारतकी गरीबीकी समस्या इससे, और केवल इसीसे, हल होगी। मेरी दृष्टिमें इसका मान लिया जाना इस बातकी कसौटी है कि हिन्दुओं और मुसलमानोंमें एकता हो गई है और हमने हिंसा त्याग दी है। यदि आप स्वदेशीके कार्यक्रमको पूरा न कर सके, तो मैं सामूहिक सविनय अवज्ञामें भाग नहीं लूंगा। जबतक खद्दरका प्रसार सर्वत्र नहीं हो जाता और विदेशी कपड़ा सिर्फ जहां-तहां ही नहीं रह जाता, तबतक मुझे सन्तोष नहीं होगा। मैं यह देखना चाहता हूं कि बम्बईके स्त्री-पुरुष केवल खद्दर ही पहने हों। मुझे बताया गया है कि खादी-भण्डारसे जुलाईमें १८,००० रुपयेकी, अगस्तमें १२,००० रुपयेकी और सितम्बरमें ७,००० रुपयेकी खादी बिकी। मैं लाखों रुपयेकी खादी बिकती देखना चाहता हूं। मैं यह देखना चाहता हूं कि बम्बईके घर-घरमें चरखा चल रहा है। बम्बई तिलक स्वराज्य-कोषके मामलेमें सबसे आगे रहा। वह स्वदेशी आन्दोलनके सम्बन्धमें भी आगे रहे और सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ करनेका गौरव भी प्राप्त करे। मैंने अप्रैल १९१९ में जल्दीमें सविनय अवज्ञा आरम्भ करके भूल की थी। मैं बहुत ही अपूर्ण मनुष्य हूं और भूल कर सकता हूं। केवल ईश्वर ही ऐसा है जो भूल नहीं करता। किन्तु मैं इतना सीख गया हूं कि मुझसे एक ही भूल दोबारा न हो। मैं स्वदेशीका कार्यक्रम पूरा किये बिना सविनय अवज्ञा करनेकी सलाह नहीं दूंगा। मैं सविनय अवज्ञाका विज्ञान जानता हूं। मैं यह भी जानता हूं कि उसमें कितनी शक्ति है और उसके क्या-क्या खतरे हैं। उसके लिए पूर्ण अहिंसात्मक वातावरण चाहिए और पूर्ण अहिंसात्मक वातावरण तबतक नहीं हो सकता जबतक राष्ट्र चरखेकी शक्तिको नहीं मान लेता और उसको अपना नहीं लेता। यदि स्वदेशीमें और उसके परिणामोंमें आपका विश्वास है तो मैं यह देखनेकी अपेक्षा करता हूं कि हर घरमें चरखा चल रहा है, सभी जातियों और धर्मोंके लोग चरखा चला रहे हैं और खद्दर पहन रहे हैं। मैं यह अपेक्षा करता हूं कि धनी लोग भी चरखा चलायें और मिल-मजदूर भी चरखा चलायें और जब आप इतना कर लेंगे, तब आप एक-एक सिपाहीके पास बिना खतरेके जा सकते हैं और उससे नौकरी छोड़नेके लिए खुल्लमखुल्ला कह सकते हैं।

जब मैंने केवल एक धोतीसे तन ढँकना शुरू किया, तो मैंने देखा कि कई लोगोंकी आँखोंमें आँसू भरे हैं। लेकिन मैंने जो-कुछ देखा है उसके बाद मैं यही कर सकता था। मैं नहीं चाहता कि कोई मुझपर दया दिखाये, किन्तु मैं यह अवश्य

चाहता हूँ कि भारत स्वदेशीका पूर्ण व्यवहार करे। मै अपनी साधारण पोशाक फिर पहनना तभी शुरू कर सकता हूँ। मै मद्रासके रायलसीमा जिलोको देखकर आया हूँ। वहाँ अकाल पड़ रहा है। कहा जाता है कि वहाँ अन्नकी कमीसे स्त्रियाँ अपने बच्चो सहित पानीमें डूबकर मर गई है। इतने भारी सकटकी बात जानकर मेरे लिए, जितना कपड़ा मै अब पहनता हूँ, उससे ज्यादा कपडा पहनना सम्भव नहीं।

मै अभी आप लोगोके सामने लगे विदेशी कपडोके ढेरकी होली जलाऊँगा। मेरी दृष्टिमें यह आग हमारे हृदयोमें धधकती हुई आगकी ही निशानी है। यदि वह आग हमारे अन्तरमें धधकती ज्वालाका प्रतीक न हो तो फिर यह केवल दिखावा ही होगा।

आप स्वर्गीय लोकमान्य तिलकका बहुत आदर करते है। उनके 'गीता-रहस्य'को समझनेके लिए उनकी 'गीता'की व्याख्या पढनेकी जरूरत नहीं। उनका 'गीता-रहस्य' क्या है यह मै दो शब्दोमें बता सकता हूँ। उसका पहला भाग, स्वय लोकमान्यके शब्दोमें यह है. "स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।" उसके दूसरे भागकी पूर्ति मै कर देता हूँ, "चरखा उसको प्राप्त करनेका साधन है।" मुझे विश्वास है कि यदि लोकमान्य जीवित होते, तो वे आज हमारे साथ इस मचपर बैठे होते। क्या उन्हे स्वदेशीसे प्रेम नहीं था? उस समय स्वदेशीका जिस रूपमें व्यवहार किया जाता था उसपर उन्होने वर्षो आचरण नही किया था? मै जानता हूँ कि असहयोगमें उनका विश्वास था। उसपर आचरण करनेकी देशकी शक्तिमे उन्हे अवश्य ही सन्देह था। आप स्वदेशीको पूर्ण रूपसे अपनाकर इसी वर्षमे स्वराज्यकी स्थापना करके इस सन्देहका निवारण कर दें। मुसलमानोको खिलाफतके सम्बन्धमे गहरा दु ख है और हिन्दुओको अपनी प्रतिज्ञाका उतना ही खयाल है। मै दोनोसे कहता हूँ कि वे चरखेको अपनाये और स्वदेशीकी सफलता सुनिश्चित बना दें।

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १०–१०–१९२१

१२३. भाषण : स्त्रियोकी सभा, बम्बईमे

९ अक्तूबर, १९२१

रविवारको दोहपरके बाद मारवाडी विद्यालयके सभा-भवनमे 'राष्ट्रीय स्त्री सभा' के तत्वावधानमें एक सार्वजनिक सभा हुई। इस सभामें महात्मा गाधी, लाला लाजपतराय और अन्य वक्ताओने वर्तमान परिस्थितिपर भाषण दिये। सभा केवल खद्दर और स्वदेशी वस्त्र पहननेवाली महिलाओके लिए बुलाई गई थी। सभाकी अध्यक्षता श्रीमती नायडूने की।

महात्मा गाधीने कहा.

मेरे सन्मुख हिन्दू, मुसलमान और पारसी स्त्रियाँ बैठी हुई है। वे यह जानकर ही सभामें आई है कि वे केवल खादी पहनकर ही सभामें भाग ले सकती है। मैं स्वय यहाँ आपको कोई नई बात बताने नहीं आया हूँ, किन्तु देशने जो काम किया हे उसके बारेमें बताने आया हूँ। आपने काग्रेसकी सदस्या बनकर यह दिखा दिया है कि आप काग्रेसके आदेशोको माननेके लिए तैयार है, चाहे उसमे जो भी खतरे सामने आयें। आप जानती है कि हमारे देशके आठ नेता कराचीमे कुछ प्रस्तावोको पास करनेपर गिरफ्तार कर लिये गये है ओर मै चाहता हूँ कि इस सभामें भी वे ही प्रस्ताव पास किये जायें और आवश्यक हो तो आप सब जेल जाये। आपको यह नहीं सोचना चाहिए कि आप स्त्रियाँ है, इसलिए आपको गिरफ्तार नहीं किया जायेगा, आपका यह खयाल ठीक नही है। आपको जानना चाहिए कि सरकार अपना उद्देश्य पूरा करनेके लिए कुछ भी कर सकती है। दक्षिण आफ्रिकामे जो-कुछ हुआ था वह आपको मालूम है। वहाँकी सरकार स्त्रियोको भी बाहर नहीं रहने देना चाहती थी। लाला लाजपतरायने आपसे कहा है कि आप अपने हृदयोको लोहे-जैसा कडा बना ले जिससे जब आपके निकट सम्बन्धी और प्रियजन गिरफ्तार किये जायें तब आपकी आँखोसे आँसूकी एक बूँद भी न निकले। आपको अली-भाइयोकी माता और मौलाना मुहम्मद अलीकी पत्नीका अनुकरण करना है। यद्यपि हमारे किसीके धर्ममें यह नहीं लिखा है कि जब कोई मर जाये तो उसके लिए हमें रोना-धोना चाहिए, फिर भी हम अपने मृत सम्बन्धियोके लिए रोते और शोक करते है। यह ठीक नही है। जो लोग जेल भेजे जायें, आप उनके लिए शोक न करे, क्योकि आप जानती है कि वे देशमें धर्म-राज्यकी, स्वराज्यकी स्थापनाके लिए लड़ रहे है। मै जिस स्वराज्यकी स्थापना करना चाहता हूँ वह धर्म-राज्य है, राम-राज्य है। जबतक भारतमे एक भी व्यक्ति भूखसे मरता है, तबतक ससदोमें कोई भी अधिकार दिये जाये उससे हमे सच्चा स्वराज्य नही मिलता। जबतक इस देशमे अधर्म है, तबतक हमें मताधिकार और दूसरे

अधिकार मिले तो उनसे कोई लाभ नही। मै धर्म-राज्यकी स्थापना करना चाहता हूँ, ऐसा राज्य जो सद्गुणो और सदाचारपर आधारित हो। ऐसा राज्य हमें तभी मिल सकता है जब हम उसका सकल्प कर ले। लालाजी आपसे कह चुके है कि यदि सरकार हमारे नेताओको फाँसीपर भी लटका दे तो भी आपको एक आँसूतक नहीं गिराना चाहिए। मुझे आशा है कि स्त्रियाँ ऐसा ही करेगी और अपने धर्मका कभी त्याग नहीं करेगी।

स्वदेशीके प्रश्नकी चर्चा फिर उठाते हुए महात्मा गाधीने कहा :

मै देखता हूँ कि मेरे सामने ऐसी बहुत-सी स्त्रियाँ बैठी है जिनके स्वदेशी कपडा भी नहीं पहना हुआ है, कुछने मिलोका बना कपडा पहन रखा है। मै आपसे पूछता हूँ कि क्या आपने अपने सन्दूकोमे से विदेशी कपडे निकालकर फेंक दिये है? आपको स्मरण रखना चाहिए कि मिलका बना कपडा भी उन लोगोके लिए है जो बेहद गरीब है, जैसे धनी लोग यहाँ बैठे है उनके लिए नहीं। आपको तो केवल स्वय अपने हाथोसे बनाये कपडे ही पहनने चाहिए। पहले जमानेमें यह देखा जाता था कि कोई आदमी कैसे कपडे पहने है और उसके कपडोसे ही उसकी प्रतिष्ठा आँकी जाती थी। हमें इस युगमे अपनी यह मनोवृत्ति बदल देनी चाहिए। मै निजामके राज्यमें दत्तामण्डल नामके एक गाँवमें गया था। मैंने देखा कि वहाँके लोग अकालके कारण चार सालसे भूखो मर रहे है। उन स्त्री-पुरुषोके पास कोई काम नहीं है और वे धीरे-धीरे कालके गालमें समाते जा रहे है, भूखसे मर रहे है। यदि मै इस सभामे बैठी आज सब बहनोको यह बताऊँ कि मैंने वहाँ क्या-क्या देखा था, तो आप लज्जाके मारे रो पडेगी। लोग भूखो मर रहे है और उनकी कोई परवाह नहीं करता। मुझे बहुत दु ख है कि यद्यपि मै पिछले एक सालसे स्वदेशीका प्रचार कर रहा हूँ, फिर भी इस दिशामें काफी प्रगति नही हुई है। मैंने इस देशमें पुरुषो, स्त्रियो और बच्चोको भूखसे मरते देखा है, उनके शरीरोमें खाल और हड्डियाँ रह गई है। वे ककाल-मात्र ही रह गये है -- क्योकि उनके पास कोई काम नही है। वे हर काम करनेके लिए तैयार हैं, किन्तु उनके लिए कोई काम ही नहीं है, इसलिए वे कोई भी काम करनेमें असमर्थ है। सरकार उनको कभी-कभी सडकोपर पत्थर तोड़नेका काम देती है। इस स्थितिको देखते हुए भारतीय-स्त्री-पुरुष बढिया-बढिया कपडे कैसे पहन सकते है? यदि हम चाहते है कि इस देशमे गरीबी न रहे और लोग वस्त्रहीन न रहे, तो हमें चरखेका उपयोग करना चाहिए। तभी हमारे करोडो लोग अपनी आजीविका कमा सकते है और अपने सम्मानकी रक्षा कर सकते है। यदि भारतीय इतना कर ले तो उनको स्वराज्य मिल जायेगा। भारतीयोको कोई अधिकार नहीं कि वे अपना धन विलासकी वस्तुओको खरीदनेपर खर्च करे और अपना समय व्यर्थ गँवायें। आपके पास जो-कुछ भी बचे, वह आपको गरीबोको दे देना चाहिए। ईश्वर गरीबोके, चाण्डालो, ढेढ़ों और भगियोके घरोमे रहता है; अमीरो और बड़े लोगोके घरोमें नही। मै ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि मै यदि इस

देशमें फिरसे जन्म लूँ, तो किसी ढेढके घरमें ही लूँ। अदालतो और स्कूलो और कौंसिलोका वहिष्कार एव उपाधियोका त्याग — इन सभी कामोमें हमें सफलता नहीं मिली हे और लोगोने देशके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन नहीं किया है। अव समय आ गया हे जव स्त्रियोको आगे वढना चाहिए। आप विजय चाहती है तो आपको चरखेका प्रयोग करना होगा। धर्मके विना हमें स्वराज्य नहीं मिलेगा, उसके विना पजावके अन्यायोका प्रतिकार नही होगा और न खिलाफतके अन्यायका। यदि हम स्वदेशीका कार्यक्रम पूरा कर ले तो हमें अपने लक्ष्यतक पहुँचनेसे कोई नहीं रोक सकेगा। यदि हममें स्वराज्यके लिए आवश्यक गुण है, तो हमें कोई भी सरकार अपने लक्ष्यतक पहुँचनेसे नहीं रोक सकेगी। समय वहुत कम रह गया हे। हमें पिछले महीनेके अन्त तक स्वराज्य लेना था। उसमें हम असमर्थ रहे। क्या हममें अव इसके लिए आवश्यक श्रद्धा और आवश्यक विश्वास आयेगा? अव हमारे लिए चरखा ही एकमात्र साधन है। अन्तमें, मै आपसे यह कहना चाहता हूँ कि आप विदेशी कपडोको त्याग दें, खद्दरका उपयोग करे और चरखेको स्वराज्यकी लड़ाईके शस्त्रके रूपमें स्वीकार करे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ११–१०–१९२१

१२४. भाषण: स्वदेशीपर

सूरत[1]

१२ अक्तूबर, १९२१

महात्माजीने सभामें उपस्थित लोगोमें लगभग आधा घटा भाषण दिया और उनसे अनुरोध किया कि वे अपना ध्यान केवल स्वदेशीपर केन्द्रित करे। उन्होने कहा

मै सूरतके लोगोको जानता हूँ और सूरतके लोग मुझे जानते है। मैने अभी यहाँका दौरा किया था। उस समय लोगोने मुझे सूरतकी वहुत अच्छी-अच्छी खवरे सुनाई थीं और आज मेरे सामने जो यह मैदान सफेद टोपी पहननेवालोसे भरा है उसे देखकर मुझे आश्चर्य नहीं होता। फिर भी जव मै देखता हूँ कि सूरतकी वहनोने अभीतक खद्दरको नहीं अपनाया है, तो मुझे दु ख होता है। यदि हमें गुजरातकी मारफत स्वराज्य स्थापित करना है और यदि सूरतके लोगोको उसमें अगुआई करनी है, तो ढाई महीनेके इस थोडेसे वचे हुए समयमें अभी आपके लिए वहुत-कुछ करना शेष रहता है।

इसमें सन्देह नहीं कि इस समयतक सूरतमें अच्छा काम किया गया हे, फिर भी अभी वहुत-कुछ करना रहता है। आपके रक्तके कण-कणमें स्वदेशीकी भावना

१ यह सभा ताप्तीके किनारे इतिहास-प्रसिद्ध पुराने किलेके पास हुई थी।

समा जानी चाहिए। आपको यह अनुभव करना चाहिए कि विदेशी कपड़ेको छूना भी पाप है। मुझे अबतक जो-कुछ कहना और समझाना था वह सब मैं कह और समझा चुका हूँ। अब हमको जो एकमात्र काम करना रहता है वह है स्वदेशीका प्रचार। पूर्ण शान्ति, हिन्दुओ और मुसलमानोकी एकता, गरीबो और अकाल-पीड़ितोकी सहायता, स्त्रियोके शीलकी रक्षा——इन सबके लिए केवल एक ही उपाय है और वह है चरखेका प्रचार। सभामे आनेके लिए खादीकी टोपी और कोट पहन लेना ही काफी नही, यद्यपि उसका थोड़ा महत्व तो है। अब मै शब्दोंमें अपनी शक्ति लगानेके बजाय अपना समय और शक्ति बचाकर अपने-आपको तन-मनसे खद्दरके उत्पादनमे ही खपा देनेका विचार कर रहा हूँ। यह देशकी अधिक बडी सेवा होगी। अब मै आपको यह बताऊँ कि मैने अपने कपडोमें यह परिवर्तन क्यो किया है और मै केवल एक छोटी धोती मात्र क्यो पहनने लगा हूँ। मेरे देशके इतने स्त्री-पुरुष नगे रह रहे है; इसलिए मै लोगोके सामने एक उदाहरण प्रस्तुत करना चाहता हूँ। इस समय हाथ-कते सूत और हाथसे बुनी खादीकी जरूरत ही सबसे बड़ी है और यदि केवल सूरतके लोग ही यह कार्य करे तो सविनय अवज्ञाकी जरूरत नहीं रहेगी। अब आप जुलूस निकालना और सभाएँ करना भी छोड़ दें। अब आपको अपना समय सूत कातने और कपडा बुननेके लिए बचाना है। मेरे भाषणकी अपेक्षा इससे कहीं अधिक प्रचार होगा। मै जल्दी ही उदाहरण प्रस्तुत करूँगा। सूरतके लोगोको मेरा एक ही सन्देश है: स्वदेशी और केवल स्वदेशीका प्रचार करो। हमारे पास समय कम है, फिर भी यदि लोग ईमानदारीसे और संकल्पपूर्वक कार्य करे तो काफी है। यह एक धर्म-युद्ध है और इसमे हम ईश्वरको धोखा नहीं दे सकते। मै हिन्दुओसे विशेष रूपसे कहता हूँ कि वे अस्पृश्यताके अभिशापको दूर कर दें। यदि अस्पृश्यता कायम रही तो ईश्वर आपको क्षमा नही करेगा। ईश्वर इन छ करोड अछूतोकी पुकार सुनता है और फलस्वरूप उसने हम उत्पीड़कोको शेष ससारकी दृष्टिमें अछूत बना दिया है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २२–१०–१९२१

१२५. टिप्पणियाँ

अली-बन्धुओके बारेमें

अली-भाइयोका यह सौभाग्य है कि उनके कितने ही पक्के मित्र है। और यह भी उनका सौभाग्य हे कि उनके कितने ही जबरदस्त आलोचक भी है। एक मित्र मुझे लिखते है कि आप अली-भाइयोपर इतने मुग्ध हो गये है कि उनकी कोई भी बुरी बात आपको नही दिखाई देती। उनका कहना ठीक ही है। सन्देह न रखना ही मित्रताकी खास खूबी है, परन्तु जो अपने मित्रोकी दुर्बलताओको नही जानता, वह मित्र बुरा होता हे। मै अलीभाइयोकी कमजोरियोको जानता हूँ। लेकिन कमजोरियाँ तो मुझमें भी है, और इसलिए उनकी दुर्बलताओके प्रति मेरा हृदय कोमल है। मेरा हृदय कहता है कि अबतक जिन-जिन लोगोके साथ काम करनेका सौभाग्य मुझे मिला है, अली-भाई उन सबसे बढकर और सबसे अधिक वीर है। यह तो उनके विरुद्ध लगाये सामान्य आरोपके विषयमे हुआ।

उनकी विसंगति

परन्तु उनपर एक खास इल्जाम भी लगाया गया है। एक महोदय लिखते है·

> मै कुछ प्रश्न आपके सामने पेश करता हूँ। मैने उनपर काफी देरतक और गहरा विचार किया है। परन्तु फिर भी असहयोगके सिद्धान्तसे मै उनका मेल न बैठा सका। क्या आप कृपा करके बतायेंगे कि मेरी यह उलझन दर-असल ठीक है या निस्सार?
>
> असहयोगका तकाजा हे कि जब किसी अग्रेजी अदालतमें किसीपर मुक-दमा चलाया जाये तो उसे उस मुकदमेकी कार्रवाईमें किसी भी तरहकी मदद न देना चाहिए। लेकिन क्या अली-भाइयोका बयान देना अदालतको एक तरहकी मदद देना नहीं हे? खुद सरकारी वकीलने भी यह कहकर इस बातको साफ कर दिया हे कि मुल्जिमोके बयानोने मेरा काम बहुत-कुछ हल्का कर दिया हैं। . .
>
> दूसरी उलझन जो मुझे चक्करमें डाल रही है, यह है कि अभीतक हमने सविनय अवज्ञा प्रारम्भ नहीं की है। अतएव हमें फिलहाल तो अग्रेज अफसरोके हुक्मोको जरूर ही मानना चाहिए। खुद आपने भी उस हुक्मको नहीं तोडा हे जिसमें आपको मलाबार जानेसे मना किया गया था। ऐसी अवस्थामें क्या मौलाना मुहम्मद अलीके लिए यह वाजिब था कि कराचीके मजिस्ट्रेट द्वारा उनसे बैठ जानेको कहा गया तो उन्होने उसकी आज्ञा माननेसे इनकार कर दिया और नाराज भी हुए। क्या यह मजिस्ट्रेटके हुक्मका जाहिरा तौरपर भग करना नहीं था? क्या मौलाना मुहम्मद अलीका मजिस्ट्रेटसे यह पूछना कि "आप

खुदाको तसलीम करते हैं या नहीं?" और जब उनसे बैठ जानेके लिए कहा गया तब बैठनेसे इनकार करना और यह कहना कि "देखूँ तो आप क्या कर सकते हैं," क्या उनके लिए ठीक था?

मेरे खयालमें तो सविनय अवज्ञा शुरू कर देनेपर भी हम सबको नम्रताके साथ ही पेश आना चाहिए। असहयोगीको तो नम्रताकी मूर्ति होना चाहिए। उसको तो कैसी भी उत्तेजनात्मक स्थितिमें आपेसे बाहर न होना चाहिए और न किसी तरहका बल-प्रयोग ही करना चाहिए। गुस्ताखी तो उसे छू तक न जानी चाहिए। अगर मेरा यह कहना सही हो तो अली-भाइयोंका यह काम सर्वथा गैर वाजिब था बल्कि खासा गुस्ताखी-भरा माना जा सकता है। गुस्ताखी शब्दके प्रयोगके लिए क्षमा चाहता हूँ।

मेरी समझमें तो अगर अली-भाई किसी भी तरहसे अदालतको मदद पहुँचानेके या हाकिमोंके साथ जहालतका बरताव करनेके बजाय, अदालतमें चुपचाप ही रहते तो यह उन जैसे नेताके लायक, बहुत ही बेहतर और बहुत ही दूरन्देशीका काम होता।

मुझे डर है कि इस आखिरी बातसे शायद आप नाराज हो जायें। अगर ऐसा हो तो मैं आपसे माफीकी दरख्वास्त करता हूँ। मुझसे तो यह बात कहे बिना रहा ही नहीं गया। मैं जानता हूँ कि आप किसी-न-किसी तरह अली-भाइयोंके इस कामको भी सही ठहरायेंगे, परन्तु यह नहीं जानता कि किस तरह।

यह पत्र दिल खोलकर लिखा गया है। लेकिन इसमें पत्र-लेखकका हेतु अच्छा ही है। कितने ही मित्रोंने मुझसे ये ही सवाल किये हैं, और मैंने अपनी शक्ति-भर उनके समाधानका प्रयत्न किया है। लेकिन इस पूर्वोक्त पत्रपर सार्वजनिक रीतिसे विचार करनेकी जरूरत है। यदि अलीभाइयोंका आचरण असंगत है तो इसका कारण है अखिल भारतीय कांग्रेस समिति, जिसने कि बयान पेश करनेकी अनुमति दी है। कोई चाहे तो समितिके इस निर्णयके सही या गलत होनेके बारेमें सवाल कर सकता है, परन्तु वह अली-भाइयोंपर असंगतिका दोषारोपण नहीं कर सकता।

महासमितिने अपना यह निर्णय मेरी सलाहपर किया और मैंने ऐसी सलाह क्यों दी, इसके कारण जनताको बता देना शायद मेरा कर्त्तव्य है। बयान पेश करनेसे मुल्जिम-को अपनी स्थिति स्पष्ट करनेका अवसर मिलता है और यदि वह अदालतमें दिया जाता है तो वह हमेशाके लिए रेकार्डमें शामिल हो जाता है। इसके सिवा मुझे इस बातपर विश्वास है कि भारतवर्ष इसी साल स्वराज्य प्राप्त करनेकी सामर्थ्य रखता है। स्वराज्यकी स्थापना होनेके पहले मैं लाखों लोगोंके जेलमें दाखिल होनेकी उम्मीद करता हूँ। मैं स्वराज्यके बाद गठित पार्लियामेंटसे उन तमाम असहयोगी कैदियोंकी रिहाईकी अपेक्षा रखता हूँ, जिनपर कोई नैतिक अपराध करनेका आरोप साबित नहीं हुआ होगा। स्वराज्यके पश्चात् न्यायाधीशोंको ये बयान बड़ी कीमती मदद देंगे। फिर, मैं यह भी चाहता हूँ कि अपराधी लोग असहयोगसे अनुचित लाभ न उठा सकें और

ऐसा न हो कि बयान न पेश करके जनताको इस भ्रममें डाल दें कि वे निर्दोष हैं। इस कसौटीपर वही बयान खरा उतर सकता है जो छोटा और विषयसे पूरी तरह सम्बद्ध हो, और जिसमें कोई दलील न दी गई हो।

मौलाना मुहम्मदअलीका बयान इस श्रेणीमें नहीं आता। वे तो इस्लामके विधान-की लम्बी-चौड़ी व्याख्यामें लग गये। उन्होंने स्पष्टतः अपनी सफाईके लिए अदालतका "उपयोग" नहीं किया, बल्कि अपने स्वीकृत कार्यका प्रचार करनेके लिए किया। लोगोंने उनके बयानको बड़े चावके साथ पढ़ा है। उन्होंने उसे यदि निबन्धके रूपमें लिखा होता तो उसका असर माना जाता। इसलिए मैं न तो उस बयानके पक्षमें कुछ कहनेके लिए तैयार हूँ और न विपक्षमें।

हाँ, वह छोटा तो जरूर ही किया जा सकता था। लेकिन संक्षेपमें कुछ कहना मौलाना मुहम्मद अलीके लिए नामुमकिन-सा हो गया है। मैं जानता हूँ उन्होंने थोड़ेमें व्याख्यान देनेका वादा करके भी एक-एक घंटातक लगाया है।

दूसरा आरोप ज्यादा गम्भीर है। बैठनेसे इनकार करनेके मामलेमें सविनय या विनयहीन अवज्ञा करनेका कोई सवाल नहीं था। वह तो सिर्फ रुचिका सवाल था। यह सब दृश्य मुझे तो पसन्द नहीं आया। बेशक, उसमें कोई गुस्ताखीकी बात नहीं थी, लेकिन एक गैर-जरूरी जिद्द जरूर थी। मैं मानता हूँ कि असहयोगीको बिलकुल नम्र होना चाहिए और उन कैदियोंका व्यवहार नम्रताकी सीमाके बाहर था।

लेकिन फिर भी मैं उन कैदियोंके व्यवहारकी निन्दा करनेमें असमर्थ हूँ। उन्होंने इसके द्वारा एक प्रयोजनकी पूर्ति की है और वह कोई बुरा प्रयोजन नहीं है। हमें बहुत भयभीत रखा गया है। अदालतोंके आसपास देखिए तो एक खास भय और भीतिका वायुमण्डल फैला रहता है। कानून और अदालतोंके प्रति आदर एक चीज है और उनका डर दूसरी चीज। मेरी रायमें तो अली-भाई और उनके साथी कैदी शरारतपर तुले हुए थे। वे अदालतकी और कैदखानेकी दहशतको मिटा देना चाहते थे। आखिर उन्होंने समझ-बूझकर अदालतको इस तरह ललकारा। अगर मजिस्ट्रेटने स्थितिके इस विनोदात्मक रुखको समझ लिया होता तो अली-भाइयोंने वैसा दुराग्रह नहीं किया होता जैसा वे कर रहे थे। अदालत अपनी शानपर कायम रहना चाहती थी। लेकिन अली-भाई उसे वैसा करने देना नहीं चाहते थे। मैं इनकार नहीं कर सकता कि इसका इससे अच्छा रास्ता भी था, फिर भी मेरा यह निश्चित मत है कि अली-भाइयोंने अपने अक्खड़ आचरण द्वारा हमारे उद्देश्यकी सेवा ही की है। अगर वे नम्रता-धारण कर लेते तो उद्देश्यको हानि पहुँचाते। उन्होंने इस बार भी अपनी सच्चाई और स्वाभाविकता सिद्ध कर दिखाई है। और यही मेरी दृष्टिमें उनके चरित्रका अत्यन्त प्रिय और प्रधान अंग है। हमको याद रखना चाहिए कि हमको इन आजकी अदालतोंकी प्रतिष्ठा समाप्त करनी है, क्योंकि ये हमारे मतमें प्रतिष्ठाके लायक नहीं हैं। लेकिन एक ओर जहाँ मैं अली-भाइयोंके अक्खड़ व्यवहारको बुरा नहीं बता सकता वहाँ दूसरी ओर, मैं उसे ऐसे नमूनेके तौरपर भी पेश नहीं करता, जिसका अनुसरण दूसरे लोग करें। जो ऐसा करनेका प्रयत्न करेंगे वे असफल हुए बिना न रहेंगे। क्योंकि मुझे पाठकोंको यह बता देना चाहिए कि अली-भाइयोंके दिलमें मजिस्ट्रेटके प्रति दुर्भाव नहीं

है, और मुझे इसमे कोई शक नही है कि जब मजिस्ट्रेट अदालतके बाहर हो तब उनसे वे उसी शिष्टतासे पेश आयेगे जिससे वे मेरे साथ आते है।

एक प्रत्यक्षदर्शी

नीचे एक पत्र दिया जाता है, जिसमे उसके लेखकने उस दृश्यका अपनी आँखो देखा हाल लिखा है। उससे पाठक वहाँकी स्थितिका शायद और अच्छा अन्दाजा कर सकेगे। पत्र इस प्रकार हे

> अखबारोमे आपने इस मुकदमेकी कार्रवाई पढी ही होगी। लेकिन इस मामलेकी कार्रवाईके मूक प्रेक्षकपर उसकी कैसी छाप पड़ी, यह बता देना मै अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। आरम्भमे ही "वीर" मुल्जिमको झिडक देनेकी कोशिश की गई, लेकिन उस अभागे मजिस्ट्रेटका पाला किसी ऐसे-वैसेसे नहीं, मौलाना मुहम्मद अलीसे पड़ा था। और उस भले आदमीको उसके "योग्य" ही "डाँट-डपट" मिल गई।
>
> मै स्वीकार करता हूँ कि मेरी जिन्दगीमें यह दूसरा मौका था, जब मै किसी अदालतमे किसी मुकदमेकी पेशी देखनेके लिए गया। . . . जहाँ कानून और व्यवस्थाका शासन है, उस देशमें लॉर्ड रीडिंगके[1] राज्यका यह तथाकथित न्यायालय एक नाटकगृहसे बेहतर नहीं था।
>
> नहीं, मै गलती कर रहा हूँ। नाट्यशालामें तो नट अपना-अपना काम ईमानदारीके साथ करके अपने दर्शकोंको, जो अपने मनबहलावके लिए रुपया देकर वहाँ जाते है, खुश करते है, लेकिन अंग्रेजी अदालतका "न्यायाधीश", फिर चाहे वह गोरा हो या काला, प्रामाणिकतासे कोसो दूर रहता है और मुझे विश्वास है कि न्याय शब्द तो उसके कोशमें रहता ही नहीं।
>
> मै वकील नही हूँ। इसलिए मै कानूनी बेकायदगियोको नहीं जान पाया; पर अगर सामान्य बुद्धिसे कानूनका कुछ भी सम्बन्ध है तो मै साहसके साथ कह सकता हूँ कि उस दिन खालिकदीन हालमें जो कुछ भी हुआ वह एक खासा तमाशा था। . . .
>
> गवाहोके बयान और साजिशको साबित करनेका तरीका बडा मजेदार था; और मुकदमेके अन्तमें निष्कर्ष रूपमें सरकारी वकीलने जो तकरीर की, उसके बारेमें तो कुछ कहना ही बेकार है।
>
> मै खुद तो इसी नतीजेपर आ पहुँचा हूँ कि इन अदालतोमे बयान पेश करना भी अरण्यरोदनके समान है। हाँ, अगर वह अपने देश-भाइयोके प्रति आखिरी अपीलके रूपमें हो, और उससे प्रचारका उद्देश्य सिद्ध होता हो तो बात और है।

१. भारतके वाइसराय और गवर्नर-जनरल, १९२१-२६।

विपरीत दृश्य

बुलन्दशहरसे प्राप्त एक पत्र यहाँ दे रहा हूँ। उससे मेरा अभिप्राय और भी अधिक स्पष्ट हो जायेगा। पत्र इस प्रकार है

> इसी ३ तारीखको यहाँके जिला मजिस्ट्रेटके इजलासमें एक राजनैतिक मुकदमा पेश हुआ। उसके सिलसिलेमें मजिस्ट्रेटकी बेजा कार्रवाइयोंकी तरफ आपका ध्यान दिलाना चाहता हूँ।
>
> यह मुकदमा जिला मजिस्ट्रेट मिस्टर डॉक्सके इजलासमें, महाशय महावीर-प्रसाद त्यागीका था[1] जब गवाहकी जिरह-खास खतम हुई, तब अदालतने मुलजिमसे पूछा कि क्या आप गवाहसे जिरह करना चाहते हैं? मुलजिमने जवाब दिया — नहीं। उन्होंने कहा, आप सिर्फ इतना ही लिख लीजिए कि अंग्रेजी अनुवाद[2] मूलसे नहीं मिलता है, जैसा कि सरकारी वकीलने अदालतके सामने साफ-साफ कबूल किया है। मजिस्ट्रेटने यह बात लिख लेनेसे इनकार किया और कहा — "आप बेहूदा बातें कहते हैं।" इसपर मुलजिमको बुरा लगा और उसने उलटकर कहा — "मैं तो समझता हूँ, आप ही बेहूदा बात कह रहे हैं।" तब मजिस्ट्रेटने कांस्टेबल न० ५५ बलवन्तसिंहसे, जो कि मुलजिमपर तैनात था, कहा कि इसे तमाचा लगाओ। सिपाही झिझका और उसने बड़ी ही अनिच्छाके मारे मुलजिमकी गर्दनके पिछले हिस्सेपर धीरेसे एक थप्पड़ लगाया। यह देख कर मजिस्ट्रेटने फिर उसे आज्ञा दी कि मुँहपर एक जोरका तमाचा लगाओ। कांस्टेबल मजबूर हुआ। उसने वैसा ही किया। मुलजिमने इस बेइज्जतीको चुपचाप बरदाश्त किया। उसकी ओरसे कोई वकील तो था ही नहीं और न उसने अपनी कोई सफाई पेश की ।
>
> मजिस्ट्रेटकी इस ज्यादतीसे यहाँके लोगोंमें बड़ी उत्तेजना और रोष फैला हुआ है। . एक सार्वजनिक सभा की गई। और उसमें उपयुक्त प्रस्ताव पास किये गये।

बुलन्दशहरकी आम सभाके प्रस्तावमें मुलजिमको उसके आत्मसंयम, वीरता और मौन कष्ट सहनपर बधाइयाँ दी गई हैं। लेकिन मुझे बड़ा सन्देह है कि इन विशेषणोंका उपयोग समुचित रूपमें हुआ है या नहीं। मुलजिमने विरोधस्वरूप एक भी शब्द क्यों नही कहा? इस तथाकथित मजिस्ट्रेटके इजलासमें अपना मुकदमा चलने देनेसे इनकार क्यों नहीं कर दिया? मजिस्ट्रेटने तो बिलकुल साफ-साफ जुर्म किया है और इसी तरह उस अनिच्छुक कांस्टेबलने भी गुनाह किया। क्या मुलजिमने प्रेम और नम्रताके कारण अपना मुँह बन्द रखा? मौन या निष्क्रियताका उपयोग डर या डरसे भी किसी बुरी चीजपर परदा डालनेके लिए हरगिज न होना चाहिए। क्या अली-भाइयोंका

1. अ० भा० कांग्रेस कमेटीके सदस्य।
2. अपराधीके भाषणोंका।

वरताव अधिक पुरुपोचित और स्वाभाविक नही था? जहाँ वुलन्दशहरके जैसा मौका आता हो, वहाँ मनुष्यका अपना वल ही उसकी रक्षाका साधन हो सकता है। और मुझे इस वातमे कोई सन्देह नही है कि जव अली-भाइयोने अदालतको ललकारा, तव उनकी नजरमे अपने देश-भाइयोकी राजनैतिक निर्वलता ही थी।

अदालतोमे हिन्दुस्तानी

डा० किचलू अग्रेजीमे वोलनेसे इनकार करनेके लिए वधाईके पात्र है। कुछ विशेप अवसरोको छोडकर, अदालतोमे हमे निश्चय ही अपनी मातृभापामे शहादत देनेपर आग्रह रखना चाहिए। जब अग्रेजीमे वोलना या बहस करना होता है, तो हममे से अच्छेसे-अच्छे लोगोके लिए भी यह कठिनाईकी स्थिति होती है। और अगर सभी अपनी भापा के अतिरिक्त और किसी भी भाषामे बोलनेसे इनकार कर दे, तो शीघ्र ही हमे अनुवादकोसे छुट्टी मिल जाये और न्यायाधीशोके लिए उस प्रान्तकी भाषा जानना जरूरी हो जाये, जिस प्रान्तमे वे नियुक्त किये जाते है। दुनियामे और कही भी ऐसा नही है कि न्यायाधीश उन लोगोकी भापासे अनभिज्ञ हो जिन्हे उन्हे न्याय देना है।

पतनका कारण

एक पत्रलेखक पूछते है, "क्या यह सच नही है कि हिन्दू राज्योका पतन जनतामे वहुत अधिक आध्यात्मिकता आ जानेसे ही हुआ?" मै नही समझता कि वात ऐसी है। सत्य तो यह है कि हिन्दुओकी पराजय वरावर तभी हुई है जव उनमे आध्यात्मिकता अर्थात् नैतिक शक्तिका अभाव हो गया है। राजपूत लोग छोटी-छोटी वातोके लिए आपसमे लडते रहे और इस तरह उन्होने भारतको खो दिया। उनमे व्यक्तिगत शूरता तो थी, लेकिन उन दिनो सच्ची आध्यात्मिकताका उनमे वडा अभाव था। रावण क्यो पराजित हुआ, और रामको अगर आध्यात्मिकताका बल नही होता तो वे वानरोकी सेना लेकर विजयी कैसे हो जाते? हम अकसर आध्यात्मिक ज्ञान और आध्यात्मिक सिद्धिको एक ही वात मान लेनेकी भूल कर वैठते है। धर्म-ग्रन्थोका शाब्दिक ज्ञान और दार्शनिक वाद-विवाद कर सकनेकी योग्यताका मतलव आध्यात्मिक सिद्धि नही है। आध्यात्मिकता तो हृदयका शोधन और सस्कार है, वह एक अपरिमेय शक्ति है। निर्भयता आध्यात्मिकताकी सवसे पहली अपेक्षा है। जो कायर है, उनमे नैतिकता कभी आ ही नही सकती।

मूल कारण

वही पत्र-लेखक पूछते है "क्या आप ऐसा नही समझते कि मौजूदा विदेशी सरकारकी सफलताका कारण उच्च वर्गीय लोगो द्वारा गरीवो, कमजोरो और तथा-कथित अस्पृश्योका शोपण है?" हम जो अपने ही भाई-वन्धुओका शोपण करते है, अवश्य यही इसका मूल कारण है। यह हमारे अध्यात्मकी राहसे भटक जानेकी निशानी है। हमने अपनी ही जातिके छठे हिस्सेका घोर शोपण किया है और धर्मके पवित्र नामपर उन्हे योजनापूर्वक पतितावस्थामे डाल दिया है। विदेशी शासनका अभिशाप और उसके साथ चलनेवाला शोपण हमारे इसी पापका अत्यन्त उपयुक्त दण्ड है। यही

करना है कि मैंने अस्पृश्यता-निवारणको स्वराज्य-प्राप्तिकी एक अनिवार्य शर्तके रूपमें रखा है। हम तो खुद [illegible] गुलाम बनाकर रख रहे हैं। फिर, अगर हम बिना किसी शर्तके अपने गुलामोंको नागरिकताके अधिकार देनेके लिए तैयार नहीं हैं तो हमें अपनी गुलामीपर नाराज होनेका कोई अधिकार नहीं है। पहले हम अपनी आँखसे तो अस्पृश्यता-रूपी टेंट दूर कर लें, फिर अपने शासककी आँखकी फूली काटनेकी कोशिश करें।

स्त्रियोंके खिलाफ भी

श्रीमती सेनगुप्त एक सुसंस्कृत अंग्रेज महिला हैं, जो एक सुसंस्कृत बंगालीसे ब्याही हुई हैं। जब श्री सेनगुप्त[1] जेलमें थे, श्रीमती सेनगुप्त चटगाँवमें कपड़ा-बाजारमें ग्राहकोंसे खादी खरीदने और विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करनेका अनुरोध करने गईं। सरकारकी दृष्टिमें यह किसी स्त्रीके लिए बहुत बड़ा अपराध था, और निदान उन्हें अपने इस कामसे बाज आनेका हुक्म देते हुए दफा १४४ के अधीन एक नोटिस मिल गया। कांग्रेसके निर्देशके अनुसार उन्होंने यह हुक्म मान लिया है। मर्दोंके बारेमें चाहे जो कहा जाये, श्रीमती सेनगुप्तपर तो ऐसा कोई सन्देह नहीं हो सकता था कि वे फसाद खड़ा करना या किसीको डराना-धमकाना चाहती थीं। इसमें सन्देह नहीं कि ग्राहकोंके सामने उनकी उपस्थिति बड़ी प्रेरणाप्रद सिद्ध होती और उनके कारण वे शर्मके मारे विदेशी कपड़ेकी दुकानोंपर नहीं जा सकते थे। और यह बात मजिस्ट्रेटके दृष्टिकोणसे ठीक नहीं होती। इस तरह, यह आदेश स्वदेशीके प्रचारपर लगभग प्रतिबन्ध लगा देता है। लेकिन मुझे कोई आश्चर्य नहीं होगा, यदि यह सरकार, जो मुख्यतः विदेशी कपड़ेके व्यापारकी सुरक्षाके लिए ही शासन करती है, विदेशी कपड़ेका बहिष्कार होते ही समाप्त हो जाये। सच्ची स्वदेशीकी प्रगतिके साथ-साथ सरकार अपना आपा तो अधिकाधिक खोती ही जायेगी।

चटगाँवकी प्रतिध्वनि गौहाटीमें

जो-कुछ चटगाँवमें हुआ है, उसीकी नकल गौहाटीमें भी की गई है। वहाँ दशहरेकी छुट्टियोंके अवसरपर कार्यकर्त्ताओंको ग्राहकोंसे विदेशी कपड़े न खरीदनेका अनुरोध करनेकी मनाही कर दी गई है।

> इस आदेशमें गौहाटी नगरपालिकाकी हदमें रहनेवाले सभी लोगोंको ताकीद की गई है कि वे खरीद-फरोख्तमें लगे किसी भी व्यक्तिको धमकियाँ देकर, या चीख-चिल्लाकर या इशारेसे या जोर-जबरन न तो डरायें और न परेशान ही करें, उक्त उद्देश्योंसे सार्वजनिक सड़कों या दुकानों अथवा बाजारोंके इर्दगिर्द चक्कर न लगायें, या ऐसा कोई अन्य कार्य भी न करें जिससे कानूनी तौरपर अपना कामकाज कर रहे लोगोंको परेशानी हो या सार्वजनिक शान्तिमें बाधा पड़े।

१. यतीन्द्रमोहन सेनगुप्त, कांग्रेसी नेता और बंगालके एक प्रमुख बैरिस्टर।

श्री बारदोलोई जिन्होने उक्त आदेशका पाठ तार द्वारा सूचित किया है, आगे कहते है कि "यह और कुछ नही, शान्तिपूर्वक धरना देनेवालोको वैसा करनेसे रोकनेकी ही एक तरकीब है।

उपाय

मैं तो कार्यकर्त्ताओको यही सलाह दूँगा कि जबतक बहुत जरूरी न हो जाये, तबतक वे कपडेकी दुकानोपर धरना न दे। लेकिन जब ऐसी जरूरत आ पडे तब काग्रेसकी कार्यसमितिके निर्देशके अनुसार लोगोको यह छूट है कि वे चटगाँव और गौहाटीके जैसे आदेशोकी अवहेलना कर सकते है, और निर्भीक होकर धरना देते हुए खुशी-खुशी जेल जा सकते है। अगर हम स्वदेशीके लिए जेलोको भर देते है, तो जेल दरअसल महल बन जायेगे, क्योकि स्वदेशी हमारे राष्ट्रीय जीवनके लिए प्राण-वायुके समान है।

[अग्रेजीसे]

यंग इडिया, १३–१०–१९२१

१२६. महान् प्रहरी

शान्तिनिकेतनके गायकने 'मॉडर्न रिव्यू' मे वर्तमान आन्दोलनपर एक बडा सुन्दर लेख[१] लिखा है। वास्तवमे यह शब्द-चित्रोकी एक आकर्षक मालिका है, जिसे केवल वे ही गूथ सकते थे। इसमे आप्तत्वके खिलाफ, मानसिक दासताके खिलाफ —— अर्थात् भय या आशासे किसीकी सनकका ऑख मूंदकर अनुकरण करनेको जिस नामसे भी पुकारा जाये, उसके खिलाफ —— एक जोरदार आवाज उठाई गई है। वह हम सभी कार्यकर्त्ताओको इस बातकी याद दिलाता है कि हमे धीरज नही खोना चाहिए, किसी पर जबरदस्ती किसीका मत लादना नही चाहिए, चाहे वह मत कितने ही बडे आदमी-का क्यो न हो। इस रूपमे यह लेख कल्याणकर तथा स्वागत करने लायक है। कविवर हमसे कहते है कि जो चीज बुद्धि या हृदयको ठीक नही लगे, उसे तुरन्त अस्वीकार कर देना चाहिए। अगर हम स्वराज्य पाना चाहते है तो हमे हर हालतमे सत्यके उस रूपपर दृढ रहना चाहिए जिस रूपमे हम उसे जानते है। जो सुधारक इस बातपर नाराज हो जाता है कि उसके सन्देशको लोग स्वीकार नही कर रहे है, उसे तो पहले जगलोमें जाकर जीवन-प्रवाहको तटस्थ बुद्धिसे देखना, प्रतीक्षा करना और भगवान्का भजन करते हुए धीरज रखना सीखना चाहिए। इन सारी बातोसे सभी हार्दिक रूपसे सहमत होगे, और सत्य तथा विवेकके पक्षमे अपनी आवाज उठानेके लिए कविवर अपने देशभाइयोके धन्यवादके पात्र है। अगर हम अपने विवेकको दूसरेके हवाले कर देते है तो इसमे कोई शक नही कि हमारी परवर्ती स्थिति पूर्ववर्ती स्थितिसे भी बुरी

१ अक्तूबर के अकमें "सत्यकी पुकार" ("कॉल ऑफ ट्रुथ") शीर्षकसे।

होगी। और यह देखकर मुझे बडा दु ख होगा कि देशने बिना सोचे-विचारे आँख मूंदकर, मैंने जो-कुछ कहा या किया, उसका अनुसरण किया। मै यह अच्छी तरह जानता हूँ कि प्रेमके आगे आँख मूंदकर आत्म-समर्पण कर देना अक्सर अत्याचारीके अत्याचारको लाचार होकर स्वीकार करनेसे भी अधिक अनिष्टकर सिद्ध होता है। जो अत्याचारीका गुलाम है, उसकी मुक्तिकी आशा तो फिर भी हे, किन्तु प्रेमके गुलामके लिए कोई आशा नही हे। प्रेमकी उपयोगिता दुर्बलोमे बलका सचार करनेमे है और उस दृष्टिसे वह जरुरी हे, लेकिन जब प्रेमके कारण किसी बातमे विश्वास न करनेवाला व्यक्ति भी उसको मानने लगता हे तो प्रेम अत्याचार हो जाता है। किसी मन्त्रका महत्व जाने बिना उमका जप करना पुरुषोचित नही कहा जा मकता। इसलिए कविवरने, जो लोग चरखेकी पुकारपर बिना सोचे-समझे अन्ध-भावमे चल रहे है, उन सबसे विद्रोह करनेको कहकर ठीक ही किया है। हममे से जो लोग अधीर होकर अपनेसे भिन्न मत रखनेवालोके प्रति असहिष्णुता या यहाँतक कि हिसासे भी काम लेते है, उन सबके लिए यह लेख एक चेतावनी हे। मैं कविवरको एक प्रहरी मानता हूँ, जो हमे हठ-धर्मी, बौद्धिक आलस्य, असहिष्णुता, अज्ञान, जडता और इसी तरहके अन्य शत्रुओके आगमनके खिलाफ आगाह कर रहा है।

कविवरने हमसे सचेत और सजग रहनेको कहा है, उन्होने कहा है कि यदि ऐसा न हुआ तो हो सकता है, हम सही-गलतका विचार करना ही बन्द कर दे, और उनके कथनके इस अशसे मै सहमत हूँ। लेकिन इसका मतलब यह नही कि मै उनकी इस धारणाको भी सही मानता हूँ कि देशमे बडे पैमानेपर लोग आँख मूंदकर किसीकी बातपर चल रहे है। मैने बार-बार लोगोसे अपनी विवेक-बुद्धिसे काम लेनेको कहा है और मै कविवरको भरोसा दिलाता हूँ कि आज अगर सौभाग्यसे यह देश चरखेको खुशहालीका स्रोत मानने लगा है तो उसने बहुत सोचने-विचारने और सकोच-विकोचके बाद ही ऐसा किया है। हाँ, यह मै नही कह सकता कि भारतके शिक्षित लोग अब भी चरखेके सत्यको ग्रहण कर पाये है या नही। ऊपरके कूडा-करकटको देखकर कविवर ऐसा न माने कि इसके भीतर भी यही है। उन्हे सचाईकी तहमे पैठकर स्वय यह देखना चाहिए कि लोगोने चरखेको अन्ध आस्थाके कारण स्वीकार किया है या इस कारण कि उनकी बुद्धिको यह चीज आवश्यक जान पडी।

मै तो कविसे लेकर किकरतक सभीसे यज्ञके रूपमे चरखा चलानेको कहता हूँ। जब युद्ध छिड जाता है तब कवि अपना गायन बन्द कर देता है, वकील अपनी कानूनकी पोथियाँ रख देता है, बालक अपनी पाठ्य पुस्तके छोड देते है। कवि युद्धकी समाप्तिके बात सच्चा गीत गा सकता है, वकील भी जब आपसी झगडेके लिए लोगोके पास समय होगा तब कानूनकी पोथियाँ पुन हाथमें लेगा। जब किसी घरमें आग लगती है तब उसमे रहनेवाले सभी लोग बाहर आकर एक-एक डोल लेकर आग बुझानेमे जुट जाते हैं। जब मेरे आसपासके सभी लोग भोजनके अभावमे मर रहे है तब मेरा एकमात्र काम यही हो सकता है कि उन भूखोके लिए दाने जुटानेकी कोशिश करूँ। मेरी यह पक्की मान्यता है कि भारत एक ऐसा घर है जिसमे आज आग लगी हुई है, क्योकि इसे दिन-ब-दिन पुसत्वहीन बनाया जा रहा है, यह भूखसे मर रहा है, क्योकि

482

इसके पास काम नही है जिससे यह अपनी रोटी कमाये। खुलनाके लोग भूखो मर रहे हैं — इसलिए नही कि वे काम नही कर सकते, बल्कि इसलिए कि उनके पास काम नही है। रायलसीमाका इलाका लगातार चौथी वार अकालके दौरसे गुजर रहा है, उडीसा तो वहुत समयसे अकालसे पीडित है। भारत नगरोमे नही रहता। वह तो अपने साढे सात लाख गाँवोमे रहता है, और उसके नगर इन गाँवोके वूते ही पलते हैं। उनके पास जो धन-ऐश्वर्य है उसे वे किसी दूसरे देशसे नही लाते। नगरवासी लोग यूरोप, अमेरिका और जापानकी वडी-वडी पेढियोके दलाल और कमिशन पानेवाले एजेंट हैं। पिछले दो सौ वर्षोसे जो इस देशका खून चूसा जाता रहा है, उसमे इन नगरोने इन विदेशी पेढियोके साथ सहयोग किया है। मै अपने अनुभवके आधारपर ऐसा मानता हूँ कि भारत दिन-व-दिन गरीव होता जा रहा है। उसके पाँवोमे रक्तका सचार वन्द हो गया है, और अगर अव हम इसके उपचारकी ओर ध्यान नही देते तो वह गिर-कर दम तोड देगा।

भूखसे मरते वेकार लोगोका परमेश्वर तो योग्य काम और उससे मिलनेवाली रोटी ही है, उनके लिए परमेश्वरका यही एक-मात्र स्वीकार्य रूप हो सकता है। ईश्वरने मानवकी सृष्टि काम करके अपना भोजन जुटानेके लिए की और कहा कि जो काम नही करते वे चोर हैं। भारतके अस्सी प्रतिशत लोगोको लाचारीवश आधे सालतक चोरोका जीवन विताना पडता है। फिर क्या आश्चर्य, यदि भारत आज एक विशाल कारागार वन गया है? भूख ही वह कारण है जो भारतको चरखेकी ओर लिये जा रहा है। चरखेकी पुकार सवसे उदात्त, सवसे मीठी है। कारण, यह प्रेमकी पुकार है। और प्रेम ही स्वराज्य है। अगर यह कहा जा सकता हो कि आवश्यक शारीरिक श्रमसे वुद्धि मन्द पड जाती है तो ही यह कहा जा सकता है कि चरखा लोगोकी "वुद्धिको मन्द" कर देगा। हमे उन करोडो लोगोके वारेमे सोचना है, जो आज पशुओसे भी गई-वीती स्थितिमे है, लगभग मरणासन्न हैं। चरखा जलकी वह घूँट है जो हमारे करोडो दम तोडते भाई-वहनोमे पुन प्राणका सचार कर देगा। कोई पूछ सकता है "मुझे तो अपने भोजनके लिए काम करनेकी जरूरत नही है, इसलिए मैं क्यो चरखा चलाऊँ?" उत्तर है, इसलिए कि मै जो खा रहा हूँ, वह सचमुच मेरा नही है। मै अपने देशभाइयोको लूट कर खा रहा हूँ। आप तनिक अपनी जेवमे आनेवाले पैसे-पैसेके वारेमे सोचकर देखे कि वह कैसे आपकी जेवमे आया, फिर आपको मेरी वातकी सचाईका एहसास हो जायेगा। अगर हमारे करोडो देशभाइयोको अपने वेकार समयका उपयोग करना नही आता तो उनके लिए स्वराज्यका कोई मतलव नही है। इस स्वराज्यको थोडे ही समयमे प्राप्त करना सम्भव है और इसका एकमात्र उपाय यह है कि हम फिरसे चरखेकी शरणमे जाये।

मै विकास चाहता हूँ, आत्म-निर्णयका अधिकार चाहता हूँ, स्वतन्त्रता भी चाहता हूँ, लेकिन सव-कुछ आत्माकी खातिर चाहता हूँ। मुझे तो इसमे शक है कि मानव लौह युगमे प्रस्तर युगसे सचमुच आगे वढा है। मै इस ओरसे उदासीन हूँ। हमे अपनी वौद्धिक शक्ति और अन्य सभी शक्तियोका उपयोग आत्माके विकासके लिए करना है। आधुनिक ज्ञान-विज्ञानसे सम्पन्न किसी व्यक्तिके वारेमे मै आसानीसे

ऐसा सोच सकता हूँ कि वह मानव-जातिके लिए कोई स्थायी और नया आविष्कार कर सकता है, परन्तु उससे भी ज्यादा आसानीसे मै इस सम्भावनाकी कल्पना कर सकता हूँ कि जिस व्यक्तिके पास अपनी राहको प्रकाशित करने और अपनी तोडेदार वन्दूकमे चिनगारी लगानेके लिए लोहेके एक टुकडे और एक चकमक पत्थरके अलावा और कुछ नही है, वह ईश्वरका नित नवीन गुण-गान करते हुए इस दु ख-सन्तप्त धरित्रीको शान्ति और सद्भावनाका सन्देश दे सकता है। लोगोसे चरखा अपनानेके लिए कहनेका मतलव है श्रमकी गरिमा स्वीकार करनेको कहना।

मै तो कहता हूँ कि चरखेको खोकर हमने अपना वायाँ फेफडा ही खो दिया। इसलिए हम आज [अपनी श्री-समृद्धिके] भयकर क्षयसे पीडित है। चरखेको फिर से अपनानेसे इस भयकर रोगकी वढती रुक जायेगी। कुछ ऐसी चीजे है जो सभीको सर्वत्र करनी चाहिए। और कुछ ऐसी चीजे है जो सभीको कुछ खास क्षेत्रोमे करनी चाहिए। चरखा एक ऐसी चीज है जिसकी शरणमे कमसे-कम इस सक्रान्ति कालमे तो भारतके सभी लोगोको जाना चाहिए और एक वहुत वडी सख्याको उसे सदा अपनाये रहना चाहिए।

चरखेको उसके गौरवपूर्ण स्थानसे विदेशी वस्त्रोके प्रति हमारे आकर्पणने ही च्युत किया। इसलिए मै विदेशी वस्त्र पहनना पाप मानता हूँ। यहाँ मुझे स्वीकार करना चाहिए कि मै अर्थशास्त्र ओर नीतिशास्त्रमे वहुत ज्यादा या तनिक-भी फर्क नही करता। जो अर्थ-व्यवस्था व्यक्ति या राष्ट्रकी नैतिकताको चोट पहुँचाती है, वह अनैतिक है और इसलिए पापपूर्ण है। इसलिए जो अर्थ-व्यवस्था एक देशको दूसरे देशको लूटनेकी छूट देती है वह अनैतिक है। जिनके श्रमका शोषण होता है, ऐसे मजदूरो द्वारा वनाई गई वस्तुओको खरीदना या उनका उपयोग करना पाप हे। अमेरिकाका गेहूँ खाना और अपने पडौसके अन्न-विक्रेताको ग्राहकोके अभावमे भूखो मरने देना पाप है। इसी तरह जव मै जानता हूँ कि अगर मैने पडौसके सूत कातनेवालो और वुनकरो द्वारा तैयार किया गया कपडा पहना होता तो मै अपना वदन भी ढँकता और उन्हे भी अपनी रोटी-कपडा कमानेकी सुविधा कर देता, तव वैसी हालतमे रीजेंट स्ट्रीटके सुन्दर और नये फैशनके कपडे खरीदना मेरे लिए पाप है। अपने इस पापकी प्रतीति होते ही मेरा यह कर्त्तव्य हो जाता हे कि विदेशी वस्त्रोको आगमे होमकर अपने-आपको पवित्र वना लूँ, ओर भविष्यमे अपने पडौसियो द्वारा वुनी खुरदरी खादीसे ही सन्तोष करूँ। अगर यह मालूम हो कि मेरे पडौसी तो वहुत पहले इस धन्धेको छोड चुके है, इसलिए वे फिरसे चरखेको नही अपना सकते, तो उस हालतमे मुझे स्वय ही चरखा चलाना शुरू करके उसे लोक-प्रिय वनाना चाहिए।

मै कविवरसे निवेदन करना चाहता हूँ कि मै उन्हे वही कपडे जलानेको कहता हूँ जो उन्हीके हो और सचमुच उन्हीके है भी। कारण, अगर वे उन कपडोको गरीवो और अध-नगे लोगोके मानते तव तो उन्होने उन्हे कवका उन गरीवोके सुपुर्द कर दिया होता। अपने विदेशी कपडेको जलाकर मै अपनी लज्जाके कारणको जलाता हूँ। जो लोग नगे है, निर्वस्त्र है, उन्हे जरूरत तो कामकी है। अगर मै उन्हे काम न देकर कपडे देता हूँ जिनकी उन्हे जरूरत नही है तो यह उनका अपमान हे। मै उनका

कृपालु सरक्षक बननेका पाप कभी नही करूँगा। लेकिन यह समझमे आनेपर कि उन्हे गरीब बनानेमे मेरा भी हाथ रहा है, मै उन्हे अपनी जूठन और अपने शरीर परसे उतारा हुआ कपडा नही, बल्कि उनका उचित और गौरवपूर्ण स्थान दूंगा, मेरे पास खाने और पहननेको जो सबसे अच्छा है, वह दूंगा, और उनके काममे स्वय भी शरीक हो जाऊँगा।

और यह भी सही नही है कि असहयोग और स्वदेशीकी योजनाके पीछे दूसरोके वर्जनकी भावना है। मैने किसी ऊँचे मचपर चढकर कभी यह घोषणा नही की कि असहयोग, अहिसा और स्वदेशीका सन्देश अखिल विश्वके लिए है—इसका कारण मेरी विनयशीलता ही है। इसके सिवा, जिस भूमिपर यह सन्देश दिया गया है, उस भूमिपर अगर यह फलित नही होता है तो निश्चित है कि यह सन्देश बेकार है। इस समय तो भारतके पास, सिवा उसके पतन, गरीबी और कष्टके, दुनियाको देनेके लिए कुछ नही है। क्या हम दुनियामे उसके प्राचीन शास्त्रोका प्रचार करे? उनके तो सस्करणपर-सस्करण प्रकाशित होकर पडे हुए है, लेकिन यह दुनिया, जो अपने मत पर अन्धभक्ति रखनेवाली और पर-मतको सदा सन्देहकी दृष्टिसे देखनेवाली है, उनकी ओर ध्यान ही नही देती। कारण यह है कि हम, जो उन शास्त्रोके विरासतदार और रक्षक है, उनके अनुसार आचरण ही नही करते। इसलिए दुनियाको कुछ देनेकी सोचनेसे पहले मै स्वय कुछ प्राप्त कर लूँ, किसी लायक तो बन जाऊँ। हमारा असहयोग न अग्रेजोके खिलाफ है, न पश्चिमी दुनियाके खिलाफ। हमारा असहयोग तो उस प्रणालीके खिलाफ है जो अग्रेजोने स्थापित की है, हमारा असहयोग इस भौतिकवादी सभ्यता और उसके साथ जुडे लोभ-लालच तथा कमजोरोके शोषणकी प्रवृत्तिके खिलाफ है। हमारे असहयोगका मतलब है, हमारा लौटकर अपने घर आ जाना। हमारे असहयोगका मतलब है अग्रेज शासकोके साथ उनकी ही शर्तोपर सहयोग करनेसे इनकार करना। हम उनसे कहते है, "आप आइए, और हमारी शर्तोपर हमसे सहयोग कीजिए। यह हम सबके लिए कल्याणकारी होगा, आपके लिए कल्याणकारी होगा और दुनियाके लिए भी।" हमे अपने पैर दृढतासे अपनी मिट्टीपर जमाये रखने चाहिए। जो खुद डूब रहा हो, वह दूसरोको क्या बचायेगा? दूसरोको बचानेकी सामर्थ्य प्राप्त करनेके लिए पहले हमे अपने-आपको बचानेका प्रयत्न करना चाहिए। भारतीय राष्ट्रवाद कोई वर्जनशील, आक्रामक या ध्वसात्मक प्रवृत्ति नही है। यह स्वास्थ्यकर, धार्मिक और इसलिए मानवतावादी है। भारतको मानवताके लिए मर मिटनेकी सोचनेसे पहले स्वय जीना सीखना चाहिए। जो चूहे असहाय अवस्थामे किसी बिल्लीके दाँतोके बीच पडे हुए हो, उनकी इस लाचारीके बलिदानका क्या मोल?

कवि-सुलभ प्रवृत्तिके अनुसार ही कविवर कलके लिए, सुन्दर भविष्यके लिए जी रहे है, और वे चाहते है कि हम भी कलके लिए ही जिये। वे हमारी चमत्कृत आँखोके सामने एक सुन्दर चित्र प्रस्तुत करते है—उष कालमे पछी अपने बसेरोसे निकलकर आकाशमे ईश्वरका गुणगान करते हुए उडे चले जा रहे है। वे भूल जाते है कि इन पछियोको उस रातसे पहलेके दिनमे पूरा आहार मिला था और जब ये प्रात काल आकाशमे उड चले तब इनके डैने काफी विश्राम पा चुके थे, और उनकी नसोमे

पिछली रात नये रक्तका सचार होता रहा था। लेकिन मैंने तो शोक-विह्वल मनसे ऐसे पछी भी देखे है जो शक्तिके अभावमे लाख प्रोत्साहन और हिम्मत देनेपर भी अपने डैने फडफडा तक नही पाये। भारतीय आकाशके तले रहनेवाले मानव-पछीको रातमे नीद नही आती, वह सोनेका महज वहाना करता है और प्रात काल जव वह उठता है, तव वह पिछले दिनसे भी ज्यादा कमजोर उठता है। यहाँ करोडो लोगोका जीवन सतत जागरण और चिन्ताका या सतत सज्ञा-शून्यताका जीवन है। यह एक ऐसी दु खद स्थिति है, जिसका वर्णन नही किया जा सकता, और उसका एहसास किसीको तभी हो सकता है जव कोई स्वय उस स्थितिको भोगकर देखे। मैंने तो किसी रुग्ण व्यक्तिकी पीडाको कवीरका कोई भजन सुनाकर दूर कर पाना असम्भव ही पाया है। करोडो भूखे लोग आज एक ही कविताकी माँग कर रहे है—भूख मिटानेवाली भोजनरूपी कविताकी। लेकिन वह उन्हे कोई नही दे पा रहा है। उन्हे अपना भोजन स्वय प्राप्त करना है, और वे प्राप्त कर सकते है सिर्फ अपने भालसे पसीना वहाकर।[1]

इन श्लोकोमे मेरे लेखे चरखेका समस्त साहित्य निहित है—उस चरखेका, जिसे चलाना मैं आजके भारतके लिए एक अनिवार्य यज्ञ मानता हूँ। अगर हम अपना वर्तमान ठीक कर लेते है, तो हमारे भविष्यकी चिन्ता भगवान करेगा ही।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १३-१०-१९२१

१ इसके वाद भगवद्गीताके तीसरे अध्यायके निम्नलिखित ८-१६ श्लोक दिये गये है

नियत कुरु कर्म त्व कर्म ज्यायो ह्यकर्मण ।
शरीरयात्राऽपि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मण ॥ ८ ॥
यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽय कर्मवधन ।
तदर्थ कर्म कौन्तेय मुक्तसग समाचर ॥ ९ ॥
सहयज्ञा प्रजा सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापति ।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥ १० ॥
देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु व ।
परस्पर भावयन्त श्रेय परमवाप्स्यथ ॥ ११ ॥
इष्टान् भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविता ।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुड्क्ते स्तेन एव स ॥ १२ ॥
यज्ञशिष्टाशिन सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषै ।
भुञ्जते ते त्वघ पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥ १३ ॥
अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसभव ।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञ कर्मसमुद्भव ॥ १४ ॥
कर्म ब्रह्मोद्भव विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ।
तस्मात्सर्वगत ब्रह्म नित्य यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥ १५ ॥
एव प्रवर्तित चक्र नानुवर्तयतीह य ।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघ पार्थ स जीवति ॥ १६ ॥

१२७. बम्बई क्या करेगा ?

३१ जुलाईको, बम्बईमे मैने विदेशी कपडेकी पहली होली जलाई थी। उतनी ही बडी दूसरी होली पिछले रविवारको जलाई गई। ३१ जुलाईको भी रविवार था।

बम्बईने ही अपनी उदारता दिखाकर भारतकी लाज रखी और तिलक स्मारक कोष पूरा किया। स्वदेशीकी नीव बम्बईने ही डाली। बम्बईमें ही चौपाटीपर सबसे पहले सत्याग्रहकी विशाल सभामे स्वदेशी और हिन्दुओ तथा मुसलमानोकी मैत्रीका निश्चय किया गया।

बम्बईमे हिन्दू है, मुसलमान है और बम्बई पारसी वीरोका केन्द्र है। बम्बईमे स्वभावके गम्भीर गुजराती है। बम्बईमे पहाडोमे पले-पुसे वीर मराठे है। बम्बईमें मेमन, भाटिया, पारसी और सिन्धी व्यापारी वीर है। बम्बईके लोग साहसी है। वे एक घडीमें धन कमाते है और एक घड़ीमे ही उसे गँवा देते है और उसका उनको कोई खयाल भी नही होता।

अगर बम्बई निश्चय कर ले तो उसमे स्वराज्य लेनेकी शक्ति कुछ कम नही है।

स्वदेशीमे स्वराज्य है, यह बात तो अब सर्वमान्य है।

स्वदेशी आन्दोलनमे सफलता प्राप्त करनेके लिए हमे व्यापारियो और स्त्रियोकी सहायताकी आवश्यकता है।

स्वराज्यके आन्दोलनमे जितना रस बम्बईके व्यापारियोने लिया है उतना भारतके दूसरे भागोके व्यापारियोने नही लिया है। क्या वे अपने स्वार्थका त्याग करके सहायता देगे ? यदि सोचे तो इसमे त्याग भी कुछ नही करना है, क्योकि उन्होने विदेशी मालसे ही लाभ कमाया है और उन्हे इस लाभको कमानेका कोई हक नही था। उससे तो देशको असीम हानि हुई है। भारतको विदेशी कपडेके व्यापारसे जितना नुकसान पहुँचा है उतना किसी दूसरी चीज़से नही पहुँचा। इसलिए यदि विदेशी कपडेके व्यापारी अब समझ जाये तो वे पाप-मुक्त हो सकते है, शुद्ध हो सकते है। क्या वे रुपयेका लालच छोडेगे ?

और उन्हे यह लालच क्यो नही छोडना चाहिए ? जापानमे तभी जागृति हुई जब जापानके धनिकोने अपने धनका और उस धनसे प्राप्त प्रतिष्ठाका त्याग किया। हमे लडना तभी आ सकता है जब हम पहले त्याग करे। जो लोग लडते है वे पहले अपनी धन-सम्पत्तिका त्याग करते है। तभी वे लडना सीख पाते है। शस्त्र-बल दिखाना हो अथवा आत्मबल, दोनोके लिए ही पहले धनका त्याग करना होता है।

किन्तु इस आन्दोलनमे तो इतना त्याग भी नही करना है। जो काम विचारपूर्वक किया जाता है उसमें त्याग सदा कमसे-कम करना होता है। यदि व्यापारी ज्ञानपूर्वक विदेशी कपडेका व्यापार छोडे तो वे खादीका व्यापार आरम्भ कर सकते है और ईमानदारीसे अपनी आजीविका कमा सकते है। आखिर किसीको इतनी बडी पूंजीका व्यापार करना ही है जितनी पूंजीसे सालमे ६० करोड रुपयेका मुनाफा मिल जाये।

६० करोड रुपयेका मुनाफा कमानेके लिए कितने व्यापारियो और कितने सहायकोकी आवश्यकता होगी ?

किन्तु एक बातकी जरूरत अवश्य है। ये व्यापारी विचारशील होने चाहिए। जो आलसी व्यापारी दूसरोकी नकल ही करते है, सट्टा खेलते है, और बापसे मिले धन्धेसे, बिना किसी प्रयत्नके, धन कमाते है वे इसमें कमाई नही कर सकते। इसमें तो वे ही कमाई कर सकते है जो अपना आलस छोडे। आलसी आदमी कभी वीर नही हो सकता। आलसीको कभी स्वराज्य नही मिल सकता। स्वराज्य और सुस्ती दोनोमें बैर है।

बम्बईमें जैसे व्यापारी जागृत है वैसे ही स्त्रियां भी। बम्बईकी स्त्रियोके बराबर प्रगतिशील स्त्रियां दूसरी जगह कहां है ? और स्त्रियोकी सहायताके बिना स्वदेशी आन्दोलन नही चल सकता, इसलिए उनकी सहायताके बिना स्वराज्य नही मिल सकता। हम स्त्रियोकी सहायता शोभा बढानेके लिए नही मांगते, हम स्त्रियोको भाषण देनेके लिए नही बुलाते। भारत आज स्त्रियोसे यही भिक्षा मांगता है कि वे शुद्ध रहें, सादगी बरतें और परिश्रम करे। स्त्रियोमे ज्ञान और देश-भक्ति होनी चाहिए। यदि स्त्रियां विदेशी कपडेका मोह न छोडें और भडकीले रगकी विदेशी साडियो, साटनो और मलमलके लिए जिद करे तो बेचारे पुरुष क्या करेगे ?

क्या स्त्रियोसे बलात् स्वदेशी व्रतका पालन कराया जा सकता है ? यदि स्त्रियो-पर बल-प्रयोग करके उनसे स्वदेशी व्रतका पालन कराना हो तो मै चाहता हूँ कि वे विदेशी कपडा ही पहनें। स्वराज्य स्त्रियोके जागरण और स्वेच्छापूर्वक किये हुए त्याग-पर निर्भर है। यदि स्त्रियां विदेशी कपडेको छोडेगी तो वे धर्म समझकर ही छोडेगी। यदि मुसलमान बहनें खिलाफतका रहस्य समझेंगी, हिन्दू बहनें गो-रक्षाके प्रश्नको समझेंगी और सभी बहनें अपने गरीब पडोसियोकी गरीबी दूर करना अपना धर्म मानेंगी अर्थात् यदि भारतकी स्त्रियां विदेशी कपडा पहनना अपना अधर्म समझेगी, खादी पहनना और नित्य चरखा चलाना धर्म मानेंगी तो देशमें स्वदेशीका प्रचार आंधीकी तरह तेजीसे होगा। इस कामको बम्बईकी बहने कर सकती है।

इसी तरह बम्बईमें पुरुषोको भी अपना बारीक कपडेका शौक छोडना चाहिए। उन्हे चरखा हाथमें लेना चाहिए। जब वे ऐसा करेंगे तभी स्वदेशी आन्दोलन आगे बढेगा।

यदि समस्त भारत स्वदेशी आन्दोलनको भली-भांति समझ ले तो हम सविनय अवज्ञा या अहिंसात्मक विद्रोह किये बिना ही स्वराज्य ले सकते है, ऐसा मेरा विश्वास है। किन्तु सम्भव है कि ऐसा सुयोग न मिले और भारतके हजारो लोगोको जेल जाना पडे और अपने प्राण भी देने पडे। यदि केवल किसी एक प्रान्तमे स्वदेशीका पूरा प्रचार हो जाये तो उसका असर इतना नही हो सकता कि उससे स्वराज्यकी स्थापना हो जाये। परन्तु यदि एक प्रान्त या एक जिला इसके लिए तैयार हो जाये तो उसे विद्रोह करनेका अधिकार क्यो न मिलेगा ? और उसकी शक्तिसे भारत स्वतन्त्र क्यो नही होगा ? मेरा तो विश्वास है कि उसकी शक्तिसे सारा भारत स्वतन्त्र हो सकता है। क्या बम्बई इस तरह पहल करनेके लिए तैयार हो सकता है ?

इसका उत्तर बम्बई ही दे सकता है। जो स्वदेशीका पूरा पालन नही करता है उसे विद्रोह करनेका अधिकार नहीं है, क्योकि वह अपने क्रोधको नही रोक सकेगा और नाजुक वक्त आनेपर शान्ति कायम नही रख सकेगा। और यदि शान्ति कायम नही रहेगी तो जीतनेका मौका आनेपर भी हम बाजी हार जायेगे। हमसे ऐसी भूल नही होनी चाहिए।

बम्बईने शान्तिका पाठ समझ लिया है, बम्बईमे गम्भीरता आ गई है, बम्बई सकल्पका धनी है, बम्बईके हिन्दू-मुसलमान और पारसी एक मन और एक दिल हो गये है—इन सबकी निशानी चरखा है, इसकी निशानी पीजन है, इसकी निशानी करघा और खादी है। यदि बम्बईके नागरिक—स्त्री-पुरुष और बालक हजारोकी सख्यामे पीजे, काते, बुने और खादी पहने तो वे अवश्य ही शान्ति-युद्धके योग्य हो सकते है।

इसका अर्थ यह नही है कि हर स्त्री और पुरुष कातने लग जायेगा अथवा खादी पहनने लग जायेगा। सम्भवत अग्रेज खादी नही पहनेंगे, सहयोगी लोग भी शायद खादी नही पहनेंगे और सरकारी नौकर भी इतनी हिम्मत नही करेगे। इसलिए विदेशी कपडेकी एक-दो दूकाने तो रह जायेगी और थोडा-बहुत विदेशी कपडा बिकता रहेगा। किन्तु बम्बईके बाजारो, मस्जिदो, मन्दिरो, समारोहो और विवाह-शादियोका रग तो बदल ही जायेगा। इन सब जगहो और मौकोपर तो खादी-ही-खादी दिखाई देनी चाहिए। नाटकोका रग भी बदला हुआ होना चाहिए। यदि लोगोको विदेशी कपडा पसन्द नही होगा तो जिन नाटकोमे विदेशी कपडेका व्यवहार होता होगा क्या वे उनमे जायेगे? विदेशी कपडेका मोह दूर न हो और खादीका प्रचार हो जाये मै यह असम्भव समझता हूँ। जहाँ-जहाँ सामान्य और स्वतन्त्र लोग जाते है वहाँ-वहाँ भी मै अवश्य ही खादीके उपयोग किये जानेकी आशा रखता हूँ।

इतना काम बम्बईके लोग इस महीनेके अन्ततक कर सकते है। जब बम्बई इतना कर ले तब वह भले ही अकेला अहिसात्मक युद्ध छेड दे।

मुझे आशा है, कोई इस तरहकी शका नही करेगा कि अहिसात्मक युद्धके साथ खादीका क्या सम्बन्ध है। मै ऊपर बता चुका हूँ कि चरखा शान्तिका चिह्न है और जब उसकी माँग भी अहिसाके नामपर की जाती है तब जो लोग अहिसाको नही मानते वे चरखेका उपयोग नही करेगे अथवा करेगे तो प्रेमपूर्वक नही करेगे। हमने चरखेमे वीरता, सच्चाई, सादगी और अहिसा आदि गुणोका आरोप किया है, इसलिए चरखा अधिकाधिक इन गुणोका पोषक बनता जायेगा।

स्वराज्यकी प्राप्ति और खिलाफतकी रक्षाके लिए किये जानेवाले विद्रोहमे थोडे आदमियोसे काम नही चलेगा। उसके लिए तो हमे हजारो आदमियोकी जरूरत है। यदि हमें अकेली बम्बईसे ही स्वराज्य लेनेकी शक्ति प्राप्त करनी हो तो हमे एक लाख सैनिकोकी जरूरत होगी। इनमे स्त्री और पुरुष दोनो ही हो सकते है। सोलह सालसे ऊपर किसी भी उम्रके स्त्री-पुरुष काम आ सकते है। इतने सैनिकोके खानपानका प्रबन्ध कोई भी सस्था नही कर सकती। अगर काग्रेस यह काम अपने ऊपर ले तो हम हार जायेगे। इतने आदमियोका खर्च फी आदमी आठ आना रोजके हिसाबके लगाये तो

५०,००० रुपये आता है। अगर हम मान ले कि हमारी लडाई एक महीनेतक चलेगी तो पन्द्रह लाख रुपये तो सिर्फ इतने लोगोके खानपानमे ही खर्च हो जायेगे। अगर उनके कुटुम्बियोके भरण-पोषणका प्रबन्ध भी करना पडे तो उस खर्चका अनुमान करना ही कठिन है। फिर भी मेरी बताई रकम कमसे-कम दुगुनी तो कर ही देनी चाहिए।

इतना खर्च उठानेके लिए हम तैयार नही, और कदाचित् इतना रुपया जुटाना बम्बईके लिए कठिन न भी माने तो भी हमे लाभ नही होगा, बल्कि हम हार ही जायेगे। इस बातका कोई निश्चय नही कि तब आन्दोलनमे कैसे लोग शामिल होगे। इस भारतीय स्वातन्त्र्य युद्धको चलानेका भार उठानेवाले लोग चरित्र, सचाई और साहसमे पहले दरजेके होने चाहिए। और इसकी कसौटी भी चरखा और रुईकी क्रियाएँ है। जबतक इन सैनिकोकी समझमे यह बात न आयेगी कि धुननेसे या बुननेसे वे अपनी रोटी कमा सकते है तबतक हम लाखो सैनिक प्राप्त कर ही नही सकते।

अब हम इस बातकी कल्पना कर सकते है कि अगर बम्बई इस काममे सबके आगे होना चाहे तो उसे क्या करना चाहिए।

(१) इस मासके अन्ततक युद्ध करनेकी इच्छा रखनेवाले प्रत्येक आदमीको धुनने, कातने और बुननेकी क्रियाओकी जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। उसे कमसे-कम रोज एक घटा सूत जरूर ही कातना चाहिए।

(२) बम्बईमे अधिकाश लोगोको इस मासके भीतर-भीतर हाथ-कते सूतकी खादीका उपयोग करने लग जाना चाहिए।

(३) इस महीनेके आखीरतक बम्बईके बाजारोका, मन्दिरोका, मस्जिदो और नाटकघरोका रूप बदल जाना चाहिए और वे सब खादीमय दिखाई देने चाहिए।

(४) बम्बईके स्त्री-पुरुषोको अपना फुरसतका समय धुनने, कातने और बुननेमे लगाना चाहिए।

(५) यदि बम्बईके नागरिकोका मारपीटमे अब भी कुछ विश्वास रह गया हो तो उन्हे उसे छोड देना चाहिए।

(६) यदि बम्बईके हिन्दुओ और मुसलमानोमे अब भी कुछ अनबन हो और उनके मनोमे कुछ मैल हो तो उन्हे उसे निकाल देना चाहिए।

यदि इतना काम इस मासके अन्ततक हो जाये तो बम्बईके लोग नवम्बरमे बडे पैमानेपर शान्तिपूर्वक कानून-भग शुरू कर सकते है।

बम्बईमे युवराजके उतरनेकी तारीख १७ नवम्बर है। क्या उसके पहले बम्बई अपनी शक्तिका चमत्कार दिखा सकेगा ? बम्बई जब ऊपर लिखी आसान शर्तोका पालन कर दिखायेगा तभी वह इस विद्रोहका आरम्भ कर सकता है, उससे पहले नही। जो प्रान्त ऐसा कर दिखायेगा वही सविनय भग शुरू कर सकता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १६–१०–१९२१

१२८. टिप्पणियाँ

थकावट

जब मुझसे कोई कहता है कि लोग अब थकने लगे है, कोई नई बात बताइए, तब मै हैरान हो जाता हूँ, तब मै समझता हूँ कि लोग स्वराज्यका रहस्य नही जानते, धर्म-युद्धका अर्थ नही समझते।

स्वराज्य अगर नित्य बदलनेवाली कोई चीज हो तो उसके उपाय भी बदले। मैं तो स्वदेशीके सिवा दूसरा उपाय नही खोज सकता, और अगर हम स्वदेशीसे ऊब गये हो तो हमे स्वराज्यसे भी उदासीन हो जाना पडेगा।

अगर कोई साँस खीचनेसे ऊबने लगे तो मानना चाहिए कि वह मरनेकी तैयारी-में है। तन्दुरुस्त आदमीकी साँस चलती रहती है, नाडी चलती रहती है, और इन्द्रियाँ भी अपना काम करती रहती है, पर इसकी खबरतक उसको नही रहती। जरूरी तमाम क्रियाओको करते हुए भी वह कभी नही थकता। कवि अपनी शक्तिका उपयोग करते हुए कभी नही थकता, और जो कवि-कर्म करते हुए थक जाता है वह कवि ही नही है। सारगी जिसके हाथमे खेलती है वह वादक बजाते हुए कभी नही थकता। इसी प्रकार अगर हमपर स्वदेशीका रग गाढा चढ गया है तो हम उससे ऊब नही सकते, बल्कि हमारे निकट तो यही स्पष्ट होगा कि जितनी सीढियाँ हम स्वदेशीकी चढे हैं उतनी ही स्वराज्यकी चढे है और जिस प्रकार हम स्वराज्यका रास्ता तय करते हुए कभी ऊब नही सकते उसी प्रकार स्वदेशीकी राहपर बढते हुए भी हम नही ऊब सकते। मनुष्य स्वच्छ और प्राणप्रद हवामे आगे बढता हुआ जैसे अधिकाधिक शक्ति-मान होता जाता है, ऐसा ही अनुभव हमे होना चाहिए। स्वदेशीकी दिशामे हमारा बल मजिल-दर-मजिल बढता ही चलता है। एक साल पहले जो लोग चरखेका मजाक उडाया करते थे, आज वे कहाँ है? श्रीयुत प्रफुल्लचन्द्र राय[1] हमारे एक महान विज्ञाना-चार्य है। वे श्रीयुत बसुकी[2] जोडके हैं। सूक्ष्म शास्त्रोके परखैया है। स्वय कितनी ही कम्पनियोसे उनका सम्बन्ध भी है। पर उन्हे भी कबूल करना पडा है कि बगालके साढे चार करोड स्त्री-पुरुषोका एकमात्र आधार चरखा ही है। जो व्यक्ति ऐसे उत्तम कार्यक्रमसे थक जाता है, वास्तवमे वह उसका रहस्य ही नही जानता।

ऊबा हुआ योद्धा क्या लडेगा? जो योद्धा हमेशा अपनी लडनेकी गति कायम नही रखता वह हारे बिना नही रहता। हम तो उत्तरोत्तर आगे ही बढते गये है। धारासभा, खिताब, वकील और विद्यार्थियोके किलोको थोडा-बहुत हमने तोडा और थोडा-बहुत हमारे हाथ भी लगा, उससे हमारा काम भी थोडा-बहुत चला। परन्तु इस विदेशी कपडेके किलेने तो हमारे सारे रास्ते ही रोक रखे है। इस किलेको

१. (१८६१-१९४४); देशभक्त और वैज्ञानिक।

२. सर जगदीशचन्द्र बसु, एफ० आर० एस०, वनस्पति-शास्त्री।

हम जवतक मिट्टीमे नही मिला देते तवतक हम स्वराज्यकी आशा नही रख सकते। उसके समूल नाशपर ही स्वराज्य प्राप्त हो सकता है। इसलिए, चाहे महीना लगे या महीनो, विदेशी कपडेकी चट्टानके टुकडे-टुकडे किये विना हम आगे नही वढ सकते। दूसरी चट्टानोमे तो हम छेद करके ही पार हो गये थे।

स्वराज्य क्या चीज है, सो तो अनुभवके वाद ही समझा जा सकता है। रोगीका रोग दूर हुआ या नही, इसका अन्तिम निर्णय तो स्वय रोगी ही कर सकता है। जो रोगी विछौनेपर ही पडा रहता था, उठ-वैठ ही नही सकता था, उसकी चरवी वढ जाये, चेहरेपर सुर्खी छिटकने लगे, और वैद्य भी कह दे कि हाँ, अब तुम चगे हो गये, तो भी रोगी इसे नही मान सकता। स्वराज्य मिला है या नही, इस वातका साक्षी तो प्रत्येक मनुष्य स्वय ही अपने लिए हो सकता है। और अगर यह सिद्ध होता है कि चरखेसे, धुननेसे, करघेसे और खादीसे लोगोका जी ऊव उठा है तो उसका अर्थ मै यह करता हूँ कि लोगोको स्वराज्यकी जरूरत ही नही है। यदि कोई रोजके-रोज लघन करे अथवा चावलको छोडकर भूसी खाये तो हम यही कहेगे कि यह व्यक्ति आत्मघात करना चाहता है। उसी प्रकार जो स्वदेशीका उल्लघन करता है उसके विषयमें कहा जा सकता है कि इसे स्वराज्यकी इच्छा नही है।

क्या कार्यकर्त्ताओ और उनके कुटुम्वियोने पूरी तरह स्वदेशीको अगीकार कर लिया है, अव ज्यादा करनेकी गुजाइश नही है और वे इसीलिए उसमे रस नही लेते? जवतक सभी असहयोगी स्वय तथा उनके परिवारोका एक-एक व्यक्ति स्वदेशी-मय नही हो गया है तवतक विराम लेने या निराश होनेका कोई कारण ही नही है। और जिस दिन तमाम असहयोगी अपना कर्त्तव्य समझकर सच्चे स्वदेशी हो जायेगे उस दिन मुझे विश्वास है कि सारा हिन्दुस्तान स्वदेशी हो जायेगा। आजकी हमारी थका-वट तो वालकोकी थकावट जैसी है। वालकको जो सवाल कठिन मालूम होता है उसको वह छोड देता है और कहता है — दूसरा सवाल दीजिए। जो शिक्षक इस प्रकार वालकको थकने और हारने देता है वह उसका शत्रु है। दिया हुआ सवाल हल कर लेनेपर ही वालकको छुट्टी दी जा सकती है। उसी प्रकार स्वदेशीका जो यज्ञ हमने आरम्भ किया हे उसके पूर्ण हो जानेपर ही वात वन सकती है। हमारी यह उकताहट अपनी अपूर्णता और अज्ञानके कारण है। हम स्वराज्यकी कीमत नही जानते। और अगर जानते है तो उसे चुकाना नही चाहते। हमारा खिलाफत-सम्वन्धी प्रेम सभाएँ करके और चन्दा देकर ही समाप्त हो जाता है। अगर ऐसी ही स्थिति रहे तो स्वराज्य कभी नही मिल सकता। स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए पहले हमको उद्योगी वनना होगा, सभाओका, जुलूसोका, व्याख्यानोका शौक हमे छोडना होगा, और यदि ऐसा मालूम होता हो कि अभी इन खेल-तमाशोकी जरूरत है तो कुवूल करना होगा कि अभी स्वराज्य दूर है।

स्वेच्छापूर्वक नियम-पालन

एक मित्रने मुझसे कुछ सवाल पूछे। उत्तर सहित उनको नीचे देता हूँ —

सवाल — क्या स्वराज्यमें हमें कुछ कानूनोकी जरूरत पडेगी?

जवाव — जी हाँ।

तब तो लोगोको वे कानून मानने भी पडेंगे?

जरूर, लेकिन वे स्वेच्छापूर्वक उन्हे मानेगे। अगर वे कानून-कायदे लोगोकी सलाहसे बनाये हुए होगे तो वे उन्हे खुशीसे मानने लगेंगे। क्या इसमे आपको कोई अचरज मालूम पडता है?

जी हाँ, इसमे मुझे कुछ शक होता है।

मैंने पूछा — किस तरह?

अपने अनुभवसे।

मै चौका, और मैंने फिर पूछा मुझे समझाओ। मै जरा उलझनमे पड गया हूँ।

देखिए, नागपुरमे २०,००० मनुष्योने असहयोगका प्रस्ताव पास किया था। जिन-जिन लोगोने उस प्रस्तावको मजूर किया, उनके लिए तो वह बन्धन-कारक था ही। लेकिन फिर भी क्या उन सब अर्थात् बीसो हजार मनुष्योने उसका पालन किया है? क्या वहाँ हाजिर रहनेवाले सभी वकीलोने वकालत छोड़ दी? जो विद्यार्थी वहाँ मौजूद थे क्या उन्होने स्कूल या कालेज छोड दिये? सबने स्वदेशी-व्रतका पालन किया? सभीने चरखा अपनाया? इन बातोंको भी जाने दीजिए। कार्यकारिणी समितिने जो-जो प्रस्ताव पास किये है, क्या सब जगह उनपर अमल हुआ? जैसा महासभाका हाल है वैसा ही छोटी-छोटी संस्थाओके लोगोका भी है। हमारी जितनी सस्थाएँ है उनमे अपने ही बनाये हुए कायदोका पालन कितने लोग करते है? मुझे सार्वजनिक जीवनका तजुरबा है और मैंने देखा है कि अपने ही बनाये हुए कायदोका पालन हम खुद बहुत थोडा करते है। जबतक यह कुटेव नही छूटती तबतक क्या हम स्वराज्यका उपभोग कर सकते है। क्या आप यह नही मानते कि इस दुःखके समय बनाये हुए नियमोके पालन करनेकी हमारी शक्तिमे ही स्वराज्य है? और आज अगर हममें वह शक्ति नहीं है, तो फिर स्वराज्यके मिल जानेपर भी वह हममे नहीं आ सकती। अर्थात् उस शक्तिके बिना स्वराज्य असम्भव है। फिर, अपने ही बनाये हुए कायदोका पालन करना तो बडी ही आसान बात है। क्योकि इसके लिए हमें किसी दूसरेसे जाकर कहनेकी जरूरत नही रहती। मै जो कह रहा हूँ इसका सम्बन्ध सिर्फ उन लोगोसे है जिन्होने अपना मत प्रस्तावके पक्षमें दिया था अर्थात् जो कांग्रेसी असहयोगी है और जिन्होने प्रस्ताव पास करनेके लिए हाथ उठाया था उन्हे तो तदनुसार आचरण करना था, किन्तु जब मै उनकी हालतपर विचार करता हूँ तो व्याकुल हो उठता हूँ और इसी साल स्वराज्य प्राप्त कर लेनेकी बातपर मुझे सन्देह होने लगता है।

इसके प्रत्युत्तरमें मैंने कहा ' हाँ, आप जो-कुछ कह रहे हैं उसमें सत्यांश जरूर है। हम सब अपने ही बनाये हुए नियमोका पूरी तरह पालन नही करते। फिर भी आपको यह तो कबूल करना ही पडेगा कि बारह महीने पहले हम जितने लापरवाह थे उतने आज नही हैं। कहा जा सकता है कि नागपुरके प्रस्तावपर लोगोने अच्छी

तरह अमल किया है। जिन बातोमे लोग उसपर अमल नही कर पाये वहाँ वे अपनी कमजोरी कबूल करते है और सबल बननेकी कोशिश करते है।

इस तरह जवाब देकर मैंने प्रश्नकर्त्ताका तो कुछ समाधान किया, लेकिन खुद मेरा समाधान नही हुआ। उनके सवालोमे मुझे तथ्य दिखाई दिया। मै विचारमे पड गया। उनसे तो मैंने यही कहा कि इस बारेमे मै "नवजीवन" मे लिखूँगा, लेकिन यह टिप्पणी लिखते समय मुझपर उन प्रश्नोका बहुत ज्यादा असर हुआ है। यद्यपि मै समझता हूँ कि मैने लोगोकी तरफसे जो वकालत की, वह वाजिब है तो भी मै यह तो समझ रहा हूँ कि जिन नियमो और कायदोको खुद हमी बनाते है उनको अमलमे लानेकी शक्ति भी हममे बहुत ज्यादा होनी चाहिए। "जहाँ वृक्ष हो ही नही वहाँ एरण्ड ही वृक्ष मान लिया जाता है" वाली कहावतके अनुसार हम सन्तोष नही मान सकते। हम तो स्वराज्यकी कसौटीपर कसे जा रहे है, उसमे हम पूरे नही उतर रहे है। हमारे सोनेमे जरूरतसे ज्यादा मिलावट है। सोनेके कसको तो परखैया ही परख सकता है। और हमें तो उस कसौटीपर स्वराज्यके लायक सिद्ध होना है। इसलिए जबतक हम उतने पूरे न उतरेगे तबतक हम स्वराज्य प्राप्त करनेकी शक्ति ही किस तरह प्राप्त कर सकते है? प्रश्नकर्त्ताकी यह दलील भी वाजिब है कि काग्रेसके हम सेवकोको तो बिना दिक्कतके ही पूरे सौ टच उतरना चाहिए। यह बात तो स्वत सिद्ध है कि हम सब कार्यकारिणी समिति या प्रान्तीय समितिके पास किये हुए प्रस्तावोका अमल यन्त्र या मशीनकी तरह नियमित होकर नही करते।

इस लापरवाहीका एक कारण भी है। वह यह कि आजतक हमने बिना विचारे हाथ ऊँचे किये है, डर या शर्म अथवा लालचसे हाथ ऊँचे उठाये है। लेकिन स्वतन्त्रता चाहनेवालोको ऐसी बाते शोभा नही देती। ऐसा मनुष्य तो अकेला होनेपर भी अपने मनके प्रतिकूल किसी भी प्रस्तावके खिलाफ हाथ ऊँचा उठाता है और स्वतन्त्र तन्त्रमे दूसरे लोग उसे धन्यवाद देकर आदरकी दृष्टिसे देखते है। इसलिए हमे जो प्रस्ताव मजूर न हो उसके खिलाफ हम अवश्य अपनी आवाज उठाये, अवश्य उसपर वादविवाद करे, और जब उसमे सार दिखाई दे तभी उसे मजूर करे। लेकिन एक बार स्वीकार कर लेनेपर फिर मन, वचन और कर्मसे उसपर दृढ रहना ही चाहिए। इस तरहके फी हजार एक भी आदमी अगर हमे मिल जाये तो हम जरूर ही स्वराज्य स्थापित करनेमें समर्थ हो सकते है। इस हिसाबसे हमे सारे हिन्दुस्तानमे तीन लाख ऐसे आदमियोकी जरूरत है जो अ० भा० काँ० कमेटीके प्रस्तावोपर खुद पूरी तरह अमल करे और दूसरो-से भी उन्हे पालन करानेका प्रयत्न करे। यो ऐसे काफी आदमी हो गये है, लेकिन फिर भी मै अच्छी तरह जानता हूँ कि वे तीन लाख तो किसी हालतमे नही है।

आजतक तो हम सरकारसे ही आशा रखते आये थे। हमारे प्रस्ताव उसके लिए होते थे, इसलिए उन प्रस्तावोके पास कर देनेपर हमारे लिए करनेका काम बहुत कम रह जाता था। लेकिन गये बारह महीनोमे हमने एक उद्योग किया है, और वह यह कि खुद हम ही कुछ काम करे।

अभी वक्त चला नही गया है। अगर हम पूरी मेहनत करे और जो-जो प्रस्ताव पास हुए है उनपर अमल करे तो मै मानता हूँ कि हम बहुत कुछ आगे बढ जायेंगे।

हमारा बहुत-सा काम तो विचार, कार्यदक्षता और उद्यमके अभावमे पडा रह जाता है। आलस्यको छोडना, कार्यशक्तिको बढाना और विचारमय बनना तो हमारा एक आवश्यक कर्त्तव्य है। ये गुण तो प्रत्येक स्वराज्यवादीमे होने ही चाहिए।

शादीमें खादी

सिर्फ खादी पहनकर शादी करनेमें सबसे पहले पारसी जातिने ही कदम बढाया है। खडवेकी काग्रेस-समितिके सभापति श्रीयुत लवगियाकी शादी उस दिन बम्बईके कामाबागमे श्रीमती दीनबाई पटेलके साथ सम्पन्न हुई। दुल्हा-दुल्हिन दोनो खादीकी ही पोशाकमें थे। उन्हीके साथ-साथ शादी करानेवाले पुरोहितने भी खादीका जामा पहना था और मेहमानोसे भी प्रार्थना की गई थी कि वे खादीके ही लिबासमे पधारे। इसलिए मजलिसमे ज्यादातर खादी ही दिखाई देती थी। इसी तरह और भी सब बातोमें सादगीसे काम लिया गया था। दूल्हेके पिताने स्वराज्य फडमे ५०० रुपये दिये। इस तरह सभी लोग स्वदेशी और सादगीका अनुकरण करे तो कितना अच्छा हो। मै आशा करता हूँ कि मेरी ही तरह, प्रत्येक पाठकके हृदयमे इन दम्पतिकी दीर्घायु-कामना और इनके हाथो बहुत बडी देशसेवा होनेकी भावना उत्पन्न होगी।

रंग-विद्वेष

श्री मणिलाल बैरिस्टरने फीजीमे जनताकी बडी सेवा की। जब उन्हे सरकारने देश-निकालेकी सजा दे दी, तो वे रहनेके विचारसे न्यूजीलैंड गये। उन्होने वहाँ वकालत प्रारम्भ करनेका प्रयत्न किया और अदालतको सनदके लिए दरखास्त दी। न्यूजीलैंडकी विधि-समितिने, जिसके सभी सदस्य गोरे थे, फीजीसे पूछताछ की, फीजीकी सरकारने मणिलालकी वफादारीके प्रति शक जाहिर किया। इस शकके आधारपर श्री मणिलालकी अरजी नामजूर कर दी गई है। इसका यह अर्थ होता है कि श्री मणिलाल न्यूजीलैंडमे अपनी जीविका नही कमा सकते। फीजीमे श्री मणिलालपर कोई अपराध साबित नही हुआ था और न्यूजीलैंडमे भी उनके खिलाफ कोई बात नही थी। उनके वफादार न माने जानेका सम्बन्ध उनकी चमडीके रगसे था और उनकी बेवफादारीका प्रमाण था अपने देशभाइयोकी सेवा करना। जिनका रग गेहुँआ है, जो हिन्दुस्तानी है और जो अपने देशवासियोकी सेवा करते है, वे व्यक्ति यदि सफेद चमडीवालोकी दृष्टिमे बेवफा न गिने जाये, तो फिर बेवफा और कौन गिना जा सकता है। आश्चर्यकी बात है कि इतना सब देखते हुए भी हमारे बीचमे ऐसे भोले और उदार मनके काफी देशवासी है जिनका यह कहना है कि हमे जो-कुछ प्राप्त करना है, वह हमें सरकारके साथ सहयोग करते हुए ही प्राप्त करना है।

पूर्वी-आफ्रिका

मुझे तो सभी जगहोमें सरकारके साथ सहकार करनेके कटु परिणाम ही दिखाई देते है। पूर्वी आफ्रिकाके गोरे श्री एन्ड्रयूजका वहाँ जानातक सहन नही कर पाते। उन्होने उनका विरोध करनेके लिए कमर कस रखी है। गोरे श्री एन्ड्रयूजको चोट तक पहुँचा सकते है। इसीके साथ वे ब्रिटिश अधिकारियोके साथ ऐसी बातचीत भी

चला रहे है जिससे हम अपना एक भी अधिकार प्राप्त न कर पायें। यदि भारतीयोके अधिकार उनसे छिनाये गये, तो इसे दिन-दहाडे लूटमार कहा जायेगा। मै आशा करता हूँ कि पूर्वी आफ्रिकामे भारतीय ऐसा कोई समझौता नही करेगे जिससे उनके हकोपर आँच आये। भारत इस मामलेमे उनकी एक ही तरहसे मदद कर सकता है और वह है मदद देनेकी शक्ति प्राप्त करना, यह शक्ति है स्वराज्य।

अस्पृश्यताका फल

हम लोग ससारमें सभी जगह इस तरह अछूत क्यो माने जा रहे है? मुझे इसका कारण स्पष्ट दिखाई देता है। ईश्वर आदमीको उसके पापकी सजा रहस्यमय रीतिसे दिया करता है। हमने अपने ही छ करोड लोगोको जो कुछ बना दिया है, जगतने वही हमे बना दिया। हम जहाँ-कही भी जाते है, यह कलक हमारे साथ रहता है। आफ्रिकाके हब्शी भी हमें गुलाम मानकर तिरस्कार करते है, यह मैने देखा है। जबतक हम लोग अछूतोके प्रति वास्तविक ममताका अनुभव नही करते, तबतक हम जगतकी मैत्रीके पात्र नही बन सकते। हम धर्मके नामपर अपने आपको धोखा दे रहे है और जडता अपनाये हुए है। इसीलिए हम बहुत नीचे गिरते चले जा रहे है। मुझे तो अन्त्यजोकी अपेक्षा भी हम सबकी स्थिति अधिक करुणाजनक लगती है, क्योकि हम तो ससार और ईश्वर दोनोकी ठोकरे खा रहे है। अन्त्यज केवल हमारी ठोकरे खाते है, जब कि हम जगत और ईश्वर, दोनोकी ठोकरे खा रहे है। अन्त्यजोको ईश्वर ठोकर नही मारता। उनकी त्रुटियोके पक्षमे तर्क दिये जा सकते है, और उनकी निर्योग्यताएँ सिद्ध की जा सकती ह और उस सबसे उनका पक्ष सबल बनेगा। अस्पृश्यताका मैल धोनेका अर्थ है अपने मनका मैल धोना। जबतक यह मैल हमारे मनसे नही गया है, तबतक हम कोई दूसरा चाहे जितना अच्छा काम क्यो न करे, उसका फल नही होगा। जिस आदमीके हृदयमें कठोरताने घर कर लिया है, उसका छुटकारा नही हो सकता। और जब आदमी धर्मके नामपर निर्दयता अपना लेता है, तब उसके मनकी निर्दयता हटाये नही हटती। जो व्यक्ति धर्मके नामपर पशु-वध करता है, उसे पशु-वध सम्बन्धी क्रूरता समझाना कठिन है। जो स्वादके लिए पशु-वध करता है, उसे समझाना सरल है। इसलिए हम बहुत ही ध्यानसे, जबतक अन्त्यजोके प्रति तिरस्कारकी भावनाको विचारपूर्वक अपने मनसे नही हटा देते, तबतक हिन्दू धर्मकी यह सडायँध दूर नही हो सकती। अगर कोई मनमें मैल रखकर अछूतको छूता भी है, तो पापसे छुटकारा नही होता। अस्पृश्योको स्पर्श करनेका तो अर्थ है जाति-बधन जैसी स्वच्छ पद्धतिमें जो विष व्याप्त हो गया है, उसे निकाल फेंकना, ऊँच-नीचकी भावनाको भुला देना और उसके स्थानमें भ्रातृ-भावकी स्थापना करना। जब हम ऐसा करने लगेंगे, तभी अस्पृश्यता दूर की जा सकेगी। आज तो यह सडाव इतनी व्यापक हो गई है कि अन्त्यजोमें भी परस्पर ऊँच-नीचकी भावनाने घर कर लिया है। हम ढेढ और भगियोको स्पर्श नही करते, इसका परिणाम यह हुआ है कि भगियोके मनमें भी अपनेको किसी-न-किसीसे बडा कहलवानेकी इच्छा होती है। इसे निकालना ही अस्पृश्यताकी भावना दूर करना है।

और जब कविने "अस्पृश्यता अतिरिक्त अग" कहा, तब उसका भी यही अर्थ था कि यह हिन्दू धर्मके ऊपर एक थोपी गई चीज है।

काग्रेसके कार्यकर्त्ताओको इस विषयमे तनिक भी असावधानी नही दिखलानी चाहिए। उन्हे जहाँ-कही भी ऊँच-नीचकी भावनाका कोई चिह्न दिखाई देता है, उन्हे वहाँ उसका मुकाबिला करना चाहिए। हम परम्परागत धर्मका लोप नही करना चाहते, किन्तु हम अज्ञानको मर्यादाका रूप भी नही देना चाहते। मर्यादाका स्वरूप स्वय दु ख सहन करना है, दूसरेको दु ख देना नही। जो दूसरेको दु ख देते है, वे स्वेच्छाचारी है, सयमी नही। जो स्वर्ग प्राप्त करनेके लिए दूसरोसे ऊँचा-नीचा काम करवाते है, वे सयम-धर्मका पालन नही करते। अस्पृश्यता और उसमे समाहित निर्दयताको दूर करनेके लिए यह बहुत आवश्यक है कि हम अस्पृश्योकी सदा कुछ-न-कुछ सेवा करते रहे, उनके दु खको समझे, उनके अनाथ बालकोका पालन करे, उनकी झोपडियोमे जाकर उन्हे मदद पहुँचाये। यदि हम कोई शाला आदि चलाते हो, तो उनके बच्चोको उसमे दाखिल करे और जो बच्चे हमारी देखरेखमे पढ रहे है, उन्हे भी इसकी आवश्यकता समझाये। हरएक गॉवमे हम उनके मुहल्लोमे जाये और जॉच करके जिन बातोकी वहॉ सुविधा न हो, वे सुविधाएँ वहॉ मुहैया करे। यदि इस प्रकार हम उनपर प्रेम करेगे, तो उसका असर हमारे मनपर इतना अधिक पड सकता है कि हम रोज-रोज शुद्ध और पवित्र बनते चले जायेगे और हमारे मनमे पडी हुई कठोरता निर्मल हो जायेगी। स्वराज्यका अर्थ ही है सबके दु खमे भाग लेनेकी भावनाका निर्माण।

दर्शकोके लिए सुविधाएँ

आगामी काग्रेस अधिवेशनमे कितनी ही बातोमे इतना परिवर्तन होनेवाला है कि अगर लोग उसका मतलब ठीक-ठीक न समझे तो सम्भव है कि या तो लोग अप्रसन्न हो जाये या अव्यवस्था फैल जाये। महासभाकी सफलताका आधार जितना उसके कर्मचारियो और स्वयसेवकोपर है उतना ही लोगोपर भी है। जैसा इन्तजाम सोचा गया हे अगर लोग उसे पसन्द करे, नियमोका पालन करे तो काम ठीक-ठीक चलेगा। लेकिन अगर लोगोने ऐसा न किया तो फल अच्छा हो ही नही सकता। इस बार दर्शकोकी सख्याकी हद बॉध दी गई है। एक तो यही बात कितने ही लोगोको पसन्द नही आ रही है। फिर भी अगर लोग कुछ विचार करे तो उन्हे तुरन्त ही इसकी आवश्यकता समझमे आ सकती है। महासभा प्रजाका कार्य सचालन करनेवाली सस्था है। अब अगर केवल कार्य-सचालनकी विधिको ही देखनेके लिए हजारो आदमी इकट्ठा होना चाहे तो उनकी व्यवस्था करना ही एक जबर्दस्त काम बन बैठे। इसलिए जब महासभा कार्य-सम्पादन अथवा कार्य-योजना करती हो तब उसके देखनेकी इच्छा अधिक लोगोको करनी ही न चाहिए।

इसका एक उपाय तो यह था कि दर्शक बिलकुल ही न लिये जाये। परन्तु अभी हालमें तो ऐसा नही हो सकता। किसी-किसीके आनेकी सुविधा करना आवश्यक था। इसलिए अधिकसे-अधिक तीन हजार दर्शकोकी व्यवस्था करनेका प्रस्ताव स्वागत-समितिने किया। अब यह विचार शेष रहा कि किस तरहके तीन हजार आदमी आ

से। इसलिए फीसकी दर घटा दी गई और स्वागत-समितिको यह अधिकार दिया गया कि कुछ [illegible] निश्चित कर सके। इस प्रकार स्वागत-समितिने [illegible] उचित [illegible] किया है। जनताको उचित है कि वह इस [illegible] स्वीकार करे।

[illegible] सब भाई देश-गुन गाते हैं। हर रोज [illegible] और दिनमें [illegible] शरीक हो सकेगा। सिर्फ जितनी [illegible] महासभाके मण्डपमें न [illegible] भाषण भी [illegible]। अतएव चार आने [illegible]। [illegible] कम-से-कम एक लाख आदमी [illegible] और यह आशा भी है कि उन्हें [illegible] प्रबन्ध दिखाई देगा।

पारसी स्वयंसेवक

श्री [illegible] लिखते हैं:[1]

[illegible] जायेगा और यदि लगे कि [illegible] नहीं है तो जो दल बन चुके हैं वे [illegible] शामिल होंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १६-१०-१९२१

१२९. पत्र : ए० जी० कानिटकरको

साबरमती
१७ अक्तूबर, [१९२१]

प्रिय मित्र,

आपका पत्र पाकर प्रसन्नता हुई।

वर्तमान बालचर (स्काउट) संगठनमें मेरा विश्वास नहीं है और न मैं सम्भवतः किसीको युवराजके किसी तरहके स्वागतमें सम्मिलित होनेकी सलाह दे सकता हूँ, क्योंकि उनको यहाँ एक घृणित अन्यायका समर्थन करनेके लिए लाया जा रहा है। मैं आपकी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि हमारा पतन सादे जीवन और प्रेमके आदर्शोंको त्याग देनेके कारण हुआ है। जबतक हम फिरसे स्वदेशी वस्त्रोंका व्यवहार

१. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्रमें आगामी कांग्रेस अधिवेशनके लिए पारसियोंसे पारसी स्वयंसेवक दलका निर्माण करनेकी अपील की गई थी और स्वयं पत्र लेखकने इसमें अपनी सेवाएँ सौंपनेकी बात भी कही थी।

नहीं करने लगते और अस्पृश्यताको नहीं मिटा देते, तबतक भारतमें किसी प्रकारकी शान्ति सम्भव नहीं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च]

एक शिष्ट अंग्रेज बालक हमें अपने भाईके समान प्यारा होना चाहिए।

मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ५७९९) से।
सौजन्य डी० पी० जोशी

१३०. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

साबरमती
सोमवार [१७ अक्तूबर, १९२१][1]

भाईश्री बहरामजी,

मैंने आपका पत्र आज ही देखा है। यदि मुझे कोई अच्छा ढेढ या भंगी लडका मिल गया तो मैं आपके पास भेज दूंगा। ऐसे लडके मिलना कठिन होता है। मुझे बिलकुल मालूम न था कि आप निरामिष भोजी हैं।

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ४३६०) से।
सौजन्य तहमीना खम्भाता

१३१. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदीको

[१८ अक्तूबर, १९२१][2]

भाईश्री,

आपका पत्र मिला। आपको नौकरी करनेकी कोई आवश्यकता नहिं है। न है विना काम असोसिएशनकी ओफिसपर जाने की। आपका भी पेटीटपरका पत्र देखा। मुझे खेद हुआ है। उसमें रोष ही देखता हुं। मुझे मेरेपर रख दिया है तो ली उनको कुछ भी लीखनेकी आवश्यकता न थी।

१. डाकखानेकी मुहरसे।
२. पत्रपर १९ अक्तूबर, १९२१ की बम्बई-डाकखानेकी मुहर है।

मेरा कार्य भी अब थोड़ा-सा मुश्किल हो जायगा। परन्तु आप निश्चन्त रहें। भविष्यके लिये मेरा इशारा है।

मोहनदास गांधी

बनारसीदास चतुर्वेदी
हीराबाग
गोराव मुम्बई

सी० एन० २५७९ की फोटो-नकलसे।

१३२. तार : सी० विजयराघवाचार्यको[1]

[१९ अक्तूबर, १९२१]

सी० विजयराघवाचार्य
सेलम

नेहरूजी[2] कार्यसमितिके[3] प्रस्तावकी उपेक्षा कैसे कर सकते हैं? दुःख है आप नाराज हैं। आप अलग होनेकी धमकी कैसे दे सकते हैं? बैठक अवश्य होनी चाहिए। जैसा आपकी अन्तरात्मा कहे वैसा करें।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एम० एन० ७६४०) की फोटो-नकलसे।

१ जिस तारके उत्तरमें यह भेजा गया था वह विजयराघवाचार्यने १९ अक्तूबरको भेजा था। तार इस तरह है "नेहरूजीने जवाबी कार्रवाई करके लड़नेकी धमकी दी है। उनकी लड़ाई काल्पनिक विपक्षीसे होगी। मैं अलग होना या दल बनाने शुरू कर दूँगा। कृपया उनको तार दें। अपने सहज प्रेमके सन्देशपर आग्रह करें, अन्यथा लोग हमारे ऊँचे उद्देश्यपर अनावश्यक हँसेंगे। . . ."

२ पण्डित मोतीलाल नेहरू, कांग्रेसके तत्कालीन महामन्त्री।

३ इसी कार्यसमितिने उक्त प्रस्ताव द्वारा अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी बैठक ४ नवम्बरको बुलाई थी।

१३३. तार : मोतीलाल नेहरूको

अहमदाबाद
१९ अक्तूबर, १९२१

मैं आपसे सहमत हूँ कि अध्यक्ष कार्यसमितिके प्रस्तावकी उपेक्षा नही कर सकता। कमेटीकी[1] बैठक निश्चयके अनुसार दिल्लीमे होनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २२-१०-१९२१

१३४. पत्र : जी० वी सुब्बारावको

साबरमती
१९ अक्तूबर, १९२१

प्रिय मित्र,

इसमे सन्देह नही कि खेती करना, पुराने ढगके बुनाईके पेशेकी अपेक्षा अधिक अच्छा है, किन्तु उसके लिए पूँजीगत अधिक व्यय, धैर्य और लगनकी जरूरत है तथा उसमे घरसे बाहर जाकर श्रम करना पडता है। इसलिए जो सरकारी नौकर दफ्तरमे मेजोपर काम करनेका अभ्यस्त होता है उसके लिए एकाएक खेतीका काम शुरू कर देना शायद व्यावहारिक नही। फिर सामान्यत उसके साधन शायद इतने सीमित होते है कि मामूली पैमानेपर भी खेती शुरू करना उसके लिये असम्भव होगा।

आपका,
मो० क० गाधी

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ३६२२) की फोटो-नकलसे।

१. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी।

१३५. पत्र : महादेव देसाईको

आश्रम
बुधवार [१९ अक्तूबर, १९२१को या उसके पश्चात्][1]

भाई श्री ५ महादेव,

तुम्हारा भेजा हुआ चेक तो मुझे रखना ही पडेगा। वादमे, जब तुम्हे जरूरत होगी तब तुम्हे पैसा मुझसे मांगना पडेगा। ऐसा लगता है कि मोतीलालजीको परिवारके लोगोको इन बीमारियोसे छुटकारा कभी मिलेगा ही नही।

स्वदेशीके विषयमे लोगोको अपनी बात मै जँचा नही पाता, इससे क्या मेरी तपस्याकी कमी नही सूचित होती? एक पूर्ण तपस्वी बोले बिना भी लोगोको अपनी भावनाओसे प्रभावित करता है। कुछ लोग सकेतमात्रसे, तो कुछ बोलकर और कुछ लिखकर ही अपनी बात समझा पाते है? इस सबका क्या रहस्य है? जो लोग खादी केवल मेरी हाजिरीमे पहनते है वे मेरी तपस्याके कारण नही, मेरे प्रति अपने प्रेमके कारण ही ऐसा करते है। भविष्यमे स्वतन्त्र हिन्दुस्तान अपना अनाज क्या विदेशोसे मँगायेगा? यदि नही, तो कपडा भी नही मँगायेगा। क्या हम पानी और दवा भी विदेशसे मगायेंगे? अलबत्ता, जब हमारे देशमे कपास पैदा होना बन्द हो जायेगा तब जरूर हमारा धर्म बदल जायेगा। लेकिन तब तो हमे यह देश ही छोड देना पडेगा।

यह तो तुमने सुन ही लिया होगा कि किशोरलालने एकान्तमे एक झोपडी बनवाई है और आजकल उसीमें रह रहे है।

गुजराती पत्र (एम० एन० १०६०१) की फोटो-नकलसे।

१३६. टिप्पणियाँ

गीतामें चरखा

कविवर [रवीन्द्रनाथ ठाकुर] ने 'मॉडर्न रिव्यू' में इस बातके खिलाफ अनेक आपत्तियाँ उठाई थीं कि एक पुनीत कार्य मानकर सभीको चरखा चलाना चाहिए। पिछले अकमें मैंने उनकी इन आपत्तियोका उत्तर देनेकी कोशिश की है।[2] मैंने पूरे विनीत भावसे और इस इच्छाके वश ऐसा किया है कि कविवरको तथा उनके सदृश मत रखनेवाले अन्य लोगोको अपने मतसे सहमत कर सकूँ। पाठकोके लिए यह जानना रोचक होगा कि मेरी यह मान्यता बहुत अशोमे 'भगवद्गीता' पर आधारित है।

१ अन्तिम अनुच्छेदमें किशोरलाल मशरूवालाके एकान्तमें एक झोंपडीमें जाकर रहनेका उल्लेख है। श्री मशरूवाला इस झोंपडीमें शुक्रवार, १४ अक्तूबर, १९२१ को रहनेके लिए गये थे।

२ देखिए "महान् प्रहरी", १३–१०–१९२१।

सम्वन्वित श्लोक मैंने उस लेखमे ही दे दिये है। अब नीचे उन लोगोके लाभके लिए, जो सस्कृत नही जानते, उन श्लोकोका अग्रेजी अनुवाद दे रहा हूँ। यह 'भगवद्‌गीता' के 'साँग सेलेशियल' नामसे एडविन आर्नाल्ड-कृत अनुवादसे लिया गया है।[1]

यहाँ कर्मसे तात्पर्य, निस्सन्देह, शारीरिक श्रमसे है, और यज्ञरूपमे किया गया कर्म वही है जो समान लाभके लिए सभी लोगो द्वारा किया जाये। ऐसा कर्म, ऐसा यज्ञ सिर्फ चरखा चलाना ही हो सकता है। मै यह नही कहना चाहता कि ये श्लोक रचते समय 'गीता'कारके मनमे चरखा ही रहा होगा। उन्होने तो सिर्फ आचरणका एक बुनियादी सिद्धान्त प्रस्तुत कर दिया। और भारतमे इन श्लोकोका अध्ययन करते हुए तथा भारतपर उन्हे लागू करते हुए तो मै यही सोच सकता हूँ कि कताईका काम ही वह शारीरिक श्रम है, जिसमे यज्ञकी गरिमा है। मै तो इससे शुभतर या वढकर राष्ट्रीय कर्मकी कोई कल्पना ही नही कर सकता कि जो काम करना हमारे सभी गरीव भाइयोके लिए अनिवार्य है, उस कामको सभी लोग प्रतिदिन ज्यादा नही तो एक घटा ही करे, और इस तरह उनके साथ और फलस्वरूप समस्त मानव-जातिके साथ तादात्म्य स्थापित करे। मै ईश्वरकी इससे बडी आराधनाकी कल्पना नही कर सकता कि मै गरीवोके लिए उसी तरह काम करूँ जिस तरह वे स्वय करते है। चरखेका मतलब है दुनियाकी दौलतका अधिक न्यायोचित और समान बँटवारा।

वगालका उत्साह

जिन लोगोने कविवरका वह लेख नही पढा है, उन्हे यह जानकर सन्तोषका अनुभव होगा कि वे चरखेके बिलकुल विरुद्ध है, ऐसी बात नही है। उन्हे इस बातकी जरूरत नही दिखाई देती कि सभी लोग चरखा चलाये। लेकिन मुझे पूरा विश्वास है कि जैसे-जैसे हम इस क्षेत्रमे आगे वढते जायेगे, भारतसे उसकी कष्टकर और वढती हुई गरीवीको दूर करनेके साधनके रूपमे चरखेकी कार्य-साधकता और महत्वमे लोगोका सन्देह समाप्त हो जायेगा। डा० प्रफुल्लचन्द्र रायने चरखेके महत्वको खुले दिलसे स्वीकार किया है। यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। और इससे भी बडी वात चिट्ठियोसे प्राप्त यह समाचार है कि देशबन्धु दास तथा उनकी पति-परायण पत्नी जहाँ कही जाती है, लोग सामूहिक रूपसे विदेशी वस्त्रोका त्याग करके चरखेको अपना लेते है। यहाँ एक पत्रके अशका अनुवाद दिया जा रहा है। यह पत्र एक वगाली भाईको उनके पिताने लिखा है, जो चाँदपुरके पास रहते है, जिसे गोरखोके कारनामेने भारत-भरमे प्रसिद्ध कर दिया है। चाँदपुरके ही स्टेशनपर गोरखोने उस भयकर रात्रिमे धावा किया था ओर असहाय कुलियोको स्टेशनके अहातेसे निकाल वाहर किया था। उक्त पत्रका अश इस प्रकार है

> कल समूह-गायन करता हुआ एक जुलूस निकला, हाथ-कते सूतकी प्रदर्शनी हुई और नीरद पार्कमें एक भारी सार्वजनिक सभा हुई। एक वहुत

1. अग्रेजी अनुवादका हिन्दी रूपान्तर यहाँ नही दिया जा रहा है। **भगवद्‌गीताके** मूल श्लोकोंके लिए देखिए "महान् प्रहरी", १३-१०-१९२१।

अन्य नेता

इस बातमे तनिक भी सन्देह नही है कि बम्बई सरकार नेताओको जेल भेजनेके काममे बडे ढगके साथ लगी हुई है। सो इस तरह कि पीर तुराब अली शाह और पीर मुजहिदको गिरफ्तार करके उसने दो ऐसे मुसलमानोको गिरफ्तार किया है जिनके अनुयायियोकी सख्या बहुत बडी है और जिनके प्रभावका उपयोग साधारण लोगोकी हिंसा-वृत्तिको रोकनेके लिए किया जाता था। कहनेकी जरूरत नही कि कर्नाटकमे श्रीयुत देशपाण्डेके अद्वितीय प्रभावका उपयोग भी शान्ति-रक्षाके लिए था। इसके बारेमे कोई भी यही सोचेगा कि बम्बई सरकारको अब अपनी नरमीपर शायद शर्म आने लगी और वह अबतककी कसर निकालनेकी कोशिश कर रही है। धारवाड-निर्णय और सिन्ध तथा कर्नाटककी गिरफ्तारियोसे लगता है कि बम्बई सरकार लोगोको हिसा-के लिए निमन्त्रण-सा दे रही है। लेकिन हमे यह उम्मीद करनी चाहिए कि इसका मौका अब उसके हाथसे निकल गया है। मालूम होता है कि देश अब इस बातको समझ गया है कि उसका हित किस बातमे है। और अब वह सरकारके हाथका खिलौना न बन जायेगा। अगर हिन्दू और मुसलमान एक रहते है, जनता अहिसाके सिद्धान्तको सोच-समझकर बुद्धिपूर्वक अपना लेती है और स्वदेशीका काम तरतीबके साथ होने लगता है तो फिर कोई भी ताकत हमको इसी साल स्वराज्य प्राप्त करनेसे नही रोक सकती।

मजिस्ट्रेटकी क्षमा-याचना

पाठकोको याद होगा कि बुलन्दशहरके मजिस्ट्रेटने श्री त्यागीको थप्पड लगवाये थे[1], हालाँकि उस समय उनके मुकदमेकी सुनवाई हो रही थी और इसलिए वे मजिस्ट्रेटके सरक्षणमे थे। मजिस्ट्रेटने इसके लिए मुजरिमसे क्षमा-याचना की। अब मुझे उसका पाठ मिल गया है। वह इस प्रकार है

> अदालतमें हाजिर मुजरिम,
>
> आजकी कार्रवाई आगे चलनेसे पहले मैं कुछ कहना चाहता हूँ।
>
> ऐसा मैं दो कारणोसे कर रहा हूँ——एक तो इस कारणसे कि मैं तुम्हारे मामलेकी सुनवाई कर रहा हूँ और यह ठीक नहीं है कि तुम या कोई भी ऐसा सन्देह करे कि तुम्हारी सुनवाई न्यायपूर्वक और उचित ढगसे नहीं होगी। दूसरा कारण यह है कि सरकारका कोई भी अधिकारी यह नहीं चाहेगा कि कोई भी ऐसी घटना हो जिससे समाजके किसी भी हिस्सेको शिकायतका कोई उचित अवसर मिले——विशेषकर इसलिए कि बहुतसे सिद्धान्तहीन और मौकेका नाजायज फायदा उठानेवाले लोग ऐसी घटनाओको नमक-मिर्च लगाकर पेश करनेको तैयार बैठे है।
>
> पहली सुनवाईके समय मैं अधीर हो रहा था और तुम उद्धत थे। मैंने तुम्हें थप्पड लगवाकर गलती की और उसके लिए मुझे खेद है।

1. देखिए "टिप्पणियाँ", १३-१०-१९२१ का उप-शीर्षक "विपरीत दृश्य"।

अब मैं तुम्हें बता दूं कि अगर अदालतके प्रति तुम्हारा व्यवहार आदर-पूर्ण रहेगा तो मैं भी तुम्हारे साथ शिष्टतापूर्ण व्यवहार करूँगा। अगर तुम ठीक व्यवहार नहीं करोगे तो मैं उचित तरीकेसे उसका निराकरण करनेकी कोशिश करूँगा। जो भी हो, तुम्हारे मामलेकी धैर्यपूर्वक, उचित सुनवाई की जायेगी, और ठीक अवसर आनेपर तुमको अगर कोई सगत बात कहनी होगी तो उसे कहनेका तुम्हें पूरा मौका दिया जायेगा।

यहां मैं इतना और बता दूं कि तुमपर जो अभियोग है, उस अभियोगसे इस अदालतमें या किसी अन्य अदालतमें यदि तुम निर्दोष साबित हुए तो तुम्हारे समाजके लोग इस जिलेमें जो अच्छा काम कर रहे हैं, उसका खयाल रखते हुए मैं मलाबार-सहायता कोषमें ५० रुपये दूंगा।

डब्ल्यू० ई० जे० डॉब्स

मैं स्पष्ट देख रहा हूँ कि जैसे सर माइकेल ओ'डायरको कौंसिलकी शानमें गुस्ताखी करनेके लिए क्षमा मांगनेपर मजबूर किया गया था, वैसे ही उक्त मजिस्ट्रेट-पर भी दबाव डालकर क्षमा-याचना कराई गई है। इस क्षमा-याचनाकी शब्दावलीमें हार्दिकता या भावनाका अभाव था क्योंकि मजिस्ट्रेटने उसी दिनकी सुनवाईके दौरान अभियुक्तके बयानके एक हिस्सेको, जो उसे पसन्द नहीं था, कार्रवाईके विवरणसे निकालकर उसकी धैर्यपूर्ण सुनवाई करनेका अपना वचन तोड़ दिया। उसने जो अभि-युक्तके दोषमुक्त सिद्ध होनेकी शर्तपर वफादार लोगोंका खयाल करके मलाबार सहायता कोषमें ५० रुपये देनेकी बात कही, उससे सिद्ध होता है कि वह सही रास्तेपर आ ही नहीं सकता। उस दानका उद्देश्य उस अपराधको धोना था जो मजिस्ट्रेटने किया था। वफादार लोगोंका अभियुक्तके दोषी अथवा निर्दोष सिद्ध होनेसे क्या सम्बन्ध हो सकता था? फिर उस दानके पीछे अभियुक्तके निर्दोष होनेकी शर्त लगानेकी क्या जरूरत थी? मजिस्ट्रेटने जो अभियुक्तको थप्पड़ लगवाये, उससे एक बहुत गम्भीर सवाल उठ खड़ा होता है। क्या ऐसा कोई व्यक्ति किसी सभ्य सरकारमें एक दिन भी मजिस्ट्रेटके पद-पर आसीन रह सकता था? उदाहरणके लिए, क्या इंग्लैंडके मुख्य न्यायाधीश महोदय, जिस कैदीके मामलेकी सुनवाई हो रही हो, उसे थप्पड़ लगवानेके बाद अपने पदपर आसीन रह सकते? अगर भारत सरकार बिलकुल नियम-विधान रहित और सर्वथा गैरजिम्मेदार सरकार नहीं होती तो मजिस्ट्रेटको तुरन्त मुअत्तिल करके उसपर एक जरायमपेशा आदमीकी तरह मुकदमा चलाया जाता। एक न्यायाधीश द्वारा किसी अभियुक्तके मुकदमेकी सुनवाईके दौरान उस अभियुक्तको पिटवाना कोई मामूली बात नहीं है और उसे यों ही टाला नहीं जा सकता।

सहयोग करते जानेमें भी धीरजकी कोई हद होती है। क्या सम्बन्धित भारतीय मन्त्रियोंकी आत्मा, मजिस्ट्रेटने राष्ट्रके प्रति जो अपराध किया है उसके लिए उन्हें धिक्कार नहीं देती? या वे ऐसा मानते हैं कि चूंकि मजिस्ट्रेट उनके विभागमें नहीं है, इसलिए उनपर उसकी कोई जिम्मेदारी नहीं है?

असहयोगीका कर्त्तव्य सीधा-सादा है। सरकारी अधिकारियो द्वारा कानून और नैतिकताको भग करनेके ऐसे एक-एक मामलेसे हमे अपने काममे और भी सकल्पके साथ जुट जानेकी प्रेरणा मिलनी चाहिए। जिस प्रणालीके अन्तर्गत ऐसा बर्बरतापूर्ण आचरण सम्भव है, वह प्रणाली जबतक जडमूलसे नष्ट नही हो जाती तबतक हम सन्तुष्ट नही हो सकते।

अभियुक्तका बयान

अपने मामलेकी दूसरी सुनवाईसे दो दिन पूर्व श्री त्यागीने मजिस्ट्रेटको निम्न-लिखित बयान भेजा

वन्देमातरम्,

बुलन्दशहरके जिला मजिस्ट्रेटके न्यायालयमे।

भारतीय दण्ड-सहिताके खण्ड १२४ और १५३के अधीन अभियुक्त महावीर त्यागीकी ओरसे

मै, महावीर त्यागी, एक निर्दोष अभियुक्त, निम्नलिखित बयान देनेपर मजबूर हो गया हूँ। इस बयानमे मै कहना चाहता हूँ कि उक्त मजिस्ट्रेटने अपने अत्याचार और अयोग्यताका परिचय देते हुए इसी ३ तारीखको खुली अदालतमें मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया जो मेरे आत्म-सम्मान, धर्म और राष्ट्रीयताको चोट पहुँचानेवाला था। उसने मुझे "सावधान" मुद्रामे खडे रहनेको मजबूर किया और मुझे धमकी दी कि तुम्हे पुलिससे ठोकरे लगवाऊँगा और सचमुच मुझे थप्पड लगवाये भी। मजिस्ट्रेटका यह कार्य सर्वथा गैर-कानूनी और बर्बरतापूर्ण था। इसलिए अपने राष्ट्रीय, धार्मिक और व्यक्तिगत सम्मान तथा स्वाभिमानकी रक्षा करनेके लिए मैने, विरोधके तौरपर, मौनव्रत धारण करनेका निश्चय किया है, और तय किया है कि जिस अदालतने सारे कानून-कायदे ताकपर रख दिये हैं उसमे मै अपना मुँह नही खोलूँगा।

(टिप्पणी -- यहाँ बयानमें से अदालतने अभियुक्तकी इच्छाके खिलाफ निम्न-लिखित शब्द निकाल दिये और उसपर हस्ताक्षर और तारीख दिलवा दी: "जैसी कि पजाबमें मेरी बहनोकी बेहुरमती की गई और वह बेहुरमती इन्साफके लिए दरबार-ए-इलाहीमें पेश है", वैसे ही) मै अपनी बेहुरमतीको भी, जो उन बहनोकी बेहुरमतीके मुकाबले कुछ नहीं है, दरबार-ए-इलाहीके इन्साफपर छोडता हूँ। यह सम्भव है कि मेरे साथ जो दुर्व्यवहार किया गया, उसका उद्देश्य जन-ताको भडकाना रहा हो, लेकिन मै अपने अनुभवसे यही कहूँगा कि अब भारतकी जनता काफी समझदार हो गई है। वह हर अत्याचार बरदाश्त कर सकती है, लेकिन महात्मा (गाधी) ने उसके लिए जो अहिंसात्मक कार्यक्रम निर्धारित कर दिया है, उससे वह एक पग भी पीछे नहीं हटेगी।

अपने देशकी आजादीके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करता हुआ --

मै हूँ,
मौनव्रती
महावीर त्यागी

बुलन्दशहर जेल,
४ अक्तूबर, १९२१

जाये, वे चाहते थे, हम अपने पेटके बल रेगे, अपनी नाकसे लकीर खीचे। यह उनके "आतक" के खेलका हिस्सा था। जब हम आमने-सामने डटकर आतकका सामना करते है तो वह ऐसे विलीन हो जाता है मानो कोई परछाई हो। यह हो सकता है कि हम सभी अपने भीतर वैसा साहस विकसित नही कर पाये, लेकिन मेरा निश्चित विश्वास है कि अगर हममे से कुछमे भी ऐसा साहस न जगे कि हम प्रतिकारके लिए अपना हाथ उठाये विना चट्टानकी तरह अडिग रह सके तो इस वर्ष स्वराज्य मिलना असम्भव है। जव अत्याचारीके प्रहारका कोई उत्तर नही मिलता, कोई उस पर उलट कर प्रहार नही करता तो वह स्वय ही उस प्रहारका शिकार होता है—ठीक वैसे ही जैसे कोई हवामे जोरसे अपना हाथ मारे तो उसका हाथ उखड जाता है, और किसीका कुछ नही बिगडता।

एक प्रसंगोचित सवाल

और जैसे हमे उपर्युक्त ढगके ठडे साहसकी जरूरत है, वैसे ही अगर हम सविनय अवज्ञा करने लायक बनना चाहते है तो हमे पूर्ण अनुशासनकी जरूरत है और अपने भीतर स्वेच्छासे आज्ञा पालन करनेका गुण विकसित करना है। सविनय अवज्ञा अहिसाकी सक्रिय अभिव्यक्ति है। सविनय अवज्ञा वलवानोकी अहिसाको कमजोरोकी निष्क्रिय यानी निषेधात्मक अहिसासे अलग करके दिखाती है। और जैसे कमजोरीसे हम स्वराज्य नही पा सकते, वैसे ही निषेधात्मक अहिसा हमे कभी अपने लक्ष्यतक नही पहुँचा सकती।

तो क्या हममे आवश्यक अनुशासन है? जैसा कि एक मित्रने मुझसे पूछा, क्या हमने स्वयं अपने ही नियमो और प्रस्तावोपर चलनेकी भावना विकसित की है? पिछले वारह महीनोमे वैसे हमने वहुत अधिक प्रगति की है, लेकिन निश्चय ही इतनी प्रगति नही की है कि हम निश्चित भावसे सविनय अवज्ञा प्रारम्भ कर सके। जो नियम हम स्वेच्छासे वनाते है और जिनका पालन नही करनेपर हमे अपनी अन्तरात्माके धिक्कारके अलावा और किसी दण्डका भय नही है, उन्हे कर्त्तव्यके वन्धनकी तरह उन नियमोसे भी अधिक वन्धनकारी मानना चाहिए जो हमपर किसीके द्वारा थोप दिये जाते है या जिन्हे भग करनेपर जुर्माना वगैरह देकर हम अपने कर्त्तव्यसे छुट्टी पा जाते है। तो इससे निष्कर्ष यही निकलता है कि अगर हमने स्वय अपने नियमोका पालन करना नही सीखा है, दूसरे शब्दोमे, अगर हमने अपना वचन निभाना नही सीखा है, तो इसका मतलव यह है कि हम उस अवज्ञाके योग्य नही है जिसे किसी भी तरह सविनय अवज्ञा कहा जा सकता है। इसलिए मै सभी काग्रेसियोसे, सभी असहयोगियोसे, और सवसे वढकर अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके सभी सदस्योसे कहता हूँ कि वे, चाहे स्त्री हो या पुरुष, कठिनसे-कठिन आत्म-निरीक्षण करे और जहाँ उनसे चूक हुई हो वहाँ अपनेमे सुधार करके अपने आपको काग्रेस और अपने स्वीकृत धर्मके सच्चे अनुगामी वनाये।

आगामी वैठक

अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी आगामी वैठकमे, जहाँतक उन तीन लक्ष्योका सम्बन्ध है जिन्हे हमे इसी साल प्राप्त करना है, लगभग हमारे भाग्यका निवटारा हो

जायेगा। उसमें कोई ऐसा कार्यक्रम तैयार होना चाहिए जिसे अगर हम स्वीकार कर लें तो फिर अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर भी पूरा करें। मैं आशा करता हूँ कि हर सदस्य अपने निर्वाचन क्षेत्रसे सम्बन्धित सभी बातोंकी पूरी-पूरी जानकारी लेकर आयेगा। और मैं यह आशा करता हूँ कि हर कोई, जहाँतक उस कार्यक्रमके अन्तर्गत उनके अपने दायित्वोंका सम्बन्ध है, अपने मनको सब-कुछ स्वीकार कर लेनेके लिए तैयार करके आयेगा। हर सदस्यको, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, समझना चाहिए कि वह जनताका और विशेष रूपसे अपने निर्वाचकोंका ऐसा सच्चा प्रतिनिधि है जैसे सच्चे प्रतिनिधि होनेका दावा नई कौंसिलोंके सदस्य किसी तरह नहीं कर सकते। अगर उसे जनताके एक प्रतिनिधिकी हैसियतसे दो महीनेमें राष्ट्रीय लक्ष्यकी प्राप्तिमें अपनी उचित भूमिका निभानी है तो उसे अपनी जिम्मेदारीका अर्थ ठीकसे समझ लेना चाहिए।

और भी हस्ताक्षर

कराची-प्रस्ताव सम्बन्धी एक ज्ञापनमें[1] अपने हस्ताक्षर दाखिल करानेके लिए मेरे पास तारों और पत्रोंका ताता लग गया है। ये तार देशबन्धु दास-जैसे बड़ेसे-बड़े लोगोंसे लेकर साधारणसे-साधारण लोगोंतक ने भेजे हैं। मैं सभी नाम नहीं बता रहा हूँ, क्योंकि यह जरूरी नहीं समझता। यह इस बातको प्रकट करनेका एक रास्ता था कि सिर्फ मुसलमान मुल्ले आदि ही इस सरकारकी सेवा करना पापमय नहीं मानते, और कराची-प्रस्तावके हामी सिर्फ अली बन्धु और उनके साथी अभियुक्त ही नहीं हैं। अगर सरकार हस्ताक्षरकर्त्ताओंको गिरफ्तार करे तो बहुत-से दूसरे लोग भी इस सम्मानको प्राप्त करनेके लिए घोषणापत्रपर हस्ताक्षर करनेको तैयार हैं।

कांग्रेसकी वित्तीय स्थिति

अखबारोंमें मैंने तिलक स्वराज्य कोषके लिए उगाही और उस रकमकी व्यवस्थाके बारेमें आलोचना पढ़ी है। बेशक जनताको इस कोषके बारेमें और कांग्रेसके अन्य चन्दोंके सम्बन्धमें जाननेका हक है। मेरे विचारमें, कांग्रेसकी वित्तीय स्थिति आज जितनी सन्तोषजनक कभी नहीं रही। श्री सोपारीवालाको सारे भारतमें कांग्रेसका लेखा-परीक्षक नियुक्त किया गया है। जब श्री सोपारीवाला कांग्रेसकी सभी शाखाओंका निरीक्षण करके स्थितिके बारेमें अपनी रिपोर्ट दे देंगे तब इस विषयपर अधिक निश्चितता-पूर्वक कुछ कहा जा सकेगा। उगाहीके बारेमें १ जुलाईको जो घोषणा की गई थी[2], वह अबतक कायम है। श्री दासका तार पढ़नेमें मैंने एक गलती की थी। मैंने यह पढ़ा था कि पन्द्रह लाख इकट्ठा किया जा चुका है और दस लाख और इकट्ठा हुआ ही समझा जाये। उनसे मिलनेपर मुझे मालूम हुआ कि पन्द्रह लाखका तो निश्चित वादा किया गया है और वे इस संख्याको पचीस लाखतक ले जानेकी आशा करते हैं। जब मैं पिछली बार कलकत्ता गया, उस समयतक श्री दास पन्द्रह

१ देखिए "एक ज्ञापन", ४-१०-१९२१।
२ देखिए खण्ड २०।

लाखकी वह रकम इकट्ठा नही कर पाये थे, जिसका निश्चित वादा किया गया है। लेकिन निश्चय ही उन्हे यह रकम इकट्ठा कर लेनेकी आशा थी और दस लाख अतिरिक्त भी। खैर, यह दस लाख न भी मिले तो भी, एक करोड रुपये इकट्ठा हो जाना तो निश्चित ही है। अन्य प्रान्तोके बारेमे बताई गई राशियाँ कम करके बताई गई थी। अधिकाश पैसा निश्चय ही अब इकट्ठा किया जा चुका है। कुछ देनदारियाँ अभी बाकी है। हर प्रान्तको अपनी वित्तीय स्थितिकी जानकारी है। हर प्रान्त अपना हिसाब-किताब अलग रखता है और उसकी जाँच कोई भी सदस्य कर सकता है। मुझे मालूम है कि कुछ प्रान्तोमे समय-समयपर हिसाब प्रकाशित होता रहता है और स्थानीय लेखा-परीक्षक उसकी जाँच भी करते है। अधिकाश प्रान्तोने अपना-अपना बजट बना लिया है, और वे स्वीकृत बजटके अनुसार ही खर्च करते है। यह सम्भव है कि कुछ प्रान्तोने दूसरे प्रान्तोके मुकाबले अधिक लापरवाहीसे खर्च किया हो, यह भी सम्भव है कि कोई बाहरी आदमी हर प्रान्तमे यह सिद्ध कर दिखाये कि वहाँके किसी-न-किसी-विभागमे फिजलखर्ची हुई है। लेकिन इतना तो मै निश्चित तौरपर जानता हूँ कि अधिकाश प्रान्तोमे प्रान्तीय सगठनोके सदस्योकी जानकारीमे और उनकी स्वीकृतिसे ही खर्च किया गया है और किया जा रहा है। जहाँतक मै जानता हूँ, हर प्रान्तमे अध्यक्षपदपर बडे-बडे ईमानदार लोग है। सर्वश्री जमनालाल बजाज और उमर सोबानीके रूपमे अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीको ऐसे कोपाध्यक्ष प्राप्त है जिन्हे सर्वत्र सम्मानकी दृष्टिसे देखा जाता है और सर्वश्री नेहरू, अन्सारी तथा राजगोपालाचारीके रूपमे उसे ऐसे मन्त्री मिले हुए है जिनसे अधिक योग्य, अध्यवसायी या ईमानदार आदमी मिलने असम्भव है। इसलिए मै अपने व्यस्त पाठकोको, जो काग्रेसकी वित्तीय स्थितिकी इतनी अधिक चिन्ता करते है, बेहिचक यह आश्वासन दे सकता हूँ कि काग्रेसके अधिकारियोने काग्रेसके सभी कोषोकी उगाही और उसकी समुचित व्यवस्थाके लिए वह सब-कुछ कर लिया है जो मनुष्यके वशमे है।

परराष्ट्र नीति

कार्यसमितिने परराष्ट्र-नीतिसे सम्बन्ध रखनेवाले अपने प्रस्तावका जो मसविदा तैयार किया है और जगह-जगह भेजा है, उससे देशमे कुछ सनसनी-सी फैल गई है। कार्यकारिणी समितिको इसपर गम्भीरताके साथ चर्चा करते हुए देखकर कुछ लोगोको आश्चर्य हुआ। इससे यह जाहिर होता है कि उनकी रायमे भारत अभी स्वराज्यके योग्य नही है। इससे पहले भी मैने यह दिखलानेका प्रयत्न किया है कि प्रत्येक व्यक्ति और राष्ट्र हमेशा स्वराज्यके योग्य रहता है, या दूसरे ढगसे यो कहे कि किसी भी राष्ट्रको किसी दूसरे राष्ट्रकी मुहाफिजत या निगहबानीकी जरूरत नही है। आज जबकि हम स्वराज्य स्थापित करनेकी अपनी योजनाओको अजाम दे रहे है, अपनी परराष्ट्र-नीतिपर विचार करना और उसे निर्धारित करना हमारे लिए जरूरी है। निश्चय ही हम इस बातके लिए बाध्य है कि दुनियाको हम अधिकारपूर्वक यह बता दें कि हम उनके साथ कैसा नाता रखना चाहते है। अगर हम अपने पडोसी देशोसे निर्भय है, या अपने-आपको शक्तिशाली महसूस करते हुए भी हम उनके खिलाफ कुछ

नही करना चाहते है तो हमे यह बात उनसे स्पष्ट बता देनी चाहिए। इसी तरह सरकारको यह बता देना भी हमारा कर्त्तव्य है कि हम अपने सिपाहियोको फ्रास और मेसोपोटामियाके मैदाने-जगमे भेजना चाहते है या नही। जिन-जिन बातोका राष्ट्रसे सम्बन्ध है उनके विषयमें अपने विचारोको प्रकट करनेमे हमे डरनेकी कोई जरूरत नही।

लुधियानासे एक सज्जनने एक खासी प्रश्न-माला ही मुझे भेजी है, जिससे यह पता चलता है कि जन-मानस इस प्रश्नपर कितना उद्वेलित है। वे पूछते है

१ भारतकी परराष्ट्र नीतिका सचालन केवल भारतके ही हितको मद्दे-नजर रखकर किया जायेगा या और किसी बातपर ध्यान रखकर?

दूसरी बातोकी अपेक्षा स्वभावत भारतके हितपर प्रधान रूपसे दृष्टि रखी जायेगी।

२ इग्लैंड अथवा दूसरे देशोके लिए लडाई लडनेमें क्या भारतके धन-जनका उपयोग होना चाहिए?

हा, अगर भारत सन्धिकी शर्तोके अनुसार दूसरे देशोकी तरफसे लडाई लडनेको वॅधा हुआ हो।

३ क्या देशका कानून किसी विशेष सम्प्रदाय, सगठन या समाजके हितोके अधीन माना जायेगा?

हरगिज नही। पर, इसी तरह देशका कानून ऐसा हो सकता है, जिसमे हमारे पडोसी मित्रराष्ट्रोको सहायता देनेकी व्यवस्था हो — उसी तरह जिस तरह अगर आज हम स्वतन्त्र होते तो अपनी सामर्थ्य-भर टर्कीको धन-जनसे सहायता देना चाहते।

४ क्या किसी भी सरकारको किसी भी धर्म, जाति या वर्गकी रक्षाका साधन-स्वरूप होना चाहिए?

स्वराज्य-सरकारका नाम तो तभी सार्थक हो सकता है जब वह भारतमे वर्तमान धर्मो और उसमे बसनेवाली जातियोकी रक्षा करे।

५ जब शास्त्र या शरीअत किसी बातका विधान करे और देशकी आव-श्यकता उसके विरुद्ध हो तब निपटारा कैसे होगा?

सवाल बेतुका है। किसी सम्प्रदायकी या उसके धर्मकी जो आवश्यकता है, वही देशकी आवश्यकता होगी।

६ क्या जमींदारो और उनकी रैयतका सम्बन्ध विरोधभावपर ही आधारित होना चाहिए?

मै तो यही आशा करता हूँ कि स्वराज्यके अन्तर्गत उनका सम्बन्ध ऐसा नही होगा, उनके सम्बन्ध अच्छे होगे और एक दूसरेके लिए लाभप्रद।

७ क्या देशभक्तिकी कोई मर्यादा भी होनी चाहिए, और अगर हॉ, तो कैसी?

देशभक्ति सदा ही ईश्वरभक्तिकी तुलनामे गौण है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०–१०–१९२१

१३७. क्या हिन्दू-मुस्लिम एकता बनावटी है?

'मॉडर्न रिव्यू' के ताजे अकमे सम्पादकीय टिप्पणीमे हिन्दू-मुस्लिम एकताकी कुछ टीका की गई है, जिसका उत्तर देना जरूरी है। प्रतिभावान् सम्पादकने उस टिप्पणीका शीर्षक रखा है "बनावटी"। और स्पष्टत वे इस निष्कर्षपर पहुँचे है कि यह एकता सिर्फ नामके लिए ही है। लेकिन मेरे विचारसे यह बनावटी नही है, इतना ही नही बल्कि इसके विपरीत एक ऐसी वास्तविकता है जो बडी तेजीसे स्थायी रूप ग्रहण करती जा रही है। मैंने यग इडिया' के स्तम्भोमे यह स्वीकार किया है कि यह अभी भी एक सुकुमार पौदा है, जिसकी बडी सावधानीसे देख-रेख करनेकी जरूरत है। लेकिन निश्चय ही यह कोई बनावटी या दिखावटी चीज नही है—भले ही इसका कारण सिर्फ यही हो कि दोनो जातियाँ महसूस करती है कि आज वे एक ही विपत्तिसे घिरी हुई है।

दुर्भाग्यवश यह बात आज भी सत्य है कि साम्प्रदायिक भावनाका बडा जबरदस्त बोलवाला है, पारस्परिक अविश्वासकी भावना अब भी वर्तमान है। पुरानी यादे अभी भी जीवित है। यह आज भी सच है कि चुनावोमे उम्मीदवारोकी योग्यताका नही, धर्मका ही ज्यादा खयाल किया जाता है। लेकिन इन तथ्योको स्वीकार करनेका मतलब है—इस एकताके मार्गमे आनेवाली कठिनाइयोको स्वीकार करना। जब दोनो पक्ष उन कठिनाइयोको जानते है और उनके बावजूद ईमानदारीके साथ एकता स्थापित करनेकी कोशिश कर रहे है, तब इस प्रयासको या सीमित सफलताको बनावटी कहना ठीक नही है।

यह कहना ठीक नही है कि खिलाफत सगठनोने गो-हत्याके विरुद्ध जो अपील की, उसकी ओर मुसलमानोने कोई ध्यान नही दिया और उसका उनपर कोई असर नही हुआ। अव्वल तो क्या यह एक बहुत ही उत्साहवर्धक बात नही है कि खिलाफत कार्यकर्त्ता, जो स्वय मुसलमान है, गो-हत्या बन्द करवानेके लिए काम कर रहे है? दूसरे, मैं सम्पादक महोदयको विश्वास दिलाता हूँ कि यह अपील भारतके लगभग सभी हिस्सोमे आश्चर्यजनक रूपसे सफल रही। क्या यह कोई छोटी बात है कि गोरक्षाका पूरा भार मुसलमान कार्यकर्त्ताओने अपने सिर ले लिया है? क्या यह हिन्दुओकी आत्माको आनन्दसे आलोडित कर देनेवाली बात नही थी कि सर्वश्री छोटानी और खत्रीने बम्बईमे अपने सहधर्मियोके हाथोसे सैकडो गौओको बचाया और उन्हे कृतज्ञताके भावमे भरे हिन्दुओको सौंप दिया?

यह बेशक सच है कि मौलाना मुहम्मद अली और मैं दोनो ही इस बातकी सावधानी रखते है कि "एक दूसरेकी दुखती रग न पकडें।" लेकिन पारस्परिक व्यवहारमें हमारी साफगोईका जवाब मुश्किलसे मिलेगा। सम्पादक महोदयने इस एकताको बडी निष्ठुरतापूर्वक "ताशका घर" कहा है, लेकिन हमारे लिए वह ऐसा नही है। हम तो उसे ऐसा ठोस तथ्य मानते है कि उसे अक्षुण्ण बनाये रखनेके लिए मर मिटनेको भी तैयार है। मैं पाठकोको सूचित कर दूं कि हमारी इन तमाम यात्राओके दौरान हमारे

बीच कभी कोई मनमुटाव नहीं हुआ है, कभी एक-दूसरेसे किसी तरहका दुराव-छिपाव करनेकी जरूरत नही पड़ी। लेकिन उक्त सम्पादकीयमे सबसे क्रूर प्रहार निम्नलिखित वाक्यमें किया गया है

> अगर उनके भाषणोके गूढार्थकी ओर ध्यान दें तो यह बात आसानीसे स्पष्ट हो जायेगी कि उनमें से एक मुख्यत दूर देश टर्कीमें खिलाफतकी दुर्दशाकी चिन्तासे परेशान है तो दूसरेका मुख्य लक्ष्य यहां भारतमें स्वराज्यकी स्थापना है।

मेरा दावा है कि हम दोनोके लिए खिलाफतका सवाल मुख्य सवाल है — मौलाना मुहम्मद अलीके लिए इसलिए कि यह उनका धर्म है, और मेरे लिए इस कारणसे कि खिलाफतके लिए अपना जीवन उत्सर्ग करके मै मुसलमानोंके छुरेसे गौओकी रक्षा सुनिश्चित करूँगा, जो मेरा धर्म है। हम दोनोको स्वराज्य भी समान रूपसे प्यारा है, क्योंकि हम अपने-अपने धर्मकी रक्षा स्वराज्य द्वारा ही कर सकते हैं। यह शायद एक निम्न कोटिका विचार लगे, लेकिन इसमे कही कोई दुराव-छिपाव नही है। मेरे लेखे भारतकी शक्तिके सहारे खिलाफतकी प्रतिष्ठाको फिरसे कायम कर देना स्वराज्यकी प्राप्ति ही है। जैसे धर्मका आधार प्रेम है, वैसे ही हमारी मैत्रीका आधार भी स्नेह ही है। प्रेमके अधिकारके बलपर मैं मुसलमानोकी मैत्री पाना चाहता हूँ। अगर एक समुदाय भी प्रेमके मार्गपर आग्रहपूर्वक डटा रहा तो एकता हमारे राष्ट्रीय जीवनमे एक निश्चित तथ्य बन जायेगी। मौलाना मुहम्मद अलीके बारेमे यह कहना अन्याय है कि वे ऐसी चुस्त उर्दू बोलते हैं जो अधिकाश बगाली मुसलमानोंकी समझमे नही आती। मैं जानता हूँ कि वे अपने उर्दू भाषणोको यथासम्भव अधिकसे-अधिक सरल रखनेकी कोशिश करते रहे हैं।

दुर्भाग्यसे यह सच है कि हमारे बीच अभी भी ऐसे हिन्दू और मुसलमान हैं जो एक-दूसरेके भयके कारण विदेशी शासनका रहना आवश्यक मानते हैं। और स्वराज्य-प्राप्तिमें जो विलम्ब हो रहा है, उसका यह कोई छोटा कारण नही है। अभीतक हम इस बातको स्पष्ट रूपसे नही समझ पाये हैं कि दोनो समुदायोके आपसमे खुलकर लड़नेकी सम्भावना वर्तमान विदेशी शासनकी अपेक्षा एक छोटी बुराई है। और अगर हम महज ब्रिटिश सरकारके बीचमे खडे रहनेके कारण ही एक-दूसरेसे नही लड रहे हैं तो हमे जितनी जल्दी खुलकर लड लेनेको मुक्त कर दिया जाये, दोनों ही समुदायोंके पौरुषके लिए धर्मके लिए, और देशके लिए उतना ही अच्छा होगा। अगर हम अपना आपा खोये बिना आपसमे लडे तो यह कोई नई बात नही होगी। इंग्लैंडमे अंग्रेज लोग इक्कीस वर्षोतक लगातार आपसमें लडते रहे और तभी वे झगडेसे छुट्टी पाकर शातिपूर्ण कार्योंके लिए प्रवृत्त हुए। फ्रासीसी लोग आपसमे ऐसी बर्बरता और नृशसतासे लडे, जिसे हालका कोई भी युद्ध मात नही कर सकता। और अमेरिकावालोंने भी अपना सघ कायम करनेसे पहले यही सब किया। हमे आपसमे लडाई होनेके भयसे पुंसत्व-हीनतासे नहीं चिपके रहना चाहिए। 'मॉडर्न रिव्यू' के योग्य टिप्पणीकारको भी एकतासे उतना ही प्रेम है जितना कि हममें से किसीको, और वे कहते हैं कि आवश्यकता "आमूल-चूल परिवर्तनकी, सब-कुछको बदल देने और नये सिरेसे ही निर्माण करनेकी"

है। लेकिन उनका खोजनेकी जिम्मेदारी वे पाठकोंपर ही छोड़ देते है। क्या अच्छा होता, अगर उन्होने कुछ ठोस सुझाव दिये होते। स्पष्टतः, वे चाहेंगे कि भले ही यह सिर्फ शुरुआतके तौरपर ही हो, किन्तु हिन्दू और मुसलमान आपसमें शादी-विवाह और खान-पानका सम्बन्ध स्थापित करे। यदि यही आमूल-चूल परिवर्तन है जो वे चाहते है, और यदि यह स्वराज्य-प्राप्तिकी एक पूर्व-शर्त है तो मुझे लगता है कि हमें उसके लिए कमसे-कम सौ सालतक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। यह तो हिन्दुओंसे अपना धर्म छोड़ देनेको कहनेके बराबर है। मैं यह नहीं कहता कि ऐसा करना गलत है। लेकिन यह अवश्य कहता हूं कि व्यावहारिक राजनीतिकी सीमामें समानेवाला सुधार नही है। और अगर ऐसा परिवर्तन कभी आया भी तो उसका मतलब हिन्दू-मुसलमान एकता नही होगा। और वर्तमान आन्दोलनका उद्देश्य है कि निष्ठावान मुसलमान अपना धर्म ज्योंका-त्यों कायम रखे और निष्ठावान हिन्दू अपना धर्म। और तब भी दोनोंके बीच एकता रहे। इसीलिए मैंने सभाओंमें उपस्थित लोगोंसे अक्सर कहा है कि अली-बन्धु और मैं, सभी हिन्दुओ और मुसलमानोंके लिए हिन्दू-मुस्लिम एकताकी एक मिसाल है। हम दोनो अपने-अपने धर्मोमे प्रबल निष्ठा रखनेका दावा करते है। दोनों भाइयोंका मैं बहुत अधिक आदर करता हूँ, फिर भी मैं उनके किसी भी लड़केसे अपनी बेटीकी शादी नही कर सकता, और मैं जानता हूँ वे भी कुछ ऐसा सोचकर कि हिन्दू होनेके बावजूद मैंने अपनेमे उतना परिवर्तन कर लिया है कि उनकी लड़कीका हाथ अपने लडकेके हाथमे दिलानेको लालायित हूँ, अपनी लडकी मेरे लड़केको ब्याह नही देंगे। मैं उनके सामिष भोजनमे शामिल नही होता, और वे मेरी इस कट्टरताका — अगर मेरे इस संयमको कट्टरता कहा जा सके तो — बड़ी सावधानीसे खयाल रखते है। और फिर भी मैं नही जानता कि किन्ही तीन व्यक्तियोंके हृदय उस तरह एकात्म हैं जिस तरह अली-बन्धुओंका और मेरा हृदय है। और मैं पाठकोंको भरोसा दिलाता हूँ कि यह एकता बनावटी नही, बल्कि ऐसी स्थायी मैत्री है जो एक दूसरेके विचारो और आचार-व्यवहारके प्रति विशिष्ट आदरभाव और सहिष्णुतापर आधारित है। और मुझे ऐसा कोई भय नही है कि जब अंग्रेजोका सुरक्षादायी हाथ मेरे ऊपरसे हट जायेगा तो अली-बन्धु या उनके मित्र मेरी स्वतन्त्रतापर हाथ डालेंगे या मेरे धर्मपर आघात करेगे। और मेरी इस निर्भयताका प्रथम आधार तो ईश्वर और उसका यह आश्वासन है कि मेरी सृष्टिका जो जीव मुझसे डरकर चलनेकी कोशिश करेगा वह सर्वदा सुरक्षित रहेगा, और दूसरा आधार है अली-बन्धुओ और उनके मित्रोंका सच्चा और खरा आचरण, हालाँकि मैं जानता हूँ कि अली-बन्धुओमे से कोई भी एक मुझ-जैसे बारह आदमियोके लिए शारीरिक दृष्टिसे भारी पडेगा। और इस विशेष उदाहरणको मैंने सामान्य रूपसे सारे भारतपर लागू किया है और दिखाया है कि हिन्दू-मुस्लिम एकता तभी सम्भव है जब हममे पारस्परिक सहिष्णुता हो और अपने आपमे, और इसलिए सामान्य रूपसे मानव-प्रकृतिकी नेकीमे, विश्वास हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २०-१०-१९२१

१३८. मोपला उपद्रवका मतलब

स्कॉटलैंडके एक सज्जनने इस बातपर मेरी खबर ली है कि मैंने इन स्तम्भोमे मोपला विद्रोहपर काफी नही लिखा। वे कहते है, इसका परिणाम यह हुआ कि ग्रेट ब्रिटेनमे जो लोग भारतीय मामलोमे दिलचस्पी रखते है वे यह मान बैठे है कि भारतमे एक इस्लामी सल्तनत कायम हो गई है। ऐसा नही कि यह फटकार सर्वथा अकारण है, किन्तु साथ ही यह बात भी नही है कि मैंने इस मामलेमे अपने कर्त्तव्यसे जी चुराया है। बात इतनी ही है कि मैंने यहाँ अपने आपको असहाय पाया है। मै कालीकट जाकर झगडेकी तहतक पहुँचना चाहता था, और मेरा विश्वास था कि मै ऐसा कर सकता था। लेकिन सरकारकी इच्छा कुछ और ही थी। मुझे दु खके साथ यह मानना पडता है कि जो लोग मौकेपर मौजूद है वे इस उपद्रवको समाप्त नही करना चाहते है। इतना तो निश्चित है कि वे असहयोगियोको इस फसादको शान्तिपूर्ण ढगसे समाप्त करनेका श्रेय नही देना चाहते। वे एक बार फिर दिखा देना चाहते है कि भारतमे अगर कोई शान्ति कायम रख सकता है तो ब्रिटिश सैनिक ही, और तब मै विरोध करनेके लिए सरकारके निर्देशोंकी अवज्ञा करके उपद्रवग्रस्त क्षेत्रोमे नही जा पाया।

मौकेपर मौजूद लोगोके बारेमे ऐसा कोई खयाल रखना मेरे लिए सुखकर नही। मेरा यह स्वभाव नही कि मै मनुष्यको दुराचारी मानूं। लेकिन मेरे सामने नौकरशाहीके दुराचारके इतने प्रमाण उपस्थित है कि मै मानता हूँ वह अपना लक्ष्य सिद्ध करनेके लिए कुछ भी कर सकती है। मै शब्दश सच कह रहा हूँ कि चम्पारन जानेसे पहले चम्पारनके किसानोके खिलाफ की गई बर्बरताकी जो कहानियाँ कही जाती थी उनपर मुझे जरा भी विश्वास नही होता था। लेकिन जब मै वहाँ गया तो मैंने स्थितिको, जितना बताया गया था उससे भी बदतर पाया। मै यह कतई मान नही सका कि बिलकुल निर्दोष लोगोको उस तरह बिना चेतावनी दिये नृशसतापूर्वक मौतके घाट उतार दिया जा सकता था, — जैसा कि जलियाँवाला बागमे किया गया। मै नही मान सका कि आदमीको पेटके बल रेगनेको मजबूर किया जा सकता था। लेकिन पजाब पहुँचकर मैंने आतकित मनसे देखा कि जो-कुछ मुझे बताया गया था, उससे भी बुरी बाते हुई थी। और यह सब कहनेको तो शान्ति और सुव्यवस्थाके नामपर किया गया था, लेकिन वास्तवमे उसका उद्देश्य था झूठी प्रतिष्ठा, एक झूठी प्रणाली और एक अस्वाभाविक व्यापार-व्यवसायको कायम रखना। यह सत्य है कि एक शक्तिशाली लेफ्टिनेट गवर्नरने चम्पारनमे प्रबल विरोधके बावजूद लोगोको न्याय दिलाया। लेकिन, यह एक अपवाद था जो कुछ असाधारण कारणोसे सम्भव हो पाया था। और इसलिए मै समझता हूँ कि यह मोपला उपद्रव उस प्रणालीके लिए वरदान-स्वरूप आया है जो अपनी ही विशालताके भारसे टूटती जा रही है।

मोपला उपद्रव हिन्दुओं और मुसलमानोंके लिए एक परीक्षा है। हिन्दुओंके मैत्रीभावपर जो यह भार आ पड़ा है उसको क्या वह झेल पायेगा? क्या मुसलमानों-का अन्तरतल मोपलोंके इस आचरणकी ताईद करता है? सच क्या है, यह तो समय ही बतायेगा। मजबूर होकर दार्शनिक भावसे इस हानिको मौखिक रूपसे स्वीकार-भर कर लेना हिन्दुओंकी मैत्रीकी सच्ची परीक्षा नहीं है। हिन्दुओंमें इतना साहस होना चाहिए, इतनी आस्था होनी चाहिए कि वे समझें कि ऐसे धर्मान्धतापूर्ण विस्फोटोंके बावजूद वे अपने धर्मकी रक्षा कर सकते हैं। और मुसलमानोंको तो स्वभावतः मोपलोंके ऐसे आचरणपर, इस तरह जबर्दस्ती लोगोंसे धर्म-परिवर्तन कराने और लूटपाट करने-पर लज्जा और अपमानका अनुभव करना ही चाहिए। उन्हें इतने शान्तिपूर्वक और कारगर ढंगसे काम करना चाहिए कि — धर्मान्धसे धर्मान्ध मुसलमानोंके लिए भी ऐसे काम करना असम्भव हो जाये। मेरा अपना विश्वास तो यह है कि हिन्दुओंने आम तौरपर मोपलोंके इस पागलपनको बहुत शान्त और निरुद्विग्न भावसे सहन किया है और सुसंस्कृत मुसलमानोंको पैगम्बरके उपदेशोंका मोपलों द्वारा इस तरह अनर्थ करनेपर सचमुच बड़ा दुःख है।

मोपला विद्रोहसे एक और भी सबक मिलता है — यह कि हर व्यक्तिको आत्म-रक्षाका कौशल सिखाना चाहिए। और इस दृष्टिसे हमारे शरीरको प्रतिकार करनेके लिए तैयार करनेकी बजाय हमारी मानसिक स्थितिको उसके उपयुक्त बनाना चाहिए। और अभीतक हमे जो मानसिक प्रशिक्षण दिया गया है, वह है ऐसी स्थितिमे अपने-आपको असहाय महसूस करना। बहादुरी शरीरका नहीं, आत्माका गुण है। मैने बहुत ही हट्टे-कट्टे और बलिष्ठ लोगोको भी कायर पाया है और बहुत ही क्षीणकाय लोगोको भी अद्भुत साहसी पाया है। मैने दीर्घकाय और बलिष्ठ शरीरवाले कायर पुरुषोको एक अंग्रेज छोकरेके सामने कांपते देखा है, और भरी हुई पिस्तौल सामने तनी पाकर दुम दबाकर भागते भी देखा है। मैने एमिली हॉबहाउसको, पक्षाघातसे पीडित होनेके बावजूद, प्रबलतम साहसका परिचय देते देखा है। उस महिलाने अकेले ही बहादुर बोअर जनरलो और बोअर औरतोके टूटते हुए साहसको कायम रखा। हममे से शारीरिक रूपसे दुर्बलसे-दुर्बल लोगोको भी खतरोका सामना करना और यह दिखा देना सिखाया जाना चाहिए कि हम किस धातुके बने हुए है। दोनोमे से कौन-सी चीज अधिक घृणित थी, मोपला भाइयोकी अज्ञानजनित धर्मान्धता, या उन हिन्दू भाइयोकी कायरता जिन्होने असहाय होकर कलमा पढा, या अपनी शिखा काटने दी अथवा अपना वस्त्र बदलने दिया? कोई मेरी बातोका गलत अर्थ न लगाये। मै चाहता हूँ कि हिन्दू-मुसलमान दोनो ऐसे उद्वेगहीन साहसका विकास करे जिससे वे किसीको मारे बिना खुद हँसते-हँसते मर सके। लेकिन अगर किसीमे ऐसा साहस न हो तो मै चाहता हूँ कि वह खतरेका सामना होनेपर कायरतापूर्वक भाग जानेके बजाय मारने और मरनेकी कला सीखे। कारण, जो खतरेका सामना होनेपर भाग खडा होता है वह मानसिक रूपसे हिंसा करता है। वह भाग खडा होता है इसलिए कि उसमे अपने वैरीको मारते हुए खुद मर मिटनेका साहस नही है।

मोपला उपद्रवसे हमे एक और भी सबक मिलता है। ऐसा नही हो सकता कि हम अपने देशभाइयोके किसी अशको बिलकुल अन्धकारमे छोड दे और फिर आशा करे कि उनकी यह अवस्था खुद हमारे ही सिर विपत्ति बनकर नही टूटेगी। हमारे अग्रेज "मालिको" को इस बातमे कोई दिलचस्पी नही थी कि मोपला लोग भी ढगके नागरिक बने और सहिष्णुताका गुण सीखे और इस्लामके सत्यको ग्रहण करे। लेकिन हम भी सदियोसे अपने इन अज्ञान देशभाइयोकी उपेक्षा ही करते आये है। हमने प्यारकी इस पुकारको नही सुना और यह प्रयत्न नही किया कि कही कोई भी ममताकी मानवीय भावनासे अनभिज्ञ या अन्न और वस्त्रके अभावसे पीडित न रह जाये। अगर हम समयपर नही जगते तो हम देखेगे कि अज्ञानके अन्धकारमे डूबे सभी वर्ग ऐसे ही भयकर कृत्य कर रहे है। वर्तमान जागरण सभी वर्गोको प्रभावित कर रहा है। अगर हम अपने कियेका प्रायश्चित्त नही करते और अछूतो और तथाकथित अर्ध जगली कहे जानेवाले कबीलोके प्रति जल्दी ही न्याय नही करते तो वे, हमने उनके प्रति जो अन्याय किया है, उसकी कहानी दुनियाको सुनायेगे।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २०-१०-१९२१

१३९. पाठकोसे

इस अकमे अन्यत्र मै यह कह चुका हूँ कि अब मै जहाँतक मुझसे बन सकेगा यह वर्ष गुजरातमे ही बिताना चाहता हूँ और सो भी आश्रममें।

ऐसा करनेका उद्देश्य यही है कि मै यथासम्भव एकान्तका सेवन कर सकूं, सोच-विचार कर सकूं, लिख सकूं और जिससे मिलना चाहिए उससे मिल सकूं। यदि मुझे देखनेके लिए सारा दिन ही लोग आते रहे तो मै यह काम नही कर सकता। लोगोका मेरे प्रति ऐसा प्रेमभाव है कि वे आश्रममे मुझसे मिलनेके लिए आते ही रहते है। यदि ऐसा हो तो मुझे जितना काम करना है उतना नही हो सकता।

इसलिए 'नवजीवन'के उन पाठकोसे, जो आश्रममें प्राय आते रहते है, मेरी प्रार्थना है कि महज मुझे देखनेके खातिर वे न आये। इसकी अपेक्षा अधिक अच्छी बात तो यह है कि वे मुझे देखने आनेके लिए जितना समय नष्ट करते है उतना वे पीजने, कातने और बुननेमे लगाये। जिन्हे मुझसे कुछ भी पूछना है वे अगर लिखकर पूछेंगे तो भी उन्हे जवाब मिलेगा।

जिनका आये बिना चल ही नही सकता वे यदि पूछकर आयें तो उनका समय बचेगा, अथवा वे शामके तीन बजेसे लेकर चार बजेतक आ सकते है, सवेरे तो, कोई मुझसे खास तौरपर पूछे बिना न आये, क्योकि सवेरेका समय मै लिखने-पढने आदिमे बिताता हूँ।

जब हम, जो जनताकी सेवा करना चाहते है, जनताके हितकी दृष्टिसे अपना और दूसरोका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करेगे तभी इस बाकी समयमे अपना कार्य पूरा

कर सकेंगे। ऐसा करनेके लिए मैं 'नवजीवन'के पाठकोंसे तो सदा ही पूरी-पूरी उम्मीद रखता ही हूँ और मैं मानता हूँ कि यदि 'नवजीवन'के सभी पाठक 'नवजीवन'में दी गई सलाहका पूरा उपयोग करें और उसे अमलमें लायें तो भी हम मनचाहे ध्येय-को प्राप्त कर सकते हैं। सत्य, शौर्य और परिश्रमकी अत्यन्त आवश्यकता है। यदि हम इस वर्ष स्वराज्य प्राप्त न कर सकें तो उसका एकमात्र कारण हमारा आलस्य ही होगा।

उद्योगी स्त्री-पुरुषोंको इस बातका विचार करना चाहिए कि उनका समय कैसे व्यतीत होता है और उसका दैनिक हिसाब रखना चाहिए। उन्हें एक क्षण भी व्यर्थ नही जाने देना चाहिए, व्यर्थकी बातोंमें नही खोना चाहिए और अपनी आजीविका कमाते हुए भी देशके हितका ध्यान रखना चाहिए। इतना ही नहीं, बाकीका समय सिर्फ देशकार्यमे ही लगाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २०–१०–१९२१

१४०. टिप्पणियाँ

सूरतका अनुभव

मै एक दिनके लिए सूरत हो आया हूँ। वहा मै मात्र अनुभव प्राप्त करनेके लिए गया था।

नवसारी, कठोड आदि स्थानोंसे भी ऐसी ही माग की गई थी, लेकिन मै उसे स्वीकार नही कर सका। यदि गुजरातमे भी मै प्रत्येक स्थानपर जाता-आता रहूँ तो जिस उद्देश्यको दृष्टिमे रखकर मैने फिलहाल भ्रमण बन्द कर देनेका इरादा किया है वह उद्देश्य पूरा नही होगा। मेरे लिए तो यही उचित है कि मै आश्रममे बैठे-बैठे ही जो लिख पाऊँ सो लिखूँ और जो सुझाव दे सकूँ, सो दूँ।

मै बहुत बोल चुका हूँ। यदि मेरी उपस्थितिसे किसी स्थानके लोगोको अधिक बल मिलता है तो मेरे खयालसे उन्हे अब उस बलके बिना भी काम चला लेना चाहिए। यह ज्यादा जरूरी है कि हम लोगोने अभी जितना बल प्राप्त कर लिया है हम उसीमे इजाफा करे और उसका जितना उपयोग किया जा सकता है, करे, ऐसा करनेपर ही हम इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करनेके अपने निश्चयको पूरा कर सकेगे। देशमे जो जागृति आई है उसके ठीक-ठीक उपयोग होते रहनेमे ही स्वराज्य निहित है, ऐसी मेरी मान्यता है। इसलिए लिख-पढकर दी गई मेरी सलाह और कातनेके द्वारा दिये गये मेरे उदाहरणके रूपमे ही मेरी सेवाओका अधिक उपयोग अब जनता कर सकेगी।

मै सूरत गया था, सो मात्र जाँच करनेके उद्देश्यसे ही गया था। सूरत किस हदतक स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए तैयार हो गया है सो देखनेके लिए मैने सूरतमे

श्वेत टोपियोंके विशाल समुद्रको देखा और देखा कि वहाँ खादीका ठीक-ठीक उपयोग किया जाता है। लेकिन यह देखकर मैं मुग्ध नहीं हुआ। सूरतके स्त्रीवर्गमें खादीका प्रचार बहुत कम है। वे सब अच्छी-खासी संख्यामें सभामें आईं, तथापि उनके शरीरों-पर मुझे विदेशी कपड़ेकी साड़ियाँ दिखाई दीं। फिर भी सूरत जिलेमें काफी अच्छा काम हुआ है। मुझे लगता है कि इस समय प्रतिस्पर्धा सूरत और खेड़ाके बीच है। इतना होनेपर भी मेरा विचार है कि सविनय अवज्ञा करने योग्य शक्ति सूरतके लोगोंमें नहीं आई है। सूरतके समस्त कार्यकर्त्ता पींजने, कातने और बुननेमें प्रवीण नहीं हैं। सूरतमें हजारों व्यक्तियोंको अभी इस बातका विश्वास नहीं हुआ है कि यदि वे जेल जायेंगे तो उनके पीछे उनके परिवारके लोग सार्वजनिक सहायताके बिना पींजने और कातनेके कामके द्वारा अपनी आजीविका प्राप्त कर सकेंगे।

लेकिन मैं यह मानता हूँ कि सूरत एक मासमें ऐसी तैयारी कर सकता है। सूरत जिलेमें लोग स्वदेशीकी कीमत समझ गये हैं, अब केवल स्वदेशीको सुदृढ़ आधार-पर प्रतिष्ठित करनेकी आवश्यकता है। इसके लिए, मैं मानता हूँ कि सूरत जिलेके कार्यकर्त्ताओंको उसमें जुट जाना चाहिए। इस समय जो स्कूल चालू हैं उनमें कातने-बुननेको प्रमुखता दी जानी चाहिए। शिक्षकोंको भी इसी काममें जुट जाना चाहिए। सूतका प्रकार, नम्बर, मजबूती आदि पहचाननेवाले व्यक्ति एक नहीं अनेक मिलने चाहिए। जबतक हम खादीमय नहीं बनते, हमारी स्त्रियोंमें खादी पहननेका चाव पैदा नहीं हो जाता तबतक हम स्वराज्य प्राप्त करने योग्य नहीं बनते। क्योंकि तबतक भुखमरीका उपचार हमारे हाथ नहीं लगेगा, तबतक हम कंगालकी सेवा करने योग्य नहीं बनेंगे, और जबतक हम इस योग्य नहीं बन पाते तबतक हम सविनय अवज्ञा करनेके योग्य नहीं हैं।

सूरतमें एक सवाल पूछा गया था "यदि स्त्री-पुरुष खादीका अधिक इस्तेमाल न करें, कातें नहीं तो क्या करना चाहिए?" इसका उत्तर सीधा है। क्या हम यह सवाल पूछनेवाले स्वयं भी कातते और बुनते हैं? यदि दूसरोंको समझाने-बुझानेमें कोई लाभ दिखाई न दे तो क्या हमें अपना प्रत्येक क्षण कातने, बुनने और पींजनेके कामको शास्त्रका रूप देने और उसमें कुशलता हासिल करनेमें नहीं लगाना चाहिए। हम यह मानकर क्यों न चलें कि अपनी परिपूर्णताके द्वारा हम दूसरोंको परिपूर्ण बना सकेंगे? बाड़ बाँधनेसे ही बेलें चढ़ती हैं। प्रत्येक जिलेमें हमें शुद्ध रूपसे पींजने, कातने और बुननेवाले सौ व्यक्ति भी नहीं मिलते, तब फिर स्वदेशी आन्दोलन जोरोंपर नहीं है अथवा लोगोंको खादीमें दिलचस्पी नहीं है — यह कहना निरर्थक है। सौके बाद हम लाख पैदा कर सकेंगे। लेकिन यदि एक भी न हो तो? इसलिए सूरत जिलेके कार्यकर्त्ताओंको मेरी तो यह सलाह है कि वे स्वयं स्वदेशीमें पूर्णता प्राप्त करें और दूसरोंको भी इसमें परिपूर्ण बनायें, इतना तो वे इसी मासमें कर सकेंगे। इससे स्वदेशी खुद-ब-खुद प्रत्येक स्थानपर व्यापक हो जायेगी। और यदि प्रयत्न करनेपर भी हमें सफलता नहीं मिलती तो हम जानेंगे कि हम अभी योग्य नहीं बने हैं। हम जब कभी करें, काम तो हमें यही करना होगा।

रांदेरमें असहयोग

मै जब सूरतकी जांच करने गया था तब मै रांदेर भी हो आया था। मै रांदेर इससे पहले भी हो आया हूँ और उस समय मैने रांदेरके आलस्यके सम्बन्धमें निराशा अभिव्यक्त की थी।[1] वह रांदेर अब बदल गया है। अब रांदेरमें सुन्दर राष्ट्रीय स्कूल है। रांदेरमे शराबकी दुकाने बन्द हो गई है। और जहां देखो वही पुरुषोके शरीरपर खादीके वस्त्र दिखाई देते है। रांदेरमे कोई विदेशी कपड़ा बिल्कुल नही बेच सकता, यदि ऐसा कहूं तो ठीक होगा। रांदेरमे मुसलमानोंकी आबादी बहुत ज्यादा है। कितने ही करोड़पति मुसलमान यहां रहते है। उन्होने लगभग ६०,००० रुपयेका विदेशी कपड़ा स्मर्ना भेज दिया है। धनिक मुसलमानोंके लड़के शराबकी दुकानोपर धरना देते थे। इस तरह रांदेरने असहयोग आन्दोलनमें हर तरहसे प्रगति की है और यह समस्त प्रगति दो मासमें ही हुई, यदि ऐसा कहूं तो अनुचित न होगा। मौलाना शौकत अलीके यहां जानेके बाद उत्साहकी यह लहर आई। रांदेरके लोगोने अगोरा कोषमें २५,००० रुपये दिये है, किन्तु यह बहुत छोटी रकम है। रांदेरकी शक्ति लाखो रुपये देनेकी है। और इसे लेकर मौलाना आजाद सोबानी साहबने उन्हे खूब फटकारा भी है। मुझे उम्मीद है कि रांदेरके लोगोमें देरसे जागृति आई है तथापि वे हर बातमे सूरत जिलेके लोगोसे आगे बढ़ जायेगे। प्रथम स्थान पानेके लिए रांदेरके प्रत्येक युवक और युवतीके हाथमे चरखा अथवा करघा होना ही चाहिए। जो धनवान हो वह यह श्रम न करे, ऐसा विचार तो हमारे मनमे आना ही नही चाहिए। इस विचारसे हम आलसी और दीन हो गये है। धनवानोको भी लोकहितके लिए उद्यम करना चाहिए। औरंगजेबको कोई काम करनेकी जरूरत नही थी, तथापि वह टोपी सीता था। हम तो दरिद्र हो चुके है, इसलिए श्रम करना हमारा दोहरा फर्ज है। विदेशी वस्त्र अपनाकर हम गुलाम बन गये, अतएव स्वदेशीकी खातिर पीजने, कातने और बुननेमें श्रम करना हमारा दोहरा कर्त्तव्य है।

मिथ्या भ्रम

सूरतमे एक भाईने मुझे दस रुपये दिये, सो यह कह कर कि ये रुपये मन्नतके रुपये है। मेरे नामकी मन्नत मानकर कोई व्यक्ति स्वस्थ हो गया था। ये रुपये सार्वजनिक उपयोगके लिए थे, इसलिए मैने वे रुपये ले तो लिये लेकिन जिन्होने मुझे ये रुपये दिये उन्हे मैने फिर कभी ऐसे पैसे न लानेकी बात कही। हमारा देश बहुतसे वहमोके तले कुचला हुआ पडा है। इनमे मेरे नामसे एक और जुड जाये यह बात मेरे लिए बहुत दु खदायक होगी। वहममे इजाफा करके हम राष्ट्रकी उन्नति नही कर सकते। मन्नत माननेका रिवाज बहुत ही पुराना है। उसमे श्रद्धाका तत्त्व निहित है, इसलिए यह ठीक भले ही जान पडे, लेकिन यह रिवाज प्रोत्साहन देने लायक नही है—ऐसा मेरा विश्वास है। इसलिए जहां-जहां लोग मेरे नामसे मन्नत मानते हो, वहाँ-वहाँ उन्हे ऐसा करनेसे रोका जाना चाहिए। मन्नत ऐसी वस्तु है कि उसे

१. देखिए खण्ड २०, पृष्ठ ३५।

चाहे जिसके नामसे प्रचलित किया जा सकता है। "मैं ठीक हो जाऊँगा तो फलाँको भेंट चढाऊँगा," ऐसी मन्नत माननेवाला कोई तो ठीक होगा ही और फिर वह बेचारा भेंट चढायेगा ही। लेकिन ठीक होनेके साथ मन्नतका क्या सम्बन्ध हो सकता है? मन्नत माननेपर कोई स्वस्थ न हो और मुझसे कुछ जुर्माना ले सके तब तो ठीक होनेपर पैसा देनेकी बात मेरी समझमे आ सकती है और यदि ऐसा रिवाज प्रचलित हो जाये तो मैं दण्ड भरते-भरते ही अधमरा हो जाऊँ और लोकसेवाके कामका ही न रहूँ। लेकिन, चूंकि, जो लोग ठीक नही होगे मैं उनको दण्ड भरनेके लिए तैयार नही हूँ, इसलिए ठीक होनेवाले भी मुझे भेंट न दे — ऐसी मेरी कामना है। मुझे तो यही उचित लगता है कि सार्वजनिक सभाके लिए भी इस तरह मिलनेवाले पैसोको हमे अस्वीकार कर देना चाहिए।

जो बात मन्नतके सम्बन्धमे लागू होती है वही पूजाके सम्बन्धमे भी होती है। चरणस्पर्श, साष्टाग नमस्कार, आरती आदि क्रियाएँ भी त्याज्य है। लाखो व्यक्ति आरती उतारने और चरणस्पर्श करनेमे जुट जाये तो राष्ट्रका कितना समय नष्ट हो जाये? मैं तो दर्शन करनेवालोसे त्रस्त हो जाता हूँ। यदि सब "दर्शन" करनेवाले साष्टाग प्रणाम करने लगें तब तो मैं पागल ही हो जाऊँ अथवा फिर मुझे नमस्कार करनेवालेकी ओर न देखनेका अभद्रतापूर्ण व्यवहार करना चाहिए। इसलिए मेरी सलाह है कि हमे सीधे खडे रहकर दूरसे नमस्कार अथवा सलाम करनेके अतिरिक्त अन्य विनय बरतनेकी आदत ही छोड देनी चाहिए। इससे जनताको कोई नुकसान न होगा। एक दूसरेके प्रति मान तो केवल मनकी भावना है। हम प्रसग आनेपर ही आदरकी भावनाको अभिव्यक्ति दे सकते है। जहाँतक मेरा सवाल है मैं तो, यदि मैं तनिक भी योग्य होऊँ, एक ही पूजा चाहता हूँ, और वह यह है कि मैं जो-कुछ कहता हूँ, उसमें से जो भी बात जनताको पसन्द आये वह उसे ग्रहण करे और इस तरह स्वराज्य-को प्राप्त करे। यही सच्ची और करने लायक पूजा है। दूसरी खोटी हो सकती है इसलिए त्याज्य है।

राष्ट्रीय स्कूलोकी राष्ट्रीयता

राष्ट्रीय शालाओकी राष्ट्रीयता किस बातमे है, इस विषयपर कुछ समय पहले एक सज्जनने मुझसे कुछ सवाल किये थे। उनमे से जानने योग्य प्रश्नोके उत्तर नीचे दिये जाते है

सवाल — जो लडके राष्ट्रीय शिक्षा-मन्दिरोसे शिक्षा प्राप्त कर चुकेगे उन्हे अपने जीवनके लिए किसी व्यवसायकी खोजसे छुट्टी मिलेगी?

जवाब — हाँ, मिलनी तो चाहिए। जिस विद्यासे इतनी भी मुक्ति नही मिलती वह विद्या ही नही है। विद्या उसीका नाम है जिससे त्रिविध — आर्थिक, सामाजिक और आध्यात्मिक — मुक्ति मिलती है। जिसे पहले प्रकारकी मुक्ति नही मिली उसे दूसरे प्रकारकी नही मिल सकती।

राष्ट्रीय सस्थाके सेवकके लिए क्या स्वार्थ-त्याग धर्म न होना चाहिए?

अवश्य होना चाहिए। मेरा तो यह विश्वास है कि जो स्वार्थ-त्याग नही कर सकता वह राष्ट्रका सेवक नही हो सकता।

क्या स्नातकको अपना जीवन देशसेवाके लिए समर्पित न करना चाहिए?

यह नियम सबके लिए लागू नहीं होता। जब राष्ट्रका कारोबार स्वाभाविक रीतिसे होता है तब जो लोग प्रामाणिकतासे अपना निर्वाह [illegible] करते हैं, वे सब सेवा ही करते हैं।

हम यह मानते हैं कि सरकारी स्कूलोंमें दिये जानेवाले ज्ञानके साथ चरित्रका सामंजस्य नहीं होता, क्या इसका अर्थ यह नहीं कि राष्ट्रीय पाठशालाओंमें चारित्र्यको प्रधानपद मिलना चाहिए?

हाँ, बेशक यही अर्थ है। ज्ञान भी चारित्र्यके लिए दिया जाना चाहिए। ज्ञान साधन है, चारित्र्य साध्य है।

अतएव आप राष्ट्रीय शिक्षकोंमें चारित्र्यको आवश्यक मानेंगे?

जरूर।

इससे क्या मदिरापान करनेवाला और बीड़ी पीनेवाला शिक्षक त्याज्य नहीं है?

नीति सम्बन्धी हमारा वातावरण इतना ऊँचा तो उठ ही गया है कि हम शराब पीनेवाले शिक्षकोंका त्याग कर सकें। बीड़ीके लिए ऐसा करनेकी हिम्मत मेरी नहीं होती। बीड़ी पीनेवाला दूसरी तरहसे शीलवान हो सकता है, ऐसा मेरा अनुभव है। और यह भी जरूरी है कि शीलपर नजर रखते हुए हम कहीं शील-शून्य चौकीदार न वन जाये।

मैट्रिक पास करते ही बीमार पड़ जाना और बी० ए० होते ही बेहाल हो जाना, यह हालत क्या शोचनीय नहीं है?

यदि मेरा वश चले तो मैं रोगी विद्यार्थियोंका अक्षर-ज्ञान बन्द ही कर दूँ।

क्या राष्ट्रीय शिक्षा पानेवाले विद्यार्थीकी समस्त शक्तियोंका विकास न होना चाहिए?

जरूर होना चाहिए। तन दुरुस्त तो मन दुरुस्त; और मन दुरुस्त होनेसे ही आत्मा दुरुस्त — यही सीधा नियम मालूम होता है।

२१ वर्षसे कम उम्रके विवाहित विद्यार्थियोंके राष्ट्रीय स्कूलोंमें दाखिल होनेपर क्या प्रतिबन्ध नहीं लगाया जाना चाहिए?

होना तो चाहिए। पाठशालाका विद्याभ्यास विवाहित जीवनका विरोधी है।

क्या ऐसी शिक्षा न दी जानी चाहिए कि विधुर दूसरा विवाह न करें?

हाँ, ऐसी शिक्षा कमसे-कम मुझे तो बहुत पसन्द है।

राष्ट्रीय स्कूलोंमें शारीरिक दण्डको स्थान मिलना चाहिए?

हरगिज नहीं।

अगर विद्यार्थीके मनमें राष्ट्रीय शिक्षाके प्रति तिरस्कार-भाव पैदा हो जाये तो इसमें दोष किसका है?

दोष आम तौरपर तो विद्यार्थी और शिक्षक दोनोंका होता है, परन्तु ज्यादातर शिक्षकका।

बल्कि उनके द्वारा लाखों पिंजारों या धुनियों, धागा कातनेवालों, और हजारों माड़ी देनेवालोंका धन्धा जीवित हो जाये, हजारों लुहार और बढ़इयोंकी आजीविकामें वृद्धि हो जाये। सम्पूर्ण स्वदेशीका अर्थ यह है कि देशमें सिर्फ साठ करोड़ रुपये ही वापस न आ जायें, बल्कि उनके द्वारा दूसरे करोड़ों रुपयोंका उपयोग देशमें हो और देशकी नष्ट हुई प्राचीन सुन्दर कलाएँ फिरसे सजीव हो उठें। आज तो हम निरे कलाहीन मजदूर बनकर ही रह गये हैं।

इस हालतमें यह बात तो हर कोई समझ सकता है कि बुनकरोंको इस तरफ झुकाकर जनताकी सेवामें लगाना बड़े ही महत्त्वका काम है। उनको स्वदेशी-यागमें शरीक करनेका अच्छेसे-अच्छा उपाय तो यह है कि हम खुद ही बुननेका काम करने लगें। हम अपने स्वार्थको लेकर बुनकर भाइयोंके पास जायें, यह एक बात है और उन्हींके भलेके लिए जायें, यह दूसरी बात है। उनका भला तो हम उनके धन्धेको सीखकर, उसके तत्त्व और विद्याको समझकर तथा यह बात बुनकरोंको समझाकर ही कर सकते हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २०-१०-१९२१

१४१. पत्र: 'बॉम्बे क्रॉनिकल' को

साबरमती

२१ अक्तूबर, १९२१

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्षका निर्णय और वक्तव्य मुझे मिल गया है और मैंने उनके सम्बन्धमें पण्डित मोतीलाल नेहरूका वक्तव्य भी पढ़ लिया है। मेरी विनम्र सम्मतिमें अध्यक्षके रुखका बिलकुल कोई औचित्य नहीं है, उसका समर्थन नहीं किया जा सकता। अध्यक्षके निर्णयके सम्बन्धमें अन्तिम निर्णय देना कांग्रेस महासमितिका काम है। किन्तु ४ नवम्बरको अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी बैठक बुलानेके कार्यसमितिके प्रस्तावको रद करना या बदलना किसी भी तरह संवैधानिक व्यवहारके अनुकूल नहीं होगा। पण्डित मोतीलाल नेहरूने जो रुख अपनाया है मैं उसका पूरा समर्थन करता हूँ और मुझे आशा है कि कांग्रेस महासमितिके सभी सदस्य ४ नवम्बरको दिल्लीकी बैठकमें भाग लेंगे। मैं यह भी मानता हूँ कि अध्यक्ष पूरी ईमानदारीसे अनुभव करते हैं कि मद्रास और बंगालके चुनावोंमें हस्तक्षेप न करके कार्यसमितिने अनुचित काम किया है। साथ ही, कार्यसमिति भी उतनी ही ईमानदारीके साथ महसूस करती थी कि उसे हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था। अन्तिम निर्णय तो केवल कांग्रेस महासमिति ही कर सकती है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २४-१०-१९२१

१४२. आशावाद

आशावाद आस्तिकता है। सिर्फ नास्तिक ही निराशावादी हो सकता है। आशावादी ईश्वरका डर मानता है, विनयपूर्वक अपने अन्तर्नादको सुनता है, उसके अनुसार आचरण करता है और मानता है कि 'ईश्वर जो करता है अच्छा ही करता है।'

निराशावादी कहता है कि 'मैं करता हूँ', अगर सफलता न मिले तो अपनेको छोड वह अन्य सब लोगोको दोष देता है, भ्रमवश कहता है कि 'किसे पता, ईश्वर है या नही' तथा अपनेको भला और दुनियाको बुरा मानकर और यह कहते हुए कि मेरी किसीने कद्र नही की अन्तत आत्मघात कर लेता है। और यदि न करे तो भी मुर्देकी तरह जीवन बिताता है।

आशावादी प्रेममे मगन रहता है। किसीको अपना दुश्मन नही मानता। इससे वह निडर होकर वन और नगरमे भ्रमण करता है। हिसक जानवरो तथा उन जैसे मनुष्योसे भी वह नही डरता, क्योकि उसकी आत्माको न तो साँप काट सकता है और न पापीका खजर भेद सकता है। शरीरकी तो वह चिन्ता ही नही करता। क्योकि वह तो कायाको काँचकी गुडिया समझता है और जानता है कि एक-न-एक दिन तो यह फूटने ही वाली है। इसलिए वह उसकी रक्षाके निमित्त ससारको पीडित नही करता, वह न किसीको परेशान करता है, न किसीकी हत्या करता है। वह अपने हृदयमें निरन्तर वीणाका मधुर गान सुनता है और आनन्द-सागरमे डूबा रहता है।

निराशावादी स्वय राग-द्वेपसे भरपूर होता है। इसलिए वह हरएकको अपना दुश्मन मानता है और हरएकसे डरता है। अन्तर्नाद तो उसके होता ही नही। किसी मधु-मक्खीकी तरह वह इधर-उधर भिन्नाता हुआ बाहरी सुखोका उपभोग करते हुए घूमता है और उससे ऊबकर रोज नया सुख खोजता है। और इस तरह प्रेम-रहित तथा मित्र-रहित होकर इस दुनियासे कूच कर जाता है, और उसके नामकी यादतक किसीको नही आती।

मेरे ऐसे विचार होनेके कारण, मुझे उम्मीद है, कोई यह नही समझेगा कि मैंने कभी किसीसे यह कहा होगा कि यदि इस वर्ष स्वराज्य न मिला तो मै आत्म-हत्या कर लूँगा। विषय-सगसे मुक्ति पानेके अलावा अन्य किसी प्रसगपर आत्महत्या-को मै महापाप और कायरता मानता हूँ। और यदि हिन्दुस्तान स्वराज्य न प्राप्त करे तो भला मै आत्महत्या क्यो करूँ? हिन्दुस्तानको गरज हो तो स्वराज्य ले। स्वरा-ज्यकी कीमत हिन्दुस्तानको मालूम हो चुकी है, उसने स्वराज्यका स्वाद भी चख लिया है। अब, उसे गरज हो तो उसकी कीमत चुकाये और स्वराज्य ले। कोई दे या न दे, वह ले या न ले, इसके लिए मुझे आत्महत्या करनेकी क्या जरूरत है?

हाँ, एक बात मैंने अपने मित्रोसे जरूर कही है। यह सच है कि मुझसे पूछा गया था कि यदि जनवरीमे स्वराज्य न मिला तो आप क्या करेंगे? मैंने कहा कि मुझे

हिन्दुस्तानपर इतना अधिक विश्वास है कि मैं ता० ३१ दिसम्बरतक भी यही मानूँगा कि भारत हर हालतमें स्वराज्य प्राप्त करके रहेगा। इस समय मैं यह नहीं कह सकता कि जनवरीमें मैं क्या करूँगा। मुझे तो बस अच्छा मालूम होगा कि मैं जनवरीमें जनतासे विदा हो किसी शान्त स्थानमें जा रहूँ या सत्याग्रहाश्रमके संगठनमें यथाशक्ति जनताका हाथ बटाऊँ। यदि हम किसी तरह इस वर्ष स्वराज्य प्राप्त न कर सके तो मुझे अगले वर्ष जीवित रहना अच्छा नहीं लगेगा। ऐसी हालतमें मेरी आत्माको इतना अधिक कष्ट होगा कि उससे मेरे प्राण ही छूट जायेंगे — छूट जायें, यही मैं चाहूँगा।

मैंने हिन्दुस्तानके दुःखों — आर्थिक और नैतिक दोनों प्रकारके दुःखोंका इतना अनुभव किया है कि उनकी लपटोंसे अगर मैं जलकर भस्म नहीं हो गया हूँ तो इसका कारण केवल यही है कि मैं जनता द्वारा दी गई आशाके ऊपर जी रहा हूँ। "आज हम आत्मशुद्ध होंगे" और "आज हमारे रोगोंके घावोंके सर्वांगपर कुछ नरमी पड़ेगी," इस आशाके, और केवल इस आशाके भरोसे ही मैं जीवित हूँ। इस आशाको पूरा करनेके लिए एक साल काफी है, ऐसा मेरा खयाल है। सितम्बरमें एक सालकी बातको मानने और कहनेवाला अकेला मैं ही एक व्यक्ति था।

दिसम्बरमें सब लोगोंने इस वचनको ग्रहण कर लिया। अब अगर कांग्रेस अपनी प्रतिज्ञाको पूरा न करे तो फिर मुझ जैसेकी क्या हालत होगी? अगर कांग्रेस दिवाला निकाल दे तो मेरा भी दिवाला निकला कहा जा सकता है। कांग्रेसकी आशापर मैंने हुंडी निकाल दी है और अगर वही उसे स्वीकार न करे, तो फिर? मेरी कामना है कि स्वराज्य न मिलनेसे जनवरीकी पहली तारीखको मुझे जो दुःख होगा वही सबको हो। सब लोगोंको धर्म और अनाजके अभावकी पीड़ा अवश्य होनी चाहिए।

इसपर एक मित्रने मुझे पूछा, इसका अर्थ क्या कायरता नहीं है? पर मुझे तो इसमें कायरता नहीं दिखाई देती, बल्कि करुणा प्रतिबिम्बित दिखाई देती है। उसमें मुझे व्यावहारिकता नजर आती है। जहाँ सेवाकी कद्र न हो वहाँ सेवा क्या करना? जिस जीवनसे लाभ नहीं वह जीना किस कामका? जीर्ण और जर्जर शरीरको वसन्त-मालती आदि औषध खिलाकर आकृतिमात्रको जबरदस्ती बनाये रखनेकी अपेक्षा अगर वह शरीर गंगाजलपर जीकर क्षीण हो जाये तो इसमें क्या बुराई है? आजकल जहाँतक मैं देखता हूँ तहाँतक मेरे मुँहसे "स्वदेशीका पालन करो और स्वराज्य लो" के अलावा और कोई बात निकल ही नहीं सकती। इसके सिवा मुझे दूसरा कुछ दिखाई ही न देता हो तो इसमें मेरा क्या दोष?

अब हम आखिरी सीढ़ीतक आ पहुँचे हैं। यहाँ खूब अच्छी तरह पैर जमाये बिना — शक्ति प्राप्त किये बिना — आगे पैर उठाना मानो पीछे हटना है। मुझे याद है कि जब मैं सिंहगढ़के[1] पहाड़पर चढ़ रहा था तब एक मुकाम ऐसा आया कि जहाँसे मेरा कदम आगे बढ़ता ही नहीं था। वहाँ दम लेकर, बल प्राप्त करनेपर ही, मैं आगे बढ़ सका।

१ महाराष्ट्रमें पूनाके समीप एक पहाड़ी किला।

हमारी भी ठीक यही दशा है। स्वदेशीका पालन किये बिना हमे आगे बढनेके लिए बल प्राप्त हो ही नही सकता। अतएव, मेरा जीवित रहना, मेरा समाजमे रहना, स्वदेशीपर ही अवलम्बित है।

आज मै इसी तरह सोचता हूँ यह है मेरी आजकी मनोदशा। कलकी बात तो परमात्मा जानता है।

[गुजरातीमे]

नवजीवन, २३-१०-१९२१

१४३. मिल मजदूरोसे

भाइयो,

दौरा पूरा करके मै अहमदाबाद आया हूँ, तबसे सुन रहा हूँ कि शराब पीनेकी आदत और सब लोगोमे तो कम हो गई है, लेकिन जिन दुकानोपर मिल-मजदूर जाते है वहाँ तो धन्धा पहलेकी तरह ही चल रहा है। इतना ही नही वे स्वयसेवको-की परवाह ही नही करते, उन्हे गाली देते है ओर मारते भी है। मुझे मालूम नही कि इसमे कितना सत्य है। मेरा विश्वास है कि मजदूर भाइयोमे सैकडो लोग होगे जो ऐसे व्यवहारको पसन्द नही करेगे।

आपके लिए जो मेहनत कर रहे है वे इस आशासे मेहनत कर रहे है कि आप अच्छे बने और सुखी हो, आप अपनी खराब आदते छोडे, पैसा बचाना सीखे, कर्जदार न रहे, अच्छे घरोमे रहे, आपके बच्चे पढे-लिखे, आप स्वच्छ रहे, आप स्वय फुर्सतके समय अच्छी पुस्तके पढे, उनपर विचार करे और हर तरहसे समाजमे सुशोभित हो।

आपको मदद करनेवाले आपको सिर्फ अधिक वेतन अथवा बोनस आदि दिलवाकर सन्तोष मान ले, सो बात नही। आप यदि केवल वेतन बढानेके लिए ही उनकी सेवाको स्वीकार करे ओर अपने जीवनमे सुधार न करे तो आप उनकी सेवाको खो बैठेगे ओर आज जो जनमत आपकी तरफ है, वह भी आपका पक्ष नही लेगा।

आप अच्छे बने इतना ही नही बल्कि आपको देशमे चल रहे आत्मशुद्धिके धार्मिक आन्दोलनमे भी भाग लेना चाहिए। आप खिलाफतके प्रति, पजाबके प्रति और अपने स्वराज्य-सम्बन्धी कर्त्तव्यको समझे और उसका पालन करे। आप ऐसा करना चाहते हो तो आपको बुरी आदते छोड देनी चाहिए। हम ईश्वरके नामपर लड रहे है। क्या ईश्वर शराबी, जुआरी अथवा विषयीकी मदद करनेवाला है? शराबी मुसलमान खिलाफतका क्या भला करेगा? शराबी हिन्दू अपने मुसलमान भाईकी क्या मदद करेगा?

मै आपके मालिकोसे जब-जब आपका वेतन बढाने अथवा बोनस देनेकी बात करता हूँ तब-तब वे मुझसे कहते है, आप वेतन बढवाकर करोगे क्या? क्या मजदूर उससे अच्छी खुराक खायेगे? अच्छे कपडे पहनेगे? अपने बच्चोको पढायेगे? अथवा उससे वे ज्यादा शराब पीयेगे? यह सुनता हूँ तब मेरा सर शर्मसे झुक जाता है।

आपको मुझे ऐसी विषम स्थितिसे उबार लेना चाहिए, और यह आप सहज ढंगसे ही कर सकते हैं।

आप पाठक तो सम्भवतः शराब नहीं पीते होंगे, तब आप अपने साथियोंके लिए कैसे जवाबदार हो सकते हैं? इस प्रश्नका उत्तर यह है कि साथियोंके लिए जवाबदार बननेमें ही स्वराज्य है। आप ही अपने साथी मजदूरोंको समझा-बुझा सकते हैं, उनको सुधारनेका बोझ आपपर ही होना चाहिए और इस तरह अगर आप अपने बीच लगातार सुधार करते चले जायेंगे तभी वेतनमें वृद्धि और बोनस आदिकी बातें अच्छी लगेंगी। अगर आप सुधार नहीं कर सकते तो बोनस इत्यादिके लिए आपका दावा नहीं रह सकता, यह एक ऐसी बात है जिसे आप अच्छी तरह समझ सकते हैं। अतएव मुझे उम्मीद है कि आप शराबके इस दुर्गुणको शीघ्र प्रयत्न करके निकाल डालेंगे।

आपका हितेच्छु,
मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २३–१०–१९२१

१४४. टिप्पणियाँ

यात्रा करनेकी शर्तें

गुजरातके विभिन्न भागोंकी यात्रा करनेकी माँगें निरन्तर मेरे पास आती रहती हैं। मुझे डाकोरजी आदि स्थानोंसे आमन्त्रण मिले हैं और पेटलाद और सोजित्रासे भी। लेकिन इस मासके अन्ततक तो मैंने इन सबसे क्षमा माँग ली है। बादमें, मुझे दिल्ली जाना है। वहाँसे वापस आनेपर मैं गुजरातमें थोड़ा घूमना-फिरना चाहूँगा। गुजरातसे मैं निराश नहीं हो गया हूँ। मुझे अब भी यह आशा है कि गुजरात उस धर्म-युद्धमें पूरा-पूरा बलिदान देगा और इसीलिए मैं यह आशा करता हूँ कि मुझे केवल उसी स्थानके लोग आनेको कहेंगे जहाँ स्त्री-पुरुष त्योहार तथा अन्य सभी अवसरोंपर घर और बाहर खादी ही व्यवहारमें लाते हों। सभी लोग मेरे वक्तका ध्यान रखें, ऐसी मेरी कामना है। यदि एक जिला भी पूरी तरहसे तैयार होगा तो उसकी मार्फत हम अच्छी तरह संघर्ष चलाकर विजय प्राप्त कर सकेंगे और ऐसे जिलेमें मैं उस अवधिके दौरान रहनेको तैयार हूँ। उस तैयारीकी शर्तें निम्नलिखित हैं

१ वहाँके हिन्दू और मुसलमान परस्पर सगे भाइयोंके समान रहते हों — और ऐसा परस्पर डरके कारण नहीं, एक-दूसरेके प्रेमके कारण हो।

२ वहाँके हिन्दू मुसलमान, पारसी सब अन्तःकरणपूर्वक यह मानते हों कि खिलाफतमें हिन्दुस्तानकी मार्फत विजय केवल शान्तिमय युद्धसे ही सम्भव है।

३ वहाँके लोगोंको इस बातका अनुभव हो जाना चाहिए कि उनमें हिंसाकी भावनाके साथ ही फाँसीके तख्तेपर लटकनेकी हिम्मतका होना भी जरूरी है। और

प्रतिशत ऐसा एक व्यक्ति तो वहाँ होना ही चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि पाँच लाखकी आबादीवाले जिलेमे इस प्रकार शान्तभावसे मरनेवालोकी सख्या कमसे-कम पाँच हजार होनी चाहिए।

४ वहांके हिन्दू अस्पृश्यताको पाप समझते हो और भगी ढेढ आदिके साथ ममतापूर्ण व्यवहार करते हो।

यह हुआ मानसिक आचरण। इसके अलावा उनकी सच्चाई और उत्साहके प्रमाणस्वरूप

५ वहांके नब्बे प्रतिशत स्त्री-पुरुष विदेशी कपडेका उपयोग न करते हो और अपने हाथसे कते सूत और अपने जिलेमें तैयार खादीके वस्त्र पहनते हो। उनके बीच प्रति दस व्यक्तिके हिसाबसे एक चरखा चलता हो।

इन सभी शर्तोका पालन करना बहुत आसान है और यदि एक जिलेके लोग भी यह करे तो स्वराज्य लगभग हाथमे आ जाये और यदि समस्त गुजरात इस तरह तैयार हो जाये तो हम निश्चय ही स्वराज्य प्राप्त कर ले। इसी तरह यदि किसी एक भी जिलेमे दस व्यक्तियोमे से अपने प्राणोकी आहुति देनेवाला एक भी व्यक्ति हो तो हमे स्वराज्य अवश्य मिल जायेगा। पाठक समझ सकेंगे कि इन सबका केवल एक ही कारण है और वह यह कि हम अपने युद्धको सत्य और अहिंसामय मानते है। यदि सत्य और अहिंसा हमारे दिलोमें समा गये है तो उपर्युक्त शर्तोका पालन हमारे लिए खेलके समान है। इतना तो सभी याद रखे कि हम अपने विरोधियोका, फिर चाहे वे अग्रेज हो अथवा हमारे ही वर्णके सरकारके सहयोगी, अपमान नही करेगे, उन्हे भला-बुरा नही कहेगे, उनका तिरस्कार नही करेगे। हमे अपने बलके आधार-पर ही जूझना है, उनका अहित नही करना है।

हमारी लडाई सभ्यताकी है और सुसभ्य व्यक्तिके लिए इस जगतमे कोई शत्रु नही है — कदापि नही।

दिवाली

दिवाली अब नजदीक आ गई है। उसकी तैयारी कैसे की जाये, यह मै पहले एक-दो बार बतला चुका हूँ[1], लेकिन, फिर भी आज उसपर कुछ लिखता हूँ। दिवाली-के लिए हमें पवित्र बनना चाहिए। चरखेकी पूजा ही लक्ष्मी-पूजा है, अर्थात् हरएक घरमें अच्छेसे-अच्छा चरखा दाखिल कर देना चाहिए। और उसपर नित्य कुछ सूत हमें कातना चाहिए। दिवालीपर तो घरके सब आदमियोको बारी-बारीसे दिन-भर चरखा कातना चाहिए। और उसमे से जो सूत निकले उसे हमे अपनी बहियोमे देशके खातेमे जमा करना चाहिए।

बच्चोको दिवालीपर कोई-न-कोई नई चीज अवश्य ही मिलनी चाहिए। इसलिए हमे हाथसे कते सूतकी खादीकी गुडियां लडकियोको देनी चाहिए और खादीके सुन्दर बस्ते बालकोको देने चाहिए। हाथके सूतकी रस्सियां बनाकर बच्चोको रस्सा-खैचके

१ देखिए "टिप्पणियाँ", ९-१०-१९२१।

खेलके लिए देनी चाहिए। खादीका उनके लिए एक-एक कुरता तो जरूर ही बनवा लेना चाहिए। लेकिन हा, खादीको जरूरतके मुताबिक ही उपयोगमे लाना है।

अगर बच्चे पटाखे मागे तो उनसे कहना चाहिए कि पटाखे चलानेके दिन तो स्वराज्य मिलने और भुखमरी मिटनेपर ही आ सकते है। जबतक इसमे भुखमरी नही मिट जाती तबतक हम पटाखोके लिए अपना पैसा खर्च नही कर सकते। लेकिन हमे इस दिन अपने यहाका मैलापन अवश्य दूर करना चाहिए। इसीलिए अबतक हमारे पास जितने भी विदेशी कपडे बच रहे हो उनको निकालकर दिवालीके दिन उनकी एक खासी होली कर डालनी चाहिए और उस तरह अपने मैलको जलता देखकर आनन्दित होना चाहिए।

लेकिन एक जैन-भाई लिखते है कि उस होलीमे बहुतसे जीवजन्तु जल जाते है। इस तरह जो हिंसा हो रही है, वह देखी नही जा सकती। इससे तो अगर हम विदेशी कपडोको इकट्ठा करके रख छोडे तो क्या कुछ बुराई है? जैनियोके वर्तमान दृष्टिकोण-को देखते हुए यह सवाल ठीक ही है। छोटेसे-छोटा जन्तु भी अपने-जैसा ही है, और उस पर दया करना हमारा धर्म है, यह शाश्वत सत्य है। लेकिन ऐसा मानकर हम निश्चेष्ट नही बैठ सकते। हम चूल्हा तो जलाते ही है और मुर्दे भी जलाते है। जिस तरह नाश हिंसाका रूप है, उसी तरह उत्पत्ति भी हिंसाका रूप है। क्योकि उत्पत्ति-के विना नाश नही और नाशके विना उत्पत्ति नही हो सकती। अपने कियेका फल तो सबको भोगना ही पडता है। अगर हम इस बातको स्वीकार कर ले कि विदेशी कपडोका व्यवहार त्याज्य है तो फिर उनके जलानेमे बहुत ही थोडी हिंसा होते हुए भी जब दो हिंसाओमे से किसी एकको पसन्द करनेका समय आता है, तब हमे अल्पतम हिंसाको स्वीकार करके आगे बढना पडता है। अगर विदेशी कपडे इकट्ठे करके एक तरफ डाल दिये जाये और उनमे दीमक लग जाये तो वहाँ नाश और उत्पत्तिकी क्रिया इतनी तेजीके साथ होने लगेगी कि होलीसे जितने जीवोका नाश होता है उसकी वनिस्वत इसमे कई गुना ज्यादा नाश होगा। किसी आदमीको भूखो मरने देनेकी अपेक्षा उसका तुरन्त नाश कर देनेमे कम हिंसा है। इसीलिए मैने यह वतलाया था कि हमारे समागममे रहनेवाले मनुष्यका अन्न-जल वन्द कर देना हमारी लडाईके नियमके विरुद्ध है। लेकिन इस विषयपर मै अभी इससे ज्यादा वात नही करना चाहता, मै फिर कभी समय मिलनेपर इसपर विस्तारसे चर्चा करूँगा। अभी तो इतना ही कहता हूँ कि विदेशी कपडे जलाना हर एक दृष्टिसे कमसे-कम हिंसा है और यह हिन्दुस्तानके और इसलिए ससारके भलेके लिए एक वहुत ही जरूरी क्रिया है।

लेकिन दिवालीके दिनोमे मुसलमान क्या करे? यह तो हिन्दुओका त्यौहार है। इसीलिए मुसलमानोसे मेरा कहना है कि वे भी इसमे दिलचस्पी ले। इस त्यौहारमे जो धर्म-विधि है वह तो हिन्दुओकी ही रहेगी, लेकिन यह हिन्दुओके उत्सवका दिन है, इसलिए इसमे मुसलमान भी शरीक हो और जितने परिमाणमे उसका उपयोग सारे देशके लिए किया जाता है उतने अशमे तो वे ही नही वल्कि सभी जातियाँ शामिल हो। मुस्लिम नव वर्षके अथवा पारसी नव वर्षके दिन अथवा ईसाई नव वर्षके दिन हमे इन मतावलम्बियोके लिए शुभ कामना करनी चाहिए और इस अवसरपर ये

लोग जो सार्वजनिक उत्सव करे उसमे भाग लेना चाहिए। एक दूसरेके सुख-दुःखमे शरीक होना तो हमारा काम ही है। इसीलिए मुझे उम्मीद है कि हिन्दुओके इस त्यौहारपर सभी कौमे मिलकर स्वदेशीको हर तरहसे अपनायेगी।

गीतामें चरखा

मैंने गत अकमे कविवरके चरखा सम्बन्धी विचारोके प्रत्युत्तरमे कुछ कहनेका[1] प्रयत्न किया था, उसमे मैंने यह बताया था कि मै तो 'गीता' मे भी चरखा ही देखता हूँ। अपनी इस बातके आधारके रूपमे मैंने तीसरे अध्यायके कुछ श्लोकोको उद्धृत किया। मै यह भी जानता हूँ कि मै उनका जो अर्थ करता हूँ वह 'गीता' की टीकाओमे प्रत्यक्ष रूपसे देखनेमे नही आता। तथापि यह अर्थ मैंने आज ही नही निकाला है, अपितु १९०९ मे मै इसका यह अर्थ मानता आया हूँ। इन श्लोकोका भावार्थ यह है कि जो यज्ञ किये बिना भोजन करता है वह चोरी करता है। इसमे यदि यज्ञके अर्थको समझ ले तो मैंने जो अर्थ किया है उसे स्वीकार करनेमे कोई दिक्कत नही आयेगी। "यज्ञसे वर्षा होती है"[2] इसका सीधा-सादा अर्थ तो यह है कि यदि व्यक्ति श्रम करे तो पेड लगेगा और पेड वर्षामे सहायक होगा। लोककल्याणके अर्थके लिए किया गया शारीरिक श्रम ही सच्चा यज्ञ है। पशुओ अथवा फलादिका भोग देकर किया गया यज्ञ शुद्ध यज्ञ नही है। सार्वजनिक शुद्ध यज्ञोमे खेती एक है। अपनी मेहनतसे उत्पन्न फसलमे से किसान थोडा ही ग्रहण करता है। उसकी मुख्य मेहनत जाने-अनजाने लोकसग्रहके लिए है। सब उतनी मेहनत नही कर सकते, इसके लिए सर्दी और गर्मीको बरदाश्त कर सकनेवाले शरीरकी जरूरत है। लेकिन चरखा तो सब कोई चला सकते है। श्री राय-जैसे वैज्ञानिकने भी अत्यन्त सरस शब्दोमे यह बताया है कि चरखेके द्वारा भले ही व्यक्ति अपना भरण-पोषण न कर सके परन्तु प्रजाका तो कर सकता है। और आज जब कि हिन्दुस्तानके नाशकी घडी आ गई है उस समय अगर कोई वस्तु इस स्थितिको सुधार सकती है तो वह केवल चरखा ही है और इसीलिए वह सच्चा यज्ञ है। "ऐसे प्रवर्तित चक्रका जो अनुसरण नही करता वह व्यक्ति केवल अपने ही लिए और इसलिए व्यर्थ जीता है।"[3] यह चक्र वर्तमान युगमे चरखा ही है। जब यह श्लोक रचा गया था तब भले ही महाकवि और ऋषिके मनमें चरखेकी कल्पना न रही हो परन्तु कवि तो समयकी परिधिमे नही बँधता, उसकी रचना अनन्त कालके लिए होती है और इसीलिए उनके काव्यसे ऐसे अर्थ भी सिद्ध होते है जो उसकी अपनी कल्पनामे नही होते। यही उसके काव्यकी पूर्णता और विशेषता है। सिद्धान्त रूपमे ऐसे वचन शाश्वत होते है, उनके फल अनेक है और मेरा यह नम्र अभिप्राय है कि अमूल्य अमृत वचनोमे से हमे अनेक सुन्दर अर्थ-फल निकालनेका अधिकार है। कवि और किंकर, मालिक और मजदूर, सेठ और नौकर, सेठानी और दासी सबको लोक-कल्याणके अर्थ श्रम अवश्य करना चाहिए। करोडपति भले अपने लिए शरीर-श्रम न करे, चरखा न चलाये

१ देखिए "महान प्रहरी", १३-१०-१९२१।
२ भगवद्गीता, ३-१४।
३ भगवद्गीता, ३-१६।

लेकिन उसे देशके अर्थ, लोकके अर्थ, चरखा चलाना ही चाहिए, नहीं तो 'गीता'के वाक्यके अनुसार वह व्यर्थ ही जीता है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २३-१०-१९२१

१४५. भाषण : अहमदाबादमें स्वदेशीपर[1]

२३ अक्तूबर, १९२१

महात्मा गांधीने कहा : स्वदेशीके सम्बन्धमें अब काफी ज्यादा कहा-सुना जा चुका है, और अगर १२ महीनेतक दिन-रात समय-असमयका खयाल न किये बिना स्वदेशीका प्रचार करनेके बाद भी मैं इसपर लोगोंका विश्वास नहीं जमा पाया हूँ तब तो अब इस समय मेरे गला फाड़कर चिल्लानेसे कोई फायदा नहीं; विशेष रूपसे इसलिए कि स्पष्ट है कि इस सभामें ऐसे कुछ व्यक्ति हैं जिन्होंने मेरे सन्देशको एक कानसे सुनकर दूसरेसे निकाल दिया है। मैं 'नवजीवन' के स्तम्भोंमें हर सप्ताह इस अपरिवर्तनीय सत्यको विविध रूपोंमें पेश करता रहा हूँ कि यदि हम भारतमें राम-राज्य स्थापित करना चाहते हैं तो स्त्रियोंको डटकर खादी पहननेका प्रयत्न करना चाहिए। मेरी समझमें राम-राज्यकी स्थापनाके लिए इससे अच्छा दूसरा कोई साधन नहीं हो सकता। यदि आप सीताके पदचिह्नोंपर चलतीं तो आज भारतका इतिहास इससे बहुत भिन्न होता। सीताकी भावना वनवासके कष्टोंमें भी अविचल रही। वह अपनी इच्छासे वनमें गई थीं। यदि आज भारतकी स्त्रियोंमें वैसी ही दृढ़ता होती तो कुछ समयमें ही धर्म-राज्य स्थापित हो जाता।

यदि आप चाहती हैं कि लोग आपका वैसा ही आदर करें जैसा सीताका करते थे तो आप यह काहिली छोड़ दें और अधिकाधिक लगन और उत्साहसे चरखा चलानेमें जुट जायें।

अपने सतत अध्यवसायसे चरखा चलाकर आप जो सूत कातेंगी उससे भारतके वस्त्रहीन लोगोंके तन ढकेंगे और इस देशपर आर्थिक गुलामीकी जो केंचुली चढ़ गई है, वह उतर जायेगी।

महात्मा गांधीने आगे कहा : सेवा करना स्त्रियोंके लिए एक प्रकारसे धर्म बन गया है। यहाँ हममें जो ग्रेजुएट पुरुष हैं वे देशकी मुक्तिके लिए उतना काम नहीं कर सकते जितना काम सेवाकी भावनासे अनुप्राणित स्त्रियाँ कर सकती हैं। भारतको ऐसे स्त्री-पुरुषोंकी जरूरत है जो मजदूरोंमें खुलकर आ जा सकें और उनके सुख-दुःखमें सम्मिलित हो सकें। आप भिखारियोंको बिना सोचे-समझे जो दान देती हैं उससे उनका

१. यह सभा 'अहमदाबाद राष्ट्रीय स्त्री-मण्डल' के तत्त्वावधानमें हुई थी।

काम करनेका उत्साह चला जाता है और इससे उनके आत्मविश्वासके नष्ट होनेका खतरा भी रहता है। देशसे भिक्षा-वृत्तिको दूर करनेका केवल एक उपाय यह है कि हम भिखारियोंको चरखा चलाने और मेहनत करके अपनी रोजी कमानेके लिए तैयार करें। भारतके नंगे लोगोंका खयाल करके ही मैंने यह एक छोटी धोती-मात्र पहननेका निश्चय किया है और जबतक देशके करोड़ों अधनंगे लोगोंको कपड़ा देनेके उद्देश्यसे सभी कोई चरखा नहीं चलाने लगते तबतक मैं चैन नहीं लूंगा। मैं इस धोतीको लपेट कर कैसा लगता हूँ यदि आप यह देखनेकी उत्सुकतासे यहाँ आकर्षित होती हैं, यदि आप केवल दिखावेके लिए खादी पहनती हैं, तो आप मुझे धोखा देती हैं। आप अपने असली विचारोंको छिपाकर मुझे और अपनी अन्तरात्माको भी धोखा दे सकती हैं, लेकिन मनुष्यकी बुद्धि जितने भी उपाय ढूंढ़ सकती है उनमें से किसीका भी आश्रय लेकर आप ईश्वरको धोखा नहीं दे सकतीं। हमारे पास पहलेसे जो विदेशी कपड़े रखे हैं उनको तो हम पहन लें, ऐसा सोचकर आपका विदेशी वस्त्र पहनते जाना बेमतलब है। यदि हमारे घरमें शराबकी एक बोतल रखी है, तो क्या हम शराब पियेंगे? जब हमें एक बार यह विश्वास हो जाता है कि विदेशी कपड़ा अपवित्र है तब हम कोई भी ठीक जँचनेवाला बहाना देकर विदेशी कपड़ेके प्रयोगको उचित नहीं ठहरा सकते। क्या सीताने अशोक वाटिकामें वल्कल वस्त्रोंकी तुलनामें कीमती वस्त्रोंको अस्वीकार नहीं कर दिया था? उन्होंने बड़ी वीरतासे अपने सतीत्वकी रक्षा की थी, अनेक प्रलोभनोंको ठुकराया था और धमकियोंकी परवाह नहीं की थी। इसी कारण 'सीता-राम' कहकर हम जो अभिवादन करते हैं उसमें सीताको पहला स्थान मिला है। यदि आप भोजन बनानेकी कलामें निपुण हैं तो आप बढ़ियासे-बढ़िया सूत कातनेमें भी निपुण हो सकती हैं। मैं आशा करता हूँ कि कांग्रेसके अगले अधिवेशनमें मैं आप सबको खादी पहने हुए देखूंगा। अबतक मैंने आपसे जो भी चीज माँगी है वह आपने मुझे खुशी-खुशी दी है और अब जब मैं आपसे आपके विदेशी कपड़े माँगता हूँ तब मैं आपसे यही आशा करता हूँ कि आप मेरी इस माँगका उत्तर भी उसी उदारतासे देंगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ११-११-१९२१

१४६. सन्देश : बम्बई राष्ट्रीय कालेजके अध्यापकोंको[1]

२४ अक्तूबर, १९२१

धुनो, बुनो, कातो,
कातो, बुनो, धुनो,
बुनो, धुनो, कातो।

[अंग्रेजीसे]
सेवन मन्थ्स विद महात्मा गांधी

१४७. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदीको

साबरमती
२४ अक्तूबर, १९२१

भाईश्री बनारसीदासजी,

आपका पत्र मीला। मैं चाहता हुं अब आप भी जहांगीर पीटीटको कुछ भी न लिखे।

आपका,
मोहनदास गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल पत्र (जी० एन० २५६०) की फोटो-नकलसे।

१४८. पत्र : डी० बी० शुक्लको[2]

साबरमती
मंगलवार, आश्विन वदी ९ [२५ अक्तूबर, १९२१]

भाईश्री,

आपने मुझसे काठियावाडमें आनेका आग्रह किया है। मेरा भी मन तो बहुत होता है कि मैं स्वयं आकर काठियावाडकी जनतामें जो उत्साह फैला हुआ है, उसने

१. राष्ट्रीय कालेजके अध्यापकोंने गांधीजीसे पूछा था कि अवकाश बितानेका सबसे अच्छा और उपयोगी तरीका क्या है। वह गांधीजीका मौनवार था, इसलिए उत्तरमें ये तीन पंक्तियाँ लिख दीं।

२. श्री शुक्लने गांधीजीका यह पत्र **गुजराती**के दीपावली अंकमें प्रकाशनार्थ भेजा था, किसी कारणसे वह दीपावली अंकमें तो प्रकाशित नहीं हो सका किन्तु बादके एक अंकमें 'काठियावाड़को गांधीजीका सन्देश' — शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

जो आत्मशुद्धि की है उसका अनुभव करूँ और पवित्र खादीधारी हजारो बहनोके दर्शन करूँ।

लेकिन आप जानते हैं कि अभी तो मैं लाचार हूँ। इतना ही कह सकता हूँ कि पहला अवसर प्राप्त होते ही आ जाऊँगा। लेकिन मैं अत्यन्त लोभी बन गया हूँ, यह बात तो अब सारा हिन्दुस्तान जानता है। जबतक एक भी पुरुष विदेशी कपडेका इस्तेमाल करता है अथवा एक भी घर चरखेके बिना है अथवा एक भी गली करघे अथवा पीजनमे विहीन है तबतक मेरा लोभ शान्त नही हो सकता। आपने बहुत किया है लेकिन इतना तो नही कर पाये हैं, यह मैं जानता हूँ। इसीसे मेरा विशेष अनुरोध है कि सब लोग अन्य प्रवृत्तियोको छोडकर भी स्वदेशीको पूर्ण बनानेकी ओर ध्यान दे। स्वयसेवक जबतक रुई पीजनेवाले तथा कातनेवाले नही बनते तबतक वे पूरा काम नही कर सकते, मैं अपनी अपूर्णताको देखते हुए ही यह कह सकता हूँ।

मैं सुनता हूँ कि काठियावाडमे अब भी अन्त्यजोका तिरस्कार चालू है। उन्हे गाडीमे अभी भी तकलीफे उठानी पडती हैं। उनके साथ हम सगे भाई-बहनका-सा व्यवहार नही करते और जबतक यह प्रेम-भावना हममे जाग्रत नही होती तबतक आत्मशुद्धिकी बातको मैं कृत्रिम ही मानता हूँ। मैं प्रार्थना करता हूँ कि काठियावाड धर्मके नामपर चलनेवाली इन धाधलीका बहिष्कार करे।

मेरा विश्वास है कि काठियावाडको ब्रिटिश भारतमे चल रहे आन्दोलनके अन्तर्गत जारी अन्य प्रवृत्तियोको छूनेकी कोई जरूरत नही है। वहाँ किसी-किसी स्थानपर राजा-प्रजाके बीच मन-मुटाव है, यह मुझे मालूम है। मुझे तो विश्वास है कि अगर लोग चुपचाप उपर्युक्त दोनो कार्योमें जुटे रहेगे तो दूसरी कठिनाइयाँ स्वयमेव दूर हो जायेंगी। इस बीच लोगोको मेरी सलाह है कि जो कठिनाइयाँ आये उन्हे वे सहन कर ले।

राजाओकी स्थिति जनताकी अपेक्षा अधिक विषम है, ऐसी मेरी मान्यता है, और जब मैं देशी राज्योमे चलनेवाली अन्धाधुन्धीकी बात सुनता हूँ तब मैं उसे ब्रिटिश साम्राज्यमें प्रवर्तित महान अन्धाधुन्धीकी ही प्रतिध्वनि मानता हूँ। लेकिन हम इस समय इन प्रश्नमे जाये ही क्यो? जो अनिवार्य दुख हैं, उन्हे हम अगर ईश्वरको पहचानते हैं तो उसकी ही झोलीमे क्यो न डाल दे? जो ईश्वरका भय रखता है वह अन्य प्रकारके भयसे मुक्त रहता है, इसलिए मेरी इच्छा है कि आप भय-मात्रको छोड दें।

आपके छोटेभाई
मोहनदासके प्रणाम

[गुजरातीसे]
गुजराती, ६-११-१९२१

१४९. टिप्पणियाँ

नगरपालिकाओ सावधान!

अहमदाबाद, सूरत और नडियादकी नगरपालिकाओंसे सम्बन्धित बम्बई सरकारकी टिप्पणीसे स्पष्ट हो गया है कि जो बात दिनके उजालेकी तरह बिलकुल साफ है, वह उसे भी देखनेको तैयार नही है। उसका तानाशाही रवैया जनताकी जागृत भावनासे मेल नही खाता। व्यक्तिगत रूपसे कर-दाताओंको नगरपालिकाके सदस्योंपर, जो मानते है कि उन्होंने अपना कर्त्तव्य निभाया है, मुकदमा चलानेके लिए उकसाना किसी भी तरह शोभनीय नहीं कहा जा सकता। सरकारके लिए सही रास्ता तो यह था कि वह नगरपालिकाओंको अपनी राह चलने देती और खुद आगे बढ़कर सकट मोल नही लेती। लेकिन इस सरकारी टिप्पणीका उद्देश्य तो सकट पैदा करना ही है। सदस्योको यह चुनौती स्वीकार करके सरकारको उस बातके लिए ललकारना चाहिए कि अगर हिम्मत हो तो वह नगरपालिकाओंकी अवहेलना करके देखे। अगर नगरपालिकाएँ अपनी व्यवस्था ठीकसे न चलाना चाहे तो उन्हे वैसा करनेका भी अधिकार होना चाहिए। अगर किसी नगरकी व्यवस्था ठीक नही है तो उसमें कर-दाताओंकी गलती भी उतनी ही है जितनी कि नगरपालिकाके सदस्योंकी है। लेकिन हमारी बुद्धिमान सरकार एक ओर तो नगरपालिकाओंके स्वतन्त्र अस्तित्वको स्वीकार करती है और दूसरी ओर कानूनके शब्दार्थमे चिपटी रहना चाहती है, हालांकि यह शब्दार्थ भाव और असली तत्त्वको मारनेवाला होता है। यह सरकार नगरपालिकाओंको अपना शासन स्वय चलाने देनेके बजाय उस समयतक खुद ही उनका शासन चलाना चाहेगी जबतक कि वैसा करनेमे सरकारको कुछ खोना नही पडता। अब नगरपालिकाओंको यह चुनौती स्वीकार करके अपनी ओरसे उचित कार्रवाई करनेकी तैयारी करनी चाहिए। हो सकता है, सरकारको कुछ कर-दाताओंमे कुछ मुकदमे करवानेमे कामयाबी हासिल हो जाये। वह जो कमसे-कम कर सकती है, वह यही है। और अधिकसे-अधिक वह यह कर सकती है कि सम्बन्धित नगरपालिकाओंको भग कर दे। और अगर विरोध करनेवालोका दल मजबूत लोगोका दल है तो सरकारकी ऐसी कार्रवाईको स्वागत करनेके लायक ही मानना चाहिए। अगर मान लिया जाये कि हाँ, वे इतने मजबूत है, तो उन्हे सीधे कर-दाताओको यह समझाना चाहिए कि क्या कुछ हो रहा है, और सघर्षकी तैयारी करनी चाहिए। अगर सरकार ऐसी कोई कार्रवाई करे और नगरपालिकाके सदस्यगण अपनी ओरसे कार्रवाई करनेको तैयार रहे तो मुझे सरकारी टिप्पणीमें भी स्वराज्यकी झाँकी दिखाई देती है। जबतक नगरपालिकाओको भग नही किया जाता तबतक उन्हे सब अधिकार है, और उनके भग किये जानेपर, अगर हम यह मान ले कि कर-दाता लोग मजबूत और समझदार है और उनमे एकता है तो सरकार शक्तिहीन हो जायेगी। कर-दाताओमे ये सारे गुण है, लेकिन उन्हे काम करनेके लिए सगठित करनेकी जरूरत है। अभीतक जनता अफसरो और तथाकथित

प्रतिनिधियोके वीच फुटवालकी तरह ठोकरे खाती रही है। असहयोग वह चीज है जो जनताको इस खेलमे खिलाडीकी तरह शामिल होनेमे सक्षम बनाती है। प्रतिनिधिगण जनताका या तो सच्चा प्रतिनिधित्व करे अन्यथा वे समाप्त हो जायेंगे।

काग्रेस अधिवेशनके दर्शक

काग्रेसकी स्वागत समिति इस बार काग्रेस अधिवेशनको विशुद्ध कामकाजी अधिवेशन बनानेके लिए कोशिश कर रही है। ऐसा करनेकी फिक्रमे उसने अपनी सख्या भी सीमित कर दी है और दर्शकोकी भी। प्रतिनिधियोकी सख्या सीमित कर देनेपर दर्शकोकी सख्या सीमित न करना असम्भव था। इसलिए समितिके सामने — चुनावका एक तरीका ढूँढ निकालनेका सवाल था। इस दृष्टिसे एक ही पैमाना — यानी आर्थिक पैमाना — तय करना सम्भव था। कुछ विशिष्ट अतिथियोको नि शुल्क टिकट देनेकी व्यवस्था भी करनी ही थी। इसके पीछे विचार सिर्फ दर्शकोकी सख्या सीमित करनेका है, न कि पैसा जमा करनेका। यह पहली ही बार होगा कि इस वार्षिक जलसेका उपयोग वर्षभरके खर्चके लिए धन-सग्रह करनेके लिए नही किया जायेगा। बहुत बडे पैमानेपर तैयारी हो रही है, जिसमे प्रतिदिन आठ आनेके टिकटपर प्रदर्शनी, सगीत-सम्मेलन और आजके सभी जाने-माने वक्ताओ द्वारा सामयिक विषयोपर व्याख्यान आदि देखने-सुननेका प्रवन्ध भी शामिल है। प्रतिवन्धक शुल्क काग्रेस अधिवेशनमे सिर्फ दर्शकोपर ही लगाया गया है। इसके पीछे विचार यह है कि दर्शक लोग अधिवेशन देखनेके लिए अर्जियाँ देना बन्द करे। मै चाहता हूँ कि जनता स्वागत समितिकी स्थितिको समझे। उसके कधेपर नये सविधानके अन्तर्गत असाधारण परिस्थितियोमे पहला अधिवेशन आयोजित करनेका भार आ पडा है। काग्रेस अधिवेशनकी सफलता मुख्यत जनताके प्रत्येक व्यक्तिके स्वेच्छाप्रेरित हार्दिक सहयोगपर ही निर्भर है।

खादीकी टोपीके खिलाफ जिहाद

कराचीके श्री धरमदास ऊधाराम लिखते हैं कि फोर्व्स कैम्वेल कम्पनीने उन्हे खादी-टोपी पहननेकी हिमाकत करनेके आरोपमे अपनी नौकरीसे हटा दिया है। उन्हे मै इस साहसके लिए वधाई देता हूँ कि उन्होने वर्खास्तगी मजूर कर ली लेकिन टोपी पहनना छोडनेसे इनकार कर दिया। अगर हमारा नैतिक वल टूट नही गया होता तो सभी क्लर्क, चाहे वे कही भी काम करते हो, एक ही साथ इसी तरह खादी टोपीको अपनाकर खुदको वर्खास्त करनेकी अपने-अपने मालिकोको चुनौती देते। इसके परिणाम-स्वरूप लोग सचमुच जो अवश्यम्भावी है उसे पहचान लेते और एक सर्वथा निर्दोष पहनावेके खिलाफ जिहाद वोलनेकी गलती उनकी समझमे आ जाती। दरअसल, यह जिहाद नौकरी करनेवालोको आतकित करने और उन्हे दव्वू, वल्कि पुसत्वहीन बनाकर रखनेके खयालसे वोला गया है। मद्रासमे लोक-शिक्षा निदेशक महोदय इस्पेक्टरोको स्कूलोमे चरखेका प्रवेश करानेकी इजाजत नही दे रहे हैं — भले ही उसका कारण सिर्फ इतना हो कि निदेशक महोदयके अनुसार चरखेको राजनीतिक महत्व दिया जाता है। इस तर्कके आधारपर नशावन्दीपर किसी भाषणको भी वर्जित मानना चाहिए, क्योकि असहयोगियोके लिए इसका एक राजनीतिक महत्व है। स्वदेशी-

के खिलाफ तरह-तरहके अभियान चला देनेसे प्रकट होता है कि सरकारको यह अच्छी नही लगती। दूसरे शब्दोंमे, सरकार भारतकी आर्थिक स्वतन्त्रता सहन नही कर सकती। क्या इन लक्षणोंको देखते हुए हमे स्वदेशी कार्यक्रमपर अमल करनेके लिए कृतसंकल्प नही हो जाना चाहिए?

फौजी लोग

अली-बन्धुओ और उनके साथियोंपर चलाये गये मुकदमेका हाल और एक ज्ञापन[1] बैरकोंमे पहुँच चुका है, और फौजी लोग यह पूछ रहे है कि अगर वे नौकरी छोड देगे तो उनका भरण-पोषण कैसे होगा। एक पत्रलेखक उनकी ओरसे पूछता है कि स्वराज्यके अन्तर्गत उनका क्या होगा। जहाँतक पहली जिज्ञासाकी बात है कार्य-समितिने उन्हे रास्ता दिखा दिया है। हर सिपाही आसानीसे बुनकर और धुनिया बन सकता है। धुननेके लिए बाहोंमे ताकतकी जरूरत है जो हर सिपाहीमे होगी ही। और बम्बईमे तो कोई भी धुनिया प्रतिदिन दो से तीन रुपयोंके बीच कमा लेता है। पंजाबके बहुतसे बुनकरोंने करघे छोड दिये है और सिपाहीके टट्टू बनकर तलवारे उठा ली है। मै करघेको ऐसी तलवारसे सौ दर्जा श्रेयस्कर मानता हूँ। जिस सिपाहीको यह निर्णय करनेका अधिकार नही हो कि उसे कब और किन लोगों अथवा किस जातिके खिलाफ तलवार उठानी पडेगी, उसके धन्धेको मै सच्चा धन्धा नही कह सकता। सिपाहियोंकी सेवाका उपयोग हमारी रक्षा करनेकी अपेक्षा हमे गुलाम बनानेके लिए ही अधिक किया गया है, जब कि आज कोई भी बुनकर अपने देशका सच्चा मुक्तिदाता, और इस तरह, सच्चा सिपाही बन सकता है।

एक मित्रका सुझाव है कि कांग्रेसने जो बुनाई और धुनाईकी सलाह दी है, उसमे खेती भी जोड देनी चाहिए। यह तात्कालिक उपाय नही हो सकता, क्योंकि खेती आसानीसे नही शुरू की जा सकती और इसमे पूंजीकी भी जरूरत है और इस कारण यह काम हमारे उद्देश्यकी दृष्टिसे अव्यवहार्य ही हो जाता है।

स्वराज्यके अन्तर्गत क्या होगा, इसका जवाब आसान है। तब सिपाही किरायेके टट्टू नही होगे। वे सिर्फ बाहरी दुश्मनोसे बचाव और जानमालकी हिफाजतके लिए राष्ट्रीय सैनिक बनकर रहेगे। राष्ट्रके मामलोंको दिशा देनेमे उनकी एक अपनी आवाज होगी। और निश्चय ही तब उन्हे निरीह तुर्को या अरबोंका गला काटनेके लिए देशसे बाहर पश्चिममे नही भेजा जायेगा और न उतने ही निरीह चीनियों और बर्मियोंका गला काटनेके लिए पूर्वमे ही भेजा जायेगा।

श्री त्यागीके बचावमें

श्री भगवानदास[2] इस आन्दोलनको काफी गहरी दिलचस्पीसे देखते रहे है। उन्होंने श्री त्यागीके बचावमे निम्नलिखित विद्वत्तापूर्ण पत्र[3] लिखा है।

१ कराची-प्रस्तावपर, देखिए "एक ज्ञापन", ४–१०–१९२१।

२ १८६९–१९५८, लेखक, दार्शनिक, काशी विद्यापीठ, बनारसके आचार्य।

३ यहाँ नही दिया जा रहा है।

पाठक ध्यान देंगे कि पिछले हफ्ते श्री त्यागीका बयान देखते ही मैंने कुछ भूल-सुधार कर ली थी।[1] मैंने आगाही इसलिए जरूरी समझी कि मुझे ऐसा अनुभव है कि हमारा मौन कमजोरीका परिणाम हुआ करता है। दुर्भाग्यवश यह इक्के-दुक्के लोगोंतक ही सीमित नहीं है, बल्कि एक राष्ट्रीय दोष बन गया है। जब मैंने श्री त्यागीका उदाहरण दिया तो उसका मतलब इस दोषका सिर्फ सबसे ताजा नमूना पेश करना था। जैसा कि मैं पहले भी बता चुका हूँ, मोपलोंका पागलपन तो बुरा है ही, लेकिन दूसरे लोग उस पागलपनके आगे झुक गये, यह और भी बुरा है। वे जोर-जबर-दस्तीसे मजबूर होकर अपना मजहब बदलनेकी कहानी कहनेको जीवित ही क्यों रहे? कोई दूसरा व्यक्ति तो हमारे लिए हमारे धर्मकी रक्षा नहीं कर सकता। हममें से हरएक स्त्री या पुरुषको अपना रक्षक आप होना चाहिए। जिस ईश्वरने हमें धर्म दिया है, उसने उसकी रक्षा करनेकी भी शक्ति हमें दी है। हर व्यक्तिमें प्रहार करनेकी शक्ति नहीं है, परन्तु चाहे लूला-लगड़ा हो, या अन्धा-गूगा हो, मर मिटनेकी शक्ति तो सभीमें है। मजिस्ट्रेटने श्री त्यागीपर जो कायरतापूर्ण प्रहार करवाया, वह उनकी मर्दानगीपर प्रहार था और इस तरह धर्मपर। उन्हें कुछ-न-कुछ करके — चाहे उसे अवज्ञा कहिए या अविनय या उद्धतता — मजिस्ट्रेटको और भी तमाचे लगवानेके लिए ललकारना चाहिए था और "एक शान्तिपूर्ण दृश्य" उपस्थित कर देना चाहिए था। यह सबसे सच्चा असहयोग होता। लेकिन मैं श्री त्यागीको या किसीको भी दोष नहीं देता। हमारी मर्दानगीको तो जानबूझकर खत्म किया गया है। हमें इस तरह बेबस कर दिया गया है कि हमें सब-कुछ चुपचाप सहना ही पड़ता है। अहिंसाके आधु-निक स्वरूपके प्रणेताके नाते मुझे इस बातकी बहुत फिक्र है कि अहिंसाकी आड़में हम अपनी कमजोरियोंको ही देवत्वका गुण न मानने लगें। जबतक हम इस क्षेत्रमें कुछ निश्चित काम नहीं कर लेते तबतक मैं इस बाबत लोगोंपर बधाइयोंकी वर्षा न करना ही अच्छा मानूँगा। जहाँतक बाकीका सवाल है, सत्ताका भय और आतंक त्यागनेकी दृष्टिसे हमने जो प्रगति की है, उसके लिए तो हमें हर तरहसे प्रसन्न होना चाहिए। असहयोग कमजोरों और बलवानों, दोनोंके हाथमें एक मजबूत शस्त्र देता है। और जबतक हम यह महसूस करते हैं कि हम किसी अपमानके आगे झुक गये तो वह हमारी अपनी कमजोरी थी, और हमने हर बार इस कमजोरीपर विजय पानेकी कोशिश की तबतक हमें अपने आचरणपर लज्जित नहीं होना चाहिए।

बाबू भगवानदास यह जाननेको बहुत उत्सुक हैं कि भयसे अधिक बुरा और क्या हो सकता था। मेरे मनमें तब कायरताकी बात थी।

इस सम्बन्धमें एक बात काफी दिलचस्प लगती है। बाबू भगवानदासने श्री त्यागीका वक्तव्य तो देखा था, किन्तु उन्हें मेरे द्वारा भूल-सुधारकी कोई जानकारी नहीं थी। इसलिए मैंने जल्दबाजीमें श्री त्यागीके मामलेमें जो कमजोरी देखी, उसकी भर्त्सना-के खिलाफ उन्होंने प्रतिवाद करके ठीक ही किया, किन्तु दूसरी ओर मौलाना मुहम्मद

१ देखिए "टिप्पणियाँ", २०-१०-१९२१ का उप शीर्षक "मजिस्ट्रेटकी क्षमा याचना" और "अभियुक्तका बयान"।

अलीने, जैसा कि उनके अन्यत्र प्रकाशित पत्रसे[1] प्रकट होगा, बड़ी तत्परतासे इस बातका विरोध किया है कि श्री त्यागीके कामको "अवज्ञा" (डिफायंस) कहा गया है। मेरी टिप्पणीके अन्तमें जो बचाव (डिफेंस) शब्द आया है, वह छपाईकी भूल है।[2] दर-असल यह "अवज्ञा" (डिफायंस) होना चाहिए था। ये प्रतिवाद मुझे बहुत अच्छे लगे है, क्योकि मै उन्हे राष्ट्रकी उस इच्छाका प्रतीक मानता हूँ कि जहाँ भूल हो, वहाँ वह उसे सुधारनेको आतुर है। मौलाना साहबको ऐसे किसी भी कार्यका श्रेय स्वीकार नही है जो सस्कृतिकी कड़ीसे-कड़ी कसौटीपर खरा न उतरे। और उधर बाबू भगवानदास मुझे किसी ऐसे कार्यके पीछे भयका दोष दिखानेकी इजाजत नहीं देंगे जिसे बहादुरोकी अहिसाके सर्वथा अनुकूल समझा जा सकता है। अब हम इस आशा और मगल-कामनाके साथ यह विवाद बन्द करे कि हमारा देश बहादुर बने और विनयी तथा सर्वथा वीरोचित आचरण करनेवाला भी बने।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २७–१०–१९२१

१५०. पत्र-लेखकोंको

बिशनदास चड्ढा : आपको और कही जानेसे पहले भारतके प्रमुख केन्द्रोमे जाकर देशी कलाका अध्ययन करना चाहिए। आप देखेंगे कि जर्मनीके चरखेपर हमारे चरखेसे ज्यादा सूत नही काता जा सकता।

भगीरथ मिश्र : जब आप पूरी प्रणालीको बुरा समझकर उससे असहयोग कर रहे है, तब ऐसा नही हो सकता कि किसी दूसरी प्रणालीके आ जानेके कारण आप फिर पहलीवाली प्रणालीसे सहयोग करने लगे। उस हालतमे तो आपको दोनोसे असहयोग करना होगा। मेरी इस "धमकी" का यही कारण है कि अगर भारतमें अहिसा सर्वव्यापी हो जाये और उसीकी चपेटमे आकर मै दुनियासे उठ न जाऊँ तो मै हिमालयकी गुफाओमे शरण ले लूँगा।

एम० एस० शकररमण . विधि-विधान अक्सर ईश्वर पूजनमे सहायक होते है। प्रार्थना आत्माकी तीव्रतम अभीप्सा है और हमारे विकासके लिए सर्वथा अनिवार्य है।

बिन्दुमाधव : एक बारमे एक ही काम करो, यह सुनहरा नियम है। अगर हम कुछ वस्तुओका वर्जन कर दे, तब जिन शेष वस्तुओका वर्जन करना चाहते है उनका भी वर्जन सहज ही कर सकेगे। जड काट देनेपर तना तो एक ही धक्केमे गिराया जा सकता है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७–१०–१९२१

१. देखिए "जेलसे लिखा एक पत्र", २७–१०–१९२१।

२. देखिए "टिप्पणियाँ", १३–१०–१९२१ का उप-शीर्षक "उनकी विसगति"।

१५१. जेलसे लिखा एक पत्र

जेल
कराची
१८ अक्तूबर, १९२१

प्यारे बापू,

स्वभावत , मै आपको एक लम्बे अर्सेसे लिखनेकी सोचता रहा हूँ, लेकिन किसी-न-किसी वजहसे हर दिन टालता रहा। लेकिन, वाल्टेयरमें मेरी गिरफ्तारी-पर मेरी पत्नीने जो-कुछ किया और उसके बाद उसकी जो गतिविधि रही, उसके बारेमें अखबारोमें आपकी कलमसे लिखी बातें पढ़नेके बाद आपको पत्र लिखनेकी इच्छा किसी तरह दबा नहीं सका। आप खुद ही सार्वजनिक रूपसे स्वीकार कर चुके हैं कि मेरे लिए पत्र लिखना कितना मुश्किल है। इसलिए, भले ही बहुत थोडे शब्दोमें सही, किन्तु आपको यह बताये बिना नहीं रह सकता कि आपने मेरे दिलको कितनी गहराईतक छू लिया है। शायद मैं आपको एक बार बता चुका हूँ कि हमारा "प्रेम-विवाह" हुआ था, जिसका भारतमें आम चलन नहीं है। इसके अतिरिक्त भी हमारे विवाहित जीवनका हर साल मेरी पत्नीको मेरी अधिकाधिक निकटकी सगिनी बनाता गया, और नजरबन्दी तथा कारावासके पिछले कुछ घटनापूर्ण वर्षोको उसने जिस साहसके साथ झेला है, और १९१९में हमारी रिहाईके बाद हम जिन "खतरो" में रहते आये हैं उनका उसने जिस हिम्मतके साथ सामना किया है, उसके कारण वह मुझे और भी प्यारी हो गई है। लेकिन, मैं आपको सच बता रहा हूँ कि उस दिन जब उस छोटेसे रेलवे पुलिस स्टेशनके अन्दर आकर उसने बडी हिम्मत और बेपर-वाहीसे मुझसे अपनी और लडकियोकी फिक्र न करनेको कहा और अलविदा कहकर, कुल एक-दो मिनटमें ही, दृढताके साथ गाडीकी ओर चल पडी तबसे वह मुझको इतनी प्यारी लगने लगी है, जिसका आधा भी पहले कभी नहीं लगी थी। खैर, मैंने आपके लेखोमें अपना या हम दोनो "भाइयो"का उल्लेख एकाधिक बार पाया है। आपने सबमें हमारी तारीफ ही की है, और मुझमें ऐसा कोई बनावटीपन नहीं है कि मैं यह बात आपसे छिपा लूँ कि ऐसी हर चर्चासे मुझे बहुत खुशी हुई और मेरा दिल जोरोसे धडकने लगा। मैंने कई बार हमारे लिए आपकी "हिमायत" या "सफाई" भी अखबारोमें पढी है। इन लेखोमें आपने हमारे आलोचकोके आक्रमणका जोरदार विरोध किया है और ऐसे समयमें हमारा हौसला बढाया जब हम अपना आपा खोने लगे थे। लेकिन हमारी तारीफ अथवा हिमायतके रूपमें लिखी गई आपकी किसी बातसे मेरे दिलको

उतनी खुशी नहीं हुई जितनी मेरी अजीज और बहादुर पत्नीके बार-बार जिक्रसे हुई। असलियत तो यह है कि इसने मेरे दिलको इस कदर छू लिया है कि आपने उसकी तारीफमें जो भरमानेवाली बातें कही हैं, उनके लिए आपको माफी देनेके लिए भी तैयार हो गया हूँ और उनपर आपसे रश्क न करनेके लिए भी तैयार हूँ। खैर। मैं सिर्फ यही उम्मीद करता हूँ कि यह मुश्किल इम्तिहान जल्दी पूरा हो जायेगा और जिससे वह अपना काम करनेके लिए फिरसे आजाद हो जाये और आपसे और भी ज्यादा भरमानेवाली तारीफें पाये।

हाँ, पता नहीं, आपने तैरसीके नाम मेरा वह खत देखा है या नहीं जिसमें मैंने मजिस्ट्रेट द्वारा की जानेवाली तहकीकातके चौथे दिनके वाकयातका ब्योरा दिया है। आप जानते हैं कि "क्रॉनिकल" तकने मेरी तकरीरकी कितनी गलत रिपोर्ट दी थी, इसलिए आप शायद यह समझ सकते हैं कि ऐसे "नौसिखिये" अखबारनवीसोंकी रिपोर्टोंकी बिनापर किन्हीं मामलों और वाकयातके बारेमें अपनी राय कायम कर लेना कितना खतरनाक है, जो शार्टहैंड बिल्कुल नहीं जानते और जब बात बहुत रोचक और आकर्षक रूप धारण कर लेती है तब उसे देखने-सुननेमें इस कदर मशगूल हो जाते हैं कि अपने अखबारके लिए उसे लिख लेनेके कामकी उपेक्षा कर देते हैं। जिन दिनों मैं जेलमें नहीं था उन दिनों न तो इतना वक्त मेरे पास था और न इतना सब्र ही मुझमें था कि अपनी तकरीरोंकी रिपोर्टोंकी गलतियाँ हर रोज सुधारता चलता। अब चूंकि जेलकी जिन्दगीमें मुझे ज्यादा अवकाश मिलता है और कैदीका जीवन बितानेकी तैयारी करनेके लिए अधिक सब्रकी आदत डालना लाजमी हो गया है, इसलिए मैं इन गलतियोंको बिना ठीक किये नहीं रह सकता। लेकिन लोगोंको भी सिर्फ इसीलिए छपनेवाली हर बातको आँख मूंदकर सच नहीं समझ लेना चाहिए। जब मैंने अदालतकी चौथे दिनकी कार्यवाहीकी बिलकुल नाकाफी, गलत-सलत और पूरी तरह गुमराह करनेवाली रिपोर्ट पढ़ी तो मुझे लगा कि कुछ लोग तो हमें जरूर ही गलत समझेंगे, और तैरसीको लिखे पत्रमें मैंने जहाँ इस बातका जिक्र किया था कि "क्रॉनिकल"ने किस तरह मेरे बयानकी रिपोर्ट देनेमें दर्जनों जगह पूरेके-पूरे जुमले और पैरे ऊलजलूल ढंगसे धर दिये हैं, वहाँ वह हालात भी बयान किये थे जिनकी वजहसे अदालतकी शानमें "गुस्ताखी"की नौबत आई। लेकिन दरअसल हम "शरारत"पर "आमादा" नहीं थे। तीन दिनतक अदालतकी कार्यवाही बड़े आरामसे चलती रही और तीनों दिन अगर सरकारी वकीलकी निगाहमें हम इसीलिए गुनहगार ठहरे हों कि हमने "अपना बचाव" किया तो अलबत्ता अदालत भी हमपर "गुस्ताखी" करनेका इल्जाम लगा सकती है। लेकिन कठिनाई मौलाना हुसैन अहमद साहबके बयानसे शुरू हुई। अदालतने किसी योग्य दुभाषियेको बुलानेसे इनकार कर दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि

किचलू उर्दूमें बोलनेका आग्रह करते रहे, जब कि मजिस्ट्रेट दूसरे साथी-मुजरिमके बयानसे शुरुआत करना चाहता था, क्योंकि उसका कहना था कि उसके लिए दुभाषियेकी जरूरत नहीं पड़ेगी। अगले दिन माहौल बिलकुल बदल गया, हालांकि हमें इस बातका बिलकुल इल्म नहीं है कि रात-भरमें ऐसी कौन-सी बात हो गई, जिसने फिजांको बिल्कुल बदल दिया। "गुस्ताखी" अदालतने की। किचलूको बयान देते समय हर नये जुमलेपर टोका गया, और मजिस्ट्रेटने उनका बयान लिखनेसे इनकार कर दिया, हालांकि उनका बयान बिलकुल मेरे ही बयानकी तरह था। फिर वह शंकराचार्यसे इस बातकी जिद करने लगा कि अगर उनको कोई बयान देना है तो वे खड़े होकर दें, लेकिन शंकराचार्यने कह दिया कि धार्मिक कारणोंसे वे ऐसा नहीं कर सकते। इसी बातने मुझे मजबूर कर दिया कि मैं बिना गरम हुए मजिस्ट्रेटकी बातकी मुखालफत करूँ। मैंने उससे पूछा कि हिन्दुओंके बीच जिस धर्माधिकारी व्यक्तिका स्थान शंकराचार्यकी तरह ऊँचा हो, क्या आप उससे अदालतके अदब-कायदे मनवानेकी तब भी जिद करेंगे, जब ऐसा करनेमें उन व्यक्तिको उस कानूनकी अवहेलना करनी पड़े जिसे वह दैवी कानून मानता है। आप जिस कौमके हैं उस कौमके पुरखोंका भारतमें पुराना इतिहास यह है कि वे महज उस कानूनकी अवहेलना होनेके डरसे, जिसे वे दैवी कानून मानते थे, अपनी जन्मभूमि छोड़कर यहां आ बसे थे। ब्रिटिश अदालतका अदब कायम रखनेमें आपको इतना ज्यादा विश्वास है। क्या आप खुदाको नहीं मानते? अखबारमें सिर्फ मेरा यही प्रश्न-सूचक वाक्य छपा "क्या आप खुदाको नहीं मानते?" मेरी आरजू-मिन्नतके जवाबमें उसने किया यह कि मुझे गन्देसे-गन्दे लहजेमें बैठ जानेको हुक्म दिया। मैंने बैठनेसे इनकार जरूर किया, लेकिन यह कभी नहीं कहा कि "देखता हूँ, आप क्या कर लेते हैं।" मैंने यह कहा था कि आप ताकतका इस्तेमाल कर सकते हैं, लेकिन ऐसा कोई कानून नहीं है जो किसी मुजरिमको बैठनेके लिए मजबूर कर सके। बेचारे शौकतने मजिस्ट्रेटकी काफी मान-मनौती की, और यह गुजारिश की कि वह बयान देते वक्त उसे टोके नहीं, क्योंकि इससे वह बिलकुल गड़बड़ा जाता है। लेकिन स्पष्ट ही मजिस्ट्रेट इस बातपर बिलकुल आमादा था कि पिछले दिनके मेरे बयानकी तरहकी कोई बात रिकार्डमें न लिखी जाये या उन सहयोग करनेवाले और दूसरे लोगों द्वारा सुनी भी जाये जो अदालतमें मौजूद थे। जब मौलाना हुसैन अहमद साहबने अपना बयान शुरू किया तो न तो उसने अदालतके दुभाषियेसे उसका तर्जुमा कराया (जो पहले ही यह मान चुका था कि उसमें इस्लामी कानूनकी व्याख्याका तर्जुमा कर सकनेकी लियाकत नहीं है), न इस बातकी जरा-सी भी कोशिश की कि मौलाना जो-कुछ कह रहे थे उसे समझे। लिखा कुछ भी नहीं गया लेकिन इतना सब काफी नहीं था। यों तो उसने जो उपेक्षाका रुख अपना

रखा था, वही काफी चुभनेवाला था, लेकिन उसने उसके साथ-साथ एक या दो बार सीधे-सीधे तौहीन करनेवाली बातें भी कहीं, जैसे, "यहां पूरा 'कुरान' सुनानेकी कोई जरूरत नहीं है।" मौलाना निसार अहमद साहबके मुख्तसर-से बयानका हश्र भी कुछ अच्छा नहीं हुआ। और यह मजिस्ट्रेट कायदे-कानूनकी पाबन्दीकी तरफसे इतना लापरवाह था कि उसने मेरे बयानका बाकी हिस्सा, जो खुद उसीके कहनेपर मैंने शार्टहैंड-टाइपिस्ट मिलनेपर उसे लिखकर देनेका वादा किया था, देखे बिना ही हमें सेशन-सुपुर्द कर दिया। लेकिन असलमें यह सब-कुछ तो तमाशा-भर था, क्योंकि दूसरे ही दिन जब अभी सबूत पक्षकी ओरसे गवाहोंके बयान लेनेका काम आधा भी नहीं हो पाया था, उसने दो गवाहोंके नाम सम्मन जारी करनेके लिए सरकारी वकीलकी अर्जीपर यह हुक्म जारी कर दिया कि कार्यवाहीको व्यर्थ ही लम्बा करनेसे कोई फायदा नहीं है और इन गवाहोंको सेशन अदालतके सामने बुलानेसे काम चल जायेगा। मजिस्ट्रेट साहब काफी पहले ही अपनी राय कायम कर चुके थे! और २९ तारीखको जांच पूरी होनेसे पहले ही खुद जुडीशियल कमिश्नर सेशन अदालतके लिए हालका मुआयना करने आये और सरकारी वकीलके साथ अगली योजनाओंके बारेमें चर्चा करते रहे। जैसा मैंने अदालतसे कहा, यदि फांसीकी टिकटी तैयार करनेके लिए वे बढइयोंको भी भेज देते तो ज्यादा अच्छा होता! इस्लामी कानूनका जिक्र आते ही मजिस्ट्रेटका सब्र खत्म हो जाता और वह कहने लगता "इन फतवोंसे हमारा कोई सरोकार नहीं है।" शौकत इस कदर बौखला गया कि उसे उससे कहना पडा, "ऐसी छोटी-छोटी बातें मुझसे पूछनेसे क्या फायदा? मुझसे तो यह पूछो कि ऐसी हालतोंमें इस्लामी कानूनमें क्या व्यवस्था दी गई है।" लेकिन सब बेकार गया; यहांतक कि खुद शौकत तक ज्यादा देर जब्त नहीं कर पाया और "पूरे तमाशे पर" लानत देने लगा। लेकिन क्या आप यह यकीन कर सकते हैं कि इस तहकीकातके पूरे होनेके फौरन बाद जब मजिस्ट्रेट कुछ वक्तके लिए हटा तो वह फिरसे एक नया ही आदमी बन गया। 'शौकतके खिलाफ दूसरे मुकदमेमें और मेरे खिलाफ अगले मुकदमेमें वह फिर वैसा ही आदमी बन गया जैसा वह तीसरे दिन था। मैं यह नहीं बता सकता कि दूसरी बार यह कायापलट कैसे हुई। लेकिन आपको इस बातसे अदालत (जिसमें मुजरिम भी शामिल है) के "सामान्य" माहौलका अन्दाज हो जायेगा कि आखिरी दिन सरकारी वकीलने जल्दी-जल्दी मेरे पास आकर मुझसे कहा, "आपको एक बार फिर अदालतके सामने आनेमें तो कोई एतराज नहीं है? एक गवाहने गलत सबूत पेश कर दी है और मैं उसे दुबारा बुलाना चाहता हूँ।" मैं राजी हो गया और बोला, "आप जैसा कहें।" ओर जब खुफिया पुलिसके रिपोर्टरने दुबारा हलफ उठाकर यह कहा कि वह जो चीज दाखिल

कर रहा है वह मेरी तकरीर ही है तो मैंने मजिस्ट्रेटसे खुशी-खुशी कह दिया कि क्योंकि पहले एक दूसरे ही दस्तावेजको कसम खाकर मेरी तकरीरके नामसे दाखिल किया गया था, इसलिए मैं गलतबयानीके इल्जामपर मुकदमा चलानेकी मांग करनेका अपना अधिकार उठा रखता हूँ, तो मजिस्ट्रेटने भी उतने ही खुशनुमा तरीकेसे मेरा शुक्रिया-अदा कर दिया। असलियत यह है, जैसा कि हम सभी जानते हैं, मजिस्ट्रेट हमेशा स्वचालित यन्त्रकी तरह होता है (और उस घटनापूर्ण दिन मैंने उसे बता दिया था कि मुझे इस बातका बड़ा अफसोस है कि मेरे एक देशवासीको ऐसा गन्दा काम पूरा करनेके लिए इस्तेमाल किया जा रहा है), लेकिन मेरे बयानके दूसरे दिन वह बिलकुल "बँधा-बँधाया" सा आया। मुझे पता लगा है कि उसी दिनसे ऐसे लोगोंने भी, जिनसे उसे अपनी वफादारी और फरमाबरदारीके लिए शाबासी मिलनेकी उम्मीद थी, ऐसे ऐतिहासिक महत्वके मुकदमेको, जिसे नई व्यवस्थाके अधीन "इन्साफ"की मिसाल पेश करनेकी मंशासे चलाया गया था, कायदे-कानूनकी परवाह न करके बिगाड़ देनेपर उसके खिलाफ नाराजी जाहिर की है। इसलिए, स्थितिको जितना हो सके, सुधारनेके लिए इलाहाबादके रॉस एल्स्टन और आलिम आ रहे हैं और लाहौरसे एक योग्य दुभाषिया आ रहा है। लेकिन यह सब-कुछ तमाशा था और इसमें किसी भी बातसे सुधार नहीं हो सकता है। अपनी ओरसे गुस्ताखी करनेकी न कोई हमारी मंशा है और न हम शरारतपर आमादा हैं। न ही हम ऐसे ढोर बने रहना चाहते हैं जिन्हें जो जैसे चाहे हांक ले, और अहिंसा भी ऐसी नरमी नहीं मांगती। अभी तो हिंसाके हामियोंको बहुत-सी बातोंका जवाब देना है और बहुतसे मुसलमानोंकी आँखें तो फैसलेके उस दिन खुलेंगी जब खुद उनके मामलेमें "हिंसाकी वास्तविक सीमा एक बार फिर तय की जायेगी। परन्तु अहिंसावादियोंको भी अभी काफी बातोंका जवाब देना है और मुझे तो अभीसे दिखाई पड़ रहा है कि 'अहिंसाका देवदूत' अहिंसाके उन कमजोर समर्थकोंका भ्रम दूर करनेमें लगा हुआ है जो कायरताको अहिंसाका नाम देनेकी कोशिश करते हैं।"

और अब अलविदा। देवदास और छोटे बच्चोंको प्यार और 'बा'को स्नेहपूर्ण सलाम।

वह चेक खिलाफत-कोषके लिए ही भेजा गया होगा। मेरी माँ और बीवी-को किसी माली इमदादकी जरूरत नहीं है लेकिन हम ऐसे भिखारी हैं जो अपने उसूलके लिए सब-कुछ हज्म कर जायेंगे। खुद आपको हमारा प्यार-भरा सलाम।

हमेशा आपका,
मुहम्मद अली

मुझे यकीन है कि पाठक यह समझ लेंगे कि ऊपरका पत्र उनके सामने रखनेके अनेक कारण होंगे। मेरा अपना ख्याल है कि यह ऐसा भावपूर्ण दस्तावेज है जिससे मौलानाकी पूरी हस्ती उभर कर सामने आ जाती है। यह पत्र मजिस्ट्रेटको कुस्तुन्तन भेजे जानेकी अनुमति देनी पडी। मेरी यह इच्छा नही हुई कि मैं पत्रका एक हरूफ भी निकाल दूं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७–१०–१९२१

१५२. युवराजका सम्मान करें

इस लेखका शीर्षक देखकर पाठक आश्चर्य न करें। मान लीजिए युवराज एक ऊँचे पदपर आसीन आपके सगे भाई ही होते, मान लीजिए पडोसी लोग अपने नीच स्वार्थोकी सिद्धिके लिए उनका दुरुपयोग करनेको होते, यह भी फर्ज कीजिए कि वे मेरे पडोसियोके हाथोंमे होते, मेरी आवाज उनतक ठीकसे पहुँच नहीं पाती और उक्त पडोसी लोग उन्हे मेरे गाँव ला रहे होते, तो उनके प्रति सच्चा सम्मान क्या यह नही होगा कि उनसे नाजायज फायदा उठानेके सिलसिलेमे उनके 'सम्मान' में आयोजित समस्त समारोहोसे मैं अलग रहूँ और हर सम्भव तरीकेसे उन्हे यह जताऊँ कि लोग उनसे नाजायज फायदा उठाने जा रहे है? अगर मै अपने पडोसियो द्वारा बिछाये गये जालमे पांव रखनेके विरुद्ध उन्हे सचेत न करूँ तो क्या यह उनके प्रति धोखेबाजी नही होगी?

मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि युवराजकी यात्राका नाजायज फायदा उठाकर भारतमे ब्रिटिश शासनके "कल्याणकारी" रूपका प्रचार किया जा रहा है। और अगर महाविभव युवराजको उनके व्यक्तिगत आमोद-प्रमोद और क्रीडाके लिए लाया जा रहा है तो यह हमारे प्रति अन्याय है। इसके लिए यह अवसर सर्वथा अनुपयुक्त है। सर्वसाधारणका मन आज उस प्रणालीके प्रति असन्तोषकी भावनासे भरा हुआ है, जिसके अन्तर्गत उसपर शासन किया जा रहा है। खुलना और रायलसीमाके इलाकेमे अकाल पडा हुआ है और मलाबारमे सशस्त्र सघर्ष चल रहा है। भारतके प्रति यह अन्याय है कि सिर्फ एक तमाशेपर करोडो रुपये खर्च किये जाये जब कि करोडो लोग बहुत समयसे भुखमरीकी अवस्थामे रह रहे हो। इस तमाशेके लिए आठ लाख रुपये खर्च करनेकी स्वीकृति तो सिर्फ बम्बईकी कौसिलने ही दे दी है।

युवराजके आगमनपर उनका स्वागत करनेके लिए देशमे सर्वत्र दमनचक्रको गति दे दी गई है। सिन्धमे कोई छप्पन असहयोगी जेलोमे है। कुछ बहादुरसे-बहादुर मुसलमानोपर इसलिए मुकदमे चल रहे है कि उनके विचार अमुक ढगके क्यो है। बगालके उन्नीस कार्यकर्त्ताओको अभी हालमे जेल भेजा गया है। इनमे अपने वहाँके प्रमुख बैरिस्टर श्री सेनगुप्त भी है। एक मुसलमान पीर और तीन अन्य आत्मत्यागी कार्यकर्त्ताओको ऐसे ही "अपराध" पर जेल भेज दिया गया है। कर्नाटकके भी बहुतसे नेताओ

को जेल भेज दिया गया है, और अब उसके प्रमुख नेतापर महज वे ही बाते कहनेके कारण मुकदमा चल रहा है जो बाते मैं इन स्तम्भोमे बार-बार कहता आया हूँ और कांग्रेसी लोग भी सारे देशमे गत बारह महीनोंसे कहते आ रहे हैं। मध्य प्रान्तके भी बहुतसे नेताओंको इसी तरह जेलोंमे बन्द कर दिया गया है। डा० पराजपे जो एक अत्यन्त लोकप्रिय डाक्टर हैं और अपनी आत्मत्यागकी भावनाके लिए प्रसिद्ध हैं, किसी आम जरायमपेशा आदमीकी तरह कठोर कारावास भोग रहे हैं। और कोई यह न समझे कि जेल भेजे गये असहयोगियोंकी यह पूरी सूची है — और भी बहुत-से लोग हैं। इन लोगोंकी कैद चाहे असली अपराधकी द्योतक हो या बढते हुए असन्तोष-की, लेकिन युवराजके आगमनके बारेमे जो कमसे-कम कहा जा सकता है वह यह कि उनको यानाके लिए बहुत ही अनुपयुक्त अवसर चुना गया है। इस बातमे किसी तरहके सन्देहकी गुंजाइश ही नही है कि लोग नहीं चाहते कि इस समय युवराज यहां आयें। उन्होंने अपना मत स्पष्ट शब्दोंमे प्रकट कर दिया है। उन्होंने घोषित किया है कि जिस दिन युवराज बम्बईमें उतरें, उस दिन वहाँ हड़ताल की जाये। लोगोंके ऐसे तीव्र विरोधके बावजूद युवराजको यहाँ लाना लोगोंकी इच्छाके विरुद्ध किया गया कार्य है।

इन परिस्थितियोंमे हम क्या करे? हमे युवराजके सम्मानमे आयोजित सभी समारोहोंका बहिष्कार करनेका प्रयत्न करना चाहिए। इस उद्देश्यसे आयोजित सदाव्रतो, भोजों और जलसों तथा आतिशबाजियोंमे हमे सकल्प पूर्वक अलग रहना चाहिए। हमे विशेष प्रकाशकी व्यवस्था नही करनी चाहिए और न प्रकाशका आयोजन देखनेके लिए अपने बच्चोंको बाहर जाने देना चाहिए। इस उद्देश्यसे हमे करोडो पर्चे छापकर लोगोंके बीच बँटवाना चाहिए, और इस तरह उन्हे बताना चाहिए कि इस मामलेमे उनका क्या कर्त्तव्य है। जिस दिन युवराज बम्बईमे उतरे उस दिन अगर बम्बई बिल्कुल वीरान दिखाई दे तो यही उनका सच्चा सम्मान होगा।

लेकिन युवराजको व्यक्तिके रूपमे हमे अलग करके देखना है। व्यक्तिके रूपमे उनके प्रति हमारे मनमें कोई दुर्भावना नही है। वे शायद भारतकी भावनाके बारेमे कुछ भी नहीं जानते हो, उन्हे यहाँ चल रहे दमनचक्रकी शायद कोई जानकारी न हो। और उतना ही सम्भव यह भी है कि वे इस तथ्यसे अनभिज्ञ हो कि पंजाबका घाव अभी बिल्कुल हरा है, खिलाफतके मामलेमे भारतके साथ जो धोखेबाजी की गई उसकी स्मृति अब भी एक-एक भारतीयके हृदयमे ज्योंकी-त्यों बनी हुई है, और जैसा कि सरकारने खुद कहा, नई कौंसिलोके सदस्य यद्यपि कहनेको निर्वाचित सदस्य हैं, किन्तु दरअसल मतदाता सूचियोमे जिनके नाम दर्ज हैं, उनमे से चन्द लाख व्यक्तियो-का भी वे प्रतिनिधित्व नही करते! युवराजको शारीरिक रूपसे कोई क्षति पहुँचाने या ऐसी कोई कोशिश करनेका मतलब न केवल क्रूरता और अमानवीयता होगी, बल्कि ऐसा करके हम अपने-आपको और युवराजको धोखा देंगे, क्योंकि हमने स्वेच्छासे यह शपथ ली है कि हम अहिंसापर दृढ बने रहेंगे। अगर हम युवराजको जरा भी चोट पहुँचाते हैं या उनका अपमान करते हैं तो वह भारत और इस्लामके साथ इतना बडा अन्याय होगा जितना बडा कोई अन्याय अंग्रेजोंने भी इनके प्रति नही किया है।

वे लोग तो खैर इसके अलावा और कुछ जानते ही नही। लेकिन हम तो अज्ञानका ऐसा कोई बहाना नही कर सकते। हमने तो पूरी तरह सोच-समझकर ईश्वर और मनुष्यकी साक्षीमे यह प्रतिज्ञा की है कि जिस प्रणालीको नष्ट करनेके लिए हम हर-चन्द कोशिश कर रहे है, उस प्रणालीसे किसी भी तरहसे सम्बद्ध किसी भी व्यक्तिको हम कोई चोट नही पहुँचायेगे। इसलिए हमारा कर्त्तव्य है कि अपने ही शरीरकी तरह युवराजके शरीरकी सुरक्षाके लिए भी हम हर सम्भव सावधानी बरते।

हम जानते है कि हमारी सारी कोशिशके बावजूद ऐसे कुछ लोग अवश्य होगे जो किसी भी भय या आशासे अथवा अपनी मर्जीसे विभिन्न समारोहोमे शामिल होना चाहेगे। उन्हे भी अपनी इच्छाके अनुसार चलनेका उतना ही अधिकार है, जितना हमे है। हम जो स्वतन्त्रता प्राप्त करना चाहते है, हम जिसका उपभोग करना चाहते है, उस स्वतन्त्रताकी कसौटी ही यह है। तो यह मदान्ध नौकरशाही हमे जितना परेशान करना चाहे, करती रहे, पर हम अधिकसे-अधिक सयमसे काम लेते रहे। और अगर हम नौकरशाही द्वारा आयोजित तमाशोसे बिल्कुल अलग रहकर अपने इस दृढ निश्चयका परिचय देगे कि हमारा उनसे कोई सरोकार नही है, और साथ ही यदि हम अपनेसे भिन्न मत रखनेवालोके प्रति सहिष्णुता बरतेगे तो उनसे हमारा उद्देश्य बहुत कारगर ढगसे आगे बढेगा।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २७–१०–१९२१

१५३. असहयोगका रहस्य

इसमे कोई शक नही कि असहयोग एक ऐसी तालीम है जिससे लोकमत विकसित और एक स्पष्ट स्वरूप पाता जा रहा है। और ज्यो ही उसका इतना सगठन हुआ कि उसके द्वारा कारगर कदम उठाया जा सके, त्यो ही हमे स्वराज्य मिल जायेगा। हिसात्मक वायुमण्डलमे लोकमतका सगठन नही किया जा सकता। जिस प्रकार वे लोग जिन्हे मोपलोने बलपूर्वक कलमा पढाया, मुसलमान नही माने जा सकते, उसी प्रकार वे लोग भी, जो अपनेको शौकिया या मजबूरीसे असहयोगी कहते है, सच्चे असहयोगी नही है। वे सहायक नही, उलटे बाधक है। अगर लोगोपर हम अपनी इच्छा जबर्दस्ती थोपेंगे तो हमारा यह जुल्म इस नौकरशाहीके अगभूत मुट्ठी-भर अग्रेजोके जुल्मसे भी खराब होगा। इन अग्रेजोका जोर-जुल्म तो मुट्ठी-भर लोगोका जुल्म है, जो विरोधके बीच अपने अस्तित्वकी रक्षाके लिए लड रहे है। परन्तु हमारा जुल्म तो बहुसख्यक लोगो द्वारा थोपा गया होगा और इसलिए वह उस जुल्मसे ज्यादा बुरा और वाकई ज्यादा अधर्ममय होगा। अतएव हमे अपने आन्दोलनमे से हर किस्मके दबावको बिल्कुल निकाल देना चाहिए। अगर हम लोग केवल मुट्ठी-भर ही हो, परन्तु हो असह-योगके सिद्धान्तके पक्के पाबन्द, तो हमे विरोधी मतको अपने पक्षमे करते हुए चाहे प्राण गँवाने पडे किन्तु हम फिर भी सचमुच अपने उद्देश्यकी रक्षा कर सकेगे और

साथ ही उसके प्रतिनिधि कहे जा सकेंगे। किन्तु यदि हम लोगोको दवाव डालकर अपने दलमे शामिल करेंगे तो हम ऐसा करके अपने उद्देश्यको भ्रष्ट करेंगे ओर ईश्वरसे विमुख होगे। और यदि हमें इसमे सफलता मिली दिखे तो वास्तवमे हम एक अधिक वडी निरकुश सत्ताकी स्थापनामें ही सफल होगे।

अगर हम असहिष्णुता दिखाकर दूसरोको अपना मत प्रकट न करने देगे तो हम अपने उद्देश्यकी पूर्तिमे वाधा डालेगे। क्योकि उस अवस्थामे हम यह कभी न जान सकेगे कि कौन हमारे साथ है और कौन खिलाफ ह। इसलिए सफलताकी सवसे अनिवार्य शर्त यही है कि हम लोगोको अपनी राय ज्यादासे-ज्यादा आजादीसे प्रकट करनेके लिए ‍उत्साहित करे। हम अपने वर्तमान 'अधीश्वरो' से कमसे-कम इतना सवक तो सीख ही सकते हैं। उनकी दण्डसहितामे उन विचारोके लिए कडीसे-कडी सजाएँ रखी गई है जिन्हे वे पसन्द नही करते है। और उन्होने हमारे कुछ निहायत शरीफ देशभाइयोको महज इसलिए गिरफ्तार किया है कि उन्होने अपनी राय प्रकट की है। हमारा यह असहयोग उस शासन-प्रणालीका खुल्लमखुल्ला विरोधी है। अतएव हम खास इसी लडाईमे, जिसे हम मत-प्रकाशनकी पावन्दीके खिलाफ लड रहे है, खुद ही दूसरोकी रायपर उस पावन्दीको लगानेका अपराध न करे। इन विचारोके प्रकट करनेका कारण यह हे कि जव कोई सज्जन हमारे मतके प्रतिकूल अपनी राय प्रकट करते है तव उनका नाम प्रकाशित करनेमे मुझे वडी वेचैनी मालूम होती है। मै इन लोगो-को उन पाठकोकी मानसिक हिसाका भाजन नही वनाना चाहता जो उनके मतोको पसन्द न करते हो। हमको इतना साहस और उदारता अवश्य रखनी चाहिए कि हम खुद अपने प्रति तथा अपने विपयमे कही गई तमाम गन्दी वातोको सुन और पढ सके। इससे हमे उनके विचारोको वदलनेका मौका मिलता है। मुझे एक पत्रलेखकने एक वहुत वडी प्रश्न-सूची भेजी हे, मै यह प्रयत्न इस पत्रलेखकसे ही आरम्भ करना चाहता हूँ। प्रश्न हमारे प्रचलित आन्दोलनके सम्वन्धमे किये गये है और सार्वजनिक रूपसे चर्चा किये जानेके योग्य है। लेखकने आरम्भ इस प्रकार किया हे—

आप इस वातको स्वीकार करेगे कि आपको माननेवाले और न माननेवाले दोनो तरहके लोग आपकी राजनैतिक हलचलोके उद्देश्यके सम्वन्धमें अनिश्चयकी अवस्थामें है। इसलिए क्या आप नीचे लिखे प्रश्नोका उत्तर देकर उनका भ्रम दूर करनेकी उदारता दिखायेंगे?

१ क्या आप वाकई महात्मा है?

मुझे तो नही मालूम होता कि मै महात्मा हूँ। हाँ, यह मै जरूर जानता हूँ कि मै ईश्वरकी सृष्टिका एक अति विनम्र जीव हूँ।

२ अगर आप महात्मा है तो क्या आप "महात्मा" शव्दकी परिभाषा वतायेंगे?

किसी महात्मासे मेरा परिचय नही, अत मै उनकी परिभापा नही वता सकता।

३. अगर आप महात्मा नही है तो क्या कभी आपने अपने अनुयायियोसे कहा है कि 'मै महात्मा नही हूँ।'

ज्यो-ज्यो मै इसके खिलाफ आवाज उठाता हूँ त्यो-त्यो उसका प्रयोग बढता जाता है।

४ क्या साधारण जनता आपके 'आत्म-बल' को प्राप्त कर सकती है?

उसके पास तो वह बल पहले ही बहुतायतसे है। एक दफा फारिसी वैज्ञानिकोका एक दल ज्ञानकी खोजमे निकला और घूमता-फिरता भारत आ पहुँचा। दलके सदस्योने अपनी अपेक्षाके अनुसार उस ज्ञानको विद्वन्मण्डलीमे खोजनेका भगीरथ प्रयत्न किया, परन्तु वे इसमे कृतकार्य न हुए। पर उन्हे वह अचानक एक चमारके झोपडेमे मिल गया।

५. आप कहते है कि ये 'यन्त्र' तो सभ्यताके लिए अभिशाप सिद्ध हुए है। तब आप रेलगाडी और मोटरमें क्यो सफर करते है?

कुछ बाते ऐसी है जिनके फन्देसे, प्रयत्न करते हुए भी, एकबारगी नही छूट सकते। मेरा यह पार्थिव ढाँचा जिसमे मै बन्द हूँ, मेरे जीवनमे अनेक परेशानियो और चिन्ताओका कारण है, परन्तु मै उनको सहन करनेके लिए और, जैसा आप जानते है, उनके आगे झुकनेके लिए भी मजबूर हूँ। परन्तु क्या आपको वास्तवमे इस बातमें शक है कि 'इस पिछले महायुद्धमे जो आयोजित नर-संहार हुआ उसका कारण यह 'यन्त्र-युग' ही है?' विषाक्त गैस तथा अन्य दूषित वस्तुओसे हमारी एक इंच भी प्रगति नही हुई है।

६ क्या यह बात सच है कि पहले आप रेलगाडीमें तीसरे दरजेके डिब्बेमें बैठकर यात्रा करते थे और अब आप स्पेशल गाडीमें और पहले दरजेके डिब्बेमे बैठकर चलते है?

अफसोस! आपको यह सही खबर मिली है। स्पेशल गाडियोका कारण तो यह महात्मापन है और दूसरे दर्जेके डिब्बोतक पहुँचनेके अधःपतनका कारण यह पार्थिव कलेवर।

७ काउंट टॉल्स्टॉयको आप किस दृष्टिसे देखते है?

मै उनको अत्यन्त आदरकी दृष्टिसे देखता हूँ और अपने जीवनकी कितनी ही बातोके लिए मै उनका ऋणी हूँ।

८ आप स्वराज्यकी व्याख्या क्यो नही करते? क्या आप यह नहीं समझते कि कमसे-कम अपने अनुयायियोके लिए तो आप इस शब्दकी व्याख्या करनेके लिए बाध्य है?

पहले तो, यह शब्द ऐसा नही है जिसकी व्याख्या की जा सके। दूसरे, अगर प्रश्नकर्त्ता 'यंग इंडिया' की फाइल देखेंगे तो उसमे उनको उसकी व्यावहारिक व्याख्या मिल जायेगी। तथापि मै यहाँ दूसरी व्याख्या करनेका प्रयत्न करता हूँ। स्वराज्यका अर्थ है — मत प्रकट करनेकी और कार्य करनेकी ऐसी पूरी आजादी जिससे दूसरेके

मत-प्रदानके और कार्य करनेके अधिकारमें हस्तक्षेप न होता हो। इसलिए इसका अर्थ यह है कि आमदनीके तमाम साधनों और खर्चपर हिन्दुस्तानका पूरा नियन्त्रण रहे और दूसरे देश उसके काममें हस्तक्षेप न करे और वह भी दूसरे देशोंके काममें हस्तक्षेप न करे।

९ जब स्वराज्य प्राप्त हो जायेगा तब आप क्या करेंगे?

मैं तो निश्चय ही बहुत लम्बी छुट्टी लेना पसन्द करूँगा और वह शायद बिलकुल उचित भी होगी।

१० स्वराज्य प्राप्त हो जानेपर मुसलमानोंके राजनैतिक और धार्मिक हितोंकी रक्षा किस तरह की जायेगी?

उनके लिए किसी तरहकी रक्षाकी जरूरत नहीं रहेगी, क्योंकि हरएक हिन्दुस्तानी दूसरे हिन्दुस्तानीकी तरह ही आजाद रहेगा और उस हालतमें परस्पर सहिष्णुता, सम्मान और प्रेम होगा, इसलिए परस्पर विश्वास भी होगा।

११ क्या आप सचमुच यह मानते हैं कि १९२१के अक्तूबरकी ३१ तारीखतक या इस सालमें जो दिन आप मुकर्रर कर दें, उस दिन सरकार अपना बोरिया-बिस्तरा बांधकर हिन्दुस्तानसे रवाना हो जायगी?

सरकार तो एक प्रणाली है और मैं जरूर यह मानता हूँ कि अगर भारतके हिन्दू, मुसल्मान, सिख, पारसी, ईसाई और यहूदी चाहें तो वह ३१ अक्तूबरसे पहले भी नष्ट की जा सकती है। मैं तो अब भी यह आशा करता हूँ कि वे इस वर्षके समाप्त होनेके पहले ही उसका नाश कर देंगे। लेकिन उस नई शासन-प्रणालीमें किसी भी अंग्रेजको, जो हिन्दुस्तानमें उसका वफादार नौकर बनकर रहना चाहेगा, हिन्दुस्तान छोड़नेकी जरूरत नहीं होगी।

१२ क्या आप ऐसा खयाल नहीं करते कि सरकार इतनी कमजोर है कि वह आपके आन्दोलनको नहीं रोक सकती?

हाँ, मैं जरूर ही ऐसा मानता हूँ और वह दिनपर-दिन कमजोर होती जा रही है।

१३ अगर खुद आपके लड़केपर (ईश्वर न करे) राजद्रोहका नहीं, बल्कि खूनका मुकदमा चलाया जाये, तो क्या आप उसको बिना सफाईके ही रहने देंगे?

हाँ, वाकई मुझे भरोसा है कि ऐसा करनेका साहस मुझमें है। मैंने अपने कितने ही प्रिय मित्रोंको ऐसी सलाह देनेकी कठोरता की है। और मैं आन्ध्र जिलेके अपने एक प्रिय मित्रको यह सलाह दे भी चुका हूँ कि वे अपने दीवानी मुकदमेमें, जो उनपर केवल राजनैतिक द्वेषके कारण दायर किया गया है, हर्गिज सफाई न दें, चाहे उनकी तमाम कीमती जायदाद भी क्यों न चली जाये।

१४ अगर कोई व्यक्ति (मिसालके तौरपर) आपके लड़केके कुछ रुपये धोखा देकर ठग ले और रफूचक्कर हो जाये तो वह क्या करेगा?

मेरा लड़का अगर अच्छा असहयोगी है, तो निश्चय ही उन रुपयोंको उस चोरके पास छोड़ देगा। नौ महीने पहले मौलाना शौकत अलीके ६००) किसीने चुरा लिये

थे। वे चुरानेवाले शख्सको जानते भी थे। परन्तु उन्होंने उस रुपयेका खयाल ही छोड दिया।

१५. आपके सत्याग्रहका पजाबपर क्या असर हुआ है?

सर माइकेल ओ'डायर सत्याग्रहके सन्देशको पजाबमें नही पहुँचने देना चाहते थे। इससे कुछ पजाबी लोग उत्तेजित हो गये और कुछ लोग अपनेको काबूमें न रख सके। सर माइकेल ओ'डायर तो उनसे भी ज्यादा भडक उठे। और उन्होंने अपने सहायकके द्वारा बे-गुनाह लोगोंकी हत्या करवा डाली। लेकिन सत्याग्रह तो एक बडी पौष्टिक दवा है और अब पजाबमे वैसी ही सजीवता दिखाई देती है जैसी भारतके दूसरे प्रान्तोमे है और वहाँके लोगोंके मिजाज तेज होते हुए भी वहाँ ऐसा आत्मसयम दिखाई दे रहा है, जो दूसरे प्रान्तोंके लिए स्पृहणीय है।

१६ क्या आप वाकई मानते हैं कि यह असहयोग शान्तिमय बना रह सकता है?

जरूर। सिन्ध, कर्नाटक और पूर्व-बगालमे, गिरफ्तारियोंके समय और उसके बाद भी लोगोंने जो आश्चर्यजनक सयम दिखाया है वह इस बातका नमूना है।

१७. हिन्दुओको बलात् मुसलमान बनाने और उनके घरोमें लूटपाट मचानेका हिन्दू-मुस्लिम एकतापर क्या प्रभाव पडा है?

इससे हिन्दुओके धैर्यको गहरा धक्का पहुँचा है, परन्तु उन्होंने उसे सहन कर लिया है। उनके धीरजका ज्योका-त्यो बना रहना साबित करता है कि इस एकताका आधार ज्ञान है। मोपलोकी इस धर्मान्धताको कोई भी मुसलमान अच्छा नही कहता।

१८. मलाबारमें हिन्दुओ और मुसलमानोकी एकतामें जो यह भग हुआ है उसका वास्तविक कारण क्या है?

जहाँ उत्पात हुआ है वहाँ एकताका भग नही हुआ। मोपले आजतक कभी हिन्दुओको अपना भाई नही समझ सके थे। उत्पातके वे ही कारण हैं जो १९१९ मे पजाबमे थे। मलाबारमे असहयोगका सन्देश अभी बिलकुल अनिश्चित रूपसे ही पहुँच पाया था तभी अधिकारियोने उसकी गति बन्द कर दी। मोपले मलाबारके हिन्दुओके साथ कभी खास तौरपर मेल-जोलसे नही रहे। वे पहले भी उन्हे लूट चुके हैं। इस्लामके सम्बन्धमे उनकी कल्पना बडी अपरिपक्व है। सरकारने उन्हे बिलकुल अँधेरेमे रखा था और मुसलमानो और हिन्दुओने भी उनकी हालतपर कभी ध्यान नही दिया था। वे स्वभावके उग्र और वीर हैं, परन्तु अज्ञानी है। इससे उन्होने खिलाफतके ध्येयको समझनेमे गलती की और यह बेरहमीका जगली एव धर्म-विरुद्ध काम कर डाला। मोपलोके इस वर्तमान व्यवहारको देखकर इस्लाम या भारतके शेष मुसलमानोके बारेमे निर्णय करना अनुचित होगा।

१९ क्या आप बता सकते है कि आपने खिलाफत और पजाबके अत्याचारोका जो गठ-बन्धन किया, उसका क्या कारण है?

खिलाफतके अन्यायका जन्म पजाबके अत्याचारोसे पहले हुआ है और मैंने उस प्रश्नको १९१८ मे दिल्लीकी युद्ध-परिषद्में अपना प्रश्न बनाया। (वाइसरायके नाम

मेरी खुली-चिट्ठी देखिए)[1] असहयोगकी वात पजावके अन्यायको निश्चित स्वरूप मिलनेके पहले १९१९ मे ही दिल्लीमे उठ चुकी थी। जब यह वात साफ हो गई कि पजावके अत्याचारोके लिए तेज इलाजकी उतनी ही जरूरत है जितनी कि खिलाफतके लिए है, तब दोनोका गठवन्धन कर दिया गया।

२० क्या आप वता सकते हैं कि जब दूसरे मुसलमानी देशोके मुसलमान खिलाफतकी चिन्ता करते दिखाई नहीं देते तब भारतके ही मुसलमान क्यो इतना जोश दिखाते हैं?

मै यह वात नही जानता कि भारतके वाहरके मुसलमान खिलाफतकी चिन्ता नही करते, परन्तु अगर वे उसकी चिन्ता नही करते और भारतीय मुसलमान करते हैं तो मै तो इसे इस वातका सबूत समझता हूँ कि भारतके मुसलमानोमे वाहरी मुसलमानोकी अपेक्षा धार्मिक चेतना अधिक विकसित हुई है।

२१ टर्कीके सुलतानने मुसलमानोके तीर्थस्थानोकी रक्षा नहीं की, क्या तब भी वे खलीफा माने जानेका हक रखते हैं?

इस सवालका जवाव देना एक हिन्दूके लिए ठीक नही है। तथापि अगर मै उत्तर देनेकी धृष्टता करूँ तो तुर्कोने खिलाफतकी रक्षा सैकडो वर्षोतक वडी दिलेरीसे की है और इसीलिए उसपर उनका अधिकार है। सुलतानने चाहे गफलत की हो, परन्तु तुर्कोने तो नही की है। खिलाफत आन्दोलन किसी व्यक्तिके लिए नही किया जा रहा है, वल्कि एक भावनाके लिए किया जा रहा है। इसमे उसके भौतिक, आध्यात्मिक और राजनैतिक तीनो रूप आ जाते हैं। यदि तुर्क उसकी रक्षा नही कर सकते, और दुनियाके मुसलमान अपने मत-वल या सक्रिय सहानुभूतिसे तुर्कोका साथ नही देते तो इसमे दोनोकी ऐसी क्षति होगी कि फिर उसकी पूर्ति कभी नही हो सकेगी। और अगर ऐसा हुआ तो यह सारे ससारके लिए एक घोर विपत्ति होगी, क्योकि मेरा यह विश्वास है कि इस्लाम भी दुनियामे अपना वैसा ही स्थान रखता है जैसा कि ईसाई-धर्म तथा दूसरे मजहव रखते है। शूरताका तकाजा है कि इस विपत्तिके मौकेपर तुर्कोकी सहायता की जाये।

२२ क्या अर्थशास्त्रका यह नियम गलत है कि मनुष्यको अच्छीसे-अच्छी और सस्तीसे-सस्ती चीजें ही खरीदनी चाहिए?

आधुनिक अर्थशास्त्रियोका यह सिद्धान्त एक अत्यन्त निष्ठुर सिद्धान्त है। हम सदा किसी ऐसे स्वार्थपूर्ण विचारसे मानवीय व्यवहार चलाते भी हैं। (मिसालके तौरपर) एक अग्रेज कोयलेकी खानमे इटलीके कम मजूरी लेनेवाले मजदूरको छोडकर अग्रेज मजदूरको ही नौकर रखता है और उसे ज्यादा मजूरी देता है। (और यह ठीक भी है)। इग्लैडमे सस्ते मजदूर लानेकी जरा भी कोशिश करनेसे अवश्य ही क्रान्ति हो जायेगी। किसी ज्यादा वेतन पानेवाले परन्तु वफादार नौकरको इसलिए निकाल देना कि दूसरा उससे अच्छा और सस्ता नौकर मिल सकता है, मेरी नजरमे

१ देखिए खण्ड १६।

तो पाप है, चाहे यह दूसरा नौकर उतना ही वफादार भी क्यो न हो। जो अर्थशास्त्र नैतिकता और मानवकी भावनाका खयाल नही करता वह एक ऐसे मोमके पुतलेकी तरह है जो दिखाई तो सजीव देता है, परन्तु जो होता निर्जीव है। जब-जब ऐसा आनबानका अवसर उपस्थित हुआ है तब-तब अर्थशास्त्रके ऐसे नये बने नियम व्यवहारमे टूटे है; और जो राष्ट्र या व्यक्ति उन्हे अपने व्यवहारके मूलभूत सिद्धान्त मानेगे, उनका अवश्य सर्वनाश होगा। मुसलमान लोग अपनी धर्म-विधिके अनुसार पकाये खानेको ज्यादा कीमत देकर लेते है और हिन्दू लोग उस भोजनको नही ग्रहण करते जो शुद्ध और पवित्र विधिसे न बनाया गया हो। दोनोके उस संयममे जरूर कुछ अच्छाई है। हम जब इग्लैड और जापानका सस्ता कपडा खरीदने लगे, तभी चौपट हो गये। अब हममे तभी जान आ सकती है जब हम उसी कपडेको जिसे हमारे पडोसियोने अपनी झोपडियोमे तैयार किया है, खरीदना वर्गत आवश्यक समझे।

२३ क्या 'धरना देना' अहिसात्मक है?

अधिकाश जगह वह अवश्य ही शान्तिमय रहा है। धरना देनेमे हिंसाका आश्रय लेना अत्यन्त आसान बात तो है, परन्तु स्वयसेवकोने सब जगह बहुत ही सयमसे काम लिया है।

२४. जब कि देशमें कितने ही लोग अर्धनग्न रह रहे हैं और अगले जाडेके खयाल-मात्रसे थरथर कॉप रहे हैं, तब क्या आप कपडोकी होलियाँ जलानेमें (आध्यात्मिक अथवा अन्य प्रकारकी) अच्छाई लोगोको बताते है?

हाँ, बताता हूँ, क्योकि मै मानता हूँ कि उनकी अर्धनग्नताका कारण हम भारतीयो द्वारा जीवनके इस मूलभूत सिद्धान्तकी अक्षम्य अवहेलना करना कि "जिस प्रकार हम अपने ही घरका पका खाना खाते है उसी प्रकार हमे अपने ही हाथके कते सूतका कपडा भी पहनना चाहिए।" अगर मै उन्हे अपनी विदेशी उतारन दूं तो इससे उनकी व्यथाकी अवधि और भी बढ जायेगी। लेकिन इन होलियोसे उत्पन्न होनेवाली गरमी अगले जाडेतक ठहरेगी और अगर ये होलियाँ बराबर तबतक जलती ही रही जबतक कपडेका अन्तिम टुकडा नही जल जाता, तो वह गरमी चिरस्थायी हो जायेगी और हम देखेगे कि आगे आनेवाले हर जाडेमे यह देश क्रमश अधिकाधिक शक्तिमान होता जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७-१०-१९२१

१५४. हिन्दू शास्त्रोमे अस्पृश्यता

ऊपर जो पत्र[1] दिया गया है मै उसे प्रसन्नतापूर्वक प्रकाशित करता हूँ ताकि 'यग इडिया' के पाठकोको दूसरे पक्षकी जानकारी भी मिल सके। श्री अय्यर एक विद्वान् वकील है, और उनसे अपेक्षा तो यह है कि अपने पत्रमे उन्होने मेरी स्थिति-की जानकारीका जैसा परिचय दिया है उससे वह ज्यादा अच्छा होना चाहिए था। मद्रास प्रान्तमे मेरे जो भाषण हुए उनमे मैने इस बातपर जोर दिया था कि अस्पृश्यो-के विरुद्ध विवेकहीन ओर निर्दयतापूर्ण द्वेषभाव दिखाया जाता है। हमारी माताएँ और बहने जब 'अस्पृश्य' होती है तब हम उनसे जैसा व्यवहार करते है क्या हम वैसा ही व्यवहार "अस्पृश्य" पचमोसे भी करते है? मै अब भी यह स्वीकार करता हूँ कि मैने पण्डितोकी तरह शास्त्रोका अध्ययन नही किया है किन्तु मै हिन्दूधर्मके रहस्यको समझनेका दावा करता हूँ। और मै पूर्ण विनम्रतासे किन्तु पूरी शक्तिसे कहना चाहता हूँ कि अस्पृश्यता अपने उस रूपमे जिसमे हम उसे कायम रखते आये है और रख रहे हैं, हिन्दूधर्मके लिए एक गम्भीर कलक हे। वह 'स्मृतियो'के अवाछनीय दुरुपयोगकी सूचक है और सबके प्रति प्रेम-भाव, जो हिन्दूधर्मका आधार है, उसके विपरीत है। इसलिए मै अस्पृश्यताके वर्तमान रूपको राक्षसी कृत्य कहनेमे नही झिझकता। मै श्री अय्यरसे कहता हूँ कि वे अपनी ईश्वर-प्रदत्त प्रतिभाका उपयोग अपने बहिष्कृत देशवासियोकी सेवामे करे ओर मै उन्हे विश्वास दिलाता हूँ कि हिन्दू शास्त्रोमे मानवजीवनका जो अर्थ मुझे दिखाई दिया हे वही उनको भी दिखाई देगा।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २७–१०–१९२१

१५५. पत्र: मथुरादास त्रिकमजीको

२७ अक्तूबर, १९२१

यदि मैने षड्रिपुओको जीत ही लिया हो तो मैं जो करता हूँ उसे लोग अनु-भव-वाक्य मानकर स्वीकार कर लेगे। लेकिन स्वय मुझे ऐसी विजय प्राप्त करनेकी कोई प्रतीति नही है। अभी क्या मैने सर्पादिके भयको छोड दिया है? नही छोडा है, यह बात मेरी आत्माकी मूर्च्छितावस्थाकी द्योतक है।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

१ यह पत्र, जो **यग इडिया**के २०–१०–१९२१ और २७–१०–१९२१ के अकोमें प्रकाशित हुआ था, आर० कृष्णस्वामी अय्यरने अस्पृश्यताका समर्थन करते हुए लिखा था। उन्होने **मनुस्मृति** और अन्य शास्त्रोका उद्धरण देते हुए अपनी बात सिद्ध करनेकी कोशिश की थी। पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

१५६. भाषण : अहमदाबादमें स्वदेशीपर

२९ अक्तूबर, १९२१

भाइयो और बहनो,

आज मुझे एक भी शब्द नही कहना है। मैं नये शब्द ढूंढ भी नही सकता। मेरी मानसिक स्थिति मुझे कही भी भाषण देने अथवा जुलूसमें भाग लेनेके लिए जानेकी अनुमति नही देती और फिर बम्बई, अहमदाबाद अथवा गुजरातमें मुझे भाषण देने अथवा जुलूसमे भाग लेनेके लिए जानेकी जरूरत भी क्या है?

मैं गुजरातमे रहता ही नही ऐसा जानकर ही आप लोगोंको काम करना चाहिए। अगर अभी भी गुजरातके लोगोंको मुझसे बल प्राप्त करनेकी आवश्यकता जान पड़ती हो तो मुझे स्वीकार करना चाहिए कि इस वर्ष स्वराज्य नही मिलेगा। स्वराज्यका अर्थ ही यह है कि गुजरात अपने पाँवपर खड़ा हो और मुझे भी भूल जानेके लिए तैयार हो। बालक अथवा वृद्ध, सब ऐसी निर्भयताका प्रदर्शन करे कि अच्छे और बड़ेसे-बड़े व्यक्ति भी अगर जेल चले जाये अथवा उनका पतन हो जाये तो भी वे डरे नही और कहे कि गाधी द्वारा शुरू की गई यह लड़ाई अब हमारी है, भले ही वह पागल हो गया हो और उसकी बुद्धि भ्रान्त हो गई हो लेकिन हम तो वैसा कदापि नही करेगे। जब ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाये तभी स्वराज्य हुआ कहा जा सकता है।

मुझे जब यहाँ आनेके लिए कहा गया तब मैंने कहा कि वल्लभभाईसे पूछो। मैं तो इस नेताकी इच्छाके अधीन हूँ। मुझे आज यहाँ बोलना है अथवा नहीं, इसकी खबर तो उस नेताको ही है जो आज सारे गुजरातको हिला रहा है। उनकी इच्छाकी अवगणना करके मैं कभी कोई काम नही कर सकता। मैं उन्हे सलाह दे सकता हूँ, उनके सामने सुझाव रख सकता हूँ, लेकिन उनकी इच्छाके विरुद्ध जाकर मैं कोई काम नही कर सकता। किसीका भी विश्वास न करना, यह बुद्धिका पहला लक्षण है लेकिन किसीका विश्वास करनेके बाद तो सब-कुछ उसीपर छोड देना चाहिए, इसके बाद नुक्ताचीनी करते रहनेसे काम नही चलेगा।

और तो मैं आज आपसे क्या कहूँ? मुझे जो कहना था सो तो मैंने इतनेमे ही कह दिया। भट्टी सुलगाना मुझे अच्छा लगता है। आप मुझसे भले किसी भी भट्टीमे दियासलाई लगानेको कहे तो मैं लगा दूँगा। मैं अहिंसावादी हूँ। मेरी रग-रगमे अहिंसा और प्रेम समाया हुआ है। किसीका अनिष्ट करनेकी मेरी इच्छा नही है। मैंने कभी किसीका बुरा नही चाहा है, कभी किसीको मारनेका विचार नही किया है। मैं अहिंसावादी हूँ तथापि विदेशी कपडे जलाना मुझे प्रिय है क्योकि जब हम विदेशी कपडा जलाते है तब हम पाप नही करते बल्कि आत्मशुद्धि करते है। नहाने, खाने अथवा रसोई बनानेमे भी पाप तो है। उसी प्रकार विदेशी कपडे जलानेमे पाप भले ही हो, लेकिन आज इसके बिना काम नही चल सकता। श्वासोच्छ्वास लिए बिना,

पानी गिरे बिना अथवा भोजन बनाये बिना गुजारा नहीं होता — ये सब तो अनिवार्य है, ऐसा समझकर हम पाप करते हुए भी ये सब काम करते ही हैं। हिन्दू तो शरीरके बन्धनसे छूट जाना भी पसन्द करते हैं, लेकिन इसके लिए कोई आत्महत्या नहीं करता।

आज गुलामीकी जंजीरको तोड़नेके लिए इसके सिवा अन्य कोई रास्ता नहीं है। हम तो उसे, सम्भव हो तो स्वदेशीके बिना भी तुरन्त तोड़ डालना चाहेंगे। लेकिन यह कैसे हो सकता है? खुद गुजरातके प्रमुख नगरमें ही जबतक कुछेक भाई और बहन विदेशी मलमलके बने कपड़े पहनकर जुलूसमें अथवा सभामें आनेका साहस रखते हैं, तबतक यह बात कैसे हो सकती है? मिलके कपड़े भी कोई हमारे लिए नहीं, वरन् गरीबोंके लिए हैं। मिलके कपड़ोंको अपने लिए रखकर अगर हम गरीबोंको खादी देने जायेंगे तो वे हमसे पूछेंगे, "आप क्यों खादी नहीं पहनते? हमें मोटी खादी देते हो और आपका तो अच्छी और महीन मलमल, जगन्नाथी और केलिकोके बिना नहीं चलता।" मैं कह चुका हूँ कि जिसे गरीबोंकी सेवा करनी है उसे शृंगार-भावना त्याग कर देना चाहिए। उस समय ऐसी स्थिति आयेगी कि गरीब दलील पेश नहीं कर सकेगा, वह मिलका कपड़ा नहीं मांगेगा। वह शर्मिन्दा होगा और कहेगा कि हमें भी खादी दो।

लेकिन अहमदाबादमें तो हजारों स्त्रियाँ और पुरुष अब भी विदेशी कपड़े पहनते हैं। हमारी अशिक्षित स्त्रियोंके दिलमें तो अनेक विचित्र भावनाएँ उठती रहती हैं, उदाहरणके लिए वे सोचती हैं कि अगर हम आजतक पहने वस्त्रोंको जला देंगी तो वह अपशकुन होगा। भला मैलको जलानेमें क्या अपशकुन हो सकता है? मैलका संग्रह भी कैसे किया जा सकता है? धर्मको उलटी दृष्टिसे देखनेका ही यह परिणाम है। घरमें सड़े हुए अनाजका संग्रह नहीं किया जाता, तो फिर जो विदेशी कपड़ा हमारी गुलामीका परिचायक है उसका संग्रह भी कैसे किया जा सकता है?

अब हमारे सामने पूरे दो महीने भी नहीं रह गये हैं। दिसम्बरकी २५ तारीखको कांग्रेसका अधिवेशन होगा। अगर उस समयतक हम स्वराज्यके झंडेको न फहरा सकें तो कांग्रेस बुलाना किस कामका? यह कार्य हम किस तरह कर सकते हैं? मैंने वल्लभभाईसे कहा कि चित्तरंजन दासने कांग्रेसकी अध्यक्षताको स्वीकार करनेका तार नहीं दिया, उसका कारण है। वह बंगालको शर्मिन्दा करना चाहते हैं। वे बंगालसे कह रहे हैं कि "आप मुझे बंगालसे दूर भारतके पश्चिमी छोरको भेज रहे हैं, तो वहाँ जाकर मैं क्या हिसाब दूंगा? मैं बंगालको शर्मिन्दा नहीं करना चाहता। समस्त भारतने कांग्रेसके अध्यक्ष-पदके लिए बंगाली को चुना है, इसका क्या कारण है? वह कारण यही हो सकता है कि बंगालमें कुछ तो ऐसा होगा, जिससे बाहर भी उसकी कीमत आँकी जाती है?" देशबन्धु दास इस तरह बंगालसे विनती कर रहे हैं। उनका तार भेजना [या न भेजना] इस बातपर निर्भर है कि लोग उनकी इस विनतीका क्या उत्तर देते हैं।

जिस तरह अली-भाई अमृतसरकी कांग्रेसमें अन्तिम क्षणोंमें हाजिर हो सके थे उसी तरह अगर हम अहमदाबादकी कांग्रेसमें अली-भाई, मौलाना मुजद्दिद और अन्य

लोग जो जेल जानेकी तैयारीमे है अथवा जा चुके है — ऐसे सब असहयोगियोका स्वागत नही कर सकते तो हमारा कांग्रेसका आयोजन करना किस कामका?

जैसा कि मैने बम्बईमे कहा है, अगर यह होली हृदयमे सुलग रही होलीकी परिचायक है तो अच्छी है। बालक जिस तरह पटाखे चलाकर खुश होते है अगर हम भी उसी तरह होली जलाकर खुश हो तो उससे हमे क्या हासिल हो सकता है? अगर ऐसा हो तो यह होली व्यर्थकी ज्वाला है, निरा उन्माद है। लेकिन अगर यह हृदयमे सुलगती होलीकी परिचायक है तो मै पूछूँगा कि आज जो बहने इस सभामे विदेशी कपडे पहनकर आई है, क्या वे ऐसा साहस कर सकती थी?

घरकी रोटी मोटी-पतली, चाहे कैसी भी क्यो न हो, खाकर जिस तरह लोग सन्तुष्ट होते है उसी तरह जब बहने मोटी-महीन जैसी मिले वैसी, खादी पहनने लगेगी और मुझसे पूछेगी कि मुहम्मद अली और शौकत अली क्यो नही छूटे, अन्य योद्धा क्यो नही छूटते, स्वराज्य क्यो नही मिलता, तब मै कहूँगा कि स्वदेशीमे अब कुछ दम नही है। तब मै आपको कोई और उपाय बताऊँगा। आज तो हिन्दुस्तान, गुजरात अथवा अहमदाबादमे कोई मुझसे प्रश्न नही कर सकता।

हममे खूब जागृति आ गई है, खादीका उपयोग भी बहुत बढ गया है, यह सब सही है, लेकिन अगर मुझसे पूछा जाये कि अहमदाबादमे ऐसे कितने लोग है जिन्होने सारे विदेशी कपडे जला दिये है तो मै कहूँगा कि मै नही जानता। लेकिन ऐसे लोग दस-बारहसे ज्यादा नही होगे। पूरे गुजरातमे हजार-एक बहने खादी पहनने लगी है, लेकिन उससे क्या? सारे गुजरातमे एक हजार स्त्रियाँ किस गिनतीमे आती है? गुजरातमे कितने स्त्री-पुरुष समय मिलनेपर चरखा चलाते है?

डा० राय लिखते है कि मेरे कारखानेमे सब स्त्री-पुरुष चरखा चलाने लगे है और वे कहते है कि चरखेमे जो चमत्कार दिखाई दिया है वह अन्य यन्त्रोमे कभी नही देखा। क्या अहमदाबादके स्त्री-पुरुषोने स्वराज्यके लिए इतना किया है कि वे मुझसे स्वराज्यके बारेमे प्रश्न पूछ सके?

स्वदेशी करोडोके लिए कल्याणकारक है, हिन्दू-मुस्लिम एकताकी निशानी है, गरीब लोगोके प्रति दयाभावकी सूचक है। नेताओके पकडे जानेपर हमे सरकारी इमारते जलाने अथवा मारपीट करनेकी बात कभी नही सूझनी चाहिए। अगर सरकार मुझे इस सभासे पकडकर ले जाना चाहे तो ऐसी स्थिति होनी चाहिए कि एक सिपाही भी सबके बीचसे मुझे निर्भयतापूर्वक ले जा सके। उस समय किसीकी आँखसे आँसू न टपके, बल्कि तब सबके चेहरोपर अधिक कान्ति आ जाये और सब समझे कि हाँ, अब स्वराज्य आया।

उस समय सब अपने विदेशी कपडे निकाल फेके, बहने अपनी लाज ढकनेके लिए जितना कपडा शरीरपर चाहिए उतना पहने रहे, बाकी सब यहाँ छोडती जाये और अन्य कपडोको घर जाकर उतार दे। जिस प्रकार किसी अस्पृश्य वस्तुके छू जाने पर स्त्रियाँ नहा डालती है उसी तरह बहनोको चाहिए कि वे विदेशी कपडोके स्पर्शसे बचे, उन्हे छुएँ तो नहा डाले और फिर कभी उन कपडोको न पहननेका निश्चय करे।

[illegible] लगातार अपनी प्रार्थना सुनाता हुआ घूम रहा हूँ। [illegible] स्वदेशीका पूरा-पूरा [illegible] फकीरीपर चलनेके लिए तैयार हों। [illegible] 'नवजीवन'में दे चुका हूँ [illegible] भी लिखे देता हूँ:

१. [illegible]
२. [illegible] भावको छोड़ें और उन्हें सगे भाईके [illegible]।
३. हिन्दू-मुसलमान [illegible] सगा भाई मानें।
४. [illegible] कोई उपाय नहीं है।

इससे शान्ति [illegible] कुछ [illegible] भी आ गई है। [illegible] परिचय नहीं दिया [illegible] अली-भाई [illegible] है। अगर हम होश गँवा बैठते तो यह नहीं हो सकता था। [illegible] कि हम आपके व्यवहारको सहन नहीं [illegible] अली-भाई [illegible], 'तब आप भारतसे चले जाइए।' अदालत [illegible] कुछ [illegible] नहीं है। अगर हम पागल बनें [illegible] जायेगी।

स्वराज्यके लिए तीन शर्तें अनिवार्य हैं:

१. शान्तिका पालन [illegible] लोगोंसे वैसा ही करनेके लिए कहना।
२. [illegible] देना।
३. हिन्दू-मुस्लिम एकताको [illegible] और नन्हेंसे पौधेकी सार-सँभाल करना।

हिन्दू-मुस्लिम एक-दूसरेसे रूठ जायें, यह कैसे चल सकता है? मलाबारके सम्बन्धमें मेरे पास अनेक पत्र आते रहते हैं। एक व्यक्तिने लिखा है "हिन्दू-मुसलमान एक दिल नहीं है"। मेरी दृढ़ मान्यता है कि यह वाक्य केवल पत्र-लेखकके विचारोंका प्रतीक है। हिन्दू और मुसलमान दोनोंके दिल कोमल हैं। मुसलमान ऐसा न माने कि वे और हिन्दू, बस ये दो पक्ष ही हैं। उनके बीच तीसरा खुदा भी खड़ा हुआ है। हिन्दू भी ऐसी श्रद्धा क्यों न रखे कि ईश्वर-भक्तको मुसलमान क्योंकर मारेंगे? पाखण्ड होनेपर ही मुसलमान मार सकता है। लेकिन अभी तो हिन्दू और मुसलमान दोनोंमें से कोई भी पाखण्ड नहीं छोड़ता, तथापि दोनों स्वराज्य प्राप्त करनेकी, खिलाफतका उद्धार करनेकी और गायको बचानेकी बात कर रहे हैं। हिन्दुओंको गायको बचाना हो तो उन्हें अपना सिर मुसलमानकी गोदमें रख देना चाहिए। उस समय मुसलमानोंके दिलोंमें ईश्वर अवश्य वास करेगा और गायको बचायेगा। मुसलमानके मजहबमें गायको मारनेकी मनाही नहीं है, लेकिन ऐसे कार्यको न करना उनका फर्ज है जिससे पड़ोसीका मन दुःखता हो। हिन्दू-मुसलमान दोनों डरपोक बनकर नहीं बल्कि शुद्ध हृदय रखकर ही स्वराज्य प्राप्त कर सकेंगे, इतना ही नहीं बल्कि खिलाफत और गाय दोनोंको भी बचायेंगे।

गुजरातका एक भी ताल्लुका अगर ऐसी वीरता दिखायेगा तो स्वयं भी स्वराज्य लेगा और दूसरोंको भी दिलायेगा। आज हम जो आग सुलगा रहे हैं उससे ऐसी शक्ति प्रगट हो कि हमें जो करना है सो हम करते रहें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ६–११–१९२१

१५७. कितने पानीमें?

अहमदाबाद, नडियाद और सूरतकी नगरपालिकाएँ कितने पानीमें हैं, इस बातका अब थोड़े समयमें पता चल जाना चाहिए। तीनोंने ही शिक्षा-विभागपर सरकारी अंकुशको माननेसे इनकार कर दिया है और अबतक उनकी शक्ति बढ़ी ही है। ऐसा कहा जाता है कि अब सरकारने उनकी कसौटी करनेका निश्चय किया है। सरकारने जो नोट जारी किया है उसमें नगरपालिकाओंको धमकी दी गई है तथा कर-दाताओंको भड़काया गया है। सरकारका कहना है कि जिन्होंने शिक्षाको [सरकारी नियन्त्रणसे] स्वतन्त्र रखनेके प्रस्तावका समर्थन किया है उन्होंने अपनेको जोखिममें डाला है और उनपर कोई भी कर-दाता दावा ठोक सकता है। ऐसी सूचनाके अर्थको तो हम जानते ही हैं। अब सरकारका दूसरा कदम यह होना चाहिए कि वह किसी कर-दाताको खड़ा करके उसके द्वारा नगरपालिकाके किसी सदस्यपर दावा दाखिल करवाये। मैं उम्मीद रखूँगा कि सरकारको ऐसा कोई भी कर-दाता न मिलेगा कि जो, अपना काम धर्म समझकर करनेवाले नगरपालिका-सदस्यपर दावा करेगा और यह उम्मीद भी करता हूँ कि अगर कोई ऐसा कर-दाता निकल आये तो इससे वह सदस्य भयभीत न होगा। यदि ऐसे जोखिमोंसे खेलनेकी शक्ति हममें न आई तो हम अपने आपको स्वराज्य प्राप्त करनेकी योग्यता रखनेवाला कैसे मान सकते हैं?

सरकार जो दूसरा काम कर सकती है वह यह है कि नगरपालिकाओंको रद करके आयोगकी नियुक्ति द्वारा शहरोंका काम स्वयं करे। ज्यादासे-ज्यादा वह इतना ही कर सकती है। यदि सरकार ऐसा करती है तो उस परिस्थितिमें मुझे स्वराज्य पानेकी सम्भावना प्रतीत होती है। यदि सरकार ऐसा करेगी और यदि हम पूरी तरह तैयार होंगे तो हम युद्धका जो अवसर चाहते थे वह मानो हमें मिल गया और इस तरह अनायास ही प्राप्त हुआ यह अवसर किस योद्धाको प्रिय नहीं लगेगा?

जिस तरह कोई डूबता हुआ मनुष्य तिनका पकड़नेको लपकता है उसी तरह सरकार भी जो-कुछ उसकी पकड़में आता है उसे पकड़ लेती है और उसके फलस्वरूप और भी अधिक डूबती जाती है। क्या हम तैयार हैं?

अगर इन तीनों शहरोंके निवासी तैयार हों तो सरकारको हार माननी ही पड़ेगी। सरकारका किसीके द्वारा दावा करवाना तो बिलकुल ही हास्यास्पद होगा। सरकारके सामने दूसरा कदम नगरपालिकाको समाप्त कर देना है। इस कदमका स्वागत किया जाना चाहिए। जबतक सरकार नगरपालिकाओंको समाप्त नहीं करती है तब-

तक सत्ता सदस्योंके हाथमे ही है। और जब वह उन्हे समाप्त करेगी तब भी सत्ता सरकारके हाथमे तो नही जानेवाली है, वह नागरिकोंके हाथमे रहेगी। इसका नाम ही नागरिक सत्ता है। सदस्योंको जो सत्ता प्राप्त है वह सरकारकी दी हुई नही है, वह तो नागरिकोकी दी हुई है।

जबतक नागरिक सजग नहीं हुए थे तबतक अधिकारी और सदस्य, दोना ही अपने सामने नागरिकोका कुछ गिनते ही न थे। वे नागरिकोको जैसा नाच नचाना चाहते थे वैसा नचा सकते थे। अब जमाना बदल गया है। नागरिक अब उनके हाथकी कठपुतली नहीं है अब वे स्वयं सूत्रधार बन गये है, या, ऐसा कहे कि उन्हे बन जाना चाहिए। अतएव नगरपालिकाको समाप्त करके सरकार मालपुए नहीं उडा सकेगी।

क्या नागरिकोमे इतनी जागृति आ गई है? क्या सदस्योंकी आवाज सचमुच नागरिकोकी ही आवाज है? यह सब सामने आनेवाला है। सदस्योको चाहिए कि वे नागरिकोको सरकारकी विज्ञप्तिका आशय समझायें और यह भी सुझाएँ कि उनका कर्तव्य क्या है। अब केवल तीन बातें करनी है

१ यदि सरकार अपने स्कूल खोले तो उनमे बच्चोंको न भेजा जाये।

२ सरकार नगरपालिकाको समाप्त करके अगर शहरकी सफाई आदिकी व्यवस्था अपने हाथमे लेना चाहे तो नागरिक लोग उसे कर न दें। वह बाहरसे पैसा लाकर भले शौचालयोंकी सफाई कराये।

३ यदि सरकार उसपर काबिज हो जाये तो शहरकी व्यवस्थाका कार्य हम अपने हाथमे ले ले।

हमारी लडाई सत्यकी लडाई है। इसलिए न तो सरकार हमारे साथ विश्वासघात करके टिक सकती है और न हम ही ढोंग करके सरकारको नीचा दिखा सकते है। यदि नागरिकोंमें जागृति आ गई है तो उनका नाश कोई नहीं कर सकता। अगर नही आई है तो यह काम सदस्य नही कर सकते। इसलिए अगर हम सरकारके प्रत्येक कदमसे नागरिकोको परिचित करायें, उनके साथ सलाह-मशविरा करके आगे बढते जायें तो हम देख सकेंगे और सरकारको बता भी सकेंगे कि उसमे कोई शक्ति नही है। हमारी निर्बलता ही सरकारकी शक्ति है। हमारी शक्ति अर्थात् इस बातका भान कि हम ही सरकार हैं और यह शक्ति यानी यह भान अहमदाबादकी अढाई लाख, नडियादकी पैंतीस हजार और सूरतकी एक लाख आबादीकी बौद्धिक, हार्दिक, सामाजिक और राजनैतिक शिक्षासे फलित होगा। वे बुद्धिसे यह समझे कि किसका विश्वास करे और किसका न करे, हृदयसे यह जाने कि दु:खके पीछे सुख मिलता है, वे बुद्धि और हृदयसे जाने कि जिस तरह कुटुम्ब-व्यवहारको शुद्ध होना चाहिए वैसे ही समाज-व्यवहार भी शुद्ध होना चाहिए। इसलिए जिस तरह घर साफ होना चाहिए उसी तरह मुहल्ला और शहर भी साफ होना चाहिए। जैसे कुटुम्बमे किसी प्रकारका लडाई-झगडा नही होना चाहिए वैसे ही समाजमे भी लडाई-झगडा नही होना चाहिए, जैसे कुटुम्बके लिए वैसे ही समाजके लिए भी मरना सीखना चाहिए और इस तरह उन्हे

समझना चाहिए कि अगर राजा-प्रजाके बीचका व्यवहार मलिन हो जाये अर्थात् वह ऊँच और नीचका, मालिक और नौकरका, सरदार और गुलामका हो जाये तो उस राजाका अर्थात् राज्यपद्धतिका त्याग करना चाहिए। यही बात हमारे अन्य सब तरहके व्यवहारके सम्बन्धमें भी लागू की जा सकती है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३०–१०–१९२१

१५८. बोध बनाम अक्षरज्ञान

मेरी विषम स्थितिका कोई अन्त ही नहीं है। गोहिलके एक गरासिया[1] भाईने १२ अप्रैलको मुझे एक पत्र लिखा था। मैंने यह पत्र बचाकर रख लिया था। वह प्रकाशित करनेके उद्देश्यसे नहीं लिखा गया था, किन्तु उसमें ऐसी बातोंकी चर्चा की गई है, जिनपर मुझे कार्रवाई करनी चाहिए। मेरी पूरी यात्राके दौरान वह पत्र मेरे साथ-साथ घूमा है। मैं हर हफ्ते उसे देखता था और फिर यह कहकर छोड़ देता था कि बादमें देखूँगा। पत्र छोटे और सुन्दर अक्षरोंमें लिखा हुआ है लेकिन काफी लम्बा है। मुझे नौ पन्नोंका पत्र लिखनेवाले व्यक्तिको इस बातकी उम्मीद कदाचित् ही करनी चाहिए कि मैं उसे पढ़ूँगा और उसपर विचार करूँगा। इस पत्रके आरम्भिक वाक्य मुझे अच्छे लगे इसीसे मैंने उसे सुरक्षित रखा और अब इसे पूरा पढ़ सका हूँ।

मेरी इच्छा है कि ये भाई और इनकी तरह लिखनेवाले दूसरे लोग मेरी स्थितिको ध्यानमें रखें। उन्हें इस नियमको याद रखना चाहिए कि जो लोग साफ-साफ अक्षरोंमें एक ही पन्नेपर अपने विचार पेश करेंगे उन्हें जल्दी उत्तर मिलेगा। अगर अच्छेसे-अच्छे विचारोंको एक ही वाक्यमें रखा जा सकता है तो हम अपनी इच्छाको एक ही वाक्यमें क्यों प्रकट नहीं कर सकते? जैसे-जैसे हम आगे बढ़ेंगे वैसे-वैसे हमें मालूम होगा कि हम जनकार्यको कमसे-कम शब्दोंका उपयोग करके भी चला सकते हैं। अंग्रेजीकी 'सैनिक' भाषा जितनी संक्षिप्त है उतनी संक्षिप्त भाषा मैंने कहीं नहीं देखी है। मैंने सैनिक आदेशोंको एक शब्दमें दिये जाते देखा है। वे जिन शब्दोंका उपयोग करते हैं उन्हें और छोटा रूप दे देते हैं। इसके सबल कारण हैं। जहाँ कार्य करना होता है वहाँ शब्द-जाल कमसे-कम होता है। "कमांडिंग ऑफिसर" को "कमांडिंग आफिसर" कहना गुनाह करने जैसा माना जाता है, पत्रोंमें उसे "सी० ओ०" ही लिखा जाता है।

मतलब यह कि जहाँ समझ है, बोध है, वहाँ शब्दोंकी — अक्षरज्ञानकी — बहुत कम जरूरत है। जिसने मोक्षको समझ लिया है, जिसने आत्माका साक्षात्कार कर लिया है, क्या वह 'वेदों'का अध्ययन करेगा? जिसका पेट भरा हुआ है, उसे रबड़ीसे क्या सरोकार? जिसने हिमालयके दर्शन कर लिये हैं उसे हिमालयका मार्ग-निर्देशन

१ सौराष्ट्रकी एक जाति।

करनेवाली पुस्तकें क्या काम की ? इसीलिए मैंने गरासिया और काठियों आदिके सम्बन्धमें यह लिखा था कि उन्हें अपनी उन्नतिके लिए अक्षरज्ञानकी अपेक्षा समझदारीके विकासकी अधिक जरूरत है।

इसपर एक गरासिया भाईने मुझे लिखा है, "अगर अक्षरज्ञानकी अपेक्षा समझकी ज्यादा जरूरत है तो वह भी आप ही दीजिए। हममें शराबका और अफीमका व्यसन है, आलस्य है। दूसरी जातियोंकी भाति हम अन्य प्रपचोंसे पीडित नही है। आप आत्मरक्षाकी शक्तिको बढाना चाहते है, सो तो हमें विरासतमें मिली है। हमें अगर अपनी शक्तिकी प्रतीति हो जाये तो हम फिरसे हिन्दुस्तानके सच्चे सेवक बन जायें। हम बनना तो चाहते है। कैसे बनें सो कहिए ?" पत्रका सार इतना ही है।

मैं छः महीनेके बाद इस प्रश्नका उत्तर देने बैठा हूँ, इसलिए मेरा कार्य आसान हो गया है क्योंकि मैंने इन छः महीनोंमें तो बहुत लिखा है। अगर उसे समझ-बूझके साथ पढ़ा गया हो तो अब एक भी अक्षर लिखना बाकी नही बचा, और अगर कोई मेरे सब लेखोंको एक साथ पढ़ जाये तो मेरा दृढ विश्वास है कि वह यह टीका कर सकता है कि "यह व्यक्ति तो दिन-प्रतिदिन एक ही बात करता है। शायद यह इसीलिए 'नवजीवन' का सम्पादक बना है ?" टीकाकारकी यह टीका बिलकुल सही है। मैंने 'नवजीवन' के सम्पादन कार्यका यह बोझ अपने ऊपर एक ही सत्यको कहनेके लिए लिया है।

काठियावाडमें मेरों और वघेरोंके प्रदेशमें जन्म लेनेके कारण मैं काठियाओं, मेरों और वघेरोंके गुण-दोषोंसे भलीभाति परिचित हूँ। वे लोग ही अगर सच्चे हो जायें तो वे सौराष्ट्रको जाग्रत कर ही सकते है और हिन्दकी भी भारी सेवा कर सकते है। मुळु माणेक और जोधा माणेक तो अपने तुच्छ अधिकारोंके लिए हाथोंके टूट जानेपर पांवसे बन्दूक दाग कर लडे थे, ऐसी दन्तकथा है। उनमें कमालकी बहादुरी थी। उनके गीत आज भी गाये जाते है सो इसलिए नही कि उनका निशाना अचूक था बल्कि इसलिए कि उनमें शत्रुके बहुसंख्यक दलके सामने टिके रहनेकी और मौतको अपनी जेबमें डालकर लडनेकी शक्ति थी। यूनानमें तो थर्मापोलीकी एक ही लडाई हुई लेकिन बरडामें[1] तो मुझे स्थान-स्थानपर ऐसी लडाइयाँ दिखाई देती है।

काठी राजपूतोंसे मैं एक ही आशा रखता हूँ। आपके पूर्वज तो गरासके[2] लिए लडते हुए मरे। आप अपने उत्तराधिकारको सुशोभित करना चाहते है तो हिन्दुस्तान-जैसे गरासके लिए मारनेका विचार छोडकर मरनेकी तैयारी कर शुद्ध क्षत्रिय बनें। मारना क्षत्रियका धर्म नही है। जो क्षत्रिय अपनेसे दुर्बलको मारता है वह क्षत्रिय नही, हत्यारा है। जो दुर्बलकी रक्षा करनेके लिए बलवानसे भिडता है और उसे मारता है, उसका मारना क्षम्य होता है। लेकिन जो बलवानको न मारकर दुर्बलकी रक्षा करते हुए अपने प्राण दे देता है, वह सच्चा क्षत्रिय है। मरना — पलायन न करना — उसका धर्म है। दूसरेके मनमें मरणका भय उत्पन्न करना उसका धर्म नही है। उसका

१ सौराष्ट्रमें।

२ राज्यकी ओरसे राजवंशियोंको उनके निर्वाहके लिए दी गई जमीन।

धर्म तो स्वयं भयका त्याग करना है। इसीलिए वह रक्षा करनेको तैयार होता है। रक्षा करनेवालेके लिए कुश्ती सीखनेकी अपेक्षा मरण-भयको छोड़नेकी ज्यादा जरूरत है। सिरसे पैरतक शस्त्रोंसे लैस और बख्तरसे सुरक्षित किसी राक्षसके विरुद्ध एक निःशस्त्र काठी युवक क्या करेगा? वह उसके हाथमें एक गरीब लड़कीको जाने देगा या उस राक्षसके हाथों मृत्युका आलिंगनकर, लड़कीको ईश्वरके भरोसे छोड़, उस लड़कीको भी निःशस्त्र-बलका पाठ पढ़ाता जायेगा? सीताकी दृष्टि भगवे वस्त्र पहने हुए दो बालकोंपर जाकर क्यों टिक गई और उसने राक्षसों-जैसे विशालकाय मनुष्योंका अनादर क्यों किया? सीताको रामके आत्मबलकी प्रतीति हो गई थी। वह भोली कुमारिका उस समय यह कहाँ जानती थी कि उनमें शिवका धनुष तोड़ डालनेकी शक्ति है।

लेकिन रामकी भाँति ऐसी रक्षा कौन कर सकता है? वह व्यक्ति जो ब्रह्मचारी है, जिसने निद्राको जीत लिया है, जो अल्पाहारी है, जो निर्व्यसनी है, सत्यवादी है, अल्पभाषी है और जो निरन्तर पर-दुःखके विचारसे दुःखी होता है तथा जो अन्य लोगोंको न मिल सके ऐसी वस्तुका त्याग करनेकी इच्छा रखता है और सदा अपरिग्रही रहता है। इतना दयाभाव रखनेके लिए कुछ लोगोंको दयाका सागर बनना पड़ेगा। मैं स्वीकार करता हूँ कि इसके लिए अगर राजपूत चाहें तो ज्यादा जल्दी तैयार हो सकते हैं। लेकिन इस समय तो हिन्दुस्तानमें एक ही वर्ण है और वह नया वर्ण है — गुलामोंका।

जबतक हिन्दुस्तान गुलाम है, तबतक क्षत्रियको न तो सोना अच्छा लग सकता है, न उठना-बैठना और पहनना ही अच्छा लग सकता है। जिसे ऐसा क्षत्रिय बनना हो वह बन सकता है। चारों वर्णों और समस्त धर्मावलम्बियोंको अपनी रक्षा करनेके लिए तो क्षत्रिय बन ही जाना चाहिए। क्षत्रिय जाति दूसरोंके दुःखोंको उठा लेती है, दूसरोंकी भी रक्षा करती है। हम सब क्षत्रिय नहीं बन सकते, कुछ तो दुर्बल ही रहेंगे। हमारी इस लड़ाईमें मानो क्षत्रियोंकी जन-गणना होनेवाली है। हमारा हिसाब देनेका दिन आ गया है। लेकिन जो चरखा चलाना नहीं जानता वह कभी भी इस युगके भारतको मुक्त करनेवाला क्षत्रिय नहीं बन सकता।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३०–१०–१९२१

१५९. टिप्पणियाँ

ढेढ लोगोंको सन्देश

सरकारने इस शीर्षकसे ढेढोंमें एक गुजराती पत्रिका वितरित की है। इसमें कहा गया है, लोगोंमें ऐसी अफवाह है कि यदि ये लोग असहयोग आन्दोलनमें शामिल नहीं होंगे तो उनके घरोंको जला दिया जायेगा, यह अफवाह भी है कि सरकार उनकी रक्षा नहीं करेगी। पत्रिकामें कहा गया है कि यह अफवाह झूठी है और "कोई भेदभाव किये बिना समस्त जातियोंके लोगोंके विकासके लिए जितना सम्भव है उतना करनेके लिए कदम उठाये जा रहे हैं।"

यदि किसीने ढेड भाइयोंको धमकी दी है अथवा किसीने उनके घरमें आग लगाई है तो उसे असहयोगी नहीं कहा जा सकता, उसे हिन्दू अथवा भारतीय भी नहीं कहा जा सकता। मैं यह बात मान ही नहीं सकता कि कोई ऐसी धमकी दे भी सकता है। लेकिन यदि ऐसी धमकी दी भी गई हो तो सरकार उनकी क्या रक्षा कर सकती है? उसने क्या किया है? जिस ढेढको रेलमें उद्धत हिन्दू गाली देते हैं सरकार उसे क्या रक्षण दे पाती है? कचहरियोंमें जिन्हें पहचान लेनेके बाद अधिकारी लोग स्वयं ही परेशान करते हैं, उन्हें क्या रक्षण दिया जाता है? जो कुँआ, मकान और स्कूल रहित हैं, उनकी सरकार क्या रक्षा करती है? उनकी हालतमें सरकारने क्या सुधार किया है, यह बात मैं अवश्य जानना चाहूँगा।

हाँ, सरकारने एक काम तो जरूर किया है। इसमें सन्देह नहीं कि उसने उनसे बहुत बेगार ली है, उनमें से कुछेकको गो-मांस-भक्षी बना दिया है, उनकी खराब आदतोंको पोषित किया है। उनकी नैतिक स्थितिमें लवलेश भी सुधार नहीं किया है। हाँ, अब उन्हें टाउनहालमें सभा करनेकी अनुमति अवश्य दी है। इसका कारण युवराजको सम्मान दिया जाना है। इसमें तो केवल सरकारका स्वार्थ ही है। जहाँतक मुझे जानकारी है, बम्बईके टाउनहालमें उनके द्वारा सभा आयोजित करनेका यह पहला अवसर है। यह तो केवल खुशामद अथवा घूस है। और उन सभीको जो युवराजके सम्मानमें शामिल होना चाहते हैं, शामिल करनेके लिए सरकार आतुर है। यह एक निर्दोष युवराजका अपमान करना है, अपने स्वार्थके निमित्त उसका दुरुपयोग करना है। युवराजका किस तरहसे सम्मान किया जानेवाला है अगर इसकी उन्हें खबर हो तो मैं नहीं जानता कि वे भारत आना पसन्द भी करेंगे अथवा नहीं। इतना होने पर भी यदि वे आते हैं तो यह बात अंग्रेज जनताकी शिक्षाकी चरम परिणति है कि जहाँ कर्त्तव्यका सवाल आता है वहाँ राजा और प्रजा दोनों ही वर्ग हर तरहका बलिदान देनेके लिए तैयार हो जाते हैं। ऐसा त्याग यदि नीच स्वार्थसे प्रेरित होकर न किया गया हो तो त्याग करनेवाला मोक्षका अधिकारी होता है।

लेकिन मेरा उद्देश्य ब्रिटिश सरकार अथवा ब्रिटिश जनताकी भूल बताना कम और हिन्दुओंको अपने कर्त्तव्यका भान कराना अधिक है। हिन्दू धर्मावलम्बियोंने अपने

धर्मको नही पहचाना है इसीलिए ढेढ भाइयोको प्रलोभन देकर फँसानेका प्रयत्न किया जाता है और इस रस्साकशीमे मुझे अनेक वार कलह होती दिखाई देती है। अतएव ये दो प्रसग — सरकारी सन्देश और टाउनहालकी सभा — ऐसे है जिनसे अन्त्यज और अन्त्यजेतर हिन्दुओको शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। अन्त्यजोको ऐसे सन्देशो अथवा टाउनहालकी सभासे भ्रमित नही होना चाहिए। वे जिसे अपना अधिकार समझते है उसके लिए वे अवश्य ही हिन्दू समाजसे शिष्टतापूर्वक लडे किन्तु साथ ही हिन्दू समाजके नियमोका पालन करे, मासादिका — मुख्य रूपसे गोमासका — त्याग करे, मैला काम करनेके वाद शरीरको साफ करे और व्यभिचार आदि छोडकर अपने अन्त करणको भी निर्मल वनाये। अन्य हिन्दू अन्त्यज भाइयोके साथ प्यार करे, उन्हे काग्रेस महासमितिके सदस्य वनाये, उनकी पीडाको समझे, उन्हे कोई भी कष्ट पहुँचाये तो उससे उनकी रक्षा करे, उन्हे सगे भाईके समान माने और ऐसा न समझे कि उनका स्पर्श करना पाप है।

लेकिन एक विचारवान विवेकी हिन्दूने मेरे साथ वात करते हुए वताया कि हिन्दू धर्ममे स्पर्श-मात्रसे — प्राणके स्पन्दन-भरसे — भी सामनेके व्यक्तिपर असर होता है इसीसे उनके दूर रहनेका सुझाव दिया गया है। "ऐसे सूक्ष्म प्रभावसे अपने आपकी रक्षा करके ही हिन्दू लोग हजारो वर्षतक जीवित रह सके है और सुन्दर शास्त्रोकी रचना कर सके है", ऐसा उन्होने कहा।

एक दृष्टिसे विचार करनेपर यह वात सच है। मैलके स्पर्शसे, दुर्जनके सगसे हम मलिन होते है और सत्सगसे हम शुद्ध होते है, लेकिन यह सब तिरस्कारको पोषित करनेके लिए नही लिखा है। यह तो केवल एकान्त-सेवनके लिए, सयमके लिए लिखा गया है। हमे अपनी आत्माको स्वच्छ करना है और यह हम अन्त्यज भाइयोकी सेवा कर, उनकी उन्नति करके अधिक अच्छी तरह कर सकते है। सफाई करनेके लिए हम गटरमे भी हाथ डालते है तथापि उसका स्पर्श हमारे लिए हानिकर नही है। इसके अलावा यदि हम दूसरोके दोषोका विचार करके सबसे अलग रहनेका प्रयत्न करते है तो हम निरे पाखण्डी वन जाते है क्योकि दूसरोके दोषका वर्णन करते समय हम अपनेको इतना सम्पूर्ण मान लेते है कि हमारे लिए कुछ करनेको नही रह जाता अर्थात् हम नीचसे-नीच वन जाते है। ढेढ-भगी तो हमारी आत्मामे ही पडे हुए है, हमे उनका त्याग करना है, उनसे स्पर्श कर जानेपर हमे नहाना है। वाहरके ढेढ-भगियोमे मैला साफ करनेके वावजूद अनेक ऐसे सरल, ऐसे सज्जन और नीतिमान है कि वे पूजा करने लायक है। ढेढ-भगीको दुर्गुणोका और अन्य वर्णोको सद्‌गुणोका कोई ठेका नही मिला हुआ है। इसलिए हिन्दू शास्त्रोमे निहित कुछेक विचारो और वाक्योको विना समझे केवल उनका अक्षरार्थ पालन करके पतित न वने, इस वातकी हमे खूब सावधानी रखनी है।

स्वदेशी और ब्रह्मचर्य

एक मित्र लिखते है कि देशमे स्वदेशीका जोर तो वढता जाता है लेकिन ब्रह्मचर्यके पालनमे कोई वृद्धि दिखाई नही देती। जवतक स्त्री-पुरुष अपने मनपर अकुश

नही रख सकते तवतक स्वराज्य कैसे मिलेगा? यह विचार सुन्दर प्रतीत होता है, लेकिन इसमे कार्य-कारण जैसा सम्वन्ध नही है। स्वदेशी और ब्रह्मचर्य दो अलग विषय है। खादी विदेशी कपडेकी तुलनामे पवित्र है। चरोतरका गेहूँ अमेरिकाके गेहूँसे पवित्र है लेकिन जिस तरह चरोतरका गेहूँ खानेवाला व्यक्ति पाखण्डी और विषयी हो सकता है उसी तरह पवित्र खादी पहननेवाला भी हो सकता है। स्वदेशीमे अथवा खादीमे इससे अधिक पवित्रताका आरोप करके हम नुकसान उठायेंगे। यदि खादीकी पोशाक सम्पूर्णताकी परिचायक मानी जाने लगेगी तो स्वदेशीका प्रचार करना ही असम्भव हो जायेगा। अच्छे-बुरे, रोगी-निरोगी, पुण्यवान-पामी सवमे खादी पहनने जितनी पवित्रता तो आनी ही चाहिए। इसमे देशभक्ति, देशवासीके प्रति — पडौसीके प्रति — दयाधर्म और मित्रभाव भी आ जाता है, इससे इसे भी मैंने आत्मशुद्धि माना है। और यदि करोडो लोग यह अल्प आत्मशुद्धि करे तो उनके सम्मिलित पुण्यका परिमाण इतना अधिक हो जायेगा कि हम अपना जन्मसिद्ध अधिकार, जिसे हम आज खो वैठे है, वापस प्राप्त कर लेगे। इस समय तो हम पूर्ण-अपूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए जी-जानसे जुटे हुए है, इसे प्राप्त करनेके लिए स्वदेशी आवश्यक है और पर्याप्त है।

ब्रह्मचर्यका पालन थोडे लोग ही करेगे। सब इसका पालन करे, यह अपेक्षणीय है। सव इसका पालन करे तो हम विश्व-साम्राज्य लेकर वैठ जाये। यह हमारा धर्म है लेकिन हम उसे स्वदेशीके साथ जोडकर — स्वदेशी, जो अत्यन्त सहल है — ब्रह्मचर्य जितना दुरूह न वना दे।

इस तरह दोनोमे निहित अन्तरको कहने ओर सुननेके बाद मै कहना चाहूँगा कि हर तरहका कार्य करनेवाले स्त्री-पुरुष स्वराज्य प्राप्तितक ब्रह्मचर्यका पालन करे। हम कार्य करनेवाले लोग इतने कम है, गहरे उतरनेपर मालूम होगा कि हम गरीब भी इतने ज्यादा है कि हमारे पास न तो सन्तानोत्पत्तिके लिए अवकाश है और न उसके लालन-पालनकी शक्ति ही है। रोगीको सन्तानोत्पत्ति हो, इससे किसीको क्या लाभ? क्षयसे पीडित व्यक्ति सन्तान पैदा करे तो यह कितना अत्याचार है? तो फिर गुलाम सन्ततिके वारेमे तो कहना ही क्या? सबसे ज्यादा दु खकी वात तो यह है कि हम विषयोके उपभोगका, रतिभोगका विचार करते समय सन्तानका विचार ही नही करते। हम अपने विषयोके इतने अधिक गुलाम वन गये है कि हम विवेकको छोड वैठे है। सन्तानोत्पत्ति तो हमारी स्वच्छन्दताका परिणाम है। यह कोई किसी सयमीके स्वल्प मात्रामे अपने गृहस्थ-धर्मके पालनका ऐसा योग्य अथवा पवित्र फल नही है जिसकी कि उसने इच्छा की हो, अधिकतर तो यह फल अनपेक्षित और दु खद ही होता है।

मेरा इतना दृढ विश्वास है कि जिन्होने जनताकी सेवामे अपना जीवन समर्पित कर दिया है, उन मतवालोके लिए विषय भोगकी अपेक्षा करना सम्भव ही नही है। वे इतना समय निकाल भी कहाँसे सकते है? इसी आशासे मै स्वराज्य-यज्ञमे यथाशक्ति वलिदान कर रहा हूँ। यदि जनताके हाथमे सत्ता देना ही अन्तिम उद्देश्य हो तो मुझे विश्वास है कि मै ऐसा बालक नही हूँ जो उस खिलौनेको प्राप्त करनेके मिथ्या प्रयासमे पडूँ। मेरी मान्यता है कि आजके कार्यकर्त्ता यदि इस स्थूल स्वतन्त्रताको प्राप्त करनेके

उद्देश्यको लेकर काम करेंगे तो देखेंगे कि जबतक वे सत्यवादी, दयावान, शूरवीर, निडर, सरल और स्वदेशी नही बनते तबतक स्वराज्य नही मिलेगा। इस प्रयासमें कुछेक लोगोको रत्नचिन्तामणि मिले बिना न रहेगी। इस प्रयासमे प्रजाकी ऊर्ध्वगति है, ऐसा जानकर ही मैं इसमे पडा हुआ हूँ और शान्त हूँ। इसलिए मैं यह अवश्य चाहता हूँ कि स्वयसेवक व स्वयसेविकाएँ स्वराज्य प्राप्त होने तक ब्रह्मचर्यका व्रत ले। लेकिन अपने मनको अथवा हृदयको धोखा देकर न ले, मेरे कहनेसे भी न ले, अपितु यदि वे बहुत सोच-समझकर और दृढ होकर यह व्रत लेंगे तो उसका पालन कर सकेंगे और फल प्राप्त करेंगे।

राम और रहीम

एक सिख भाई लिखते है कि स्वदेशीकी बात ठीक है, परन्तु आप तो स्वय ईश्वरके माननेवाले है। फिर आप ईश्वरका नाम पहले क्यो नही रखते ? सब लोगोको अपने खुदा, ईश्वर, राम अथवा वे जिस नामसे अपने परमात्माको पहचानते हो, उस नामकी माला जपनेके लिए क्यो नही कहते ? यह बात सच है, मैं ऐसी बात उनसे नही कहता। परन्तु मेरा यह दृढ विश्वास है कि केवल शब्दोके उच्चारण मात्रसे स्वर्ग नही मिल सकता। शब्दोच्चारके लिए योग्यताकी जरूरत है। हम जबतक विदेशी वस्त्र पहनते है तबतक, मेरा खयाल है कि हम हिन्दुस्तानमे रहकर ईश्वरका या खुदाका नाम जपनेके लायक नही हो सकते। अगर एक आदमी दूसरेके गलेपर छुरी फेरते हुए रामनाम जपता है तो वह रामको लज्जित करता है। इसी प्रकार एक भारतीयके हाथके कते सूतसे बने कपडेको छोडकर सकडो कोस दूरसे अपने कपडे मँगाना अपने भाईके गलेपर छुरी चलाना है। वह व्यक्ति भी ईश्वरका नाम लेने योग्य नही है। इस प्रसगमे चरखेके महत्त्वको मैं पहले ही बता चुका हूँ। चरखा कातना एक ऐसी शान्तिमय विधि है कि हम अपने हाथको सूतके साथ मिलाते हुए अपने हृदयको ईश्वरके नामके साथ जोड सकते है। ईश्वर-भक्तिको भी, ब्रह्मचर्यकी तरह, स्वदेशीके साथ नही जोडा जा सकता। ईश्वरका नाम न लेनेवाला मनुष्य भी अगर स्वदेशीका पालन करे तो वह तो उसका फल पाता ही है, पर अगर नास्तिक भी स्वदेशीका पालन करे तो वह भी उसका उतना ही फल प्राप्त कर सकता है तथा खुदको और देशको उन्नत कर सकता है। जिसके मनमे ईश्वरका नाम है, जिसके हृदयमे ईश्वर निवास करता है, वह स्वय तो बहुत लाभ उठाता ही है, देशको भी लाभ पहुँचाता है। स्वदेशी हमें ईश्वरकी ओर ले जानेवाली शक्ति है, क्योकि वह हमे ऊपरकी ओर ले जाती है। उक्त मित्रके सुझावपर मैंने इतना लिखा सो यह बतलानेके लिए कि अगर हम ईश्वरकी आराधना नही करते तो हम अपने युद्धको धर्म-युद्ध नही कह सकेगे। हम लोग तो एक दूसरेके धर्मकी रक्षा करनेके हेतुसे लड रहे है, हमे तो ईश्वरका नाम भूलना ही न चाहिए। उसकी रटन तो हमारे हृदयमे नित्य होती रहनी चाहिए। हमारे हृदयमे जितनी बार धडकन होती है उतनी बार अर्थात् निरन्तर हमे उसका चिन्तन करते रहना चाहिए। इसमे स्वदेशी सहायक है, परन्तु दोनो एक बात नही है। स्वदेशी देहका धर्म है, ईश्वर स्तवन आत्माका गुण है।

"पीपल्स फेअर"

'पीपल्स फेअर' का अर्थ है 'मेला'। दो पारसी बहनें लिखती हैं कि माननीय युवराजके आगमनके समय मेला लगाया जानेवाला है। कुछ लोग समझते हैं कि उसमें हम लोग शरीक हो सकते हैं। उनका कहना है कि युवराजके सम्मान-समारम्भमें शरीक न होनेकी बात तो समझमें आ सकती है लेकिन नगरपालिकाके खर्चसे जो आतिशबाजी, मेले आदि हों उनमें क्यों न जायें? यह दलील ठीक नहीं है। क्योंकि अगर रुपयेकी ही बात हो तो युवराजका जो सम्मान किया जानेवाला है वह हमारे ही खर्चसे होगा। सरकार जो रुपया खर्च करती है वह तो हमारा ही है। हमारी दलील तो यह है कि यदि लोगोंका रुपया उनकी सलाहसे खर्च नहीं किया जाता है तो उससे किये जानेवाले मेलोंमें हमें शरीक नहीं होना चाहिए। अगर कोई लुटेरा अपने खर्चसे हमें भोज दे तो क्या उसमें हमें जाना चाहिए? इसी प्रकार युवराजका सम्मान और उनके सम्मानमें आयोजित किये जानेवाले मेलेमें मुझे तो कोई फर्क नहीं दिखाई देता। यदि एक त्यागनेके लायक है, तो दोनोंको ही त्यागना चाहिए।

चरखा और बुद्धि

कविवर श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुरने अपने लेखमें एक वाक्य लिखा है[1], जिसकी जगह-जगहसे मेरे पास आलोचनाएँ आ रही हैं। वह वाक्य यह है कि चरखा कातनेवालेकी बुद्धि कुंठित हो जाती है। इसकी टीका-टिप्पणियोंको मैं प्रकाशित करना नहीं चाहता क्योंकि कविवरका यह वाक्य एक अनुमान-मात्र है। हिन्दुस्तानमें आज लाखों चरखे चल रहे हैं। उनमें वकील, डाक्टर और तत्त्वज्ञानी लोग भी हैं और मुझे मालूम है कि ऐसे लोग तमाम प्रान्तोंमें हैं। इन लोगोंके अनुभवका सबूत कविवरके अनुमानके खिलाफ है। बस, इतना ही कह देना काफी है कि मैंने सैकड़ों विद्यार्थियोंसे पूछा है और उन्होंने चरखेको बुद्धिका विरोधक नहीं पाया है। डाक्टरों और वकीलोंका अनुभव भी यही कहता है। बंगालके एक प्रख्यात उपन्यास लेखक मेरे पास सिर्फ अपना अनुभव बयान करनेके लिए ही आये थे। उन्होंने मुझे बताया कि 'मैं नियमित रूपसे चरखा कातता हूँ और उससे मेरी उपन्यास लिखनेकी शक्तिका विकास ही हुआ है।' इन सब प्रान्तोंसे जो-कुछ सिद्ध हो सकता है उससे अधिक मैं सिद्ध करना ही नहीं चाहता। मैं तो सिर्फ यही बताना चाहता हूँ कि बुद्धिमान मनुष्यकी बुद्धि हर तरहका शारीरिक कार्य करनेसे अधिक तेज होती है और अगर वह काम लोकोपयोगी हो तो पुनीत भी होती है। ऐसे शारीरिक कार्योंमें चरखा अच्छा, हलका और मधुर कार्य होनेके कारण उत्तम है और हिन्दुस्तानकी वर्तमान अवस्थामें तो वह कल्पद्रुमके समान है।

"इस्माइली फिरका जमातसे अपील"

इस शीर्षकके अन्तर्गत लिखते हुए श्री फिदाहुसैन दाऊदभाई पूनावाला कहते हैं कि खोजा, बोरा और अन्य सब मुसलमानोंका यह फर्ज है कि वे स्वदेशीमें पूरा-पूरा सहयोग दें, यदि वे ऐसा नहीं करते तो इसके लिए उन्हें भविष्यमें कष्ट सहन करना

१. अक्तूबरके मॉडर्न रिव्यूमें।

होगा। मेरा भी [कुछ] ऐसा ही विश्वास है। जो स्वदेशीको पूर्णतया अंगीकार नहीं करते वे, निस्सन्देह, पिछड़ जायेंगे। यह अपील काफी लम्बी है। मैंने तो केवल सार ही प्रस्तुत किया है। और चूँकि उसमें दी गई सब दलीलें सर्वप्रसिद्ध हैं इसलिए मैंने सारी अपीलको प्रकाशित करना जरूरी नहीं समझा है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३०-१०-१९२१

१६०. पत्र: मियाँ मुहम्मद हाजी जान मुहम्मद छोटानीको

३१ अक्तूबर, १९२१

प्रिय छोटानी मियाँ,

आपका वह पत्र मिला जिसमें आपने एक लाख चरखे देनेकी बात कही है। उसके लिए धन्यवाद। आपने बहुत बड़ा दान दिया है और मुझे यकीन है कि इस बातका भारतीयों — खासकर मुसलमानोंके मनपर बहुत असर होगा। बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके पास आपका पत्र भेजते हुए मैं मन्त्रियोंको आपकी इस इच्छाका खयाल रखनेको लिख दूँगा कि मैमन समाजके लोगोंको प्राथमिकता दी जाये। मुझे नहीं मालूम कि आपने अपने मनमें कुछ तय कर रखा है या नहीं कि इस काममें आप कितना पैसा खर्च करना चाहते हैं, मेरा तो अनुभव यह है कि सस्ता चरखा बादमें चलकर बड़ा खर्चीला हो जाता है। एक अच्छे, ठोस और वजनदार चरखेपर छ: रुपयेसे कम लागत नहीं बैठेगी। इसलिए अगर आप इतना बड़ा दान न देना चाहें तो मेरी सलाह है कि चरखोंकी संख्या कम कर दीजिए। मैं तो यह सलाह भी दूँगा कि आप जो रकम खर्च करना चाहते हों वह सब सूत कतवानेपर ही खर्च न करें बल्कि गरीब औरतें जो सूत कातें उस सूतको ज्यादा ऊँचे भावपर खरीदनेमें और इस कामको अंजाम देनेके लिए विशेष कार्यकर्त्ताओंको नियुक्त करनेमें करें। इस तरह आप अपने दानकी रकमका उपयोग लगभग अपनी ही देखरेखमें और अधिकसे-अधिक मितव्ययिताके साथ कर सकेंगे। काठियावाड़में ऐसा ही किया जा रहा है। कहनेकी जरूरत नहीं कि ये बातें सिर्फ आपके मार्ग-दर्शनके लिए लिख रहा हूँ, इनसे आपके कार्यके मूल्यमें और उसकी महत्तामें कोई फर्क नहीं पड़ता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ७६४९) की फोटो नकलसे।

१६१. पत्र : महादेव देसाईको

नववर्ष दिवस[1]
मौनवार [३१ अक्तूबर, १९२१]

भाईश्री महादेव,

वर्ष-प्रतिपदा और मौनवार, इन दोनोंका मिलन मेरे लिए तो बहुत शुभ है। आजसे मेरे चरखेका व्रत शुरू हुआ है। प्रतिदिन दूसरी बारका भोजन करनेसे पहले आधा घंटा कातूंगा और अगर न कात पाया तो भोजन ही न करूँगा। यह कोई बहुत बडी बात नहीं है तथापि चूंकि मैंने व्रत लिया है इसीलिए मेरा कातना कुछ नियमित रूपसे चलेगा। जब मैं रेलमें होऊँ तब यह बन्धन नहीं होगा।

दीवालीके उपलक्षमें लिखा हुआ तुम्हारा पत्र और भजन मिले। ये किसलिए लिखे? तुम्हारा धर्म तो जल्दसे-जल्द रोग-शय्यासे उठनेका था। इस कामके लिए तुम दुर्गाको अथवा किसी अन्य व्यक्तिको कैसे जगा सकते हो? तुम्हारे तार भी मिले। एक तारमें 'एम्बलेजन यूनिवर्सिटी' शब्द लिखे हुए मिले जिन्हें कोई भी न समझ सका। विजय-राघवाचार्य चालाक आदमी नहीं हैं और ऋषि भी नहीं हैं। 'नॉट' शब्द तो भूलसे रह गया होगा, लेकिन जब मैंने उन्हें एक कडा तार भेजा तब उन्होंने उत्तरमें अपनी भूल क्यों न सुधारी?

नये वर्षमें तुम तन, मन और हृदयसे स्वस्थ रहो — यह मेरा तुम दोनोंको आशीर्वाद है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११८२३) की फोटो-नकलसे।

१६२. तार : पारसी रुस्तमजीको

१ नवम्बर, १९२१

पारसी रुस्तमजी[2]
डर्बन

न्यासको भेजे गये अधिकार पत्रमें फेरफारकी आवश्यकता। बुनाई शालाके लिए चालीस हजारके उपयोगका अधिकार दें तथा और रुपया भेजें।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७२५) की फोटो-नकलसे।

१. विक्रम सम्वत्‌के अनुसार कार्तिक मासकी प्रथम तिथि।
२. नेटालके भारतीय व्यापारी जिन्होंने दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहमें प्रमुख भाग लिया था।

१६३. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

१ नवम्बर, १९२१

प्रात कालका समय है। तुम्हारा पत्र मेरे पास पडा हुआ है। तुम्हे अपने लिखेपर माफी माँगनेकी क्या जरूरत है?

मेरे लेख अथवा मेरे व्यवहारमे अनजाने ही अहकारकी गन्ध हो सकती है। मै नही जानता कि कैसे, लेकिन 'क्लेश' शब्दका अर्थ यहा कुछ अलग ही करना चाहिए। परदु खसे मुझे व्यथा होती है। करुणाका गुण ही यह होता है कि जब भी व्यक्ति दूसरोके दु खोको मिटानेमें असमर्थ होता है तब-तब वह असह्य पीडाका अनुभव करता है। मनकी दशाके वर्णनमे तर्क-शास्त्रकी बात लागू नही होती। मैंने अपनी भावनाओका[1] हूबहू चित्रण किया है। ये भावनाएँ दोषपूर्ण हो सकती है। लेकिन यह लिखते समय मेरे मनमे मोक्षकी भावना भी थी — मोक्षकी भावना उस समय कोई मन्द न थी लेकिन सच्ची बात यह है कि मै मोक्षार्थी हूँ, किन्तु इस जन्ममे आज भी मोक्षके लायक नही बन पाया हूँ। मेरी तपश्चर्या इतनी बलवान नही है। विकारोको मै वशमे रख सकता हूँ लेकिन मै विकार-रहित नही हुआ हूँ। स्वादपर काबू पा सकता हूँ लेकिन जीभका स्वाद लेना बन्द नही हुआ है। जो विषयेन्द्रियोको काबूमे रखता है वह सयमी है। लेकिन जिसकी इन्द्रियाँ अभ्यासके द्वारा विषयोका उपभोग करनेमे असमर्थ हो गई है वह तो सयमातीत है, वह मानो मोक्षकी दशामे अवतीर्ण हो गया है। स्वराज्यके लालचमे भी मोक्षके लिए प्रयत्न करना नही छोडूँगा लेकिन इससे यह तो नही कहा जा सकता कि मुझे मोक्ष मिला है? इसलिए मेरी भाषामे अवश्य तुम्हे त्रुटियाँ दिखाई देगी। स्वराज्य प्राप्त करनेका प्रयास भी मेरे लिए मोक्ष प्राप्त करनेका ही प्रयास है। तुम्हे लिखता हूँ, यह भी इसीके अन्तर्गत आता है। यदि तुम्हे यह पत्र लिखनेका कार्य अपने मोक्षके प्रयत्नमे बाधा जान पडे तो मेरी कलम इसी क्षण रुक जायेगी — ऐसी है मोक्षके प्रति मेरी लगन! ऐसा होनेपर भी मन तो मदिरापान किये हुए बन्दरके समान है, इसलिए उसको रोकनेके लिए खाली पुरुषार्थ ही काफी नही है। कर्म भी आडे ही आते रहते होगे।

जो वचन दे और उसका पालन न करे उसके साथ व्यवहार बन्द कर दे, इस न्यायका मैंने अपने "आशावाद" नामक लेखमे सुझाव दिया है। यह अनासक्तका लक्षण है। अगर मै अगले वर्ष भी हिन्दके वातावरणको प्रतिकूल पाऊँ और तिसपर भी इसी बातको दोहराता जाऊँ तो यह बलात्कार करनेके समान होगा। उस हालतमे पहले मुझे इसके योग्य बनना चाहिए। इसीसे मौनको सर्वोत्तम भाषण माना गया है। मै जो करूँगा वह मेरे लिए बिलकुल स्वाभाविक होगा, ऐसा मै अवश्य मानता हूँ क्योकि जिसे मै सत्य मानूँगा, मै वही कहूँगा और करूँगा।

१. देखिए "आशावाद", २३-१०-१९२१।

लेकिन "आजका लाभ ले लो, कल किसने देखा है", स्वेच्छाचारी और सयमी दोनो ही अपने-अपने जीवन व्यवहारमे इस नियमका उपयोग करते है।

नया वर्ष तुम सबके लिए फलदायक हो।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

१६४. पत्र: वालजीभाई देसाईको

रेलमें

बुधवार [२ नवम्बर, १९२१][1]

प्रेसमे राजस्थान सेवा सघके पतेपर 'यग इडिया' के अग्रिम प्रूफ भेजनेके लिए कहना। अगर वे बुधवार रातको डाकमे डाले जाये या बृहस्पतिवारको बहुत सवेरे, तो उसी दिनकी सवेरेकी मेलसे अजमेर पहुँच जायेगे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

भाईश्री ५ वालजी देसाई
'यग इडिया'
अहमदाबाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०४०) की फोटो-नकलसे।

सौजन्य वालजीभाई गोविन्दजी देसाई।

१६५. टिप्पणियाँ

अनशन

जेलमे अनशन करनेमे असहयोगी कैदी जो जल्दी कर डालते है उसके खतरेके विरुद्ध मै जितनी भी चेतावनी दूँ वह कम है। इस अनशनका समर्थन हम यह कह-कर तो कर ही नही सकते कि वह जेलकी तकलीफदेह बन्दिशोको हटवानेका एक उपाय है। क्योकि अगर जेलमे वे बन्दिशे न हो, जिनको हम अपने साधारण जीवनमें नही मानना चाहते, तो वह जेल ही क्या है। अनशन तो तभी ठीक कहा जा सकता है जब हमारे साथ अमानुषिक व्यवहार किया जाता हो अथवा हमे हमारे धर्मके खिलाफ खाना खिलाया जाता हो या ऐसा खाना खिलाया जाता हो जो मनुष्यके खाने योग्य न हो। हम खाना खानेसे तब भी इनकार कर सकते है जब वह हमे अपमान-

१ पत्रपर "अजमेर ३ नवम्बर, १९२१" की मुहर लगी हुई है। यह पत्र गाधीजीने दिल्ली जाते हुए रास्तेमें लिखा था।

जनक रीतिसे दिया जाये। अथवा यो कहे कि जब उसको लेनेसे हम भूखके गुलाम साबित होते हो तब हमे खाना लेनेसे इनकार कर देना चाहिए।

आखिर कैद हो गई

चटगाँवके नेता और असम-बगाल रेलवेके हडताल-आन्दोलनके प्राण श्री सेनगुप्तको उनके अठारह साथियोंके साथ आखिर कैदकी सजा दे दी गई। लेकिन बहुत दिनकी नही। उन्हे और उनके साथियोको सिर्फ तीन-तीन मासकी सख्त कैदकी सजा दी गई है। श्रीमती सेनगुप्त अपने पतिके विषयमें लिखती है कि वे सजा होनेके खयालसे बहुत प्रसन्न थे। जब मै चटगाँव गया था तब मुझे बताया गया था कि चटगाँवके लोगोने तो स्वराज्य प्राय प्राप्त कर लिया है। यह "प्राय" शब्द बडा भ्रामक है। उसका अर्थ पूर्णताके समीप या पूर्णतासे अत्यन्त दूर, दोनो ही हो सकते है। फिर भी हम उसका प्रयोग दोनोमे से किसी भी अवस्थाके लिए कर सकते है। परन्तु यदि चटगाँवके लोग सचमुच ही पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हो तो उन्हे अपने [पहनने-ओढनेके] तमाम कपडे अपने घरोमे खुद ही अपने हाथसे सूत कातकर बुन लेने चाहिए और विदेशी कपडा बेचनेवालोको प्रलोभन न देना चाहिए। चटगाँवकी अदालते सूनी और सरकारी पाठशालाएँ खाली हो जानी चाहिए। अगर वे इतना कर सके तो उन्हे 'सविनय अवज्ञा' करनेकी भी जरूरत न रहेगी। परन्तु शायद उनमे इतनी एकता या शक्ति न हो। फिर भी यदि जनताका एक बडा बहुमत स्वराज्य चाहता हो तो उसे थोडेसे लोग रोक नही सकते। किन्तु अधिक लोगोको उसका अधिकारी बननेके लिए सविनय अवज्ञा रूपी कठिन तपस्याकी अग्निमे से निकलना होगा।

कष्ट-सहन किसलिए ?

हम इन कैदकी सजाओका सच्चा मतलब समझनेमे गलती न करे। यद्यपि इनसे सरकार सचमुच तग होती है, तथापि इनको प्राप्त करनेमे हमारा हेतु 'सरकारको तग करना' नही होता है। हम नियम पालन तथा तपस्याके लिए जेल जाते है। हम इसलिए जेल जाते है कि हम उस सरकारकी अधीनतामे जेलसे बाहर रहना बुरा मानते है, जिसे हम तमाम बुराइयोसे भरी हुई मानते है। इसलिए अब हमे कोई भी ऐसा उपाय करनेमे कसर न रखनी चाहिए जिससे सरकार यह जान ले कि अब हम किसी तरह भी उसकी अधीनतामे नही रहना चाहते और आजतक किसी भी सरकारने इतना खुला विरोध — चाहे वह कितना ही आदरयुक्त क्यो न हो — बरदाश्त नही किया है। इसलिए यह तो कहा ही जा सकता है कि अगर हम अभीतक जेलकी दीवारोके बाहर है तो उसके लिए हम भी उतने ही जिम्मेवार है जितनी कि सरकार है। हम एक सस्थाके सदस्यकी हैसियतसे सावधानीसे काम करते जा रहे है। हम अभीतक सरकारके कई कानून अपनी खुशीसे मान रहे है। मसलन, मद्रास सरकारकी आज्ञाका उल्लघन करके गिरफ्तार होनेसे मुझे कोई नही रोक सकता था[1]

१. देखिए "टिप्पणियाँ", २९-९-१९२१ का उप-शीर्षक "पीडित मद्रास"।

किन्तु खुद मैंने ही उसे टाला। इसी प्रकार सिपाहियोके बैरकोमे बगैर इजाजत और उनमें अनुचित रूपसे प्रवेश करके कैद होनेसे भी मुझे अपनी दूरदर्शिता या कमजोरीके सिवा कोई नही रोक सकता। मेरा तो यह निश्चित विश्वास है कि ये बैरकें राष्ट्रीय सम्पत्ति है, और उस सरकारकी सम्पत्ति नही है जिसे मैं जनताकी सच्ची प्रतिनिधि नही समझता। इसलिए एक ओर एक खराब सरकारके अन्तर्गत जेलसे बाहर रहना दुःखदायक है यह कहना और दूसरी ओर ऐसे कारणोसे जो पूर्णत नैतिक नही हैं, बल्कि अधिकाशमे समयोपयोगी है, कैदको जान-बूझकर टालना, इन दोनो बातोमे ऊपर ही ऊपर देखनेसे विरोध मालूम होता है। इस तरह हम कैदसे इसलिए बचते हैं कि एक तो हमारे विचारसे राष्ट्र अभी पूर्ण सविनय विद्रोहके लिये तैयार नही हुआ है और दूसरे हम यह समझते हैं कि देशमे अभी स्वेच्छापूर्ण आज्ञापालन और अहिसा-का वातावरण पक्का नही बना है और तीसरे, हमने अभी कोई ऐसा सुसगठित रचनात्मक कार्य नही किया है जिससे लोगोमे आत्मविश्वास उत्पन्न हो जाये। इसलिए हम अभी सविनय अवज्ञा, जो एक शान्तिपूर्ण विद्रोह होगा, शुरू नही करते, बल्कि महज अपने कार्यक्रमके अनुसार सामान्य काम करते हुए और मत-प्रकाशनकी पूरी स्वतन्त्रताकी रक्षा करते हुए तथा बगावतके अतिरिक्त अन्य कार्योको करते हुए कैद होते हैं।

इसलिए यह साफ है कि एक बुरी सरकारकी जेलोसे हमारा बाहर रहना तभी तक ठीक कहा जा सकता है जबतक उसके लिए वैसे ही असाधारण कारण हो। और हमे पूरा स्वराज्य तो तभी मिलेगा जब या तो हम जेलोमे चले जायेंगे या सरकारको अपनी इच्छाके सामने झुकायेंगे। इसलिए चाहे सरकार हमारे जेल जानेसे तग आती हो, चाहे प्रसन्न होती हो, हमारे लिए तो सुरक्षा और सम्मानका स्थान बस एक जेल ही है। और यदि यह स्थिति हमे मजूर हो तो इसका अर्थ यह होता है कि हमे जब अपना कर्त्तव्य पालन करते हुए जेल जाना पडे तब उससे हमे प्रसन्न ही होना चाहिए, क्योकि उससे हममे बल बढता है, तथा उस रूपमे हम अपने उचित कर्त्तव्य-पालनकी कीमत अदा करते हैं। और यदि अपनी सच्ची शक्तिको प्रदर्शित करना ही उत्कृष्ट आन्दोलन हो तो हमे विश्वास होना चाहिए कि जब एक भी मनुष्य जेल जाता है तो उससे जनताकी शक्ति बढती है और स्वराज्य नजदीक आता है।

कुछ विलक्षण बात

मेरे कई मित्र आकर कानमे मुझसे कहते हैं कि युवराजके आनेके समय हमे कुछ-न-कुछ ऐसा काम करना चाहिए जिसमे कुछ विशेषता हो, जो सबको चकित कर दे। इसका मतलब यह नही है कि वह काम युवराजपर असर डालनेके लिए किया जाये या लोगोको दिखानेके लिए किया जाये। परन्तु मैं तो युवराजके इस जबरदस्ती आगमनके अवसरका उपयोग अपने सब लोगोको अधिक कार्यशील बनानेके लिए करना चाहता हूँ। युवराजपर तथा सारे ससारपर उसका बहुत अच्छा असर होगा, क्योकि इस तरह हम खुद अपने आपपर ही असर डालेंगे। स्वराज्यका सबसे नजदीकका रास्ता तो है सामाजिक और वैयक्तिक आत्म-सस्कार, आत्माभिव्यक्ति और स्वावलम्बन। मुझे यह कल्पना सचमुच बडी प्यारी मालूम होती है कि युवराजके आनेके पहले हम

सब जेलोको भर दे। परन्तु मुझे उसके लिए जोर-शोरसे स्वदेशीके प्रचारके सिवा दूसरा मार्ग ही नही दिखाई देता। निःसन्देह उस दिशामे हमारी प्रगति तो बहुत हुई है, परन्तु उसमे क्रान्तिकारी अथवा बिजली-जैसी गति नही है। अब हमारा काम इस प्रकार चीटीकी चालसे नही चल सकता, बल्कि हमे दिन-दूनी और रात चौगुनी प्रगतिकी परम आवश्यकता है। स्वदेशीकी भावनाके स्पर्श-मात्रसे हमारा काम न चलेगा, वह हमारे मनमे पूरी तरह भर जानी चाहिए। तब हम आप ही आप हजारोकी संख्यामे इस तरह सविनय अवज्ञा भग करनेके लिए आगे बढेगे, मानो हमारे सबके मनमे एक ही खयाल हो। आज पूरा आत्मविश्वास न होनेके कारण हमे एक-एक पैर गिन-गिनकर रखना पडता है और यह ठीक भी है। असलमे अभी तो मुझे यह भी यकीन नही हुआ है कि हजारो लोग जेल जानेके लिए तैयार है या अहिंसाके सन्देशको यहाँतक समझ गये है कि उकसानेपर भी कदापि हिंसा न करेगे।

छँटनी

मद्रास सरकार सभी खास-खास लोगोको छाँट-छाँटकर बडी तेजीसे बीन रही है। श्री याकूब हसन और डाक्टर वरदराजुलु उसके नये शिकार है। श्री याकूब हसन-को सभी लोग एक अथक परिश्रमी खिलाफत कार्यकर्त्ता और राष्ट्रवादी व्यक्तिके रूपमे जानते है। वे कालीकटकी एक भीडको हिंसा करनेसे रोकनेकी कोशिश करते हुए बाध्य होकर असहयोग करनेके कारण कैद भोग चुके है। क्षणिक कमजोरी दिखानेके कारण वे अपनी मियाद खतम होनेसे पहले ही रिहा कर दिये गये थे। उन्होने ऐसी कम-जोरीके कारण माफी माँगी थी जिसे श्री याकूब हसनकी स्थितिमे कोई भी आदमी दिखा सकता है। मद्रास सरकारने अब उनको यह दिखानेका मौका दिया है कि वे किस मिट्टीके बने है। डाक्टर वरदराजुलुको मद्रास अहातेके बाहर उतने लोग नही जानते, लेकिन स्थानीय रूपसे वे अपनी योग्यता और कर्मठताके लिए काफी प्रसिद्ध है और लोग उनके स्वार्थ-निरपेक्ष देशप्रेमके लिए उनका बडा आदर करते है। वे जी-जानसे जुट कर काम करनेवाले कार्यकर्त्ताओका एक दस्ता तैयार कर रहे थे और बडे कारगर ढगसे स्वदेशीका काम चला रहे थे। वे अपने किसी भाषणके कारण बिलकुल ऐसे ही गिरफ्तार कर लिये गये है जैसे श्री याकूब हसन अपने तजौरके भाषणके कारण। हिंसात्मक कार्योकी शुरूआत हो जानेका खतरा अब प्रायः दूर हो गया है। लोग समझ गये है कि उनकी प्रगति बिलकुल अहिंसक रहनेसे ही हो सकती है। इस प्रकारकी प्रत्येक गिरफ्तारीसे सरकारकी शान कम होती है और उसकी तौहीन होने अथवा उसका मजाक उडनेकी गुंजाइश पैदा होती है। असहयोगियोके मजाक उडाने और तौहीन करनेसे उसका जितना नुकसान होता है वह उस नुकसानका आधा भी नही है जो स्वयं सरकार द्वारा इस प्रकार की गई गिरफ्तारियोसे होता है।

विश्रामोपचार

और जनताके मनसे जेलोका आतंक निकल गया है। एक या दो व्यक्तियोको छोडकर शायद ही कोई असहयोगी ऐसा होगा जिसने जेल जानेमे जरा-सी भी हिचक

दिखाई हो। उलटे प्राय लोग इसे आरामका इलाज मानते है। स्वराज्यकी स्थापनाके लिए सबसे अच्छी स्थिति वही होगी जिसमे अहिंसाका वातावरण हो—जो सबसे ज्यादा जरूरी है—लोगोके मनसे जेलका आतक निकल जाये और जेल जानेवालोके कारण कामकी सरगर्मी और भी बढ जाये।

स्वस्थ राष्ट्रीयताका सबूत

स्थितिका सही-सही अध्ययन करनेवाले दो पर्यवेक्षकोके पत्रोसे यह पता चलता है कि कैदकी सजाओसे निराशाकी भावना पैदा होनेके बजाय राष्ट्रीयताके अधिक स्वस्थ विकासको प्रोत्साहन मिलता है। बारीसालसे एक मित्र लिखते है

> हिन्दू-मुसलमानोकी एकताके लिए, जो अब काफी पक्की है, और विदेशी वस्त्रोके बहिष्कारके लिए, जो जनतामें अब पूरी तरह सफल हो चुका हे, पूर्वी बगाल पीर बादशाह मियाँकी गिरफ्तारीका बडा आभारी है।

इस बारेमे आन्ध्र देशका प्रमाण भी इतना ही सबल हे। आन्ध्रके पत्रमे कहा गया है

> यद्यपि स्वदेशीकी वास्तविक भावना अभी जनताके हृदयपर विजय नहीं प्राप्त कर सकी है फिर भी इस बातके काफी सबूत मौजूद है कि इस आन्दोलनके प्रति लोगोकी आस्था बढ़ती जा रही है। कई स्थानोमें आवश्यक खादी उपलब्ध नही है। बुनकर अभी स्वदेशी सूत बुननेके लिए पूरी तरह राजी नहीं हुए है, और जो राजी भी है उनके लिए काफी सूत नही मिलता। इस दिशामें एक बातसे प्रगति बढ गई प्रतीत होती हे और वह हे सरकार द्वारा दमनकी नीतिका आश्रय लेना। अनेक सुस्त और उदासीन लोग किसी-न-किसी काग्रेस कार्यकर्त्ताके गिरफ्तार किये जाने और जेल भेजे जानेकी वजहसे क्रियाशील हो गये है और यदि बडे पैमानेपर गिरफ्तारियाँ की जाने लगी तथा कैदकी सजाएँ दी जाने लगीं तो इसमें शक नहीं हे कि सभी दिशाओमें प्रगति और भी बढ जायेगी। जैसे-जैसे हम आगे बढते जाते है वैसे-वैसे हम देखते है कि हिंसात्मक कार्योका खतरा कम होता जाता है।

मुझे कराचीसे जो भी पत्र लिखता हे वह इसी बातकी पुष्टि करता है कि लोगोमे जैसे-जैसे अनुशासन और आत्म-नियन्त्रण बढता जाता है और वे स्वदेशीको अपनाते जाते है वैसे-वैसे उनकी शक्ति भी बढती जाती हे। इन सबका कारण यह है कि इन विशिष्ट कैदियोपर कराचीमे मुकदमा चलाया जा रहा है। इस मुकदमेके माध्यमसे सरकार और जन-साधारणको अहिंसाका और ऐसे साहसका सबक सिखाया जा रहा है जो प्राय खुली अवज्ञा-जैसा ही है। ब्रिटिश भारतकी एक अदालतमें कराचीमे पहली बार यह बात कही गई है कि "हमारे मनमे तुम्हारी अदालतोके लिए कोई इज्जत नही हे।" इससे भी बडी बात यह है कि न्यायाधीश अदालतके इस प्रकार खुले आम किये गये अपमानके सम्बन्धमे कुछ भी नहीं कर सका है। क्या? इसलिए

कि इस बातको कहनेवाले भारी-भरकम मनुष्य शौकत अलीके मनमे (न्यायाधीश) कैनेडीके प्रति व्यक्तिश किसी प्रकारका रोषका भाव नही था। उन्होंने यह कहकर वास्तवमे उस मनुष्यके प्रति, जो न्यायाधीशकी कुर्सीपर बैठा था अपनी आत्मीयताका परिचय दिया था कि वह जिस व्यवस्थाका अन्ध-समर्थक है उससे वे घृणा करते है।

तर्क-सगत परिणाम

इन सब दलीलोका तर्क-सगत परिणाम यही निकलता है कि हमे शीघ्रतासे बडे पैमानेपर इच्छापूर्वक गिरफ्तार होनेके लिए अपने आपको सगठित कर लेना चाहिए। इसमे उद्दण्डता, कठोरता अथवा छीना-झपटी नही की जानी चाहिए, हिंसा तो कभी की ही नही जानी चाहिए, बल्कि इसे बहुत शान्ति, सौम्यता, विनय, नम्रता, भक्तिभाव और साहसके साथ करना चाहिए। दिसम्बरके अन्ततक प्रत्येक कार्यकर्त्ताको जेलके भीतर पहुँच जाना चाहिए, बशर्ते कि उससे विशेष रूपसे यह न कहा जाये कि वह इस सघर्षके हितकी दृष्टिमे जेल जानेका प्रयास न करे। परन्तु, यह याद रखना चाहिए कि सविनय अवज्ञामे हम स्वय गिरफ्तारीको न्योता देते है और इसीलिए बहुत थोडे-से लोगोको इससे बरी रखा जा सकता है।

आवश्यक शर्तें

सविनय अवज्ञा केवल वे लोग ही कर सकते है जो राज्य द्वारा लागू किये गये परेशान करनेवाले ऐसे कानूनोतक का स्वेच्छासे पालन करनेमे विश्वास करते हो, जो उनकी आत्मा अथवा धर्मको ठेस नही पहुँचाते हो और जो उसी तरह स्वेच्छासे सविनय अवज्ञाका दण्ड सहनेके लिए तैयार हो। अवज्ञा विनयपूर्ण हो, इसके लिए जरूरी है कि उसमे हिंसा बिलकुल न हो, क्योकि उसका अन्तर्निहित सिद्धान्त यह है कि स्वय कष्ट उठाकर, अर्थात् प्रेम द्वारा विरोधीका हृदय जीता जाये।

खिलाफत, पजाब या स्वराज्यके प्रयोजनके लिए सविनय अवज्ञा करनेवालोके मनमे हिन्दू-मुस्लिम एकताकी आवश्यकताके बारेमे पूर्ण निष्ठा होनी चाहिए और उसका आधार वक्तकी जरूरत नही, बल्कि सच्चा प्रेम होना चाहिए। सविनय अवज्ञा करनेवालोको स्वदेशीमे विश्वास रखना चाहिए और इसीलिए उन्हे केवल हाथ-कते सूतके बने कपडे काममे लाने चाहिए। व्यावहारिक दृष्टिसे यदि भारतके ढाई सौ जिलोमे से एक भी जिला इस कामके लिए तैयार नही है तो मै इस साल स्वराज्य प्राप्त करना प्राय असम्भव मानता हूँ। यदि एक भी जिला ऐसा मिल सके जिसकी नब्बे फीसदी आबादीने विदेशी कपडेका बिलकुल बहिष्कार कर दिया हो और जो अपनी जरूरतका पूरा कपडा हाथसे कात-बुनकर तैयार करती हो, यदि उस जिलेकी पूरी आबादी, चाहे उसमे हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सिख, ईसाई अथवा यहूदी कोई भी हो, बडे मेल-जोलसे रहती हो, यदि उसकी पूरी हिन्दू आबादी छुआछूतके पापसे मुक्त हो चुकी हो और यदि उसके प्रत्येक दस निवासियोमे से कमसे-कम एक व्यक्ति जेल जानेके लिए अथवा फाँसीके तख्तेपर चढनेके लिये तैयार हो, और जब उस जिलेमे सविनय, शान्तिपूर्वक और सम्मानपूर्वक ढगसे सरकारकी मुखालफत की जा रही हो

तब यदि भारतके बाकी लोग अहिंसक और ऐक्यबद्ध रह सके तथा स्वदेशीके कार्य-क्रम पूरे करते रहे तो मेरा विश्वास है कि इस वर्षके दौरान स्वराज्यकी स्थापना पूरी तरह सम्भव है। मै आशा तो यही करता हूँ कि ऐसे कई जिले तैयार होगे। जो भी हो, कार्यकर्त्ताओको अब यही तरीका अपनाना चाहिए कि वे दूसरोकी चिन्ता छोडकर अपने-अपने जिलोपर पूरा ध्यान लगाकर उनको तैयार करे। वे जबतक पूरी तरह तैयार न हो जाये, तबतक कैदको न्योता न दे, और यदि बिना बुलाये उसकी नौबत आ ही जाये तो उससे मुँह न मोडे। उन्हे भाषण न देकर स्वदेशीका कार्यक्रम बिलकुल काम-काजी ढगसे पूरा कर लेना चाहिए। जहाँ कार्यकर्त्ताओको अपने जिलेमे किसी प्रकारका प्रोत्साहन न मिले वहाँ उनको हतोत्साह न होकर एक धुनाई, कताई और बुनाईके काममे ही महारत हासिल कर लेनी चाहिए। जिस समय उनके आसपास-के लोग इसी सोच-विचारमे पडे हो कि क्या किया जाये, उस समय यह उत्पादन ही उनके लिए सर्वश्रेष्ठ और सर्वागपूर्ण कार्य होगा।

फूट डालो और राज करो

मद्रासमे श्री याकूब हसनकी गिरफ्तारी और दिल्लीमे श्री अन्सारी, सिन्धमे पीर मुजद्दिद और बगालमे पीर बादशाह मियाँकी जेल-यात्रासे एक पाठकने यह निष्कर्ष निकाला है कि सरकार हमारे बीच फूट डालनेकी कोशिश कर रही है। वह हिन्दुओको हाथ भी नही लगा रही है। इस प्रकार सरकार हिन्दुओको अपना फरमा बरदार बना रही है और काग्रेसकी बैठक होनेतक एक भी महत्त्वका ऐसा मुसलमान असहयोगी बाहर नही बचेगा जो काग्रेसमे भाग ले सके और मुसलमानोसे सम्बन्ध रखनेवाले प्रश्नोके बारेमे उसकी नीतिका मार्गदर्शन कर सके। मुझे आशा है कि इस पाठकका यह विश्लेषण सही नही है और सरकार ऐसी खतरनाक गलती नही करेगी। मेरा खयाल है कि सरकार अब समझ गई है कि वह हिन्दू और मुसलमान असहयोगियोमे फूट नही डाल सकती। यदि उसने पीर बादशाह मियाँको गिरफ्तार किया है तो उसने डाक्टर बनर्जी, नृपेन बाबू और बाबू सेनगुप्तको भी पकडा है। जहाँ उसने श्री याकूब हसनको पकडा है वहाँ डाक्टर वरदराजुलुको भी गिरफ्तार किया है। लेकिन यदि सरकार सभी प्रमुख मुसलमानोको जेलमे डाल ही देती है तो इससे तो दोनो सम्प्रदायोका एका और भी मजबूत हो जायेगा और हिन्दुओको खिलाफतकी लडाई अकेले चलानेका अद्वितीय मौका मिल जायेगा। यदि हिन्दुओमे कुछ भी बल होगा तो वे शान्ति और सम्मानपूर्ण तरीकोसे सरकारको इस बातके लिए मजबूर कर देगे कि वह उनको भी जेलमे डाल दे।

सराहनीय दान

पाठकोने मेरे नाम छोटानी मियाँका वह पत्र जरूर देखा होगा जिसमे उन्होने एक लाख चरखे देनेकी बात कही है। इतनी उदारतापूर्ण सहायता देनेके लिए छोटानी मियाँ हार्दिक बधाईके पात्र है। मैने उन्हे यह बतानेकी चेष्टा की है कि इस प्रयोजन-के लिए उन्होने जो धन रख छोडा हो उसका उपयोग वे किस प्रकार कर सकते

है। उपयोगी ढंगसे एक लाख चरखे बाँटनेका काम आसान नहीं है। ये चरखे केवल उन्हीं लोगोंको दिये जा सकते हैं जो हर दृष्टिसे सुपात्र हों। इसलिए पूनियाँ देने और सूत लेनेका प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

दो विद्यार्थी

श्री मुहम्मद हुसैन और श्री शफीक रहमान किदवई राष्ट्रीय मुस्लिम विश्वविद्यालयके छात्र हैं। मौलाना मुहम्मद अलीने उनको आन्ध्र जिलेमें नियुक्त किया था। वे वहाँ बिना कोई दिखावा किये बहुत अच्छा काम कर रहे थे। वे तो जेल चले भी गये हैं जब कि उनके नेतापर अभी मुकदमा ही चल रहा है। वे जिन परिस्थितियोंमें जेल गये उसका सजीव चित्रण उस पत्रमें किया गया है जो उन्होंने जेल जाते-जाते रास्तेमें लिखकर मुझे भेजा है। उसे मैं ज्योंका-त्यों नीचे उद्धृत कर रहा हूँ

> गुण्टकलसे आपको विदा करनेके बाद हम अडोनी चले गये जहाँ हमें डा० हरिसर्वोत्तम रावका तारसे यह निर्देश मिला कि हम कडप्पा आ जायें क्योंकि वहाँ तीन कांग्रेस-कार्यकर्त्ता गिरफ्तार हो गये थे। हम ग्यारह अक्तूबरको वहाँ चले गये और गण्टूरके कुछ साथियोंके साथ काम करने लगे। वहाँ हमने कई सभाएँ कीं और कांग्रेस तथा खिलाफत समितियाँ कायम कीं। २१ अक्तूबरको छः हजारसे भी अधिक लोगोंकी विशाल सभामें हमने फतवा वितरित किया और श्रोताओंने खड़े होकर कराची-प्रस्तावका समर्थन किया। वहाँ हमने १९०० लोगोंके हस्ताक्षर लिये और अकारा भेजनेके लिए ढाई हजार रुपये जमा किये। २४ तारीखकी शामको सभी कार्यकर्त्ताओंपर दफा १४४ तामील कर दिया गया, जिसके द्वारा दो महीनेके लिए हमारे बोलनेपर पाबन्दी लगा दी गई। कल तड़के हमें अदालतमें हाजिर होकर नेकचलनीकी जमानत देनेके लिए सम्मन दिये गये। उसके मुताबिक हम कचहरी चले गये और वहाँ कलक्टरकी इजाजतसे (यूरोपीय) पुलिस सुपरिटेंडेंटसे दो घंटेतक गैर-रस्मी तौरपर बातचीत करते रहे। उसके बाद मुकदमा शुरू हुआ और हमपर दफा १०८ के मातहत देशद्रोहके लिए भड़कानेवाले भाषण करने और दफा १२४-क के अधीन फतवा बाँटकर और उसकी व्याख्या करके सैनिकोंको देशद्रोहके लिए भड़कानेका इल्जाम लगाया गया। सबूतके दो गवाहोंके बयान होनेके बाद हमने अपने बयान दिये और अदालत तीसरे पहर ४ बजेतक के लिए उठ गई। सभीको यह देखकर बड़ा ताज्जुब हुआ कि हमें बिना किसी पुलिस हिरासतके शहरमें अपने डेरेपर जाने दिया गया। चार बजे हम अदालतमें लौटे और मजिस्ट्रेटने हमसे जमानत देनेके लिए कहा, जिससे हमने इनकार कर दिया। इसपर मजिस्ट्रेटने हमें छः महीनेकी सादी कैदकी सजा देते हुए कहा. "जनाब, आप-जैसे विचारोंके लोगोंको सजा देनेका काम बड़ा कष्टप्रद है।" इसके बाद उसने हमसे हाथ मिलाये। सुपरिटेंडेंटने हमसे गले मिलते हुए कहा, "मैं भी इस देशकी भलाईके

लिए आपके कन्धेसे-कन्धा भिड़ाकर काम करना चाहता हूँ।" उसके बाद भी उन्होंने हमें हिरासतमें नहीं लिया। हम मस्जिदमें गये और नमाज पढ़नेके बाद नगरकी जनताके साथ स्टेशन पहुँच गये, जहाँ हमें एक थानेदार और दो सिपाही मिले जो हमें वेल्लोरकी केन्द्रीय जेलमें ले जानेके लिए हमारा इन्तजार कर रहे थे। हमें पुलिससे ऐसे बर्तावकी कभी उम्मीद नहीं थी क्योंकि उसने श्री राम-मूर्ति और अन्य लोगोंसे बड़ा कठोर बरताव किया था। हमें इस बातकी बड़ी खुशी हुई है कि हम अपने स्नेही और श्रद्धेय प्रिंसिपल मौलाना मुहम्मद अलीके नक्शे-कदमपर चल सके हैं और हमने अपने आपको इस बातके लिए बड़ा मुबारकबाद दिया है कि फतवा बाँटकर और कराची-प्रस्तावका समर्थन करके सेनाको विद्रोह करनेके लिए उभाड़नेके तथाकथित इल्जामपर सजा पानेवाले पहले लोग हमीं हैं। हमने अपना फर्ज पूरा कर दिया है और आपसे विनती है कि आप हमें अपनी दुआएँ दें। हमारा दिल बड़ा खुश है और परवरदिगारसे यही दुआ है कि वह हमें सभी तकलीफों और मुश्किलोंका सामना करनेकी हिम्मत और ताकत दे।"

मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि सबसे ज्यादा बधाई किसे दूँ, इन बहादुर नौज-वानोंको, मजिस्ट्रेट और पुलिसको या उस प्रिंसिपलको जिसने इन नौजवानोंका चरित्र बनाया है। ऐसे मासूम लोगोंको जेल भेजनेवाली सरकारके लिए मैं यही कह सकता हूँ कि इस प्रकार वह खुद ऐसे ढंगसे अपनी कब्र खोद रही है जिस ढंगसे कोई असह-योगी भी नहीं खोद सकता।

दस अनमोल कारण

बिहार सरकारके प्रचार विभागने हिन्दुस्तानीमें पर्चे निकाले हैं जिनमें विदेशी कपड़ेका बहिष्कार न करनेके दस कारण बताये गये हैं। पाठकोंको यह मालूम होना ही चाहिए कि सुधारोंपर अमल किस ढंगसे किया जा रहा है और जनताको किस तरह गुमराह किया जा रहा है। ये कारण इस प्रकार हैं

१ भारतमें जितना कपड़ा तैयार होता है वह हमारी जरूरतोंके लिए काफी नहीं है।

२ जिन लोगोंको काफी अर्सेसे महीन कपड़े पहननेकी आदत है उन्हें भारतीय सूतसे बने कपड़े पहननेमें भारी लगते हैं।

३ भारतीय कपड़ा-मिलें महीन कपड़ा बुननेके लिए विदेशी सूत ही काममें लाती हैं।

४ यदि हम विदेशी कपड़े पहनना छोड़ दें तो हमारी वैसी ही दुर्दशा होगी जैसी सन् १९०५ में स्वदेशी आन्दोलनके फलस्वरूप हुई थी। उस समय भारतीय कपड़ा-मिलोंने दाम बढ़ाकर हमारा सारा धन खींच लिया था। इस प्रकार मिल-मालिक हमें बरबाद करके अपनी तिजोरियाँ भरेंगे। 482

५ जबतक विदेशी कपडेका आयात होता रहेगा, भारतीय और विदेशी कपडोमे होड बनी रहेगी और इस प्रकार मिल-मालिक दाम बहुत ज्यादा नही बढा सकेंगे।

६. हिन्दुस्तानमे इतनी कपडा-मिले अथवा हाथ-करघे नही है जो हमारी जरूरत-भरका पूरा कपडा तैयार कर सकें।

७ हाथसे सूत कातनेका काम लाभदायक नही है, क्योंकि इससे दो आने रोजसे ज्यादाकी आमदनी नही हो पाती।

८. हाथ-करघोसे बहुत थोडा कपडा बुना जाता है, इसलिए उनसे ज्यादा उत्पादन नही किया जा सकता।

९ इस प्रकारके बहिष्कारसे बडी अशान्ति और उत्तेजना फैलेगी और हिन्दुस्तानकी तरक्की बहुत ज्यादा हदतक रुक जायेगी।

१० कपडेके दाम बढनेसे गरीबोको बडा कष्ट होगा और सारे देशमे असन्तोष फैलेगा।

मुझे आशा है कि लॉर्ड सिन्हाको[1] इन अनमोल कारणोके बारेमे कोई जानकारी नही होगी, लेकिन वे इस जिम्मेदारीसे बच नही सकते। मै यह मानता हूँ कि किसी एक व्यक्तिके लिए मानवीय सामर्थ्यको देखते हुए किसी बडे प्रान्तके सभी विभागोके छोटे-छोटे कामोपर पूरा नियन्त्रण रखना सम्भव नही है। लेकिन यही तो वह वजह है कि किसी भी स्वाभिमानी मनुष्यको इस सरकारकी सेवा नही करनी चाहिए। यह व्यवस्था तो बनाई ही इसीलिए गई है ताकि विदेशी पूजीपतियो, विशेष रूपसे लकाशायरके उत्पादकोके लाभार्थ भारतका शोषण किया जा सके और विदेशी जुआ हमारे कन्धोपर कायम रखा जा सके। यदि प्रत्येक विभागमे इस प्रकार स्वार्थ-साधन करनेकी दृष्टिसे काम न किया जाता तो जिस परिपत्रका अनुवाद मैंने ऊपर दिया है उसका जारी किया जाना असम्भव होता। राष्ट्रीय सरकारका अत्यन्त स्वाभाविक कार्य होगा हाथ-करघो और चरखोकी सख्या बढाना और बाजारोको हाथ कते सूतके हाथ-बुने कपडेसे भर देना। राष्ट्रीय सरकार मिल-मालिकोको अनुचित रूपसे दाम बढानेसे रोकेगी और इस महान् जन-जागृति और आन्दोलनका लाभ उठाकर इस महान् कुटीर उद्योगके पैर जमा देगी। इन अनमोल कारणोको गढनेवाले मनुष्यको ये बाते नही सूझी कि करोडो लोगोको तो अब भी कपडा पहननेको नही मिलता, कि कताईका लाभ तो फुर्सतके वक्त करनेके लिए है, कि करोडो लोगोको सूत कातनेके लिए कुछ भी नही देना पडेगा और चूंकि कताई वे स्वय करेंगे इसीलिए हाथ-कते सूतका बना कपडा उन्हे अपेक्षाकृत वैसे ही सस्ता पडेगा जैसे होटलके भोजनसे घरका भोजन सस्ता पडता है। सरकारके इस परिपत्रसे हमे यही शिक्षा लेनी चाहिए कि हम स्वदेशीके पक्षमे किये जानेवाले अपने कार्योको बढा दे और उस व्यवस्थाका अन्त करनेमे जरा भी देर न करे जो घुनकी तरह हमारे राष्ट्रके परमावश्यक अगोको खाए जा रही है।

१. सत्येन्द्रप्रसन्न सिन्हा (१८६४–१९२८), बिहार और उडीसाके गवर्नर १९२०-२१। वाइसरायकी कार्यकारिणीके प्रथम भारतीय सदस्य। अध्यक्ष, भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस, १९१५।

कूकी कवायली

मैंने अपनी असम-यात्राके दौरान कूकी कवायलियोंका जो उल्लेख किया था मेरे एक मित्रने उसके सम्बन्धमे निकाली गई एक सरकारी विज्ञप्ति भेजी है। मुझे अफसोस है कि मैं उस टिप्पणीको प्रकाशित होनेके बाद बहुत दिनतक नही देख सका। परन्तु कुछ भी हो, मैं जो-कुछ लिख चुका हूँ उसका कोई भी अश वापस लेनेके लिए तैयार नही हूँ। मुझे जिन लोगोसे वह जानकारी मिली थी उनका कहना था कि वास्तविक तथ्य दबा दिये गये है। यदि काग्रेसने जाँच न की होती तो मार्शल-लॉके अन्तर्गत की गई पजाब सरकारकी अमानुषिक करतूतोंका पता किसे चलता? जबतक के और मेलिसनने पर्दाफाश नही किया था तबतक जनताको इस बातका क्या पता था कि १८५७ के विद्रोहके दौरान सेनाने क्या-क्या जुल्म ढाये थे। हमारे पडोसियोको सजा देनेके लिए समय-समयपर जो अभियान किये जाते हैं उनके वास्तविक तथ्य किसे मालूम है? मैं यह कह सकता हूँ कि सैनिक भरतीके अन्धकार-पूर्ण दिनोंमें पजाबमे जो अत्यन्त नृशसतापूर्ण अत्याचार किये गये थे उनके बारेमे जनताको अब भी कोई जानकारी नही है, और यदि कुछ है तो अधिक नही है। मेरे पास वे सबूत मौजूद है जो मैंने पजाब सरकारके सामने पेश किये थे, लेकिन मैंने जनताके सामने नही रखे है क्योंकि समय कम होनेसे ब्यौरेकी जिन बातोका पता चला था उनके बारेमे मैं आगे जाँच नही कर पाया था। मैंने ऐसे खण्डन बहुत देखे हैं जिनकी असत्यता प्रामाणोंके आधारपर सिद्ध करना शायद सम्भव न हो। इसलिए मैंने सोच-समझकर असमके अत्यन्त प्रतिष्ठित व्यक्तियो द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रमाणोको ही माना है, उसकी तुलनामे सरकारकी ओरसे दिये गये अधिकृत किन्तु स्वार्थ-प्रेरित वक्तव्यको नही माना है और मैं कूकी कवायलियोंके सम्बन्धमे लिखी गई अपनी उस टिप्पणीपर अनिच्छापूर्वक कायम रहनेके लिए मजबूर हूँ जिसका खण्डन स्थानीय सरकारने किया है।

'स्टेट्समैन' के एक सवाददाताने कूकियोको बेहद बुरा बताया है। मुझे उस कबीलेके लोगोके बारेमे कुछ भी पता नही है। मैं उनका समर्थन नही करता। हो सकता है कि वे जितने खराब बताये गये है उससे भी ज्यादा खराब हो। परन्तु यदि मैं दण्ड देनेके लिए भेजे गये अभियान-दलका नायक होता तो मुझे सूचना देनेवालोके कथनानुसार, जो अत्याचार इस अभियान-दलने किये है, मैं उनका अपराधी न होता।

कर्मचारियोंके लिए

एक पत्र-लेखकने पूछा है

रेलवे कम्पनियो, यूरोपीय पेढ़ियो और अन्य ऐसे प्रतिष्ठानोके कर्मचारियो-को, जो यह नहीं चाहते कि उनके कर्मचारी राष्ट्रीय कोषमें चन्दा दें या खादी पहनें, आप क्या यह सलाह देंगे कि वे काग्रेसकी आज्ञाको स्वीकार कर इस्तीफा दे दें?

मै तो यह समझता था कि सघर्पके इस अन्तिम चरणमे इस प्रश्नको हल करनेकी आवश्यकता नही रहेगी। मुझे ताज्जुब तो इस बातका है कि कोई व्यक्ति ऐसे किसी पदपर कैसे रह सकता है जिसपर रहकर वह अपने धर्मका पालन न कर सके या अपने आत्म-सम्मानको कायम न रख सके। सैकडो क्लर्क जीवनदायी खादीको पहनने अथवा राष्ट्रीय कोषमे खुले आम चन्दा देनेसे रोके जानेके बावजूद अपनी नौकरियाँ छोडना असम्भव मानते हैं, इससे प्रकट होता है कि हम कितने नीचे गिर गये है। आत्म-सम्मानकी आरम्भिक बाते सीखनेके लिए असहयोगके कठोर पाठकी आवश्यकता नही थी। लेकिन पिछले कुछ महीनोसे असहयोगको बिलकुल यही काम करना पड रहा है। मै प्रत्येक कर्मचारीसे विशाखापट्टमके मैडिकल कालेजके बहादुर विद्यार्थियोके उदाहरणका अनुकरण करनेकी सिफारिश करता हूँ जिन्होने अपने विद्यालयमें बने रहनेकी खातिर खादीकी पोशाकको नही छोडा।[1]

चिरला-पेरला

इन छोटे-छोटे स्थानोके बहादुर लोग अब भी अपना सघर्प जारी रखे हुए है।[2] उनके नेता श्री गोपालकृष्णय्या जेलमे है। लेकिन उन लोगोने हिम्मत नही हारी है। वे अब भी अपने झोपडोमे मौजूद है। मेरे सामने एक पत्र रखा है, इसमे लेखकने लिखा है, "लोग डटे हुए है। उनके गाँवके कुछ अत्यन्त प्रमुख नेताओपर नगरपालिका-के कर न देनेके कारण हाल ही मे मुकदमे चलाये गये है और वे लोग खुशी-खुशी जेल चले गये है। इससे उनका यह निश्चय और भी पक्का हो गया है कि वे वापस लौटकर गाँवमे नही जायेगे। फिलहाल दोनो गाँव अपने इस निश्चयपर डटे हुए है कि तमाम हानियो, कठिनाइयो और कष्टोके होते हुए भी अपनी बातपर कायम रहेगे। कुछ ऐसे गरीब जरूर है जिनके झोपडे गिर चुके है और कुछ ऐसे है जिनको नये झोपडोकी जरूरत है।" इसी तरहके लोगोकी शक्तिसे ही स्वराज्य स्थापित हो सकता है। नेताओके न रहनेपर निराशाकी भावना नही आनी चाहिए और गोलियोके सामने भी घुटने नही टेकने चाहिए।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, ३–११–१९२१

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १७–११–१९२१ का उप-शीर्षक 'बहादुर विद्यार्थी' और २४–११–१९२१ का उप-शीर्षक "चिकित्सा-शास्त्रके छात्रोंके बारेमें कुछ और"।

२ देखिए "चिरला-पेरला", २५–८–१९२१।

१६६. एक और गोरखा हमला

प्राय ऐसा मालूम होता है कि कष्ट-सहनमें, अत स्वराज्यकी प्राप्तिमें, बंगाल प्रथम आ रहा है। हमें चांदपुरके क्रूर कृत्यकी याद भी अभी ज्योंकी-त्यों बनी हुई है। अब ऐसे ही भयावह एक अन्य क्रूर कृत्यकी खबर चटगांवसे आई है। वहांकी जिला कांग्रेस समितिके मन्त्री बाबू प्रसन्नकुमार सेनके अपने शब्दोंमें वह इस प्रकार है

> मैं इन पत्रमें आपको चटगांवकी वर्तमान स्थिति बताना चाहता हूँ। चटगांव जिला कांग्रेस समितिके सभापति श्रीयुत सेनगुप्त और मन्त्री श्री महिमचन्द्र दास तथा दूसरे १६ सज्जन गत २ जुलाईको गिरफ्तार किये गये थे, उनका अपराध यह था कि वे एक जलूसमें विना इजाजत शामिल हुए थे। स्थानीय हाकिमोने जुलूसके पहले पुलिस कानूनकी धारा ३०के अन्तर्गत एक नोटिस जारी किया था। पूर्वोक्त सज्जनोका जुलूसमें शरीक होना उस नोटिसकी मशाके खिलाफ माना गया। उनपर भारतीय दण्ड-विधानकी धारा १५१ और पुलिस कानूनकी धारा ३२के अन्तर्गत आरोप लगाये गये थे। मुल्जिमोने अपनी सफाई नहीं दी। फलत २० अक्तूबरको उनमें से हरएकको तीन-तीन मासकी सख्त कैदकी सजा दे दी गई। कस्बेमें यह बात मालूम थी कि इन बन्दियोको उसी रात अलीपुरकी केन्द्रीय जेलमें ले जाया जायेगा। अत लोग शामके ४ बजेसे पहले ही जेलके फाटकके पास जमा होने लग गये थे। वाद्य-मडलियां, भजन-मडलियां और सकीर्तन मडलियां भी वहीं आ गई थीं। शामके वक्त सारे शहरमें रोशनी की गई और आतिशबाजी छोडी गई। लोगोने यह सब कांग्रेस समितिकी सूचनाके बिना ही किया था। ८ बजनेके कुछ ही देर बाद कैदी लोग जेलके दरवाजेपर लाये गये और स्टेशनपर जानेके लिए पुलिसकी गाडियोमें सवार कराये गये। उनके पीछे-पीछे वाद्य-मडलियां और भजन-मडलियोका जुलूस निकला। जुलूसमें मशाले जल रही थीं और वह अत्यन्त शान्त और व्यवस्थित था।
>
> जलूस ज्यों ही रेलवे स्टेशनके नजदीक पहुँचा, कोई सौ बन्दूकधारी गोरखोकी टोली, एक स्थानसे जहां वह छुपी बैठी थी, बाहर निकली। किसी मनुष्यने, जिसका पता अभीतक नहीं लगा है, लैम्प बुझा दिये और गोरखे लोग 'मारो, मारो', 'लगाओ, लगाओ', चिल्लाते हुए किसी तरहकी चेतावनी दिये बिना एकदम पूरी खूंख्वारीसे उन बेगुनाह और शान्त लोगोपर टूट पडे . . पता लगा है कि कोई सौ लोगोके शरीरोपर जगह-जगह ऐसे घाव आये जिनमें से खून बह रहा था और कोई तीन सौ लोगोको ऐसी चोटें लगीं जिनमें बहुत

दर्द था। उस समय जिला मजिस्ट्रेट श्री स्ट्रांग और सयुक्त जिला मजिस्ट्रेट श्री वरोज वहाँ मौजूद थे। लोगोने देखा कि अमन सभाका एक खास आदमी प्रहार कर रहा था और जोर जोरसे 'मारो, मारो,' चिल्ला रहा था और जब यह मारपीट खत्म हो गई तब वह जिला मजिस्ट्रेटके पास पहुँच गया। स्टेशनके बाहर मारपीट होनेके बाद एक यूरोपीय फौजी अफसर जो कि अनुमानतः गोरखोका कमाडर था, प्लेटफॉर्मपर आया। पहले तो उसने ऐसा दिखावा किया मानो वह कैदियोके लिए रिजर्व किये हुए डिब्बेकी ओर जा रहा हो; परन्तु फिर वह एकाएक बायीं ओर मुड गया और जो लोग प्लेटफॉर्मपर टिकट लेकर गये थे उन्हे धक्का मार-मार कर हटाने लगा। प्लेटफॉर्मसे जाने या प्लेटफॉर्म खाली करनेकी कोई चेतावनी नहीं दी गई थी और न ऐसी कोई प्रार्थना ही की गई थी। यदि ऐसी भारी उत्तेजनाकी हालतमें लोग शान्त और अहिंसक न रहते तो प्लेटफार्मपर और प्लेटफार्मसे बाहर दोनो जगह कितने ही लोगोकी जाने चली गई होतीं . . .।

स्थानीय काग्रेस कमेटी, चटगाँव-संघ और स्थानीय खिलाफत समितिकी एक असाधारण आवश्यक बैठक २१ अक्तूबरको हुई थी जिसमें इस घटनाकी तहकीकातके लिए एक निष्पक्ष जाँच समिति नियुक्त की गई . . .। जख्मी लोगोकी तस्वीरे खींचनेके लिए फोटोग्राफर नियुक्त कर दिये गये हैं। अगर आप कृपा करके हमें यह बता देंगे कि इस विषयमें अपनी शिकायतें दूर करानेके लिए हमें क्या कार्रवाई करनी चाहिए, तो हम आपके कृतज्ञ होंगे।

स्वदेशी-आन्दोलन पहलेसे भी अधिक जोरसे चलाया जा रहा है . . .।

अबतक काग्रेस-आन्दोलनके सम्बन्धमें ३० लोगोको सजाएँ दी जा चुकी हैं, जिनमें से २७ अभीतक जेलमें हैं और छ. लोगोके मुकदमे अभी शुरू होने हैं।

ये तथ्य इतने यथार्थ रूपमे दिये गये है कि इनके विषयमे अत्युक्तिका सन्देह करना कठिन है। परन्तु हाकिमोपर उस बेहद सगदिलीका आरोप करना भी उतना ही कठिन है जिसका अनुमान प्रसन्नबाबूके विवरणसे होता है। यह तो स्पष्ट है कि लोग उस समय खुशी मना रहे थे। ईश्वरको धन्यवाद है कि अब हमारे दिलोसे जेलो-का डर निकल गया है। इसलिए लोगोने अपने घरोमे रोशनी की और उन कैदियोको पहुँचानेके लिए जुलूस निकालकर स्टेशनपर गये। इसमे उनका इरादा दगा-फसाद करनेका नही हो सकता। लेकिन मजिस्ट्रेटको तो इतना ही सहन नही हुआ। उसने स्पष्टत यह सोचा कि इन खुशियोसे उसकी दी हुई सजाओका प्रतिरोधक प्रभाव ही समाप्त हो रहा है और आगे चलकर उसे सारे चटगाँवको एक जेलखाना बनाना पडेगा तब कही ये तमाम लोग जेलमे रखे जा सकेंगे। इसलिए उसने गोरखोसे प्रहार करवाया। इसके सिवा (यदि पूर्वोक्त रिपोर्टको सत्य माने) उस पशुता-पूर्ण व्यवहारका, जो उन बिलकुल बेगुनाह खुशियाँ मनानेवाले लोगोके साथ किया गया, कोई

दूसरा कारण समझमे आना कठिन है। यह भी स्पष्ट है कि कथित अमन-सभाओके लोग नौकरशाहीके हाथकी कठपुतली बन रहे हैं। निस्सन्देह ये स्थितियाँ अत्यन्त विषम हैं। लेकिन इनके लिए हमें क्या-क्या सहन करना होगा यह तो हमने इस रास्तेपर कदम बढानेके पहले ही समझ लिया था। अब हमें उसे अवश्य सहन करना चाहिए। हमें यह अग्नि-परीक्षा देनी होगी और उसमे से शुद्ध होकर निकलना होगा, तब हम अपने गन्तव्य स्थानपर पाँव रख पायेंगे। चटगाँवके लोगो और नेताओने ऐसी उद्वेग-जनक स्थितियोमे जो उदाहरण-स्वरूप आत्मसयम और शान्ति-भावका परिचय दिया है उनके लिए वे हार्दिक बधाईके पात्र हैं। मै उन्हे इसके सिवा दूसरी कोई सलाह नही दे सकता कि इससे कठिन सकट उपस्थित होनेपर भी वे अपने सीधे रास्तेपर आगे ही बढते रहे। हमारे पास तो शिकायत दूर करानेका केवल एक ही रास्ता है और वह यह है कि हम ऐसे हर मौकेपर अधिकाधिक साहस और अधिकाधिक आत्मसयम दिखायें तथा तबतक ऐसा करते रहें जबतक जालिम अपनी ही कोशिशसे थक नही जाता। चटगावके असहयोगियोको अमन-सभाके सदस्यो या सरकारी लोगोके प्रति रोष न करना चाहिए। वे तो सिर्फ अपने स्वभावके अनुसार काम करते हैं। असहयोगीका स्वभाव तो यह होता है कि वह न तो बदला ले और न झुके ही। उसे तो अपने चारो ओर उठते हुए तूफानमें भी अविचल सीधा खडा रहना चाहिए। अगर हम सचाईसे गायें और प्रार्थना कर सके तो यह गीत गायें

> जबतक तेरा वरद हस्त है मेरे सिरपर हे प्रभुवर!
> निश्चय ही वह पार लगावेगा प्रति पल आगे रहकर,
> कठिन-कँटीले मगसे, डरसे, दुर्गम गिरि, दारुण दुखसे—
> बाँह पकडकर ले जायेगा तिमिर रात्रिमें वह सुखसे।[1]

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३–११–१९२१

१६७. सहकार

इस बातकी ओर शायद बहुत कम कार्यकर्त्ताओका ध्यान गया होगा कि कताईकी प्रगतिका मतलब है स्वेच्छापूर्ण सहकारका एक ऐसा उदाहरण जैसा दुनियाने कभी नही देखा होगा। इसका मतलब है बहुत विस्तृत क्षेत्रमे फैले और अपनी रोजीके लिए काम करते हुए करोडो लोगोका आपसी सहकार। इसमे सन्देह नही कि कृषिके लिए बहुत अधिक सहकारी प्रयत्नकी जरूरत रही है, लेकिन हाथ-कताई तो और भी अधिक तथा और भी सच्चे सहकारकी अपेक्षा रखती है, गेहूँका उत्पादन मनुष्यके सच्चे प्रयत्नकी अपेक्षा प्रकृतिकी अनुकूलतापर अधिक निर्भर करता है। लेकिन, हमारी झोपडियोमे सूतका उत्पादन सिर्फ इस बातपर निर्भर करता है कि मनुष्य कितनी ईमानदारीसे काम करता है। जबतक करोडो लोग स्वेच्छा और समझदारीसे आपसमे

१ कार्डीनल न्यूमैनकी "लीड काइंडली लाइट" कवितासे।

सहकार नही करते, हाथ-कताईका काम चल पाना नामुमकिन है। हमे ऐसी अवस्थामें पहुँचना है जव अन्न-विक्रेताकी तरह कताई करनेवालेको भी अपने सूतकी विक्रीके लिए एक सुस्थिर वाजार मिल जाये और अगर वह पीजनेकी क्रिया नही जानता तो उसे उसकी जरूरतकी पूनियाँ मिलती रहे। अगर मै कहता हूँ कि सर्वसाधारणकी वढती हुई गरीबीको कताई ऐसे दूर कर देगी, मानो कोई जादू हो, तो क्या उसमें कोई आश्चर्यकी वात है? एक अग्रेज मित्रने मुझे एक अखवारकी कतरन भेजी है। उसमें चीनकी यान्त्रिक प्रगति दिखाई गई है। स्पष्ट है, वे समझते है, कताईकी हिमायत करके मै यन्त्रो-सम्वन्धी अपने विचारोका प्रचार कर रहा हूँ। मै ऐसा कुछ नही कर रहा हूँ। अगर यन्त्रोके प्रयोगसे भारतकी गरीवी दूर हो सके और यन्त्रोके प्रयोगके परिणाम-स्वरूप जो वेकारी वढती है, उससे वचा जा सके तो मै वडेसे-वडे यन्त्रोके प्रयोगको भी पसन्द करूँगा। मैंने हाथ-कताईका सुझाव ऐसा मानकर दिया है कि यही वह एकमात्र तात्कालिक उपाय है जिससे गरीवी हटाई जा सकती है और रोजगार तथा धनकी कमी दूर की जा सकती है। चरखा तो खुद ही एक मूल्यवान यन्त्र है, और मैंने भारतकी विशेप परिस्थितियोका खयाल करते हुए इसमें जैसा सुधार हो सकता है, अपनी तुच्छ वुद्धिके अनुसार वैसा सुधार करानेकी भी कोशिश की है। इसलिए भारत और मानवताके प्रेमीको जिस एक-मात्र सवालपर विचार करना है वह यह है कि भारतके दु ख और दीनताको दूर करनेकी व्यावहारिक योजना क्या होगी। मनुष्य अपनी मेधासे सिचाई अथवा कृपि-सम्वन्धी दूसरे सुधारोकी जैसी भी योजना वनाये, उससे भारतकी दूर-दूरतक फैली इतनी वडी आवादीको लाभ नही पहुँच सकता, और न जनसाधारणको, जिसे बरावर वेरोजगारीका सामना करना पडता है, रोजगार ही मिल सकता है। एक ऐसे राष्ट्रकी कल्पना कीजिए जो प्रतिदिन औसतन सिर्फ पाँच घटे ही काम करता है और वह भी कोई अपनी इच्छासे नही, वल्कि परिस्थितियोसे मजवूर होकर। यही भारतकी सच्ची तस्वीर है।

अगर पाठक इस तस्वीरकी कल्पना करे तो शहरी जीवनकी व्यस्तता-भरी हलचल, कारखानोमे काम करनेवालोके थककर चकनाचूर कर देनेवाले श्रम या वागानोमे गुलामोकी जिन्दगी वितानेवालोकी मशक्कतके वारेमे न सोचेगे। यह तो भारतके विशाल मानव-समुद्रमे चन्द वूँदोके समान है। अगर वे दरिद्रता और भूखसे पीडित भारतके नर-ककालोकी तस्वीर अपनी आँखोके सामने खीचना चाहे तो उन्हे यहाँकी आवादीके उन अस्सी प्रतिशत लोगोका ध्यान करना चाहिए जो खेतोमे काम करते है और जिनके पास वर्पके कमसे-कम चार महीने प्राय कोई धन्धा नही होता और इसलिए वे लगभग भुखमरीकी स्थितिमें रहते है। यह तो तवकी वात है, जब स्थिति सामान्य हो। वार-वार जो अकाल पडते रहते है, उनके कारण यह मजवूरीकी वेकारी और भी वढ जाती है। तो वह कौन-सा काम है जो ये पुरुष और स्त्रियाँ अपनी-अपनी झोपडियोमे आसानीसे कर सकती है, ताकि उनकी आयके जो अत्यन्त सीमित साधन है, उनमे कुछ वृद्धि हो सके? क्या किसीको अव भी इस बातमे सन्देह है कि वह काम हाथ-कताईके अलावा और कुछ नही हो सकता? और मै एक वार फिर

कहता हूँ कि अगर कार्यकर्त्ता चाहे तो चन्द महीनोमे इसे सर्वव्यायी वनाया जा सकता है। जरूरत सिर्फ ऐसे विशेषज्ञोकी हे जो इसका सगठन कर सके। लोग उसके लिए तैयार वैठे है, और हाथ-कताईके पक्षमे सवसे वडी वात यह है कि यह कोई नया और अनपरखा तरीका नही है, वल्कि लोग अभी हाल तक इसका उपयोग करते रहे है। अत, इसे सफलतापूर्वक एक वार फिर घर-घरमे प्रवेश करा देनेके लिए युक्ति-पूर्ण प्रयास, ईमानदारी और ऐसे जवरदस्त पैमानेपर सहकारकी आवश्यकता है, जैसा सहकार दुनियाने आजतक नही देखा है। और अगर भारतमे यह सहकार आ जाये, तो इस वातसे कौन इनकार कर सकेगा कि भारतने इस एक ही कामसे स्वराज्य पा लिया है?

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, ३–११–१९२१

१६८. पत्र-लेखकोसे

अवधविहारी लालजी . मुझे खेद है कि मै आपका पत्र प्रकाशित नही कर सकता क्योकि 'यग इडिया' के स्तम्भोमे हिन्दू धर्मके वारेमे वाद-विवाद आरम्भ करना असम्भव है। हिन्दू धर्मके वारेमे मुझे जो कुछ कहना था वह मै अपने लेखमे लिख चुका हूँ। यदि आगे समय मिला तो और लिखूंगा। लेकिन उस लेखमें कही गई वातोके पीछे मशा यह नही था कि दूसरे भी उसे प्रामाणिक मान ले। वह तो मैंने सनातन हिन्दू धर्मकी केवल अपनी परिभाषा देनेके विचारसे लिखा था। हो सकता है कि मैंने जो-कुछ लिखा वह विलकुल गलत हो और प्रत्येक सनातनी उसका खण्डन करे। परन्तु तव भी मुझे यही आशा करनी चाहिए कि मै अपने विश्वासपर दृढ रह सकूंगा। यदि विशाल हिन्दू-वहुमत मेरे विचारोको अस्वीकार कर दे तो मुझे जातिसे वहिष्कृत वने रहनेमे भी सन्तोष होगा।

जी० एस० रामर्मूति . अस्पृश्यताको कार्यक्रममे दूसरा स्थान नही दिया जा सकता। जवतक इस दागको मिटाया नही जाता, स्वराज्य एक निरर्थक शव्दमात्र रहेगा। अपना कर्त्तव्य पूरा करनेमे कार्यकर्ताओको सामाजिक वहिष्कार और लोक-घृणातक का स्वागत करना चाहिए। मै अस्पृश्यता-निवारणको स्वराज्य प्राप्तिका और साथ-साथ खिलाफतके सवालके हलका वडा सशक्त साधन मानता हूँ। अशुद्ध हिन्दूवाद इस्लामकी शुद्धिमें सहायक नही हो सकता।

लाल . प्रार्थना निस्सन्देह राष्ट्रीय पुनरुत्थानमे वडी सहायक है। चरखा प्रार्थनामे सहायक होता है। वाधक तो वह कभी नही होता। यन्त्रवत्, विना समझे की जानेवाली प्रार्थना तो व्यर्थ और निकृष्ट होती है, क्योकि वह धोखेमे रखकर लोगोको आत्मतुष्ट और निष्क्रिय वना देती है। असहयोग सामूहिक-लोकशिक्षाका साधन है। जनसाधारणसे प्रार्थना करनेके लिए कहनेकी जरूरत नही है। उनकी प्रार्थनाओमे तो केवल जीवन फूंकनेकी कसर है।

जे० भट्टाचार्य केवल यह दिखानेके लिए ही कि आपका पत्र कितना शानदार है, काश ! मैं उसे प्रकाशित कर पाता। लेकिन मेरा खयाल है कि उसे गलत समझा जायेगा। देशमे कुल मिलाकर वहुत अधिक अन्धानुकरण चल रहा है। आपने जो उदाहरण दिये है वे इस आन्दोलनपर लागू नही होते, क्योकि इसमे तो प्रत्येक व्यक्तिको विशेष रूपसे अपने-आप सोच-विचारकर काम करनेकी प्रेरणा दी जाती है। स्वराज्यकी मेरी कल्पना यह नही है कि वहुतसे लोग एक व्यक्तिका अन्धानुकरण करे। कवि-[रवीन्द्रनाथ ठाकुर]ने इस प्रवृत्तिका ही विरोध किया है और वह उचित है, सर्वमान्य नेताओकी आज्ञाको सोच-समझकर माननेका विरोध नही किया है।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, ३–११–१९२१

१६९. व्याख्याके सिद्धान्त

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके प्रिंसिपल श्री आ० वा० ध्रुवने 'वसन्त' नामक गुजराती मासिकमे शास्त्रोकी व्याख्या करनेके सही तरीके और उनमे अस्पृश्यताका जो स्थान है उसके वारेमे उस तरीकेको लागू करनेके सम्बन्धमे एक वडा विद्वत्तापूर्ण लेख लिखा है। मेरे पास वडे लम्वे-लम्वे पत्र आये है जिनमे से कुछका रूप तो सैद्धान्तिक और पारिभाषिक है और कुछ मेरे विचारसे ऐसे व्यक्तियोकी मिथ्या धारणापर आधारित है जो शास्त्रोसे विलकुल अनभिज्ञ है। मै यह जानता हूँ कि लिखनेवालोने ये पत्र सदुद्देश्योसे प्रेरित होकर ही लिखे है। 'यग इडिया' जैसे छोटेसे साप्ताहिक-पत्रके स्तम्भोमे इन सव पत्रोको प्रकाशित करना तो सम्भव नही है। परन्तु मै इन पत्र-लेखकोको किसी प्रामाणिक विद्वान्के जरिये अवश्य सन्तुष्ट करना चाहता हूँ। मेरे विचारसे आचार्य ध्रुव ऐसे ही प्रामाणिक विद्वान् है। उनकी विद्वत्ता उतनी ही निर्विवाद है, जितनी उनकी ईमानदारी और निष्पक्षता। जो लोग जल्दीसे-जल्दी अस्पृश्यताके प्रश्नका न्यायपूर्ण हल ढूँढना चाहते है उनके लिए उनका यह लेख निश्चय ही रुचिकर होगा। मैंने उसका अनुवाद 'यग इडिया'के लिए करा लिया है। पण्डित मदनमोहन मालवीयजी और ये विद्वान् प्रिंसिपल महोदय, जो कट्टर हिन्दू होनेका दावा करते है और कट्टर हिन्दू माने भी जाते है, दोनो ही हिन्दू धर्मपर लगे इस दागको मिटानेके हार्दिक समर्थक हैं, इस वातको देखकर मुझे जितनी शान्ति मिली है उतनी और किसी वातसे नही।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३–११–१९२१

१७०. शिक्षा और असहयोग

सम्पादक

'यग इंडिया'

महोदय,

प्रसिद्ध पत्रकार श्री रामानन्द चटर्जी द्वारा सम्पादित बगला-मासिक 'प्रवासी' के कार्तिक-अकमें एस० सी० के हस्ताक्षरोसे एक लेख छपा है, जिसमें रूसमें शिक्षाके क्षेत्रमें जो कार्य हो रहा है, उसका उल्लेख है। इस लेखमें एक अश ऐसा है, जिसकी ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। मैं इसका अनुवाद नीचे दे रहा हूँ।

"किन्तु वर्तमान उथल-पुथलकी परिस्थितियोमें भी रूसने ज्ञानकी ज्योति जलाये रखी है — भले ही उसका प्रकाश मन्द हो। हमारे देश (भारत)के बुद्धिमान देशभक्तोकी तरह वहाँ किसीने ऐसी कोई सलाह नहीं दी है कि अभी शिक्षाको बन्द रखा जाये। रूस जानता है, जैसे पानी और तेलमें परस्पर विरोध है, युद्ध और शिक्षामें परस्पर वैसा कोई बडा विरोध नहीं है।"

मेरा अनुवाद अच्छा नहीं है, इसके लिए मैं क्षमा चाहता हूँ। किन्तु बगलाकी उक्त कतिपय पक्तियोमें जो विचार दिया गया है, वह यही है।

मैं ठीक-ठीक नहीं समझ पा रहा हूँ कि लेखकका आशय इन पक्तियोसे क्या है, और चूंकि श्री गाधी उन "बुद्धिमान देशभक्तो" में है, "जिन्होने हमें फिलहाल अपनी शिक्षाको बन्द रखने" की सलाह दी है, अत मैं उनसे नम्र निवेदन करता हूँ कि वे उक्त अशके सम्बन्धमें अपने विचार व्यक्त करें। मेरे इस निवेदनका कारण यह है कि यही विचार हमारे समाजके एक वर्गका है, जो अपनेको "समझदार" और "विवेकशील" बताता है।

भवदीय,

फणीन्द्रनाथ दासगुप्त

पुरुलिया

"प्रवासी"ने जो विचार व्यक्त किया है, उससे मुझे कोई आश्चर्य नही होता। मेरी नम्र सम्मतिमें इससे एक ही साथ यह भी प्रकट होता है कि लेखकको इन "बुद्धिमान देशभक्तो" की स्थितिकी जानकारी नही है और यह भी कि उनके शिक्षा-सम्बन्धी विचार बहुत विकृत है। रूसी लोग अपनी वर्तमान सस्थाओसे असहयोग नही कर रहे है, और फिर भी वहाँ युद्धकी स्थितिमे "ज्ञानकी ज्योति मन्द रूपमे ही जल रही है।" लेकिन वैसा तो हमारे असहयोग कार्यक्रमके अन्तर्गत खोले गये स्कूलोमे भी हो रहा है। किन्तु जब इग्लैंडकी जर्मनीसे लडाई चल रही थी, तब वहाँ क्या हुआ

था? तब इग्लैडमे कितने स्कूलोमे पढाई हो रही थी? मै जानता हूँ कि वैरिस्टरीके सभी कालेज और कितने ही दूसरे कालेज करीब-करीब बन्द कर दिये गये थे। मै जानता हूँ कि वोअर युद्धके समय एक भी वोअर वालकको किताबी शिक्षा नही मिल पाई थी। उनकी शिक्षा अपने देशकी खातिर कष्ट-सहनमे ही निहित थी। वात दर-असल यह है कि हमारा यह अहिंसात्मक आन्दोलन कुल मिलाकर इतने शान्त और विनयपूर्ण ढगसे चल रहा है कि ऐसा हो सकता है कि जो लोग इस सिद्धान्तमे विश्वास नही रखते वे उसी प्रणालीके अधीन अपने बच्चोको शिक्षा देते रहे जिस प्रणालीके खिलाफ हम "लडाई कर रहे है।" और मै आज ही बता देता हूँ कि इस विनयसे आन्दोलनको और भी अधिक वल मिल रहा है, भावी इतिहासकार इस बातकी साक्षी कृतज्ञताके साथ देगे। और अन्तमे, हमे उस शिक्षा-प्रणालीपर गर्व करनेका कोई कारण दिखाई नही देता, जिस प्रणालीके अन्तर्गत शिक्षाका लाभ हमारी विशाल आबादीके सिर्फ मुट्ठीभर लोगोको ही मिल पाता है। हम अपनी वेहोशीमे नही देख पा रहे है कि यह शिक्षा-प्रणाली हमारे देशपर कैसा विनाशकारी प्रभाव डाल रही है। इस प्रणालीमे ऐसी कोई चीज ढूंढ निकालनेकी मैने बहुत कोशिश की है जो इस देशसे सम्बद्ध महत्व-पूर्ण समस्याओके समाधानमे किसी तरह सहायक सिद्ध हो सके। लेकिन मुझे उसमे ऐसी कोई चीज नही मिली। आज ७, ८५१, ९४६ बच्चे स्कूलोमे शिक्षा पा रहे है। मेरा दावा है कि वर्तमान शिक्षा-प्रणाली ऐसी है कि अगले पचास वर्षोमे इस सख्याके दुगुनी होनेकी भी सम्भावना नही है। अगर शिक्षाको सर्वव्यापी बनाना है, तो वर्त-मान प्रणालीमे आमूल परिवर्तन करना होगा। यह सिर्फ असहयोगसे ही सम्भव है। इससे किसी अधिक नरम उपचारसे भारतीय जनताकी अन्तरात्माको जाग्रत नही किया जा सकता।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-११-१९२१

१७१. अफगानिस्तानमे हिन्दू

सम्पादक

'यंग इंडिया'

महोदय,

यदि ऐसा कोई अत्यन्त साधारण हिन्दुस्तानी, जिसकी इस बातमें कोई आस्था न हो कि असहयोग द्वारा स्वराज्य प्राप्त किया जा सकता है, जो यह समझता हो कि खिलाफत आन्दोलनसे ऐसे लोगोके हाथ मजबूत हो रहे हैं जो हृदयसे एक मुस्लिम राज्यकी -- जो मौजूदा 'दानवी' शासनसे कहीं ज्यादा मनमानी करनेवाला और अन्यायकारी होगा -- स्थापनाका प्रयास कर रहे हैं, परन्तु इतनेपर भी जो भारतीय अपने ढगसे देशको प्यार करता हो और जिसकी

ओर कुछ भी ध्यान दिया जाये तो क्या मै आपसे नीचे लिखी बातें पूछ सकता हूँ?

मैंने वेलो-लिखित 'जर्नल ऑफ ए पोलिटिकल मिशन टु अफगानिस्तान' में पढा है कि हिन्दकीयो, अर्थात् अफगानिस्तानके हिन्दुओको अनेक अपमानजनक और अन्यायपूर्ण निर्योग्यताओके अधीन रहना पडता हे, उदाहरणके लिए उन्हे "जजिया" देना पडता है, अलग तरहकी पोशाक पहननी पडती है, वे जीन कसे घोडेपर सवारी नहीं कर सकते, आदि। उस समय इन बातोंको अवश्य ही अफगानिस्तानकी मुस्लिम सरकारकी स्वीकृति प्राप्त थी। तबसे यदि स्थितिमें कुछ सुधार हो गया हो तो मुझे उसकी कोई जानकारी नहीं हे। आपके अनेक 'खिलाफती' मित्र ऐसे हैं जो खुले आम हिन्दुस्तानपर अफगानिस्तानके आक्रमणके पक्षमें होनेका ऐलान कर चुके हैं। क्या आप हिन्दुओको यह बतायेंगे कि अफगानिस्तानके हिन्दुओपर लगी कानूनी निर्योग्यताएँ हटा दी गई है या नहीं? यदि ये निर्योग्यताएँ अभी नहीं हटाई गई हो तो क्या आपको इनके हटानेके लिए भी उतनी ही जोरदार दलीलें नहीं देनी चाहिए जितनी आप मौजूदा "दानवी" सरकार द्वारा भारतीयोसे किये जानेवाले तथाकथित "गुलामो जैसे" व्यवहारके सम्बन्धमें देते हैं? यह "दानवी" सरकार जिस जातिकी है उस जातिने हिन्दुस्तानियोंके साथ वैसा अनुचित व्यवहार कभी नहीं किया जैसा अफगानिस्तानके मुसलमान शासकोने हिन्दुओके साथ किया हे।

मै समझता हूँ कि छुआछूतके सम्बन्धमें आपने जो कठोर रुख अपनाया हे उससे, खिलाफतके समर्थनकी अपेक्षा, अधिक भलाई हो सकेगी। यदि आप हिन्दुओमें से छुआछूत और प्रान्तीय भेद-भावोको मिटा सके तो आप मानव-जातिके एक बहुत बडे हित साधक होगे। मुसलमान तो स्वय इतने सशक्त है कि अपनी रक्षा आप कर सकते हैं।

आपका,
आर० सी० बनर्जी

रतनगज,
२४ अक्तूबर, १९२१

अफगानिस्तानमे हिन्दुओके साथ कैसा व्यवहार किया जाता है इसके बारेमे मुझे कुछ भी मालूम नही है, तथापि एक क्षणके लिए मै इस पत्रके लेखकके कथनकी सत्यता स्वीकार करनेके लिए तैयार हूँ। परन्तु इसकी सगति तब होती जब हम हिन्दुस्तानमे अफगान शासन लानेकी कोशिशमे लगे होते। मेरा सम्बन्ध तो केवल भारतके मौजूदा कुशासनसे है जिसने मुझे घोडेपर चढने देकर भी मेरी स्थिति अपने ही देशमे गुलामो-जैसी कर रखी है। मुझे यह डर दिखाकर इस कुशासनका तख्ता उलटनेसे भी नही रोका जा सकता कि यहाँ अफगान शासन या कोई अन्य मुस्लिम शासन आ

जायेगा। इस पत्रके लेखक यह देखेंगे कि स्वराज्य प्राप्त कर लेनेपर हमारे अन्दर यह योग्यता भी आ जायेगी कि हम किसी अन्य कुशासनका भी मुकाबला कर सकें। उस समय, सैंडहर्स्टमें प्रशिक्षण पाये बिना भी, हम यह कला सीख जायेंगे कि देश और धर्मके लिए जानकी बाजी कैसे लगाई जाती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-११-१९२१

१७२. भाषण : सविनय अवज्ञापर[1]

४ नवम्बर, १९२१

श्री गांधीने प्रस्ताव पेश करते हुए[2] . . . कहा कि अगर मुझसे पूछा जाये कि पिछले दस महीनेमें भारतने कितनी प्रगति की है तो मैं निस्संकोच कहूँगा, इस बीच उसने जबर्दस्त प्रगति की है। अगर आप सिर्फ इसी बातका अन्दाजा लगाने बैठें कि प्रगति कहाँतक हुई है, तब तो आप हर तरहसे गर्वका अनुभव कर सकते हैं, लेकिन अगर कोई मुझे एक वैद्यकी हैसियतसे स्वराज्य-प्राप्तिके लक्ष्यको दृष्टिमें रखते हुए इस प्रगतिका अन्दाजा लगानेको कहे और पूछे कि हम जिन तीन रोगोंसे पीड़ित हैं, उनसे छुटकारा पानेके खयालसे यह प्रगति पर्याप्त है या नहीं तो मुझे स्वीकार करना पड़ेगा कि जरूरतको देखते हुए अभी बहुत कम प्रगति हुई है। इसीलिए सविनय अवज्ञाका प्रस्ताव पेश करते हुए मुझे एक बार फिर पूरा जोर देकर कहना पड़ता है कि अबतक असहयोग कार्यक्रमके अन्तर्गत जो-कुछ करनेको कहा गया है, उसे पूरी तरह कर दिखाना है, और खासकर वह सब जिसका उल्लेख इस प्रस्तावमें है। इसके बाद उन्होंने मौलाना मुहम्मद अलीके निजी सचिव द्वारा भेजा गया तार पढ़ा, जिसमें बताया गया था कि उनके साथ आम कैदियोंकी तरह व्यवहार करनेके कारण उन्हें कितनी तकलीफें उठानी पड़ रही हैं। अतः श्री गांधीने सभीको आगाह किया कि अगर सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करनी हो तो काफी सोच-समझकर ही वैसा करें। उन्होंने आगे कहा कि हमें सरकारसे किसी प्रकारकी नरमीकी आशा नहीं करनी चाहिए और न ऐसी आशा करनेका हमें अधिकार ही है। न हम सरकारके साथ कोई मुरौवत करनेको तैयार हैं, और न हमें उससे किसी मुरौवतकी आशा रखनी चाहिए। हमारे साथ जितना ही बड़ा अन्याय किया जायेगा, हमें जितनी ही अधिक यातना दी जायेगी और हम जितना ही अधिक धैर्य और अडिग संकल्प दिखायेंगे, हमें उतनी ही जल्दी स्वराज्य मिलेगा।

१ यह भाषण अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी दिल्लीकी बैठकमें दिया गया था।

२ देखिए "अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी", १०-११-१९२१।

सविनय अवज्ञाकी परिभाषा करते हुए श्री गाधीने आगे कहा कि यह सविनय क्रान्ति है, जिसका मतलब है कि जहाँ इसका प्रयोग किया जाता है वहाँ सरकारकी सत्ता समाप्त हो जाती है। सविनय अवज्ञा सरकार तथा उसके कानूनोको खुली चुनौती है। यह एक बहुत बडा कदम है, और यद्यपि इस मामलेमें प्रान्तीय सगठनोको पूरी आजादी दे दी गई है, फिर भी मेरी सलाह है कि अगर गुजरातमें मेरे जिलेमें सविनय अवज्ञा की जाती है तो आप सब अभी जरा रुककर देखें कि मैं वहाँ क्या करता हूँ, और उसके परिणामोको देखनेके बाद आप उस उदाहरणका अनुकरण करें, जिससे आपकी अद्भुत उपलब्धि देखकर सारी दुनियाकी आँखें खुल जायें। मैं जानता हूँ कि इस समय देशमें व्यापक पैमानेपर सविनय अवज्ञा असम्भव है, इसलिए पूरी तरह तैयार हुए बिना सारे देशकी जनता इसमें शामिल हो, इसके बजाय सिर्फ एक तहसील या जिला ही भली-भाँति तैयार होकर सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करे, तो इससे मुझे पूरा सन्तोष प्राप्त होगा। अत, श्री गाधीने उन्हे सावधानी बरतनेकी सलाह दी और एक तरहसे उनसे तबतक प्रतीक्षा करनेको कहा जबतक वे स्वय अगले पन्द्रह दिनोमें गुजरातमें आगे बढकर उन्हे नेतृत्व न दें। उन्होने इस चेतावनीको फिर दुहराया कि प्रस्तावमें जैसा जबर्दस्त कदम उठानेकी बात है, उसे ध्यानमें रखते हुए वस्तुस्थितिको पूरी तरह सोचे-समझे बिना कुछ नहीं करना चाहिए, ताकि एक बार जब कदम बढा दिया जाये तो फिर उसे वापस लेनेका सवाल न रहे। . . .

जब श्री गाधीने अपना प्रारम्भिक भाषण समाप्त किया, . . प्रस्तावमें बताई शर्तोको ढीला करनेके लिए . सशोधनोकी बौछार हो गई . . . श्री गाधी तथा उनके विचारके समर्थकोने इस बातपर जोर दिया कि चूँकि हम प्रतिज्ञाबद्ध हैं और ऐसा मानते हैं कि स्वदेशीके कार्यक्रमको पूरी तरहसे सम्पन्न करके ही हम स्वराज्य प्राप्त कर सकते है, इसलिए अगर हम स्वदेशीके कार्यक्रममे पूरी निष्ठाके साथ दत्तचित्त रहनेकी बात हटा दें तो उसका मतलब अबतक हम जितना-कुछ बना पाये हैं उसकी नींवपर ही आघात करना होगा। बिना पूरी तैयारीके सारा देश सविनय अवज्ञा करे, इससे तो बहुत बेहतर है कि पूरी तैयारीके साथ सिर्फ एक तहसील या एक जिला ही इसका प्रयोग करे।

बहुत गरमागरम बहसके बाद . स्वदेशी सम्बन्धी सख्त धाराओको हटानेके उद्देश्यसे पेश किये गये सभी सशोधन अस्वीकृत हो गये . . श्री गाधीने कहा कि हमें किसी ऐसे निष्कर्षपर पहुँचना चाहिए जिसे सभी सही मानें और जिसपर अमल करनेके लिए सभी लगन और ईमानदारीके साथ कोशिश करे।[1] . . .

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-११-१९२१

१ बैठकमें कार्य-समितिको यह सत्ता दे दी गई कि वह चाहे तो खास-खास मामलोमें शर्तोंमें ढील दे सकती है।

१७३. भाषण: अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीमें[1]

५ नवम्बर, १९२१

सरकारी नौकरी छोडनेके सम्बन्धमें पेश किये गये प्रस्तावपर बोलते हुए श्री गांधीने कहा, यद्यपि प्रस्तावमें यह कहा गया है कि प्रत्येक नागरिकको सरकारी नौकरीके सम्बन्धमें सलाह देनेका जन्मसिद्ध अधिकार है, फिर भी कांग्रेस कमेटी कोई ऐसा फरमान जारी नहीं कर रही है कि सभी लोग सेनाकी बैरकोंमें जाकर सैनिकोंको वहाँसे निकल आनेकी सलाह दें। और अगर ऐसा फरमान जारी नहीं किया गया है तो उसका कारण जेलका भय नहीं, बल्कि यह है कि इस समय कांग्रेस नौकरी छोडनेवाले सभी सैनिकोंकी आजीविकाकी व्यवस्था करनेमें असमर्थ है। किन्तु हरएक आदमीको पूरी स्वतन्त्रता है कि व्यक्तिगत रूपमें अपनी जिम्मेदारीपर वह बैरकोंमें जाकर सैनिकोंसे फौजी नौकरी छोडनेके लिए कहे। खुद मैंने सैकडों सैनिकोंको नौकरी छोडनेकी सलाह दी है।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, ८-११-१९२१

१७४. भाषण: मथुरामें[2]

५ नवम्बर, १९२१

श्री गांधीने . . . अक्तूबरके अन्ततक स्वराज्य प्राप्त करनेके सवालपर बोलते हुए कहा, मैंने ऐसा कभी नहीं कहा कि मैं स्वयं ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दूँगा जिनका लाभ उठाकर आप स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे। जो लोग भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके पिछले अधिवेशनमें प्रतिनिधि बनकर गये थे, उन्होंने यह प्रतिज्ञा की थी कि कांग्रेस और देशके लोगोंने असहयोगका जो कार्यक्रम निश्चित किया है, उसको वे कार्य-रूप देंगे। उन्होंने अपनी यह प्रतिज्ञा पूरी नहीं की, इसलिए स्वराज्य न मिलनेके लिए उन्हें अपने-आपको दोषी मानना चाहिए। अभी देशने यह सिद्ध नहीं किया कि उसमें स्वराज्य पानेकी सामर्थ्य है। त्याग और अनुशासनका वह सीधा-सादा क्रम, जो उन्हें स्वराज्य दिलानेका एकमात्र साधन है, अभीतक पूरा नहीं किया गया है।

१ कमेटीकी यह बैठक दिल्लीमें हुई थी।

२ मथुरामें दिल्ली राजनीतिक सम्मेलनका उद्घाटन करते हुए गांधीजीने यह भाषण किया था। कान्फ्रेंसके अध्यक्ष प० मोतीलाल नेहरू थे।

अब देशके लिए यह और भी अधिक जरूरी हो गया है कि वह शेष कार्यक्रमको इस वर्षकी समाप्तिसे पहले ही पूरा करनेमें अपनी समस्त शक्ति लगा दे। और यदि देश ऐसा कर पाया तो मैं अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर आपको आश्वासन देता हूँ कि यह वर्ष समाप्त होनेसे पहले ही हमें स्वराज्य मिल जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, [illegible]-११-१९२१

१७५ हिन्दुओंका कर्त्तव्य

नाडियादके अन्त्यज आश्रमके लोगोंने मुझे निम्नलिखित हृदयद्रावक पत्र[1] भेजा है। इसे मैं प्रत्येक माता-पिताके आगे रखता हूँ।

इस पत्रको पढ़कर प्रत्येक हिन्दूका सिर शर्मसे झुक जाना चाहिए। इस बालकको मार पड़ी, इसके लिए उसके माँ-बाप उत्तरदायी नहीं है, हम हैं। हमने अन्त्यजोंका तिरस्कार किया, उन्हें अपना जूठा और सड़ा हुआ अन्न खानेके लिए दिया और यह माना कि हमने पुण्य किया है। हमने उन्हें कमसे-कम वेतन दिया है और उन्हें भीख माँगनेपर विवश किया है। हमने उनसे अपना कचरा न सिर्फ उठवाया, उन्हें अपना कचरा खिलाया भी। हमारी उतारनको उनका शृंगार बनाया। परिणाम यह हुआ कि अब अन्त्यज भी नीच मानकर खुश होता है, जूठा भोजन पाकर गर्वका अनुभव करता है। मरा हुआ जानवर जब उनके घरमें आता है तो उनके बच्चे खुशीसे नाचते हैं। जिस जातिके गुलाम अपनी गुलामीसे प्रसन्न होते हैं उसके पापका कोई हिसाब ही नहीं है। सो हालत हिन्दुओंकी हुई है।

जिस बालकको अच्छा बननेके लिए, जूठा भोजन खानेसे इनकार करनेके लिए मार खानी पड़ी वह हमारा ही बालक था। इस लेखको पढ़कर हरेक माँ-बापको विचार करना चाहिए कि उपर्युक्त बालकके स्थानपर अगर उनका अपना लड़का होता तो? और वह बालक कितना पवित्र था! मार खानेके बाद भी उसने माँस खानेसे इनकार किया। ऐसे बालकको अस्पृश्य माननेवालेकी मानसिक दशाका विचार कीजिए। वह स्वराज्यका उपभोग क्या करेगा? वह किसकी रक्षा करेगा?

लेकिन इस समय मैं अन्त्यजेतर हिन्दू माता-पिताओंको अस्पृश्यताके सम्बन्धमें कुछ नहीं कहना चाहता। क्या वे अन्त्यज भाइयोंपर दया भी नहीं करेंगे? क्या उनको सड़ा-गला और जूठा भोजन देना भी शास्त्रोचित है? क्या उन्हें कमसे-कम वेतन देना शास्त्रोचित है?

१. यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है। अन्त्यज आश्रमके एक अध्यापक द्वारा लिखे गये इस पत्रमें विद्यार्थियोंकी अपने घरोंमें जो दुर्दशा होती थी उसका वर्णन किया गया था। माता-पिताओंको उनकी सुधरी हुई आदतें अच्छी नहीं लगती थीं और वे उनके साथ दुर्व्यवहार करते थे।

मै प्रत्येक माँ-बापसे प्रार्थना करता हूँ कि

१ वे अन्त्यजोको पका हुआ भोजन न दे।
२ केवल सूखा और विना पका हुआ भोजन दे।
३ उन्हे विदेशी अथवा फटे-पुराने वस्त्र न दे।
४ उनका वेतन कम हो तो उसमे वृद्धि करे।
५ जो दे सो प्रेमपूर्वक दे।

जो अन्त्यज इस लेखको पढे उनसे मेरी प्रार्थना है कि वे जूठा और सडा हुआ अनाज अथवा माँस न लेने और न खानेका निश्चय करे और अपने बच्चोको, उनके लिए जो राष्ट्रीय स्कूल खोले जाये उनमे भेजे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ६-११-१९२१

१७६. पत्र : महादेव देसाईको

दिल्ली
मौनवार, [७ नवम्बर, १९२१][1]

चि० महादेव,

दिल अर्थात् आत्मा क्योकि दिल अर्थात् हृदय। तन्दुरुस्त तो प्रचलित शब्द है। मुझे लिखना तो था शरीरकी तन्दुरुस्तीके बारेमे ही लेकिन केवल इतने-भरसे मुझे कैसे सन्तोष हो सकता था?

परसराममे दोष होनेके बावजूद मैंने उसे पुत्रके रूपमे स्वीकार कर लिया है। तुम्हे तो मैंने मित्र ही माना है। दुर्गाको पहली ही मुलाकातमे बेटी माननेमे कोई सकोच नही हुआ। जमनालाल पुत्र बननेका दावा किया करता है लेकिन उसके सम्बन्धमे मेरे मनमे पितृत्वकी भावना आ ही नही सकती।

तुम्हारे एक भजनके बारेमे मुझे ऐसा लगा कि मैने उसे कही पढा है, तथापि कोई कारण नही कि वैसा ही भजन तुम्हे क्यो नही सूझ सकता? लेकिन मैं तुम्हारा पत्र मिलनेसे पहले ही कल इसका उत्तर दे चुका हूँ? बीमारीमे तुम्हारे मनमे आत्मा सम्बन्धी विचार ही आये, सो इसमे ही स्वराज्य आ गया। स्वराज्यका अलगसे विचार करनेकी कोई जरूरत ही न थी।

शरीर-धर्मको पूरा किये बिना निस्तार नही है। खाने, नहाने, भीख माँगते हुए घूमनेकी बातको हम बुरा नही समझते और मात्र मेहनत करके अन्न खानेकी बातसे द्वेष करते हैं। मनके यज्ञसे मनकी, आत्माके यज्ञसे आत्माकी और देहके यज्ञसे देहकी

१ 'दिल', 'तन्दुरुस्त' और 'भजन' के उल्लेखसे यह स्पष्ट है कि यह पत्र ३१-१०-१९२१ के तुरन्त बाद पड़नेवाले मौनवारको लिखा गया था। देखिए "पत्र : महादेव देसाईको", ३१-१०-१९२१।

शुद्धि होती है। देहको जो अन्न मिलता हे उसका वदला मनुष्य मनका काम करके नही दे सकता। जव अनाज मिलनेकी अपेक्षा किये विना मनुष्य मजदूरी करता है तव वह यज्ञ होता है। इस युगमे, इस देशमे शरीर यज्ञ चरखेसे ही सम्भव हे। क्योकि उसीके अभावसे हिन्दुस्तानका शरीर जीर्ण हो गया हे। जव हिन्दुस्तानकी आवोहवा वदल जायेगी और हमारी जरूरते वदल जायेगी तव हम दूसरा यज्ञ कर सकते है। यदि ऐसा हो कि इस देशमे पानी प्राप्त करनेके लिए हमेशा कुआँ खोदना पडे तो कुआँ खोदनेकी क्रिया कुछ अशमे यज्ञ वन जायेगी। लेकिन जवतक ऐसी स्थिति कायम है तवतक जिस तरह ब्रह्मचर्य आदि आवश्यक है उसी तरह शरीर-यज्ञ भी आवश्यक हे। लेकिन चूँकि वह केवल शरीरका ही धर्म है इसलिए जव शरीर अनशन कर रहा हो तव वह इस यज्ञसे मुक्त रह सकता है [अन्यथा नही]। लेकिन जिस तरह मेरे जैसा व्यक्ति — सहज ही अथवा अपने मनको फुसला कर यह मान लेता हे कि मै तो निरन्तर २४ घटे प्रार्थना ही करता रहता हूँ और उसके लिए एक निश्चित समय निर्धारित नही करता उस तरह अगर कोई व्यक्ति शरीर-यज्ञ किये विना ही यह मानता हे कि वह यज्ञ कर रहा हे तो वह भूल करता है, क्योकि प्रार्थना मानसिक या हार्दिक क्रिया है जव कि यह क्रिया तो केवल शरीर द्वारा ही सम्पादित की जा सकती है। हाँ, वह इस *क्रियाको निष्ठापूर्वक एकाग्र मनसे न करे और* लोगोको छले, यह एक अलग वात है लेकिन यह क्रिया उसे करनी तो अवश्य पडेगी। इतनेमे तुम्हारे इस सम्वन्धमे पूछे गये दोनो प्रश्नोका उत्तर आ जाता है।

मैने श्री दासके तारको गलत समझा। छोटानी मियाँके पत्रके वारेमे भी मुझे गलतफहमी हुई। उनमे गलतफहमी पैदा करनेकी जानवूझ कर कोई कोशिश नही की गई थी। छोटानी मियाँसे जव मेरी वातचीत हुई उस समय भी उन्होने मेरी गलत-फहमी दूर करनेकी कोशिश नही की। यह सच है कि हमने लम्वी वातचीत नही की। लेकिन जो अच्छी तरहसे समझता नही हे वह भी सत्यका पूरा-पूरा पालन नही करता। मै तो जानता हूँ कि यदि मै मन, वचन और कर्मसे सत्य, अहिसा और ब्रह्मचर्यका पालन कर सकूँ तो इसी वर्ष स्वराज्य मिल जाये, अथवा हममे से कोई ऐसा हो जाये तो भी, अथवा हम सव लोगोका तप मिलकर उसके लिए पर्याप्त हो तो भी, मै अपने सम्वन्धमे ऐसी आशा नही छोडता। अपनी कोशिशमे तो मै कोई कसर ।[1]

गुजराती प्रति (एस० एन० ११४२४) की फोटो-नकलसे।

१ यहाँ मूल पत्र कटा-फटा है।

१७७. भाषण : लाहौरके राष्ट्रीय कालेजके दीक्षान्त समारोहमें[1]

९ नवम्बर, १९२१

भाषण प्रारम्भ करते हुए उन्होने कहा कि मुझसे राष्ट्रीय कालेजके विद्यार्थियोको उपाधि बाँटनेको कहा गया है, यह मेरा सौभाग्य है। मै विद्यार्थियोको बधाई देता हूँ, अपनी शुभ कामनाएँ देता हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह उन्हे, आज उन्होने जो प्रतिज्ञा की है, उसका पालन करनेकी शक्ति दे। आजसे उनके हृदयमें देश-सेवाका फौलादी निश्चय हो। मेरे लिए तो उपाधि स्वीकार करनेका सिर्फ एक ही मतलब है——अर्थात् देशकी स्वतन्त्रताके लिए ठोस काम करनेको तैयार रहनेका सकल्प लेना। सभी राष्ट्रोका इतिहास इसी मार्गकी ओर इगित करता है। मैने तीन बडी लडाइयाँ देखी है और देखा है कि शिक्षाको किस तरह अपने समयके राष्ट्रीय विचारो और आदर्शोंके अनुरूप ढाल लिया जाता है। जब मै पिछले सितम्बर माहके बारेमें सोचता हूँ, मुझे कोई दुःख नहीं होता। उस समय हमने यह तय किया था कि भावी भारतको कैसी शिक्षा देनी चाहिए। हम जितना चाहते थे, उतनी सफलता नहीं प्राप्त कर पाये है। कुछ स्कूलोमें विद्यार्थियोके साथ बुरा व्यवहार किया जाता है। इसके परिणाम स्वरूप एक विद्यार्थीने मुझको लिखा है कि मैने तो आत्म-हत्या कर लेनेका निश्चय कर लिया है। 'यंग इंडिया'के पाठकोको यह बात शायद याद होगी। अगर भविष्यमें किसी विद्यार्थीके साथ बुरा व्यवहार किया जाता है तो मुझे आशा है कि वह मुझे इस ढगका पत्र नहीं लिखेगा। विजगापट्टमसे मुझे एक तार मिला है, जिसमें बताया गया है कि मेडिकल स्कूलके विद्यार्थियोने अब स्कूल न जानेका निश्चय कर लिया है, क्योकि उनके प्रिसिपलने उन्हे खद्दर पहननेके कारण स्कूलसे निकाल दिया था। उत्तरमें उन्हे उनके संकल्पपर बधाइयाँ भेजी है। सबसे अच्छा शल्य-चिकित्सक वह है जो अपने देशकी मुक्तिके लिए सबसे अच्छा उपाय करे। हैजे, प्लेग और मलेरियासे हजारो लोग मरते है, लेकिन मुझे इसकी कोई परवाह नहीं है। किन्तु अगर एक व्यक्ति भी गुलामीकी जिन्दगी बिता रहा है तो वह मेरे लिए बहुत दुःखकी बात है।

अगर लोग अगले दिसम्बर माहके बाद भी ऐसा महसूस नहीं करने लगते तो मुझे तो लगता है, जैसे मै आत्म-हत्या कर लूँगा। किन्तु मै ऐसा नही करूँगा, क्योकि

१ यह समारोह ब्रेडलों हालमें हुआ था और इसकी अध्यक्षता लाला लाजपतरायने की थी। भाषण मूलत हिन्दीमें दिया गया था किन्तु हिन्दी विवरण उपलब्ध न होनेके कारण अंग्रेजीसे ही अनुवाद करके दिया जा रहा है।

मुझे यह पसन्द नहीं कि कोई अपना अस्तित्व आप ही मिटा ले। मैं तो सिर्फ एक ही अवसरको ऐसा मानता हूँ, जब मनुष्यको अपने-आपको मिटा देना चाहिए। मेरा तात्पर्य उस अवसरसे है, जब कोई पुरुष परायी स्त्रीपर कुदृष्टि डाले। स्त्रीके लिए ऐसा अवसर मैं तब मानता हूँ जब वह देखे कि कोई पुरुष उसके साथ दुराचार करनेपर तुला हुआ है। ऐसे समयमें अपने-आपको मिटा देना ही उसके लिए अच्छा है। भारतीय स्त्रियाँ सीताकी तरह सती-साध्वी हैं।

अभी मैंने 'वन्देमातरम्' का सुन्दर गायन सुना। १९१५ में मैंने यही गायन मद्रासमें सुना था।[1] तभी मैंने अपने-आपसे पूछा था कि यह गीत हमारे लिए वास्तवमें क्या अर्थ रखता है। क्या हमें इस तरह गानेका अधिकार है? हम भारतमाताको नमन करते हैं और उससे सुरक्षाकी माँग करते हैं। लेकिन आज भारत किस अवस्थामें पड़ा हुआ है? उसकी लाखों सन्तानोंको सिर्फ एक ही समय भोजन मिलता है, और सो भी नमक और रोटीके अलावा और कुछ नहीं। उसके साथ खानेके लिए सब्जी वगैरह कुछ भी उन्हें मयस्सर नहीं। क्या हम ईमानदारीके साथ ऐसा कह सकते हैं कि हमारी मातृभूमि हमें सुरक्षा देती है? हम अपनी मातृभूमिकी अयोग्य सन्तान हैं।

पेशावरका एक छः फुट ऊँचा हट्टा-कट्टा हिन्दू मेरे सामने आकर खड़ा हो गया और शिकायत करने लगा कि सीमा प्रान्तके मुसलमानोंने उन लोगोंकी स्त्रियोंके साथ दुर्व्यवहार किया। क्यों नहीं वह अपने घरकी स्त्रियोंकी रक्षा करते हुए मर मिटा? आज सुबहकी ही बात है कि एक व्यक्तिने मुझसे कहा कि अगर आप मुसलमानोंको मित्र बनाना चाहते हैं तो यह आपका पागलपन ही है। मैंने जवाब दिया कि मैं मुसलमानोंको इस कारण मित्र बनाना चाहता हूँ कि मुझमें साहस है। अगर कुछ मुसलमान कुछ बुरे काम करते हैं तो इस कारण सभी मुसलमानोंको उसके लिए दोषी ठहराना उचित नहीं है। यही बात हिन्दुओंके साथ भी लागू होती है, जो अस्पृश्योंके प्रति डायरवादी व्यवहार करनेके दोषी हैं। अगर पंजाबमें मुसलमानोंकी आबादी पचास प्रतिशतसे अधिक हो तो हिन्दुओंको उनसे डरनेकी जरूरत नहीं है। अगर हिन्दू मुसलमानोंके साथ कोई ज्यादती या बेईमानी नहीं करना चाहते तो फिर उन्हें मुसलमानोंसे डरना ही क्यों चाहिए? सभी प्राचीन सन्त-महात्माओंकी सीख यही है कि भला करोगे तो भला पाओगे और बुरा करोगे तो उससे भी बुरा पाओगे। चाहे दयानन्द[2] हों, या रामानुज अथवा मध्वाचार्य, सभीकी सीख यही है। अगर हिन्दू लोग ईमानदारीका व्यवहार करना चाहते हैं तो उन्हें किसीसे डरनेकी कोई जरूरत नहीं है। यही बात मुसलमानों और सिखोंपर भी लागू होती है।

१. देखिए खण्ड १३, पृष्ठ ६८।

२. स्वामी दयानन्द सरस्वती (१८२४-८३), आर्यसमाजके संस्थापक।

लालाजीने अपने भाषणके अन्तमें कहा था कि अगले दिसम्बरसे पहले ही वह समय आ रहा है, जब शायद मैं और लालाजी तथा दूसरे लोग भी गिरफ्तार कर लिये जायें। उस हालतमे आपको आगजनी और रेलकी पटरियाँ उखाडनेपर आमादा नहीं हो जाना चाहिए, अग्रेज स्त्रियोको बुरी दृष्टिसे नहीं देखना चाहिए, और न हड-ताल करनी चाहिए। अगर आपने ऐसा-कुछ किया तो उसका मतलब होगा, आप लोग कायर हैं। सच्चा वीर वह है जो शान्त है, अहिसापर दृढ है। आपको अपने क्रोधपर नियन्त्रण रखना चाहिए, आपमें से हरएकको अपना नेता, अपना मार्ग-दर्शक आप ही बनना चाहिए। फिर तो स्वराज्य मिलकर रहेगा। आपको प्रह्लादका दृष्टान्त याद रखना चाहिए। उस बहादुर किशोरने तलवारधारी हिरण्यकशिपुके आगे झुकनेसे इन-कार कर दिया था, क्योकि उसका राम उसके साथ था।

अगर आपका कोई नेता क्रोधी या असहिष्णु बन जाये तो उसे नेतृत्वसे हटा देना चाहिए। आपको अपने भीतर वर्ड्सवर्थके "हैपी वारियर" ("प्रसन्नचित्त योद्धा") के गुण उतारने चाहिए। फिर तो स्वराज्य पाना कोई मुश्किल काम नहीं रह जायेगा।

स्वराज्यकी दूसरी शर्त है, चरखा। पंजाबमें लोग कहते हैं कि सूत कातना तो औरतोका काम है। लेकिन इग्लैंडमे जिसने कताई-यन्त्र ईजाद किया वह हारग्रीव्ज नामक एक पुरुष ही था। इसी तरह कहते हैं, खाना बनाना औरतोका काम है। पेरिसके एक होटलमे एक रसोइया है जो पाक-शास्त्रका विशेषज्ञ है। वह पाक-कलाका किसी भी स्त्रीसे अधिक बडा जानकार है। उसे भारतके वाइसरायके बराबर तनख्वाह मिलती है। मै नहीं जानता कि वाइसराय महोदयको जितनी मोटी तनख्वाह मिलती है, उसके योग्य वे हैं या नहीं, लेकिन यह अवश्य जानता हूँ कि पेरिसके उस रसो-इयेको जितनी तनख्वाह मिलती है, उसके योग्य वह है। आपको याद रखना चाहिए कि कातना आपका कर्त्तव्य है। जिस क्षण आप चरखेका त्याग कर देंगे, समझ लीजिए, उसी क्षण आपने अपने धर्मका भी त्याग कर दिया। अगर आप भारतको स्वतन्त्र कराना चाहते हैं तो चरखेका प्रयोग कीजिए। जबतक आप चरखेको नहीं अपनाते, आप देशकी गरीबी दूर नहीं कर सकते। स्वदेशी बननेका मतलब है शुद्ध स्वदेशी वस्त्रोका उपयोग करना, न कि मिलके सूतसे तैयार वस्त्रोका। आपके राष्ट्रीय स्कूलोमे कताई और बुनाई सिखाई जाती है। जब सविनय अवज्ञा प्रारम्भ होगी, उस समय पंजाबके हर विद्यार्थीको खद्दर पहनना अपना कर्त्तव्य मानना चाहिए।

लालाजीने मुझे दो शब्द विद्यार्थियोसे कहनेका हुक्म दिया है। मै पंजाबके विद्या-र्थियोको याद दिलाना चाहता हूँ कि आपको ब्रिटिश झंडेको सलामी देनेके लिए मज-बूर किया गया है। आपको एक-एक दिनमें अठारह-अठारह मील चलनेको विवश किया गया है। मार्शल लॉ के दौरान आपका तरह-तरहसे अपमान किया गया। अतः आपको विदेशी कपडेका इस्तेमाल करना हराम समझना चाहिए। अब आपको चरखा और करघा अपना लेना चाहिए।

महात्माजीका भाषण समाप्त होनेपर लाला लाजपतरायने धन्यवाद देते हुए कहा कि आपने इतनी दूर आकर हमारे सामने बोलनेका जो कष्ट किया, उसके लिए हम आपके आभारी हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-११-१९२१

१७८. टिप्पणियाँ

चरखेकी उपयोगिता

दिल्लीमे अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति द्वारा स्वीकृत सविनय अवज्ञाके प्रस्तावमे स्वदेशीके सम्बन्धमे जो शर्ते रखी गई हैं उनका बडा विरोध किया गया था। यह विरोध इन दो शर्तोके विषयमे था — एक, सविनय प्रतिरोध करनेवाला, उस प्रस्तावकी योजनाके अनुसार, चरखा कातनेका ज्ञान रखनेके लिए तथा सिर्फ हाथ-कती और हाथ-बुनी खादी ही पहननेके लिए बाध्य है, और दूसरे यह कि जो जिला या तहसील सामूहिक सविनय अवज्ञा करना चाहे उसे अपनी जरूरत-भरका तमाम सूत और कपडा अपने हाथसे जरूर तैयार करना चाहिए। इस विरोधसे यह मालूम हो गया कि लोग अभीतक चरखेका महत्व नही समझ पाये हैं। भारतभूमिसे दरि-द्रताको देश-निकाला देनेवाली अगर कोई वस्तु है तो वह चरखा ही है। कगाल लोग खुशी-खुशी कष्ट-सहन नही कर सकते। उन्हे समृद्धिकी पीडाका इतना ज्ञान नही है कि वे स्वेच्छापूर्वक भूख-प्यास अथवा दूसरे शारीरिक कष्ट-सहन करनेके सुखको समझ सके। उनकी दृष्टिमे तो स्वराज्यका इतना ही अर्थ हो सकता है कि वे बिना भीख माँगे अपना पेट पालनेके लायक हो जायें। उनके हृदयमे अपनी वर्तमान स्थितिके प्रति असन्तोषकी भावनाको जाग्रत करना परन्तु उन्हे उसका कारण दूर करनेके साधन न देना, मानो विनाश, अराजकता, मारकाट और लूटमारको निश्चित रूपसे बुलावा देना है। और इनके खास शिकार होगे खुद वे ही बेचारे दीन-दरिद्र। बस, अकेला चरखा ही उनके लिए अपनी आमदनीका दूसरा सहायक साधन हो सकता है। बुनाई-के द्वारा बहुतेरे, और धुनाईके द्वारा कुछ कम लोग, अपनी गुजरके लायक पूरी आम-दनी कर सकते है। लेकिन कपडा बुनाईकी कला अभी नष्ट नही हुई है। कई लाख आदमी कपडा बुननेकी विद्या जानते हैं। लेकिन ठीक अर्थोमे सूत कातना तो, बहुत ही कम लोग जानते हैं। हाँ, यह सच है कि आज हजारो लोग चरखा घुमा रहे हैं, परन्तु असलमे सूत कातनेवाले लोग सिर्फ थोडे ही हैं। चारो ओर पुकार मच रही है कि हाथ-कता सूत अच्छा नही आता — उससे ताना अच्छा नही बनता। जिस प्रकार अध-सिकी रोटी, रोटी नही होती उसी प्रकार खराब कता कमजोर धागा सूत नही हो सकता। देशमे आज जो सूत कत रहा है उसमे सुधारकी अभी बहुत जरूरत

है और इसके लिए अभी हजारों आदमियोंको अच्छी तरह सूत कातना जाननेकी जरूर है, जिससे वे अपने-अपने जिलोंमें अच्छे किस्मका सूत कतवा सकें। अतः जो लोग स्वराज्यकी स्थापनाके लिए सविनय अवज्ञा करें उन्हें अवश्य ही सूत कातना जानना चाहिए। गौर कीजिए, उनसे यह नहीं कहा गया है कि आप रोज सूत काता करें। हाँ, अगर वे ऐसा करें तो 'अधिकस्याधिकं फलम्।' परन्तु उन्हें सूत — अच्छा कसदार सूत — कातना जरूर आना चाहिए। विरोधके होते हुए भी उस संशोधनका एक बहुत बड़े बहुमतसे नामंजूर किया जाना मेरी दृष्टिमें तो एक शुभ शकुन है। उसे अस्वीकार करनेके पक्षमें एक दलील यह पेश की गई थी कि सिख भाई चरखा चलाना एक हीन काम समझते हैं और कपड़ा-बुनाईको नीची निगाहसे देखते हैं। मुझे जरूर यह आशा है कि यह खयाल उस सारी बहादुर जातिके खयालको जाहिर नहीं करता है। जो जाति एक ईमानदारीकी रोजी देनेवाले पेशेको तिरस्कारकी दृष्टिसे देखती है, वह एक ऐसी जाति है जो अपना कदम पतनकी ओर बढ़ा रही है। यदि अबतक सिर्फ औरतें ही सूत कातती रही हैं तो इसका सबब यह है कि उन्हें फुरसत अधिक रहती है, यह नहीं कि वह एक नीचा काम है। इसके पीछे खयाल यह है कि जो शख्स तलवार चलाता है वह चरखा नहीं चलायेगा, किन्तु यह तो सैनिकके व्यवसायका विकृत अर्थ है। जिस तरह सरकारकी नौकरी करनेवाले सैनिक देशकी सेवा नहीं करते, उसी तरह जो तलवारसे अपनी रोजी कमाता है वह भी अपने समाजकी सेवा नहीं करता। तलवार चलाना तो एक अस्वाभाविक व्यवसाय है और सभ्य जाति केवल असाधारण अवसरोंपर अपनी रक्षा-भरके लिए उसका अवलम्बन करती है। दूसरोंको मारनेका धन्धा करके पेट पालनेकी अपेक्षा चरखा चलाकर पेट भरना हर हालतमें ज्यादा मर्दानगीका काम है। औरंगजेब टोपियाँ सीता था। क्या वह कम बहादुर था? सिख भाइयोंके जिस गुणकी हम कद्र करते हैं वह दूसरोंको मारनेकी उनकी सामर्थ्य नहीं है। स्वर्गीय सरदार लछमनसिंहको आनेवाली पीढ़ियाँ 'वीर' मानेंगी, क्योंकि उन्हें मरनेका मर्म मालूम था। ननकाना साहबके महन्तको आनेवाली पीढ़ियाँ 'खूनी' कहेंगी। अतः मुझे आशा है कि कोई भी सूत कातनेके कामको हीन मानकर इस सुन्दर जीवनदायिनी कलाको सीखनेसे मुँह नहीं मोड़ेगा।

मिलका कता बनाम हाथकता

हरएक सत्याग्रही तहसील या जिलेको अपना कपड़ा खुद ही तैयार करना चाहिए, इस शर्तपर प्रहारके मूलमें द्वेषके अतिरिक्त कुछ अन्य भी कारण थे, और अगर इस शर्तसे हमारा अभिप्राय यह हो कि हरएक तहसीलको सामूहिक सविनय अवज्ञामें शामिल होना चाहिए तो उस शर्तकी पूर्ति होना असम्भव होगा। किन्तु यह उम्मीद तो कोई भी नहीं करता कि इन बाकी बचे कुछ महीनोंमें हरएक तहसील सविनय अवज्ञा शुरू करनेके लिए और इसलिए अपनी जरूरतें खुद ही पूरी करनेके लिए तैयार हो सकेगी अथवा हर जिला तैयार हो सकेगा। बस, कुछ इनी-गिनी थोड़ी-सी तहसीलें ही तैयार हो जायें, तो काफी है। किन्तु अगर कुछ तहसीलें भी पूरी तरहसे स्वावलम्बी बनकर स्वराज्य लेनेके लिए तैयार न हो सकीं तो इस सालमें स्वराज्य लेना असम्भव ही

समझना चाहिए। जो तहसील अपना अन्न खुद ही पैदा करती है, अपना सूत खुद ही कातती है, अपना कपडा खुद ही बुनती है, और अपनी स्वाधीनताके लिए मुसीबतें उठानेके लिए भी तैयार है, वही वास्तवमे इस सालमे स्वराज्यकी स्थापनाके लिए तैयार है। और अगर एक तहसीलने भी अपने कार्यको पूरा कर लिया तो वह एक दीपककी तरह तमाम मकानको अपनी रोशनीसे जगमगा देगी। मै तो सफलतापूर्वक सविनय अवज्ञा करना तबतक नामुमकिन ही समझता हूँ जबतक लगभग आदर्श परिस्थितियोमे कोई ऐसा प्रयत्न न किया जाये जो दूसरे प्रान्तोके लिए मार्ग-दर्शक हो। इसमें कोई शक नही कि भारतके कई भाग ऐसे है जहाँ ऊनी तथा सूती कपडोके सूतकी कताई पूरी तरह चरखेपर ही होना फिलहाल नामुमकिन है। किन्तु जब उन भागोमे, जहाँ फिलहाल यह काम हो सकता है, पूरी तरहसे सगठन हो जायेगा तब उन दूसरे भागोके विषयमे शर्त कुछ ढीली कर देनेमे कुछ कठिनाई न होगी।

हिन्दुस्तानी

अखिल भारतीय काग्रेस महासमितिमे हिन्दुस्तानी — अर्थात् सर्व-साधारणकी भाषा — बडी तेजीसे विचार-प्रकाशनका माध्यम होती जा रही है। समितिमे बहुतमे सदस्य अग्रेजीका एक भी शब्द नही समझते और मद्रास प्रान्तके सदस्य हिन्दुस्तानी नही समझते। बगालके सदस्य कठिनाईसे हिन्दुस्तानी समझते है। वे हिन्दी-भाषामे बोलनेकी आवश्यकताको मानते भी है और जब समितिकी कार्यवाही हिन्दुस्तानीमे चल रही थी तब उन्होने उसपर नाक-भौं नही चढाई। किन्तु द्रविड-भाइयोके लिए तो वह एक प्रकारका सचमुच त्याग ही था। गत अधिवेशनमे मद्रासका सिर्फ एक ही सदस्य उपस्थित था और मलाबारसे भी अधिक लोग नही आ सके थे। किन्तु जब सब द्रविड सदस्य उपस्थित होगे तब तो सचमुच बडी मुश्किल होगी। परन्तु फिर भी उसे दूर करनेका इसके सिवा दूसरा कोई मार्ग ही दिखाई नही देता कि द्रविड भाई जितनी जल्दी हो सके काफी हिन्दुस्तानी सीख ले। जो लोग अग्रेजी नही जानते उनसे तो यह अपेक्षा की नही जा सकती कि वे अग्रेजी पढ लेगे और अब तो लोक-सस्थाओकी नीति अधिकाधिक यही होनी चाहिए कि उनमें ऐसे ही सदस्य रहे जो अग्रेजी न जानते हो। इसलिए, हिन्दुस्तानीके भावनात्मक अथवा राष्ट्रीय महत्वकी बात छोड दें तो भी यह दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक आवश्यक मालूम होता जा रहा है कि तमाम राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओको हिन्दुस्तानी सीख लेनी चाहिए और राष्ट्रकी तमाम कार्यवाही हिन्दीमे ही की जानी चाहिए। किन्तु, यद्यपि गत अधिवेशनमें यह बात तय हुई थी, तथापि द्रविड और बगाली सदस्य यह बात सुनना ही नही चाहते थे कि उसके अनु-सार समिति कोई कडा नियम बना दे। हाँ, वे इतना तो खुशीमे सहन कर लेते है कि जिसका जी चाहे वह हिन्दुस्तानीमें बोले, परन्तु वे यह पसन्द नही करते कि समिति ऐसा प्रस्ताव स्वीकार करके लोगोको उसके लिए मजबूर करे। आखिर यह बात कार्यकारिणी समितिपर छोड दी गई। किन्तु इस दुविधाके होते हुए ऐसे कोई सुझाव देना कार्यकारिणी समितिके लिए बहुत कठिन है जिसे सदस्य एकमतसे मजूर कर ले।

श्री त्यागीका पत्र

मै समझता था कि श्री त्यागीकी वीरतापर सन्देह प्रकट करते हुए मैंने जो-कुछ लिखा[1] था उससे उत्पन्न विवाद मै समाप्त कर चुका हूँ। लेकिन, वन्दीके रूपमे मेरठ जाते हुए उन्होने मुझे जो पत्र लिखा हे उसका अविकल रूपान्तर पाठकोके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे वडी प्रसन्नता हो रही है

> मै 'यग इडिया' का वह अक नहीं देख सका था जिसमें आपने अपने प्रिय मित्र मौलाना शौकत अलीकी हिमायत की है। भाग्यसे उस समय जेलमें होनेकी वजहसे वह मुझे कुछ देरसे मिला। मैंने यह दु खद समाचार देखा जिसमे मेरे लिए आपने डरपोक और कायर शब्दोका प्रयोग किया है। अपने सम्बन्धमें इन विशेषणोका प्रयोग हुआ देखकर मुझे जितनी पीडा हुई है मैं आपसे उसका बयान नही कर सकता। मै अपने मनको यह समझाकर तसल्ली देना चाहता हूँ कि आपने जो-कुछ भी लिखा है वह नेकनीयतीसे ही लिखा है। लेकिन मेरी आत्मा मानती ही नहीं। आपकी राय यह प्रतीत होती है कि थप्पड खानेके बाद मुझे अदालतसे बाहर चले जानेकी कोशिश करनी थी और उस कोशिशका फल भोगनेके लिए तैयार रहना था। मै यह मानता हूँ कि मैं ऐसा कर सकता था। लेकिन यह निश्चित है कि ताकतके नशेमे चूर मजिस्ट्रेट मेरे ऊपर और भी अधिक हिसाका प्रयोग करता और इस बातकी बहुत सभावना थी कि अधिक हिसा देखकर दर्शक मजिस्ट्रेटपर हाथ छोड बैठते। उसका परिणाम यह होता कि गोली चल जाती और मेरा संयम टूटनेके कारण मेरे सैकड़ो देशवासी गोलियोसे मारे जाते। केवल इसी विचारने मुझे रोके रखा। लेकिन फिर भी मैं बिल्कुल ही निष्क्रिय नही रहा। क्या आपने वह पत्र अभीतक नही देखा है जो इस घटनाके बाद ही मैंने मजिस्ट्रेटको लिखा था? हिंसाके प्रयोगके फौरन बाद मजिस्ट्रेटने जब मुझसे यह पूछा कि क्या मुझे कोई बयान देना है, तो मैंने तेज आवाजमे जवाब देते हुए यह कहा था, "मै ऐसी अन्यायी और कानून न माननेवाली अदालतके सामने बयान देनेसे इनकार करता हूँ जो खुद मुलजिमपर हाथ छोडती है।" क्या यह कथन इस बातका सबूत नहीं है कि मै दबा नहीं था? उस समय मैंने जो-कुछ भी किया वह देशकी भलाईके लिए ही किया था और मैंने मनमें कभी यह सोचा भी नहीं था कि वह मेरे कार्यसे नाखुश होगा। मै ही जानता हूँ कि थप्पड खानेके बाद शान्त रह सकना मेरे लिए कितना मुश्किल था। यदि आप अब भी यह सोचते है कि मैंने गलती की तो आप मुझे क्षमा कर दें। देशको मेरा श्रद्धावनत प्रणाम।

१ देखिए "टिप्पणियाँ", १३-१०-१९२१ का उप-शीर्षक "विपरीत दृश्य" तथा "टिप्पणियाँ" २०-१०-१९२१ का उप शीर्षक "मजिस्ट्रेटकी क्षमा याचना" और "अभियुक्तका बयान"।

इसमे सन्देह नही कि श्री त्यागीके जो देशवासी वहाँ मौजूद थे और जिन्होंने उनका आचरण देखा था वे यह समझ गये थे कि उन्होंने जो-कुछ किया है वह देशके हितके लिए ही किया है। चूँकि मुझे यह पता नही था कि उन्होंने वादके अपने आचरणसे मजिस्ट्रेटको यह जता दिया था कि उनकी विनय एक वीर पुरुषकी विनय है अतः मैंने एक दूर बैठे आलोचकके रूपमे तथ्योंका जिस रूपमे वे मेरे पास भेजे गये थे उसी रूपमे विश्लेषण कर दिया था, जिससे इस वहादुर देशवासीके प्रति अनजाने ही घोर अन्याय हो गया है और मैं उनसे हजार-हजार वार माफी माँगता हूँ। मैं यह जानता हूँ कि हर हफ्ते जिन तथ्यों अथवा कार्योंकी मैं सराहना अथवा आलोचना करता हूँ उनका चुनाव मैं वडी सावधानीके साथ करता हूँ। मैं यह भी जानता हूँ कि किसी निर्दोष व्यक्तिपर दोषारोपण और किसी अपात्रकी प्रशसा करनेसे मैं कितना वचना चाहता हूँ। परन्तु यह वात अव मेरे सामने और भी स्पष्ट होती जा रही है कि ऐसे पत्रकारका काम कितना कठिन होता है जो केवल सच्ची खवरे ही देना चाहता है और सही तरीकेसे लोकमतका निर्माण करना चाहता है।

अहिंसाका व्यवहार

पाठक स्वभावतः अनुमान कर लेंगे कि मैंने श्री त्यागीके सम्वन्धमे जो अनुच्छेद लिखा था उसपर मेरे पास और अधिक आपत्तियाँ अवश्य आई होंगी। इनमे से अधिकांशका उत्तर मैं उस सम्वन्धमे दूसरी वार की गई उस चर्चामे दे चुका हूँ जिसमे मैंने उनसे क्षमा याचना की है।

किन्तु मोतीहारीके एक सज्जनने लिखा है कि वे मेरी आलोचनामे भ्रममे पड गये है और उनकी समझमे नही आता कि अगर ऐसा अवसर उनके सामने उपस्थित हो तो उन्हे क्या करना चाहिए। मैं स्वीकार करता हूँ कि इसके लिए कोई निश्चित नियम वनाना कठिन है। कायरता और शूरता, द्वेष और प्रेम, असत्य और सत्य ये सब हृदयके गुण है। सद्गुणका झूठा दिखावा करना आसान होता है और वाहरी मनुष्यके लिए उस गुणको दूसरेके हृदयमे खोज लेना हमेशा ही कठिन होता है। सबसे अधिक निरापद नियम तो यह है कि मनुष्य जो-कुछ कहता है उसीको तवतक सच माना जाये जवतक अन्यथा प्रमाण न मिले। श्री त्यागीके व्यवहारके सम्वन्धमे मुझे अधूरी खवरे मिली थी और उन्हींके आधारपर मैंने उनके व्यवहारके औचित्य और अनौचित्यका निर्णय किया था। नीचे दी हुई मिसालोसे यह जाना जा सकता है कि हमे खुद किस तरह वरतना चाहिए। प्रह्लादको रामनाम लेनेकी मनाही कर दी गई थी। जवतक मनाही नही की गई थी तवतक वह चुपचाप अपने रास्ते चलता जाता था, परन्तु जव उसे रामनाम लेनेकी मनाही की गई तव उसने उसका प्रतिरोध किया और अत्यन्त कठोर सजाका आह्वान करके हँसते-हँसते उसे सहन किया। डैनियल पहले तो अपने घरके कोनेमे ही पूजा-पाठ किया करता था, परन्तु जव उसे ऐसा करनेसे रोका गया तव उसने झट अपने घरका दरवाजा खोल दिया, खुल्लम-खुल्ला ईश्वरकी पूजा करने लगा और शेरकी गुफामे मेमनेकी तरह डाल दिया गया। हजरत अली अपने विरोधीसे ज्यादा जोरावर थे। उनके विरोधीने उनपर

थूक दिया तो उन्होने उसका हाथ चूम लिया, वहादुर अली जानते थे कि अगर वे अपने विरोधीको इसका जवाव देगे तो उनका ऐसा करना मानो, क्रोधके वश हो जाना होगा। परन्तु मै यह जानता हूँ कि हम इन प्राचीन साधु-सतोकी श्रेणीमे खडे नही हो सकते क्योकि हममे न तो उनके जैसा विशुद्ध शौर्य है, न उनकी जैसी पवित्रता और न उनकी जैसी सम्यक् दृष्टि। हम भय और क्रोधको नही जीत पाये है। हम तो अभी अहिसाका पाठ पक्का करने और निर्भयता सीखनेका यत्न कर रहे है। हमारी अहिसामे तो अभी मिलावट है। हमारी अहिसा अभी अधिकाशमे दुर्वलता-मूलक और अल्पाशमे सबलता-मूलक है। हमारे लिए तो सबसे अधिक निरापद नियम यही है कि अपनेको वलवान् बनाने और अपने वलका साक्षात्कार करनेके प्रयत्नमे हमे जितने कष्ट सहन पडे उतने कष्ट सहे। अतएव जब कोई मजिस्ट्रेट मुझे थप्पड लगाये तब मुझे ऐसा बरताव करना चाहिए जिससे उसे मुझे दूसरा थप्पड लगाना पडे। हाँ, यह बात जरूरी है कि मै उसे पहले थप्पडके लिए अपनी तरफसे कोई कारण न दूँ। यदि मैने बदतमीजी की हो तो माफी माँग लूँ, गुस्ताखी की हो तो नम्र हो जाऊँ और गाली दी हो तो शान्त हो जाऊँ। अदालतमे तो मुझे मुनासिव तरीकेसे ही वरतना चाहिए। कहनेकी जरूरत नही कि मै कभी तो मुनासिव तरीकेसे पेश आऊँ और कभी ना-मुनासिव तरीकेसे, यह नही हो सकता। अदालतमे हमारा वही तर्ज-तरीका अच्छा हो सकता है जो स्वाभाविक हो। अतएव अगर हमे भरसक जल्दी किला सर करना हो तो अपने कामोमे हमसे जो-कुछ भूल हो वह अहिसाकी ही तरफ होनी चाहिए।

नशाबन्दीका काम अपराध है[1]

एक मित्रने नीचे लिखी टिप्पणी भेजी है जिससे पता चलता है कि जनताके प्रति कर्त्तव्यके सम्बन्धमे अधिकारियोकी धारणा कैसी है

> "सरकारने . . . मुकदमोका जो सिलसिला-सा चला दिया है वह हमारी बढ़ती हुई राष्ट्रीय शक्तिका . . . प्रत्यक्ष प्रमाण प्रस्तुत करता है। हम ज्यो-ज्यो प्रगतिके मार्गपर अग्रसर हो रहे है, त्यो-त्यो दमन भी बढ़ता जा रहा है। . . . अबतक देशके किसी भी भागमें केवल नशाबन्दीका काम करनेके आरोपपर एक भी मुकदमा नही चलाया गया था। अब इसका सौभाग्य बिहारको प्राप्त हुआ है। सरकारके पापी स्वरूपका गिधौरके महाराजा बहादुरके भतीजे कुँवर कालिकाप्रसाद सिंहके खिलाफ चलाये गये मुकदमेसे अधिक अच्छा उदाहरण दूसरा नहीं मिल सकता। वे जमानत देनेसे इनकार करके एक सालके लिए जेल चले गये है। उनके अभियोग पत्रमे कहा . . . गया था:
>
> चूँकि पुलिसकी ३ अक्तूबर, १९२१की सूचनासे यह प्रतीत होता है कि तुम कालिकाप्रसाद सिंह उर्फ हीराजी पुत्र महुलीगढ़के राव महेश्वरी प्रसाद सिंह, थाना जमुई, . . . असहयोग आन्दोलनके नेता हो और तुम्हारा मुख्य उद्देश्य आबकारीके अधीन आनेवाली वस्तुओंकी खरीद-फरोख्त रोकना है और चूँकि

तुम इस उद्देश्यकी प्राप्तिके अपने प्रयासमें आबकारीवाली वस्तुओकी दूकानोके सामने धरना देनेके लिए दूसरे लोगोको बाहरसे . . बुला रहे हो और इस काम-में लगा रहे हो और चूँकि . तुम्हारे व्यक्तिगत आचरणके कारण शान्ति और सार्वजनिक व्यवस्था भग होनेकी आशका है इसलिए मै तुमको इस नोटिस द्वारा जाब्ता फौजदारीकी दफा १०७के अधीन हुक्म देता हूँ कि तुम १९–१०–२१को मेरे सामने इसका कारण बताओ कि तुमसे एक वर्षतक शान्ति कायम रखनेके लिए १००० रु० का मुचलका क्यो न माँगा जाये और ५००–५०० रु०की दो जमानतें क्यो न ली जायें।

इसपर कुछ भी टिप्पणी करना व्यर्थ है। कुँवर साहबने अदालतमे बडा ही जोर-दार वक्तव्य दिया जिसमे डराने-धमकानेके आरोपका खण्डन करते हुए उलटे सरकारके बारेमे यह कहा गया था कि हिंसाके सब कार्य कानून और व्यवस्थाके तथाकथित रक्षको द्वारा ही किये गये है।

क्या खून-खराबी आवश्यक है?

एक सज्जन लिखते है

"क्या आप अपने हृदयमें यह विश्वास नही रखते कि स्वराज्य अन्तत बिना खून-खराबी किये कभी प्राप्त नहीं हो सकता? क्या यह अहिंसात्मक आन्दोलन वर्तमान समयके अनुकूल महज ऐसा उपाय नहीं है, जिससे लोगोको आगेकी मारकाट और सशस्त्र क्रान्तिकी अवस्थाके लिए सगठित और तैयार किया जा सके?"

प्रश्न बिल्कुल सीधा-सादा है। इससे जाहिर होता है कि अब भी कुछ लोग वर्तमान आन्दोलनकी सत्यतामे विश्वास नही करते। दुनियामे ऐसा कोई सबब नही है जो मुझे ऐसा कहनेसे रोक सकता हो कि अहिसा हिंसाकी तैयारीके लिए है। जब मैंने राज्यके कानूनोके खिलाफ कितने ही गुनाह किये है, तब मुझे ऐसा कहनेमें हिचकिचानेकी क्या जरूरत है कि वर्तमान आन्दोलन तो हिंसात्मक कार्योकी पेशबन्दी है? सच बात तो यह है कि अकेला मै ही नि शस्त्र — रक्तहीन — क्रान्तिको पूर्णत सम्भव मानता हूँ सो नही, बल्कि कितने ही दूसरे लोग भी हिन्दुस्तानको आजाद करनेके लिए 'अहिंसा' मे पूर्ण विश्वास करते है। अली-भाई जो बात कहते है वही उनके दिलमे होती है और जो बात उनके दिलमे होती है उसीको वे कहते है। वे शरीरबलके उपयोगको अर्थात् किसी हालतमे हिंसाको, जायज मानते है, लेकिन उनका यह विश्वास है कि हिन्दुस्तानकी परिस्थितिको देखते हुए यहाँ शरीरबलके उपयोगकी आव-श्यकता नही है। जब हम "एकता और अनुशासन" प्राप्त कर लेंगे तब हम तीस करोड लोग, एक लाख अग्रेजोके विरुद्ध हिंसा करना अपने गौरवके प्रतिकूल और नामर्दानगीका काम समझेंगे। हमारे मनमे अभीतक जो बेकार क्रोधकी भावना बनी हुई है, उसका कारण यह है कि हममे धोखे और दहशतके मौकोपर विचारकी

सम्बद्धता, चित्तकी शान्ति और उदारता कायम नही रहती। और मैने जो यह कह दिया है कि जब हिसा भारतका धर्म हो जायेगी तब मै हिमायलमे जाकर शरण लूंगा, उसका कारण यही है कि मै 'अहिसा'का पूरी तरह कायल हूँ और मानता हूँ कि 'हिसा' भारतके लिए विनाशकारी है।

क्या खादी चन्दरोजा है?

ये ही सज्जन पूछते है .

> **जब आप कार्यक्रमके दूसरे भागोको हाथमें ले लेगे और स्वदेशी हलचलकी ओर आपका ध्यान कम हो जायेगा, तब क्या खादीकी कद्र कम न हो जायेगी और लोग फिर महीन कपडोको न पहनने लग जायेंगे? जब विद्यार्थियोको स्कूलो और कालेजोसे उठा लेनेकी ऑधी चली थी तब सरकारी स्कूलो और कालेजोको बडा धक्का पहुँचा था। परन्तु अब फिर झुंडके-झुंड विद्यार्थी उन्ही स्कूल-कालेजोमें घुस रहे है। इस उदाहरणसे भी क्या पूर्वोक्त अनुमान नही निकाला जा सकता?**

इन सज्जनने मिसाल अच्छी नही ढूंढी। शिक्षा-सस्थाओके बहिष्कारकी हलचलसे सरकारी स्कूलो और कॉलेजोकी प्रतिष्ठाको जो धक्का पहुँचा है उससे वे चेते ही नही है। हॉ, जिन्होने महज आवेशमे आकर बहिष्कार किया था वे फिर अपने पहले स्थानोपर पहुँच गये है। परन्तु जरा सर आशुतोष मुकर्जीके अश्रुपातपर तो नजर डालिए, जो उन्होने बगालके कालेजोकी हानिपर किया है। पत्र-प्रेषकको शायद यह खबर न होगी कि इस हलचलका असर आज भी काम कर रहा है। परन्तु शिक्षा-सस्थाओके त्यागके आन्दोलनका सम्बन्ध तो अल्पसख्यक लोगोसे ही था और फिर वह आन्दोलन अस्थायी-सा भी था। लेकिन स्वदेशीका सम्बन्ध तो प्रत्येक स्त्री-पुरुष और बालकसे है और यह है भी स्थायी। स्वराज्य प्राप्त होनेपर स्वदेशीका त्याग नही किया जा सकता, और स्वराज्य तो स्वदेशीके बिना असम्भव ही है। फिर विदेशी महीन कपडे पहनना महँगा पडता है। अत कुछ लोग यद्यपि केवल दिखावेके लिए ही स्वदेशी कपडेका इस्तेमाल करते है और अन्तमे उनके फिसल जानेका डर है, मै इस बातको मानता हूँ, फिर भी बहुत बडी सख्या तो पक्के तौरपर स्वदेशीको अपनाये ही रहेगी। स्वदेशी केवल साधन ही नही है। यह तो साधन और साध्य दोनो है।

मेरी गिरफ्तारीका असर

पत्र-लेखकका तीसरा प्रश्न है

> **क्या आप यह नहीं मानते कि सरकार आपको गिरफ्तार करनेमें हमारी नैतिक विजयके कारण नहीं हिचकिचाती है, बल्कि इसलिए हिचकिचाती है कि उसे यह डर है कि आपकी गिरफ्तारीसे देश-भरमें जनसमूह उत्तेजित हो जायेगा और खून-खराबी कर बैठेगा? और क्या आपका यह विश्वास नही है कि अगर**

१७९. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी

गत ४ नवम्बरको दिल्लीमे वर्तमान अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीकी आखिरी बार बैठक हुई।[1] दिल्लीके प्रसिद्ध हकीम अजमलखाँकी देखरेखमे सारा प्रबन्ध किया गया था। उनकी तबीयत खराब है और उनको कुछ समयतक आराम करनेकी सख्त जरूरत है। लेकिन वे इस समय आराम करना नही चाहते। उनका विशाल भवन और डाक्टर अन्सारीका मकान अच्छी-खासी धर्मशाला हो रहे है, हिन्दू और मुसलमान सब मेहमानोके ठहरनेका इन्तजाम उन्हीमे किया गया है। हिन्दुओके धार्मिक विचारोका पूरा खयाल रखा जाता है। जो लोग मुसलमानके घरमे पानी भी नही पीना चाहते, उनको अलहदा मकान दिये गये है। यहाँ दिल्लीमे हिन्दू-मुसलमान एकतापर पूरा अमल होता दिखाई देता है। यहाँके हिन्दू हकीमजीको कामिल तौरपर और कृतज्ञता-पूर्वक अपना नेता मानते है, यहाँतक कि वे अपने धार्मिक हितोको भी उनको सौपनेमे नही हिचकते।

अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी जनताकी ससद है, जो हर साल चुनी जाती है। उसका महत्व और प्रातिनिधिक स्वरूप वर्ष-प्रतिवर्ष बढता ही गया है, और आज तो वह उन तमाम बालिग लोगोकी प्रवक्ता हो गई है, जो चाहे किसी मजहबके पाबन्द हो, या किसी दलसे ताल्लुक रखते हो, परन्तु जो सिर्फ चार आने दे सकते हो, जो काग्रेसका ध्येय-भर स्वीकार करते हो और जिन्होने अपना नाम काग्रेसके रजिस्टरमे दर्ज करा लिया हो। प्रतिनिधियोमे दरअसल हिन्दू, मुसलमान, सिख और ईसाई लोग प्राय शायद अपनी जनसख्याके अनुपातसे ही है। उनमे पारसी और यहूदी लोग भी है या नही, सो मै नही जानता। उनमे स्त्री-प्रतिनिधियोकी सख्या भी अच्छी है और 'पचम' प्रतिनिधि भी है। अगर किसी समाजके लोगोके प्रतिनिधि कम हो तो इसमे दोष उस समाजका ही है। तमाम प्रतिनिधि अवैतनिक है। वे अपने ही खर्चसे अधिवेशनोमे शरीक होते है और भोजन और निवासका खर्च भी खुद ही उठाते है। यह एक अच्छी प्रथा अस्तित्वमे आ गई है कि आमन्त्रक शहर ही प्रतिनिधियोका अतिथिके रूपमे स्वागत-सत्कार करते है। यह उनके निवासियोकी उदारताका लक्षण है, परन्तु काग्रेसके नियमोके अनुसार वे इसके लिए बँधे नही है। अधिकाश निर्वाचित प्रतिनिधि तीसरे दरजेमे सफर करते है और मामूली सुविधाओसे सन्तोष कर लेते है। इस जन-ससदका भवन था बस एक काम-चलाऊ शामियाना और सजावटका सामान था कुछ पेड-पौधे। हाँ, कुर्सियाँ और मेजे लगाई गई थी, परन्तु मै समझता हूँ, वे इसलिए लगाई गई थी कि जहाँ पण्डाल था वहाँ धूल उडती थी, कुर्सियो और मेजोके बिना उससे बचाव करने और काफी सफाई रखनेमे कठिनाई होती। सभापतिकी मेजपर पीला रगा हुआ खादीका कपडा

१ देखिए "भाषण: सविनय अवज्ञापर", ४-११-१९२१।

मेजपोशका काम दे रहा था। प्राय सब प्रतिनिधि — क्या स्त्री और क्या पुरुष — मोटी खादीके कपडे पहने हुए थे, और कुछ इनेगिने लोग, आजकल जिसे वेजवाडाकी महीन खादी कहते हैं, उसके कपडे पहने थे। पोशाके सीधी-सादी और हिन्दुस्तानी थी। इन सब बातोकी सविस्तार चर्चा मैने इसलिए की है कि अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी, बहुतेरे लोगोकी दृष्टिमे, भावी स्वराज्य-ससदका नमूना है। यह हिन्दुस्तानकी सच्ची हालतके अनुरूप ही है। इससे भारतभूमिकी दरिद्रता, सादगी और उसकी आवोहवाकी जरूरतोका थोडा-बहुत आभास मिलता है।

अब, इसके साथ जरा शिमला और नई दिल्लीके झूठे दिखावे, आडम्बर और फिजूल-खर्चीका मुकाबला करे।

जैसा बाहर वैसा ही भीतर। राष्ट्रका यह अत्यन्त महत्वपूर्ण काम बहुत ही व्यवस्थित और यथोचित रीतिसे बारह घटोमे समाप्त किया गया। कोई भी ऐसी बात नही की गई या करने दी गई जिसकी प्राय पूरी छान-बीन न कर ली गई हो। कार्यकारिणी समिति और सभापतिके मतभेदसे सम्बन्धित प्रस्तावपर पूर्ण शान्तिसे विचार किया गया। काग्रेस महासमितिने, जो अपने अधिकारोकी रक्षाके विषयमे सावधान है, कार्यकारिणी समितिके इस निर्णयकी पुष्टि की कि स्वीकृत नियमकी व्याख्या करना सभापतिकी अपेक्षा उसका अधिकार है। फिर भी उसने प्रस्तावमे ऐसी कोई बात नही रहने दी जिससे दिमाग लडानेपर भी वह सभापति महोदयके प्रति अशिष्टतापूर्ण मालूम हो।

किन्तु इस अधिवेशनका मुख्य प्रस्ताव था सविनय अवज्ञाके सम्बन्धमे, जो यहाँ दिया जाता है

> **चूंकि राष्ट्रके इस निश्चयकी पूर्तिके लिए कि "हम इस सालके समाप्त होनेसे पहले स्वराज्यकी स्थापना कर लेगे" -- अब एक महीनेसे कुछ ही अधिक समय बाकी रहा है, और चूंकि, अली-भाइयो और अन्य काग्रेस नेताओकी गिरफ्तारी और सजाके मौकोपर राष्ट्रने पूर्ण अहिसाका पालन करके अनुकरणीय आत्मसयमकी क्षमताका परिचय दिया है, और चूंकि अब राष्ट्रको यह वाछनीय मालूम होता है कि वह अधिक कष्टसहन और स्वराज्य-प्राप्तिके योग्य नियम-पालनकी क्षमताका परिचय दे, अत अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी प्रत्येक प्रान्तको यह अधिकार देती है कि वह अपनी जिम्मेदारीपर, प्रान्तीय समिति जिस ढगसे अधिकसे-अधिक उपयुक्त समझे उस ढगसे सविनय अवज्ञा करे, जिसमें लगान न देना भी शामिल है।**
>
> **१ व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाकी अवस्थामें, प्रत्येक मनुष्यको सूत कातनेका ज्ञान होना चाहिए और कार्यक्रमके अनुसार पूरे तौरपर अपने-अपने कर्त्तव्योका पालन करना चाहिए अर्थात् ऐसा प्रत्येक मनुष्य विदेशी कपडोका इस्तेमाल बिल्कुल छोड चुका हो और केवल हाथका बुना कपडा पहनता हो, हिन्दू-मुस्लिम एकताको तथा भारतकी भिन्न-भिन्न मतावलम्बिनी दूसरी जातियोकी एकताको 'अटल सिद्धान्त'की तरह मानता हो, खिलाफत और पंजाबके अन्यायोके निरा-**

करण और स्वराज्यकी प्राप्तिके लिए अहिंसाको पूर्ण आवश्यक मानता हो और अगर वह हिन्दू हो तो उसके निजी व्यवहारसे यह प्रकट होता हो कि वह छुआछूतको राष्ट्रीयतापर एक कलंक समझता हो।

२. सामूहिक सविनय अवज्ञाकी अवस्थामें, एक जिला या तहसील एक 'घटक' समझा जाना चाहिए और उसके अधिकांश निवासी ऐसे होने चाहिए जो पूर्ण स्वदेशीका पालन करते हों, उसी जिले या तहसीलमें हाथके कते सूतसे करघोंपर बुने कपड़े पहनते हों और असहयोगकी दूसरी तमाम बातोंके माननेवाले हों और उनपर अमल करते हों।

यह शर्त है कि कानून-भंग करनेवाला मनुष्य सार्वजनिक चन्देकी रकमसे निर्वाह करनेकी आशा न रखेगा और सजा पानेवाले व्यक्तियोंके परिवारके लोग रुई धुनकर, सूत कातकर, कपड़ा बुनकर तथा दूसरे किसी साधनसे अपना निर्वाह करेंगे।

इसके अतिरिक्त यह भी व्यवस्था की जाती है कि यदि कोई प्रान्तीय समिति दरखवास्त करे तो कार्यकारिणी समितिको यह अधिकार है कि वह उसे अपना इत्मीनान कर लेनेपर सविनय अवज्ञा भंगकी किसी शर्तसे मुक्त कर दे।

जो लोग सविनय अवज्ञाके लिए बहुत आतुर थे उन्होंने संशोधनोंका तांता बाँध दिया। उन्होंने तरमीमोंकी ताईद बड़ी चतुराईसे की। फिर भी उनके भाषण बहुत ही मुख्तसिर थे। पूर्ण वादविवादके बाद हरएक संशोधन नामंजूर कर दिया गया। वादविवाद करनेवालोंमें मौलाना हसरत मोहानी मुख्य थे। वे सविनय अवज्ञाके लिए बहुत अधीर थे। इससे वे उन कसौटियोंका मर्म नहीं समझ सके, जो भावी कानून-भंग करनेवालेके लिए रखी गई थी। सिख प्रतिनिधियोंके कहनेसे सिर्फ एक परिवर्धन किया गया। वे अपने विशेष अधिकारोंका बहुत खयाल रखते हैं। ऐसी अवस्थामें अगर हिन्दू-मुस्लिम एकताकी रक्षा की जाती है तो पंजाबमें हिन्दू-मुस्लिम-सिख एकतापर जरूर ही जोर दिया जाना चाहिए। तब दूसरे लोगोंको कहना लाजिम था कि "फिर और दूसरी जातियोंका भी नाम क्यों न दिया जाये?" फल यह हुआ कि "भारतकी भिन्न-भिन्न धर्मावलम्बिनी दूसरी जातियोंकी एकता" का भी उल्लेख किया गया। यह संशोधन अच्छा है, क्योंकि इससे यह जाहिर होता है कि हिन्दू-मुस्लिम एकता कोई डरावनी बात नहीं है, बल्कि सब जातियोंकी एकताका प्रत्यक्ष चिह्न है।

इस प्रकार यद्यपि समितिमें पूर्ण मतैक्य रहा है, तथापि इससे यह समझना गलत होगा कि उसमें बाधा या विरोध था ही नहीं। महाराष्ट्र-दल एक सामर्थ्यवान और प्रशिक्षित दल है। उसने इस कार्यक्रमको अपने विश्वासके कारण उतना स्वीकार नहीं किया है जितना कांग्रेसके प्रति अपनी भक्तिके और बहुमत निर्णयके नियमके कारण। उसको इस कार्यक्रममें पूर्ण विश्वास नहीं है, फिर भी वह इसकी आजमाइश कर रहा है। वह हलकी-हलकी बाधाएँ उपस्थित करके अपनी मौजूदगीका अनुभव कराता है। परन्तु उसकी देशभक्ति इतनी जाग्रत है कि वह इन बाधाओंको कार्यनाशकी सीमातक नहीं

पहुँचने देता। श्रीयुत अभ्यंकर[1] अपनी तीव्र प्रहारकारी वक्तृता द्वारा उसकी किलेबन्दी करते हैं, श्रीयुत अणे[2] अपने शान्त तर्कोंसे उनकी पुष्टि करते हैं, और श्रीयुत जमनादास मेहता[3] तो इस दलमें बड़े मौजी जीव हैं। वे अपनी विवाद-पटुता और बाधक हथकंडोंको परिष्कृत करनेके लिए समितिका प्रभावकारी उपयोग करते हैं। समिति उनकी बातोंपर संजीदगीसे विचार नहीं करती और वे भी इस बातको स्पष्ट कर देते हैं कि वे समितिसे इनकी अपेक्षा नहीं रखते। उनकी बातपर सब लोग हँस पड़ते हैं और वे भी उनके साथ खुलकर हँसते हैं। कार्यारम्भके समय यह प्रश्न उठा कि कार्यकारिणी समितिका कोई सदस्य तैयार न हो तो दूसरे किसको सभापति बनाया जाये। तब उन्होंने खुद ही अपना नाम सभापति पदके लिए प्रस्तुत किया। इससे कार्रवाई रोचक बन गई। वे कार्यकारिणी समितिके तमाम सदस्योंको माननीय मानते हैं, और उनके मानका माप यह है कि उनकी रायमें वे लोग उन अधिकारोंको भी अनुचित रीतिसे निरन्तर हथियानेका प्रयत्न करते हैं, जो उन्हें प्राप्त नहीं हैं।[4] परन्तु इससे पाठक यह खयाल कदापि न करें कि ये सब बातें किसी बुरे भावसे की जाती हैं। मैंने किसी सभा-समाजमें लोगोंको इतनी अच्छी तरह पेश आते हुए और हास्य-विनोद करते हुए नहीं देखा, मैं महाराष्ट्र-दलको एक ऐसा दल मानता हूँ जिसे पाकर प्रत्येक राष्ट्रको गर्व होना चाहिए। मैंने जो इस दलका उल्लेख किया है वह वस्तुतः अपनी इस दलीलको मजबूत करनेके लिए कि कांग्रेस महासमितिमें ऐसे सज्जन हैं जो अपने इरादोंको अच्छी तरहसे समझते हैं और जिन्होंने इस बातका दृढ़ संकल्प कर लिया है कि भारतमाताको स्वतन्त्र करानेके प्रयत्नमें वे अपनी सेवाओंका संसारको अच्छा परिचय देंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १०-११-१९२१

१८०. महत्त्वपूर्ण प्रश्न

हम अगले कुछ सप्ताहोंमें ही भारतके किसी-न-किसी भागमें सविनय अवज्ञाके कार्यक्रमपर पूरा अमल होता देखेंगे। व्यक्तिगत अवज्ञाके उदाहरणोंसे तो देश परिचित हो चुका है। पूर्ण सविनय अवज्ञाको "बगावत" कहना चाहिए, परन्तु वह ऐसी बगावत है जिसमें "हिंसा" या मारकाट नहीं है। एक पक्का सविनय अवज्ञाकारी व्यक्ति राजकी सत्ताकी पूर्ण उपेक्षा करता है। वह बागी हो जाता है और राज्यके तमाम नीति-विरुद्ध कानूनोंको न माननेका दावा करता है। इस तरह, उदाहरणार्थ, वह कर देनेसे इनकार कर सकता है, वह अपने दैनिक व्यवहारोंमें राज्यकी सत्ता माननेसे

१ नागपुरके एम० वी० अभ्यंकर।
२ बरारके मा० श्री० अणे।
३ १८८४-१९५५, अ० भा० कांग्रेस कमेटीके सदस्य, १९२१-३१।
४ इस सम्बन्धमें श्री मेहताके विरोधके लिए देखिए "एक प्रतिवाद", १-१२-१९२१।

इनकार कर सकता है, वह अनधिकार प्रवेश विषयक कानूनकी अवज्ञा कर सकता है और सैनिकोसे बातचीत करनेके लिए फौजी बैरकोमे जानेके अधिकारपर आग्रह कर सकता है। वह धरना देनेके तरीकेके बारेमे लगाई गई पाबन्दियोको माननेसे इनकार कर सकता है और मना किये गये मुकामोपर जाकर 'धरना' दे सकता है। परन्तु इन सब कार्योको करते हुए वह अपने विरुद्ध बलप्रयोग किये जानेपर स्वय कभी बल प्रयोग नही करता। सच बात तो यह है कि वह स्वय अपने खिलाफ कैद तथा बल-प्रयोगके दूसरे प्रकारोको निमन्त्रित करता है। वह ऐसा इसलिए और तभी करता है जब वह देखता है कि उसका शरीर-स्वातन्त्र्य, जिसका उपभोग वह प्रकटत करता है, एक असह्य बोझ हो गया है। वह अपने मनमे यह सोचता है कि राज्य सिर्फ वहीतक व्यक्तिगत स्वतन्त्रताकी इजाजत देता है जहाँतक नागरिक उसके कानून-कायदोको मानता है। नागरिक राज्यके कानून कायदोको मानकर अपनी निजी आजादीकी कीमत देता है। अतएव एक पूर्ण या अधिकाश अन्यायी राज्यको मानना, आजादीका अनीति-मूलक सौदा करना है। जो नागरिक इस प्रकार यह देख लेता है कि यह राज्य तो बुरा है तब वह उसे चुपचाप सहन करता हुआ सन्तुष्ट नही रहता और इसलिए वह जब नीतिका उल्लघन किये बिना राज्यको अपनी गिरफ्तारीके लिए मजबूर करता है तब वह उन लोगोको, जो उससे मतभेद रखते है, समाजके लिए एक व्याधि दिखाई देता है। इस तरह सोचे तो सविनय प्रतिरोध आत्माकी वेदना प्रकट करने और एक बुरे राज्यके अस्तित्वके खिलाफ कारगर तौरपर अपनी ऊँची आवाज उठानेका बहुत जोर-दार तरीका है। क्या ससारके सारे सुधारोका इतिहास ऐसा ही नही है? क्या उन सुधारकोने, अपने साथवालोकी तीव्र अनिच्छा होनेपर भी, उन निर्दोष स्थूल-चिह्नो तक को नही छोडा है जिनका सम्बन्ध बुरी प्रथाओसे था?

जब कुछ लोग उस राज्यसे अपना सम्बन्ध तोड देते है जिसमे वे अबतक रहते आये है, तो इसका अर्थ यह है कि वे करीब-करीब अपनी निजी सरकार स्थापित कर लेते है। मैंने 'करीब-करीब' शब्दका प्रयोग इसलिए किया है कि जब राज्यकी ओरसे वे ऐसा करनेसे रोके जाते है तब वे बल-प्रयोग करनेकी सीमातक नही जाते। व्यक्तिगत रूपसे उनका 'काम' तो यह है कि जबतक राज्य उसका पृथक् अस्तित्व स्वीकार न कर ले, या दूसरे शब्दोमे, उसकी इच्छाके आगे सिर न झुका दे तबतक वे कोठरियोमे बन्द रहे या राज्यकी गोलियाँ खाकर मरते रहे। १९१४ मे[1] दक्षिण आफ्रिकामे तीन हजार हिन्दुस्तानियोने इसी प्रकार ट्रान्सवाल प्रवासी अधिनियमको भग करनेके लिए ट्रान्सवालकी सीमामे प्रवेश किया था और सरकारको अपनी गिरफ्तारीके लिए बाध्य किया था। जब सरकार उनको मारकाटके लिए उभाडनेमे या दबानेमे सफल न हो सकी तब उसने उनकी माँग स्वीकार कर ली। इसलिए सविनय अवज्ञा करने-वालोका समुदाय एक ऐसी सेना है, जिसके लिए एक सैनिककी तरह पूरा अनुशासन, बल्कि उससे भी कडा अनुशासन आवश्यक होता है, क्योकि उसमे वह उत्तेजना नही होती जो मामूली सैनिकके जीवनमे पाई जाती है। और चूँकि इस सविनय प्रतिरोध करनेवाली

१. ६ नवम्बर, १९१३ को, देखिए खण्ड १२, पृष्ठ २५१।

सेनामे बदला लेनेकी भावनासे मुक्त होनेके कारण रोपका अभाव होता है अथवा होना चाहिए, इसलिए उसके थोडेसे-थोडे सिपाही भी काफी होते है। इसमे कोई शक नही कि सिर्फ एक — अकेला ही — 'पूर्ण' सविनय प्रतिरोव करनेवाला मनुष्य अन्यायके मुकाबलेमे न्यायकी ओरसे युद्ध करके विजय प्राप्त करनेके लिए काफी होता है।

इसलिए, यद्यपि अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीने प्रान्तोकी समितियोको खुद उन्हीकी जिम्मेदारीपर सविनय अवज्ञा करनेकी सत्ता दे दी है, तथापि मैं आशा करता हूँ कि वे 'जिम्मेदारी' शब्दका पूरा ध्यान रखेगी और काफी सोचे-समझे विना सविनय अवज्ञा शुरू न करेगी। हरएक शर्तका पालन अवश्य पूरी तरह होना चाहिए। हिन्दू-मुस्लिम-एकता, अहिसा, स्वदेशी और छुआछूतको दूर करनेके उल्लेखका अर्थ यह है कि वे अभी हमारे राष्ट्रीय जीवनके अभिन्न अग नही हो पाये है। अगर अव भी किसी व्यक्ति या समुदायको हिन्दू-मुसलमान एकताके विपयमे कुछ खटका बाकी रहा हो, अगर उसे अव भी इसमें कुछ शक बाकी हो कि हमारे इस तीन-सूत्री ध्येयकी सिद्धिके लिए अहिसा आवश्यक है, अगर अवतक उसने स्वदेशीका पूर्ण पालन न किया हो और अगर उस समुदायके हिन्दुओमे अव भी छुआछूतका जहर बाकी हो तो वह व्यक्ति या समुदाय सविनय अवज्ञा शुरू करनेके लिए तैयार नही है। हाँ, निस्सन्देह, सबसे अच्छा यह होगा कि जबतक उसका प्रयोग एक क्षेत्रमे हो रहा है तबतक दूसरे क्षेत्र उसे गौरसे देखे और रुके रहे। अगर हम उसे सेनाकी भापामे कहे तो जो पलटने देखती और रुकी रहती है, वे भी लडाईमें उतना ही सक्रिय सहयोग करती है जितना कि वे पलटने करती है जो वास्तवमे लडती है। जब एक जगह यह प्रयोग चल रहा है, तब उसके साथ ही व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा करनेका मौका उसी समय आ सकता है, जब सरकार चुपचाप स्वदेशीका प्रचार करनेमे बाधा डाले। इसी तरह यदि किसी होशियार सूत कातनेवालेको यह आदेश दिया जाये कि वह कताईके सगठनका या शिक्षणका कार्य न करे तो उसे तुरन्त ऐसी आज्ञाका अनादर करना चाहिए और जेल चले जाना चाहिए। परन्तु दूसरी समस्त बातोमे, जहाँतक मैं मौजूदा हालतमे सोच सकता हूँ, दूसरे प्रान्तोके लिए यह सबसे अच्छा होगा कि जबतक एक प्रान्त सोच-समझ कर उसमें अग्रसर हो रहा है और राज्यके ज्यादासे-ज्यादा जितने नीति-विरुद्ध कानूनोको तोड सकता है उन्हे विचार-पूर्वक तोड रहा है, तबतक वे ठीक-ठीक तमाम आज्ञाओ और हिदायतोको मानते रहे। यह कहनेकी तो आवश्यकता ही नही है कि उस समय अगर दूसरे किसी भी भागमें जरा भी हिंसाका उद्रेक हुआ — लोगोकी तरफसे जरा भी खून-खराबी हुई — तो इससे उस प्रयोगकी निस्सन्देह बडी ही हानि होगी और शायद वह बन्द भी हो जाये। प्रयोग-कर्त्ता प्रान्तके लोग चाहे जेल भेजे जाये, उन पर गोलियाँ चलाई जाये या वे हाकिमो द्वारा तरह-तरहसे सताये जाये, परन्तु दूसरे प्रान्तोके लोगोसे ऐसी अवस्थामे भी बिलकुल अचल और अक्षुब्ध रहनेकी उम्मीद की जाती है। हम उनसे यह जरूर उम्मीद करते है कि वे हर कल्पनीय स्थितिमे शोभनीय व्यवहार करेगे।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १०-११-१९२१

१८१. ब्रह्मचर्यका पालन कैसे किया जाये?

एक स्वयसेवकने अत्यन्त करुणाजनक पत्र लिखा है। वह कहता है कि बहुत प्रयत्न करनेके बावजूद वह ब्रह्मचर्यका पालन नही कर पाता। उसे स्वप्नदोष होता है और इससे कभी-कभी उसे आत्महत्या करनेकी इच्छा होती है। इसमे मुझे घबराहट दिखाई देती है। जबतक मनुष्य जानबूझकर अपराध नही करता, पुरुष स्त्रीकी ओर अथवा स्त्री पुरुषकी ओर बुरी निगाहसे नही देखती तबतक निराशाका कोई कारण नही है। जाग्रत अवस्थामे मनपर पूरी तरहसे नियन्त्रण प्राप्त करनेके बाद निद्रावस्थाके लिए ईश्वरपर भरोसा करके सोना चाहिए। सोते समय दोष हो तो समझना कि अभी मनकी वासनाओका क्षय नही हुआ है। "निराहारीके विषय शान्त हो जाते है, लेकिन रस नही जाता, रस तो आत्मदर्शनके बाद ही जाता है।"[1] यह वचन अनुभव-जनित है और अक्षरश सत्य है। आत्माकी मूढ दशामे ही पाप सम्भव है—आत्मज्योति प्रकट होनेके बाद पापका सर्वथा क्षय हो जाता है। ब्रह्मचर्यका सतत पालन करनेवालेको निम्नलिखित नियमका पालन करना चाहिए

१ अल्पाहार करे।

२ आहारमे भी मसालेदार, बहुत घीवाले या तले हुए पदार्थोका, मिठाइयोका तथा माँसादिका त्याग करना चाहिए।

३ मदिरापान तो किया ही नही जा सकता, लेकिन अनेक प्रकारके पेय, उदाहरणके रूपमे चाय, कहवा और काढा भी, दवाके रूपमे ही पिये जा सकते है।

४ गुह्य भागोको हमेशा दो-तीन बार ठण्डे पानीसे धोये और उनपर ठण्डा पानी उडेले।

५ भारी आहार कभी न ले।

६ रातके भोजनका त्याग करे।

७ भूखे पेट सोये, इसलिए अन्तिम भोजन हमेशा हलका करे।

८ शृगार रसकी पुस्तके न पढे, वैसी बाते न करे और न सुने।

९ स्त्री-मात्रको बहन समान समझे, कभी उनकी ओर लोभी नजरोसे न देखे। यह सुन्दर है, यह सुन्दर नही है—ऐसा विचारतक भी न करे। सौन्दर्य आकृतिमे अथवा रगमे ही होता तो हम पुतलोको देखकर ही आँखोकी तृप्ति कर लेते। सौन्दर्य सद्‌गुणोमे है और सद्‌गुण इन्द्रियोकी तृप्तिकी वस्तु नही है। अपनी माँ अथवा बहनको जो सुन्दर या असुन्दर मानता है वह पापी बनता है, ऐसा सोचकर विकारोपर विजय प्राप्त करे।

१० स्त्रीके साथ कभी एकान्तवास न करे।

१ भगवद्‌गीता, २-५९।

११ शरीर और मनको हमेशा सत्कार्यमे लगाये रखे। चरखेके निरन्तर उपयोगको मै इसमे वहुत सहायक मानता हूँ। अलवत्ता, यह मेरा अनुमान हे, अभी अनुभवसे नही लिख सकता। कहनेका तात्पर्य यह हे कि अन्य शारीरिक क्रियाओकी अपेक्षा चरखा सयमका पालन करनेमे अधिक मदद करता है, ऐसा मेरा अनुमान है।

१२ आत्मशुद्धिके लिए निरन्तर ईश-स्मरण करे। आस्तिक मानता हैं कि ईश्वर अन्तर्यामी हे, नीदमे भी हमारी चेष्टाएँ देखता है। इसलिए हमे चौवीसो घटे सावधान रहना चाहिए। कोई भी मानसिक अथवा शारीरिक क्रिया करते समय ईश्वरके नामको भूलना नही चाहिए। उसका नाम सारे पापोको हरनेवाला है। थोडी मेहनत करनेके वाद प्रत्येक इस वातका अनुभव कर सकेगा कि कोई भी काम या विचार करते हुए ईश-स्मरण करना सम्भव है। एक समयमे व्यक्ति एक ही वातपर विचार कर सकता है, यह नियम ईश-स्मरणपर लागू नही होता, क्योकि ईश्वरका स्मरण करना आत्माका स्वाभाविक गुण है। दूसरे विचार तो उपाधि रूप हैं। जो व्यक्ति यह मानता है कि सव-कुछ ईश्वर करता है और उसीके ध्यानमे लीन रहता है उसे सोचने अथवा करनेके लिए क्या रह जाता है? वह स्वय मिटकर ईश्वरके हाथका साधन-मात्र रह जाता है। ऐसे ईश-स्मरणके विना मन, कर्म और वचनसे मै शुद्ध ब्रह्मचर्यका पालन करनेकी वातको असम्भव मानता हूँ।

जो इतने नियमोका पालन करेगा वह अवश्य जितेन्द्रिय वनेगा। और इतना प्रयत्न करनेवाले व्यक्तिको निश्चिन्त रहना चाहिए और स्वप्नदोषसे तनिक भी नही घवराना चाहिए। स्वप्नदोषको असावधानीकी स्थिति माने और उसकी अधिक चौकसी करे, परन्तु घवराये विलकुल नही। लेकिन हाँ, अगर उसकी दृष्टि मलिन हो और वह दूसरे व्यक्तिकी तुष्टिको मलिन करनेके लिए ललचाये तो उसे अवश्य आत्महत्या करनी चाहिए। परस्त्रीगमनकी अपेक्षा आत्महत्या करना अधिक श्रेयस्कर है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १०–११–१९२१

१८२. टिप्पणियाँ

एक सलाहकार

एक सलाहकार लिखते हैं कि एक वार 'इडियन सोशल रिफॉर्मर' मे यह टीका प्रकाशित हुई थी कि "गाधी अपनी अन्तरात्माकी आवाजको वहुत दृढतासे पकडे रखते है और फिर दूसरे महापुरुष उनके वारेमे क्या सोचते हैं, इसका विचारतक नही करते और उसे जानना भी नही चाहते।" इसके वाद सलाहकार महोदय लिखते है कि अगर उपर्युक्त टीका सही है तो यह दु खकी वात है। इसके वाद वे अग्रेज लेखकोके इस कथनको उद्धृत करते हैं कि प्रत्येक सेवकको, उसके आलोचक अथवा विरोधी क्या कहते हैं, यह देखना चाहिए और मुझे सलाह देते हैं कि मुझे विदुषी एनी वेसेंट[1] आदिकी

१ एनी वेसेंट (१८४७–१९३३), थियोसॉफिकल सोसाइटीकी अध्यक्षा, बनारसके केन्द्रीय हिन्दू कालेजकी सस्थापिका, कांग्रेस अध्यक्ष, १९१७।

आलोचनाको पढना चाहिए, उसपर विचार करना चाहिए। अन्तमे वे अग्रेज लेखकोके कथनको उद्धृत करनेके लिए क्षमा माँगते है। ऐसे पत्र मुझे मिलते है, सो ठीक है और मुझे प्रिय भी है। पत्र-लेखकको क्षमा मॉगनेकी कोई जरूरत नही है। मै अग्रेज लेखकोकी अवगणना नही करता। मैने उनमे से अनेक लेखकोकी रचनाएँ पढ़ी है और उनसे लाभ उठाया है। कुछेक व्यक्तियोका मै पुजारी हूँ। अपनी आलोचनाको पढकर उसपर विचार करना, प्रत्येक विवेकी और विनम्र व्यक्तिका कर्त्तव्य है। व्यक्ति जितना आलोचकोसे सीखता है उतना अपने अनुयायियोसे नही सीखता। इसीलिए कितने लोग मेरे वचनोको पसन्द करते है इसकी अपेक्षा मै इस बातका ज्यादा ध्यान रखता हूँ, कितने नापसन्द करते है। और यदि मै एक बार निश्चित किये गये विचारोको एकाएक नही बदलता तो उसका सबल कारण यह है कि मै टीकाओपर पहले ही विचार कर लेता हूँ। श्रीमती एनी बेसेंट द्वारा की गई एक भी टीका ऐसी नही है जिसपर मैने विचार न किया हो। एक बात निस्सन्देह सत्य है। अन्तरात्माकी आवाजको मै प्रमुख स्थान देता हूँ, उसके आगे महान पुरुपोके वचन भी नही टिक सकते और न टिकने ही चाहिए। स्वराज्यवादी कुछ और कर ही नही सकता। जो व्यक्ति अन्तरात्माकी आवाजको प्रथम स्थान नही देता वह मनुष्यतासे गिर जाता है और उसकी कीमत कौडीकी ही हो जाती है। अन्तरात्माकी आवाज सबको सुनाई नही देती, यह बात हमे समझ लेनी चाहिए। अन्तरात्माकी आवाज मननशील, विवेकी, नम्र, आस्तिक और सयमीको ही सुनाई देती है। मै मनन, विवेक अथवा नम्रतासे शून्य नही हूँ। आस्तिक तो हूँ ही। सयमका पालन करनेका पूरा प्रयत्न करता हूँ। इससे मै मानता हूँ कि मुझे अन्तरात्माकी आवाज सुनाई देती है। सब लोग मेरी तरह अपनी अन्तरात्माकी आवाज सुन सकते है और जो इस आवाजको सुन पाता है उसे एक बहुत बडा सहारा प्राप्त हो जाता है। बादमें वह महानसे-महान पुरुषोके वचनोसे उसकी तुलना कर सकता है? इसमे कभी-कभी वह भूल भी कर सकता है और तब वह अत्यन्त नम्रतापूर्वक उसको स्वीकारकर पश्चात्ताप भी करता है।

सविनय अवज्ञा

यही पत्र-लेखक पूछता है कि "आप कानूनकी सविनय अवज्ञा करनेकी सलाह देते है तो इसके साथ ही कानून भगके फलस्वरूप प्राप्त सजाका अनादर करनेके लिए क्यो नही कहते?" लेकिन सजाका अनादर होनेपर तो अन्धेरगर्दी ही हो जायेगी, क्योकि उसमें विनय नही रहेगा। विनयका तकाजा है कि सजाका अनादर नही होना चाहिए, अनादर तो हुक्मका ही होता है। इसके सिवा, सजाका अनादर असम्भव है। सविनय अवज्ञाकी उत्पत्ति आत्मबलसे होती है। अत्याचारी अपने शरीर-बलपर मुग्ध हो जगतको अपने अधीन करनेका प्रयत्न करता है। आत्मबली अपना शरीर अत्याचारीको सौंपकर आत्माको स्वतन्त्र बनाता है। क्योकि अत्याचारी आत्माका स्पर्शतक भी नहीं कर सकता। प्रह्लादने सविनय अवज्ञाकी लेकिन पर्वतपरसे गिरनेमे उसे कोई हिचक नही हुई। अगार जैसे लाल लोहेके स्तम्भसे उसने मित्रकी तरह भेटकी। सुधन्वा उबलते तेलकी कडाहीमे हँसते-हँसते गिर गया। यूसुफ पैगम्बरने अन्यायपूर्ण आदेशोको

मानेकी अपेक्षा जेल जाना पसन्द किया। सविनय कानून भंग करनेवाला जुर्माना नही भरता क्योंकि वह तो उसीका कार्य कहा जायेगा। जेल जाना उसका कार्य नही, वह, स्वेच्छासे जेल नही जाता, अत्याचारी उसे बलात् जेलमे डालता है।

भय-जनित प्रश्न

यही पत्र लिखनेवाला फिर पूछता है "समझिए कि असहयोगके कारण अंग्रेजोंने हमारे साथ सम्बन्ध तोड़ लिया तो फिर हम कैसे विश्वास कर ले कि अफगानिस्तान आदि देश हिन्दुस्तानपर चढाई नही करेंगे? और यदि ऐसा हुआ तो क्या हमारी हालत वही नहीं हो जायेगी जो थी?"

कुछेक लोगोंके दिलोंमें यह प्रश्न उठता है और यदि बहुत ज्यादा लोग यह सोचें तो हमें स्वराज्य नही मिल सकता। क्योंकि अफगानिस्तान और जापान आदिका भय रखनेवाले तो अंग्रेज-राज्यको अवश्य पसन्द करेंगे। ऐसे भयका निराकरण करनेका नाम ही स्वराज्य है। यदि हम अंग्रेजोंको निकाल बाहर करने जितनी शक्ति प्राप्त कर लें तो क्या वह अफगानिस्तान अथवा जापानका सामना करनेके लिए पर्याप्त नही है? जबतक हम स्वदेशीका पूर्ण रूपसे पालन नही करते तबतक हम भयभीत बने ही रहेंगे। स्वदेशीका पालन पतिव्रता स्त्रीके व्रतके समान है। जिस तरह पतिव्रता स्त्रीपर कोई उद्धत पुरुष कुदृष्टि नहीं डाल सकता उसी तरह स्वयं काते और बुने वस्त्रोंसे सज्जित भारत-मातापर भी कोई कुदृष्टि नही डाल सकता। जापान स्वावलम्बी भारत-का क्या बिगाड़ सकेगा? जिस हिन्दुस्तानके हिन्दू और मुसलमान एक हो गये हैं उस हिन्दुस्तानका अफगानिस्तान क्या कर सकता है? जिसको स्वदेशीका सेवन नही करना है उसे जापानका भय है, जिसे मुसलमानकी सज्जनतापर सन्देह है वह अफगानसे डरता है। स्वराज्यवादीको सब प्रकारके भयसे छुटकारा पाना है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १०–११–१९२१

१८३. भाषण : लाहौरकी सार्वजनिक सभामें

१० नवम्बर, १९२१

महात्मा गाधीने प्रस्तावका समर्थन करते हुए एक भाषण दिया। उन्होने कहा कि अली-बन्धुओ तथा अन्य लोगोके लिए बधाईके प्रस्तावका समर्थन करते हुए मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि अगर आप अली-बन्धुओ और दूसरे असहयोगियोको इसी वर्ष जेलसे छुटकारा दिलाना चाहते है तो आपको अहिंसात्मक असहयोगका कार्यक्रम पूरा करनेकी कोशिश करनी चाहिए। अली-बन्धुओने एक सन्देश भेजकर सूचित किया है कि वे तो अब सरकारके आदेशसे ही मुक्त होना चाहते है। अगर आप खिलाफत तथा पजाबके साथ किये गये अन्यायोका परिशोधन कराना चाहते है तो उसका एक ही

तरीका है। पजाबने जो प्रगति की है, उसपर मै उसे बधाई देना चाहता हूँ, लेकिन उसने इसी वर्ष स्वराज्य पाने लायक प्रगति नहीं की है।

अव्वल तो आप युवराजकी यात्राका पूरा बहिष्कार कीजिए। आपकी नगरपालिकाने इस आशयका एक प्रस्ताव भी पास किया है, लेकिन उस प्रस्तावको वापस करानेकी कोशिशें की जा रही है। किन्तु, मुझे पूरी आशा है कि आप इस तरह अपनी अप्रतिष्ठा नहीं होने देंगे। नगरपालिकाको मै उसके निर्णयके लिए बधाई देता हूँ। हम लोग युवराजके शत्रु नहीं है, और न उनका अपमान करना चाहते है। महात्माजीने आगे कहा कि अगर किसीने युवराजका बाल भी बाँका करनेकी हिम्मत की, तो आपको अपने प्राणोकी बाजी लगा कर भी उनकी रक्षाके लिए तैयार रहना चाहिए। यह आपका कर्त्तव्य है। लेकिन भारतके प्रति भी आपका कुछ कर्त्तव्य है। युवराज यहाँ युवराजके ही रूपमें आ रहे है और उनका उद्देश्य वर्तमान सरकारको बल देना है। अगर आपमें तनिक भी मानवता है, देश और खिलाफतसे आपको तनिक भी प्रेम है, या अगर पंजाबके साथ किये गये अन्यायका आपके मनमें कोई खयाल है, तो चाहे कोई आये -- युवराज आये या कोई भी आये -- आपको उसकी यात्राका बहिष्कार करना चाहिए। एक बार पूनामें मैंने कहा था, अगर गोखले भी वर्तमान सरकारको बल प्रदान करनेके उद्देश्यसे आपके बीच आयें तो आपको उनका कोई स्वागत नहीं करना चाहिए। मुझे आशा है कि पजाब युवराजका कोई स्वागत नहीं करेगा।

नगरपालिकाने जिस दूसरे सवालकी ओर ध्यान दिया है वह है लॉरेंसकी प्रतिमा, जिसपर ये शब्द खुदे हुए है: "तुम कलमके हुक्मपर चलना चाहते हो या तलवारके हुक्मपर?" वह दिन आ गया है जब कोई भी भारतको भयभीत नहीं कर सकता। भारतीय न तो किसीकी तलवारसे डरना चाहते है और न कलमके हुक्मसे प्रभावित होना चाहते है। मै आपकी नगरपालिकाको बधाई देता हूँ। जब आपकी नगरपालिकाने एक काम करना तय कर लिया है तो आप सभी स्त्री-पुरुषोको एकमत होकर वैसा ही करना चाहिए। हम लॉर्ड लॉरेंसके दुश्मन नही है, लेकिन हम नही चाहते कि प्रतिमापर वे शब्द खुदे रहे। भारतमे अब बाते बदल गई है। भारतीय लोग ईश्वरके अलावा और किसीसे नही डरते। वे नहीं चाहते कि वह प्रतिमा वहाँ बनी रहे। तो आप सबको एक सभा करके सरकारसे स्पष्ट कहना चाहिए कि "तुम्हे यह प्रतिमा हटानी होगी।"[1]

जैसा कि प्रस्तावमें कहा गया है, आप सब अली-बन्धुओके रास्तेपर चलेंगे। अगर सरकार अपने अंग्रेज, सिख, गुरखा या पठान सिपाहियोके बलपर प्रतिमाकी रक्षा करना चाहे तो जनताको कहना चाहिए, "हम मरकर भी इस प्रतिमाको हटवायेंगे।" नगरपालिका जिस-किसीको आदेश दे, उसे प्रतिमा हटानेके लिए जानेको तैयार

१. देखिए "कलम या तलवार", १७-११-१९२१।

रहना चाहिए। अगर कुछ औरतें वहाँ जाकर संगीनोंके सामने डट जायें और अपनी जेल जानेकी तत्परता दिखायें तो और भी अच्छा हो। मैं नहीं मानता कि वर्तमान सरकार इतनी बर्बर है। वह झुक जायेगी। लेकिन अगर सरकार पागलपनसे काम ले, तो आपको अपनी आत्मकी रक्षा करने और उसके लिए कष्ट उठानेको तैयार रहना चाहिए। अगर वैसा समय आ जाये, तो आपको दिखा देना चाहिए कि आप सिपाहियोंकी परवाह नहीं करते। अली-बन्धुओंको उनके मुकदमेके दौरान जब अपनी-अपनी कुर्सियोंपरसे उठनेको कहा गया तो उन्होंने इनकार कर दिया, किन्तु फिर जब अपनी मर्जी हुई, उन्होंने कुर्सियां छोड़ दीं और दोनों भाई अपने-अपने लबादे बिछाकर जमीन पर ही बैठ गये। आपको जरूरत सिर्फ पक्के साहसकी है। लेकिन, किसीको रातमें वह प्रतिमा हटानेके लिए नहीं जाना चाहिए। आपको सब-कुछ खुले-आम करना चाहिए। बल्कि आपको सरकारको पहले ही इस बातकी सूचना दे देनी चाहिए। कोई बारह वर्ष पहले रातमें किसी आदमीने वहाँ जाकर प्रतिमाको जूतोंकी माला पहना दी थी। किसीको ऐसा-कुछ नहीं करना चाहिए।

अगर आप अहिंसापर आग्रह रखते हुए काम करते जायेंगे तो जजीरत-उल-अरब और स्मर्ना भी मिल जायेंगे, थ्रेस और फिलिस्तीन भी मिल जायेगा। लेकिन अगर कोई हिन्दू, मुसलमान या सिख हत्या करे या मुँहसे अपशब्द भी निकाले तो उसे राष्ट्रका शत्रु मानना चाहिए। आपको अहिंसापर डटे रहना है। आपको अपने भीतर लछमनसिंह और दलीपसिंहका साहस संजोना चाहिए, जो ननकाना साहबमें शहीद हुए। इसके विपरीत, महन्तको हत्यारा माना जाता है। आपको मरना सीखना चाहिए।

मैं 'जमींदार'[1]को भी बधाई देना चाहता हूँ। पहले मौलाना जफर अली खाँ जेल गये, उनके पीछे उनका लड़का और फिर पत्रके एक तीसरे सम्पादक जेल गये। अब एक दूसरे सज्जन सम्पादककी हैसियतसे आये हैं, और मैं चाहता हूँ, वे भी जेल जायें। मैं चाहता हूँ मर्दोंका स्थान औरतें लें और कष्टसहन करें। आपको इसकी चिंता ही नहीं करनी चाहिए कि दण्ड प्रक्रिया संहिताके खण्ड १४४ या प्रेस ऐक्टके अधीन क्या-कुछ हो सकता है। मुझे आशा है कि जबतक सरकार 'जमींदार' का प्रेस जब्त न कर ले तबतक वह चलता रहेगा।

अन्तमें उन्होंने कहा कि तीन बातें हैं, जिनकी याद मैं आपको दिलाना चाहूँगा। एक है अहिंसा, दूसरी हिन्दू-मुस्लिम एकता और तीसरी चीज है चरखा।

[अंग्रेजीसे]

ट्रिब्यून, १२-११-१९२१

१ एक दैनिक पत्र।

१८४. परीक्षा

गुजरातकी परीक्षाके दिन नजदीक आ रहे है। महीने भी नही रहे, सिर्फ हफ्तोकी बात है। कुछ ही समयमे दिनोकी बात होने लगेगी और फिर घटोकी गिनती होगी।

एक ओर तो गुजरातको अ० भा० काग्रेस कमेटीका अधिवेशन सम्पन्न करना है। देखना है कि हम अतिथि-सत्कार, व्यवहार-कुशलता व उदारतामे कम न निकले।

दूसरी ओर गुजरातने असहयोगमे जो पहले कदम बढाया है,[1] उसकी शोभाके योग्य काम करके दिखाना है। गुजरातको कमसे-कम एक तहसील तो ऐसी तैयार करनी चाहिए जो मौतकी गोदमे जानेके लिए तत्पर हो और वैसा सामर्थ्य भी रखती हो।

इसकी शर्ते मै पहले ही लिख चुका हूँ। यह कहा जा सकता है कि महा समितिने भी उन्हे स्वीकार कर लिया है। ये शर्ते निश्चय ही कार्य-रूपमे परिणत की जा सकती है। परन्तु उन बातोका भी विचार हमे कर रखना चाहिए, जिनके विषयमे प्रस्ताव तो नही हो सकता, परन्तु जिनके पाबन्द रहे बिना शर्तोका पालन सम्भव नही है। जो व्यक्ति रेखा-गणितके सिद्धान्तको बिना समझे ही उसे रट डालता है वह अगर 'बारह' की जगह 'बारहवाँ' कह दे तो क्या आश्चर्य? जिसने रटा तो हो 'इसलिए' परन्तु कह जाये 'क्योकि' तो फिर उसकी क्या गत हो? जिस प्रकार उसकी रटाईकी पोल खुल जाती है उसी प्रकार जो व्यक्ति बिना समझे ही समितिकी शर्तोके पालन करनेका दावा करता है, वह दरवाजेसे वापस लौटे बिना नही रहनेका। क्योकि वह दरवाजेकी तरफ जाता तो है, पर उसके खोलनेकी तरकीब नही जानता।

यह लडाई ही धर्मकी है। इसे चाहे व्यवहार्य कहिए, चाहे आप अ-व्यवहार्य, राजनैतिक कहिए अथवा सासारिक, इसका कुछ भी नाम रख दीजिए पर इसका मूल धर्म है। धर्मकी खातिर, धर्मके नामपर, हम यह लडाई लड रहे है। अली-भाइयोने बिलकुल पक्की बात कही। उन्होने कहा है "राज्यके कानून और ईश्वरके कानून, दण्ड-सहिता और 'कुरान पाक'मे से किसीका चुनाव करना हो तो हम अपने ईश्वरको और अपने 'कुरान' पाकको ही पसन्द करेगे।" यह लडाई तो इस बातकी है कि मुसलमान, हिन्दू, पारसी, ईसाई आदि सब अपने-अपने धर्मको जाने और उसके अनुसार बरतें। सब धर्मके खातिर मरे। जो मरता है वह पार होता है, जो मारता है वह मरता है। अगर दूसरोकी हत्या करके कोई अपने धर्मका पालन कर सकता तो आज लाखो आदमियोको मुक्ति मिल गई होती।

इसलिए हमे तो सकटके समयमे केवल ईश्वरको ही याद करना है। जिसे इतना विश्वास नही है उसकी गतिमे अन्तत अवरोध उत्पन्न हुए बिना नही रह सकता। खोटा रुपया चाहे कितनी ही दूकानोपर क्यो न चक्कर लगा आये, उसकी कीमत

१ अहमदाबादमें २७, २८ और २९ अगस्त, १९२०को हुई गुजरात राजनीतिक परिषद्में। देखिए खण्ड १८।

जहाँकी-तहाँ रहेगी। सराफके यहाँसे तो वह लौटे बिना नही रह सकता। और इस बीच वह जिन-जिन हाथोसे होकर गुजरा है उन सबको भी उसके स्पर्शसे थोडी-बहुत खोट पहुँची होगी। इसी प्रकार हममें जो 'रगे सियार' होगे वे जरूर आखिरी मजिलमे पिछड जायेगे।

जिसकी इच्छा हो वह मैदानमे आये। जिनसे हो सके वे इसमे कूदे। मै सबको निमन्त्रण देता हूँ। परन्तु जो भूखे हो वही थालीपर बैठे। अगर दूसरे लोग बैठ जायेगे तो पछतायेगे। जिसे भूख नही है, उसे बढियासे-बढिया व्यजन भी अच्छे नही लगते। जो भूखा है उसे रूखी-सूखी बाजरेकी रोटी भी मीठी लगती है। इसी प्रकार जो लोग असहयोगका अर्थ समझ चुके है, जो धर्मका मर्म जान चुके है, वही इसमें टिक सकेगे। जो समझ चुका है उसके लिए सब बाते आसान है। जो समझ नही पाया है उसके लिए सब बाते कठिन है। अन्धेके लिए आईना किस कामका?

अवसर कठिन है। बिना विचारे कदम उठाकर पीछे पछतानेका मौका न आये। अगर कोई भी तहसील तैयार न हो तो गुजरात हुडी वापस कर सकता है, परन्तु उसपर सही कर चुकनेके बाद तो उसको सिकारे बिना गुजर ही नही। अभी गुजरात-के लिए मौका है। पर बीडा उठा लेनेके बाद फिर पीठ नही दिखानी है। अगर शेखीमे आकर बीडा उठा लिया हो और तब कुछ न बन पडे तो फिर हम जीवित भी मरेके समान हो जायेगे। आज तो गुजरातको जरा भी घबरानेका या सकोच करनेका कारण नही है।

अब यह विचार करना चाहिए कि हमारी योग्यता किन-किन बातोपर अव-लम्बित है—

(१) शान्ति
(२) स्वदेशी
(३) हिन्दू-मुस्लिम एकता
(४) छुआछूतको दूर करना।

ये सब बाते तो आसान है।

पर कानूनकी सविनय अवज्ञा? इससे भी हम लोग अनजान नही है। जेल तो उसके साथ है ही। उसे भोग लेगे। बडे-बडे लोग गये है और सब देख आये है तो फिर हम क्यो ऐसा नही कर सकेगे? अतएव यह तो कोई बडी बात नही रही।

पर—?

मार्शल लॉ जारी हो जाये तो? गुरखोकी फौज आये तो? गोरी-सेना चढ आये तो? और फिर सगीने भौके, गोलियोकी बौछार करे, पेटके बल रेगाये तो? ठीक है, यह भी हो जाये। आने दो सेनाको। देखें वह हमे पेटके बल कैसे चलाती है। मर मिटेगे, पर पेटके बल न रेगेगे। सगीने भौकना हो तो भौक दे। प्लेग, हैजे या किसी बीमारीसे मरनेके बदले सगीनोसे मरना अच्छा है। और अगर गोलियाँ भी दागे तो हम पीठ दिखानेवाले नही है। अब तो इतना बल आ गया है कि हम गिल्ली-डडेके खेलकी तरह, सीना तानकर गोलियोकी बौछारको झेल लेगे। गुरखोको

अपना भाई बना लेगे, और वे न बने तो भाईके हाथो मरने-जैसा सुख दूसरा क्या होगा? ऐसा कहते हुए तो जरूर बदनमे खून दौडने लगता है।

पर करते हुए?

मुझे तो विश्वास है कि दब्बू गुजरात इस बार जौहर कर दिखायेगा। परन्तु यह बात लिखते हुए कलम भारी पड जाती है। गुजरातने बन्दूकोके धडाके किस दिन सुने? गुजरातने लहूकी नदियाँ कब देखी? क्या गुजरातसे यह दृश्य देखा जा सकता है कि पटाखोकी तरह तडातड बन्दूके चल रही है और मिट्टीके घडोकी तरह लोगोके सिर धडाधड फूट रहे है?

अगर गुजरात औरोके सिरोको फूटते हुए देख सके तो वह 'गर्वी गुजरात' न रहे। अगर गुजरात अपने ही सिरोको टूटते हुए देखे तो अमरत्वको प्राप्त करे। इसके लिए किस तालीमकी जरूरत है?

विश्वासकी। यह विश्वास समितिके प्रस्तावोसे नही मिल सकता। ईश्वर दीन-दुखियोका वाली है, ईश्वर हिम्मतका देनेवाला है। "राम राखे तो कोई न चाखे।" यह देह उसीका दिया हुआ है। वह खुशीसे इसे ले जाये। देहको सुरक्षित रखनेसे कही वह चिरस्थायी हो सकता है? रुपयेकी तरह देहका भी विनियोग अच्छे काममे ही करना उचित है। और देह अर्पण करनेके लिए इस अत्याचारसे मुक्त होने जैसा सुअवसर दूसरा क्या होगा? इस तरह जो सच्चे दिलसे मानता है वह तो मुसकराते हुए छाती खोलकर बेधडक और बेफिक्र होकर गोलियोको गेंदकी तरह झेल लेता है।

इतना अटल विश्वास अगर हो तभी गुजरातकी किसी तहसीलको इस रणमे सामने आना चाहिए।

सब लोगोको इतना विश्वास न भी हो तो हर्ज नही। इतना विश्वास कमसे-कम कितने लोगोको होना चाहिए इसका अन्दाज मैं दे चुका हूँ। दूसरे लोगोको गोलियोका स्वागत करनेकी हिम्मत न हो तो भी हानि नही। पर उनमे इतनी दृढता तो अवश्य होनी चाहिए कि चाहे उनका सारा घर-बार क्यो न लूट लिया जाये, पर वे हरगिज टससे-मस नही होगे। भले ही घर-बार लूट लिये जाये। जीते रहेगे तो फिर उन्हीमे जायेगे और उनको लेनेका प्रयत्न करते हुए मर मिटेगे, यही स्वराज्य है।

अगर इतना बल किसी एक तहसीलमे भी न हो तो फिर हम स्वराज्यके योग्य किस तरह हो सकते है? परन्तु जिस दिन एक भी तहसील इस परीक्षामे उत्तीर्ण हो जायेगी, बस, उसी दिन स्वराज्यकी उपलब्धि हो जायेगी। क्योकि उसी दिन हिन्दुस्तान दिव्य शस्त्रके उपयोग करनेमे कुशल माना जायेगा।

पर इससे यह न समझना चाहिए कि हममे बहुत बल आ गया है। यह तो आत्माका स्वभाव ही है। बोअर लोगोकी स्त्रियोने ऐसी बहादुरी दिखाई है। लाखो अग्रेज ऐसी वीरताका परिचय दे चुके है, और तुर्क स्त्री-पुरुष तो आज भी उसको प्रकट कर रहे है।

परन्तु भेद है। वे तो मारते भी है और मरते भी है। लेकिन हम जानते है कि अमरता तो मरनेमे ही है। मारनेका काम छोडकर मरनेका ही काम सीखनेमे क्या कोई कठिनाई है? मरना सीखनेके लिए तो हिम्मतकी जरूरत है। और विश्वास

रखनेवालेमे वह निमिप-मात्रमे आ जाती है। मारना सीखनेके लिए शरीरकी जरूरत है, वन्दूक चलानेके मुहावरेकी जरूरत है। ऐसे हजारो ढकोसले जाननेके वाद कही मरना सीखनेकी नौवत आती है और फिर भी अन्तको "खूनी" लोगोमे ही गिनती होती है।

पर कोई हिन्दू भाई कहेगे कि ये वाते तो क्षत्रियत्व की है। गुजरातसे क्षत्रित्व-का क्या वास्ता? हम तो एक व्यापार-मात्र करना जानते है। गुजरात चाहे भले ही ऐसा हो, परन्तु हिन्दुत्व ऐसा नही। चारो वर्णोमें चारो गुण अवश्य होने चाहिए। हाँ, यह सच है कि हरएकमें अपना-अपना गुण विशेप रूपसे होता है, परन्तु अगर दूसरे गुण उसमे विलकुल न हो तो वह नपुसक हे। जो माता अपने वच्चेके लिए मरना जानती है वह क्षत्राणी है, और जो पति अपनी पत्नीके लिए प्राण देता है, वह भी क्षत्रिय है। परन्तु इन सवका कर्त्तव्य जगत्की रक्षा करना नही हे, अतएव हम उन्हे क्षत्रियके रूपमे नही पहचानते।

इस समय तो जगतकी — हिन्दुस्तानकी — रक्षा करना हरएकका धर्म है, क्योकि वह धर्म आज किसीका नही रहा है — और न किसीका दिखाई ही देता है।

यह तो हिन्दुओंकी वात हुई। गुजरातके मुसलमान, पारसी, आदि क्या करे? हिन्दुस्तान उनका भी हे, गुजरात उनका भी हे। उन्हे भी हिन्दुस्तानको गुलामीसे छुडाना है। और वे भी केवल मरकर ही ऐसा कर सकते है।

अतएव क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, पारसी, ईसाई, और क्या यहूदी — जो अपनेको हिन्दुस्तानी मानते है उन सवको मरनेका मन्त्र सीखना है और उसकी साधना करना है। इस पाठको तो केवल वही पढ सकता है और वही वरत सकता है जो एकमात्र ईश्वरमे भरोसा रखता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १३-११-१९२१

१८५. पत्र : महादेव देसाईको

साबरमती

मगलवार [१५ नवम्बर, १९२१]

चि० महादेव,

विना रोये तो माँ भी दूध नही देती, आवाज लगाये विना वेर भी नही विकते। माँ विचारी क्या जाने कि वालकको क्या चाहिए और वेरवालीके टोकरेकी दशा तो वही जाने। इसलिए तुमने माँगा और लिया, इसमे शरमानेकी क्या वात हे?

तुम्हारे भजन मिले है। उन्हे पढ गया हूँ। मुमकिन है वीमारीमे काव्यशक्ति अधिक वढती हो लेकिन क्या उसका प्रयोग करनेसे स्वस्थ होनेमे अधिक समय नही लगेगा? अगर इस काव्यशक्तिको सगृहीत कर रखा जाये तथा स्वस्थ होनेके बाद भी वह प्रकट हो तो वह और भी सराहनीय होगी।

मनुष्य बीमारीके अवसरको अन्तर्नाद सुननेका अवसर मानकर इस समयका उपयोग अपना ही निरीक्षण करनेमे करे तो उससे मनुष्यकी शक्ति बढती है।

तुम्हारी तबीयत अच्छी है, इसकी खबर मुझे मोतीलालजीने तार द्वारा दी है। ईश्वर तुम्हे अपने व्रतोका पालन करनेके लिए सम्पूर्ण बल दे।

तुम दोनो सुखी रहो और सेवा करो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४१४) की फोटो-नकलसे।

१८६. पत्र : ए० एस० फ्रीमैटलको[1]

[१५ नवम्बर, १९२१ के पश्चात्]

प्रिय महोदय,

आपके इसी १५ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद। मै 'यग इडिया' मे पूरा पत्र-व्यवहार प्रकाशित कर रहा हूँ। सिर्फ वह पत्र छाँट दिया है जिसमे आपने यह पत्र-व्यवहार प्रकाशित करनेकी अनुमति दी है।

आपका विश्वस्त,

अग्रेजी पत्र (एस० एन० ७६६३) की फोटो-नकलसे।

१८७. भाषण : राजचन्द्र जयन्तीके अवसरपर, अहमदाबादमें

१६ नवम्बर, १९२१

भाइयो और बहनो,

इस अवसरपर मै आपको एक पुरानी बातका स्मरण दिलाना चाहता हूँ। आप कदाचित् उस प्रसगको भूल गये हो, लेकिन मैं नही भूला हूँ। मेरे विलायतसे लौटनेके बाद अहमदाबादमे इस जयन्तीको मनानेके लिए हम प्रेमाभाई हॉलमे इकट्ठे हुए थे। उस समय मैंने कहा था कि अगर हम शोर मचाते रहे तो जिसकी पूजा करनेके लिए हम इकट्ठे हुए है उसकी पूजा नही हो सकेगी, उलटे हम उसकी बदनामी करेगे। बादमे, बहुत मुश्किलसे लोग शान्त हुए थे। उसके बाद तो जमाना गुजर चुका। हमे भी अनेक मीठे-कडवे अनुभव हुए है। सभामे शान्ति बनाये रखनेका नियम हम कुछ हद-तक सीखे है। सभामे समयपर आये और आनेके बाद अपने स्थानको न छोडे, यह

१. मथुरा जिलेके कलेक्टर।

सभ्यताका एक अत्यन्त सरल नियम है। आजके विषयको ध्यानमें रखकर कहूँ तो यह नियम दयाधर्मका प्रथम पाठ है।

हमें स्वयं असुविधाको सह लेना चाहिए ताकि दूसरोंको सुविधा हो सके। जिस घड़ी जो इच्छा हो उसपर तुरन्त अमल कर देना, उसका दुनियापर क्या असर होगा, इसका विचार भी न करना — यह संयम नहीं है, यह तो स्वच्छन्दता है। यह देवोचित प्रवृत्ति नहीं बल्कि राक्षसी प्रवृत्ति है। अव्यवस्थाको ही व्यवस्था मानना राक्षसी प्रवृत्तिका ही लक्षण है। जहाँ शोरगुल ही हो रहा हो, किसीको किसीका कोई विचार न हो, किसीका कोई सम्मान न हो, वहाँ, यही कहना होगा कि राक्षसी प्रवृत्ति चल रही है। राक्षसी प्रवृत्तिका कोई ऐसा विशेष चिह्न नहीं बताया जा सकता जिसे देखकर हम तुरन्त पहचान लें कि यह राक्षसी प्रवृत्ति है। प्रत्येक प्रवृत्ति हमेशा मिश्रित होती है। जिन प्रवृत्तिसे ऐसा प्रकट होता हो कि लोगोंके हृदयमें ज्यादातर अशान्ति है, जिस प्रवृत्तिने अशान्तिकी आकृति खड़ी होती हो, उस प्रवृत्तिको राक्षसी प्रवृत्ति ही कहेंगे।

आजकल "राक्षसी" शब्दका उपयोग मैं सबसे ज्यादा करता हूँ। इस शब्दका प्रयोग करना मुझे अच्छा लगता है, सो बात नहीं। सारी दुनिया भले वैसा मान ले, लेकिन मेरी अपनी आत्मा गवाही देती है कि मेरे इस शब्दका प्रयोग करनेमें दयाके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। उसमें द्वेष नहीं है, रोष नहीं है। मैं वस्तुस्थितिको जिस तरह देख रहा हूँ उसी तरह उसका चित्रण कर रहा हूँ। उसमें मैं दयाधर्मका पालन कर रहा हूँ। दयाधर्मके चिन्तनके लिए आजके अवसरका दुगुना स्वागत किया जाना चाहिए।

जिस पुरुषके स्मरणार्थ हम यहाँ आये हैं उसके हम पुजारी हैं। मैं उसका पुजारी हूँ। टीकाकार किसी भी दिन पुजारी नहीं हो सकता। इसलिए जिनके मनमें टीकाका भाव है उनके लिए यह प्रसंग नहीं है। टीकाकार भी शंका-समाधानके लिए नम्र बनकर भले आये, लेकिन अगर उनका इरादा अपनी शंकाको पोषित करनेका हो तो सभ्यताका यह तकाजा है कि आज उनका यहाँ कोई काम नहीं है। जगत्में सबको स्वतन्त्रता होनी चाहिए। यह सच है कि टीकाकारको जगतमें स्थान होना चाहिए लेकिन भक्तके — पुजारीके — लिए भी ऐसा स्थान होना चाहिए जहाँ टीकाकार न हो और वह अपना कार्य निर्विघ्न सम्पन्न कर सके। इसलिए मैं यह माने लेता हूँ कि आज वही लोग यहाँ आये हैं जिनके मनमें कविश्रीके[1] प्रति प्रेमभाव है और जो उनके भक्त हैं। ऐसे श्रद्धालुओंको ही मैं कहना चाहता हूँ कि आजके प्रसंगका दूने उत्साहसे स्वागत किया जाना चाहिए।

जिनका पुण्य-स्मरण करनेके लिए हम यहाँ इकट्ठे हुए हैं वे दयाधर्मकी मूर्ति थे। उन्होंने दयाधर्मको जान लिया था और अपने जीवनमें उसका विकास किया था। इस समय हिन्दुस्तानमें हम जो काम कर रहे हैं उसमें भी दयाधर्म ही निहित है। यह काम हम रोषसे प्रेरित होकर नहीं कर रहे हैं। वस्तुस्थिति ऐसी आ पड़ी है कि हमें रोषके जबरदस्त कारण मिले हैं, हमें अत्यन्त आघात पहुँचा है। उस समय भी हमें

१ अर्थात् श्रीमद् राजचन्द्र।

इस वातका विचार रहा है कि आघात पहुँचानेवालेके साथ हम कैसा व्यवहार करे जिससे उसको आघात न पहुँचे वलिक हम कुछ-न-कुछ उसका भला ही करे। असहयोग-का मूल दयामे निहित है, रोषमे नही। कदाचित् हम स्वय भूलते हो यह सोचकर हम अपने विरोधीपर रोष नही करते। उससे हम स्वय दूर भागते है।

इस तरह भागनेका परिणाम अवश्य गम्भीर होता है। इसलिए जिन व्यक्तियो अथवा जिस सस्थासे हम असहयोग करते है उस सस्थाको चलानेवाले व्यक्तियोको आघात तो अवश्य पहुँचता है लेकिन दयाधर्मका अर्थ यह नही है कि आघात कभी किया ही न जाये। कविश्रीसे मैने ऐसा दयाधर्म नही सीखा है। हमारे अपने सत्कार्यसे, कर्त्तव्य-पालनसे दूसरोको दु ख होता हो तो उसे सहकर भी सत्कार्य करनेमे ही सच्चा दयाधर्म है।

मै अनेक बार कह चुका हूँ कि मैने वहुत सारे व्यक्तियोके जीवनसे वहुत-कुछ ग्रहण किया है। लेकिन सबसे अधिक अगर मैने किसीके जीवनसे ग्रहण किया है तो वह कविश्रीके जीवनसे ही किया है। दयाधर्म भी मैने उनके जीवनसे सीखा है। ऐसा एक भी कार्य नही हो सकता जिससे किसीको भी आघात न पहुँचता हो लेकिन यह आघात दयासे प्रेरित होना चाहिए। इस आघातकी दो शर्ते है.

(१) हम अमुक कार्य तभी कर सकते है जब हमे अपने प्रतिपक्षी व्यक्तिसे अधिक आघात पहुँचता हो।

(२) हमारा हेतु अत्यन्त शुभ होना चाहिए, उसमे अपने विरोधीका कल्याण भी हमारे मनमे होना चाहिए।

मान लीजिये कि मेरा लडका शराब पीता है, बीडी पीता है, व्यभिचारी है। वह मुझसे पैसा माँगता है। आजतक तो उसने माँगा और मैने दिया क्योकि मै एक अन्धा वाप था। मैने रायचन्दभाईके[१] प्रसगसे सीखा कि मुझे स्वय तो शराब-बीडी आदि नही ही पीनी चाहिए, व्यभिचार नही करना चाहिए लेकिन दूसरोको भी उसमे से उवार लेना चाहिए। इसलिए मेरा धर्म है कि मै अपने लडकेको पैसा न दूं, उसके हाथमे शरावका प्याला देखूं तो उसे छीन लूं। मुझे मालूम हो कि वह अमुक सन्दूकमे शराब रखता है तो मुझे वह सन्दूक जला डालना चाहिए, बोतल देखूँ तो मुझे उसे फोड डालना चाहिए। ऐसा करनेसे लडकेको तो जरूर आघात पहुँचेगा और वह मुझे क्रूर वाप मानेगा। दयाधर्मको समझनेवाला वाप, पुत्रको आघात पहुँचेगा, यह सोचकर नही डरता, पुत्रके श्रापसे वह घवराता नही है। इस अवसरपर दयाधर्म — परोपकार-धर्म ही यह वताता है कि उसके हाथमे से शरावकी वोतल छीन लेनी चाहिए। वलप्रयोगके द्वारा मै भले ही उससे वोतल न छीनूं लेकिन मुझे अगर मालूम हो कि घरमे अमुक स्थान-पर वह वोतल रखता है तो वहाँसे वोतल लेकर मै उसे फोड अवश्य डालूँगा।

रायचन्द भाईने दयाधर्मका वहुत ही सुन्दर मापदण्ड प्रस्तुत किया है। उनका कहना है कि हम सामान्य मामलोमे किसीको व्यर्थ नाराज न करे, दयाधर्मका नाम लेकर दूसरोको छोटी-छोटी वातमे टोकने न वैठ जाये, दयाधर्मके इस सामान्य नियमको अगर

१. गुजरातकी आम जनता श्रीमद् राजचन्द्रको इसी तरह पुकारती है।

हम समझ ले तो ऐसी अनेक बाते, जो हमारी समझमे पूरी तरह नही आती हम लोक-लज्जावश ही करने लग जाये। खादी किसलिए पहनी जाये यह बात मुझे समझमे न आये और मुझे झीनी मलमल अच्छी लगती हो तो भी जिस समाजमे मै रहता हूँ वहाँ सब खादी पहनते है और खादी पहननेमे कुछ बुरा नही है, कोई अधर्म नही है ऐसा समझकर मै वही करूँगा जो उस समाजमे होता है। यह सरल नियम मुझे रायचन्दभाईने ही सिखाया।

बम्बईमे हम एक बार दयाधर्मकी चर्चा कर रहे थे। चमडेका उपयोग करना चाहिए अथवा नही, इसका विचार हो रहा था। हम दोनोने अन्तमे स्वीकार किया कि चमडेके विना तो नही चल सकता। खेती-जैसे उद्योग तो चलने ही चाहिए, लेकिन अगर कुछ नही तो चमडा माथेपर तो कदापि नही पहनना चाहिए। मै तो स्वभावसे ही जरा मजाक-पसन्द ठहरा। मैंने पूछा कि आपकी सिरकी टोपीमे क्या है ? वे स्वय तो आत्मचिन्तनमे लीन रहनेवाले थे। स्वय क्या पहनते है, क्या ओढते है इसका विचार करने नही बैठते थे। टोपीमे चमडा लगा हुआ है, यह उन्होने देखा नही था। लेकिन जैसे ही मैने उन्हे बताया वैसे ही उन्होने टोपीमे से चमडा तोडकर फेक दिया। मुझे ऐसा नही लगता, मेरी दलील इतनी सशक्त थी कि वह तुरन्त उनके मनमे उतर गई, उन्होने तो दलील ही नही की। उन्होने यही सोचा होगा कि इसका हेतु अच्छा है, मेरे प्रति पूज्यभाव रखता है, उसके साथ बहस किसलिए करूँ ? उन्होने तो तुरन्त चमडेको उतार फेका और मै समझता हूँ कि बादमे उन्होने कभी चमडा नही पहना। लेकिन अगर कोई मुझसे आज आकर यह बात कहे कि उसने उन्हे बादमे भी चमडे-की टोपी पहनते हुए देखा हे तो भी मुझे उससे आघात नही पहुँचेगा। अगर मै फिर उनके पास पहुँचूं तो वे उसे फिर उतार फेकेगे। वह इसीलिए रह गया होगा कि उसकी ओर उनका ध्यान ही नही था।

इसीमे महापुरुषका महत्व है। इससे यह पता चलता है कि उनमे मिथ्याभिमान नही होता। वे बालकसे भी सीख लेनेको तैयार रहते है। बडे लोग छोटी बातोमे मतभेद नही रखते है। छोटी-छोटी बातोमे जो दयाधर्मका बहाना करके मतभेद रखता है, और आत्माकी आवाजकी बात करता है उससे मै कहता हूँ कि उसे आत्माकी आवाज सुनाई नही पडती या फिर पशुकी तरह उसकी आत्मा सुप्त हे। अधिकतर मनुष्योकी आत्मा सुप्तावस्थामे ही रहती हे। मनुष्यमे और पशुमे इतना ही भेद है कि मनुष्यकी आत्मा सम्पूर्ण रूपसे जाग्रत हो सकती है। अगर हम निन्यानवे अवसरोपर दुनियाके साथ चलते हो तो सौवे अवसरपर उससे कह सकते है कि वह सही नही है। जन्मके साथ ही जो दुनियाके साथ वैर बाँध लेता है वह प्रेम कैसे कर सकता है ?

अधिकाश अवसरोपर तो हमे ऐसा ही व्यवहार करना चाहिए मानो हम जड हो। शुद्ध जड और चैतन्यमे भेद नहीके बराबर है। सारा जगत जड रूपमे ही दिखाई देता है, आत्मा तो कभी-कभी ही चमकती है। अलौकिक पुरुषका व्यवहार ऐसा ही होता है और मैने देखा है कि ऐसा ही व्यवहार रायचन्दभाईका था।

वे अगर आज जीवित होते तो इस समय जो प्रवृत्ति चल रही है उसको उन्होने जरूर आशीर्वाद दिया होता। इस वस्तुमे धर्म है। जिसकी आत्मामे दयाधर्म वास

करता है वह इसमे पडे विना रह ही नही सकता। इसमे से राजनैतिक, आर्थिक आदि विपयो के परिणाम तो सुन्दर आयेगे ही, लेकिन सवसे सुन्दर परिणाम तो यह होगा कि इस प्रवृत्तिसे वहुत सारे लोगोका उद्धार हो जायेगा, वहुत सारे मोक्षके योग्य वन जायेगे। अगर सालके अन्तमे हमे ऐसा अनुभव न हो तो मेरे लिए जीना दूभर हो जायेगा।

वे वहुत वार कहा करते थे कि अगर कोई मुझे चारो ओरसे वरछी भोके तो मै उसे सह सकता हूँ, लेकिन जगतमे जो झूठ, पाखण्ड और अत्याचार चल रहा है, धर्मके नामपर जो अधर्म किया जा रहा हे उसकी वरछी सहन नही होती। अत्याचारोपर उन्हे रोप आता था और मैने उन्हे अनेक वार क्रोधित होते हुए देखा है। उनके लिए सारा जगत् उनका सगा था। अपने भाई अथवा वहनको मरते देख हमे जो क्लेश होता है उतना ही क्लेश उन्हे जगतमे दु ख और मृत्युको देखकर होता था। अगर कोई कहता कि लोग अपने पापके कारण दु ख पा रहे है, तो वे कहते लेकिन उन्हे पाप करना क्यो पडा? जव पुण्यको सरल मार्ग नही मिलता और वडी-वडी खाइयो और पर्वतोको लॉघना पडता है तव उसे हम कलिकाल कहते है। उस समय जगतमे पुण्य वहुत नही दिखाई देता, स्थान-स्थानपर पाप ही दिखाई देता है। पुण्यके नामपर पाप चल पडता है। वैसी स्थितिमे अगर हम दयाधर्मका पालन करना चाहे तो हमारी आत्मा क्लेशसे विकल होनी ही चाहिए। हमे ऐसा लगेगा कि ऐसी स्थितिमे जीवित रहनेकी अपेक्षा तो देह जर्जरित हो जाये अथवा उसका अवसान हो जाये, यही ज्यादा अच्छा है।

रायचन्दभाईका इतनी कम उम्रमे देहावसान हो गया, इसका कारण भी मुझे यही लगता है। यह सच है कि वे वीमार थे, लेकिन जगतके तापका जो कष्ट उन्हे था वह उनके लिए असह्य था। अगर उन्हे केवल शारीरिक कष्ट ही होता तो वे जरूर उसपर विजय पा लेते। लेकिन उन्हे लगा कि ऐसे विषम कालमे आत्मदर्शन कैसे हो सकता है? यह उनके दयाधर्मका सूचक है।

दयाधर्मकी परिसीमा खटमलको न मारनेमे नही है। यह सच है कि खटमलको नही मारना चाहिए, लेकिन खटमलोकी उत्पत्तिको भी रोकना चाहिए। खटमलोको मारनेमे जितनी क्रूरता है उससे कही अधिक क्रूरता उनको उत्पन्न होने देनेमे है।

हम सव खटमलोको पैदा करते है, श्रावक भी ऐसा ही करते है और मै वैष्णव भी ऐसा करता हूँ। हम शौचादिके नियमोसे परिचित ही नही है। परिग्रहको वढाते समय हम कोई विचार नही करते और अनावश्यक वस्तुओके परिग्रहसे खटमल नही होगे तो और क्या होगा?

खटमल, मच्छर आदि क्षुद्र जन्तुओको न मारनेमे दयाधर्म है। लेकिन इससे वढकर दयाधर्म तो यह है कि हम मनुष्यकी हत्या न करे। मनुष्यको मारे अथवा खटमलको — यह प्रश्न उपस्थित होनेपर हम क्या करेगे? मनुष्यको मारकर मच्छरको उवारनेका प्रसग आना भी सम्भव है। मै तो इन दोनो तरहके प्रसगोसे छुटकारा पानेका मार्ग वताता हूँ और वह हे दयाधर्म।

कविश्रीका कहना था कि "जैन-धर्म अगर श्रावकोके हाथमे न गया होता तो इसके तत्त्वोको देखकर जगत चकित हो उठता। वनिये तो जैन-धर्मके तत्त्वोको वदनाम

कर रहे है। वे तो चीटियोको 'चून' डालते है। आलू उनके मुँहमे चला जाये तो उन्हे दु ख होता है। ऐसी छोटी-छोटी वातोमे वे धर्मका पालन करते है। उनकी यह सावधानी उन्हे मुबारक हो लेकिन जो यह मानते है कि इनमे ही जैन-धर्मकी परिसीमा है, वे लोग धर्मकी निम्नसे निम्नतर श्रेणीमे आते है। इतना-सा धर्म तो पतितका धर्म है, यह पुण्यवान्‌का धर्म नही है।" इसलिए अनेक श्रावक कहते है कि राजचन्द्रको धर्मका भान न था, वे दम्भी थे, अहकारी थे। मै स्वय तो यह जानता हूँ कि उनमे दम्भ अथवा अहकारका नाम भी न था।

यद्यपि खटमल आदि जन्तुओको नष्ट नही करना चाहिए तथापि उनको न मारने तक ही दयाधर्म सीमित नही है। उन्हे न मारना धर्मकी पहली सीढी-भर है। किसी समय लोगोमे ऐसी मान्यता रही होगी कि मनुष्यको वचानेकी खातिर किसी भी जन्तुकी हत्या करना पाप नही है, उस समय कोई साधु खडा हुआ होगा और उसने जन्तुओ-की रक्षापर अधिक जोर दिया होगा। इस साधुने कहा होगा कि 'मूर्ख! इस क्षणभगुर देहकी खातिर जन्तुओका नाश न कर। वल्कि तेरे मनमे इस वातकी आतु-रता होनी चाहिए कि यह देह कल नष्ट होता हो तो आज ही नष्ट हो जाये।" और इसीमे अहिंसाका जन्म हुआ होगा। लेकिन जो खटमलको तो नही मारता परन्तु अपनी स्त्री और पुत्रपर हाथ उठाता है वह व्यक्ति न तो जैन है, न हिन्दू है और न वैष्णव ही है, वह तो शून्य है। हम कविश्रीके जन्मोत्सवके मगल अवसरपर दयाधर्मके सकुचित अर्थको छोड उसके व्यापक अर्थको ग्रहण करे। एक भी जीवको दु ख देना, उसे दुश्मन मानना, पाप है। जो यह चाहते है कि जनरल डायरको फाँसी दी जाये, सर माइकेल ओ'डायरको सुलगती हुई भट्टीमे झोक दिया जाये — वह श्रावक नही है, वैष्णव भी नही और न हिन्दू ही। वह कुछ भी नही है। अहिंसाका रहस्य यही है कि क्रोधका शमन करे, आत्माकी मलिनताको दूर करे। जनरल डायरकी परीक्षा लेनेवाला मै कौन हूँ? मै जानता हूँ कि मै रोषसे भरा हुआ हूँ। मै मन-ही-मन कितने ही लोगो-की हत्या करता होऊँगा, तव तो जनरल डायरका विचार करनेवाला मै कौन? इसलिए मैने निश्चय किया है कि अगर कोई मुझे तलवारसे मारे तो भी मुझे उसको नही मारना है। यह दयाधर्म है, यही असहयोग आन्दोलनका रहस्य है।

लेकिन जब मै बोलता हूँ तव मै दयाधर्म शब्दका प्रयोग नही करता। आज रायचन्दभाईकी जयन्ती होनेके कारण मै दयाधर्मकी वात करता हूँ। मै जानता हूँ कि इस आन्दोलनका परिणाम तो यही है और यह परिणाम होगा तो लोग अपने-आप ही इस वातको जान लेगे।

सर्पको मारनेमें पाप है लेकिन उसकी अपेक्षा मनुष्य शरीरधारी सर्प अथवा वाघको मारनेमें अधिक पाप है। पशु-वाघको तो हम भयवश होकर मारते है, क्रोधसे प्रेरित होकर नही। यदि वास्तवमे कोई धर्मराज है और वह हमारे पाप-पुण्यका निर्णय करता है तो वह वाघको मारनेवाले व्यक्तिपर दया खाकर कदाचित् उसे माफ कर देगा। क्योकि उसमें तो उस व्यक्तिने अपने पशुधर्मका ही पालन किया, एक पशुने दूसरे पशुको मार डाला। लेकिन मनुष्यकी हत्या करनेमे तो क्रोधका भाव होता है, अभिमान होता है, दम्भ होता है। धर्मराज कहेगा "अरे मूर्ख! तूने अमुक

मनुष्यकी हत्या की, तो उसके पीछे तो जाने कितनी खटपट, कितना पाखण्ड रहा होगा।"

श्रावकोसे और दूसरे सब लोगोसे मै कहता हूँ कि जीवदयाका अर्थ केवल कीडे-मकौडे आदि सूक्ष्म जन्तुओको न मारना ही नही है। यह सच है कि उन्हे नही मारना चाहिए लेकिन मनुष्य योनिके किसी भी जीवको धोखा नही देना चाहिए। तिसपर भी अधिकाश व्यापारी इसके सिवा और क्या करते है? यदि कोई श्रावक मुझे अपनी बहियाँ दिखाये तो मै उसे बता दूँगा कि वह श्रावक नही है। जिस कपडेका हम व्यापार करते है वह कैसे तैयार होता है? उसके उत्पादनमे कही कोई पापकर्म तो नही है, उसको जो माँडी दी जाती है उसमे चरबी तो नही होती, इन बातोपर व्यापारियोको विचार करना चाहिए। दुगुना दाम लेना उन्हे हराम होना चाहिए। यह श्रावकोका धर्म नही है। अपनी मजदूरीके खयालसे चीजोके दाममे वे एक पैसा अथवा दो पैसे चढाएँ, यह तो ठीक है, लेकिन इतनी सब खटपट किसलिए? इतना पाखण्ड क्यो? ब्याज तो इतना अधिक लिया जाता है कि देनेवाला बिलकुल मर जाता है। जहाँ जाता हूँ वहाँ श्रावक और वैष्णव दोनो ही प्रकारके बनियोके खिलाफ शिकायते मिलती है। अनेक गोरे मुझपर व्यग कसते है कि आपके लोग ही कितना ज्यादा ब्याज लेते है।

हमे नीच बनिया न रहकर शुद्ध क्षत्रिय बन जाना चाहिए। वैश्य-धर्म अर्थात् मजूरी बिलकुल नही, हल नही, शौर्य नही, विवेक नही — सो बात नही। सच्चा वैश्य तो अपनी उदारतामे शौर्य — क्षत्रियत्वका प्रदर्शन करता है, व्यापारमे विवेक बरतता है, वह शराब नही बेचेगा, मछली नही बेचेगा, सिर्फ शुद्ध खादी ही बेचेगा और वह विवेकका विकास करके ब्राह्मण-धर्मका भी पालन करेगा। अन्य सब लोग हमारे लिए मजदूरी करे और हम पडे-पडे खाते रहे तो हम पतित बनते है। यज्ञके रूपमे भी हमे प्रतिदिन थोडी-बहुत मजदूरी कर लेनी चाहिए।

बनियेका मुख्य धर्म तो व्यापार ही रहे लेकिन उसमे अन्य धर्मोका समावेश भी अवश्य होना चाहिए। अपनी स्त्रीकी रक्षाके लिए अगर मुझे काबुली अथवा पठान रखना पडे तो उसकी अपेक्षा मुझे — मेरे हिन्दू होनेके बावजूद — अपनी स्त्रीसे तलाक ले लेना चाहिए। लेकिन आज अधिकाश बनिये क्या करते है? उन्होने सिपाही, भैया-लोग और पठान रख छोडे है। वे भले ही इन्हे भी रखे इस बातसे मुझे कोई ईर्षा नही, लेकिन अगर आपमे अपनी स्त्री और बच्चोकी रक्षा करनेकी ताकत नही है, तो आप जाकर कुटियामे बैठ जाये और वहाँ रहकर अपने धर्मको सुशोभित करे। उस हालतमे, दुखियोकी रक्षाके लिए दौडनेके धर्मसे बनिया मुक्त हो जायेगा, जब जहाँ ऐसे दु खी दिखाई देंगे वहाँ क्षत्रिय उनकी रक्षा करनेके लिए पहुँच जायेगे।

रायचन्दभाईके जीवनसे मुझे सबसे बडी बात यह दिखाई दी कि बनियेको बनिया ही बने रहना चाहिए। आज तो बनिये, बनिये नही रहे। सच्चा बनिया बननेके लिए बडा पण्डित बनने अथवा बडी-बडी पोथियाँ पढनेकी जरूरत नही है। जो मलिन न हो, यम-नियमका पालन करनेवाला हो, असत्य और अधर्मसे दूर रहनेवाला हो, जिसके हृदयको काम-वासना छू तक न गई हो, जिसके हृदयमे दयाधर्मका वास हो वह

"केवली"[1] बन सकेगा, उसके लिए केवल ज्ञान अप्राप्य नही होगा। इसलिए मै आपसे यह नही कहता कि आप सस्कृत पढे, या भगवती-सूत्रका पाठ करे। आप पढे अथवा न पढे — इस विषयमे मै तटस्थ हूँ।

वढवाणमे जब जयन्ती मनाई गई थी तब "राजचन्द्र-पुस्तकालय" खोलनेका निश्चय किया गया था। पुस्तकालयकी इमारत बनवानेकी बात भी हुई थी। उसके सम्बन्धमे मैने बहुत ज्यादा उत्साह प्रकट नही किया था। मैने कहा था इमारत हो लेकिन अगर उसमे आत्मा न हो तो इमारत तो केवल ईटकी बनी हुई है। आज तीन वर्षके बाद हमारा वह सकल्प सफल हो रहा है। सब अनुकूल सयोग इकट्ठे हो गये है। उसके लिए हमे मुनि जिनविजयजी-जैसे योग्य पुरुषकी सेवाएँ प्राप्त हुई है। पुरातत्व मन्दिरका पुस्तकालय भी उसीमे जोड दिया गया है। जो कोई वहाँ जानेकी तकलीफ उठायेगा उसे मुक्तभावसे उसका लाभ मिलेगा।

आपने जो-कुछ सुना है उसे अपने साथ ले जाना और अपने जीवनमे उतारना। जितना आपको टीका योग्य जान पडे उतना तुरन्त त्याग देना लेकिन जो लेने योग्य जान पडा हो, कर्णप्रिय लगा हो, हृदयको अच्छा लगा हो उसका तो आज ही से अमल करना शुरू कर देना।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-११-१९२१

१८८. सन्देश: बम्बईकी सार्वजनिक सभाके लिए

१७ नवम्बर, १९२१ के पूर्व

मुझे दुख है कि मै स्वय इस बार बम्बईमे एक दिनके लिए भी नही आ सकता।[2] लेकिन मै यहाँ जिस कार्यमे रुका हुआ हूँ वह कार्य बम्बईमे किये जानेवाले सुन्दर कार्यसे भी अधिक महत्वका है, ऐसा जानकर आप मुझे क्षमा करेगे, इस बातकी मुझे पूरी-पूरी उम्मीद है।

अगर आप बम्बईको सुशोभित करना चाहते है तो

१ राजकुमारके स्वागतार्थ होनेवाले किसी भी समारोहमे एक बच्चातक न जाये।
२ तमाशोको मुफ्तमे देखनेका आयोजन किया गया हो तो भी उसमे छोटे-बडे कोई न जाये, तमाशा देखनेके लिए और बहुत सारे दिन पडे हुए है।
३ कोई स्त्री या पुरुष १७ तारीखको बिना किसी कामके घरसे बाहर निकले ही नही।

१ जिसे विशुद्ध ज्ञान प्राप्त हो गया है।

२ लेकिन बादमें उन्हें आनेके लिए राजी कर लिया गया था। देखिए "भाषण बम्बईकी सार्वजनिक सभामें", १७-११-१९२१।

४ जहाँ राजकुमारके लिए कोई समारोह हो रहा हो, उस दिशामे कोई भूलचूकसे, कौतूहलवश भी, न जाये।

५ घरमे बैठकर सूत काते और अगर न आता हो तो आठ घटे शान्त चित्त किसीके पास बैठकर सीख ले।

६ प्रत्येक व्यक्ति अधिक नही तो थोडा समय भगवत् भजन अथवा वन्दगीमे अवश्य व्यतीत करे। शहरके लोग ऐसा न समझे कि ईश्वर तो कही है ही नही अथवा है तो भी राष्ट्रके कार्यमे उसका नाम अथवा मदद माँगनेकी कोई जरूरत नही है।

७ राजकुमारके उतरनेका जो समय निर्धारित किया गया हो उसी समय एल्फिन्स्टन रोडके पासवाले मैदानमे आप लोग विदेशी कपडोकी होली करे, होली करनेके लिए जहाँ-जहाँसे विदेशी कपडे इकट्ठे न किये गये हो वहाँ-वहाँसे उन्हे इकट्ठा किया जाये।

८ चलती गाडी आदिसे किसीको बलपूर्वक न उतारे।

९ मजदूर या नौकरियाँ करनेवाले दूसरे लोग छुट्टीके विना काम बन्द न करे।

१० प्रत्येक कार्यमे मनुष्यको अपनी इच्छाके अनुसार व्यवहार करनेकी छूट हो, तभी हममे स्वराज्यकी योग्यता आयेगी।

याद रखिए

राजकुमारके स्वागतार्थ किये जानेवाले समारोहोमे हम भाग नही लेनेवाले है, उसका कारण हमे उनसे कोई व्यक्तिगत द्वेषभाव है सो नही, उन्होने हमे कोई नुकसान नही पहुँचाया है। उसका कारण यह है कि नौकरशाही उनका जो दुरुपयोग कर रही है उससे हमे अलग रहना है। अतएव एक ओर जहाँ हमारा कर्त्तव्य स्वागत-सम्मानका वहिष्कार करना है वहाँ दूसरी ओर हमारा यह भी कर्त्तव्य है कि हम अपनेको जोखिममे डालकर भी युवराजके शरीरकी रक्षा करे, हमे ऐसा कुछ नही करना है जिससे उनका किंचित भी अपमान होता हो।

मोहनदास करमचन्द गाधी

[गुजरातीसे]

गुजराती, २०–११–१९२१

१८९. पत्र: हाजी सिद्दीक खत्रीको

[१७ नवम्बर, १९२१ के पूर्व][1]

भाईश्री अहमद हाजी सिद्दीक खत्री,

इसके साथ प्रस्तावका मसविदा भेज रहा हूँ। इसमे कुछ फेरफार करना हो तो करना। 'यग इडिया'मे मैने जो सुझाव दिया है उसे पढ जाना। उसके अनुसार सब स्थानोपर किसी प्रतिष्ठित मौलानासे हस्ताक्षर करवा कर पर्चे बाँटे जायेगे तो ठीक होगा। १७ तारीखको समस्त हिन्दुस्तानमे सम्पूर्ण शान्ति रहे, इसीपर हमारी विजयका आधार होगा। आजसे १७ तारीखतक अगर खूब काम किया जायेगा तो मुझे दृढ विश्वास है कि १७ तारीखको सब कामकाज बन्द रहेगा और शान्ति रहेगी। इस सम्बन्धमें हम पूरी तरह सत्यका ही सहारा लेगे तभी सफल होगे। यह जरूरी है कि नेता लोग एकान्तमे और सार्वजनिक रूपसे एक ही बात करे।

हाजी सिद्दीक खत्री
हिलाल मजिल
८५, अब्दुल रहमान स्ट्रीट

मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ६१६२)की फोटो-नकलसे।

१९०. टिप्पणियाँ

मेरी असगतियाँ

एक पत्र-लेखकने अपने पत्रमे कुछ युक्ति-सगत प्रश्न इस तीखे ढगसे रखे है

"जब जुलू लोग अपनी आजादीके लिए उनपर अन्यायसे अपना कब्जा कर लेनेवाले ब्रिटिश लोगोके खिलाफ उठ खडे हुए थे तब आपने उनके उस कथित "बलवे"को दबानेके लिए अग्रेजोको मदद दी थी। क्या विदेशी शासनके जुएको उतार फेंकनेका प्रयत्न करना बलवा है? जोन ऑफ आर्क[2] बलवाई थी? क्या जॉर्ज वाशिंगटन[3] बागी थे? क्या डि वलेरा[4] भी बागी है? आप कहेगे कि जुलू लोगोंने मारकाटका अवलम्बन लिया था। तब मै पूछता हूँ कि उनका उद्देश्य

१ पत्र १७ नवम्बरको युवराजके बम्बई पहुँचनेपर किये जानेवाले प्रदर्शनोंके सम्बन्धमें लिखा गया था।

२ १४१२-१४३१, फ्रासीसी बालिका, जिसकी प्रेरणासे फ्रासीसियोने अंग्रेजोंको ओरलीन्ससे बाहर खदेड़ा।

३ १७३२-९९, अमरीकाके प्रथम राष्ट्रपति।

४ एमॉन डि० वलेरा, आयरलैंडके प्रधान-मन्त्री १९३८-४८, १९५१-५४, १९५६ से राष्ट्रपति।

बुरा था या साधन? उनके साधन भले ही बुरे रहे हो, परन्तु उनका उद्देश्य तो हरगिज बुरा नही था। अतः आप कृपा करके इस जटिल प्रश्नको समझाइए। इस पिछले महायुद्धमे भी, जिसमें जर्मन और आस्ट्रियाई वीर संसारकी संयुक्त शक्तियोसे ऐसी वीरताके साथ लड़ रहे थे, आपने अंग्रेजी फौजके लिए रगरूट भर्ती किये थे। किसलिए? जिन राष्ट्रोने भारतका कुछ भी अहित नहीं किया था उनसे लड़नेके लिए? जब कभी दो जातियोंमें युद्ध छिडता है तब, किसीके पक्षमें या विपक्षमें निर्णय करनेके पहले, उन दोनो जातियोकी बातें सुननी पडती हैं। पिछले महायुद्धमें हमें सिर्फ एकतरफा बातें मालूम होती थीं और सो भी उस राष्ट्रकी मार्फत जिसकी ख्याति सच्चाई और ईमानदारीके लिए हरगिज नहीं है। आप हमेशासे ही सत्याग्रह और अहिंसाकी तरफदारी करते आये हैं। तब आपने लोगोको ऐसे युद्धमें शामिल होनेके लिए, जिसकी बुराई और अच्छाईका उन्हे पता नहीं था और ऐसी जातिको ऊपर उठानेके लिए, जो कीचड़मे बुरी तरह लोट रही है, क्यो उत्साहित किया? शायद आप कहेगे कि अंग्रेजी नौकरशाहीपर आपका भरोसा था। किन्तु क्या ऐसे विदेशी लोगोपर कोई भरोसा रख सकता है जिनके व्यवहार और वचनोमे सदा इतना साफ विरोध रहा है? और आपके सदृश उच्च गुण-सम्पन्न व्यक्ति तो ऐसा कर ही नहीं सकता। अतः आप कृपया इस दूसरे जटिल प्रश्नका भी उत्तर दीजिए।

अब एक दूसरी बातपर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। आप अहिंसाके प्रतिपादक हैं। वर्तमान परिस्थितिमे तो हमे कड़ाईसे अहिंसाका पालन करना चाहिए। परन्तु जब हिन्दुस्तान आजाद हो जायेगा, तब किसी दूसरे राष्ट्रका हमपर हमला होनेपर भी, क्या हम हथियारसे हाथ खींच लेगे और उनसे बिलकुल काम न लेगे? जब रेलवे, तार और जहाजोके द्वारा हमारे देशकी पैदावारका दूसरे देशोको अधिकाधिक भेजा जाना बन्द हो जायेगा, क्या तब भी आप इन वस्तुओका बहिष्कार ही करेगे?"

मैंने अपने बारेमे असगतिके कई इल्जाम पढे और सुने है। परन्तु मैं उनका जवाब नही देता, क्योकि उनका असर मेरे सिवा किसी दूसरेपर नही होता। तथापि इन सज्जनने जो प्रश्न किये है वे आमतौरपर मार्केके और उत्तर देनेके योग्य है। हाँ, वे मेरे लिए नये तो कदापि नही है। परन्तु मुझे याद नही आता कि मैंने 'यंग इंडिया'मे कभी उनका जवाब दिया है।

मैंने महायुद्धमें सहायता क्यों दी?

सिर्फ जुलू जातिके बलवेके[1] समय ही मैंने अपनी सेवाएँ अर्पण नही की, बल्कि उससे पहले, बोअर युद्धके[2] समय भी, मैंने अपनी सेवाएँ दी थी। और मैंने सिर्फ गत

१ देखिए खण्ड ५।
२ देखिए खण्ड ३ और ४।

महायुद्धके समय ही रगरूट भरती नही किये थे[1] वल्कि १९१४ मे भी लन्दनमें एक घायल शुश्रूषा दलका सगठन किया था।[2] इसलिए ऐसा करके यदि मैंने पाप किये हो तो मेरा यह पापोका घडा अव पूरा भर चुका है। सरकारको सहायता देनेका कोई अवसर मैंने कभी नही गँवाया। उन तमाम कठिन प्रसगोपर दो सवाल मेरे मनमे उपस्थित हुआ करते थे। साम्राज्यके नागरिककी हैसियतसे — क्योकि मै पहले अपनेको इस साम्राज्यका नागरिक मानता था — मेरा क्या कर्त्तव्य है, और अहिंसा-धर्मके कट्टर अनुगामीकी हैसियतसे मेरा क्या कर्त्तव्य है?

अव मैं समझ गया कि उस समय जो मैं अपनेको इस साम्राज्यका नागरिक समझता था, वह मेरी गलती थी। किन्तु उन चारो मौकोपर मेरा यह सच्चा विश्वास था कि यद्यपि मेरा देश अभी कितना ही निर्योग्यताओसे पीडित है तथापि वह स्वतन्त्रताके मार्गपर वरावर आगे वढ रहा है। और मेरा विश्वास यह भी था कि लोगोकी दृष्टिसे सरकार विलकुल ही वुरी नही है तथा अग्रेज शासक सकुचित दृष्टिवाले और जड होनेपर भी सच्चे हैं। मेरे विचार ऐसे थे, अतएव उस समय मैंने वैसे ही काम किये जैसे एक साधारण अग्रेज उस परिस्थितिमें करता। उस समय मुझे इतना ज्ञान और महत्व प्राप्त नही हुआ था कि मैं किसी कामको स्वतन्त्र रूपसे करता। उस समय व्रिटिश मत्रियोके निर्णयोपर अदालती अहमियतके साथ विचार या छानवीन करना मेरा काम नही था। वोअर युद्ध, जुलू वलवे या गत महायुद्धके समय मैंने व्रिटिश मन्त्रियोपर 'दुर्भाव'का लाछन कभी नही लगाया। मैंने यह कभी खयाल नही किया और न अव भी करता हूँ कि अग्रेज लोग खास तौरपर दूसरे लोगोसे ज्यादा वुरे हैं। मै पहले भी मानता था और अव भी मानता हूँ कि वे उतने ही महान उद्देश्य रख सकते हैं और कार्य कर सकते हैं और साथ ही उतनी गलतियाँ भी कर सकते हैं जितनी कि कोई भी दूसरा मानव समुदाय। इसलिए मै मानता था कि स्थानिक अथवा सामान्य आवश्यकताके समय इस साम्राज्यको अपनी क्षुद्र सेवाएँ अर्पण करके मैंने एक मनुष्य और साम्राज्यके नागरिककी हैसियतमे अपने कर्त्तव्यका पर्याप्त पालन किया है, और मै हरएक हिन्दुस्तानीसे यह उम्मीद करता हूँ कि वह भी स्वराज्य स्थापित होनेपर इसी तरह देशके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करेगा। अगर ऐसे हर खयाल आने लायक मौकेपर हममें से हरएक आदमी खुद अपनी मर्जीको ही अपना कानून मानेगा और इस देशकी भावी राष्ट्रीय ससदके प्रत्येक कार्यको सोनेके काटेमें तोलेगा तो मुझे अत्यन्त दुःख होगा। मैं तो अधिकाश मामलोमे अपना निर्णय राष्ट्रीय प्रतिनिधियोके हवाले कर दूँगा — हाँ, उन प्रतिनिधियोके चुनावमे अलवत्ता मैं खासतौरपर सावधान रहूँगा। मै समझता हूँ, दूसरे किसी तरीकेसे कोई भी प्रजासत्तात्मक सरकार एक दिन भी नही टिक सकेगी।

परन्तु अव तो मेरी दृष्टिमे सारी स्थिति ही वदल गई है। मै समझता हूँ अव मेरी आँखे खुल गई हैं। अनुभवोने मुझे होशियार वना दिया है। अव मै वर्तमान

१ देखिए खण्ड १४ और १५।

२ देखिए खण्ड १२।

शासन-प्रणालीको बिलकुल बुरा समझता हूँ और मानता हूँ कि इसको मिटाने या सुधारनेके लिए देशको खास तौरपर कोशिश करनेकी जरूरत है। अपना सुधार वह स्वय नही कर सकती। हॉ, अब भी मै यह जरूर मानता हूँ कि कितने ही अग्रेज पदाधिकारी सच्चे है। परन्तु इससे मुझे कोई मदद नही मिल सकती, क्योकि मै समझता हूँ कि वे भी मेरी तरह ही अन्धे हो गये है और भ्रममे पडे हुए है। इसलिए इस साम्राज्यको अपना कहनेमे या अपनेको इसका नागरिक कहनेमे मुझे जरा भी अभिमान नही मालूम होता। वल्कि, इसके विपरीत, मै तो अच्छी तरह देख रहा हूँ कि मै इस साम्राज्यमे एक अतिशूद्र अछूत हूँ। अत जिस तरह एक हिन्दू अतिशूद्र अछूतके लिए ईश्वरसे हिन्दू-धर्म या हिन्दू-समाजके मूलत पुनर्सगठन या सर्वनाशकी प्रार्थना करना सर्वथा न्याय है उसी तरह मेरे लिए परमात्मासे भी इस साम्राज्यके मूलत पुनर्सगठन या सर्वनाशकी प्रार्थना करनेके अतिरिक्त दूसरी गति नही है।

अव अहिसाके प्रश्नको लीजिए। यह और भी पेचीदा है। अहिसाका जो अर्थ मै समझता हूँ वह तो मुझे प्राय इन तमाम हलचलोसे, जिनमे आज मै लगा हूँ, अलहदा रहनेकी ही प्रेरणा देता है। इधर मेरी आत्मा तबतक सन्तुष्ट नही होती जवतक मै एक भी अत्याचारको या थोडेसे भी दु खको असहाय बनकर चुपचाप खडा-खडा देखता रहूँ। लेकिन मुझ-जैसे एक दुर्वल चित्त, अशक्त और दु खी प्राणीके लिए हरएक अन्यायको दूर करना या उन तमाम अत्याचारोके दोषसे, जिन्हे मै देखता हूँ, अपनेको मुक्त रखना मुमकिन नही है। मेरा आत्मभाव मुझे एक तरफ ले जाता है और देहभाव मुझे दूसरी तरफ खीचता है। हॉ, इन दोनो शक्तियोके प्रभावसे मनुष्य मुक्त हो सकता है, परन्तु यह मुक्ति उसे धीरे-धीरे और एकके बाद एक कष्टकर मजिलसे पार करके ही प्राप्त हो सकती है। मै यन्त्रवत् विना विचारे कर्म करना वन्द करके उस मुक्तिको नही पा सकता, वल्कि वह तो सारासार-विचारके साथ निष्काम रहकर कर्म करनेसे ही प्राप्त होगी। इस युद्धका यही निश्चित परिणाम है कि देहभाव निरन्तर क्षय होता चला जाये, जिससे आत्मा पूर्ण रूपसे मुक्त हो सके।

कुछ और बाते

फिर मै एक मामूली नागरिक था। मै अपने साथियोसे अधिक समझदार न था। मै तो अहिसाका माननेवाला था, परन्तु दूसरे लोग उसके तनिक भी कायल नही थे। सरकारको मदद देना उनका कर्त्तव्य था। उसका पालन वे नही करते थे क्योकि वे क्रोध और द्वेषके भावसे प्रेरित थे। वे अपने अज्ञान और दुर्वलताके कारण मुँह मोड रहे थे। अत एक साथीके नाते उन्हे ठीक-ठीक मार्ग बताना मेरा कर्त्तव्य हो गया। मैने उनको उनका कर्त्तव्य बताया, उन्हे अहिसाका सिद्धान्त समझाया और उन्हे जो ठीक लगे वही करना उनकी मर्जीपर छोड दिया। अहिसाकी दृष्टिसे मुझे अपने कार्योका जरा भी अफसोस नही, क्योकि स्वराज्यमे भी मै उन लोगोको जो हथियार बाँधना और अपने देशकी रक्षा करना चाहेगे ऐसा करनेकी सलाह देनेमे जरा भी न हिचकूँगा।

भविष्यमें क्या होगा ?

इससे एक दूसरा प्रश्न मेरे सामने उपस्थित होता है। मेरे स्वप्नगत स्वराज्यमें तो शस्त्रास्त्रकी कतई जरूरत नही है। लेकिन मै यह उम्मीद नही करता हूँ कि यह स्वप्न, इस वर्तमान प्रयत्नके फलस्वरूप, सोलहो आने सच्चा हो जायेगा। इसका पहला कारण तो यह है कि यह आन्दोलन इस ध्येयको तात्कालिक लक्ष्य बनाकर नही किया जा रहा है और दूसरा यह कि मै अपनेको इतना आगे बढा हुआ नही समझता कि राष्ट्रके सामने ऐसा विस्तृत व्यवहार-क्रम उपस्थित कर सकूँ और वह उसके अनुसार उसकी तैयारी कर सके। मै खुद भी अभी इतना विकार-ग्रस्त हूँ और मुझमे मनुष्य-स्वभावकी इतनी कमजोरियाँ है, जिससे मुझे ऐसी प्रेरणाका या क्षमताका अनुभव नही होता। अपने लिए मै अगर किसी बातका दावा कर सकता हूँ तो सिर्फ इसी बातका कि मै अपनी कमजोरियोको दूर करनेका निरन्तर प्रयत्न कर रहा हूँ। मुझे विश्वास है कि मैंने अपनी इन्द्रियोको दमन करने और वशमे करनेकी क्षमता बहुत-कुछ प्राप्त कर ली है, परन्तु अभी मै इस लायक नही हुआ हूँ कि मुझसे कोई पाप बन न पडे —— अर्थात् मै इन्द्रियोसे प्रभावित न हो सकूँ। हाँ, मै इस बातको मानता हूँ कि प्रत्येक मनुष्य ऐसी मगलमय अवर्णनीय पापरहित अवस्थाको प्राप्त कर सकता है और उसमे, अपने अन्त करणमे, किसी अन्यकी नही वरन केवल एक परमात्माकी उपस्थिति अनुभव कर सकता है। और मुझे मजूर करना चाहिए कि अभी वह अवस्था मुझसे बहुत दूर है। अत मेरे लिए देशको पूर्ण अहिंसाके व्यवहारका कोई मार्ग बताना अभी सम्भव नही है।

रेल और तार

जिस महान सिद्धान्तका विवेचन मैंने ऊपर किया है उसके मुकाबलेमे यह रेल और तारका प्रश्न बहुत ही नगण्य है। मै खुद अपने लिए इन सुविधा-साधनोसे परहेज नही कर रहा हूँ। मै निश्चय ही न तो राष्ट्रसे इनका उपयोग छोड देनेकी उम्मीद करता हूँ और न स्वराज्य हो जानेपर उनका व्यवहार बन्द होनेकी अपेक्षा करता हूँ। लेकिन हाँ, स्वराज्यान्तर्गत राष्ट्रसे मै यह जरूर चाहता हूँ कि वह इस बातपर विश्वास न करे कि इन सुविधा-साधनोसे अवश्य ही हमारी नैतिक उन्नति होती है या ये हमारी भौतिक प्रगतिके लिए अनिवार्य है। मै राष्ट्रको यह सलाह देता हूँ कि वह इन साधनोका उपयोग कम मात्रामे करे और हिन्दुस्तानके साढे सात लाख गाँवोमे तार और रेलका जाल बिछा देनेके लिए बुरी तरह लालायित न हो। राष्ट्र जब आजादीकी दमकसे दमकने लगेगा तब जान जायेगा कि हमारे शासकोको उनकी आवश्यकता हमारे अज्ञान-अन्धकारको दूर करनेकी बनिस्बत हमे गुलाम बनानेके लिए ही अधिक थी। प्रगति तो लगडी होती है। वह कूदती-फुदकती ही आ सकती है। आप उसे तार या रेलके द्वारा नही भेज सकते।

पतित बहनें

पाठक यह जानकर खुश होगे कि बारीसालमे 'पतित बहनो' के सुधारका काम उत्साहसे शुरू कर दिया गया है। डाक्टर राय लिखते है कि हम कितनी ही बहनोके

घरोमे जा चुके है और अब कताई शुरू करा रहे है। बाबू अश्विनीकुमार दत्तके स्कूलके निरीक्षक जगदीश बाबूने उन युवक कार्यकर्त्ताओकी रहनुमाई करनेका वचन दिया है, जिन्होने इस जवाबदेहीकी सेवाका भार ग्रहण किया है। मुझे आशा है कि जिन लोगोने इस परम आवश्यक कार्यको अपने हाथमे लिया है वे इसे अधूरा ही न छोड देगे। उन्हे बार-बारकी निराशाओका सामना करनेके लिए तैयार रहना चाहिए और धीरे-धीरे प्रगति होनेकी उम्मीद करनी चाहिए। सिर्फ ऐसे ही कार्यमे, जिसमे न तो किसी तरहकी उत्तेजनाकी गुजाइश है और न शीघ्र ही प्रसिद्धि मिलनेकी सम्भावना है, सच्चे सेवा-प्रेमकी परीक्षा होती है। मै बारीसालके इस उदाहरणको इस लायक मानता हूँ कि दूसरे शहरोके लोग भी उसका अनुसरण करे। यह आत्मशुद्धि-का काम तो स्वराज्यके बाद भी जारी रहेगा। हॉ, हरएक आदमी इसे नही कर सकता। इसलिए सिर्फ वे लोग ही इस वढते हुए पापाचारको मिटानेके लिए आगे बढे जिनका दिल इ१के लिए उत्सुक हो और जिनकी आत्मा काफी पवित्र हो। इस आन्दो-लनकी स्वभावत दो शाखाएँ है --- एक, पतित बहनोका सुधार करना और दूसरी, पुरुषोको इस पतनकारी पापसे विरत करना। इसी पापके कारण पुरुष अपनी इन बहनोको कामुक दृष्टिसे देखते और उन्हे उसका शिकार बनानेके लिए ललचाते है। दोनो शाखाओमे काम करनेके लिए एकसे ही गुणोकी जरूरत है। दोनो दिशाओमे साथ-ही-साथ काम होना चाहिए। तभी वह सफल हो सकता है।

कारावासका प्रभाव

डा० रायने अपने जिस पत्रमे बारीसालकी पतित बहनोमे किये जानेवाले कार्यका वर्णन किया है, उसीमे वे लिखते है

> **पूर्वी बगालमें हिन्दू-मुस्लिम एकता अब काफी मजबूत है और लोगोमें विदेशी वस्त्रोका बहिष्कार प्राय. पूर्णतापर पहुँच चुका है। पूर्वी बगाल इन दोनो बातोके लिए पीर बादशाह मियॉकी गिरफ्तारीका ऋणी है।**

हर दिशासे इसी तरहके प्रमाण मिल रहे है। किन्तु हमे निश्चिन्त होकर नही बैठना है। अभी भी करनेके लिए बहुत काम बाकी है। एकता और बहिष्कार ये दोनो अभी कोमल पौधे-जैसे है। इनकी रक्षा आवश्यक है और उन्हे सावधानीसे सीचना जरूरी है। हिन्दू-मुस्लिम एकता हरेकको मजबूत करनी चाहिए और दोनोको बिना किसी दिखावेके एक-दूसरेकी चुपचाप सेवा करनेके लिए सदा तैयार रहना चाहिए। विदेशी वस्त्रोका बहिष्कार केवल इसी तरह जारी रखा जा सकता है कि सभी लोग हाथसे कताई करने लगे, और कुटिया-कुटियामे चरखेका सद्‌भाव-सचारी सगीत गूँजने लगे। गाँवोके हर मण्डलमे एक ऐसा विशेषज्ञ होना चाहिए जो सूतको ज्यादा मजबूत, इकसार और महीन बनानेपर जोर दे। भारतमे काफी जुलाहे है। यदि हम उन्हे हाथका कता अच्छा सूत दे सके तो उससे मिलके सूत जैसी ही बुनाई हो सकती है। अकेले इस कार्यसे मिलके बने भारतीय कपडेकी कीमते इतनी नीचे आ जायेगी जितनी और किसी कार्यसे नही आ सकती।

एक रहस्यवादी द्वारा कताईकी प्रशंसा

एक मित्रने मुझे हाथ-कताईपर जॉर्ज मैकडॉनल्डकी 'द प्रिंस एण्ड कर्डी' पुस्तकसे यह उद्धरण भेजा है

"वह झिझक ही रहा था कि तभी उसे चरखेकी घू-घू सुनाई दी। इस आवाजको वह तुरन्त पहचान गया। क्योंकि बहुत पहले उसने अपनी माँके चरखेसे ही बहुत-कुछ सीखा था, और वह अब भी उससे बहुत कुछ सीखता था। पहले-पहल उसने चरखेसे ही छन्द बनाना, गीत गाना और यह सोचना सीखा था कि उसके अन्त:करणमें सब-कुछ ठीक है या नहीं? अथवा उसे कमसे-कम इन सब बातोंमें उससे सहायता अवश्य मिली थी। इसलिए, चरखेके संगीतको सुनते ही पहचान जाना इसके लिए कोई आश्चर्यकी बात नहीं थी।"

चटगाँवका उपद्रव[1]

मेरे तारके[2] उत्तरमें प्रसन्न बाबूने विस्तृत विवरण भेजा है। इसे यहाँ दे रहा हूँ

यद्यपि लोगोंने पूर्णतया अहिंसाका पालन किया था, और गोरखोंने ही उनपर हमला करके मारपीट की थी, फिर भी नौकरशाहीने गिरफ्तमें आनेसे बचनेका एक शानदार तरीका निकाला है। उसने धारा १४४के अधीन नेताओं, स्वयंसेवकों और बाहरके लोगोंके नाम अन्धाधुन्ध नोटिस जारी किये हैं। इनमें बताया गया है कि वे न तो सार्वजनिक रास्तोंपर जुलूस निकालें और न ही उनमें शामिल हों, और इसका कारण यह बताया है कि २० तारीखके जुलूसमें जो लोग शामिल थे उन्होंने पुलिसपर पत्थर बरसाये थे और अन्य हिंसात्मक कार्रवाइयाँ की थीं। इस तरहके नोटिस इसी २७ तारीखको जारी किये गये। उनमें यह कहा गया है कि मजिस्ट्रेटको जुलूसके बारेमें और पुलिसको लोगोंके प्रहार करनेपर जो चोटें आईं उनके बारेमें पुलिस सुपरिटेंडेंटकी रिपोर्टसे २५ तारीखको ही जानकारी मिली थी।

कल भारतीय दण्ड संहिताकी धारा १४४ और धारा १४७के अधीन खिलाफत कमेटीके अध्यक्ष मौलवी मुहम्मद काजिम अली, श्रीयुत कालीशंकर चक्रवर्ती, सम्पादक 'ज्योति' (स्थानीय बंगाली दैनिक) तथा प्रेमानन्द दत्त, सुखेन्दु-विकास सेन और मुहम्मद सिराजुल हक नामक स्वयंसेवकोंके खिलाफ एक झूठा मुकदमा भी किसी तरह बनाकर दायर कर दिया गया है। ये पाँचों अभियुक्त गिरफ्तार कर लिये गये हैं, जिनमें से दूसरे और पाँचवें अभियुक्त जमानत देकर बाहर आ गए हैं और बाकीने हवालातमें ही रहना पसन्द किया है। प्रेमानन्द दत्त २० तारीखको ढाकामें थे और फिर भी उनका नाम अभियुक्तोंमें दर्ज है।

१ देखिए "एक और गोरखा हमला", ३-११-१९२१।

२ उपलब्ध नहीं है।

लोग शान्तिसे कांग्रेसके कार्यक्रमपर अमल कर रहे है। सडकोपर शायद ही कोई आदमी विलायती कपड़े पहने नजर आता हो। हम आपको यह विश्वास दिला सकते है कि यहाँपर बहिष्कार आन्दोलन सफल रहा है।

आन्दोलनका गला घोटनेका यह सुचिन्तित प्रयास निश्चय ही विफल होना है। उपद्रवकी पिछली सूचनामे जिस गैर-सरकारी आयोगका जिक्र था उसने बहुत ही फुर्तीसे काम किया है और अपनी रिपोर्ट प्रकाशित कर दी है। उससे स्थानीय कांग्रेसके मन्त्री द्वारा दिये गये तथ्योकी पुष्टि होती है। रिपोर्टमे कहा गया है कि कमसे-कम १०४ लोगोको चोटे लगी और घाव आये। उनमे एक नौ सालका लडका और कमसे-कम एक तो औरत भी थी। वह बेचारी यह चिल्लाती रही, मै तो स्त्री हूँ, परन्तु उससे कोई लाभ नही हुआ। कुछ लोगोको गहरे घाव आये है।

बहादुर विद्यार्थी

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका जब अधिवेशन हो रहा था, तभी विशाखापट्टमसे मेडिकल कालेजके बहादुर विद्यार्थियोका नीचे दिया हुआ दिलचस्प तार मिला। पाठकोको यह स्मरण होगा कि इन विद्यार्थियोको खादी पहननेकी धृष्ठताके कारण कालेजसे निकाल दिया गया है

खादी टोपी पहननेके कारण मेडिकल कालेजसे निकाले गये, विशाखापट्टमके हम उनतालीस छात्र कांग्रेस समितिके इस महत्वपूर्ण अधिवेशनके अवसरपर जिसमें ६ दिसम्बरतक स्वराज्यके प्रश्नका फैसला अवश्य कर दिया जायेगा, अपना सादर प्रणाम निवेदन करते है। भारतमाताकी पुकारपर, हमने सघर्षके दौरान पढाई बन्द रखने और राष्ट्रीय सेवामें भाग लेनेका सकल्प किया है। इसीलिए हमने रामडाण्डु सेवा समितिके रूपमें अपना सगठन बना लिया है और हम घर-घर जाकर स्वदेशीका प्रचार कर रहे हैं। धनके लिए हम अभीतक अपने ऊपर ही निर्भर रहे हैं, आपको और कांग्रेस समितिको स्वराज्यके ध्येयके प्रति अपनी निष्ठाका विश्वास दिलाते है और विनम्रतापूर्वक अपनी सेवाएँ अर्पित करते हैं। हम भावी सघर्षमें कठिनाइयाँ झेलनेके लिए तैयार हैं। आपकी आज्ञाओ और सहायताकी हमें प्रतीक्षा है जो हमें हमारे प्रधान, सुन्दरराव या बैरिस्टर प्रकाशमके द्वारा भेजी जा सकती है।

मै हर विद्यार्थीका ध्यान इस तारकी ओर आकर्षित करना चाहता हूँ। इन नवयुवकोने खादी टोपी पहनकर और आत्मसम्मानके लिए बहादुरीके साथ कष्ट उठाकर अपने स्वाभिमानी होनेका तथा अपना समय राष्ट्रकी सेवामे लगाकर देशप्रेमका परिचय दिया है।[1] यह देश दासताकी जीर्णव्याधिसे पीडित है। जो लोग इस व्याधिकी वास्तविक

१ देखिए "टिप्पणियाँ", २४-११-१९२१ का उप-शीर्षक "चिकित्सा-शास्त्रके छात्रोंके बारेमें कुछ और।"

औषधि खोजने और उसे प्रयुक्त करनेमें अपनी शक्ति लगायेंगे, वे ही सच्चे सर्जन और डाक्टर बन जायेंगे और जब यह व्यापक व्याधि दूर हो जायेगी तो दूसरी बहुत-सी व्याधियाँ बिना किसी उपचारके ही गायब हो जायेंगी। उसके पश्चात् जो व्याधियाँ शेष रह जायेंगी उनके इलाजके लिए देश पुरुष और महिला चिकित्सक तैयार करनेकी ज्यादा अच्छी स्थितिमें होगा।

देशी रियासतें

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने कांग्रेसकी परराष्ट्र सम्बन्धी नीति निश्चित कर दी है। अतः हमारी देशी-रियासत सम्बन्धी नीतिको निश्चित करनेकी माँग भी रखी गई। यह स्वाभाविक ही था। नागपुरके अधिवेशनमें इस विषयकी स्थूल रूपरेखा बनाई गई थी — अर्थात् यह बात तय पाई गई थी कि इन रियासतोंके भीतरी मामलोंमें हस्तक्षेप न किया जाये। देशी राज्य खुद भी इससे ज्यादा अच्छी या ज्यादा स्पष्ट बातकी अपेक्षा नहीं कर सकते थे। और अ० भा० कांग्रेस कमेटी तो सिर्फ उस प्रस्तावकी सीमाके अन्दर-ही-अन्दर अपनी नीति निश्चित कर सकती है। अ० भा० कांग्रेस कमेटीके कार्यकर्त्ताओंने बिलकुल उस प्रस्तावके अनुसार कार्य किया है। वे असहयोगका सन्देश देशी-राज्योंमें नहीं ले गये हैं। हाँ, उसके चिरस्थायी, आत्मशुद्धिकारी या आर्थिक भाग इसके अपवाद हैं, और वे बातें तो असहयोगके अलावा भी हितकर ही साबित होंगी। वे क्या हैं — शराबखोरी छुड़ाना, स्वदेशीका इस्तेमाल करना, हिन्दू-मुस्लिम एकताको बढ़ाना, अहिंसाका अवलम्बन लेना और छुआछूतको मिटाना। अ० भा० कांग्रेस कमेटी तो इन राज्योंके प्रति जबतक वहाँकी प्रजाके साथ अच्छा सलूक किया जाता है, सद्भावना ही रख सकती है। और उसके साथ दुर्व्यवहार किये जानेपर भी अ० भा० कांग्रेस कमेटी लोकमतके सिवा किसी दूसरे बल या दबावका प्रयोग नहीं कर सकती और न करेगी। इसलिए, जब आवश्यकता होती है, राष्ट्रीय दलके पत्र किसी राज्यकी प्रजाके दुख-दर्दकी पुकारपर कड़ी आलोचना करनेमें नहीं हिचकिचाते। एक मिसाल लीजिए। सेठ जमनालालजी और उनके कुछ साथी बीकानेर राज्यमें गये थे। वहाँ वे महज स्वदेशी-प्रचारका उद्योग करना चाहते थे। परन्तु राज्यकी ओरसे उनके साथ नादानीका और मनमाना बुरा बरताव किया गया। उसपर पत्रोंमें इसकी बहुत तीखी आलोचना की जाती रही है। यह ठीक है। जो राज्य प्रगतिशील हैं वे अ० भा० कांग्रेस कमेटीसे हर तरहके प्रोत्साहनकी और जो प्रतिक्रियावादी हैं वे अपनी कार्य-प्रणालियों और कार्य-साधनोंकी कड़ीसे-कड़ी नुक्ताचीनीकी आशा रख सकते हैं। इसके सिवा अ० भा० कांग्रेस कमेटी इन देशी राज्योंकी इस अपमानजनक हालतमें उनके साथ हमदर्दी रखनेके सिवा और क्या कर सकती है? साम्राज्य शक्तिने अपनी आर्थिक लूट-खसोटकी बाजीमें उन्हें अपना मोहरा बना रखा है। समय-समयपर जो नाजायज और दाव-पेंच भरा दबाव उनपर डाला जाता है, उसको रोकनेकी उनमें बहुत ही कम जुर्रत है। अतएव उन्हें यह जानना चाहिए कि जन-शक्तिकी बढ़तीका अर्थ है मेरे बताये हुए उस अपमानजनक प्रभावमें कमी।

समुद्र पारसे

कराचीके मुकदमोकी समुद्र-पारके देशोमे भी कितनी सराहना की गई है, यह ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय सघके अध्यक्ष, श्री अस्वातके अभी-अभी मिले इस तारसे मालूम होगा.

अली-बन्धुओ, डा० किचलू और मातृभूमिके निमित्त जेल जानेवाले अन्य लोगोके परिवारोको सारी बिरादरीकी हार्दिक बधाइयाँ। ईश्वरसे प्रार्थना है कि आन्दोलन सफल हो।

हमे अपने भारतसे बाहर रहनेवाले देशवासियोकी ओरसे इस तरहके जो अनेक तार या पत्र प्राप्त हुए है मैंने यहाँ उनमे से केवल एक तार ही छापा है।

अमेरिकामे बसे हुए हमारे देशवासी भी देशके इस कार्यमे सक्रिय सहायता दे रहे है। हाल ही मे न्यूयार्कसे दो तार प्राप्त हुए है। उनमे से आखिरमे मिले तारको मै यहाँ देता हूँ

एक हजार अमेरिकियोंकी खुले मैदानमें की गई सभाका अभिनन्दन स्वीकार करे। हम सविनय अवज्ञा आन्दोलनकी सफलताकी कामना करते हैं।

सुदूर पश्चिममे रहनेवाले सभी युवक छात्रो व अन्य लोगोसे मै दो शब्द कहना चाहता हूँ। वे देशकी सबसे अधिक सेवा इस प्रकार कर सकते है कि वे इस आन्दोलनकी व्याख्या उसके यथार्थ रूपमे और पूर्वके अर्थोमे करे, वे इसकी पाश्चात्य मिसाले खोजने और इसे पाश्चात्य रग देनेकी कोशिश न करे। मेरा यह विश्वास है कि इसके वर्तमान रूपकी कोई मिसाल नही है। इसकी कल्पना प्राच्य बल्कि उससे भी अधिक भारतीय है ओर वह भारतकी स्थितियोमे विशेष रूपसे उपयुक्त है। अभी यह कुछ कहा नही जा सकता कि जब इसकी जडे इतनी गहरी पहुँच जायेगी कि अपनी शाखाएँ पश्चिममे फैला सके तब आधुनिक दौडमे लगा पश्चिम इसको किस रूपमे अपनायेगा। अभी तो यह अपनी शैशवावस्थामे है और रूपरगमे प्राय पाश्चात्य दिखता है। दुर्भाग्यसे यह स्वीकार करना पडता है कि अभीतक इसका रूप बहुतोको केवल विनाशात्मक दिखता है और वे उसे इसी रूपमे ग्रहण करते है। यद्यपि इसका यह विनाशात्मक रूप नितान्त आवश्यक है, फिर भी इसका स्थायी और सर्वश्रेष्ठ भाग तो रचनात्मक ही है। मै इस तथ्यसे अभिज्ञ हूँ और मुझे इससे बहुत दुःख होता है कि बहुतसे लोगोको यह असहयोग आन्दोलन केवल हिंसाकी तैयारी-मात्र लगता है, जबकि अहिसा इसका केवल अभिन्न अग ही नही है बल्कि एकमात्र पोषक अग हे। यह स्वय-निर्माणका सबसे बडा भाग है। साथ ही अहिंसा इसको एक धार्मिक आन्दोलनका रूप दे देती है और मनुष्यको केवल ईश्वरपर आश्रित बना देती है। अहिसा द्वारा असहयोगी दृढतासे अपने मार्गपर डटा रहता है और सभी अवस्थाओमे धीर गतिसे आगे बढता है। अहिंसा द्वारा असहयोगी अपने सिरजनहारके सामने नग्न रूपमे आ जाता है और दिव्य सहायता प्राप्त कर लेता है। वह उसके सम्मुख एक हाथमे 'बाइबिल,' 'कुरान' या 'गीता' लेकर और दूसरेमे बन्दूक लेकर उपस्थित नही हो सकता। इसके विपरीत वह उसके महान धवल सिंहासनके

आगे हाथ जोडे एक विनम्र प्रार्थीके रूपमे उपस्थित होता है। दूसरे देशोमे रहनेवाले भारतीय युवकोको इस आन्दोलनके मूल अगको पहले समझना चाहिए और उसके बाद ही पश्चिमके सामने इसकी व्याख्या करनेकी कोशिश करनी चाहिए। वे देखेगे कि इसी प्रकार समझदारीसे दी गई सहायतासे, जो परिणाम अबतक निकले है उनसे कही अच्छे परिणाम निकलेगे।

काग्रेस अधिवेशनकी नई विशेषताएँ

आशा है कि आगामी काग्रेस अधिवेशनकी, कुछ नई विशेषताएँ होगी। इसकी एक विशेषता यह होगी कि इसमे प्रख्यात व्यक्ति चाहे उनकी राजनीतिक मान्यता कुछ भी हो, अपने-अपने विशिष्ट विषयोपर भाषण देगे। इसकी दूसरी विशेषता होगी एक सगीत सम्मेलन जिसमे समस्त भारतके सगीतकार भाग लेनेके लिए आमन्त्रित किये गये है। गन्धर्व महाविद्यालयके सगीताचार्य श्री ना० मो० खरे उसका आयोजन कर रहे है। मुझे विश्वास है कि देशकी ओरसे इसे आम समर्थन मिलेगा। प्रान्तीय और जिला काग्रेस समितियोके मन्त्री इस आयोजनमे सहायता दे सकते है। हो सकता है कि कुछ कलाकारो-की निगाह काग्रेसकी सूचनाओपर न जाये। उच्च कोटिका भारतीय सगीत प्रोत्साहन न मिलनेके कारण ह्रासको प्राप्त हो रहा है। सीधे-सादे भारतीय वाद्ययन्त्र कितना आश्चर्यजनक प्रभाव उत्पन्न करते है, इसका हमे ज्ञान नही है। कारण चाहे कुछ भी रहा हो, परन्तु हम इस भ्रातिमे है कि जिस चीजपर बहुत खर्च नही आता या जो पश्चिमसे नही आई है उसमे कोई वास्तविक कला या विशेषता नही हो सकती। काग्रेसके मचसे सगीत-सम्मेलनके आयोजनका उद्देश्य यही है कि सर्वसाधारणके मनसे यह भ्रान्ति निकाल दी जाये। सगीत सम्मेलनके साथ भारतीय वाद्ययत्रोकी एक प्रदर्शनी भी होगी। मुझे आशा है कि भारतीय सगीतके प्रेमी श्री खरेसे शीघ्रातिशीघ्र पत्र-व्यवहार करेगे और उनके कार्यमे हाथ बँटायेगे। यह बतानेकी कोई आवश्यकता नही है कि काग्रेस अधिकारियोको उन्हीको आमत्रित करना चाहिए जो इस क्षेत्रमे प्रमुख स्थान रखते हो।

अमगलकारी प्रतिबन्ध

मेरा यह विश्वास है कि ईश्वर, हमारे द्वारा, व्यक्तियो और राष्ट्रोके निमित्त या विरुद्ध कार्य करता है, और मेरा यह विश्वास उतना ही निश्चित है जितना सूर्यके नियमित रूपसे एक निश्चित समयपर उदय होनेका विश्वास। इसलिए जब मै यह सुनता हूँ कि किसी खास स्कूलमे अछूतोके प्रवेशपर प्रतिबन्ध लगा है तो मै काँप जाता हूँ और यह जान लेता हूँ कि हम अभी स्वराज्यके योग्य नही है। मेरे सामने मद्रास अहातेसे आया एक पत्र है जिसमे यह शिकायत की गई है कि एक स्कूलके प्रधानाध्यापकने अपने छात्रोको एक प्रवेशार्थी पचम लडकेके प्रवेशके विरुद्ध भडका दिया है। मै आशा करता हूँ कि इस प्रकारका अचिन्तनीय पूर्वग्रह तेजीसे कम हो रहा है और इस तरहकी घटनाएँ विरल होती जा रही है। मुझे इसमे किसी भी प्रकारका सन्देह नही है कि हम यदि स्वराज्यसे अभी दूर लगते है तो इसका कारण हमारी अपनी कमजोरियाँ है और यह तथ्य है कि हमने अपने लिए खुद जो शर्ते रखी थी वे पूरी नही की है। उनमे सबसे बडी शर्त है, अपने देशवासियोके छठे भागके खिलाफ लगे इस

अमगलकारी प्रतिवन्धको दूर करना। काग्रेस कार्यकर्त्ताओको इसके खिलाफ एक जबर्दस्त आन्दोलन चलानेकी जरूरत महसूस करनी चाहिए। इससे उनके स्वदेशीके कार्यमे किसी तरहका विघ्न नही पड सकता, क्योकि स्वय स्वदेशीके गहन कार्यका प्रभाव हमारे दलित देशवासियोके लिए वहुत ही शक्तिशाली और हितकारी होता है। यदि चरखेका सन्देश हमारे देशके इन अत्यन्त नि सहाय भाइयोके घरोमे नही पहुँचेगा तो, भारत आत्म-निर्भर नही हो सकेगा। और यह सन्देश इनतक तवतक नही पहुँचाया जा सकेगा जवतक हम इन्हे अपने सगे भाई-वहनोकी तरह नही समझेगे, जिन्हे हमारे अधिकसे-अधिक सौजन्य और प्रेमकी आवश्यकता है।

डेरा इस्माइलखाँ

डेरा इस्माइलखाँकी जिला काग्रेस कमेटीके मत्रीने लिखा है कि सर्वश्री प्याराखाँ, देवीदास, निर्मलदास, किशनचन्द भाटिया, हाजी अहमद्दीन, अल्लावख्श और मुहम्मद रमजान द्वारा कराची प्रस्तावको दोहरानेके कारण उनसे जमानत दाखिल करनेको कहा गया था। चूँकि उन्होने जमानत देनेसे इनकार कर दिया था, इसलिए उन्हे दो-दो वर्षकी साधारण कारावासकी सजा दे दी गई। मन्त्रीने आगे लिखा है कि मुकदमा एक तमाशा था जो सिर्फ दो घटे चला। लाला प्याराखाँ अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके सदस्य है। वे वलूचिस्तानमे पन्द्रह साल सरकारी नौकरी कर चुके है। जलियवाला वागके हत्याकाडके वाद वे सरकारी नौकरी छोडकर काग्रेसमे शामिल हो गये थे और गिरफ्तारीके समय उसके स्थानीय मन्त्री थे। उन्होने पत्रमे लिखा है कि ये सजाये कराचीके मुकदमोके फैसलेसे पहले सुनाई गई है। किन्तु इससे भी आश्चर्यकी वात तो यह है कि जिन्होने यह प्रस्ताव वम्वईमे दुहराया और रहनुमाई की उन्हे तो छुआ भी नही गया, परन्तु जिन्होने वम्वई घोषणा-पत्रके हस्ताक्षरकर्त्ताओका अनुसरण किया उन्हे जेलमे वन्द कर दिया गया। मै डेरा इस्माइलखाँके इन अधिक सौभाग्यशाली लोगोको वधाई देता हूँ।

कुरान छीन ली गई

मीरपुर खासकी जिला खिलाफत कमेटीके मन्त्री लिखते है कि मौलवी अव्दुल करीम साहवसे, जिन्हे हाल ही मे सजा हुई है ओर जो इस समय हैदरावाद जेलमे कैद भुगत रहे है, 'कुरान' छीन ली गई है। मौलवी उतने प्रसिद्ध नही है, क्या इसीलिए उनसे 'कुरान' छीन ली गई है? क्योकि कराचीके प्रसिद्ध वन्दियोके साथ तो ऐसा व्यवहार किया नही गया है। इसी तरहके अविचारपूर्ण और अनावश्यक अत्याचारसे दुर्भावना पैदा होती है, जिसे रोकना कठिन हो जाता है। कायदेकी लडाई किसीको वुरी नहीं लगती, परन्तु कैदीसे उसकी धार्मिक पुस्तक ले लेना नीचताकी हद है।

पूर्वग्रह और धृष्ठता

तजौर जिलेसे एक मनुष्यने लिखा हे, "मै और मेरे भाई यद्यपि ब्राह्मण है, परन्तु हमने आलसी जीवन वितानेकी अपेक्षा कुछ काम करना ठीक समझा और 'हल चलाना शुरू कर दिया। इस तरह हम खेती करने लगे। यह वात हमारे गाँवके लोगोको वहुत वुरी लगी और उन्होने हमे विरादरीसे निकाल दिया। परन्तु हम अपने निश्चयपर दृढ

रहे। जब कुम्भकोणमके शकराचार्य जिलेमे घूमते हुए हमारे इलाकेमे पधारे तो हम भी उनको भेंट देने गये। परन्तु उन्होने हमारी भेंट स्वीकार नही की, क्योंकि हमने अपनी जीविकाके लिए श्रम करनेका पाप किया था। किन्तु मै श्री शकराचार्यके इस व्यवहारसे तनिक भी हतोत्साहित नही हुआ हूँ।" मै इन भाइयोको उनकी लोकसेवाकी भावनापर बधाई देता हूँ। एक अत्याचारी समाजसे निकाल दिया जाना वास्तवमे योग्यताका पुरस्कार है और उसका स्वागत किया जाना चाहिए। यह कहना कि ब्राह्मणको हल नही छूना चाहिए, वर्णाश्रम धर्मका मजाक है और 'भगवद्गीता' के अर्थका अनर्थ है। विभिन्न वर्णोकी जो मुख्य विशेषताएँ बताई गई है, वे निश्चय ही अन्य वर्णोके लिए निषिद्ध नही है। क्या वीरता केवल क्षत्रियका ही और सयम केवल ब्राह्मणका ही विशेषाधिकार है? क्या ब्राह्मणो, क्षत्रियो और शूद्रोको गो-रक्षा नही करनी चाहिए? जो व्यक्ति गौ के लिए मरनेको तैयार न हो, क्या वह हिन्दू रह सकता है? फिर भी यह बहुत ही अजीब बात है कि मद्रास अहातेसे आये एक पत्रमे गम्भीरतापूर्वक यह कहा गया है कि वैश्योके सिवाय अन्य किसीका गो-रक्षासे कोई सरोकार नही है। जब धृष्टताके साथ इतना अधिक अज्ञान भी हो तो सर्वश्रेष्ठ उपाय यही है कि मनुष्य तमाम खतरे उठाकर सुधारके मार्गपर चलता रहे और यह आशा रखे कि समय आनेपर उसकी सच्चाई सिद्ध हो जायेगी। यदि हम दृढता और प्रेमसे काम करे तो अन्तमे हम समस्त विरोधको निरस्त्र कर देगे। सुधारकोको न तो पश्चात्ताप करना चाहिए और न क्रुद्ध ही होना चाहिए।

थियेटरोमे खादी

एक पत्रमे सुझाव दिया गया है कि यदि बम्बई और अन्य स्थानोके सभी थिएटर अपनी वेशभूषाके लिए खादीका उपयोग करने लगे, तो इससे खादीका चलन बढ जायेगा। विचार निश्चय ही बहुत अच्छा है। परन्तु इसका लागू होना बहुत हदतक दर्शकोपर निर्भर करता है। यदि दर्शक खादीकी वेशभूषाके लिए आग्रह करने लगे तो थिएटरोके मालिक उसे प्रयोगमे लानेको बाध्य हो जायेगे। उनकी रुचि आम तौरपर वैसी ही होती है जैसी जनता बनाती है। थिएटरोमे खादीकी पोशाकोका उपयोग जारी करनेका सबसे अच्छा तरीका यही है कि नाटकोके दर्शक खादीकी पोशाकोकी माँग करने लगे। उन्हे इस बातपर भी नजर रखनी होगी कि कही चुपकेसे वहाँ नकली खादी न आ घुसे, क्योकि अन्य स्थानोकी अपेक्षा थिएटरोमे तथाकथित कला या रुचिके नामपर सत्यकी बलि दिये जानेकी अधिक सभावना रहती है। मै समझता हूँ कि दर्शक रगो और तडक-भडकपर जोर देगे। उधर, खादीमे रगोका हल्का और सुन्दर समन्वय तो पूर्णतया सम्भव है और उसमे कुछ सजावट भी लाई जा सकती है, परन्तु मोटी किस्ममे — और उसीको लोकप्रिय बनाना जरूरी है — विचित्र रगोका मेल करनेसे वह भद्दी ही लगेगी। इसलिए थिएटरोमे खादीको बडे पैमानेपर अपनानेका अर्थ है जनताकी रुचिमे क्रान्ति लाना और उसे फिर सादगी और स्वाभाविक सौन्दर्यकी ओर मोडना। हमारे आजके थिएटर अन्य देशोके थिएटरोकी तरह राष्ट्रीय नैतिकता या राष्ट्रीय रुचिकी कसौटी नही है, बल्कि वे विकृत रुचियो और राष्ट्रके अप्राकृतिक व अपरिपक्व विकासके फल है। यदि कोई साहसी व्यवस्थापक लोक-रुचिमे प्रगतिकारी

सुधारकी आवश्यकताको स्वीकार कर दृश्यपट और वेषभूषामे मौलिक परिवर्तन करे तो वह नाटक-प्रेमी जनताके धन्यवादका पात्र ही होगा।

अक्लमन्दीका एक सुझाव

खादीके आन्दोलनमे पूरा देश जिस तरहकी दिलचस्पी ले रहा है वह सचमुच उल्लेखनीय है। थियेटरोके जरिये खादीको लोकप्रिय बनानेका सुझाव पूनाके एक ग्रेजुएटने भेजा था। पजावके एक सज्जनने अपने पजावके अनुभवके आधारपर यह सुझाव दिया है। भारतमे सबसे ज्यादा सर्दी शायद पजावमे ही पडती है और वहाँ शरीरको गर्म रखनेका सबसे आम तरीका है रुई-भरे चार सूती कपडे पहनना और रुई-भरी रजाइयाँ ओढना। उनसे शरीरको ऊनी कपडो और ऊनी कम्बलोसे भी अधिक गर्मी मिलती है। लेकिन सूती कपडे कुछ समय बाद बेहद गन्दे हो जाते है। इसके लिए उसका सुझाव है कि इन कपडोको या इनके भीतरकी रुईको हर साल सर्दियोमे बदल दिया जाये। रजाइयाँ बहुत ही आसानीसे बदली जा सकती है। इसलिए उसका कहना यह है कि इनकी रुईको फिर धुन लेना चाहिए और खादी बनानेके लिए कात लेना चाहिए। पहले लिहाफ, यदि विलायती हो तो, स्वभावत नष्ट कर देने चाहिए। इनका जलाना उचित ठहरानेके लिए विनाशके गुण-दोषोपर विचार करनेकी जरूरत नही है, क्योकि इनमे से बहुतोपर वर्षोकी गन्दगी जमी होती है। लेकिन यदि लिहाफ खादीके बना लिये जाये तो वे रुई निकालकर गर्मियोमे भी इस्तेमाल किये जा सकते है और इस सुझावके अनुसार जब फिर सर्दी आये तब उनके लिए नई रुई खरीद ली जा सकती है। यह सुझाव एक मेहनती परिवारके लिए वाकई बहुत अच्छा और एक गरीब परिवारके लिए बहुत किफायतका सुझाव है, क्योकि इसमे कोई भी चीज बर्बाद नही जाती और सफाई रहती है। यदि गरीब लोग सिर्फ मामूली सिलाई सीख ले, जो कि जरूरी है, तो उन्हे बिना अधिक खर्चा किये ही कई सालतक अलग-अलग मौसमोके लायक गर्म या ठडे स्वास्थ्यप्रद कपडे मिल सकते है। यदि यह सारी व्यवस्था होशियारीसे की जाये तो पाठक देखेगे कि एक परिवारको हर साल थोडी रुई खरीदनेसे और ज्यादासे-ज्यादा अपने जुलाहेको बुनाई देनेसे, पहनने और ओढनेके कपडे मिल सकते है। उससे धुनाई, कताई और सिलाईका खर्च बच जाता है। ये काम बिना किसी कठिनाईके फुरसतके समयमें किये जा सकते है। इनसे मनोरजनके समयमें कोई कमी नही होगी, या जैसा कि स्वर्गीय लॉर्ड केल्विन अपने बारेमे कहा करते थे, कार्यके परिवर्तनसे मनोरजन प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन मै जितना किसी गुजरातीको जानता हूँ उतना ही पजाबी-को भी जानता हूँ। मुझे मालूम है कि कपडोकी अपनी जरूरतोको पूरा करनेके लिए उसके पास काफी समय बचता है। लेकिन अक्लमन्दीके इस सुझावको अमलमे लानेके लिये राष्ट्रीय आदतोमे पूर्ण परिवर्तन करना आवश्यक है। यदि राष्ट्रको दरिद्रताकी स्थितिमे से निकालना है, तो इस तरहके परिवर्तनकी आवश्यकतासे कौन इनकार कर सकता है? जैसा कि श्री एन्ड्रयूजने अपने दो लेखोमें[1] बहुत ही उचित ढगसे दिखाया है, उष्ण कटि-

१. यंग इंडियामें ३–११–१९२१ और १०–११–१९२१ को प्रकाशित "हाथ-कताई और हाथ-बुनाई" शीर्षक लेख।

वन्धकी अर्थव्यवस्था समशीतोष्ण कटिवन्धकी अर्थव्यवस्थाकी तरह नही हो सकती। श्रमिकोको एक जगह एकत्रित करके भारतको औद्योगिक देश वनाना राष्ट्रकी हत्या करना है। कुटियामे ही स्वास्थ्यप्रद तथा आवश्यक अतिरिक्त धन्धा देकर भारतको श्रमशील वनानेका अर्थ है भारतको स्वस्थ और सम्पन्न वनाना व सुखी और सन्तुष्ट वनाना।

[अंग्रेजीसे]

यग इडिया, १७–११–१९२१

१९१. कलम या तलवार?

लाहौरकी माल रोडपर जॉन लारेसकी मूर्ति है। मूर्तिकी सूरत वडी धुडकीली है और उसके दायें हाथमे कलम और वायेंमें तलवार है। उसके नीचे लिखा है — "तुम कलमकी हुकूमत चाहते हो या तलवारकी?" वह कलाकी दृष्टिमे तो एक अच्छी चीज वताई जाती है। लेकिन उसे देखकर लाहौरके लोगोको सदा ही चिढ मालूम होती रहती है। उन्हे जवरदस्ती तो न कलमकी हुकूमत दरकार है और न तलवारकी।

यह मूर्ति नगरपालिकाकी सम्पत्ति है। वह १८८० के आसपास खडी की गई थी। उस समय लोगोमे स्वाभिमानका भाव उतना जाग्रत नही था जितना जाग्रत वह आज है। तथापि, मुझे मालूम हुआ है कि उस समय भी कुछ नागरिकोने इस अपमानको वहुत तीव्रतासे अनुभव किया था। अभी हाल ही मे लाहौरकी नगरपालिकाने वहुमतसे यह प्रस्ताव पास किया था कि फिलहाल, अन्तिम फैसला होनेतक, वह मूर्ति उस जगहसे उठवाकर टाउन हालकी इमारतमे रखवा दी जाये। अन्य प्रस्तावोकी तरह यह प्रस्ताव भी नियमके अनुसार सरकारके पास भेजा गया। इसके तीन-चार दिन वाद वहाँ नगरपालिकाकी ओरसे एक इजीनियर यह देखनेके लिए भेजा गया कि मूर्ति वहाँसे किस तरह हटायी जा सकती है। उसपर वहाँके डिप्टी कमिश्नरने, नगरपालिकाको कोई सूचना दिये विना ही, पुलिसका एक दल भेजा कि वह उस इजीनियरको और उसके आदमियोको वहाँसे हटा दे। और जव नगरपालिकाने पूछा कि यह अनुचित हस्तक्षेप क्यो और कैसे किया गया तव कमिश्नरने यह हुक्म जारी कर दिया[1] ।

इजीनियर वहाँ वाकायदा अपना कर्त्तव्य पालन करनेके लिए गया था। उसको हटानेके लिए पुलिस भेजकर डिप्टी कमिश्नरने साफ तौरपर हमलेका जुर्म किया है। कमिश्नरका यह हुक्म कलमके मानीका नमूना है। कमिश्नरकी कलममे उतना ही अत्याचार भरा है जितना डिप्टी कमिश्नरकी तलवारमें। कमिश्नरको अदालती अधिकार नही है, परन्तु उसके पास तलवार है। इसलिए उसने उनका प्रयोग कर लिया। नगरपालिको खुद अपनी चीजको हटानेका अधिकार है या नही, इसका फैसला करना तो अदालतका काम है। परन्तु कमिश्नरको नगरपालिकापर 'दुर्भाव' की तोहमत

१ यह यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें कहा गया था कि नगरपालिकाके उस प्रस्तावको कार्यान्वित न किया जाये।

लगानेका क्या अधिकार था? वात यह है कि कमिश्नर इस वातको गवारा नही कर सकता कि उस मूर्तिसे जो भावना प्रदर्शित होती है वह लाहौरके उस वढिया हलकेसे लुप्त हो जाये। इसलिए उसने नगरपालिकाको कानून सिखानेमे आगा-पीछा नही सोचा।

इस तरह नगरपालिकाके मामलेकी एक मामूली घटना, जो इस नई जागृतिका परिणाम है, अव वडेसे-वडे सार्वजनिक महत्वकी वात हो गई है। लाहौरके नागरिको और करदाताओको अवश्य ही आम सभाये करके नगरपालिकाके उन सदस्योकी तरफदारी करनी चाहिए जिन्होने उस प्रस्तावको पास किया है। और उन सदस्योको भी चाहिए कि वे इस मामलेमे तुरन्त कदम बढाये और सरकारको अवतक इस तरहका नोटिस न दिया हो तो अब दे कि अगर सरकार अपने पक्षके समर्थनमे कोई उचित कारण न देगी तो नगरपालिकाको अपना फर्ज अदा करना होगा और उस मूर्तिको वहाँसे हटाना होगा।

कमिश्नरने अनजानमे ही लाहौरके सत्याग्रहियोको एक बडा अच्छा अवसर दिया है। वे इस अवसरपर साफ तरीकोसे और जोरसे सविनय अवज्ञाकी आजमाइश कर सकते हैं। अगर सरकार नगरपालिकाको ललकारे और पशु-बलका उपयोगकर मूर्तिको न हटाने दे तो सत्याग्रही सरकारको अवश्य नोटिस देकर, उस मूर्तिको हटानेके इरादेसे उस मुकामपर जाये और गिरफ्तार हो अथवा अगर सरकार चाहे तो गोलियाँ खाकर वीर-गतिको प्राप्त हो।

लेकिन इस आखिरी कामके लिए सिर्फ वे लोग ही आगे बढे जिन्होने इसकी अच्छी तैयारी कर ली हो। यह काम उसी वक्त किया जा सकता है जब लाहौरके लोग एक होकर, एक आदमीकी तरह काम करनेको तैयार हो। वहाँ लोगोको भीड नही करनी चाहिए। वहाँ एक वारमे कुछ लोग, जैसे पाँच लोग जा सकते है और उनमे से एक आदमी उनका प्रवक्ता होना चाहिए। वे न तो गुल-गपाडा करे, न कोई दलील करे, वल्कि सिर्फ वहाँ जाकर गिरफ्तार हो जाये। क्योकि इस समय उनका उद्देश्य मूर्तिको हटाना नही, वल्कि गिरफ्तार होना है। हाँ, अगर काफी स्त्रियाँ और पुरुष वहाँ अपनी वलि चढानेके लिए मुस्तैद हो तो उससे जरूर ही यह मूर्ति वहाँसे हटा दी जायेगी। ऐसे कानून-भगमे सफलता तभी मिल सकती है जब लोगोमे शान्ति और अहिसाकी भावना सोलहो आना आ जाये। मै यह सविनय कानून-भगकी उग्र दवा वताता तो हूँ, परन्तु साथ ही लाहौरके नागरिकोको यह भी चेताये देता हूँ कि वे अच्छी तरह सोचे-समझे विना इस दवाका इस्तेमाल हरगिज न करे। मुझे तो लाहौरके जन-समूहका यही तजुर्वा हुआ है कि वह सोचता-विचारता नही। वह नियम-पालन तो जानता ही नही। स्वयसेवकोको लोगोमे एक कायदेसे काम करना चाहिए जिससे उनमे शान्ति और नियम पालनका वातावरण तैयार हो सके। पिछली ९ तारीखको राष्ट्रीय-शिक्षा-मण्डलकी ओरसे जो दीक्षान्त समारोह किया गया था उसमे कितने ही लोग विना टिकट और विना इजाजत ही ब्रेडला हॉलमे घुस आये थे। मुझे यह देखकर वडा दुःख हुआ। यह केवल असभ्यता ही नही, वल्कि ऐसी अवज्ञा भी है जिसे जुर्म कहना चाहिए, क्योकि वे ऐसी जगह घुस आये थे जहाँ वे जानते थे कि उनकी इस जवर्दस्तीका विरोध

कोई बल-पूर्वक नही करेगा। ऐसे लोग सविनय कानून भगके लायक नही है। सविनय कानून-भगमे तो यह पहलेसे मान लिया जाता है कि लोग उन तमाम कानून-कायदोको, जो नीतिके विरुद्ध नही है, स्वेच्छापूर्वक ठीक तरहसे मानेगे। उस दीक्षान्त समारोहके व्यवस्थापकोके बनाये नियमकी तरहके सार्वजनिक सस्थाओके कानून-कायदोको मानना, राज्यके काननोको स्वेच्छापूर्वक बिना दरेग माननेकी पहली सीढीके सिवा और कुछ नही है। अविचारपूर्वक अवज्ञा करनेका अर्थ है समाजको छिन्न-भिन्न कर देना। अत जो लोग सविनय कानून-भग की आकाक्षा रखते हो उनका पहला काम यह है कि वे सार्वजनिक सस्थाओके, काग्रेस अधिवेशनो, सम्मेलनो तथा दूसरी सभा-समितियोके, कानून-कायदोको बखुशी माननेकी कला सीखे। इसी प्रकार वे राज्यके कानूनोको भी मानना सीखे, फिर चाहे वे उन्हे पसन्द करते हो चाहे न करते हो। सविनय कानून-भगकी अवस्था अराजकता और मनमानीकी अवस्था नही है, बल्कि उसमे कानूनको माननेकी प्रवृत्ति और साथ ही आत्मसयमका अन्तर्भाव पहले ही से गृहीत माना जाता है।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १७-११-१९२१

१९२. गाली किसे कहते है ?

सयुक्त प्रान्तसे एक महोदय लिखते है—

आजकल चारो तरफ बडी बुलन्द आवाजोमें सरकारकी मलामत करनेकी बाढ-सी आ रही है। ऐसा मालूम होता है कि मानो हर आदमी इस बातकी कोशिश करता हे कि सरकारको गालियाँ देनेमें मै दूसरे लोगोसे आगे किस तरह बढ जाऊँ। सच पूछिये तो हरएक व्याख्यान बदजबानी और गालियोसे भरा रहता है। .

मुझे तो ऐसी बुरी बातसे बहुत नफरत होती है। . . .

मेरी दृष्टिमें हिंसा केवल दूसरोपर प्रत्यक्ष हमला करने और उन्हे मार डालनेमे ही नही हे; बल्कि बुरी बात मुँहसे निकालना भी हिंसाके अन्तर्गत आता है। अगर यह ठीक हे तो मेरी समझमे नही आता कि आप खुद जो इस सरकारको 'शैतानी', 'राक्षसी' और 'बर्बर'की उपाधियाँ देते है उसका समर्थन कैसे किया जा सकता हे। इस बातमें रत्ती-भर भी शक नहीं हे कि इन शब्दोका समावेश हिंसामें होता हे, परन्तु इस बातका स्वप्नमें भी खयाल नहीं किया जा सकता कि आप अहिंसाके परम प्रचारक होकर भी हिंसापूर्ण शब्दोका प्रयोग करेगे।

यह तो गाली-गलौजकी बात हुई। अब मै एक दूसरे सवालको लेता हूँ। आप हमेशा कहते है कि मै और मेरे साथी लोग तो अग्रेजी सरकारके खिलाफ

लड़नेके लिए खड़े हुए हैं, अंग्रेजोंके खिलाफ नहीं। आप इस शासन-प्रणालीके तो विरोधी है और इसे सुधारना या मिटाना चाहते है परन्तु खुद अंग्रेजोके प्रति आपके दिलमें किसी तरहका बुरा खयाल नहीं है। अतः इससे यह साफ ही है कि यद्यपि आप इस शासन-पद्धतिको तो मटियामेट कर देना चाहते है, परन्तु अंग्रेजोंको निकालना नहीं चाहते। अगर यह बात ठीक है तो यह ऊँचा सिद्धान्त अभी उन लोगोके हृदयमें भी पूरी तरह अंकित नहीं हुआ है जो आपके सच्चे अनुयायी होनेका दम भरते है। मैं इसकी एक मिसाल देता हूँ। आगरामें अभी हालमें राजनैतिक परिषद हुई थी। उसमें पण्डित जवाहरलाल नेहरूका भाषण हुआ, जिसमें उन्होंने विदेशी कपड़ेके बहिष्कारपर बोलते हुए कहा: "मैं उन लोगोमें से हूँ जो सच्चे दिलसे अंग्रेजोंको भारतसे निकालना चाहते हैं और अगर मुझे इसका कोई उपाय हाथ लगा है तो वह है स्वदेशी।" यह बात अखबारोंमे भी प्रकाशित हो चुकी है और, मैं समझता हूँ, शायद आपने भी पढ़ी होगी। ऐसी हालतमें यह कैसे कहा जा सकता है कि पण्डित जवाहरलाल नेहरूने आपके उस सिद्धान्तका मर्म समझ लिया है जिसके द्वारा हम मनुष्य और उसके कार्यमें भेद कर सकते है, ताकि हम उसके कार्यकी तो निन्दा कर सके; परन्तु स्वयं उसके प्रति हमारे मनमें किसी तरहका दुर्भाव न आये? इस मामलेमें तो मैं जोर देकर यह कह सकता हूँ कि नेहरूजीकी बात किसी तरह भी वाजिब नहीं कही जा सकती; तथापि मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या आप उसे पसन्द करते हैं या नापसन्द।[1]

अगर असहयोगी लोग गालियोंका व्यवहार करते है तो वे निस्सन्देह हिंसा करते है और अहिंसाके व्रतका भंग करते है। लेकिन मैं इस बातको नही मान सकता कि हरएक भाषणमें महज बदजबानी और बददुआएँ ही भरी रहती है। मैं लेखक महोदयको यकीन दिलाता हूँ कि भाषणोंमें क्या सरकारकी और क्या खुद हमारी दोनोकी ही निन्दा होती है और उनमें निन्दाकी अपेक्षा अहिंसा, हिन्दू-मुस्लिम-एकता और स्वदेशी-समर्थक दलीलें ही अधिक रहती हैं। और इन तीनों बातोंका लोगोंकी ओरसे जो इतना आश्चर्य-जनक उत्तर मिला है वह मेरे इस कथनका शायद सबसे बड़ा सबूत है। फिर लोगोंने इतनी प्रगति बिना प्रभावपूर्ण आग्रहके ही नही की है।

लेकिन आखिर गाली कहते किसे है? अंग्रेजीके कोषमें गालीके पर्यायवाची अंग्रेजी शब्दका अर्थ है—अनुचित प्रयोग, कुप्रयोग, बुरा प्रयोग। अतः अगर हम चोरको चोर अथवा बदमाशको बदमाश कहते है तो इससे हम उसे गाली नही देते। हम कोढ़ीको कोढ़ी कहते हैं तो वह इसका बुरा नही मानता। हाँ, यह जरूर है कि ऐसे विशेषणों-का प्रयोग उसी नीयतसे किया जाना चाहिए और उनके प्रयोगकर्त्ताके पास उसकी यथार्थताका प्रमाण होना चाहिए। इस दशामें मैं हर जगह और हर मौकेपर किये गये

१. जवाहरलाल नेहरूके उत्तरके लिए देखिए "टिप्पणियाँ", ८-१२-१९२१ का उप-शीर्षक, "पण्डित जवाहरलाल नेहरूका जवाब"।

इन विशेपणोके प्रयोगको निन्दनीय नही मान सकता। मै यह भी नही मानता कि इन निन्दाकारी शब्दोका प्रयोग करना सदा हिंसाका लक्षण ही होता हे। मै यह वात अच्छी तरहसे जानता हूँ कि उचित विशेपणोका प्रयोग भी हिंसाका लक्षण हो सकता है। परन्तु कव ? तभी जव उनका उपयोग उस व्यक्तिके प्रति जिसकी निन्दा की गई है, हिंसाको उत्तेजन देनेके लिए किया गया हो। जव किसी मनुष्यकी निन्दा इसलिए की जाती है कि वह अपनी वुरी आदतको छोड दे या श्रोता उसका साथ छोड दे तो ऐसी निन्दा विलकुल जायज होती है। हिन्दू-शास्त्र तो दुराचारियोकी भर्त्सनासे भरे पडे है। उन्होने तो उन्हे कोसातक है — शापतक दिये है। तुलसीदास तो मूर्तिमान दयाके अवतार थे। उन्होने अपनी ' रामायण 'मे भगवान रामके द्रोहियोके लिए ढूँढ-ढूँढ कर वुरे विशेपण प्रयुक्त किये है। असलमे उन पापाचारियोके जो नाम चुने गये है वे भी उनके गुणोके ही सूचक है। ईसामसीह उन लोगोपर दैवी कोप अवतरित करनेमे नही हिचके जिनको वे ' दुष्टो, धूर्तो, और पाखण्डियोकी औलाद ' कहते थे। वुद्धने उन लोगोको नही छोडा जो धर्मके नामपर निरपराध वकरोकी वलि देते थे। ' कुरान ' ओर ' जेंद अवेस्ता ' भी ऐसे प्रयोगोसे वची हुई नही है। हाँ, उनका प्रयोग करनेमे उन सव ऋषियो और पैगम्वरोकी कोई वुरी नीयत नही थी। उन्हे तो लोगो और चीजोका यथार्थ वर्णन करना था और उन्हे इसके लिए ऐसी भापाका सहारा लेना पडा जिससे हम लोग अच्छे और वुरेकी पहचान कर सके। हाँ, इस वातमे मै लेखकसे सहमत हूँ कि हम सरकार अथवा शासकोके वारेमे जितना कम कहे हमारे लिए उतना ही अच्छा है। पहले ही हममे इतने विकार और दोप भरे हुए है कि हमारे लिए दिल दुखानेवाली वातोका प्रयोग करना अनुचित है। हम इस सरकारका जो अच्छेसे-अच्छा उपयोग कर सकते है वह यह हे कि हम इसके अस्तित्वकी उपेक्षा करे ओर इसका सम्पर्क भ्रष्टकारी और पतनकारी है, यह विश्वास करते हुए जहाँतक हो सके इसे अपने जीवनसे अलग रखे।

मै वार-वार यह वात कहता जा रहा हूँ कि इस आन्दोलनका उद्देश्य अग्रेजोको निकालना नही हे, वल्कि उस शासन-प्रणालीको सुधारना या मिटा देना हे जो उन्होने हमपर जवरदस्ती लाद रखी है। मैने पण्डित जवाहरलाल नेहरूका वह भापण नही पढा हे, जिसका जिक्र पत्र-प्रेषक महोदयने किया है। लेकिन मै उन्हे इतनी अच्छी तरह जानता हूँ कि मुझे यह विश्वास नही हो सकता कि उन्होने वह वात कही होगी, जिसका दोष उनपर लगाया गया है। मै जानता हूँ कि वे मनमौजीपनके खातिर ही उनका चला जाना नही चाहते वल्कि वे उन अग्रेज सज्जनोको सवसे पहले अपने हार्दिक मित्रकी तरह गले लगायेगे जो भारतके प्रेमी है और जो उसके सेवक वनकर यहाँ रहना चाहते है। इतना ही नही हम यह भी खयाल नही करते कि स्वतन्त्र भारतमे भी जो अग्रेज हमारी आशाओकी भावी राजसत्ता द्वारा तय हुई शर्तोके अनुसार रहना चाहेगे उन्हे यहाँ नही रहने दिया जायेगा।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १७–११–१९२१

१९३. पत्र-लेखकोंसे

सी० एन० वेंकटशास्त्री. मुझे खेद है कि इन स्तम्भोमे बताये गये कारणोसे तुम्हारा पत्र प्रकाशित नही किया जा सकता। परन्तु मै चाहता हूँ कि तुम मेरे हिन्दू-धर्म सम्बन्धी लेखको[1] दुबारा पढ देखो। इससे तुम्हे पता चलेगा कि मेरे और तुम्हारे विचारोमे साम्य अधिक और अन्तर कम है। तुम केवल सतहपर ही रह गये हो, मै जडतक पहुँच गया हूँ। इसलिए हमारे प्रयासोके परिणाम भिन्न-भिन्न निकलना तो लाजमी ही था।

ए० एच० जयसिहानी: १ असहयोगीके रूपमे मै न जॉर्जको अपना राजा मानता हूँ और न इस बातसे इनकार करता हूँ कि वे मेरे राजा है, मै तो राजाके नामसे चलाई जानेवाली शासन-व्यवस्थासे बिलकुल अलग हो गया हूँ। मै इस बातके लए बिलकुल स्वतन्त्र हूँ कि यदि मै उसके राज्यमे अपना पूर्ण विकास कर सकूँ और मुझे पजाब और खिलाफतके सम्बन्धमे हुए अन्यायोका पूर्ण प्रतिकार मिल जाये तो मै उनको अपनी पूर्ण निष्ठा अर्पित कर दूँगा।

२ असहयोगियोके रूपमे हमे जेलोमे जरूर काम करना चाहिए क्योकि हम जेलोसे तो असहयोग नही करते। जब हम अदालतोमे ले जाये जाते है तब हम अदालतोके अनुशासनके सामने झुक जाते हैं। सविनय अवज्ञाका स्वरूप ही ऐसा है जिसके कारण हमारा जेलोके कायदे-कानूनोको मानना लाजिमी हे क्योकि सविनय विरोध करनेके कारण हम स्वय कैदमे जाते है ओर इसीलिए उसके अनुशासनके कष्ट उठानेके लिए बाध्य होते है। लेकिन हम ऐसे कायदे-कानूनोका सविनय विरोध कर सकते है जो केवल परेशान करनेवाले या कष्टसाध्य ही न हो, वरन् विशेष रूपसे असहयोगियोको अपमानित करने और नीचा दिखानेके लिए ही बनाये गये हो। हमारे आत्मसम्मानका यह तकाजा हे कि हम स्वेच्छासे जेलके अनुशासनका पालन करे। इसी आत्मसम्मानके कारण हम ऐसे दुर्व्यवहारका विरोध भी कर सकते है जिसे नरम भाषामे अनुशासन कहते है। उदाहरणके लिए हम, चाहे जेलके भीतर हो या बाहर, अपनी नाक जमीनपर रगडनेमे इनकार कर सकते है।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १७-११-१९२१

१ देखिए "हिन्दू धर्म", ६-१०-१९२१।

१९४. निर्दोष अवज्ञा बनाम दोषपूर्ण अवज्ञा

जब आदमी खुद अपने बनाये हुए कानूनोंको खुद ही जान-बूझकर भंग करता है तब ऐसा कानून-भंग अपराध हो जाता है। क्योंकि तब वह अपने प्रति नहीं, बल्कि किसी दूसरेके प्रति अपराध करता है, और चूंकि कानून-निर्माताने उसकी कोई सजा अपने लिए निश्चित नहीं की है अतः वह न केवल इस कानून-भंगकी सजासे ही बचता है बल्कि उन कानूनोंका पालन करनेकी असुविधासे भी बच जाता है। जो बात व्यक्तिके विषयमें चरितार्थ होती है वही संस्थाओंके विषयमें भी चरितार्थ होती है। हम देखते हैं कि आज इसी प्रकार यह सरकार अपने ही बनाये कानूनोंको भारत-भरमें भंग कर रही है। दण्ड संहिता और फौजदारी कानूनकी धाराओंका मनमाना दुरुपयोग किया जा रहा है। और चूंकि असहयोगियोंने अधिकारियोंकी दी हुई आज्ञाओंपर आपत्ति करना छोड़ दिया है, इसलिए वे अब निडर होकर बड़ी निर्लज्जतासे गैरकानूनी कार्रवाइयाँ कर रहे हैं। हमने देखा है कि इस प्रकारकी कार्रवाइयाँ बुलन्दशहर, चटगाँव और तमाम सिन्ध-प्रान्तमें की गई हैं और ये मद्रास प्रान्तमें तो सबसे ज्यादा व्यवस्थित रूपसे और जानबूझकर की गई हैं। श्री याकूब हसनने ठीक-ठीक तौरसे यह दिखा दिया है कि उनकी गिरफ्तारी और सजा वाइसरायके वचनकी भावनाके खिलाफ है। सच पूछिए तो वह केवल लॉर्ड रीडिंगके वचनके भावके ही विरुद्ध नहीं है, बल्कि उनके पूर्ववर्ती वाइसरायकी उस विज्ञप्तिके भी अक्षरशः विरुद्ध है जिसमें उन्होंने गम्भीरतासे घोषित किया था कि दमन-नीतिका अवलम्बन तबतक नहीं किया जायेगा जबतक असहयोग शान्तिमय बना रहेगा। और श्री याकूब हसनपर तो यह दोषारोपण कोई भी नहीं कर सकता कि उन्होंने अपने तंजौरके भाषणमें, जो उन्होंने खास-खास चुने हुए प्रतिनिधियोंके सामने दिया था, लोगोंको हिंसाके लिए उकसाया था, और तंजौर जिले-भरमें उनके उस भाषणसे खून-खराबी या झगड़ा-फसाद भी कहीं नहीं हुआ है। "देश-भक्तन्" के सम्पादक श्री अय्यरके मामलेमें तो मजिस्ट्रेटने स्पष्ट स्वीकार किया है कि जिन लेखोंको आपत्तिजनक माना गया है उनमें हिंसाकी भावनाका नामोनिशान तक नहीं है। इतना ही नहीं वरन् उनमें तो उलटा अहिंसाके पालनका अनुरोध किया गया है। कोयम्बतूरके प्रमुख वकील, श्री रामस्वामी आयंगार, महज इसलिए पकड़े गये हैं कि उन्होंने "हिन्दू" को एक जोशीला पत्र भेजा था, यद्यपि उसमें हिंसाका भाव जरा भी नहीं था। इसी तरह डा० वरदराजुलु और श्री गोपालकृष्णय्या भी भाषण और लेखोंके कारण गिरफ्तार किये गये हैं, यद्यपि उनके विषयमें यह कहा जाता है कि उनसे हिंसाको उत्तेजन नहीं मिलता, इतना ही नहीं बल्कि उत्तेजनाकी अवस्थामें भी उनका प्रभाव संयतकारी होता है। ऐसी हालतमें जब कि सरकार इस प्रकार चारों ओर दमन करनेपर तुली है, अगर कोई यह अनुमान करे कि सरकार लोगोंको झगड़ा-फसाद करनेके लिए उकसाना चाहती है, तो क्या आश्चर्य है? उक्त उदाहरणोंमें एक भी ऐसा नहीं है जिसमें किसीके इन सम्बन्धित लेखों या भाषणोंके कारण कहीं भी हिंसाका उद्रेक हुआ हो।

इस प्रकार हम देखते है कि सरकार खुद अपने ही बनाये कानूनोको भग करनेका गुनाह कर रही है। और उन पीडित दु खी व्यक्तियोके पास सरकारके जुल्मसे बचावका कौन-सा कानूनी उपाय है? सचमुच यदि किन्ही नीच उद्देश्योकी पूर्तिके लिए सरकार अपने बनाये कानूनका खुद ही दुरुपयोग करती है तो कानूनमे उसको रोकनेकी कोई व्यवस्था नही है। इसलिए जब कोई सरकार कानूनकी अवहेलना करके व्यवस्थित रूपसे मनमानी करने लगती है तब विशेषत उन लोगोके लिए सविनय कानून-भग करना एक पवित्र कर्त्तव्य हो जाता है जिनका हाथ उस सरकारको या उसके कानूनको बनानेमे नही था। हाँ, एक दूसरा भी उपाय है और वह है — सशस्त्र विद्रोह। सविनय कानून-भग उसका पूरा, कारगर और शान्तिमय रक्तपात-हीन स्थान-पूरक है। और यह भी अच्छा ही है कि हमने केवल अन्याय-युक्त ही नही, बल्कि गैरकानूनी आदेशोका भी पालन करनेमे जिस अनुकरणीय संयम और नियम-पालनका परिचय दिया है उससे ठीक वैसी ही परिस्थिति तैयार हो गई है जैसी सविनय कानून-भगके लिए आवश्यक होती है। इसका फल यह हुआ है कि एक ओर तो इस सरकारका अन्यायी रूप अधिक स्पष्ट दिखाई देने लग गया है और दूसरी ओर हम स्वय स्वेच्छापूर्वक आज्ञापालन करके सविनय कानून-भगके योग्य बन गये है।

साथ ही यह भी उतनी ही अच्छी बात है कि अब भी सविनय-भगका क्षेत्र भरसक मर्यादित ही रखा जा रहा है। हाँ, हमे मानना होगा कि जिस तरह भ्रष्ट और प्रजा-निन्दित सरकार किसी सभ्य-समुन्नत समाजमे रोगकी तरह एक अस्वाभाविक वस्तु होती है उसी तरह कानूनका सविनय भग भी एक असाधारण स्थिति है। इसलिए जिस नागरिकने राज्यके कानूनका स्वेच्छापूर्वक पालन करनेके विषयमे पूरी-पूरी तालीम पाई है वही विरले प्रसगोपर जान-बूझकर परन्तु विनय-पूर्वक कानूनका भग करके सजा प्राप्त करनेका अधिकारी हो सकता है। इसलिए यदि हमे थोडेसे-थोडे समयमे अधिकसे-अधिक काम करना हो तो जबतक एक परिमित क्षेत्रमे भयकरसे-भयकर कानून-भग चल रहा हो तबतक हमे दूसरे भागोमे कानूनका पूरा पालन करना चाहिए, जिससे देशकी स्वेच्छापूर्वक आज्ञापालनकी शक्ति और सविनय कानून-भगकी खूबीकी परीक्षा एक ही साथ हो जाये। इसलिए देशके किसी भी दूसरे भागमे अगर आवश्यक अधिकार और अनुमति प्राप्त किये बिना कानून-भगकी थोडी भी शुरूआत होगी तो उससे हमारे कार्यको बडी हानि पहुँचेगी और सविनय कानून-भगके सिद्धान्तोके सम्बन्धमे हमारा अक्षम्य अज्ञान प्रकट होगा।

हमे यह जरूर ध्यानमे रखना चाहिए कि सरकार अपनी सत्ताके इस भगका, जो कि शीघ्र ही शुरू किया जानेवाला है, दमन करनेके लिए कठोरसे-कठोर उपायोको काममे लायेगी, क्योकि उसका सारा अस्तित्व उसीपर अवलम्बित है। केवल "आत्मरक्षा" की स्वाभाविक भावना ही उसे ऐसी दमन-नीतिका सहारा लेनेके लिए प्रेरित कर सकती है जो इस आन्दोलनको कुचलनेके लिए पर्याप्त हो और यदि वह नीति असफल रही तो सरकार अवश्य ही लुप्त हो जायेगी अर्थात् या तो वह देशके लोकमतके सामने झुक जायेगी या भग हो जायेगी। सबसे बडा खतरा यह है कि उकसाये जानेके कारण कही हिंसाका उद्रेक न हो जाये। अगर ऐसा हो तो इससे हमारी

अहिंसाकी पुनीत प्रतिज्ञा तो निश्चित रूपसे भंग होगी ही, उसके अतिरिक्त इस प्रकार कठोरसे-कठोर दमनका आह्वान करनेके बाद उसके कारण क्रोधसे उन्मत्त होना और भी अनुचित और कायरतापूर्ण होगा। सम्भव है, मैं गिरफ्तार कर लिया जाऊँ और साथ ही इस शान्तिमय क्रांतिमें भाग लेनेवाले दूसरे हजारों भाई भी गिरफ्तार कर लिये जायें, जेलखानोंमें डाले दिये जायें और उत्पीडित भी किये जायें। फिर भी भारतके दूसरे भागोंके लोगोंको अपनी विचार-शक्ति न खो बैठनी चाहिए। उचित समय आनेपर वे भी सविनय कानून-भंग शुरू करें और गिरफ्तारी, कैद और उत्पीडनका आह्वान करें। हमें तो केवल निरपराध लोगोंका ही बलिदान करना है। केवल ऐसा बलिदान ही परमात्माके यहाँ मंजूर किया जायेगा। इसलिए उस भारी जंगके पहले जो देशमें शीघ्र ही छिड़नेवाली है मेरा हरएक असहयोगीसे बार-बार यही हार्दिक अनुरोध है कि वह दिल्लीके प्रस्तावकी[1] हरएक शर्तका अक्षरशः पालन करके सविनय कानून-भंग करनेकी योग्यता प्राप्त करे और चारों ओर अहिंसा तथा शान्तिका वायुमण्डल तैयार करे। हमें केवल उतनेपर ही सन्तोष न मानना चाहिए कि हम व्यक्तिशः शान्ति भंग न करेंगे। हम तो दावेके साथ यह कहते हैं कि असहयोग तमाम हिन्दुस्तानमें फैल गया है। हम यह भी कहते हैं कि हमने भारतके उन बेकाबू जनसाधारणपर भी इतना अधिकार कर लिया है कि हम उनको हिंसा करनेसे रोक सकते हैं। हमें अपनी यह बात सच्ची कर दिखानी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७–११–१९२१

१९५. आत्म-निरीक्षण

अनेक लोगोंने बड़ी करुण भाषामें पत्र लिखकर मुझसे यह कहा है कि यदि जनवरीतक स्वराज्य न मिले और यदि उस समयतक मैं जेलसे बाहर ही रहूँ तो भी मैं आत्म-हत्या न करूँ। मैंने देखा है कि भाषा मनुष्यके विचारोंको पर्याप्त रूपसे व्यक्त करनेमें समर्थ नहीं हो पाती, विशेष रूपसे तब जब स्वयं विचार ही अपने-आपमें उलझे हुए या अपूर्ण हों। 'नवजीवन' में मैंने जो-कुछ लिखा[2], उसके बारेमें मेरा तो यही खयाल था कि वह बिलकुल स्पष्ट था। लेकिन मैं देखता हूँ कि उसके अनुवादको बहुत-से लोगोंने गलत समझा है। जो हाल अनुवादका हुआ है, वही हाल मूल लेखका भी हुआ है।

मेरी बातको गलत समझनेका एक बड़ा कारण तो यह है कि लोग मुझे लगभग पूर्ण पुरुष मानते हैं। जिन मित्रोंको 'भगवद्गीता' के प्रति मेरी आस्थाकी जानकारी है, उन्होंने सम्बन्धित श्लोकोंके दृष्टान्त दे-देकर यह दिखानेकी कोशिश की है कि आत्म-हत्या

१ देखिए "अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी", १०–११–१९२१।

२ देखिए "आशावाद", २३–१०–१९२१।

करनेकी मेरी धमकी किस प्रकार उन उपदेशोके प्रतिकूल है जिनका पालन करनेका मै प्रयास कर रहा हूँ। मुझे सदुपदेश देनेवाले ये सभी लोग शायद भूल जाते है कि मै तो केवल एक सत्यान्वेषी हूँ। मेरा दावा है कि मैने सत्यतक पहुँचनेका एक रास्ता ढूँढ लिया है। मेरा यह दावा भी है कि मै सत्यतक पहुँचनेका अनवरत प्रयत्न कर रहा हूँ। लेकिन साथ ही मै स्वीकार करता हूँ कि अबतक मुझे वह मिला नही है। पूर्ण सत्यको खोज निकालना तो स्वय अपने-आपको पहचान लेना, अपने भवितव्यको समझ लेना है, अर्थात् सर्वथा त्रुटिरहित वन जाना है। मै अपनी त्रुटियोको जानता हूँ और इनका मुझे दुख भी है। अपनी कमियोकी इस जानकारीमे ही मेरी पूरी शक्ति निहित है, क्योकि चन्द मनुष्य ही ऐसे होते है जो अपनी मर्यादाओसे परिचित हो।

यदि मै पूर्ण पुरुष होता, तो मुझे अपने पडोसियोके कष्ट देखकर पीडाका अनुभव नही होता, जैसा कि अभी होता है। पूर्ण पुरुष होनेके नाते मेरा कर्त्तव्य तो यह होता कि मै उनकी कठिनाइयाँ देखकर उनको दूर करनेका उपाय बताता और अपने भीतर निहित अजेय सत्यकी शक्तिसे उस उपायको अपनानेके लिए लोगोको विवश कर देता। लेकिन मुझे तो अबतक ऐसा लगता है कि मै सत्यको धुँधले काँचके पीछेसे ही देख पा रहा हूँ और इसीलिए मुझे लोगोको किसी बातकी प्रतीति करानेमे बहुत धीमे और श्रमसाध्य तरीकोको काममे लाना पडता है, और तब भी ऐसा नही कि मै सदा सफल ही हो जाता हूँ। ऐसी स्थितिमे आज जब कि मै देख रहा हूँ कि सारा भारत कष्टोके भारसे — ऐसे कष्टोके भारसे जिनसे बचा जा सकता है — दबा हुआ है और जगन्नाथस्वामीके चरणोके नीचे ही इन्सान केवल हड्डियोका ढाँचा-मात्र रह गया है, यदि मैं करोडो पीडित और मूक भारतीयोके कष्टमे कष्टका अनुभव न करूँ तो अपने-आपको इन्सान नही मानूँगा। एक यही आशा मुझे सम्बल देती है कि जनताका यह कष्ट निरन्तर कम होता जायेगा। परन्तु मान लीजिये कि कष्ट, सुख-दुख, सर्दी-गर्मीके प्रति अपनी इस समस्त सवेदनशीलताके बावजूद, चरखेका शान्तिप्रदायक सन्देश लोगोके हृदयतक पहुँचानेकी अपनी सारी कोशिशोके बावजूद, मै लोगोको केवल अपनी बात सुना ही सकूँ, उनके हृदयतक न पहुँचा सकूँ, और यह भी मान लीजिए कि सालके अन्तमे मै यह देखूँ कि लोग चरखेकी शान्तिपूर्ण क्रान्ति द्वारा स्वराज्य प्राप्तिकी वर्तमान सम्भावनाके सम्बन्धमे उतने ही सन्देहशील बने हुए है जितने आज है, मान लीजिए मै देखूँ कि पिछले बारह महीने बल्कि इससे भी अधिक अवधितक लोगोमे जो उत्साह दिखाई देता रहा है वह महज ऊपरी हलचल और अस्थायी आवेश-मात्र था, हमारे कार्यक्रमके प्रति सुदृढ आस्थाका प्रतीक नही और अन्तमे मान लीजिए कि मै देखूँ कि शान्तिका सन्देश अग्रेजोके हृदयमे घर नही कर पाया है तो उस हालतमे क्या मुझे अपनी समस्यापर सन्देह नही करना चाहिए और मुझे यह महसूस नही करना चाहिए कि मै इस सघर्षका नेतृत्व करने योग्य नही हूँ? एक सच्चे इन्सानके रूपमे मुझे क्या करना चाहिए? क्या मुझे पूर्ण विनयके साथ अपने सिरजनहारके सामने घुटने टेककर उससे यह प्रार्थना नही करनी चाहिए कि वह इस व्यर्थ शरीरको उठा ले और मुझे सेवाका कोई अधिक उपयुक्त साधन बना दे?

स्वराज्यका मतलव सरकारको वदलना और उसपर जनताके वास्तविक नियन्त्रण-की स्थापना है। परन्तु वह तो केवल उसके स्वरूपकी वात हुई। लेकिन मैं जिस असली चीजके लिए लालायित हूँ वह तो यह है कि सरकारको वदलनेके साधनको निश्चित रूपसे स्वीकार किया जाये अर्थात् वास्तवमें जनताका हृदय-परिवर्तन हो। मेरा यह दृढ विश्वास है कि छुआछूतकी गलत प्रथाको त्यागनेके लिए हिन्दुओको, तथा वैर-भाव छोडकर हार्दिक मैत्रीभावको राष्ट्रीय-जीवनका चिरस्थायी अग माननेके लिए हिन्दुओ व मुसलमानोको और हिन्दुस्तानको आर्थिक दासतासे मुक्ति दिलानेवाले एकमात्र साधनके रूपमें चरखेको अपनानेके लिए समस्त जनताको युगोका समय नही चाहिए, और अन्तमे सभीके हृदयमे यह विश्वास उत्पन्न होनेमे भी वहुत लम्बी अवधि नही लगनी चाहिए कि हिन्दुस्तानको अहिंसाके रास्तेसे ही स्वराज्य मिलेगा, अन्य किसी साधनसे नही। मेरा विश्वास है कि जनता द्वारा स्वेच्छासे समझ-बूझकर, निश्चित तौरपर इस कार्यक्रमको स्वीकार करना ही उस वास्तविक स्वराज्यको प्राप्त करना है। इसके वाद, स्वराज्यका प्रतीक अर्थात् सत्ता-हस्तान्तरण उसी प्रकार अवश्यम्भावी है जिस प्रकार सही ढगसे वोया गया वीज वढकर वृक्षका रूप धारण कर लेता है।

पाठक इतने समझ गये होंगे कि मैंने सयोगवश जो वात पहले-पहल पूनामें कही और वादमे दूसरोके सामने भी दोहराई वह और कुछ नही, केवल अपनी कमियोकी स्वीकारोक्ति और अपनी इस धारणाकी अभिव्यक्ति-मात्र थी कि जिस महान् अभियान-का मैं इस समय नेतृत्व करता प्रतीत होता हूँ उसके लिए मैं अपने आपको कितना अयोग्य समझता हूँ। मैंने किसी निराशावादी विचारका प्रतिपादन नही किया है। उलटे, मुझे पहले कभी भी इस वातकी इतनी अधिक आशा नही थी जितनी यह लिखते समय है कि हम इस वर्षके भीतर स्वराज्यका सार प्राप्त कर लेंगे। साथ ही एक व्यावहारिक आदर्शवादीके रूपमे मैंने यह भी कहा है कि मुझे अपने-आपको ऐसे महान कार्यका नेतृत्व करने योग्य नही समझना चाहिए, जिसे सभाल सकनेका भरोसा मुझे स्वय ही न हो। निष्काम कर्मका अर्थ जितना यह है कि अडिग भावसे सत्यकी खोजमे लगे रहो, उतना ही यह भी है कि अपनी गलती मालूम होनेपर गलत रास्तेसे पीछे हट जाओ और जव अपनेको नेतृत्वके अयोग्य समझने लगो उस समय नेतृत्वका मोह त्यागनेमे कष्टका अनुभव भी न करो। मैंने तो केवल अपनी इसी हार्दिक कामनाकी अभिव्यक्ति दी है कि मैं अनन्तमें विलीन होकर सिरजनहारके हाथोमें गीली मिट्टीका लोदा वन जाऊँ ताकि मेरी सेवा अधिक प्रभावकारी हो, क्योकि तव उसमें मेरे व्यक्तित्वका निकृष्ट अश वाधक नही वनेगा।

[अंग्रेजीसे]

यग इडिया, १७–११–१९२१

१९६. भाषण: बम्बईकी सार्वजनिक सभामें[1]

१७ नवम्बर, १९२१

अपने भाषणके दौरान महात्मा गांधीने कहा कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने मुझे कुछ काम दे रखा है। काम बहुत जरूरी है और मैं किसी दूसरे काममें एक क्षण भी लगानेकी स्थितिमें नहीं हूँ। इसलिए मैं लगभग अपनी मर्जीके खिलाफ ही बम्बई आया हूँ। श्री एच० एस० खत्री तथा श्रीमती एस० जी० बैंकरने मुझे आनेके लिए बार-बार तार भेजा। आखिरको मैं इस सभामें हाजिर होनेको बम्बई आ गया हूँ। उन्होंने बम्बईके लोगोंको बधाई देते हुए कहा कि आपके सामने उत्तेजनाके बहुतसे कारण आये। आपके स्वयंसेवकों और नेताओंने, युवराजकी यात्राके सम्बन्धमें आयोजित समारोहोंमें लोगोंसे शामिल न होनेका अनुरोध करते हुए दीवारोंपर पर्चे चिपकाये, और इतनेपर ही उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। फिर भी, आपने अबतक पूरी शान्ति बनाये रखी है, इसके लिए आपको बधाई देता हूँ। उन पर्चोंसे मुझे तो कोई भी बात आपत्तिजनक नहीं दिखाई देती। बल्कि इसके विपरीत, वे लोग युवराजको सम्मानित करनेके लिए ही वह सब कर रहे थे, क्योंकि उन पर्चोंके माध्यमसे वे उन्हें सत्यसे अवगत करा रहे थे। वे युवराजको इस सत्यसे अवगत करा रहे थे कि उनका जो स्वागत किया जा रहा है वह अधिकारियोंकी ओरसे किया जा रहा है और जनताका — जनताके एक बहुत बड़े बहुमतका — इसमें कोई हिस्सा नहीं है। ऐसा करके वे वास्तवमें अपने कर्त्तव्यका ही पालन कर रहे थे। इसके बाद महात्माजीने लोगोंको सलाह दी कि अगर आपसे सभी पर्चे छीन भी लिये जायें तब भी आप शान्ति बनाये रखिए और अहिंसापर दृढ़ रहिए, क्योंकि भारतीयोंको खिलाफत और पंजाबके साथ किये गये अन्यायोंका परिशोधन कराना है। अहिंसा आपका धर्म है और आपको बड़ीसे-बड़ी कीमत चुकाकर भी अपने इस धर्मपर आरूढ़ रहना है। अतः, मैं बम्बईके लोगोंको उनकी अहिंसावादितापर बधाई देता हूँ। बारडोली, आनन्द और नडियाद ताल्लुकोंमें से कहीं भी जब एक बार सविनय अवज्ञा प्रारम्भ कर दी जाये, तो मैं चाहता हूँ कि बम्बईके लोग, चाहे कुछ भी हो जाये, शान्त बने रहें। पहले लोग जेल जानेसे डरते थे, लेकिन अब हर कोई जेल जानेको उत्सुक है। मेरे पास आकर बहुतसे पुरुषों और स्त्रियोंने आकुलताके साथ मुझसे पूछा है कि क्या उनके लिए जेल जाना सम्भव नहीं है। सिपाही चाहे अपना कर्त्तव्य पूरा करते हुए मृत्युको प्राप्त हो, अथवा जेल जाये, या चुपचाप अपना कर्त्तव्य पूरा करता रहे — उसके लिए यह सब एक ही बात है। जो आदेश दिये गये हैं, उनका हर मामलेमें आपको पालन करना

१. यह सभा एल्फिंस्टन मिलके पीछे साढ़े दस बजे दिनमें हुई थी।

है। आप सव स्वराज्य सेनाके सेनानी हैं और आपमें से हरएकको जो भी आदेश दिये जायें, उनका पालन करना है। वारडोलीमें सविनय अवज्ञा प्रारम्भ होनेपर गोलियाँ भी चल सकती हैं, लेकिन आप सभी वम्बई-वासियोको शान्त वैठे रहना चाहिए — कोई हडताल नहीं होनी चाहिए, किसी तरहका उपद्रव नहीं होना चाहिए, स्वराज्य आपको तभी मिल सकता हे। मेरा निश्चित मत हे कि आवश्यक वलिदानके विना आप कभी स्वराज्य नहीं पा सकते। मुझे यह भी लगता है कि हिन्दू-मुस्लिम एकताके विना भी स्वराज्य नहीं हो सकता। मुझे लगता है कि अभी दोनो समुदायोमें पूरी एकता नही है। हिन्दू मुसलमानोसे डरते हैं और मुसलमान हिन्दुओसे। सन्देह-शकाकी ये सारी भावनाएँ सदाके लिए मिट जानी चाहिए। दोनो समुदायोके भीतर आज जो एक-दूसरेके प्रति ये शकाएँ हैं, उनका कारण यह है कि हम कायर हो गये हैं और हमने अपना धर्म छोड दिया है। जो अपने धर्मके नामपर मर-मिटनेको तैयार हैं वे ही सच्चे देशभक्त और धर्मनिष्ठ व्यक्ति हैं। इसलिए मै हिन्दू भाइयोसे कहता हूँ कि जवतक आप सच्चे हिन्दू वने हुए हैं तवतक किसी दूसरे धर्मसे डरनेका कोई कारण नहीं है। अगर कोई छ फुटा पठान भी अपना छुरा घुमाते हुए सामने आ जाये तव भी डरनेकी कोई वात नहीं हे। यही सलाह मैंने मुसलमान भाइयोको भी दी है। आज भी दोनो समुदायोके मनमें एक-दूसरेके प्रति कुछ शकाएँ वनी हुई हैं। दूसरी चीज हे, स्वदेशी। सभामें आये हुए कुछ स्त्री-पुरुषोके शरीरपर अव भी कुछ विदेशी कपडे दिखाई दे रहे हैं। इस मामलेमें मौलाना आजाद सोवानीने अपना यह धन्धा ही वना लिया है कि वे अपने जिस किसी मित्रके शरीरपर विदेशी कपडा देखते हैं, उसे माँगकर नष्ट कर देते हैं। लोगोको मोटा खद्दर पहनना भी वुरा नही मानना चाहिए। श्रीमती नायडूने मुझसे शिकायत की कि मोटा खद्दर पहनना तो वहुत मुश्किल काम है। लेकिन सत्याग्रह प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर करनेवालोमें उनका नाम पहला या दूसरा है, इसलिए उन्हे खद्दर तो पहनना ही पडेगा। अगर आप मोटा खद्दर नहीं पहन सकते तो इसका मतलव हे, आप कमजोर हो गये हैं और आपमें ऐसा करनेकी ताकत नहीं है। पजावमें एक वहनने मुझसे पूछा कि उसे अपने कपडोके वारेमें क्या करना चाहिए। मैंने उसे सलाह दी कि उसे एक पेटीकोट और स्कर्टसे ही सन्तोष कर लेना चाहिए। जहाँतक वन सके आपको कम कपडेका इस्तेमाल करना चाहिए।

लोग अपना काम अहिंसक तरीकेसे करनेको कर्त्तव्य-बद्ध हैं। जवतक आप अहिंसा, स्वदेशी और हिन्दू-मुस्लिम एकतामें विश्वास करते हैं तवतक आपको हिंसाका सहारा लेनेका कोई अधिकार नहीं है। फिर आपके सामने अपने मरनेका भी कोई अवसर नहीं आयेगा। वैसे, जीवन और मृत्युमें कोई ज्यादा अन्तर नहीं है, दरअसल, वे एक समान हैं। जवतक आप मरनेको तैयार नहीं रहते, आपको स्वराज्य नहीं मिल सकता और न आप खिलाफत तथा पजाव-सम्वन्धी अन्यायोका ही निराकरण करा सकते हैं।

जब आप मर मिटनेको तैयार रहेंगे तभी आप अली-बन्धुओं और गंगाधर राव देशपाण्डे-को मुक्त करा सकेंगे। मैंने गंगाधर राव देशपाण्डेको एक पत्र[1] लिखा है; जिसमें कहा है कि पता नहीं, आपने किस बातसे प्रेरित होकर ऐसा किया। मैंने यह भी लिख दिया है कि ३१ दिसम्बरसे पहले आप जितना आराम कर सकें, कर लें, क्योंकि उसके बाद जब आप जेलसे बाहर आयेंगे तो आपको देशके लिए काम करना होगा। अपने भाइयोंको जेलसे छुड़ानेके लिए भारतीयोंको या तो स्वराज्य प्राप्त करना चाहिए, अथवा जेल जाना चाहिए, या अपने देशकी सेवा करते हुए मिट जाना चाहिए। मैं आपसे यही कहनेके लिए इस सभामें आया हूँ। बम्बईके लोग सुन्दर महीन कपड़ों और विला-सिताकी अन्य चीजोंके बड़े शौकीन हैं, लेकिन जिस क्षण आप सब स्वराज्यके लिए काम करने और मर मिटनेके लिए कटिबद्ध हो जायेंगे, उसी क्षण आपको स्वराज्य मिल जायगा। मुझे बम्बईके लोगोंसे अब भी बड़ी-बड़ी आशाएँ हैं। समय कम है, इसलिए आपको तत्पर रहकर अपना काम करना है। मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि ३१ दिसम्बरसे पहले क्या होगा। मैं ईश्वरसे बराबर यही प्रार्थना करता रहता हूँ कि उस दिनतक या तो मुझे जेल भेज दिया जाये या गोलीसे उड़ा दिया जाये, और नहीं तो भारत स्वतंत्र हो जाये। इस देशमें स्वराज्यके बारेमें मेरी जो कल्पना है वह अराजकताकी कल्पना नहीं है। मैं चाहता हूँ, लोग ईश्वरसे डरें, गुणवान् बनें तथा सत्यपरायण, धर्मनिष्ठ और बहादुर बनें। मैं नहीं जानता, आगे मेरे साथ क्या कुछ होनेवाला है, और हो सकता है मेरे ये शब्द आखिरी शब्द साबित हों। इसलिए आपसे मेरा निवेदन है कि आप देशके प्रति अपना कर्त्तव्य निर्भीकतासे निबाहें। हम किसीको मारनेके लिए तैयार नहीं हैं, लेकिन मरनेको तो तैयार हैं। अपने रवैयेसे आपको सरकारको इस बातकी प्रतीति करा देनी है कि इसके लिए आपको मारना या आपका दमन करना पाप है और यह ऐसा काम है जो नहीं किया जा सकता। जबतक आप दूसरोंका विश्वास नहीं करते, दूसरे आपका विश्वास नहीं करेंगे। तो मेरा अनुरोध है कि आप दूसरोंका विश्वास करें। ऐसा करके आप अपने शासकोंके मित्र बन जायेंगे। लेकिन चाहे आप उनके मित्र बनें या न बनें, हम भारतीयोंको अपने मनमें अपने शासकोंके प्रति किसी प्रकारका घृणाका भाव नहीं रखना है। आपको दूसरे पक्षके प्रति किसी तरहका घृणाका भाव रखे बिना स्वराज्यके लिए लड़ना चाहिए। अगर मैं भारतीयोंको इतनी सी बात समझा सकूँ तो उन्हें स्वराज्य मिल कर रहेगा। मैं आपके भीतर यह विश्वास जगाना चाहता हूँ कि मरनेमें मारनेसे ज्यादा बहादुरी है। मेरा यह भी अनुरोध है कि जबतक युवराज आपके बीच रहें, आप उनका बाल भी बाँका न करें, और न सरकारी अधिकारियोंका ही कोई नुकसान करें। अगर सरकार हम भारतीयोंको मारना चाहे तो उसे मारने दीजिए, क्योंकि हम

१. देखिए "पत्र : गंगाधर राव देशपाण्डेको", ८-१०-१९२१ के पूर्व।

तो मरनेके लिए तैयार ही बैठे हैं। मैं ईश्वरको धन्यवाद देता हूँ कि आजकी सुबह मुझे आपसे कुछ कहनेका मौका मिला।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १८-११-१९२१

१९७. पत्र : दयालजी और कल्याणजीको

बृहस्पतिवार [१७ नवम्बर, १९२१]

भाईश्री दयालजी और कल्याणजी,

मुझे लिखते हुए दुःख होता है कि बम्बईमें भारी हुल्लड हुआ है। शराबकी दूकानोंको जला दिया गया है। यह लिखते समय एक दूकान अभी भी जल रही है। निर्दोष लोगोंपर जबरदस्ती की गई है और उनके कपडे उतार लिये गये हैं। एक ट्राम तोड दी गई है और बत्तियाँ फोड डाली गई हैं। मैं तो देखता हूँ कि लोगोंने सारी सीमाओंको तोड दिया है। छ सिपाही मर गये हैं। कुछ हमारे व्यक्ति भी मरे हैं। स्वराज्यका प्रथम दर्शन करके मैं लज्जित हूँ। आज रात क्या होगा, यह नही कहा जा सकता। ऐसी स्थितिमें मैं वहाँ कैसे आ सकता हूँ? इसलिए एक व्यक्तिको भेज रहा हूँ जो तुम्हें सब समाचार देगा और समझायेगा। अब सम्भव है, हमारे कार्यक्रममें भी थोडा फर्क हो। बहुत हुल्लड होगा तो हमारा सोचा हुआ रह जायेगा और भगवान जो चाहेगा वही होगा। आपके यहाँ तो सम्पूर्ण शान्ति होगी, ऐसा मान लेता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (जी० एन० २६६९) की फोटो-नकलसे।

१९८. गहरा कलंक

[१८ नवम्बर, १९२१][1]

बम्बई वह स्थान है जिसके सहारे मैंने बहुतसे सपने सँजोये हैं। लेकिन कल जिस समय मैं सरल भावसे यहाँके नागरिकोंको बधाई दे रहा था[2] कि वे गम्भीर उत्तेजनाके बावजूद अहिंसा धर्मपर डटे रहे, ठीक उसी समय इस नगरकी प्रतिष्ठापर कालिख पुत रही थी।[3] बधाई देनेका कारण यह था कि पिछली रात स्वयंसेवकों और उनके

१ श्री गांधीने बम्बईमें हुए दुर्भाग्यपूर्ण उपद्रवोंको देखनेके बाद यह टिप्पणी इसी तिथिको एक पर्चेके रूपमें जारी की थी देखिए नवजीवन, २४-११-१९२१।

२ देखिए "भाषण बम्बईकी सार्वजनिक सभामें", १७-११-१९२१।

३ १७ नवम्बरको जब प्रिन्स ऑफ वेल्स बम्बई पहुँचे उनके आगमनके विरुद्ध प्रदर्शन किये गये थे, जिनमें विदेशी वस्त्रोंकी होली जलाना भी शामिल था, जिनके फलस्वरूप एक बड़े पैमानेपर उपद्रव हो गये थे।

कप्तानको निजी इमारतोपर इश्तिहार चिपकानेके कारण गिरफ्तार किया गया था। उन इश्तिहारोमे जनताको युवराजके स्वागतका बहिष्कार करनेकी सलाह दी गई थी। इश्तिहारोको नष्ट कर दिया गया था। स्वराज्य-सभाके कार्यालयमे एक रहस्यपूर्ण ढगसे प्रवेश करके गैर-इस्तेमालशुदा इश्तिहारोको पुलिस उठा ले गई थी। जहाँतक मेरी जानकारी है, उन इश्तिहारोको गैर-कानूनी घोषित नही किया गया था। युवराजका आगमन, और उनके सम्मानमे आयोजित समारोहोकी परिस्थितियाँ और उन स्वागत-समारोहोपर जनताके पैसोकी बर्बादी, यह सब मिलकर असहनीय उत्तेजनाका कारण बन गये। इसपर भी बम्बईकी जनताने आत्म-सयमसे काम लिया था। मैंने इसे बधाई देने लायक बात मानी थी। सरकारने स्वार्थवश यह सब जो प्रदर्शन किया था, उसके जवाबमे विदेशी वस्त्रोकी होली जलाना एक बहुत ही ठीक प्रदर्शन था।

लेकिन मुझे खबरतक नही थी कि युवराज जब सजी-सजाई सडकोसे गुजर रहे थे और विदेशी वस्त्रोकी होली चलाई जा रही थी, ठीक उसी समय नगरके एक दूसरे हिस्सेमे मिल-मजदूर अपने मालिकोकी इच्छाकी घोर अवज्ञा करके एक-एक करके जबरन मिलोसे निकल भागे जा रहे थे। प्रतिक्षण बढती हुई भीड ट्राम गाडियोके यात्रियोको बिना किसी कारण तग कर रही थी और ट्रामोका आवागमन रोक रही थी तथा विदेशी वस्त्रोकी बनी टोपियाँ जबरन लोगोके सिरोसे उतार रही थी और सीधे-सादे यूरोपीयोको तग कर रही थी। दिन चढनेके साथ-साथ प्रारम्भिक सफलताके बाद भीडका उन्माद और क्रोध भी बढता गया। उसने ट्राम गाडियो और एक मोटर गाडीमे आग लगा दी, शराबकी दूकाने तहस-नहस कर दी और दोमे आग लगा दी।

मुझे इस उत्पातकी खबर दिनमे लगभग एक बजे मिली। मै तत्काल कुछ मित्रोको लेकर एक मोटर-गाडीसे घटनास्थलपर गया और वहाँ पारसी बहनोपर हुए अत्याचारकी अत्यन्त ही कष्टप्रद और लज्जाजनक कहानियाँ सुनी। कुछ बहनोको मारा-पीटा गया था और उनकी साडियाँ खीच ली गई थी। यह सब एक पारसी सज्जनने बताया। वे बहुत गुस्सेमे थे और उनके होठ काँप रहे थे। लेकिन उन्होने भली प्रकार सोच-समझकर सारा किस्सा बताया। मेरी गाडीके चारो ओर खडे पन्द्रह सोसे अधिक लोगोमे मे एकने भी उनके आरोपका खण्डन नही किया। एक बुजुर्ग पारसी सज्जन बोल उठे "इस भीडशाहीसे हमारी रक्षा कीजिए।" पारसी बहनोके साथ किये गये इस अशोभनीय व्यवहारकी बात मेरे सीनेमे तीर-जैसी चुभ गई। मुझे लगा जैसे मेरी ही बहनो या पुत्रियोके साथ उपद्रवकारी भीडने वह अशोभनीय बर्ताव किया हो। यह सही है कि कुछ पारसी स्वागत-समारोहमे शामिल हुए थे। उनको अपनी राय रखनेका पूरा-पूरा हक हे, और उसके कारण उनको कोई परेशान नही कर सकता। स्वराज्यमें जोर-जबर्दस्ती नही चल सकती। कोई धर्मान्ध मोपला जब किसी हिन्दूको जबरन् मुसल्मान बनाता हे तब वह यही सोचता है कि उसने धर्मकी सेवा की हे। किन्तु, अगर असहयोगी और उनके साथी इस तरहकी जोर-जबर्दस्ती करे, तो वे किसी भी तरह अपने ऐसे अपराधपूर्ण कृत्योका औचित्य सिद्ध नही कर सकते।

मैंने "ट्‌ टैंक" हल्केमे पहुँचनेपर देखा कि शराबकी एक दुकान बिलकुल तहस-नहस हालतमें पडी हुई है और बुरी तरह घायल दो पुलिसवाले खाटपर बेहोश पडे हैं। वहाँ

उनकी खवर लेनेवाला कोई नही था। मै गाडीसे उतर गया। भीडने मुझको तुरन्त घेर लिया और नारे लगाने शुरू कर दिये "महात्मा गाधीकी जय।" यह आवाज मेरे कानोको वैसे भी अच्छी नही लगती, पर कल वह जितनी बुरी लगी उतनी पहले कभी नही लगी थी। जव भीडने उन दो घायल भाइयोका जरा भी खयाल न करते हुए जोर-जोरसे मेरी जयकार शुरू कर दी तो मेरा दम घुटने लगा। मैने उनको फटकारा। वे चुप हो गये। दोनो घायलोके लिए पानी लाया गया। मैने अपने दो साथियो और भीडमे से कुछ लोगोसे अनुरोध किया कि उन दम तोडते पुलिसवालोको अस्पताल पहुँचा दे। फिर कुछ ओर आगे वढनेपर मैने देखा कि आगकी लपटे उठ रही है। भीडने दो ट्राम-गाडियोमे आग लगा दी थी। लौटते हुए मैने एक मोटर-गाडीको जलते हुए देखा। मैने भीडके लोगोसे तितर-वितर होनेके लिए कहा और यह भी कहा कि आप लोगोने खिलाफत, पजाव और स्वराज्य, तीनो ही उद्देश्योको काफी धक्का पहुँचाया है। मै दु खी हृदय और मुरझाया मन लेकर वहाँसे लौटा।

करीव पाँच वजे चन्द सिन्धी वीर युवकोने आकर खवर दी कि भिडी वाजारमे लोग विलायती टोपी पहने हुए हर आदमीको तग कर रहे है, और टोपियाँ न देनेवालोको खूब पीटते भी है। एक वीर वृद्ध पारसीने वडी निडरतासे अपनी पगडी उतारनेसे इनकार कर दिया। उनके साथ वडा वुरा वर्ताव किया गया। मौलाना आजाद सोवानीके साथ मै भिडी वाजार गया और हमने भीडके लोगोको समझानेकी कोशिश की। हमने कहा कि निर्दोष आदमियोको चोट पहुँचाकर आप अपने ही धर्मकी हानि कर रहे है। लोगोने तितर-वितर होनेका रुख दिखाया। वहाँ पुलिस भी मौजूद थी। पर पुलिसने वडे सयमसे काम लिया। हम और आगे वढ गये। लौटते समय हमने शरावकी एक दुकानको जलते पाया। दमकलोको लोग आग नही वुझाने दे रहे थे। पण्डित नेकीराम शर्मा और अन्य लोगोके सद्प्रयत्नसे ही दुकानके कर्मचारी वाहर निकल पाये थे।

उस भीडमे केवल उपद्रवकारी या लडके ही नही थे। भीडके सभी लोग नासमझ नही थे। उनमे सभी मिल-मजदूर भी नही थे। कुल मिलाकर वह एक मिली-जुली किस्मकी भीड थी, जो दूसरे किसीकी वातपर कान देनेके लिए तैयार नही थी। उस समय उन लोगोका विवेक जाता रहा था। और भीड किसी एक हल्केके लोगोकी भी नही थी, उसमे कई हल्कोके लोग सिमट आये थे, जिनकी तादाद वीस हजारसे कम नही थी। वे सभी शरारत और तोडफोडपर तुले हुए थे।

मैने सुना है कि गोली चली, जिसके फलस्वरूप कुछको जानसे हाथ धोना पडा। यह भी सुना कि आग्ल भारतीयोके मुहल्लोसे खादीकी पोशाक पहनकर निकलनेवाले लोगोको खादीकी टोपी या कमीज न उतारनेपर वुरी तरह पीटा गया। मैने सुना कि वहुतोको गम्भीर चोटे पहुँची। ये पक्तियाँ लिखते समय मेरे पास छ हिन्दू और मुसलमान कार्यकर्त्ता वैठे है, जो अभी-अभी सिर तुडवाकर आये है। उनकी खोपडियोसे खून वह रहा है। एककी नाककी हड्डी टूट गई है और शरीरपर कई गहरे-गहरे जख्म है और उसकी जान खतरेमे है। ये लोग मौलाना आजाद सोवानी और मौलाना मुअज्जम अलीके साथ मिल-मजदूरोको शान्त करने परेल गये थे। कहा जाता है कि वहाँ वे लोग ट्राम-गाडियोको रोक रहे थे। ये कार्यकर्त्ता परेल पहुँच ही नही

पाये और खूनसे लथपथ जख्मी होकर लौट आये। ये जख्म खुद ही सारी कहानी बता रहे हैं।

इस प्रकार सार्वजनिक रूपसे सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू करनेकी आशा एक बार फिर मिट्टीमे मिल गई है। सविनय अवज्ञाके लिए अनुकूल वातावरण है ही नही। यह दलील देना ठीक नही होगा कि बारडोलीमे तो ऐसा वातावरण मौजूद है इसलिए बम्बईमे उत्पात मचे रहनेपर भी वहाँ आन्दोलन शुरू किया जा सकता है। यह चीज असम्भव है। न तो बारडोलीको और न बम्बईको ही अलग इकाईके रूपमे रखा जा सकता है। दोनो ही समूचे खण्डकी दो अविभाज्य इकाइयाँ हैं। मलाबारको तो मैं मानता हूँ अलग रखा जा सकता था। मालेगाँवको भी अनदेखा किया जा सकता था। लेकिन बम्बईको तो अनदेखा नही किया जा सकता।

असहयोगी लोग इसमे अपने दायित्वसे पल्ला नही छुडा सकते। यह सच है कि असहयोगी लोग जानकी जोखिम उठाकर भी हर कही लगातार लोगोको उत्पातोसे दूर रहनेके लिए कह रहे थे और उन्होने कई लोगोकी प्राण-रक्षा भी की है। लेकिन सविनय अवज्ञा आन्दोलन छेडनेके लिए या हिसाकी जिम्मेदारीसे अपने-आपको मुक्त करनेके लिए इतना ही काफी नही है। हमारा दावा है कि हमने शान्तिपूर्ण वातावरण कायम कर लिया है, मतलब यह कि हमने अपनी अहिसाके बलपर लोगोको इतना नियन्त्रित कर लिया है कि वे अपनी हिंसक प्रवृत्तियोको काबूमे रखे। लेकिन हमे जिस क्षण सफलता मिलनी चाहिए थी, उसी क्षण हम असफल हुए हैं। कलका दिन हमारी परीक्षाका दिन था। हम अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार हर हानि और अपमानसे युवराजकी रक्षा करनेके लिए बँधे हुए थे। पर हमने यदि युवराजके स्वागत-समारोहमे भाग लेनेवाले एक भी यूरोपीय या अन्य किसी व्यक्तिको चोट पहुँचाई या उसका अपमान किया है तो उस हदतक हमने अपने वचनको भग किया है। हमको स्वागत-समारोहसे अलग रहनेका जितना अधिकार था उतना ही अधिकार उनको उसमे हिस्सा लेनेका था। और मैं खुद भी अपनी जिम्मेदारीसे कैसे बच सकता हूँ, विद्रोहकी भावनाको पैदा करनेमे सबसे बडा हाथ मेरा ही रहा है। मैं उस भावनाको अनुशासित और नियत्रित करनेमे अपने-आपको पूरी तौरपर समर्थ नही पाता। मुझे इसके लिए प्रायश्चित्त करना चाहिए। मेरे लिए तो यह सघर्ष सारत धार्मिक है। मैं उपवास और प्रार्थनामें विश्वास रखता हूँ और इसीलिए मेरा निश्चय है कि आगेसे मैं स्वराज्यकी प्राप्तितक हर सोमवारको चौबीस घण्टेका उपवास रखा करूँगा. ।[1]

कार्य-समितिको इस परिस्थितिपर विचार करना पडेगा और इसको ध्यानमे रखते हुए ही यह निर्णय करना पडेगा कि जनताको पूरी तौरपर नियत्रित कर लेने तक सविनय अवज्ञाको जरा भी बढावा दिया जा सकता है या नही। मैं व्यक्तिगत रूपसे तो सोच-विचारकर इसी निर्णयपर पहुँचा हूँ कि अभी इस समय तो सार्वजनिक सविनय अवज्ञा शुरू नही की जा सकती। मैं तो स्वीकार करता हूँ कि जबतक जनतामें अहिंसाकी भावना पूर्णतया पैदा नही हो जाती तबतक सविनय अवज्ञा-आन्दोलनको

१. यहाँ मूलमें कुछ शब्द छूट गये हैं।

सफलतापूर्वक चलानेकी सामर्थ्य मुझमे नही है। इस निष्कर्षके लिए मुझे दु ख है। यह अपनी असमर्थताकी एक शर्मनाक स्वीकारोक्ति है, लेकिन मैं जानता हूँ कि मेरा सिरजनहार मुझे तभी ज्यादा पसन्द करेगा जब मैं जो कुछ हूँ वही अपनेको दिखानेकी कोशिश करूँ, जो नही हूँ वह दिखानेकी कोशिश न करूँ। अगर मैं सरकार द्वारा की जानेवाली सगठित हिंसासे कोई सरोकार नही रखना चाहता, तो जनता द्वारा असगठित रूपसे की जानेवाली हिंसासे तो और भी अलग रहना चाहता हूँ। मैं इन दोनो पाटोके बीच कुचल जाना कही ज्यादा पसन्द करूँगा।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २४-११-१९२१

१९९. अपील: बम्बईके नागरिकोसे

१९ नवम्बर, १९२१[1]

मेरे बम्बईवासी भाइयो और बहनो,

गत दो दिनोंमें मैंने जो मानसिक व्यथा सहन की है उसका वर्णन करना सम्भव नही। यह [अपील] मैं आज सवेरे साढे तीन बजे पूर्ण मानसिक शान्ति अनुभव करते हुए लिख रहा हूँ। दो घटोकी प्रार्थना और ध्यानके बाद मैंने यह शान्ति अनुभव की है।

जबतक बम्बईके हिन्दू और मुसलमान यहाँके पारसियो, ईसाइयो और यहूदियोसे मेल नही कर लेते तथा असहयोगी लोग सहयोगियोसे मेल नही कर लेते, तबतक मैं जलके सिवाय और कुछ भी ग्रहण नही करूँगा।

गत दो दिनोमे मैंने स्वराज्यका जो रूप देखा है उसकी सडायँध मेरे भीतरतक पैठ गई है। हिन्दू-मुस्लिम एकता मुट्ठी-भर पारसियो, ईसाइयो तथा यहूदियोके लिए खतरा बनी है। असहयोगियोकी अहिंसा सहयोगियोकी हिंसासे भी बुरी साबित हुई है। कारण, हमने मुँहसे तो अहिंसा-अहिंसा कहा है, किन्तु वास्तवमें उन लोगोको आतकित किया है जो हमसे सहमत नही हैं। इस तरह हमने अपने ईश्वरको नकार दिया है। 'कुरान,' 'बाइबिल,' 'जेन्द-अवेस्ता,' 'तालमुड' अथवा 'गीता', किसी भी माध्यमसे देखिए, हम सबका ईश्वर एक ही है, और वह सत्य तथा प्रेम स्वरूप है। मुझे जीनेमें अगर कोई रुचि है तो सिर्फ इसीलिए है कि मैं अपने अन्दरकी इस आस्थाको सिद्ध कर देना चाहता हूँ। मैं अग्रेज अथवा और भी किसीसे घृणा-द्वेष नही कर सकता। अग्रेजोकी सस्थाओ, विशेषकर भारतमें स्थापित उनकी शासन-प्रणाली, के विरुद्ध मैंने बहुत-कुछ लिखा और कहा है। जीता रहा तो फिर भी यही करता रहूँगा। पर मैं अग्रेजोकी

1 यह "बम्बईके नागरिकोंसे श्री गाधीकी अपील" शीर्षकसे एक पर्चेके रूपमें इसी तारीखको जारी किया गया था, देखिए नवजीवन, २४-११-१९२१।

इस प्रणालीकी निन्दा करता हूँ इससे आप यह न समझे कि मै अग्रेज-जातिके लोगोको निन्दनीय मानता हूँ। धर्मत. मुझे अग्रेजोसे भी वैसा ही प्रेम करना चाहिए जैसा हम अपने-आपसे करते है। इस सकटके समय यदि मै इसे सिद्ध करनेका प्रयत्न न करूँ तो यह ईश्वरसे मुँह मोडने-जैसा ही होगा।

पारसियोके सम्बन्धमे मैने जो-कुछ कहा है, उसका एक-एक शब्द मेरे हृदयसे निकला है। हिन्दू-मुसलमान यदि प्राण देकर भी पारसियोके प्राण और सम्मानकी रक्षा नही करेगे तो वे अपने-आपको स्वतन्त्रताके अयोग्य सिद्ध करेगे। हालमे ही उन्होने अपनी उदारता और मित्रताका परिचय दिया है। मुसलमानोपर तो उनका विशेष उपकार है, क्योकि सख्याकी दृष्टिसे देखे तो पारसियोने खिलाफतके लिए अनुपातत मुसलमानोसे अधिक धन दिया है। जवतक हिन्दू और मुसलमान इसके लिए खुले रूपसे हार्दिक खेद प्रकट न करेगे तवतक मै उन पारसी स्त्री और पुरुषोकी कातर आँखोसे आँखे नही मिला सकूँगा जिनके वीच मै अभी १७ तारीखको गया था। इसी तरह जवतक हम हिन्दुस्तानी ईसाइयोके साथ किये गये दुर्व्यवहारके लिए प्रायश्चित्त नही करेगे तवतक मै पूर्व आफ्रिकासे लौट आनेपर श्री एन्ड्रयूजसे भी आँखे नही मिला सकूँगा। अपने भाई और वहनोकी तरह इनकी भी रक्षा करना हमारा कर्तव्य है। उन्होने या पारसियोने आत्मरक्षार्थ अथवा वदला लेनेके लिए हममे से कुछके साथ जो वर्ताव किया है, उसका हमे ख्याल नही करना चाहिए।

आप लोग अनायास ही समझ ले सकते है कि उन लोगोको मुख्यत अधिकसे-अधिक राहत पहुँचाना मेरा कर्त्तव्य है जिन्हे मेरे निमित्तसे उद्भूत इस हलचलका शिकार वनना पडा है। मेरी प्रार्थना है कि हर हिन्दू और मुसलमान ऐसा ही करे। पर किसीके लिए उपवास आवश्यक नही है। उपवाससे तभी लाभ होता है जव आत्माकी तीव्र इच्छा और प्रार्थनाके वाद उसकी आवश्यकता महसूस की जाये। मै चाहता हूँ कि हर हिन्दू और मुसलमान अपने घर जाकर ईश्वरसे क्षमाकी प्रार्थना करे और सच्चे हृदयसे आहत समुदायोको मित्र वनानेका प्रयत्न करे।

मेरे साथ काम करनेवालोसे मेरी प्रार्थना है कि वे मेरे लिए एक भी सहानुभूतिका शब्द न कहे। मुझे न इसकी जरूरत है, न मै इसके योग्य हूँ। पर मेरा अनुरोध है कि वे उद्दण्ड किस्मके लोगोपर कावू पानेका अथक प्रयत्न करते रहे। यह सघर्ष सचमे 'खाँडेकी धार' का-सा सघर्ष है। इसमे झूठ और प्रपचके लिए कोई गुजाइश नही। हम अपना हृदय निर्मल वनाकर ही इस दिशामे कोई प्रगति कर सकते है।

मुसलमान भाइयोसे मै खास तौरसे दो शब्द कहना चाहता हूँ। खिलाफतको मै एक पवित्र उद्देश्य समझता हूँ। मैने हिन्दू-मुस्लिम एकताका प्रयत्न किया है, क्योकि मै जानता हूँ कि इसके विना भारत स्वतन्त्र नही रह सकता और हमारे लिए एक-दूसरेको सहज शत्रु समझना ईश्वरके अस्तित्वको अस्वीकार करना होगा। मैने अली-वन्धुओको गले लगाया, क्योकि मै जानता हूँ कि वे सच्चे और खुदासे डरनेवाले आदमी है। मैने सुना है कि गत दो दिनोकी सहार-लीलामे मुसलमानोने आगे वढकर हिस्सा लिया था। इससे मेरे मनको गहरी चोट लगी है। मै प्रत्येक मुसलमान कार्य-

कर्त्तासे अपील करता हूँ कि वह अपनी पूरी ऊँचाईतक उठे, धर्मके प्रति अपने कर्त्तव्य-का स्मरण करे और इस सहारको रोकनेमें कोई कसर न रहने दे।

ईश्वर हम सबको हर कीमतपर उचित कार्य करनेकी सुबुद्धि और साहस दे।

आपका सेवक,
मो० क० गाधी

[अंग्रेजीसे]
यग इडिया, २४-११-१९२१

२००. पत्र : गिरधारीलाल दयालको

सावरमती
कार्तिक वदी ४ [१९ नवम्बर, १९२१][1]

शा० गिरधारीलाल,

आपका पत्र मिला। यह जानकर दुःख हुआ कि आपके बहनोईको चोट लग गई है। धैर्य रखनेको कहनेके अलावा मैं इसका और क्या उपाय सुझा सकता हूँ?

मोहनदास गाधी

शा० गिरधारीलाल दयाल
दूसरी मजिल
ठक्कर कानजी केशवजीनो मालो
सातऋपि गली
वम्बई

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ७६८०) की फोटो-नकल से।

१ इस पत्रपर बेपता-पत्र कार्यालय (डेड-लेटर आफिस) की १० दिसम्बर, १९२१ की तारीख पड़ी हुई है, और गाधीजीने इसपर कार्तिक वदी ४ की तारीख दी है। १९२१ में कार्तिक वदी ४, १९ नवम्बरको पड़ी थी।

२०१. अपील: बम्बईके मवालियोंसे

[२० नवम्बर, १९२१][1]

बम्बईके मवालियोसे

मैने यह समझकर सबसे बडी भयकर गलती की कि असहयोगियोने आप लोगोको प्रभावित कर दिया है, और आप लोगोने नैतिक दृष्टिसे अहिंसाकी आवश्यकता भले न समझी हो, पर उसका सापेक्ष मूल्य, और राजनीतिक महत्व अवश्य समझ लिया है। मेरी यह धारणा हो गई थी कि आप लोगोने अपने देशके हितोको इतना अवश्य समझ लिया है जिससे आप कुछ ऐसा काम नही करेगे कि आन्दोलनको हानि हो, और आप लोग अपने निम्नतम मनोविकारोके वशीभूत न होगे। पर मुझे यह देखकर मर्म-वेदना हो रही है कि आप लोगोने जनताकी जागृतिको लूट-खसोट और अन्य अत्यन्त कुत्सित वासनाओकी तृप्तिका साधन बना लिया है। आप लोग अपनेको हिन्दू कहते हो या मुसलमान, ईसाई कहते हो या यहूदी अथवा पारसी, आप लोगोने अपने धार्मिक हितोको भी नही समझा है और उनकी भी हानि की है। मै जानता हूँ कि मेरे कुछ मित्र कहेगे कि मै मानव-स्वभावको नही समझता। यदि मुझे विश्वास हो जाये कि यह आरोप सही है तो मै कहूँगा कि मैने अपराध किया है और तब मै सामाजिक कार्योसे अपने आपको अलग कर लूंगा और मानव-स्वभावकी समझ अपने अन्दर पैदा करनेके बाद ही उनमे भाग लेना शुरू करूँगा। पर मै यह जानता हूँ कि दक्षिण आफ्रिकामें मुझे हिन्दुस्तानी मवालियोतक को नियन्त्रित करनेमे कोई कठिनाई नही हुई थी। इस सफलताका कारण यह था कि जहाँ मै स्वत नही पहुँच सकता था, वहाँ सहायक कार्यकर्त्ताओके जरिये अपनी बात अवश्य पहुँचा देता था। परन्तु मै देखता हूँ कि आप लोगोतक हम लोग नही पहुँच पाये है। मै यह नही मान सकता कि धर्म और देशकी पवित्र पुकारका आप लोगोपर कोई प्रभाव नही पड सकता।

देखिए कि आप लोगोने क्या कर डाला है! हिन्दू और मुसलमान मवालियोने पारसी मन्दिरोकी पवित्रता भग की है और इस प्रकार पारसी मवालियोके लिए भी रास्ता खोल दिया है कि वे आपके धार्मिक स्थानोकी दुर्गति करे। चन्द पारसियोने युवराजके स्वागतमें सम्मिलित होना उचित समझा, सिर्फ इसीलिए हिन्दू और मुसलमान मवालियोने अपने सामने पडनेवाले हरएक पारसीकी फजीहत करना अपना कर्त्तव्य समझा। नतीजा यह हुआ कि पारसी मवाली भी हिन्दू और मुसलमानोके साथ इसी तरह पेश आने लगे है। निश्चय ही, पारसी मवालियोको उतना दोषी नही माना जा सकता। सभी हिन्दुओ और सभी मुसलमानोकी बात तो दूर रही, अधिकाश हिन्दुओ और मुसलमानोतकने सख्तीके साथ विदेशी वस्त्रोका परित्याग नही किया है। लेकिन

१ यह अपील इसी तिथिको एक पर्चेके रूपमें जारी की गई थी, देखिए नवजीवन, २४-११-१९२१।

हिन्दू और मुसलमान मवालियोने इस वातका कोई ख्याल न करके कुछ पारसियो और ईसाइयोके शरीरोपर से विलायती वस्त्र उजड्डपनसे जवर्दस्ती उतार लिये। इसी कारण पारसी और ईसाई मवाली प्रत्येक खद्दरपोश हिन्दू और मुसलमानसे उलझ रहे है। इस तरह एक कुटिल सिलसिला चल पडा है और इसमे देशका नुकसान हो रहा है।

मै यह वात आप लोगोको दोष देनेके लिए नही, आप लोगोको सावधान करने और स्वय यह स्वीकार करनेके लिए लिख रहा हूँ कि हमने आप लोगोकी ओर ध्यान न देकर वडा अपराध किया। मै एक ढगसे इसका प्रायश्चित्त कर रहा हूँ। दूसरे कार्यकर्ता दूसरे ढगसे कर रहे है। सर्वश्री आजाद सोवानी, जयकर[1], जमनादास मेहता, साठे, मुअज्जम अली और अन्य कार्यकर्त्ता इस दुर्भाग्यपूर्ण विस्फोटको दवानेके लिए अपनी जान जोखिममे डाल रहे है। श्रीमती सरोजिनी नायडू आप लोगोको समझाने और आपसे अनुरोध करनेके लिए प्राणोकी परवाह न कर आपके समीप पहुँची। आप लोगोके वीच हमारा कार्य अभी आरम्भ ही हुआ है। क्या आप लोग हिसा-प्रतिहिंसाका यह सिलसिला वन्द करके हमे कार्यका अवसर नही देगे? पारसियो या ईसाइयोसे वदला लेनेमे हिन्दुओ और मुसलमानोको शर्म आनी चाहिए। पारसियो और ईसाइयोको भी जानना चाहिए कि हिन्दुओ-मुसलमानोके क्रोधका जवाव पशुवलके प्रयोगसे देना आत्मघात होगा। उनके ऐसा करनेका परिणाम यह होगा कि उन्हे विदेशी सरकारसे सहायता लेनी पडेगी, अर्थात् अपनी स्वाधीनता वेच देनी पडेगी। उनके लिए सवसे अच्छा उपाय यही है कि वे अपनी राष्ट्रीयताको समझे और भरोसा रखें कि समझदार हिन्दू और मुसलमान अपने हितोसे पहले अल्पसख्यक समुदायोके हितोकी रक्षा करेगे और उनको करनी भी चाहिए। जो भी हो, वम्वईको दो कार्य करने है — अल्पसख्यक समुदायोकी सुरक्षा सुनिश्चित वनाना और हुल्लडवाजोको नियन्त्रित करना।

वम्वईके आप सव मवालियोका मुझे भरोसा है कि अव आप लोग अपने हाथ रोक लेगे और उन लोगोको काम करनेका मौका देगे जो आपकी सेवा करनेके अभिलाषी है।

ईश्वर आपकी सहायता करे।

आपका मित्र,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]
यग इडिया, २४–११–१९२१

१ मुकुन्दराव रामराव जयकर (१८७३–१९५९), वम्वईके वकील और नरमदलीय नेता, सरकारसे सुलह और शान्तिकी वात चलानेवाले प्रमुख व्यक्ति, १९३७ में फेडरल कोर्ट ऑफ इडियाके न्यायाधीश नियुक्त हुए।

२०२. लोहेके चने

सविनय कानून-भंगके लिए गुजरातका सबसे पहले कदम बढाना लोहेके चने चबानेसे भी कठिनतर है। फिर भी एक भी तहसील अगर इसमे सफल हो जाये तो स्वराज्य हमारी मुट्ठीमे ही धरा है, मुझे इसमे कोई सन्देह नही। इसका अर्थ यह है कि जो तहसील बीडा उठाये उसमे एक सत्याग्रही सेना तैयार हो जाये। मै पहले कह चुका हूँ कि सत्याग्रही सेनामे औरत-मर्द, जवान-बूढे, लूले-लँगडे, दुर्बल-सबल, हिन्दू-मुसलमान, पारसी-ईसाई-यहूदी, ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र-भंगी-चमार, सब भरती हो सकते है। प्रह्लादकी तरह कोई बालक भी आ जाये तो वह भी दाखिल हो सकता है। और माँ-बाप अपने लडके-बालोकी भी भरती करा सकते है। यह खासा पचमेल मेला ही है, पर फिर भी यह प्रतिपक्षी सेनाके मुकाबलेमे बहुत ही ज्यादा काम कर सकता है और इसपर खर्च भी [उसके मुकाबलेमे] क्या होगा? इस सेनाके सिपाहियोमे एक गुण जरूर होना चाहिए — निर्भयता। उनमे मरनेकी शक्ति होनी चाहिए अर्थात् उस सिपाहीमे आस्तिकता होनी चाहिए।

जिन दूसरे गुणोकी आवश्यकता मैने बताई[1] है वे सदा आवश्यक नही है। वे गुण तो सिर्फ आजकी परिस्थितिके ही लिए आवश्यक है।

फिर भी, यद्यपि इस तरह लिख देना तो आसान है तथापि जबतक मनुष्य उसे समझ नही पाता तबतक वह कठिन मालूम होता है। जो तहसील बीडा उठाये उसमें जबर्दस्त परिवर्तन होने चाहिए। उस तहसीलके सिपाही एक पल भी व्यर्थ न बैठे। इससे जब युद्ध शुरू होगा तब प्रत्येक सत्याग्रही या ग्रहिणी या तो जेल जानेके लिए किसी जगह सविनय अवज्ञा करते दिखाई देगे या सूत कातते हुए, खादी बुनते हुए, या रुई धुनकते और कपास लोढते हुए पाये जायेगे। कोई छिन-भर भी अकर्मण्य नही बैठ सकता, फिर चाहे वह धनी हो चाहे भिखारी। सिपाहीगिरीमे धनवान और निर्धनका भेद नही रहता। जार्ज पचम जब जहाजपर काम करते थे तब वे भी औरोकी तरह जमीनपर सोते थे, बिना दूधकी चाय पीते थे तथा नौकर मिली मोटी रोटी खाते थे। ऐसा ही होना चाहिए।

इसलिए जिस तहसीलको तैयारी करनी हो उसे तथा जो तैयार हो गई हो उन्हे भी अपनी तहसीलके गाँवोका अलग-अलग नकशा तैयार करना चाहिए। उसमे नीचे लिखा ब्योरा हो —

१ गाँवका नाम

२ पडावमे उसका फासला

३ आबादी। इसमे स्त्री, पुरुष, सोलह वर्षके अन्दरके लडके-लडकियाँ, हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई, भगी, चमारकी तादाद बताई जाये।

१ देखिए "परीक्षा", १३-११-१९२१।

४. तादाद चरखा
५. तादाद करघा
६. तादाद तात
७. कपासका सग्रह
८ मदरसा और तादाद हाजिरी
९ तादाद पुलिस
१० ब्रिटिश हुकूमतके अन्य प्रतीक
११ जेलमे जानेके लिए तैयार लोगोकी तादाद
१२ शराबकी दुकानोकी तादाद
१३ सरकारसे सहयोग करनेवाले लोग हो तो उनकी तादाद

अगर हम एक सेनाके रूपमे सगठित जाये तो हरएक गाँवमे प्रजाका प्रतिनिधि और प्रजाके पच भी होगे। बीस-बीस आदमियोकी एक टुकडी बन जाये और उनमे एक उसका मुखिया निश्चित हो। जहाँतक हो सके, इसमे हिन्दू, मुसलमान अथवा दूसरे ऐसे दल न बने। ठीक तो यह है कि टुकडी एक-एक टोलेकी ही बने। जहाँ लोकमत सगठित हो चुका है वहाँ तो इसमे जरा भी कठिनाई नही होनी चाहिए। ऐसा सगठन लोकमतकी तैयारीका एक बडा लक्षण है।

यदि हरएक गाँवमे अच्छे काम करनेवाले लोग हो तो यह काम बिना किसी मेहनतके दो दिनमे हो सकता है। हमारे यहाँके गाँवोकी बस्ती बडी नही होती। एक दिन सवेरे उनकी सभा करके यह काम पूरा किया जा सकता है। मै जिस तहसीलमे जाऊँगा वहाँ पूर्वोक्त तमाम बातोकी जानकारी मिलनेकी आशा रखूँगा।

ऐसे छोटेसे कामका शीर्षक मैने 'लोहेके चने' क्यो रखा? इसलिए कि हम सिपाहीगिरी भूल गये है। हम परमार्थको भूल गये है। हम न जातिके रहे, न देशके। किन्तु हमे तो अपने लिए नही मरना है। हमे जनताके लिए मरना है। और जनताके लिए मरनेके पहले जनताका तैयार हो जाना जरूरी है वरना उसको तैयार करते हुए हमे मर मिटना होगा।

यह बिलकुल ही सच है कि हमे उद्यमकी आदत नही रही या फिर हम निरर्थक कामोमे अपना समय बिता रहे है और उन्हे करते हुए हम न लोक-सुखका खयाल करते है न लोक-सग्रहका। कुटुम्बसे आगे हमारी दृष्टि पहुँचती ही नही। हम सबका धर्म तो हमें यही शिक्षा देता है कि व्यक्ति कुटुम्बके लिए, कुटुम्ब गाँवके लिए, गाँव तहसीलके लिए, तहसील जिलेके लिए, जिला प्रान्तके लिए, प्रान्त भारतवर्षके लिए, और अन्तको भारतवर्ष सारे जगत्के लिए मरनेको तैयार हो जाये। इस स्वदेशाभिमानके लिए मै जी रहा हूँ और उसको प्रकट करनेके लिए मर मिटना मुझे जीवित रहनेके बराबर ही प्रिय है। उसके बिना जीवित रहना मृत्युके ही समान है। ससारमें अगर कोई सुख है तो वह है परदु खके लिए दु खी होना और दूसरेकी रक्षाके लिए स्वय मर जाना। ऐसा करनेवाले सहज सुखका उपभोग करते है। इसके लिए कोई भारी काम करना पडे, सो बात नही। सिर्फ हृदयको बदल देनेकी जरूरत है। जरा

विचार करते ही यह हो सकता है। इसमे देरी लगनेकी कोई बात नही है, क्योकि अपने पडोसीके लिए मरना तो आत्माका सहज-स्वभाव ही है।

तैयार हुई तहसील अगर इस तत्त्वको समझ जाये तो जो काम लोहेके चने चवानेसे भी कठिन मालूम होता है वह मुझ जैसे बूढेके लिए तैयार किये गये मुलायम चने चवानेसे भी अधिक आसान मालूम होगा।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २०–११–१९२१

२०३. सत्य क्या है?

अंग्रेजी धर्मशास्त्रमे एक कथा है। उसमे एक न्यायाधीशने प्रश्न किया — "सत्य क्या है?" उसका उत्तर उसे नही मिला। हिन्दू धर्म-ग्रथोमे सत्यके लिए हरिश्चन्द्रने सर्वस्व अर्पण कर दिया और खुद स्त्री-पुत्र-सहित चाण्डालके हाथ बिक गये। (उस जमानेमे अस्पृश्यताकी न जाने क्या स्थिति रही होगी?) इमाम, हसन और हुसैनने सत्यकी खातिर अपने प्राण दे दिये।

जो भी हो, पर उस न्यायधीशको अपने सवालका जवाव नही मिला। हरिश्चन्द्र जिसे सत्य समझते थे उसके लिए मिटकर वे अमर हो गये। इमाम हुसैनने जिसे सत्य जाना उसके लिए अपना प्यारी देहतक दे डाली। सम्भव है हरिश्चन्द्र और इमाम हुसैनका सत्य ही हमारा सत्य न हो; लेकिन इस परिमित सत्यके उपरान्त एक शुद्ध सत्य है। वह अखण्ड है, सर्वव्यापक है। परन्तु वह अवर्णनीय है। क्योकि सत्य ही परमेश्वर है अथवा परमेश्वर ही सत्य है। दूसरी सब चीजे मिथ्या और असत्य है, अर्थात् उनमे जिस परिमाणमें जितना सत्य है वही ठीक है।

अतएव जो सत्यको जानता है, मन, वचन और कायासे सत्यका आचरण करता है, वह परमेश्वरको पहचानता है। इससे वह त्रिकालदर्शी हो जाता है। उसे इसी देहमें मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

ऐसा एक भी सत्याचारी यदि ३१ दिसम्बरके पहले तैयार हो जाये तो स्वराज्य मिला ही रखा है।

हममे से कितने ही तो केवल सत्याग्रही है — उन्हे सत्यके आचरणका आग्रह है। और वे भी शायद वाणीके सत्यतक ही पहुँच पाये हो। इससे स्पष्ट हो जायेगा कि सत्यका पालन कोई आसान वात नही है।

एक मित्रने मुझसे पूछा "आप तो सत्य-व्रतका पालन करते है। फिर भी आपने श्रीयुत दासके तारका अर्थ अपने पक्षमे लगा लिया[1] और बगालके १५ के वजाय २५ लाख प्रकट कर दिये। क्या इसमें आपने सूक्ष्म असत्यका आचरण नही किया?" निश्चय ही मैंने अपने पक्षमें अर्थ लगानेका कोई प्रयत्न नही किया था, अपने मनके अनुकूल अर्थ लगानेकी मुझे आदत नही है। वह तार रातको बारह बजेके बाद मिला। यह

१. गाधीजीने श्री चितरजन दासके एक तारका अर्थ गलत लगा लिया था।

बात मैं अपनी सफाईके लिए नहीं कह रहा हूँ बल्कि यह बतानेके लिए कह रहा हूँ कि सत्य तो सूलीपर चढाये जानेपर भी ज्योंका-त्यों ही झलकना चाहिए। जो तीनों कालमें सत्यका ही आचरण करनेकी इच्छा रखता है वह उतावली नहीं कर सकता। फिर सत्यवादी तो अनजानमें भी न असत्य कहता है, न करता है। वह असत्य कहने और करनेमें असमर्थ हो जाता है। इस व्याख्याके अनुसार मैंने सत्यका अवश्य ही उल्लंघन किया है।

पर मुझे सिर्फ इसी बातका सन्तोष है कि मैं सत्यका आग्रह रखनेके अतिरिक्त इस व्रतके विषयमें अधिक कोई दावा नहीं करता। जानबूझकर मैं असत्य भाषण नहीं कर सकता। एक बार अपने पू० पिताजीको धोखा देनेके लिए मैं जानबूझकर झूठ बोला था। इसके सिवा दूसरा कोई अवसर मुझे अपनी जिन्दगीमें याद नहीं आता। सत्य कहना और करना मेरा स्वभाव ही हो गया है। अलबत्ता जिस सत्यको मैं परोक्ष रूपमें ही जानता हूँ उसके पालन करनेका दावा मैं नहीं कर सकता। मुझसे अनजानमें भी अत्युक्ति हो जाती है, आत्मश्लाघा हो जाती है, मुझे अपने किये कामोंके वर्णनमें मजा आने लगता है। इस सबमें असत्यकी छाया है और ये सत्यकी कसौटीपर नहीं चढ सकते। जिसका जीवन सत्यमय है वह तो स्फटिक मणिकी तरह शुद्ध हो जाता है। उसके पास असत्य जरा देरके लिए भी नहीं ठहर सकता। सत्याचारीको कोई धोखा दे ही नहीं सकता, क्योंकि उसके सामने झूठ बोलना अशक्य हो जाना चाहिए। संसारमें सर्वाधिक कठिन व्रत सत्यका है। लाखों आदमी कोशिश करें तब कहीं इसी जन्ममें उनमें से एकाध पार उतर सके तो उतर सके।

मेरे सामने जब कोई असत्य बोलता है तब मुझे उसपर क्रोध आनेके बजाय स्वयं अपने ही ऊपर अधिक क्रोध आता है, क्योंकि मैं जानता हूँ कि अभी मेरे अन्तरमें कहीं असत्यका वास है।

सत्य शब्दकी उत्पत्ति सत् से हुई है। सत्का अर्थ है होना। तीनों कालमें एक ही रूपमें एकमात्र अस्तित्व परमात्माका ही है। जिस सज्जनने ऐसे सत्यकी भक्ति करके उसे अपने हृदयमें सदाके लिए स्थान दे दिया है उसे मेरा कोटि-कोटि नमस्कार है। इस सत्यकी सेवा करनेके लिए मैं जी-जानसे कोशिश कर रहा हूँ। मुझे विश्वास है कि उसके लिए हिमालयकी चोटीसे कूद पडनेकी हिम्मत मुझमें है। फिर भी मैं यह जानता हूँ कि अभी मैं उससे बहुत दूर हूँ। ज्यों-ज्यों मैं उसके नजदीक पहुँचता जाता हूँ त्यों-त्यों मुझे अपनी अशक्तिका ज्ञान अधिकाधिक होता जाता है और त्यों-त्यों यह ज्ञान मुझे नम्र बनाता जाता है। हाँ, अपनी अशक्तिको न जाननेके कारण अभिमान रखना सम्भव है। परन्तु जो जानता है उसका गर्व दूर हो जाता है। मेरा तो कभीका दूर हो गया है। तुलसीदासजीने अपनेको शठ कहा है। उनका मर्म मैं ठीक-ठीक समझ सकता हूँ। यह मार्ग शूरवीरोंका है, कायरोंका यहाँ काम नहीं। जो चौबीसों घण्टे प्रयत्न करता है, खाते, पीते, बैठते, सोते, सूत कातते, शौच आदि प्रत्येक काम करते हुए जो केवल सत्यका ही चिन्तन करता है, वह अवश्य सत्यमय हो जाता है। और जब किसी-के अन्दर सत्यका सूर्य सम्पूर्णतः प्रकाशित होता है तब वह प्रकाश छिपा नहीं रहता। तब उसे बोलने, बतलाने या समझानेकी जरूरत नहीं रहती। या उसके बोलनेमें इतना बल

होता है, इतना जीवन भरा होता है कि उसका असर लोगोपर तुरन्त होता है। ऐसा सत्य मुझमे नही है। हाँ, इस मार्गपर मै चल अवश्य रहा हूँ। अतएव मेरी यह दशा "रूख नही तँह रेड प्रधान" की तरह दीन है।

सत्यमे प्रेम होता है। सत्यमे अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय आदिका समावेश हो जाता है। पाँच यम तो केवल सुविधाके लिए बताये गये है। सत्यको जान लेनेके बाद जो हिंसा करता है, वह सत्यका त्याग करता है। सत्यको जाननेके बाद जो व्यभिचार करता है वह तो मानो सूर्यके रहते हुए अधेरेके अस्तित्वको मानता है। ऐसे शुद्ध सत्यका पूरी तरह पालन करनेवाला एक मनुष्य भी इस वर्षके अन्तके पहले निकल आये तो स्वराज्य मिले बिना नही रह सकता, क्योकि उसका कहना सबको मानना ही पडेगा। सूर्यके प्रकाशको किसीके सामने सिद्ध नही करना पडता। सत्य स्वय प्रकाशमान् और स्वयसिद्ध है। ऐसा सत्याचरण इस विषम कालमे कठिन तो है पर असम्भव नही। यदि कुछ ही लोग कुछ ही अशमे ऐसे सत्यके आग्रही हो जाये तो हम स्वराज्य प्राप्त कर ले और अगर कुछ लोग ऐसे सत्यके सख्त आग्रही हो जाये तो फिर कहना ही क्या है। पर हम सच्चे हो। सत्यके बदले सत्यका ढोग काम नही दे सकता। भले ही रुपयेमे एक आना हो, पर हो हम सच्चे। इस थोडे-बहुत सत्यमे भूले भटके, जान-अनजानमे वाणीके असत्यका किंचित् भी समावेश हरगिज न करे। मेरी तो यह महत्वाकाक्षा है कि इस धर्मयज्ञमे हम सब लोग सत्यका सेवन करनेवाले बने।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २०-११-१९२१

२०४. रेवरेंड जे० केलॉकके[1] नाम नोट

मौनवार, २१ नवम्बर, १९२१

मै अग्रेज मित्रोको वहाँ जानेके लिए[2] धन्यवाद देता हूँ। मै उठता नही हूँ क्योकि उठनेमे जोर पडता है। मेरी आकाक्षा है कि भले ही हमारे बीच अधिकसे-अधिक मतभेद हो किन्तु हम मित्रवत् रहें।

अग्रेजी प्रति (मी० डब्ल्यू० ४५०२) की फोटो-नकलसे।

१. विल्सन कालेज, बम्बईके प्रोफेसर।

२ विभिन्न जातियोंके एक सम्मिलित दलके सदस्योंकी हैसियतसे उपद्रवग्रस्त क्षेत्रोंमें विश्वास और शान्तिकी स्थापनाके लिए जानेके लिए।

२०५. वक्तव्य: उपवास तोड़नेसे पूर्व

[२१, नवम्बर, १९२१]

गाधीजीने सहयोगियो, असहयोगियो, हिन्दुओ, मुसलमानो, ईसाइयो और पारसियो-की एक सभामें अपना उपवास तोडा। हर सम्प्रदायके एक-एक प्रतिनिधिने वहाँ सद्-भावनापूर्ण भाषण दिये। कार्य-समितिके सदस्य भी वहाँ उपस्थित थे। उपवास तोडने-से पहले, गाधीजीने गुजरातीमें एक वक्तव्य दिया।[1] उसका अनुवाद नीचे दिया जा रहा है:

मित्रो,

इस छोटी-सी सभामे हिन्दुओ, मुसलमानो, पारसियो और ईसाइयोको एक साथ देखकर मेरा हृदय बहुत प्रसन्न है। मुझे आशा है कि आज सुबहका हमारा अल्प-फलाहार हमारी स्थायी मैत्रीका प्रतीक बन जायेगा। यद्यपि मै जन्मसे ही आशावादी हूँ, फिर भी मेरी आदत हवामे किले खडे करनेकी नही है। इसलिए इस सभासे मै धोखेमे नही आ सकता। सभी सम्प्रदायोंके बीच स्थायी मैत्रीकी हमारी आशा तभी पूरी हो सकती है, जब यहाँ उपस्थित हम सभी लोग उसकी स्थापनाके लिए निरन्तर प्रयत्न करते रहे। मै अपना उपवास आप लोगोके आश्वासनपर तोड रहा हूँ।[2] इन चार दिनोमें असख्य मित्र जिस प्रेमके साथ मुझे घेरे रहे है, उसका मुझे बराबर ध्यान रहा है। मै उनका सदा आभारी रहूँगा। उन्हीके आकर्षणसे मै शान्तिके इस लोकसे, जिसमे कि मै इन दिनो रह रहा था, इस तूफानी समुद्रमे फिर कूद रहा हूँ। यद्यपि मेरे कानोमे दुखद वृत्तान्त पडते रहे है, फिर भी मै आपको यकीन दिलाता हूँ कि खाली पेट रहनेके कारण मैंने शान्ति अनुभव की है। मै जानता हूँ कि उपवास तोड़नेके बाद मै उसे अनुभव नही कर सकूँगा। मानव होनेके कारण औरोंके दुख मुझे प्रभावित करते है, और जब मुझे उन्हे दूर करनेका कोई उपाय नही सूझता तो मेरा मानव-स्वभाव मुझे इतना विक्षुब्ध कर देता है कि मै मौतको गले लगानेके लिए उसी तरह तडपने लगता हूँ जैसे कि कोई मुद्दतसे बिछुडे अपने प्यारे मित्रके लिए तडपता है। इसलिए, मै यहाँ उपस्थित सभी मित्रोको यह चेतावनी देता हूँ कि यदि बम्बईमे सच्चे मायनोमे शान्ति स्थापित नही हुई और फिरसे दगे शुरू हो गये और यदि उनके फलस्वरूप मुझे और भी कडी परीक्षामे उतरना पडा, तो उन्हे उसपर आश्चर्य या दुख नही करना चाहिए। यदि शान्तिकी स्थापनामे उन्हे कुछ भी सशय हो, यदि हर सम्प्रदायमे अभी भी कटु भावना और सन्देह मौजूद है और यदि हम सब पिछली गलतियोको भूलने और माफ करनेको तैयार नही है, तो फिर मै यही चाहूँगा कि वे मुझपर

१ मूल गुजराती वक्तव्य उपलब्ध नहीं है।

२ देखिए परिशिष्ट २।

उपवास तोडनेके लिए जोर न डाले। इस प्रकारके सयमको मै सच्ची मित्रता की कसौटी मानूँगा।

हिन्दुओ और मुसलमानोपर मै खास जिम्मेदारी डालता हूँ। उनमे से अधिकाश असहयोगी है। उन्होने फिलहाल अहिसाका धर्म स्वीकार कर लिया है। उनके पास वहुसख्याकी शक्ति है। सरकारी सहायताके बिना भी, वे छोटे सम्प्रदायोके विरोधके सामने टिके रह सकते है। इसलिए यदि वे छोटे सम्प्रदायोके प्रति मैत्री और उदारताका भाव रखे तो सव ठीक हो जायेगा। मै पारसियो, ईसाइयो और यहूदियोसे प्रार्थना करूँगा कि वे भारतकी नई जागृतिको ध्यानमे रखे। हिन्दू-मुस्लिम मानव-समुद्रमे उन्हे अनेक रगोका जल मिलेगा। किनारेपर उन्हे गदला जल दिखाई देगा। मै उनसे आग्रह करूँगा कि उनके जो हिन्दू या मुसलमान पडौसी उनके प्रति दुर्व्यवहार करे उन्हे भी वे वर्दाश्त करे और उस दुर्व्यवहारकी सूचना अपने नेताओके द्वारा तुरन्त हिन्दू और मुसलमान नेताओको भेजे, ताकि उन्हे न्याय प्राप्त हो सके। वस्तुत मै यह आशा करता हूँ कि इस दुर्भाग्यपूर्ण कलहके फलस्वरूप सभी अन्तर्जातीय झगडोके निपटारेके लिए एक महाजन नियुक्त कर दिया जायेगा।

इस सभाका महत्व मेरे खयालमे इस वातमे है कि उसी एक ईश्वरके उपासक हम सव अपने मतभेदोके वावजूद, इस निर्दोप भोजमे एक साथ शामिल हो सके है। हम आज इन मतभेदोको कम करनेके उद्देश्यसे इकट्ठे नही हुए है, निश्चय ही हम अपने प्रिय सिद्धान्तोमे से किसी एकको छोडनेके लिए भी इकट्ठे नही हुए है। हम यहाँ इकट्ठे हुए है यह प्रदर्शित करनेके लिए कि हम, अपने सिद्धान्तोके प्रति सच्चे रहते हुए भी, एक-दूसरेके प्रति दुर्भावनासे मुक्त रह सकते है।

ईश्वर हमारे प्रयत्नको सफल वनाये।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २४–११–१९२१

२०६. साथी कार्यकर्त्ताओंसे

२२ नवम्बर, १९२१

साथियो,

ये पिछले कुछ दिन हमारी अग्नि-परीक्षाके दिन थे, और हमे परमात्माको धन्यवाद देना चाहिए कि हममे से कितने ही लोग उसमे कच्चे नही सावित हुए। अभी वहुतसे लोग मेरे सामने है, जिनके सिर फोड दिये गये है। ये घायल लोग तथा जिन लोगोकी लाशोका हाल मैने प्रामाणिक सूत्रसे सुना है, इस वातके यथेष्ट प्रमाण है। कई कार्यकर्त्ताओने शान्ति स्थापित करने तथा अपने सिरफिरे देशभाइयोके कोपको शान्त करनेके कार्यमे अपनी जाने गँवाई है, हाथ-पैर तुडवाये है, और गहरी चोटे खाई है। ये मौते और ये चोटे सावित करती है कि यद्यपि हमारे अनेक देशभाई भूल कर वैठे है, तथापि हममे कुछ लोग जरूर ऐसे है जो अपने लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए प्राणतक न्यौछावर

करनेपर कटिबद्ध है। अगर हम सब लोगोके हृदयमे अहिसाकी भावना अच्छी तरह रम गई होती, या थोडे ही लोगोने उसे हृदयगम कर लिया होता, पर दूसरे लोग सिर्फ निरुपद्रवी ही बने रहते, तो किसी तरहका खून-खराबा न होता। किन्तु होनहार ऐसी नही थी। ऐसी हालतमे शान्तिपूर्ण वातावरण बनानेके लिए कुछ लोगोके लिए स्वेच्छापूर्वक अपना खून बहाना जरूरी था। जबतक खून-खराबा करनेवाले दुर्बल लोग हमारे बीच मौजूद रहेगे तबतक दूसरे ऐसे कमजोर लोग भी निकलेगे ही जो मार-काटकी विद्यामे अधिक निपुण और हिंसाके साधनोसे सम्पन्न लोगोकी मदद लेना चाहेगे। इसीलिए तो पारसियो और ईसाइयोने सरकारकी सहायता माँगी और सरकारने दी भी —— यहाँतक दी कि उसने खुल्लमखुल्ला उनका पक्ष लिया और उनको हथियार देकर बदलेकी कार्रवाईके रूपमे खून-खराबा करनेके लिए उत्तेजित किया और उन लोगोमे से किसी एककी भी जान बचानेकी जरा भी परवाह नही की, जो शुरूमे तो दरअसल गुनहगार थे, परन्तु बादमे पारसियो, ईसाइयो और यहूदियोके क्षम्य कोपके शिकार हुए। इस तरह यह सरकार बिलकुल नग्नरूपमे सामने आ गई है। वह एक ऐसे पक्षके रूपमे सामने आई है जो शान्तिकी रक्षाके लिए ही नही, बल्कि अपने क्षतिग्रस्त समर्थकोकी आक्रामक हिसाको बल पहुँचानेके लिए हिमापूर्ण कार्य करता है। वैसे ईसाइयोका क्रोध सकारण था। परन्तु जब वे बेकसूर लोगोकी सफेद टोपियाँ छीन रहे थे और अपनी टोपियाँ न देनेवाले लोगोकी पिटाई कर रहे थे अथवा जब पारसी लोग आत्मरक्षाके लिए नही बल्कि केवल इसीलिए लोगोको मार रहे थे और उनपर गोलियाँ चला रहे थे कि वे व्यक्ति हिन्दू या मुसलमान या असहयोगी थे, तब सरकारी पुलिस और फौज निष्ठुरतापूर्ण उपेक्षाके साथ अलग खडी तमाशा देखती रही। मै उन दु खी और पीडित पारसी और ईसाइयोको तो क्षमा कर सकता हूँ, परन्तु पुलिस और फौजने तरफदारी करते हुए जो मुजरिमाना बर्ताव किया है, उसका कोई औचित्य नही दिखाई देता।

इसलिए असहयोगी कार्यकर्त्ताओका तो यही कर्त्तव्य हे कि वे सरकार तथा अपने इन पथ-भूले देशभाइयोके हाथो चोटे सहन करे। बस, हिसात्मक शक्तियोको निष्प्र-भावी बनानेका यह एक ही रास्ता हमारे लिए खुला है। शीघ्र स्वराज्य प्राप्तिका मार्ग तो यही है कि हम हिसाकी ताकतोपर अपना नियन्त्रण कायम कर ले —— सो भी अधिक हिसात्मक उपायोके द्वारा नही, बल्कि नैतिक प्रभाव डालकर। हमे यह सूरजकी रोशनीकी तरह साफ-साफ दिखाई देना चाहिए कि हिंसात्मक कार्रवाइयोके लिए अपने-आपको इतना प्रशिक्षित कर लेना, इतनी साधन-सामग्री जुटा लेना हमारे लिए असम्भव है कि उसके जरिये हम इस वर्तमान सरकारको बदल दे।

कई लोग यह खयाल करते है कि सत्रह तारीखके उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन यह दगा-फसाद खडा हो जानेसे युवराजके स्वागतके प्रति जनताका रोष जिस तीव्रतासे प्रकट हुआ है उतने कारगर तौरसे वह दूसरे ढगसे शायद ही होता। इस दलीलसे जितना अज्ञान प्रकट होता है उतनी ही दुर्बलता भी। अज्ञान इस दृष्टिसे कि हमारा लक्ष्य स्वागतको हानि पहुँचाना नही था, और दुर्बलता इस दृष्टिसे कि अब भी हम अपने बलकी जानकारीसे सन्तुष्ट रहनेकी अपेक्षा उसे दूसरोपर जाहिर करनेके लिए मरे जाते

है। काश कि मैं हरएकको समझा सकता कि जो कुछ हुआ उससे खिलाफत, पजाब और स्वराज्य-सम्बन्धी त्रिविध लक्ष्योकी ओर हमारी प्रगतिको धक्का पहुँचा है?

किन्तु यदि कार्यकर्त्ता लोग अपनी जवाबदेहीको समझकर उसके अनुसार कार्य करे तो अब भी बाजी हाथसे गई नही है। हमे बम्बईके उपद्रवी तत्त्वोका पूरा सहयोग हासिल करना चाहिए। हमे मिल-मजदूरोसे परिचित होना चाहिए। वे या तो सरकारका साथ दे या हमारा, अर्थात् या तो मार-काटमे शामिल हो या ऐसे उपद्रवोका सामना शान्तिके साथ करे। इसमे बीचका कोई रास्ता हो ही नही सकता। उन्हे हमारे कार्योमे दखल हरगिज न देना चाहिए। या तो वे हमारे प्रेमके अधीन हो जाये या असहाय होकर सगीनोके आगे सिर झुका दे। किन्तु हिसा करनेके लिए वे अहिसाके झडेकी आड लेनेकी कोशिश न करे। और अपना सन्देश उनतक पहुँचानेके लिए हमे एक-एक मिल मजदूरके पास जाना चाहिए और उसे अपने सघर्षके हर पहलूकी जानकारी करा देनी चाहिए। इसी प्रकार हमे दूसरे उपद्रवी लोगोसे भी मिलना चाहिए, उनसे मेल-मुहब्बत बढानी चाहिए और उन्हे इस सघर्षका धार्मिक स्वरूप समझनेमे मदद देनी चाहिए। हम उन्हे भुला नही सकते, पर उन्हे अपने सिरपर भी नही चढा सकते। हमे तो बस उनका सेवक बन जाना चाहिए।

हम जोर-जबर्दस्तीसे स्थापित शान्ति नही चाहते। हमे तो सरकारकी सहायताके बिना, और कभी-कभी उसके प्रत्यक्ष विरोधके बावजूद स्थायी शान्तिकी गारटीकी जरूरत है। हमे तो हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई और यहूदी——इन सबके हृदयोकी एकताकी जरूरत है। हाँ, ये आखिरी तीन जातियाँ पहली दो जातियोका अविश्वास कर सकती है और शायद करेगी भी। हालकी घटनाओने ऐसे अविश्वासको पक्का बनानेके कारण उपस्थित कर दिये हैं। इस अविश्वासको दूर करनेके लिए हमारी तरफसे खासतौर पर प्रयत्न होने चाहिए। अगर वे पूरे असहयोगी न बने या स्वदेशीको न अपनाये और स्वदेशीकी प्रतीक अर्थात् खादीकी सफेद टोपी न पहने, तो भी हमे उन्हे परेशान न करना चाहिए। अगर वे हर वक्त सरकारकी ही तरफदारी करे तो भी हमे चिढ उठनेकी जरूरत नही है। हमे तो सिर्फ प्रेम-भरी सेवाके बलपर ही उन्हे अपना बनाना है। वर्तमान स्थितिमें यही हमारी आवश्यकता है। इसका विकल्प है, गृह-युद्ध। और ऐसी दशामे, जब कि एक तीसरी विदेशी सत्ता कभी एक, और कभी दूसरेका पक्ष लेकर अपनी सत्ताकी जडे अधिकाधिक मजबूत करनेके लिए घात लगाये बैठी है, निकट भविष्यमे गृह-युद्धको असम्भाव्य ही मानना चाहिए।

और जो बात छोटी जातियोके विषयमे सच है, वह सहयोगियोके विषयमे भी उतनी ही सच है। हमे उनके प्रति भी अधीर न होना चाहिए, उनकी हरकतें सहन करनी चाहिए। अगर हम सरकारके साथ असहयोग करनेके लिए अपनेको स्वतन्त्र मानते है, तो फिर सरकारके साथ सहयोग करनेकी उनकी स्वतन्त्रताको भी हमे स्वीकार करना चाहिए। अगर हमारी सख्या कम होती और सहयोगी लोग अधिक सख्यामे होनेके कारण हमपर हिसा करने लगते, तो हमें कैसा लगता? अपने विरोधियोके हृदयको जीत लेनेके जितने भी तरीके दुनियाको मालूम है उनमें सबसे अधिक

सफल और कारगर तरीका अहिंसात्मक असहयोग ही है। हमारे इस सघर्षका उद्देश्य ही यह है कि हम अग्रेजो-सहित अपने हरएक प्रतिपक्षीको इसी उपायसे अपने पक्षमे कर ले। और यह हम तब ही कर सकते है जब कमजोरसे-कमजोरसे लेकर बलवानसे-बलवान मनुष्यके प्रति द्वेष-भावका त्याग कर दें। और द्वेष-भावका त्याग हम उसी अवस्थामे कर सकते है, जब हम अपने अन्त स्थित विश्वासकी खातिर उन लोगोका जो उस सत्यको नही देख सकते, शिरोच्छेद न करे, बल्कि जिस सत्यका प्रतिपादन हम करते है, उसके लिए मरनेको तैयार हो जाये।

आपका विश्वस्त साथी,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]
यग इडिया, २४–११–१९२१

२०७. टिप्पणियाँ

शौकत अलीका अभाव

अपनी कठिन परीक्षाके इन दिनोमे मुझे मौलाना शौकत अलीका अपने साथ न होना बहुत खटकता रहा है। मुसलमान भाइयोको मै किसी मुसलमान भाईके जरिये ही प्रभावित कर सकता हूँ। वैसे कितने ही बहादुर और नेक मुसलमान भाई है जिनसे मेरा परिचय है, परन्तु मौलाना शौकत अली मुझे जितनी अच्छी तरह जानते है उतनी अच्छी तरह दूसरे कोई मुसलमान भाई मुझे नही जानते। अब तो मै देखता हूँ कि उनका काम भी मुझे खुद ही करना पडता है। वे सब बाते मुसलमान भाइयोसे खुद मुझे ही कहनी पडती है, जिन्हे मै खासतौर पर उनके लिए रख छोडता था। मै देखता हूँ कि पहले ही मेरी एक अपीलका गलत अर्थ लगा लिया गया है। इस समय अगर मौलाना शौकत अली मेरे साथ होते तो अपनी अपीलमे मुझे मुसलमानोके सम्बन्धमे खासतौर पर एक पैरा लिखना ही न पडता। और, अगर १७ तारीखको वे बम्बईमे होते तो शायद यह दगा हुआ ही न होता। कितनी ही बाते जो हुई है वे न हो पाती। सचमुच अगर मियाँ छोटानी १७ तारीखको बम्बईमे होते, या श्री अहमद हाजी खत्री रोग-शैयापर न पडे होते, तो घटनाओका रुख कुछ और ही होता। पर बीती हुई बातोपर सिर धुननेकी मेरी इच्छा नही। मौलाना शौकत अलीका जिक्र मैने यहाँ अपने मुसलमान भाइयोको यह विश्वास दिलानेके लिए किया है कि मै मौलाना शौकत अलीके हिस्सेके काम भी अपने ऊपर लेनेको तैयार हूँ और मै उनसे आशा करता हूँ कि वे मुझे गलत नही समझेगे। उनके कामको मै अपनी जिम्मेदारी समझता हूँ और जानबूझकर तो उनके साथ मै कभी दगा नही करूँगा। इसी प्रकार मित्रोसे भी मेरा अनुरोध है कि जहाँ वे मुझे भूल करते देखें, वहाँ नि सकोच मुझे बता दे, और मै उन्हे यकीन दिलाता हूँ कि अगर मुझे अपनी भूलका इत्मीनान हो जायेगा

तो मैं उसे पूरी तरह स्वीकार करनेमे कभी पीछे नही हटूँगा। पर मै उन्हे पहले ही इतना जताये देता हूँ कि मैं आम तौरपर जल्दीमे अथवा बिना काफी आधारके कोई वात नही करता। अतएव अगर मैं अपनी भूलोको आसानीसे स्वीकार न करूँ, तो इसपर वे चकराये नही। मुझे जो इस विषयपर यहाँ इतना लिखना पडा है, इससे यही सूचित होता है कि दोनो जातियोको एक दूसरेके विषयमे या एक-दूसरेकी कोई बात बडी सावधानीके साथ लिखनी पडती है। यह है तो बर्फकी पतली परतके ऊपर चलने-जैसा खतरनाक खेल ही, परन्तु हमे तो तथ्योको उनके यथार्थ रूपमे स्वीकार करना चाहिए और उनका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करना चाहिए।

अच्छा और बुरा

जब मैं कहता हूँ कि इन चार दिनोके दौरान बम्बईके दगेके बारेमे मेरे पास अच्छी और बुरी दोनो तरहकी खबरे आती रही है तो आशा है पाठक इस बातको समझेगे। असहयोगी घायल हुए है। हिन्दू और मुसलमान पारसियोपर हमला कर रहे है। पारसी उनपर गोलियाँ चला रहे है। ईसाई लोग खादीकी टोपी और कपडे पहननेवालोपर टूट पडे है। हिन्दू और मुसलमान ईसाइयोपर हमले कर रहे है। इन छिट-पुट खबरोके बीच यह खुशखबरी भी आई कि पारसी दूसरे पारसियोके हाथोसे हिन्दू और मुसलमानोकी जाने बचा रहे है, कुछ ईसाई भी हिन्दू मुसलमानोको बचा रहे है और हिन्दू-मुसलमान दोनो पारसियो तथा ईसाइयोको आश्रय दे रहे है, तथा असहयोगी अपनी जानकी जोखिम उठाकर भी शान्तिकी स्थापनाके लिए प्रयत्न कर रहे है। मुझे अपने मनमे दो अत्यन्त शक्तिशाली और परस्पर-विरोधी भावनाओका सघर्ष झेलनेका दुर्भाग्य इससे पूर्व कभी नही मिला है। और फिर ऐसी नाजुक और विकट स्थितिमे मित्रोका पथ-प्रदर्शन करना, उनको मौतके जबडेमे ढकेलना और साथ ही अपनेको मौतसे बचाये रखना! कितनी कष्टकर स्थिति थी? ऐसे कठिन अवसरपर, बस, उपवास ही मेरा बाहरी सहारा और हार्दिक प्रार्थना ही मेरा आन्तरिक बल रहा है। १७ तारीखको तो मुझे लगा, मानो मेरा सारा बल ही जाता रहा हो। मैं जन-समुदायको स्थायी तौरपर प्रभावित क्यो नही कर पाया? मेरा अहिंसाका बल कहाँ चला गया? मेरा कर्त्तव्य क्या है? जिनके साथ ज्यादती हुई है उनसे मै यह तो कह नही सकता, और कह भी कैसे सकता हूँ, कि सरकारकी मदद लो? हमारे यहाँ पचायते भी नही, जो इन्साफ करे। ऐसा कोई नही दिखाई देता जिसके पास मैं जाकर कहूँ और जो बीचमे पडकर सुलह करा दे। यह तो मैं कर नही सकता और न करूँगा ही कि शारीरिक बलके सहारे शान्ति स्थापित करानेके लिए लोगोकी कुछ टुकडियाँ बनाऊँ। तो अब मै उन लोगोको किस तरह राहत पहुँचाऊँ जो उपद्रवियोकी हिंसाके शिकार हुए है। क्या मै उन पारसियो या ईसाइयोकी क्रोधाग्निमें, जिनका कुपित होना बेजा नही है, अपनी आहुति दे दूँ? पर इससे तो उलटे खूनकी नदियाँ बह जायेंगी। एक सिपाहीकी हैसियतसे तो मुझे एक भी अनिवार्य सकटको पीठ दिखाना लाजिम नही था। परन्तु बिना सोचे-विचारे अपनी जान जोखिममें डालना भी मेरे लिए ठीक नही था। तब मुझे करना क्या चाहिए? आखिर उपवासका विचार मेरे मनमें आया और इसने

मेरी आत्माको राहत दी। अगर आदमीके हाथो अपनेको मरवा डालना मेरे लिए उचित नही, तो जवतक मेरी अर्जी प्रभुके यहाँ मजूर न हो तवतक अनशन-व्रत लेकर मुझे ईश्वरसे यह प्रार्थना करनी चाहिए कि ईश्वर मुझे उठा ले। मुझ-जैसा दिवालिया और कर भी क्या सकता था? निर्दोष जनतामे अपनी साखका मै भरोसा नही कर सकता। १७ तारीखको उस साखके वलपर मैने खुद ही जनताके सामने जो हुडी पेश की थी उसको जनताने सिकारनेसे इनकार कर दिया — मेरी वात माननेसे इनकार कर दिया।[1] अव तो मुझे हर हालतमे खोयी हुई साख फिरसे जमानी थी या उसकी कोशिश करते हुए मर-मिटना था। अव मै वस ईश्वरका ही एक सहारा ले सकता था, जिससे वह अपना काम मुझसे करवानेके लिए मेरी उठी हुई साखको फिर जमानेमें मेरी मदद करे। और ऐसा करनेका एक ही उपाय दिखाई दिया — यह कि मै अपनेको अधिकसे-अधिक विनम्र वनकर उसके सामने साष्टाग पड जाऊँ और उसका दिया अन्न खानेसे इनकार करूँ। मुझे हजारो तरहसे अपनी सच्चाई उसपर प्रकट करनी चाहिए और उससे यह प्रार्थना करनी चाहिए कि अगर मै तेरा काम करनेके लायक सावित न होऊँ तो मुझे वापस वुला ले और मेरी योग्यता और अपनी इच्छाके अनुसार नये सिरेसे मेरा निर्माणकर। और इसलिए मैने अनाहार-व्रत लिया है। अव ये खवरे सुनकर कि 'मेरे साथियोको चोटे लगी है या उपद्रवकारियोको चोटे लगी है, मेरा चित्त अस्थिर नही होता। मेरा तो एकमात्र सहारा मेरी निजी अहिसा ही है। अगर वह असर नही कर सकती, तो मुझे उसके लिए चिन्ता करना उचित नही। भारतके दूसरे भागोमे हजारो लोग मरते है। उनकी मृत्युसे मेरे हृदयको दु ख होता है, पर उनके लिए मै चिन्तित नही होता। उसी प्रकार इस मामलेमे भी, जव कि मै जो-कुछ जानता हूँ वह सव कर चुका हूँ, मेरा चिन्तित और व्याकुल होना व्यर्थ ही है। इस प्रकार यह उपवास मेरे लिए प्रायश्चित्त, आत्मशुद्धि और भूल-सुधार सव-कुछ रहा है। यह कार्य-कर्त्ताओको एक चेतावनी भी है कि इस सघर्षमें वे मेरे साथ खिलवाड न करे। इस युद्धमें सिर्फ वही लोग शामिल रहे जो सच्चे दिलसे अहिसाके कायल हो। ऐसे सच्चे और पक्के कार्यकर्त्ता अगर इने-गिने ही होगे तो भी यह लडाई वेखटके और विना उलझनोके चलाई जा सकेगी। पर कार्यकर्त्ता अगर नेक और सच्चे न हो, तो उनकी सख्या वहुत होने पर भी, उनसे इस आन्दोलनको हानि ही पहुँचेगी। और अन्तिम वात यह कि उपवास शीघ्र शान्ति स्थापित करनेका एक उपाय है। लेकिन यह अन्तिम वात तो एक व्युत्पन्न वस्तु है, जो प्रायश्चित्त, आत्म-शुद्धि और भूल-सुधारके फलस्वरूप प्राप्त होती है। यह एक ईश्वर-प्रदत्त साख है।

कार्यकर्त्ताओ, सावधान!

उपवास तोड देनेके सम्वन्धमे मुझसे अनेक तरहसे अनुनय-विनय किया जा रहा है। कई लोगोने तो मेरे दु खसे दु खी होकर खुद भी उपवास करना आरम्भ कर दिया है। मै ऐसे सव सज्जनोको यह जता देना चाहता हूँ कि वे भूल कर रहे है। मेरे लिए तो उपवास जरूरी हो गया था। मै तो अपराधी था, दिवालिया था। मेरे लिए

1. देखिए "भाषण वम्बईकी सार्वजनिक सभामें", १७-११-१९२१।

प्रायश्चित्त एक आवश्यक चीज थी। दूसरे लोगोका काम तो यह है कि वे स्थितिको समझे, अपने अन्दर अगर हिंसा-भावका लेश भी बाकी रह गया हो तो उसका त्याग करे, दूसरोमे अहिंसाका प्रचार करे और अच्छी तरह याद रखे कि हिंसाका तनिक भी उद्रेक हमारे कामको बिगाडनेवाला है। वे चरखेको अपनी प्रिय वस्तु बना ले और केवल हिन्दू-मुस्लिम एकताका ही नही, बल्कि तमाम जातियोमे एकता स्थापित करनेके लिए प्रयत्न करे। हिन्दू-मुस्लिम एकताका अर्थ अगर यह न हो कि वे दोनो जातियाँ अपने हितोके मुकाबले छोटी जातियोके हितोको तरजीह दे, तो ऐसी हिन्दू-मुस्लिम एकता किसी कामकी नही। भारत-भूमिमें पैदा हुए ईसाई और यहूदी विदेशी नही है और न ही पारसी लोग विदेशी है। उनसे आगे बढकर मित्रता करना, उनकी सेवा और सहायता करना, खास तौरपर हमसे उन्हे कोई हानि न पहुँचे इससे उनकी रक्षा करना आवश्यक है। इसी प्रकार असहयोगी कार्यकर्त्ताओको सहयोगी लोगोके साथ भी मेलजोल रखनेकी आवश्यकता है। वे चाहे अग्रेज हो, चाहे हिन्दुस्तानी, हमे उनके लिए अपने मुँहसे एक भी अपशब्द न निकालना चाहिए। हमे तो अपने उद्देश्यकी सच्चाई और कष्ट-सहनकी अपनी क्षमतामे ही विश्वास करना चाहिए। कमसे-कम फिलहाल तो हमने ईश्वरको साक्षी रखकर दुनियाके सामने यह घोषणा की है कि हम किसी भी अग्रेजको किसी तरहसे नुकसान न पहुँचायेगे, भले ही वह हमारे साथ कुछ भी क्यो न करे। इस प्रकार दुनियाके सामने ऐसी प्रतिज्ञा करके अगर उसकी ओटमे हम किसी भी अग्रेज या हिन्दुस्तानी सहयोगीपर हाथ उठायेगे तो हम ईश्वर और दुनियाके सामने गुनहगार ठहरेगे।

शान्तिका अर्थ

अपनी दूसरी अपीलमे मैने शान्तिकी जो बात कही है, मित्रोने उसका अर्थ गलत समझा है। मै जो शान्ति चाहता हूँ वह असहयोगियोको स्थापित करनी है। इसका अर्थ यह नही कि कार्यका एक समान आधार ढूँढनेके लिए हम सिद्धान्त या नीतिको छोड दे। वह, मेरे खयालमे, एक असम्भव कार्य है, क्योकि विभिन्न दलोकी पद्धतियाँ एक-दूसरेसे बिल्कुल भिन्न है। जब एक दल देशकी भलाई कौंसिलोमे जानेमे देखता हो और दूसरा उनसे बाहर रहनेमे, तो उनमे मेल कैसे हो सकता है? किन्तु यदि हममे मतभेद है तो यह आवश्यक नही कि हम एक-दूसरेके साथ बदसलूकी करे, या एक-दूसरेका सिर फोडे। अहिंसाके सिद्धान्तका, जबतक हम उस सिद्धान्तपर चल रहे है, तकाजा है कि हम बदला लेनेके लिए अपना हाथ न उठायें। मुझे विश्वास है कि यदि हम सहिष्णुताका वातावरण पैदा कर सकें, तो हम अपना क्षेत्र बेहद बढा सकते है। आज हम अपने ही सन्देहो और सशयोमे जकडे हुए है। हम यह निश्चित रूपसे नही कह सकते कि वे हजारो लोग जो हमारी सभाओमे जमा होते है, अहिंसाका पालन करेगे ही। यदि हम इतने लोकप्रिय न होते तो अबतक इससे कही अधिक प्रगति कर लेते। और इसके लिए हममे अपने विरोधियोके लिए सद्भाव होना परम आवश्यक है। हमे सरकार या उसके समर्थकोकी गलतियो और कमियोकी बाते नही करनी चाहिए। हमे तो सार्वजनिक तौरपर अपनी शक्ति, अपने भाषणो, लेखो और कार्यो, इन सभीका प्रयोग

कार्यक्रमको पूरा करनेमे ही लगा देना चाहिए। हमे प्रवलसे-प्रवल उपद्रवकारी तत्त्वोको भी कावूमे करना चाहिए, तव हम शीघ्र ही स्वराज्य स्थापित कर सकते है।

चिकित्सा-शास्त्रके छात्रोके वारेमें कुछ और

मै इस सप्ताह विशाखापट्टमके चिकित्सा-शास्त्रके छात्रोसे सम्वन्धित पत्र-व्यवहार प्रकाशित कर रहा हूँ। पत्र-व्यवहार लम्वा, पर साथ ही रोचक और शिक्षाप्रद भी है। इससे चिकित्सा अधिकारियोकी ओर सरकारकी भी मनोवृत्तिका पता चल जाता है। छात्रोको कालेजसे निकलनेके अन्तिम आदेश मद्रास सरकारकी सलाहपर या उसकी जानकारीमे दिये गये थे। पाठक इसमे देखेगे कि पोशाक-सम्वन्धी नियमोका कडाईसे पालन नही होता था और टोपियोको काले रगमे रँग देनेके वाद तो उनपर पावन्दी लगानेका कोई कारण ही नही रह जाता था। किन्तु छात्रोने खादी पहननेका जो साहस दिखाया, कालेज अधिकारियोके क्रोधको भडकानेके लिए वही काफी था।[1] पाठक यह भी देखेगे कि पोशाक-सम्वन्धी विनियम कितने अपमानजनक है। चोटी या गजे सिरको, जो धर्म और सम्मानका सूचक है, ढकना जरूरी है क्योंकि इससे पाश्चात्य प्रोफेसरोकी पाश्चात्य रुचिको ठेस पहुँचती है। छात्र हिन्दुस्तानी जूते पहनकर कालेजके अन्दर दाखिल नही हो सकते। उन्हे अग्रेजी जूते पहनने होगे या फिर नगे पाँव रहना होगा। इस तरह छात्रोको कच्ची उम्रमे ही, जव उनके मस्तिष्क ग्रहणशील होते है, राष्ट्रीय वेशभूषाको त्यागनेकी शिक्षा दी जाती है। वस्तुत देशी जूते हिन्दुस्तानकी जलवायुमे अग्रेजी जूतोसे कही अच्छे होते है। उनके खुले होनेसे पैरोको हवा लगती रहती है, और इसलिए वे सफाई और स्वास्थ्यकी दृष्टिसे वेहतर होते है। मोजोका उपयोग भारतकी गर्म जलवायुमे गँवारू और विलकुल वेकार है। मोजे पहननेवालोको मालूम है कि यहाँकी आवहवामे उनके मोजोसे कितनी वू आने लगती है। यदि हम गुलाम न होते तो इन सव हानिकारक और अनुचित नये तौर-तरीकोको विना किसी हिचकके तुरन्त दूर कर सकते थे।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २४-११-१९२१

१. देखिए "टिप्पणियाँ", १७-११-१९२१ का उप शीर्षक "वहादुर छात्र"।

२०८. नैतिक मसला

नैतिक आधारसे स्खलित होनेका मतलब है, धर्मके मार्गसे च्युत हो जाना। धर्म नैतिकताकी अवहेलना करके चले ऐसा कुछ सम्भव ही नहीं है। उदाहरणके लिए, मनुष्य झूठा, निष्ठुर या संयमहीन होते हुए ईश्वरका कृपापात्र कभी नहीं हो सकता। बम्बईमें असहयोगसे हमदर्दी रखनेवाले लोगोंने अपना नैतिक सन्तुलन खो दिया। वे उन पारसियों और ईसाइयोंपर क्रुद्ध हो उठे, जो युवराजके स्वागत-समारोहमें शरीक हुए थे और उन्होंने उन्हें "एक सबक सिखाने" की कोशिश की। उन्होंने वैर और बदलेको न्योता दिया और वही उन्हें मिला। १७ तारीखके बाद तो मारकाटकी एक खासी बाजी-सी लग गई, जिसमें फायदा तो वास्तवमें किसीका भी नहीं हुआ, हाँ, हानि अलबत्ता सबकी हुई।

स्वराज्यका यह रास्ता नहीं है। भारत बोल्शेविज्म, विप्लववाद नहीं चाहता। यहाँके लोग इतने शान्तिप्रिय है कि वे अराजकताको सहन ही नहीं कर सकते। वे तो उसीके आगे घुटने टेक देंगे जो तथाकथित शान्तिकी स्थापना कर दे। भारतीयोंकी इस मनोवृत्तिको आपको समझना चाहिए। शान्तिके पीछे इस तरह पड़ जाना अच्छा है या बुरा, इसकी छानबीनकी जरूरत यहाँ नहीं। आम तौरपर भारतके मुसलमान दुनियाके दूसरे मुल्कोंके मुसलमानोंसे बिलकुल ही भिन्न हैं। भारतके वायुमण्डलमें रहनेके कारण दूसरे देशोंके अपने धर्म-भाइयोंकी बनिस्बत उनके मिजाजमें ज्यादा नरमी आ गई है। अपनी जानोमालपर किसी यथार्थ संकटको वे बहुत लम्बे अर्सेतक बर्दाश्त नही कर सकते। और हिन्दुओंके मिजाजकी नरमी तो मशहूर ही है। वे लगभग दयनीय स्थितितक नरम हैं। पारसी और ईसाई भी कलहकी अपेक्षा शान्तिके ही अधिक प्रेमी हैं। सच तो यह है कि धर्मको हमने प्रायः शान्तिका सेवक ही बना लिया है। यह मनोवृत्ति हमारी कमजोरी भी है, और साथ ही हमारा बल भी।

हमारी इस मनोवृत्तिका जो उत्तम भाग है, धार्मिक भाग है, उसीका पोषण हमे करना चाहिए। "धर्मके मामलेमें कोई दबाव न होना चाहिए।" क्या हमारे लिए स्वदेशी-व्रतका पालन करना, अतएव खादी पहनना, धर्म नही है? परन्तु अगर दूसरे लोगोंका धर्म यह न चाहता हो कि स्वदेशीको अपनाये, तो हमे उन्हे इसके लिए मजबूर न करना चाहिए। ऐसा करके हमने 'कुरान शरीफ' में दोहराये गये विश्वजनीन सिद्धान्तके प्रतिकूल आचरण किया है, और उस सिद्धान्तका यह अर्थ नही है कि धर्मको छोडकर दूसरे मामलोमे जबर्दस्ती की जाये। उस आयतका मतलब तो यह है कि जिस मजहबपर हमारी पक्की श्रद्धा हो उसके लिए भी दूसरोपर जबर्दस्ती करना अगर बुरा है तो उससे कम दर्जेके मामलोमे ऐसा करना तो और भी बुरा है।

इसलिए हम तो अपने प्रतिपक्षियोको युक्तियाँ और दलीले पेश करके ही समझा सकते हैं। और अधिकसे-अधिक हम उनके साथ अहिंसात्मक असहयोग कर सकते है, जैसा कि सरकारके साथ कर रहे हैं। लेकिन खानगी मामलोमे हम उनके साथ

असहयोग नही कर सकते, क्योंकि हम उन लोगोके साथ व्यक्तियोके रूपमें तो असहयोग कर नही रहे हैं, जो सरकारी तन्त्र चलाते हैं, हम तो उनकी उस शासन-प्रणालीके साथ असहयोग कर रहे है। गवर्नरकी हैसियतसे सर जॉर्ज लॉयडको हम सरकारी काममें मदद देनेसे इनकार करते हैं, परन्तु एक अग्रेज भाईके नाते हम सर जॉर्ज लॉयडको सामाजिक सेवाओसे कभी वचित नही कर सकते।

मुझे यह कहते दु ख होता हे कि यह शरारत हिन्दुओ और मुसलमानोसे ही शुरु हुई। सामाजिक रूपसे लोगोको तग किया गया और उनके साथ जवर्दस्ती की गई। हाँ, मै स्वीकार करता हूँ कि मैंने हमेशा ही इन वातोकी उतने जोरसे निन्दा नही की जितनी कि मै कर सकता था। जव यह प्रवृत्ति आम वनने लगी थी तव मै आन्दोलनसे अपनेको अलग कर सकता था। पर हमने शीघ्र ही अपने मार्गको स्थितिके अनुसार सुधार लिया। हम अधिक सहनशील हो गये। परन्तु आँखोको स्पष्ट न दिखे, ऐसे रूपमे जवर्दस्ती चलती रही। मैंने उसे चलने दिया — सोचा कि यह आप ही अपनी मौत मर जायेगी। परन्तु वम्वईमे मैंने देखा कि वह मरी नही। १७ तारीखको तो उसने वडा ही उग्र रूप धारण कर लिया।

हमने अपने हाथो अपने पाँवपर कुल्हाडी मार ली। हमने खिलाफतके कामको और उसके साथ ही पजाव और स्वराज्यके कामको भी नुकसान पहुँचाया। अव हमको अपनी भूल सुधारनी होगी और अल्पसख्यक जातियोको अच्छी तरह यकीन दिलाना होगा कि हम उनको जरा भी तग न करेगे। अगर ईसाई लोग हेट लगाना और अग्रेज बनकर रहना पसन्द करते है, तो उन्हे इसकी आजादी होनी चाहिए। अगर पारसी अपने फेटेको ही पहनना चाहे, तो उन्हे हर तरहसे इसका हक हे। अगर ये दोनो सरकारके साथ रहनेमे ही अपना हित समझते हो, तो हम सिर्फ दलीलोसे समझाकर ही उनको गलतीसे विमुख कर सकते हैं, उनको मारपीट कर नही। हम जितनी ज्यादा जवर्दस्ती करेगे उतनी ही अधिक सुरक्षा हम सरकारको प्रदान करेगे, भले ही इसका कारण सिर्फ यही हो कि हमारी वनिस्वत सरकारके पास जवर्दस्ती करनेका ज्यादा कारगर साधन मौजूद हे। अगर हम सरकारकी अपेक्षा ज्यादा वलप्रयोग करते हैं, तो इसका मतलव होगा भारत-माताको और भी अधिक गुलामीमें जकडना।

स्वराज्यका अर्थ है — हरएकको आजादी हो — छोटेसे-छोटे लोग भी अपनी मर्जीके मुताविक चले और रहे — उनकी स्वाधीनतामे वलपूर्वक कोई भी हस्तक्षेप न किया जाये। और यह अहिंसात्मक असहयोग स्वतन्त्र लोकमत तैयार करने और उनको प्रभावपूर्ण वनानेका ही उपाय है। यह स्पष्ट ही है कि जव देशमें पूर्ण मत-स्वातन्त्र्य होगा, तव वहुमतके अनुसार ही काम चलेगा। यदि हमारी सख्या कम हो, तो जोर-जवर्दस्तीके वावजूद हम अपने धर्मपर आरूढ रहकर सच्चे धर्मनिष्ठ सिद्ध हो सकते हैं। हजरत मुहम्मद वहुमतके दवावको मानकर भी अपने धर्मपर दृढ वने रहे, और ज्यों ही वहुमत उनकी ओर हुआ, उन्होने अपने अनुयायियोंसे साफ कह दिया कि "मजहवके मामलेमे जोर-जवर्दस्ती न होनी चाहिए।" शाब्दिक या शारीरिक रूपसे

हिंसा करके हमें हजरत मुहम्मदके बतलाये मार्गसे भटकना नहीं चाहिए, और अपनी ही मूर्खतासे प्रगतिके चक्रको पीछेकी ओर नहीं घुमाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २४-११-१९२१

२०९. बम्बईके नागरिकोंसे[1]

बम्बई
२६ नवम्बर, १९२१

ईश्वरकी कृपासे एक बार फिर हमारे बीच शान्ति स्थापित हो गई है। अब हम एक-दूसरेका सिर फोड़ने, एक दूसरेपर पथराव करने और इमारतें जलानेमें नहीं लगे हुए हैं। फिर भी, हममें से कुछ लोग अब भी नाराज हैं, उनमें कटुता है और हमारे भीतर भय है। यह बात मिलनेवाले अनेक लोगों और पत्र-लेखकोंकी भाषासे जाहिर होती है। हम तभी इस शान्तिको सच्ची शान्ति कह सकते हैं जब हमारे मन इन कलुषोंसे मुक्त हो जायें। ऐसी स्थिति उत्पन्न करनेके लिए पहला काम यह करना चाहिए कि हिन्दू और मुसलमान साफ दिलसे अपना अपराध स्वीकार करें। जिन्होंने पहले हाथ उठाया, दोषी उन्हींको माना जायेगा। यदि मैं अपनी बात किसीको अपशब्द कहकर शुरू करता हूँ तो उसके सारे नतीजेके लिए जिम्मेदार मैं ही होऊँगा। यदि हिन्दुओं और मुसलमानोंने लोगोंके सिरपरसे जबरदस्ती विदेशी टोपियाँ हटाकर या पत्थर चलाकर किसी वारदातकी शुरुआत की तो दोषी पक्ष उन्हींका है। इसके अलावा उनका बहुत भारी बहुमत है, और अधिकांशत: हिन्दुओं तथा मुसलमानोंने ही अहिंसाकी शपथ ली है। इसलिए पहले उन्हींको अपनी जिम्मेदारी समझनी चाहिए।

मैं यहाँपर कानूनकी निगाहसे जिम्मेदारीका विचार नहीं कर रहा हूँ। मैं तो केवल आदमी-आदमीके बीच पारस्परिक व्यवहारकी दृष्टिसे इस बातका विचार कर रहा हूँ। यदि पारसी और ईसाई, उनका जितना दोष है, उसे महसूस नहीं करते, तो स्थायी शान्ति प्रस्थापित करना कठिन है। जिस समय हिन्दुओं और मुसलमानोंने हिंसा शुरू की उस समय यदि पारसी और ईसाइयोंने जवाबमें हाथ न उठाया होता तो उन्हें देवदूत समझा जाता और उन्होंने संसारको अपने आत्मिक बलका अद्भुत परिचय दिया होता। वे अपने बचावमें हाथ उठाते, यह तो बिलकुल ठीक था, किन्तु उन्होंने केवल अपना बचाव ही नहीं किया वरन वे भी क्रुद्ध हो उठे और आत्मरक्षाकी सीमाओंसे आगे बढ़ गये। उनमें से कुछने जरूरतसे ज्यादा हिंसाका प्रयोग किया। और यदि वे उतना-भर स्वीकार नहीं करते तो तत्काल हार्दिक शान्ति पाना कठिन होगा, क्योंकि इस तथ्यके बावजूद कि पारसियों और ईसाइयोंको उत्तेजित किया गया था, हिन्दू और मुसलमान

१. यह अंग्रेजीमें 'वे टु पीस' (शान्तिका मार्ग) शीर्षकसे छपा था और प्रारम्भिक टिप्पणीमें बताया गया था कि यह गांधीजी द्वारा जारी की गई गुजराती अपीलका अनुवाद है।

उन्हे पूरी तरह बेगुनाह नही मानेंगे। यदि केवल एक ही पक्ष अपराध करता रहे और दूसरा बराबर धैर्यसे सहता रहे तो अपराधी पक्ष अपने प्रयत्नमे थक जायेगा। यदि क्रियाकी कोई प्रतिक्रिया ही न हो तो ससारका उद्धार हो जाये। लेकिन आमतौरपर हम गालीका जवाब तमाचेसे देते है। एक तमाचेका जवाब दोसे दिया जाता है और फिर उसका जवाब लातसे और लातका गोलीसे दिया जाता है। इस तरह पापका दायरा बराबर बढता जाता है। परन्तु आमतौर पर जो लोग "दाँतके वदले दाँत" के सिद्धान्तमे विश्वास रखते है, वे कुछ समय बाद एक-दूसरेको क्षमा कर देते है और दोस्त बन जाते है। क्या इस सामान्य नियमपर चलना असम्भव है? इसलिए मै पारसी और ईसाई दोस्तोसे यह कहनेमे नही झिझकता कि वे पारस्परिक क्षमा-दानके नियमपर चलकर एक दूसरेके अपराध भूल जायें।

परन्तु हिन्दुओ और मुसलमानोपर जो विशेष उत्तरदायित्व है, उसपर मै अवश्य ही जोर देता हूँ। पारसी और ईसाई क्षमा करे या न करे, हिन्दुओ और मुसलमानोको अपना अपराध स्वीकार करके, ईश्वरसे क्षमा माँगकर और शान्त रहकर अपने आपको शुद्ध करना है। जिन लोगोको क्षति पहुँची है या जिन्हे प्रियजनोसे वचित होना पडा है उन्हे इस तरहकी चोटोका असर अवश्य महसूस होगा। उनमे से कुछ तो इतने गरीब है कि नुकसान झेल ही नही सकते। हमे उनकी स्थिति समझनी चाहिए। और मुझे विश्वास है कि जो इस नुकसानकी मार सह नही सकते, ऐसे लोगोके नुकसानकी जाँच करने और अन्दाजा लगानेके लिए एक गैर-सरकारी समिति नियुक्त की जायेगी और यह समिति उन लोगोकी सहायताके लिए आवश्यक राशि सग्रह करेगी। साथ ही मुझे आशा है कि कोई भी पक्ष कानून या सरकारकी शरणमे नही जायेगा। यह सलाह मै सिर्फ एक असहयोगीके ही नाते नही दे रहा हूँ, यह सलाह अपने इस अनुभवके आधार पर दे रहा हूँ कि निजी पच-फैसले द्वारा ऐसे मामलोका अधिक सच्चा और उपयुक्त निपटारा होता है। कटुतासे बचनेका भी यही रास्ता है। शान्ति कायम करनेका सबसे आसान तरीका यह है कि हम अदालतमे एक-दूसरेके खिलाफ शिकायत करनेका खयाल छोडकर निरोधक उपायोकी ओर अपना ध्यान केन्द्रित करे ताकि ऐसा पागलपन फिर नही किया जा सके। और मुझे आशा है कि ऐसे उपाय अपनाकर बम्बई अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा फिर प्राप्त कर लेगा।

आपका सेवक,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १–१२–१९२१

२१०. सन्देश : वम्बईके मिल-मजदूरोंको[1]

[२७ नवम्बर, १९२१ के पूर्व]

मिलमें काम करनेवाले वन्धुओ,

यह सच है कि मैं आपको व्यक्तिगत रूपसे नहीं जानता लेकिन समस्त हिन्दुस्तानके मजदूरोंके लिए मैं मजदूर वना हूँ। इसलिए आपके साथ मेरा निकटका सम्बन्ध है। मेरी इच्छा है कि आप सव मिलोंके खुलते ही तुरन्त कामपर जायें और फिर कभी मालिकोंके छुट्टी दिये विना कामसे अलग न रहें और न किसी भी उपद्रवमें भाग लें।

आपका हितैषी,
मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
गुजराती, २७–११–१९२१

२११. उदार दलवालोंके नाम

[२७ नवम्बर, १९२१][2]

मित्रो,

हम सव दूसरी वातोंमें इतने व्यस्त हैं कि मलावारकी घटनाओंपर शायद ही उतना ध्यान दे रहे हों जितना कि देना चाहिए। इस झगड़ेको खत्म करना वहुत ही जरूरी हो गया है। यह सीधा-सादा मानवीयताका प्रश्न है। मोपला लोग चाहे कितने भी वुरे हों, पर उनके साथ मानवीयताका वर्ताव होना चाहिए। उनके वीवी-वच्चोंके साथ हमारी सहानुभूति होनी चाहिए। सवके-सव वे वुरे भी नहीं हैं। फिर भी इसमें सन्देह नहीं कि वहुत-से निर्दोष व्यक्ति भी अपराधी मान लिये गये होंगे। जवर्दस्ती धर्म-परिवर्तन एक भयानक चीज है। परन्तु मोपलोंकी वीरताकी हमें सराहना करनी चाहिए। ये मलावारी इसीलिए नहीं लड़ते कि लड़ाईसे इन्हें प्रेम है। ये उस चीजके लिए लड़ रहे हैं जिसे ये अपना धर्म समझते हैं, और जिस ढंगसे लड़ रहे हैं उसे भी ये धार्मिक समझते हैं। इनकी भारी वहुसंख्याको अपना प्रतिरोध जारी रखनेसे कोई व्यक्तिगत लाभ नहीं होगा। इनका अपराध ऐसा नहीं है जो जान-वूझकर किया गया हो, वल्कि उसका कारण इनका अज्ञान ही है।

१. वम्वईके मिल-मजदूरोंके क्षेत्रमें एक पर्चेके रूपमें वितरित।
२. यह "मोपलोंके वारेमें" शीर्षकसे इसी तिथिको प्रकाशित किया गया था।

इस तरहके वीर लोगोंको यदि हम निर्मूल हो जाने देंगे तो इतिहास इसे हमारे विरुद्ध याद रखेगा और यह भारतकी कायरता मानी जायेगी।

मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि यदि श्री याकूब हसनको मलाबार जाने दिया गया होता, यदि मलाबारमें मेरे प्रवेशपर प्रतिबन्ध न लगाया गया होता, यदि ऐसे मुसलमानोंको, जिनका सचमुच प्रभाव है, वहाँ जानेके लिए आमन्त्रित किया गया होता, तो इस लम्बे उत्पीडनसे बचा जा सकता था। परन्तु अभी भी बहुत देर नहीं हुई है।

तलवारका जोर आजमाते तीन महीने हो गये हैं, पर इससे उद्देश्य पूरा नहीं हो सका। वह गर्वीले मोपलोंको झुका नहीं सका, और न हिन्दुओंको ही उनकी लूट-मार और वासनासे बचा सका है। तलवार मोपलाओंको पूरे मद्रास अहातेपर हावी होनेसे रोक-भर पाई है। वह जनताकी रक्षा करनेकी अपनी सामर्थ्य सिद्ध नहीं कर पाई है।

मुझे यकीन है कि आप अपनी असमर्थताकी दुहाई नहीं देंगे। यह सच है कि पुलिस और सेनाका कार्य-भार आपको नहीं सौंपा गया है। परन्तु नैतिक जिम्मेदारीसे आप बच नहीं सकते। मलाबार-सम्बन्धी सरकारी नीतिका आप समर्थन कर रहे हैं।

और न मैं यह आशा करता हूँ कि आप इसके जवाबमें असहयोगियोंको ही दोषी ठहराने लगेंगे। इस झगडेके लिए वे किसी भी तरहकी जिम्मेदारी अपने ऊपर नहीं ले सकते, वैसे यदि हर तरहके आन्दोलनको ही दोषी ठहराया जाये तो बात दूसरी है। परन्तु, मैं यह मानता हूँ कि असहयोगी अपना सन्देश मोपलोंके बीच पहुँचा नहीं पाये हैं। और इसके लिए आन्दोलनको कम करना नहीं, बल्कि और बढाना होगा।

लेकिन मैंने इस समय लेखनी असहयोगियोंकी सफाई देनेके लिए नहीं उठाई है। मेरा यह निवेदन है कि आप इस प्रश्नके व्यापक मानवीय पहलुओंपर विचार करें, और सरकारको इस बातके लिए बाध्य करें कि वह लडाई रोक दे, यह वायदा करे कि आत्मसमर्पण करनेपर मोपलोंको पिछली लूट-मारके लिए क्षमा कर दिया जायेगा, और असहयोगियोंको मलाबारमें जाने और मोपलोंको आत्मसमर्पणके लिए राजी करनेकी अनुमति दे। मैं जानता हूँ कि इस अन्तिम सुझावका अर्थ असहयोगियोंको महत्व देना है। निश्चय ही आपको उनकी संख्या या उनके प्रभावके बारेमें सन्देह नहीं है। यदि है, तो आपको इस जातिको निर्मूल कर देनेके अलावा इस झगडेका कोई और समाधान ढूंढना चाहिए। मुझे चिन्ता केवल यह है कि मलाबारमें चल रही यह लज्जाजनक नृशंसता, जिसे उदारदलीय और असहयोगी दोनों लाचार दर्शकोंकी तरह देख रहे हैं, बन्द होनी चाहिए। मैंने यह पत्र सरकारके नाम न लिखकर आपके नाम इसलिए लिखा है कि आपके नैतिक समर्थनके बिना सरकार विध्वंसका यह निर्दयतापूर्ण मार्ग अपना नहीं सकती थी। मेरी आपसे यही विनती है कि आप मुझे अपना प्रिय मित्र मानकर मेरी प्रार्थनापर ध्यान दें।

आपका मित्र,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १-१२-१९२१

२१२. पत्र : बारडोली और आनन्दके निवासियोंके नाम

बारडोली और आनन्दके भाई-बहनो,

मैं जानता हूँ कि आपके दु खकी सीमा नही रही। आपने बडी आशा की थी। आपने इसी वर्षके भीतर अपने यज्ञ, अपने बलिदानके द्वारा स्वराज्य प्राप्त करने, मुसलमान-भाइयो तथा पजावके घावोको भरने और अली-भाई इत्यादि कैदियोंको छुडवानेका जिम्मा लिया था।

पर ईश्वरने कुछ और ही सोचा था। भगत नरसिंहने[1] ठीक ही कहा है 'बने नरसे तो कोई न रहे दु खी'। किन्तु फल हमारे हाथमे कहाँ है? हमे तो अपने उद्देश्यकी दिशामे परिश्रम ही करना चाहिए। जब श्री रामचन्द्र-जैसोको राजगद्दी मिलनेके समय वनवास मिला तो फिर हमारी क्या बिसात है?

मैं अपने परम मित्रकी[2] बात सोचता हूँ। उन्होने पजाबमें मेरे साथ काम किया था। वे पजाबके दु खको देख कर रो पडते थे। सारी जिन्दगी वे ऐश-आराममें रहे। उन्होंने मेरी बात सुनकर आराम छोड दिया है, जवानोकी तरह काममे जुट गये है और उसमे सुख मान लिया है। उन्हे यह सोचकर बडी पीडा होती है कि वे आज अपने खेडा जिले और उसमे भी आनन्द ताल्लुकेके लोगोको तुरन्त जेल नही भेज पा रहे हैं। किन्तु मै उनको और आप सबको इस बातका विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि सब्रका फल मीठा ही होगा।

अभी कुछ बिगडा नही है। हम बाजी हार नही गये हैं। बल्कि हम तो दु खमेसे सुख पैदा करनेमे समर्थ हुए हैं। अशान्ति हुई अवश्य, परन्तु ऐसा मालूम होता है कि उसमे से हमने शान्ति प्राप्त की। ईश्वरने छोटा-सा दु ख देकर हमें बडे दु खसे बचा लिया है।

बारडोलीसे मुझे एक पत्र मिला है। बारडोलीके बारेमें भी एक अन्य पत्र आया है और खेडाके बारेमे भी एक पत्र मैंने देखा है। उन सबसे यही जान पडता है कि आप अच्छी तरह तैयार नही हैं। न शान्तिके मामलेमे, न स्वदेशीके मामलेमे। एक पत्रमे ब्यौरा दे कर कहा गया है कि बारडोलीमे बलप्रयोग किया गया। जबर्दस्ती विदेशी टोपियाँ छीनी गई और शराबके दूकानदारोके प्रति भी बलका प्रयोग किया गया और उन्हे गालियाँ दी गई। इन दोनो जिलोमे बहुतसे लोग दिखावेके लिए खादी पहनते है। बहुतसे ऐसे लोग हैं जो घरके बाहर तो खादी पहनकर निकलते हैं मगर जिनके घरोमे विदेशी कपडेसे सन्दूके भरी हैं और खूँटियोपर भी विदेशी कपडे टँगे हुए हैं। औरतोमे तो मरदोसे भी कम स्वदेशी वस्त्रोका चलन है। खेडासे प्राप्त पत्रमे कहा गया है कि सब-कुछ खरा-ही-खरा नही है—खोटा या तो आँखोकी

१. १४१४–१४७९, गुजरातके सन्त-कवि।
२. अब्बास तैयबजी।

ओट रखा जाता है या उसपर मुलम्मा चढा दिया गया है। अगर कोई बोले तो उसे चुप करवा दिया जाता है।

मैं यह नही कहता कि ये सारी बाते ठीक ही है। थोडी-बहुत अतिशयोक्ति इसमे होगी। किन्तु हम आलोचकोसे काफी-कुछ सीख ले सकते है। अगर हम उनकी नजरोसे अपनेको देखना सीख ले तो देखते-ही-देखते अपने दोषोसे मुक्त हो जाये। अपनी पीठ हम स्वय नही देख सकते — वह तो दूसरेको ही दिखती है।

आपसे मैं शुद्धसे-शुद्ध यज्ञकी अपेक्षा करता हूँ। ईश्वरके दरबारमे शुद्ध बलि-दान ही मजूर होता है। बिना माँगे जो अवसर हाथ लगा है उसमे अपने तमाम ऐबोको ढूँढ-ढूँढ कर निकाल दो। सब चरखा-धर्मका खूब पालन करो। ऐसी तजवीज करो कि हर घरमे अच्छा, मजबूत, बिना गर्दका सूत रोज कते, कोई भूखो न मरे, किसीके घरमे विदेशी कपडेकी गदगी न रहे। मेरे सुझाए हुए आँकडे इकट्ठे करो।

अगर किसीके कपडे जबरदस्ती छीने गये हो तो हम उससे माफी माँगे। सहयोगियोके प्रति मनमे जरा गुस्सा न रखे। उनके दुखमे उनकी सेवा करे। हम सरकारी कर्मचारियोकी न खुशामद करे, न उनसे डरे। पुलिसका डर छोड दे। उन्हे भी अपना भाई समझकर उनपर प्रेम करे। आपके बच्चे यदि आज भी सरकारी मदरसोमे जाते हो तो उन्हे वहाँसे उठा ले और असहयोग आन्दोलनको बढाते हुए बल प्रयोग न करे। गाँवमे एक भी सहयोगी बच गया हो तो उसके साथ भी वैरभाव न रखे, बल्कि यह समझे कि हमे अपने मतपर दृढ रहनेका जितना हक है उतना ही उसे भी है।

यदि गाँवोमे आपसमे दुश्मनी हो तो उसे हटा दे। सत्याग्रही गाँवोमे वैरभावके लिए जगह ही नही है।

मनमे अगर भगी-चमारोके प्रति तिरस्कारकी भावना रही हो तो उसे निकाल दे। उनके लडकोको अपने मदरसोमे प्रेमके साथ रखे और बुलाकर भरती करे। उनके रहनेके स्थानोकी देखभाल करे और पानी आदिकी सुविधा न हो तो करे। उन्हे जूठन न देकर उसके बदले कच्चा, बिना पका हुआ अन्न दे या वेतन बढा दे।

गाँवोमे जो लोग शराब पीते हो, उन्हे प्रेमपूर्वक कह-सुनकर, समझा-बुझाकर, उनकी यह बुरी आदत छुडाये। न माने तो उनकी मर्जी। शराबकी दूकान हो तो दूकानदारको भी नम्रतापूर्वक ही समझाये। उसपर रोष न करे। उसपर ममता रखे।

गाँवोमे कोई बदमाश, उपद्रवी या चोर-डाकू रहता हो तो उससे न तो खुद डरे और न उसे डराये। उसे भी अपना भाई समझकर मिले और उसकी हालत समझकर उसकी आदत छुडाये तथा ऐसे चोर-डाकुओके दिलको बदलनेका प्रयत्न करे और साथ ही उसके जोर-जुलमसे स्वय बचने और बाल-बच्चो तथा अपने धनमालकी रक्षा करनेकी शक्ति प्राप्त करे। इसके लिए आप अपने ही चौकीदार रख सकते है। उन्हे चोरोके साथ लडनेकी जरूरत नही पडेगी। पहरा हो तो चोर नही आते। 'जागतेको भय नही' यह कहावत बिलकुल सही है, तो भी सम्भव है कोई हाथ मार जाये। तो उससे निडर रहना। अपनी तहसीलके बदमाश लोगोका आपको पता तो होना ही चाहिए।

आनन्दमें तो डाकोरजी विराजमान हैं। मैं इस विषयमें एक बार लिख चुका हूँ।[1] यदि आप लोग आनन्द ताल्लुकेकी बाहरी और भीतरी व्यवस्थामें सुधार कर डालें तो यह जिला वास्तवमें योग्यता प्राप्त कर ले। क्या मन्दिरका टंटा समाप्त हो गया है? तालाब साफ कर लिया गया है? जो यात्री यहाँ आते हैं वे केवल नामके ही तीर्थयात्री न रहकर शुद्ध तीर्थयात्री बने? क्या अत्याचार होने बन्द हुए? डाकोरमें सर्वत्र स्वच्छता छाई? मन्दिरसे विदेशी कपड़ेका बहिष्कार हो चुका? क्या जिलेके लोग आज भी अपने मतभेद लेकर अदालतोंमें ही जाते हैं?

आप निश्चय रखिए कि यदि असहयोगी सच्चे हो जायें, उनमें परस्पर प्रेम उत्पन्न हो जाये तो सब लोग उस प्रेमके वशमें हो जायेंगे। मैं प्रतिज्ञा करके कहता हूँ कि यदि आपकी दोनों तहसीलें असहयोगके समस्त अंगोंका अब भी सर्वांशमें पालन कर सकें तो आप इसी वर्षमें स्वराज्य ले लेंगे। और अगर आप निश्चय कर लें तो उसका पालन करना तनिक भी कठिन नहीं है। अगर यह बात आप सबके मनमें लग गई है तो फिर उसका आचरण बिलकुल ही आसान है। अगर आप बिना समझे और द्वेषभावसे काम कर रहे होंगे तो बात मुश्किल है।

मैं कितनी ही बार कह चुका हूँ कि असहयोगका मूल प्रेम है, वैर नहीं। आत्मबल प्रेमबल है और जगत् इसी बलके अधीन है। यदि अपने बलसे भारतको मुक्त करना है तो आप सब प्रेमकी वर्षा करें। आपको परदुःखभंजन कहलाना हो तो आपके मनमें सहनशीलता, शौर्य, सत्य इत्यादि मूर्तिमान होने चाहिए। केवल दिखावेसे स्वराज्य नहीं मिलेगा।

बम्बईमें हुई भूलोंके बावजूद यदि आपको इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना है तो आपको आजकी अपेक्षा बहुत ही अधिक आत्मशुद्धि करनी पड़ेगी। अर्थात् आपको सच्चा हिन्दू, सच्चा मुसलमान, सच्चा पारसी और सच्चा ईसाई होना पड़ेगा।

आप अपने यहाँके पारसियों और ईसाइयोंसे मिलते-जुलते रहनेकी बात कभी न भूलें और उन्हें अपने प्रेमके बलपर निर्भय कर दें।

आप मेरी आशा न छोड़ें और स्वयं भी ऐसा करते जायें कि मुझे आपकी आशा न छोड़नी पड़े। मैं आपसे शीघ्र ही मिलने आऊँगा। इस बीच आप अपनी तैयारीमें लगे रहें।

आपका सेवक,
मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २७-११-१९२१

१. देखिए खण्ड १६, पृष्ठ २८४-८६।

२१३. टिप्पणियाँ

उपवासके वाद

यह टिप्पणी मैं अपने उपवास छोडनेके वाद लिख रहा हूँ। 'यग इडिया'के वहुतेरे लेख उपवासकी अवधिमें ही लिखे गये है। उन दिनोके मेरे विचार और आजके अपने विचारोमें मुझे कोई अन्तर नजर नही आता। उपवासके पहलेके मेरे विचार ज्योके-त्यो वने हुए हैं।

एक परिवर्तन

सिर्फ एक वातमें परिवर्तन हुआ है। परन्तु इसका कारण उपवास नही है वल्कि इसका कारण जो दृश्य मैंने १० ता० गुरुवारको वम्वईमें देखा तथा शुक्रवार और शनिवारको जिन दुर्घटनाओका हाल मैंने सुना, वे हैं। अव मैं यह देख पा रहा हूँ कि सविनय-अवज्ञाके लिए हम अभी तैयार नही हैं। ऐसी अवस्थामे वारडोलीमें सविनय-अवज्ञा शुरु करनेका अर्थ अपनी वाजी हारना ही है। उसका प्रयोजन स्वराज्यकी प्राप्ति, खिलाफतका निपटारा और पजावके प्रश्नपर सरकारमे माफी मँगवाना है। वर्तमान अवस्थामे कानून-भग करनेसे इन तीनमें से किसी भी उद्देश्यकी पूर्ति नही हो सकती। वम्वई और वारडोली-आनन्दका परस्पर इतना निकटका सम्वन्ध हे कि वे एक-दूसरेकी मदद करना चाहते हैं और उनमे यह शक्ति विद्यमान भी है। इधर हम वारडोली और आनन्दमे सविनय-अवज्ञा शुरू करे और उधर वम्वईमें हिंसापर उतारू हो जाये तो, थोडा भी सोचनेसे यह वात ध्यानमे आ सकती हे कि वम्वईसे हमको मदद नही मिल पायेगी — यही नही, वम्वई हमारे सग्रामको हानि भी पहुँचा सकती हे।

कानूनके मनमाने भगका अर्थ तो सरकारके साथ पूरे सहयोगके सिवा दूसरा कुछ नही हो मकता। क्या हम अभीतक यह भी नही समझे हैं कि सरकार महज हमारी कमजोरियोपर, कानूनको मनमाने तौरपर भग करनेकी हमारी आदतपर, हमारी मारकाटपर टिकी हुई है? वकीलोके असहयोगसे सरकार जितनी कमजोर हुई है उससे अधिक कमजोर वह हमारी शान्तिकी वदौलत हुई है। वकीलवर्गके सहयोगसे सरकारको जितना वल मिलता है उससे अधिक वल उसे हमारे शान्तिभग करनेसे मिलता है। क्योंकि इससे सरकारको अत्याचार करके, लोगोको भयभीत करके, अपनी सत्ता अधिक मजवूत करनेका मौका मिल जाता है। अतएव एक जगह अविनय और दूसरी जगह विनय हो तो वह पहाड खोदकर चूहा निकालने जैसा है, नहा-धोकर फिर कीचडमें कूदने जैसा है। फूटे लौटेमें चाहे कितना पानी क्यो न डाला जाये, वह उसमें कभी ठहर नही सकता। इसी प्रकार विनय रहित वायुमण्डलमे चाहे विजयकी कितनी ही कोशिश करते रहिए, वह व्यर्थ गये विना नही रह सकती। पहले तो हमें सारे हिन्दुस्तानमे विनयपूर्ण — शान्त — वायुमण्डल तैयार करना चाहिए। सौभाग्य अथवा दुर्भाग्यसे हम तो यह दावा करते है कि सारा हिन्दुस्तान हमारे साथ

है — असहयोगी है। हम यह दावा करते हैं कि महासभाके दफ्तरोंमें दर्ज लाखों आदमी हमारे साथ हैं — यही क्यों, दूसरे करोड़ों आदमियोंपर हमारा इतना प्रभाव हो गया है कि वे भी हमारे साथ ही हैं। हमारा ऐसा दावा करना उचित ही है। अगर लोग हमारे साथ न हों तो फिर स्वराज्य किसके लिए प्राप्त किया जाये? अगर लोग सरकारके साथ हों तो क्या उनको बलपूर्वक आजाद किया जा सकता है? हमारी स्वराज्यकी इस वर्तमान हलचलका, खिलाफत और पंजाबकी हलचलका आधार ही इस बातपर है कि हम लोगोंके दुःख-दर्दको प्रकट कर रहे हैं और उन्हीं साधनोंका उपयोग कर रहे हैं जिन्हें लोगोंने पसन्द किया। इसका अर्थ यह हुआ कि लोग शान्तिके साथ विजय प्राप्त करना चाहते हैं।

अगर मेरी यह पूर्वोक्त बात गलत हो तो मैंने — हमने — बड़ी गहरी भूल की है। अगर हम, शान्तिको सच्चे दिलसे मानने और चाहनेवाले, मुट्ठीभर ही हों तो भी हम स्वराज्य प्राप्तिमें समर्थ हैं। परन्तु उस अवस्थामें हमारा संगठन दूसरे प्रकारसे होना चाहिए। फिर कोई असहयोगी चाहे जेल जाये, चाहे मर जाये, उसके पीछे झुण्ड-के-झुण्ड लोगोंको जेल नहीं जाना चाहिए। यदि सहयोगियोंकी तरह लोगोंमें हम भी अप्रतिष्ठित होते तो हम मनमानी अवज्ञा कर सकते थे। क्योंकि उस अवस्थामें हम पर होनेवाले अत्याचारके कारण उत्तेजित होकर कोई शान्ति भंग न करता।

भेद

गुजरातमें हम शीघ्र ही जिस सविनय अवज्ञाके मनसूबे बाँध रहे थे, वह सारे हिन्दुस्तानके लिए थी। उस अवज्ञाके बलपर हम खिलाफतको ताकत पहुँचानेकी और स्वराज्य प्राप्त करनेकी आशा रखते थे। अतएव सारे हिन्दुस्तानके लिए उसमें सहमत होने और शान्ति बनाये रखनेकी जरूरत है। यों स्थानीय कष्टों और दुःखोंके लिए हर व्यक्ति सविनय अवज्ञा कर सकता है, जैसा कि आज चिरला-पेरला और मूलशी पेठामें चल रहा है। उनके साथ हमारी हमदर्दी भी है, और हम उनकी सहायता भी कर सकते हैं। परन्तु यों हमें स्वयं तटस्थ ही रहना चाहिए। अशान्ति बड़ी जल्दी फैलती है। अगर हम चिरला-पेरलाके नामपर बम्बईमें अशान्ति कर बैठें तो चिरला-पेरलाको अधिक कष्ट भोगना पड़ेगा।

बड़ी आवश्यकता

इसलिए सबसे बड़ी आवश्यकता इस समय हर जगह तत्काल ही शान्ति स्थापित करनेकी है। अगर खुद हमारे मनमें शान्तिकी आवश्यकताको लेकर कुछ शक बाकी रह गया हो तो हम उसे दूर कर डालें। पहले हमें उपद्रवियोंपर काबू पाना चाहिए। वे भी हमारे भाई हैं। हम उन्हें छोड़ नहीं सकते। किन्तु हम उनके हाथमें भी नहीं रह सकते। अगर हम उनकी मर्जीको चलने दें तो हिन्दुस्तानमें स्वराज्य नहीं, गुंडोंका राज होगा। गुंडोंका राज होने देना मानो उनकी और हमारी दोनोंकी मौत है। हमें यह समझ लेना चाहिए कि गुंडोंके राज्यको लोग जरा भी सहन नहीं कर सकते। गुंडोंके राजमें रहनेवाले जानोमालके तात्कालिक नुकसानके भयको अंगीकार करनेके बजाय सरकारके तात्कालिक रक्षणको खुशी-खुशी कबूल कर लेंगे। अतएव हमें चाहिए

कि हम इन उपद्रवी लोगोसे मिले, बातचीत करे, उन्हे धर्मका और देशका हित समझाये और उनसे कहे कि भाई, अपनी अशान्तिके द्वारा देशके कार्यमे विघ्न न डालो। यह कोई बडा लम्बा कार्यक्रम नही है। बम्बईमे यह काम सिर्फ पन्द्रह दिनोमे हो सकता है। उपद्रवी लोगोको मै सीधे-सादे, परन्तु भ्रमवश उलटा मार्ग पकड लेने-वाले भाई मानता हूँ। उन्हे हमने अपने किसी अन्ध स्वार्थके लिए वुरा वनाया अथवा वना रखा है। अतएव ऐसी स्थिति भी सहज ही बनाई जा सकती है जिसमे वे हमारे धर्मयुद्धमे रुकावट न डाले। असहयोगके समय उन्हे अपनी मारकाटकी या लूटमारकी कुटेवका प्रयोग न करना चाहिए। अगर हम उनपर अपना इतना भी असर न डाल सके तो हम स्वराज्यके अयोग्य सिद्ध होगे। मान लीजिए कि अग्रेजी सत्ता हिन्दुस्तानसे चली गई, तो फिर इन उपद्रवी लोगोकी आदतोसे हमे कौन बचायेगा? यह शुद्धि स्वराज्यके वाद नही होगी, वल्कि यह शुद्धि होना तो स्वराज्य प्राप्तिकी एक शर्त है। यदि हम उन्हे अपने प्रेमके द्वारा अपने वशमे न कर सके तो उन्हे वश करनेके लिए आवश्यक तलवार-बल तो हमारे पास है ही नही। और मुझ-जैसे लोग तो उनकी तलवारसे टुकडे-टुकडे हो जाना पसन्द करेगे, पर उन्हे तलवारके घाट उतारकर स्वय जिन्दा रहनेका प्रयत्नतक न करेगे।

बाधाएँ

यह सुधार होना है तो आसान, पर हमारे रास्तेमे बाधाएँ है। हमारे देशमे आज छ मत प्रचलित है

(१) जो यह मानते है कि हिसाके बिना स्वराज्य कभी नही मिल सकता। इसलिए वे शान्तिका उपयोग अशान्ति फैलानेके काममे करते है।

(२) जो यह समझते है कि शान्ति और अशान्ति दोनोको एक-साथ जारी रखनेमे ही कल्याण है। इससे वे अशान्तिका भी स्वागत करते है। इनका हेतु आत्म-शुद्धि नही, बल्कि केवल सरकारको परेशान करना है।

(३) वह वर्ग जो अशान्तिको रोकते हुए भी, लेकिन अगर वह जारी ही रहे तो भी, शान्तिके किसी प्रयोगको बन्द करनेकी इच्छा नही रखता।

(४) यह माननेवाले कि जितना सरकारके साथ रहकर किया जा सके उतना ही काम करना उचित है।

(५) जो शान्तिका प्रयोगके तौरपर या नीतिके तौरपर प्रचार करते है और जब उसका प्रयोग शुरू कर दिया जाता है तब मनमे दुखी होते है।

(६) जो शान्तिको ही हिन्दुस्तानकी मुक्ति और हिन्दू-मुस्लिम एकताका मार्ग समझकर काम करते है और इसलिए अनजानमे भी लोगोकी तरफसे होनेवाले उप-द्रवोको पसन्द नही करते।

थोडा भी विचार करनेसे हम यह देख सकते है कि पाँचवे और छठे वर्गके लोग ही हमारे सहायक है और केवल इन्ही लोगोसे हमारा काम चल सकता है। शेष सब मतोके लोग हमे नुकसान पहुँचानेवाले है। उन्हे हमे विनयसे, दलीलसे, सेवासे अपना वना लेना है। परन्तु चौथा अर्थात् सहयोगियोका वर्ग बहुत भयानक नही है। वह हमे

ज्यादा नुकसान नही पहुंचा सकता। फिर हम उस वर्गको पहचानते हैं। उसका सघ है। उसकी हलचल प्रकट रूपसे होती है। पहले तीन मतके लोगोका कोई सघ नही है। उनकी कोई सस्था नही, कोई मण्डल नही। वे सब देशमे दूर-दूर बिखरे हुए हैं और जब मौका देखते हैं तभी लोगोंपर अपना असर डालते हैं। ये लोग बिखरे हुए है, इसलिए उनतक पहुंचना भी मुश्किल है। परन्तु जब-जब उपद्रव होते हैं तब वे मैदानमे आते हैं और लोगोमें अशान्ति फैलाते हैं। इनमे से कितने ही लोग शुद्ध हेतुसे, परन्तु अज्ञानवश, असहयोगी मण्डलोमें सम्मिलित होकर अपने मतको फैलानेका भी प्रयत्न करते है। उस हालतमें उनकी यह हलचल अधिक हानिकारक सिद्ध होती है। ये सब पागल लोग बम्बईमे गुरुवारसे रविवारतक काम कर रहे थे। इसी कारण हमने तरह-तरहकी अफवाहे सुनी। और जो लोग सिर्फ इन लोगोंकी बात सुनकर अपने-अपने कामपर चले जाना चाहते थे वे भी बहकावेमे आकर दोबारा मुंह फेरकर खडे हो गये।

खुफिया पुलिस

कुछ लोग कहते हैं कि यह सब काम खुफिया पुलिसका ही था। मैं यह बात बिलकुल नही मानता। हाँ, यह ठीक है कि खुफिया पुलिसका थोडा-बहुत इसमें हाथ था। खुफिया पुलिसके कितने ही लोगोंको उपद्रव न हो तो चैन ही नही पडती। परन्तु खुफिया पुलिसके लोगोंके सिवा कुछ ऐसे लोग भी जिनका खुदका मत अशान्तिके पक्षमे था, काम कर रहे थे। उन लोगोमे ऐसे उपद्रवी लोग भी, थे जिनका पेशा लूटना आदि ही है। इसलिए वे तो बिलकुल ही झूठी अफवाहे उडा-उडाकर अपना काम बना रहे थे।

एकमात्र उपाय

इसके लिए अपने पास एक ही उपाय है। हमारा रास्ता सीधा है। हमें इन सबके ऊपर अपना असर डालना चाहिए। जब दूसरे सभी लोग जनताको अपने हाथका पासा बना रहे हो तब अगर उसकी समझमे यह बात बैठ जाये कि उसे तो असहयोगियोकी बात ही माननी है तो वह ऐसे उपद्रवोमे शामिल नही होगी। हम यदि जनताको अपनी बात समझा सके तो शान्ति फैल सकेगी; और शान्तिका फैल जाना इस बातको जाहिर करेगा कि हममे शान्तिकी स्थापना और उसकी रक्षा करनेकी शक्ति है। किन्तु इसके लिए हमारा सच्चा और उद्यमी होना जरूरी है। अपने साधनोमे हमें पूरा विश्वास होना चाहिए और सदा सावधान रहना चाहिए। बम्बईके कार्यकर्त्ता सावधान नही रहे। वे गफलतमे पडे रहे। उन्होंने मान लिया था कि अब तो लोग हमारी बातको इतनी अच्छी तरह समझ गये हैं कि उपद्रव हो ही नही सकते। इससे उन्होंने युवराजके स्वागतके बहिष्कारकी तैयारियाँ तो खूब की, परन्तु पूर्ण शान्तिकी रक्षाके लिए जितने प्रयत्न कर रखने थे, वे न कर पाये। परिणाम जो हुआ सो हमने देखा ही है। चाहे जो हो, पुलिसकी उलटी कोशिश होते हुए भी जब हम शान्ति रक्षा करनेमे समर्थ बन जाये तभी हम सरकारसे बढे-चढे और स्वराज्यके लायक माने जा सकते है। दोष

पुलिसके माथे मढकर अगर हम अपनेको वहलाते रहे तो हम हार जायेंगे। दुश्मन हमे छका दे, ऐसा कुछ कर गुजरे जो हमारे ध्यानमे ही नही आया हो और तव यदि हम ऐसा कहे कि "दुश्मन तो हमें जीतने ही नही देता, हमे दम ही नही लेने देता", तो फिर हम काहेके योद्धा? दुश्मन जो चाहे किया करे, तथापि जव हम यह सिद्ध कर दिखाये कि हममे लडनेकी शक्ति है, तभी हम जीतनेकी आशा रख सकते हैं। सरकार चाहे जो-कुछ करे फिर भी हम शान्तिकी रक्षा कर सकते है। जवतक हम ऐसा न कर सकेंगे तवतक जीतनेकी आशा ही नही रखनी चाहिए।

आत्म-निरीक्षण

अतएव पुलिसके ऐव निकालनेकी वनिस्वत हमारा धर्म तो यही हे कि हम अपना ही ऐव ढूंढे। हमने क्योकर एकदम भोले वनकर हर तरहकी अफवाहे मान ली? सवाल है, हमने जवरदस्ती की या नही, विदेशी टोपियाँ जवरन छीनी या नही, ट्रामगाडिया जलाईं कि नही, शरावकी दुकानोमें आग लगाई या नही, दूसरोकी देखा-देखी जानमालको नुकसान पहुँचाया या नही? हमने अपने मनमे मैल रखा या नही? सहयोगियोके प्रति मनमे वैर-भाव रखा या नही? अगर हमने यह सव किया हो—और मैंने देखा है कि हमने ऐसा किया है—तो हमें ईश्वरके नजदीक हाथ जोडकर माफी माँगनी चाहिए, आत्मशुद्धि करनी चाहिए और अव आगे ऐसा न करनेकी प्रतिज्ञा करनी चाहिए। 'आप भले तो जग भला' इस कहावतमे एक वडा सिद्धान्त छिपा हुआ है। हमारे दिलमे मैल है और हम डरपोक हैं तभी तो हम हरएक हाकिम और पुलिसको अपना दुश्मन मानते हैं। हम अगर डरको निकालकर दूर रख दे तो छिपी या खुली किसी भी पुलिससे न डरे और न किसीके वहकानेसे वहके। हम तो केवल अपने आतरिक वलके सहारे ही जूझना चाहते हैं, और वह वल किसीके दियेसे हमे नही मिल सकता। वह तो ईश्वरसे ही मिल सकता हे। वस अपनी कमजोरियोको जीतनेकी देर है कि स्वराज्य हथेलीमे रखा है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २७–११–१९२१

२१४. टिप्पणियाँ

सफेद झूठ

बम्बईमें हालके उपद्रवके सम्बन्धमें मैंने वक्तव्य[1] दिया था कि उसमें पुलिस और फौजने पक्षपात किया और उन्होंने नही, बल्कि बम्बईके निवासियोंने शान्ति स्थापित की है। बम्बई-सरकारने मेरे इस वक्तव्यका प्रतिवाद किया है। उसके इस प्रतिवाद-पर मुझे दुख है। मैंने इसकी आशा नही की थी। अब तो मैं उन आरोपोंमें एक आरोप और जोडकर सारे चित्रको पूरा किये देता हूँ। पुलिस या फौज लोगोंके जान-मालकी रक्षा करनेमें असमर्थ थी। सत्रह तारीखको मैंने देखा कि वह जलती हुई ट्राम और मोटर गाडियोंको बचा नही सकी। भिंडी बाजारमें शराबकी दुकान जला कर खाक कर दी गई, लेकिन पुलिस या फौज उसके बचावका कोई प्रबन्ध न कर सकी। और १८ तथा १९ तारीखको भी उन्होंने इससे बेहतर कुछ नही किया। आग-जनी और लूट-मार जारी रही, पर पुलिस और फौज मुँह ताकती रही। जब किसीने कुछ मदद चाही, तो उससे साफ कह दिया गया कि हमारे पास अब अधिक जवान नही है, तमाम लोग युवराजके स्वागतके इन्तजाममें लगे हुए हैं।

पुलिस या फौज जब उपद्रव-ग्रस्त स्थानोंपर किसीके भी जान-मालकी रक्षातक न कर पाई, तब उसके लिए शान्तिकी स्थापना करना क्या सम्भव था? शान्तिकी स्थापनाका श्रेय अकेले असहयोगियोंको ही नही दिया जा रहा है। मैं तो इसका श्रेय सहयोगी-असहयोगी, हिन्दू-मुसलमान, पारसी-ईसाई सभीको देता हूँ और ईसाइयोंमें अंग्रेज भी शामिल हैं। यदि बम्बईके तमाम शान्ति-प्रिय लोग साथ न देते तो शान्तिकी स्थापना नही हो पाती। इसका श्रेय मैं मियाँ छोटानीको देता हूँ। २० तारीखको सर फिरोज सेठनाके ही प्रयत्नसे फौज एक भीडपर गोली चलानेसे रुकी, और डा० पावरी तथा श्री बैंकरकी कोशिशोंके फलस्वरूप वह भीड पाँच मिनटमें ही छँट गई। मैं कितने ही ऐसे उदाहरण दे सकता हूँ जिनमें बम्बईके लोगोंने इस तरह भीडको तितर-बितर किया है। इसमें सभी मतो, सभी दलोंके लोगोंका हाथ था। श्रीमती सरोजिनी नायडूसे तो फौजके लोगोंने कई बार कहा था कि भीड हटानेमें हमें मदद दीजिए। इसमें कोई शक नही कि सहयोगी और असहयोगी दोनो ही प्रकारके पार-सियोंने यदि सहायता न दी होती, तो शान्तिकी स्थापना असम्भव थी। शान्तिकी स्थापनाके बाद जिस दिन बम्बईके कितने ही सज्जनोंके साथ मैंने फलाहार किया था, उस दिन श्री एच० पी० मोदीने भी शान्ति-स्थापनाके लिए नगरवासियोंको ही श्रेय प्रदान किया। श्री पुरुषोत्तमदासने यद्यपि असहयोगियोंको आरम्भिक उत्तेजनाके लिए बडी शिष्टताके साथ उलाहना दिया, तथापि उन्होंने भी इस बातको अस्वीकार नही किया कि जनताने ही शान्तिकी स्थापना की। श्री नटराजन्‌ने भी उन लोगोंकी मुक्त-

१ देखिए "गहरा कलंक", १८-११-१९२१।

कठसे प्रशसा की, जिन्होंने अतिवाछित शान्ति स्थापित की थी। श्री के० टी० पॉल और श्री डगलसने भी उनकी कुछ कम तारीफ नही की। श्री वीमादलालने अन्तमे धन्यवाद देते हुए मियाँ छोटानीका उल्लेख खास तौरपर किया था।

अव पक्षपातके विपयको लीजिए। एक ओर जहाँ पुलिस पारसियोकी रक्षा करनेमें असमर्थ रही, वही दूसरी ओर कितने ही पारसियोंने मुझसे कहा हे कि जव पारसी हुल्लडवाज उपद्रव मचा रहे थे तव पुलिस खडी-खडी तमाशा देखती रही। लेकिन मैं इस वातपर ज्यादा जोर नही देना चाहता। मेरी इच्छा नही है कि मैं पुलिस या फौजके आदमियोपर व्यक्तिके नाते दोपारोपण करूँ। मुझे आशा है कि एक-न-एक दिन मैं उन्हे सत्यके मार्गपर चलनेवाले निर्दोप लोगोके पक्षमे ले आऊँगा। उनमे अधिकाश हिन्दुस्तानी हैं। और मैं तो अग्रेज लोगोंके वारेमे भी आशा करता हूँ कि अन्तमे उनपर भी अनुकूल प्रतिक्रिया अवश्य होगी, वशर्ते कि असहयोगी लोग अपने अहिसा-धर्मका पालन सच्चे हृदयसे करे। हाँ, पुलिस और फौजवालोको इतना श्रेय दिया जा सकता हे कि उन्होंने अन्धान्धुध तरीकेसे लोगोकी जाने नही ली हैं, उन्होने आतक स्थापित करनेकी कोशिश नही की। अव मैं मलावार और मद्रासका उदाहरण देकर इस अध्यायको समाप्त करता हूँ। चूंकि लोगोको मलावारमे काम करनेके लिए नही जाने दिया जाता हे, इसलिए वहाँ अभीतक झगडा चल रहा हे। इसी तरह मद्रासमे भी कोई दो महीनेतक हडतालवाले स्थानोमे जो मार-काट जारी रही, उसका यही कारण था कि वहाँ भी लोगोको काम नही करने दिया गया या वे कर नही पाये। हाँ, वम्वई-सरकार, अगर चाहे तो, यह श्रेय ले सकती है कि जव लोग शान्ति स्थापनाकी चेष्टा कर रहे थे तव उसने उनके काममे किसी तरह हस्तक्षेप नही किया।

इसकी जडमें कौन था?

ऐसे लोगोकी कमी नही है जो कहते हैं कि यह सारी गडवडी खुफिया पुलिसकी खडी की हुई थी और उसीने इसको कायम रखा। मुझे यहाँ, भारतमे, रहते कोई छ साल हो गये हैं। और इस अवधिमे मैं वरावर खुफिया पुलिसके खिलाफ ऐसी शिकायत सुनता रहा हूँ। खुद मुझपर भी उसकी नजर रही हे। लेकिन मैं उन तमाम वेवुनियाद अफवाहोको माननेमे असमर्थ हूँ जो उसके विपयमे चारो ओर फैलाई जा रही हैं। मैं मानता हूँ कि वह भ्रष्ट हे और उसपर लगाये जानेवाले वहुतसे इल्जाम सही सावित किये जा सकते हैं, पर उनमे अतिरजना वहुत है। अगर ये तमाम आरोप सच हो, तव तो वडी भयकर वात होगी, और वह हमारी पहले दर्जेकी कायरताका सवूत होगा। इस महकमेके सम्वन्धमे जितनी गन्दी वातें सुनी जाती हैं, वे उन्ही लोगोके वीच सम्भव हो सकती हैं, जिनमे न तो वहादुरी हो और न आत्म-सम्मानकी भावना। वम्वईके उपद्रवके दिनोमे कई जिम्मेदार और प्रतिष्ठित आदमियोने कहा कि श्रीमती सरोजिनी नायडू तथा मेरे और दूसरे लोगोपर हमला होनेकी तथा मस्जिदो, गिरजाघरो आदिको नुकसान पहुँचानेकी अफवाहे खुफिया पुलिसवालोने ही फैलाई थी। यह कहा गया कि आगजनी और ट्रामगाडियोकी तोडफोड भी उन्होंने कराई। मैं इन सव वातोपर विश्वास करनेमे असमर्थ हूँ। और अगर वे सच हो तो कहना होगा

कि वम्वईके लोग वडी आसानीसे झांसेमें आ जाते हैं, और अपने नागरिक अधिकारो-का उपयोग करने लायक भी नही हैं। स्वराज्य-प्राप्तिके योग्य बननेके लिए हमें जिन गुणोकी जरूरत है, उनमें एक यह गुण भी आवश्यक है कि हममे खुफिया पुलिसको मात देनेकी योग्यता हो। अगर हम ऐसे काम करनेके लिए आसानीसे उकसाये जा सकते हो जिनसे हमे हानि पहुँचती हो, या उन बातोपर हमारा विश्वास कराया जा सके, जिनको हमे न मानना चाहिए, तो हम अपने लक्ष्यतक कभी नहीं पहुँच सकते। यदि हम खुल्लमखुल्ला और सच्चे दिलसे अहिंसक बने रहे, तो हम गलत रास्तेपर नही भटक सकते। हमारे बीच जो उपद्रवी लोग हैं उनपर या तो हमारा नियन्त्रण रहेगा या फिर खुफिया पुलिसका। यदि हम उन्हे कावूमे नही रख सकते तो हमें निकट भविष्यमें स्वराज्य पानेके खयालको बस नमस्कार ही कर लेना चाहिए।

अफवाहोसे होशियार

इन घटनाओसे हमे अनेक सीखे मिलती हैं। उनमे एक यह है कि हमे अफवाहो-पर कभी विश्वास नही करना चाहिए और हरएक बडे-बडे मुहल्ले और बडी-बडी सडकोपर काग्रेस और खिलाफतका एक-एक दफ्तर होना चाहिए, जहां जाकर लोग अफवाहोकी सचाई और झुठाईका इत्मीनान कर सके। यदि सफल होना है तो हम सबको बिल्कुल एक होकर एक दिलसे काम करना जरूरी है, और इसके लिए हमे यह जरूर जानना चाहिए कि महज अफवाहोके भरोसे बिना सोचे-समझे कोई काम न करे। सनसनी फैलानेमे तीन-चौथाई हाथ शरारतभरी अफवाहोका ही था। अगर लोग सुने कि कुछ मन्दिर आदि तोड दिये गये हैं और कुछ बडे नेता मारे गये या घायल हुए हैं तो भी क्या हुआ? उन्हे बिना सलाह-मशविरेके काम न करना चाहिए। क्या कोई सैनिक अपने सेना-नायककी मृत्युकी अथवा अपनी मसजिद या मन्दिरकी पवित्रता भग की जानेकी खबर सुनकर मनमाने ढगसे आचरण करने लगता है? यदि वह ऐसा करे तो अपने उद्देश्यको हानि पहुँचायेगा और गोलीतक मार देनेके लायक समझा जायेगा। फिर हम तो शान्ति-सेनाके सैनिक है। अपनी ही खुशीसे हम इसमे दाखिल हुए हैं। शस्त्र-सज्जित सैनिकोकी अपेक्षा हममे आत्मसयमकी क्षमता अधिक है। फिर हमे कोई एकाध लडाई तो नही लडनी है, हमे देश और धर्मकी आजादी हासिल करनी है। तब तो हमारे लिए और भी आवश्यक है कि हम पूरी तरह मिल-जुलकर काम करे।

आवश्यक अतिरजना

अतिरजना हमेशा ही निन्दनीय होती है, परन्तु इस नियममे सिर्फ एक ही अपवाद है। स्वय अपने दोषोके सम्बन्धमे अतिरजना अवश्य करनी चाहिए। हमे अपने दोष बहुत छोटे दिखाई देते हैं और जब हम उन्हे हजार गुना बडा बनाकर देखेगे तभी उनका सच्चा रूप हमारी नजरमे आयेगा। परन्तु दूसरोके दोष हमे हमेशा बडे ही नजर आते हैं। अतएव यह आवश्यक है कि हम दूसरोके दोषोको कम करके देखे। और यदि हम इन दोनो प्रक्रियाओको एक ही साथ और विवेकपूर्वक लागू करे तो हम वाछित

और सुन्दर मध्यविन्दुतक पहुँच सकते है। मेरे इस कथनपर कि इस दगोमे मुसलमान भाइयोने ही पहल की है, कुछ मुसलमान मित्रोने मुझसे शिकायत की है। और मेरे इस वक्तव्यपर कि हिन्दुओ और मुसलमानोने पहले आक्रमण किया है अतएव दोपके भागी वही है, हिन्दू और मुसलमान दोनोने एतराज किया है। इन दोनो आक्षेपोपर मैने खूब अच्छी तरह विचार किया है, और फिर भी मै इसी नतीजेपर पहुँचा कि मुझे अपने पहले ही कथनपर दृढ रहना चाहिए। जबतक हमे अपने खिलाफ पडनेवाली तमाम वाते ठीक-ठीक मालूम न होगी, तबतक हम अपनेको शुद्ध नही बना सकते — अपने दोपोको अपने अन्दरसे निकाल नही सकते। मै जो कुछ जानता या अनुभव करता हूँ उसे यदि मै न कहूँ तो मै मुसलमान भाइयोके साथ बेईमानी करूँगा और यदि मै हिन्दुओका प्रेम खोनेके डरसे अथवा किसी दूसरे कारणसे, सच बात न कहूँ तो मै हिन्दू न रहूँगा। यह कहनेकी तो आवश्यकता ही नही कि कानूनकी दृष्टिसे ऐसे कथनका क्या परिणाम होगा। यह सोचना मेरा काम नही। सरकार जो चाहे सो करे। यदि पारसी और ईसाई लोग समझदार होगे तो वे उसके हाथके खिलौने न बनेगे। परन्तु एक असहयोगीकी हैसियतसे मुझे कानूनी नतीजोसे कोई वास्ता नही। जिन लोगोने जान-मालका नुकसान किया, वे या तो असहयोगी थे, या उनसे हमदर्दी रखनेवाले या महज शरारती लोग थे। पहले दो लोग तो, यदि वेकुसूर होते हुए सजा पाये तो उन्हे खुशी ही होनी चाहिए, क्योकि हम निर्दोष होते हुए जेल जानेको ही महत्व देते है। पर यदि उन्होने वास्तवमे गलती की हो तो फिर उन्हे दण्ड पानेपर रज करनेकी जरूरत ही नही हे। और शरारती लोग तो मुझसे किसी तरहके बचावकी आशा ही न करे। अतएव मेरे पास जो अच्छेसे-अच्छा रक्षाका साधन है और जो अच्छीसे-अच्छी सेवा मै कर सकता हूँ वह यही है कि नतीजेका खयाल किये विना सच बात कह दूँ। यह एक महान् सघर्ष है। करोडो आदमियोका ताल्लुक इससे है। इसमे नित नई स्थिति और अनिश्चित वाते पैदा होती रहती है, और उनका सामना करना पडता है। ऐसे विकट सघर्षका सचालन किसी दूसरे प्रकारसे सम्भव ही नही है। ऐसी अनिश्चित अवस्थाओमे हमारे पास अगर कोई अमोघ अस्त्र है तो वह सत्य और अहिसा ही हे।

जेलका डर

यद्यपि हमने जेलके डरको बहुत-कुछ दूर भगा दिया हे, फिर भी आगे बढकर जेल जानेमे कुछ हिचक और उसको टालनेकी चिन्ता अभी भी है। हमे एक ओर जहाँ नेक और सच्चे तथा अहिसापूर्ण रहना चाहिए, वही दूसरी ओर हमे सरकारी जेलोके अन्दर पहुँचनेके लिए प्राय उत्सुक भी रहना चाहिए। जिस सरकारको हम सुधारना या मिटाना चाहते है उसकी अधीनतामे मिलनेवाली इस नाम-मात्रकी आजादीका उपयोग करना हमे निश्चय ही यदि कष्टकर नही तो अटपटा अवश्य लगना चाहिए। हमे यह अनुभव करना चाहिए कि अपनी आजादीको कायम रखनेके लिए हमे कुछ गैर-मुनासिब या भारी कीमत चुकानी पड रही है। अतएव यदि हम निरपराध होते हुए जेल भेजे जाये तो हमे हर्ष होना चाहिए, क्योकि इससे जरूर ही हमारे मनमे यह भाव उठना चाहिए कि अब आजादी नजदीक है। जो सैकडो लोग अपनी मातृ-

भूमिके लिए हँसते हुए कैद भोग रहे है, क्या उनके कारण आजादी पहलेसे ज्यादा नजदीक नही आ गई है? बम्बईके असहयोगियोके लिए इससे बेहतर बात और क्या हो सकती हे कि निरपराध होते हुए भी उन्हे अपराधियोके बदले जेल भेज दिया जाये?

खरा हृदय

लेकिन मेरे ये उद्गार उन्ही लोगोको अच्छे मालूम होगे जिन्होने अपने दिलको बदल दिया है — उन हिन्दू और मुसलमान भाइयोको नही, जो अब भी यह मानते है कि हिन्दुओ और मुसलमानोकी बनिस्बत पारसियो और ईसाइयोका ही अधिक दोप है। मेरे कथनके विरोधमे मेरे पास कितने ही पत्र आये है। उनसे मालूम होता है कि बहुतेरे हिन्दू और मुसलमान भाइयोका यह विश्वास है कि पहला वार पारसियो और ईसाइयोने ही किया था। पर यद्यपि मेरी जानकारी इसके प्रतिकूल है, तथापि मै यह माननेके लिए तैयार हूँ कि आरम्भ उन्हीकी ओरसे हुआ, तो भी क्या हिन्दू और मुसलमान अपनी प्रतिज्ञाके कारण, अपनी बडी सख्या और अपने धर्मके कारण बदला न लेने तथा उनसे मेल-जोल करने और उनकी रक्षा करनेके लिए बाध्य नही है? फिर ऐसा करनेके लिए उन्हे विशेप प्रयत्न भी करना पडे, तो कोई हर्ज नही।

मौलाना बारीका फतवा

अब मौलाना अब्दुल बारीकी बात सुनिए। बम्बईके उपद्रवोका सविस्तर हाल जाननेपर उन्होने एक फतवा जारी किया था, उसे यहाँ उद्धृत करनेके लिए कोई सफाई देना मै जरूरी नही समझता

> **हम यह हरगिज नहीं चाहते कि युवराजकी बेइज्जती की जाये, या उनको कोई जिस्मानी नुकसान पहुँचाया जाये। हम तो सिर्फ उन्हे नौकरशाहीके रुतबेके धोखेसे बचाना चाहते हैं और हिन्दुस्तानके और यहांके लोगोके सच्चे जजबातसे उनको बाखबर करना चाहते हैं। इसके लिए जो जरिया हमने तजवीज किया है वह है हडताल, ऐसी हडताल जिसमें हिंसाका नामोनिशान तक न हो।**
>
> **... हम बम्बईके दंगे-फसादको अपने सियासी उसूलोके ही नहीं, मजहबी उसूलोके भी खिलाफ मानते हैं। ..आगे चलकर अगर ऐसी गड़बडियोकी रोकथाम न की गई तो अकलियतके लोग हिन्दुस्तानी जम्हूरियतपर कभी यकीन नहीं ला सकेगे।...**

अल्पसख्यकोके अधिकार

इसलिए जबतक हम पारसियो, ईसाइयो या यहूदियोके बारेमे अपने दिलमे रत्ती-भर भी बुरा खयाल रहने देगे तबतक हम अपना लक्ष्य प्राप्त नही कर सकते। अल्प-सख्यक जातियोके लोग हमारी राजनीतिक अथवा दूसरी बातोको माने, तभी हम उनकी रक्षा करे, यह शर्त नही लगाई जा सकती। इसे रक्षा नही कहते। सच्ची रक्षा तो वही है जो मतभेद होते हुए और यहाँतक कि अल्पसख्यक जातियोका विरोध होते हुए भी की जाये। अगर हम इस देशमे पूर्ण स्वातन्त्र्य चाहते है, तो हमे अल्प-

सख्यक जातियोके स्वत्वोकी रक्षा सबसे पहले करनी चाहिए। यहाँतक कि एक बच्चा भी अपनी राय बेरोक-टोक प्रकट कर सके। बहुमतका शासन अल्पसख्यक जातियोको कुचलनेके काममे लाया जाये तो यह बर्बरता है। स्वतन्त्र भारतमे हम यह नही चाहते कि लोग दबकर समान-रूप हो जाये। यह तो निर्जीव समानता होगी। हम तो यह चाहते है कि लोग अपनी जुदा-जुदा राये रखे, उनके व्यवहारमे भी भिन्नता रहे, परन्तु उनमे बोलबाला उसीका हो जिसकी बात सबसे अच्छी और लाभदायक हो, सो भी लाठीके बलपर नही, बल्कि न्यायके बलपर। सत्ताके भारके नीचे तो हम बहुत दिनोसे कराह रहे है, और बहुसख्यक लोगोके दबावमे उतनी ही पशुता हो सकती है जितनी कि अल्पसख्यक लोगोकी गोलियोमे है। अतएव यदि हम आजाद होना चाहते हो, तो हमे अपने पारसी और ईसाई-भाइयोके साथ धीरजसे पेश आनेकी जरूरत है। पारसियो और ईसाइयोके सम्बन्धमे जो अन्ध दुर्भाव दिखाई देता है, वह तो मुझे खुद हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए भी हानिकारक मालूम होता है। यदि हम पारसियो या ईसाइयोके मतभेद आदिको सहन नही कर सकते तो इस बातका क्या इत्मीनान है कि हिन्दू भी, जब वे पाशविक शक्तिमे अपनेको बढकर पायेगे तब, अल्पसख्यक मुसलमानोपर अपनी इच्छा न थोप देगे, या जब मुसलमान अपनेको अपेक्षाकृत अधिक पशु-बलका प्रयोग करनेकी अवस्थामे पायेगे तब वे कमजोर हिन्दुओको, उनकी सख्या अधिक होनेपर भी, न धर दबायेगे ?

बगालसे आई एक प्रतिध्वनि

बगालसे एक मित्रने पत्र लिखा है। पत्र-प्रेषक महाशय इस विषयके जानकार है। वे कहते है

> मैं आपसे यह कह देना चाहता हूँ कि यदि पूर्वी बगालमें सविनय अवज्ञा शुरू हुई तो इसका नतीजा और भी ज्यादा बुरा होगा। वहाँ मुसलमानोकी तादाद ७० फी सदीसे भी ज्यादा है। उनमें ज्यादातर लोग हुल्लडबाज है। जहाँ ये लोग जोशपर चढ़े कि हिन्दुओपर टूट पडेंगे, बडा जोरोजुल्म कर बैठेंगे और हिन्दू जमींदारो और सेठ-साहूकारोको आतकित कर देंगे। उनमें जो समझदार और शरीफ लोग है, वे उनको काबूमें न रख सकेंगे। हिन्दू-मुस्लिम एकता जरा-से धक्केसे भरभरा जायेगी। कलकत्तामें भी हालत बहुत ही खराब हो जायेगी। मैं आपसे सच्चे दिलसे अनुरोध करता हूँ कि आप हिन्दुस्तानके लोगोसे और यहाँके हालातके बारेमें बहुत ज्यादा उम्मीद न रखें। आप दक्षिण आफ्रिकाकी परिस्थितियो और वहाँके लोगोको जितना अधिक पहचानते है उतना इस भारतभूमि और यहाँके लोगोको नहीं पहचानते। इस स्पष्टोक्तिके लिए मुझे माफ कीजिएगा। अभी आप सविनय अवज्ञा शुरू करनेके खिलाफ जान पडते है। पर यदि आपने अपना इरादा बदल दिया, तो मुझे इसके सिवा दूसरा नतीजा नहीं दिखाई देता कि चारो ओर भय और आतक छा जायेगा। आपके उच्चतम आदर्श चौपट हो जायेंगे और देश और भी अधिक उत्पीडन और

विपत्तियोका शिकार हो जायेगा। इन वर्षोंमें आपने जो-कुछ भी किया है, वह सब मिट्टीमें मिल जायेगा।

इस किस्मकी यह एक ही चेतावनी मुझे नही मिली है। बम्बई देशका एक सबसे बडा केन्द्र है। अतएव उसकी बदौलत लोगोमे उथल-पुथल होना स्वाभाविक है। अल्पसख्यक लोगोके अधिकारोकी रक्षाका अर्थ है, कमजोरोकी रक्षा, और कमजोरोकी रक्षाके मानी है, बूढो, बालको और अबलाओ तथा उन सब लोगोकी रक्षा जो दीन-दुखी है। और यदि आज हिन्दुओ और मुसलमानोकी एकताका उपयोग पारसियो और ईसाइयोके खिलाफ किया जाता है तो कल ही वह एकता लोभ-लालचके अथवा मिथ्या धार्मिकताके दबावसे टूट सकती है। यह किसी भी तरह स्वराज्यका कोई अच्छा चित्र तो नही है। भारतको यदि स्वतन्त्र होना है, तो इसके लिए पूर्ण और सच्ची अहिसाके सिवा दूसरा मार्ग ही नही है। अतएव अहिसाका उपयोग हिसाकी तैयारीके लिए बिलकुल न होना चाहिए। इसको समझना स्वराज्यका और स्वधर्मका साक्षात्कार करना है। हिन्दू और मुसलमान सावधान रहे, 'गीता' और 'कुरान'का गलत अर्थ न लगायें। और आजमाइशके तौरपर वे अपने सयुक्त बलको अल्पसख्यक जातियोकी रक्षामे लगाये। इससे वे एक-दूसरेकी रक्षा करना सीखेगे।

नीति नहीं बल्कि धर्म

और यह तबतक नही किया जा सकता जबतक कि इस सालके अनुभवसे हम यह न सीख ले कि "भारतकी स्वतन्त्रता और भारतके सभी धर्मों और सम्प्रदायोकी एकता प्राप्त करनेके लिए और उसे कायम रखनेके लिए, अहिसाको हमे अपना एकमात्र धर्म मानना चाहिए।" इसके बाद भी हर सम्प्रदायको अपने धर्मकी रक्षाके लिए, और सबको मिलकर भारतकी प्रतिरक्षाके लिए, लडनेकी स्वतन्त्रता रह जाती है। किन्तु अहिसाको एक ऐसी नीति या तरकीब नही समझना चाहिए जिसे हमे भारतकी स्वतन्त्रता प्राप्त करने या उसे मजबूत बनानेके लिए आजमाना है। इसलिए हिन्दुओ और मुसलमानोको शुभारम्भके तौरपर पारसियो, यहूदियो और ईसाइयोसे, जिनमे अग्रेज भी शामिल है, चाहे वे सहयोगी हो या असहयोगी, प्रेम करना चाहिए और उनकी सेवा करनी चाहिए। और यदि हमे ऐसा करना है तो हमारी वाणीमे कटुता नही होनी चाहिए और, लोगोसे अपना मत स्वीकार करानेकी प्रक्रियामे, किसी बच्चेपर भी — उसकी टोपी उतारनेके लिए — हाथ नही लगाना चाहिए, और न ही शराबियोके साथ उनकी शराबकी लत छुडानेके लिए जोर-जबर्दस्ती करनी चाहिए। हमारा ध्येय केवल यह होना चाहिए कि हमारी अपील उनके विवेकके लिए, दिमागके लिए और हृदयके लिए हो। हमें कभी भी, वचनो द्वारा या शारीरिक रूपसे, पाशविक शक्तिका प्रयोग नही करना चाहिए। जब भारतके लाखो-करोडो लोग स्वेच्छासे और अपनी समझसे हमारे पक्षमे हो जायेगे, तो हम स्वराज्य प्राप्त कर लेगे। सहयोगियोको सबसे बडा भय यह है कि अहिसा हिंसाके लिए एक पर्दा है और नेक-नीयत लोगोकी कोशिशके बावजूद यह आन्दोलन अन्तमे उच्छृखल और उपद्रवी लोगोके हाथमे चला जायेगा। हम इस भयको तर्कसे दूर नही कर सकते। ऐसे

निर्विवाद तथ्योका एक लगातार सिलसिला ही उसे दूर कर सकता है, जिनके लिए प्रमाणकी कोई जरूरत नही हो। हमने बहुत प्रगति की है, पर हम यह दावा नही कर सकते कि हमारी वाणी या कर्ममे कोई गलती नही रही है। प्रेम, उदारता, विनम्रता, कोमलता, इनके लिए किसी स्पष्ट प्रमाणकी आवश्यकता नही। इसलिए हमें अहिंसापर ज्यादा और असहयोगपर कम जोर देना चाहिए। अहिंसा ही असहयोग है। सरकारका एकमात्र सहारा हिंसा है। क्या हमारा एकमात्र सहारा अहिंसा है? क्या हमने खुदको हिंसाकी उसकी विचारधारासे पूरी तरह अलग कर लिया है? उसकी सबसे बडी शिक्षा-संस्था तो हिंसा ही है। जिस दिन हम हिंसाकी प्रतिष्ठा पूरी तरह मिटा देंगे, उस दिन हम स्वराज्य स्थापित कर लेंगे। और ऐसा करनेके योग्य बननेके लिए हमें यह सीखना चाहिए कि अंग्रेजकी उस प्रणालीसे घृणा करते हुए भी जिसके अधीन वह भारतपर शासन करनेका दम भरता है, हमें अंग्रेजसे प्रेम करना है। मौलाना अब्दुल बारीके शब्दोमें, हमारी अंग्रेजसे कोई लडाई नहीं है, हमारी लडाई तो उसके जोर-जबर्दस्तीके शासनसे है।

व्यावहारिक सुझाव

तब यदि हम अपने विरोधियोंसे प्रेम करते है तो हमारा प्रेम हमारे कार्योंमें प्रकट होना चाहिए। हमें उन्हे अपनी सभाओंमे बुलाना चाहिए और उनकी बात धैर्य और शिष्टतासे सुननी चाहिए। उनके बारेमें बोलते हुए हमें उन्हे बुरा-भला नही कहना चाहिए। उनका नाम सुनकर हमें "शर्म, शर्म" के नारे नही लगाने चाहिए। हमें उनकी उसी तरह निःसकोच सामाजिक सेवा करनी चाहिए जिस तरह हम अपने पक्षवालोंकी करते हैं। हमे केवल उनकी राजनीतिक सेवा नही करनी है या उन्हें राजनीतिक सहायता नही देनी है। हमें सभी प्रकारके उत्तेजनात्मक भाषणों और तमाम नारोंसे बचना चाहिए। "महात्मा गाधीकी जय" और अन्य नारे बिलकुल बन्द कर देने चाहिए। हमें अपनी सभाएँ इस तरहके नारोंके बिना ही चलानी चाहिए। और यदि हम इस तरहके नारोंके बिना भारी भीड इकट्ठी न कर सके, तो उसका न होना हमारे लिए बेहतर ही होगा। जिस जिले या तहसीलमें इस तरहका नियन्त्रण कायम नही किया जा सकेगा, उसे मैं सविनय अवज्ञा-आन्दोलनके योग्य नही समझूँगा। धरनेको बहुत ही शकाकी दृष्टिसे देखना चाहिए। निःसन्देह यह हर कही पूर्णतया अहिंसात्मक नही रहा है। इसमें वाणीकी हिंसा या हिंसाका दिखावा होता रहा है। इसलिए धरना देना कमसे-कम फिलहाल, या जबतक कि हममें बहुत अधिक आत्म-नियन्त्रण न आ जाये और हम बहुत अनुभव न प्राप्त कर ले, रोक देना चाहिए। हम अपना ध्यान अभी शराबियोंके बीच काम करने तक सीमित रख सकते हैं।

हडताले

यदि पूर्ण शान्तिकी गारण्टी की जा सके और हर तरहकी जोर-जबर्दस्तीसे बचा जा सके, तो जहाँ-जहाँ युवराजको ले जाया जा रहा है, वहाँ-वहाँ हडतालोका ऐलान किया जा सकता है। यदि ट्रामे चलती हैं, तो हमे उसमें हस्तक्षेप नही करना चाहिए।

यदि लोग ट्राम-गाडियोका उपयोग करते है तो हमे यह जान लेना चाहिए कि वे हमारे साथ शामिल नही होना चाहते। यदि एक भी आदमी अपनी दुकान खुली रखना चाहता है, तो हमे उसकी इस स्वतन्त्रताकी रक्षा करनी चाहिए। हडतालका बहुत अधिक महत्व है लेकिन तभी जब यह पूर्णतया स्वेच्छासे हो।

पारसी और ईसाई

बम्बईके पारसियो और ईसाइयोके लिए यह भारी परीक्षा और प्रलोभनकी घडी है। बहुत सम्भव है कि उन्हे हिन्दुओ और मुसलमानोके खिलाफ दावे दायर करनेका लोभ दिखाया जाये। इस लोभमें फँसना एक घातक गलती होगी। उन्हे अपने-आपको इस अवसरके योग्य सिद्ध करना चाहिए, और अदालतोके जरिये राहत या हर्जाने हासिल करनेकी कोशिश नही करनी चाहिए। पूरी सतर्कताके बावजूद कभी-कभी झगडे रोके नही जा सकते। वे जानते है कि हिन्दुओ और मुसलमानोमें जो सबसे समझदार है उन्हे इस दुर्भाग्यपूर्ण झगडेसे गहरा दुःख पहुँचा है और वे हिन्दुओ और मुसलमानो द्वारा किये गये आक्रमणपर लज्जित है। पारसियो और ईसाइयोको अब सिर्फ ऐसी राहतके लिए ही कोशिश करनी चाहिए, जो उन्हे एक गैर-सरकारी समितिके जरिये मिल सकती है। यह सच है कि यदि वे सरकारके जरिये भी हर्जाना हासिल करनेकी कोशिश करे तो भी हिन्दुओ और मुसलमानोको अपना दिमाग ठडा रखना चाहिए। पर यदि उन्होने गैर-सरकारी कार्यवाहीकी जगह सरकारी कार्यवाही ही पसन्द की, तो मानव-स्वभावको देखते हुए लोगोके लिए अपने-आपको ठडा रखना कठिन तो हो ही जायेगा।

सरकारके बारेमें

पत्र लिखनेवालोने जहाँ मुझे पारसियो, ईसाइयो और यहूदियोसे क्षमा माँगनेके लिए बधाई दी है, वही सरकारसे क्षमा न माँगनेके लिए फटकारा भी है। किन्तु यह फटकार बताते हुए उन्होने क्षमा-याचनाकी मुख्य बातको नही देखा। कोई प्रणाली झगडोके लिए यदि अधिक नही तो असहयोगियो जितनी ही जिम्मेदार हो, तो मै उस प्रणालीसे या उसके प्रशासकोसे क्षमा नही माँग सकता। अपनी बातको मै इस धारणाके साथ शुरू करता हूँ कि इस प्रणालीके प्रशासकोको इन झगडोमे आनन्द आता है और वे उन्हे खुद बुलावा देते है। इसके लिए वे एक तो अप्रिय कार्यो द्वारा उत्तेजना पैदा करते है और दूसरे जनताके क्रोधके उबालको दबानेके लिए भयावह तैयारियाँ करते है। ईसाइयो, अग्रेजो और सहयोगियोसे जो क्षमा माँगी गई है, उसमे व्यक्तियोकी हैसियतसे प्रशासकोसे भी क्षमा-याचना शामिल है। मैने कहा है कि यदि असहयोगियोने युवराजके स्वागतमे शामिल होनेवाले एक भी व्यक्तिका अपमान किया है, तो उन्होने युवराजका अपमान किया है और अहिंसाकी प्रतिज्ञा तोडी है। मै नही समझता कि असहयोगियोने इन तीन शर्मनाक दिनोमे सरकारको किसी भी रूपमे या किसी भी तरहसे चोट पहुँचाई है। इसके विपरीत, मै यह महसूस करता हूँ और जानता हूँ कि गुमराह शरारतियोसे सरकारको और बल मिला है। इस तरह, पाठक यह देखेंगे कि एक ऐसी सरकारसे क्षमा माँगना, जिसका इन घटनाओसे हित सिद्ध

हुआ हो या जिसे लाभ पहुँचा हो, कोई उपयुक्त कार्य नही होगा। मेरा एक लघु उद्देश्य एक प्रणालीके रूपमे सरकारको, और इसलिए उसके प्रशासकोकी प्रतिष्ठाको, चोट पहुँचाना भी है। लेकिन मैं यह काम पूरी तरह अहिंसात्मक रहकर और हर सम्भव व अहिंसात्मक तरीकेसे उससे कोई सम्पर्क न रखकर तथा दूसरोको भी ऐसा ही करनेके लिए प्रेरित करके करता हूँ। वस्तुत यदि अहिंसा सरकार और जनता दोनोका समान धर्म बन जाये, तो किसी भी झगडेकी कतई गुजाइश नही रहेगी और तब असहयोगका प्रश्न ही नही उठेगा।

कुछ और उल्लेखनीय व्यक्ति जेलमें

मौलाना शरर मद्रास अहातेके एक प्रभावशाली वक्ता और खिलाफतके कट्टर कार्यकर्त्ता हैं। वे एक अच्छे लेखक भी हैं। मद्रास सरकारने उनकी आवाज एक सालके लिए बन्द कर दी है। पजाब सरकारने पण्डित नेकीराम शर्माको गिरफ्तार कर लिया है। बम्बईकी जनता उनसे अपरिचित नही है। १७ तारीखको जब भिण्डी बाजारमे शराबकी एक दुकान जलाकर खाक कर दी गई थी तब उन्होने कई जानें बचाई थी। श्री गगाधरराव देशपाण्डेको छ मासका साधारण कारावास दिया गया है। मैं आशा करता था कि उन्हे तथा और लोगोको इस सालके आखिरसे अधिक समयतक आराम करनेका मौका नही मिलेगा। बम्बईकी घटनाओने, लगता है, मेरी आशाएँ धूलमे मिला दी हैं। उससे पहले मुझे यह यकीन था कि या तो हम जेलके दरवाजे खुलवा सकेंगे, या कमसे-कम खुद भी अपने साथियोके पास उनके आराम-घरोमे पहुँच जायेंगे। लेकिन अब ईश्वर ही जानता है, क्या होगा?

बहादुर सिक्खोकी गिरफ्तारी

'बॉम्बे क्रॉनिकल'मे छपे एक तारसे पता चलता है कि पजाब सरकारने सिखोको सविनय अवज्ञाके लिए उत्तेजित किया है। अमृतसरमे होनेवाले एक सिख दीवानपर सरकारने पाबन्दी लगा दी थी। सिखोको यह सहन नही हुआ। उन्होने दीवान किया, और फलस्वरूप ग्यारह सुप्रसिद्ध सिख गिरफ्तार कर लिये गये। उनमे गुरुद्वारा कमेटीके प्रधान, पुराने नेता सरदार खडगसिह हैं। दूसरे हैं सरदार बहादुर मेहताबसिह, जिन्होने हाल ही मे गुरुद्वारेके प्रश्नपर पजाब विधान परिषदके उपाध्यक्ष-पदसे तथा सरकारी वकीलके पदसे त्यागपत्र दिया है। तीसरे व्यक्ति अमृतसर नगर काग्रेस कमेटीके प्रधान सरदार दानसिह हैं। यदि सिख बराबर शान्त किन्तु दृढ बने रहे, तो सिख नेताओका कारावास गुरुद्वारेके प्रश्नका वाछित समाधान करके रहेगा।

हडतालें

हडताल होनेपर जिन मिल मजदूरो और अन्य कर्मचारियोको अपने सहानुभूति न रखनेवाले या विदेशी मालिकोमे छुट्टी नही मिल सकती, उन्हे क्या करना चाहिए? अहिंसाकी दृष्टिसे इसका केवल एक ही उत्तर हो सकता है। जो कर्मचारी अपने-आप छुट्टी करता है, वह हिंसा करता है, क्योकि वह अपनी नौकरीका करार तोडनेका अपराध करता है। अपने मालिककी इजाजत बिना वह गैरहाजिर नही हो सकता।

यदि वह अपने मालिकसे सन्तुष्ट न हो, तो वह केवल इस्तीफा दे सकता है। परन्तु कर्मचारियोका समूचा समुदाय तो इकबारगी ऐसा भी नही कर सकता, क्योंकि अपनी राजनीतिक रायको मनवानेके लिए वे बिना वाजिब नोटिसके काम छोडनेकी धमकी नही दे सकते। सक्षेपमे, मिल-मजदूरो और ऐसे अन्य कर्मचारियोको इस बातके लिए नही उकसाना चाहिए कि वे अपने मालिकोपर छुट्टी देनेके लिए दबाव डाले। अहिंसात्मक कार्यवाही उतनी आसान नही है जितनी कि बहुतसे लोग समझते हैं। मैंने लोगोको यह कहते सुना है कि शराबकी दुकानोपर जानेवालोंकी कसकर टाँगे पकड लेना अहिंसा है। इसी तरह लडकोने शराब बेचनेवालोको गन्दी गालियाँ देना अहिंसात्मक कार्य मान रखा है। यह भाषाके साथ सिर्फ खिलवाड है और बम्बईमे इसका कडवा फल चखनेको मिला है। यदि हम अहिंसाको अच्छी तरह आजमाना चाहते हैं तो हमें स्वय अपने प्रति सच्चा होना चाहिए। यदि हम अपने विचारोको अहिंसात्मक न बना सके, तो भी हमे अपने वचन और कर्मको तो इतना सयमित करना ही चाहिए कि वे पूर्णतया अहिंसात्मक हो जाये। यदि हमे व्यवहारमे यह चीज असम्भव या अत्यन्त कठिन लगती हो, तो हमे कोशिश छोड देनी चाहिए। किन्तु हमें अपनी असमर्थताके बदले जीवनके इस महानतम सिद्धान्तको दोषी नही ठहराना चाहिए। यदि हमें असफलता ही मिलनी है, तो वह अहिंसाकी असफलता नही होगी, बल्कि अहिंसाके पालनमे हिंसक लोगोकी असफलता होगी।

आन्ध्र द्वारा की गई परिभाषा

स्वराज्यकी विभिन्न परिभाषाएँ की गई है। श्री गोपाल कृष्णैयाने, जिनपर दूसरी बार मुकदमा चलाया गया है और जिन्हे और सजा दी गई है, जो कि पहलीके साथ-साथ ही चलेगी, मजिस्ट्रेटके सामने एक लम्बा वक्तव्य दिया है। यह उनके राजनीतिक मतकी विज्ञप्तिसे अधिक उनके विश्वासका आध्यात्मिक विवेचन है। इससे निश्चय ही यह स्पष्ट हो जाता है कि जिस भाषणपर मुकदमा चलाया गया है उसमे न तो हिंसा थी और न हिंसाके लिए उकसानेकी ही बात थी। लेकिन मेरी दिलचस्पी यहाँ केवल स्वराज्यकी उनकी रोचक परिभाषामे है। वह यहाँ दी जा रही है

> फारसके हमलोसे जैसे पुराने यूनानियोमें एकता आ गई थी, उसी तरह समान राजनीतिक यातना हिन्दू और मुसलमानोको एक नहीं कर सकेगी, बल्कि वह एकता एक दूसरेके धर्मके लिए सम्मान, आदर और प्रेम रखनेसे तथा उनके अपने-अपने रूपको आवश्यक समझनेसे ही स्थापित हो सकेगी। इसलिए स्वराज्यका अर्थ हिन्दूधर्म, मुस्लिम धर्म, ईसाई धर्म, पारसी धर्म, सिख धर्म — संक्षेपमें सबके स्वधर्मकी रक्षा और सबका एक संयुक्त संघ है। सभी धर्मोको आज प्रत्यक्षवादी नास्तिक दर्शन, औद्योगिक अराजकता और आध्यात्मिक दिवालियापनसे, जो इस समय संसारको घेरे हुए है, विनाशका खतरा है।

चरित्रवान व्यक्तियोको जब उनके धार्मिक विश्वासके लिए कारावास दिया जा रहा हो, तो निश्चय ही इसका अर्थ यह है कि हम अपने लक्ष्यके निकट पहुँच रहे हैं।

सरदार गुरुदत्तसिंह

सात सालतक छिपे रहना और पुलिसके हाथ न आना और उसके बाद अपनेको खुले आम पुलिसके हाथ सौप देना कोई मामूली बात नही है। परन्तु सरदार गुरदत्त-सिहने ऐसा ही आश्चर्यजनक काम किया है। मेरे सामने उनका खुला पत्र और दूसरे कागजात हैं। अपनी अन्य व्यस्तताओके कारण मैं इनपर ध्यान नही दे पा रहा हूँ। परन्तु मैं सिखोको इस बातके लिए बधाई दिये बिना नही रह सकता कि जब सरदार गुरदत्तसिहने आत्मसमर्पण किया और मजिस्ट्रेटने उन्हे हिरासतमे लिया, उस समय उन्होने शान्ति रखी। अहिंसाके बारेमे हमे इतना दृढ होना चाहिए कि हम बडेसे-बडे साहसके कदम भी पूर्ण आत्मविश्वासके साथ उठा सके। अहिंसात्मक बननेके लिए स्वदेशीसे बढकर और कोई चीज नही। एक व्यक्तिने मुझे लम्बा पत्र भेजा है जिसमे यह कहा गया है कि मुझे इस बातपर आग्रह करना चाहिए कि स्वदेशीका कार्यक्रम पूरा होनेसे पहले कोई भी तहसील सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू न करे। मैं इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ। मैं यह जानता हूँ कि यदि समस्त भारत स्वदेशीको अपना ले, अर्थात् अपनी करोडो कुटियोमे खादी तैयार करके विदेशी वस्त्रका पूर्ण बहिष्कार कर दे, तो हिसा असम्भव हो जायेगी। मैं चाहूँगा कि सिख और अन्य भारतीय अपना सारा ध्यान हाथसे सूत कातने और कपडा बुननेपर लगाये।

खादी टोपीके लिए दस दिनकी सजा

बम्बईके पिछले दगेमे खादी टोपीकी बहुत चर्चा रही। डा० साठेपर अपनी खादी टोपी न उतारनेके कारण बुरी तरह हमला किया गया। अब मैंने सुना है कि फोर्टके नाविकोने बहुत-से निर्दोष व्यक्तियोकी खादी टोपियाँ जबर्दस्ती छीनी हैं। मैं तो यही आशा करता हूँ कि इस निरर्थक अत्याचारसे राष्ट्रका सकल्प और दृढ होगा और हजारो लोग खादी टोपीके लिए, जो तेजीके साथ स्वदेशी और स्वराज्यका एक स्पष्ट प्रतीक बनती जा रही है, मरनेको तैयार हो जायेगे। परन्तु इसका सबसे स्पष्ट उदाहरण बगालसे मिला है। बगालके कोमिल्ला जिलेमे ब्राह्मण-बाडीके एस० डी० ओ० श्री टी० एच० एलिसने १६ तारीखको यह नोटिस जारी किया

> सरकारने यह फैसला किया है कि तथाकथित गाधी टोपियॉ पहनना भारतीय दण्ड-सहिताकी धारा २२८के अधीन एक अपराध है। भद्र लोगोको यह चेतावनी दी जाती है कि आदेश लागू किया जायेगा।

परिणामस्वरूप, एक स्वयसेवकपर, इस आदेशके बावजूद खादी टोपी पहननेपर, दस रुपया जुर्माना किया गया। उसने जुर्माना अदा करनेसे इनकार कर दिया और दस दिन जेलमे रहना पसन्द किया। मैं यहाँ धारा २२८ उद्धृत कर रहा हूँ

> जो भी कोई व्यक्ति किसी सरकारी कर्मचारीका, जब कि वह सरकारी कर्मचारी अदालती कार्रवाईकी किसी भी स्थितिमें बैठा हो, जानबूझकर अपमान करेगा या उसको किसी प्रकारकी बाधा पहुँचायेगा, उसे छः मासतक के साधारण कारावासकी या एक हजार रुपयेतक के जुर्मानेकी अथवा दोनोकी सजा दी जायेगी।

इस प्रकार खादी टोपी पहनना अबसे बंगालमें सरकारी कर्मचारीका अपमान माना जायेगा। मैं समझता हूँ कि इस एस० डी० ओ०ने खुद वे अधिकार हथिया लिये हैं जो बंगाल सरकार द्वारा उसे या किसी भी अन्य मजिस्ट्रेटको कभी भी दिये नहीं गये थे। कुछ भी हो, यदि यह आदेश आम है तो वैसे नंगे सिर रहनेवाले बंगाली सिर्फ आत्म-सम्मानकी भावनाके कारण शीघ्र ही खादी टोपियाँ पहनना शुरू कर देंगे। मैं इस स्वयंसेवकको, जो खादी टोपी पहननेके अपराधपर कारावासका सम्मान प्राप्त करनेवाला पहला व्यक्ति है, बधाई देता हूँ।

मद्य-निषेधकका प्रमाण-पत्र

मद्य-निषेधकका निम्नलिखित पत्र प्राप्त कर मुझे हर्ष और आश्चर्य हुआ। मुझे आशा थी कि डा० जॉन्सनसे भेंटका सौभाग्य मिलेगा, परन्तु हमारे कार्यक्रमोंकी पटरी नहीं बैठ सकी। इसलिए उनका एक पत्र पाकर, जिसमें मद्य-निषेधके हमारे कार्यको उन्होंने मान्यता दी है, विशेष सन्तोष मिला

"प्रिय श्री गांधी,

आपके देशसे विदा होते हुए, मेरा मन बार-बार उस शानदार कामकी ही बात सोच रहा है जो आप मद्य-निषेधके ध्येयके लिए भारत और परिणामतः समस्त संसारके लिए कर रहे हैं। . . .

"अपनी धर्मपत्नीको कृपया मेरा सस्नेह स्मरण करा दें और अपने भाईको भी, जिनसे कुछ देर भेंटका सौभाग्य मुझे मिला था।

सस्नेह आपका,
डब्ल्यू० ई० जॉन्सन"

जहाजसे
१९ नवम्बर, १९२१

इस पत्रको पाठकोंके सम्मुख निःसंकोच मैं केवल इसीलिए रख पा रहा हूँ कि जिस कामको डा० जॉन्सनने सचमुच शानदार बताया है उसका श्रेय मैं अपनेको नहीं दे सकता। जो कार्य हुआ है उसमें दो वर्ष भी नहीं लगे हैं। परन्तु इसका श्रेय उन अज्ञात कार्यकर्त्ताओंके विशाल समूहको है जिन्होंने इस आन्दोलनकी धार्मिकतासे अनुप्राणित होकर मद्यनिषेधका कार्य स्वयं आगे बढ़कर किया है। मैं चाहता था कि इस तरहका गौरवपूर्ण कार्य बम्बईमें शराबकी दूकानोंको जलानेकी उच्छृंखल और हिंसात्मक कार्रवाइयोंसे लांछित न होता। मुझे आशा है कि जोर-जबर्दस्तीका लेश भी इस सुधारमें नहीं रहेगा और भारत शीघ्र ही स्वेच्छासे मद्यका परित्याग कर देगा।

अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ

एक बंगाली मित्रने अपने पत्रमें लिखा है :

अस्पृश्यता-निवारणको आपने राष्ट्रीय कार्यक्रममें मुख्य स्थान दिया है। परन्तु जहाँतक मुझे ज्ञात है, आपने इसकी कोई स्पष्ट व्याख्या नहीं की है

कि इससे आपका ठीक-ठीक आशय क्या है। अन्तर्जातीय विवाहके प्रश्नसे अलग, इससे इन तीन सम्भव अर्थोंमें से कोई भी निकाला जा सकता है। इसका अर्थ या तो मनुष्यके स्पर्शको धार्मिक दृष्टिसे अपवित्र न मानना हो सकता है, या उसके हाथसे जल स्वीकार करना हो सकता है, या उसके साथ भोजन करनेमें — विशेषकर उसके हाथका पका भात खानेमें आपत्ति न होना हो सकता है।

इस प्रश्नका उत्तर सामान्यत मैं यह कहकर दे सकता हूँ कि अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ पचम वर्णकी समाप्ति है। इसलिए इसका अर्थ कमसे-कम तो यह है कि मनुष्यका स्पर्श-मात्र अपवित्र न समझा जाये। तथाकथित अस्पृश्योको वैसी ही स्वतन्त्रता होनी चाहिए जैसी कि स्पृश्योको है। इसलिए, आमतौरपर, अभीतक अस्पृश्य समझे जानेवालोके हाथके जलको अपवित्र नही समझा जायेगा। अस्पृश्यता-निवारणके अन्तर्गत किसी अस्पृश्यके या और किसीके हाथका पका भात या अन्य भोजन खाना नही आता। यह जाति-प्रथामे होनेवाले सुधारका विषय है और अस्पृश्यता सम्बन्धी कार्य-क्रमके अन्तर्गत नही है। विवाह और सहभोज सम्बन्धी प्रतिवन्ध अवाछनीय हो सकते है और उनमे परिवर्तन आवश्यक हो सकता है। परन्तु मै उन्हे हिन्दू-धर्मका कलक नही मानता, जैसा कि मैं अस्पृश्यताको मानता हूँ। अस्पृश्यता लोगोके एक वर्गको सामाजिक सेवाकी परिधिसे बाहर कर देती है और इसलिए वह एक अमानवीय प्रथा है।

[अंग्रेजीसे]

यग इडिया, १-१२-१९२१

२१५. एक प्रतिवाद

सम्पादक,
'यग इडिया'
मान्यवर,

१० तारीखको 'यग इडिया' में आपने मुझे जो कडी फटकार[1] बताई है, उसे मैंने ठीक इस भावनासे ग्रहण किया है मानो कोई बुद्धिमान और दूरदर्शी सेनापति किसी गलती करनेवाले सैनिकको फटकार रहा हो। परन्तु कृपया मुझे विनम्रतापूर्ण प्रतिवादके कुछ शब्द कहनेकी अनुमति दीजिए। आपकी सख्त टिप्पणियाँ पढनेमें बहुत सुखकर नहीं थीं। यह देखकर तो निश्चय ही बहुत दु ख हुआ कि आपने जिस ढगसे मेरे बारेमें लिखा है उसमें आपने स्वय अपनी महानताके प्रति अन्याय किया है। शान्त गरिमा, बडेसे-बड़े शत्रुके प्रति भी अति सतर्क न्यायपरायणता, निर्बाध उदारता और मधुर युक्तिपूर्णता, आपकी बहसकी

१ देखिए "अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी", १०-११-१९२१।

प्रणालीकी ये मुख्य विशेषताएँ रही हैं। परन्तु दुर्भाग्यसे इस विशेष अवसरपर उनका प्रायः अभाव ही रहा।

मेरी यह पक्की राय थी कि अध्यक्ष द्वारा स्थगनके बावजूद दिल्लीकी बैठक करना संवैधानिक औचित्यकी अवहेलना करना था। बंगाल और मद्रासके सदस्योंको वहाँ बैठनेका कोई अधिकार नहीं था, क्योंकि अध्यक्ष विनिर्णय दे चुके थे कि उनका चुनाव अवैध है . . . कि कार्यकारिणी समिति तेजीके साथ सारी शक्ति हथियाती जा रही है। मुझे यह देखकर निराशा हुई कि अखिल भारतीय कांग्रेस समिति, कार्यकारिणी समितिको सुशोभित करनेवाले महान व्यक्तियोंकी प्रशंसक होनेके कारण, उस समितिको न केवल एक-एक करके अपने सभी अधिकार सौंपती जा रही है, बल्कि जो चीज इससे भी खराब है वह यह कि वह उसे अध्यक्षके अधिकार भी, उसकी अनुमतिके बिना और इच्छाके विरुद्ध सौंप दे रही है, और इस तरहसे उसे केवल एक कठपुतली बनाये दे रही है। . . . मेरी आत्मा इस उलटा-पलटीके विरुद्ध विद्रोह कर उठी। मैं यह नहीं मानता कि कांग्रेसका संविधान अध्यक्षको केवल एक नाम-मात्रका नेता मानता है, जिसे कार्यकारिणी समिति जिस तरह चाहे नचा सकती है। अध्यक्षका चुनाव राष्ट्र द्वारा किया जाता है। कांग्रेस महासभा उसे सीधे-सीधे सत्ता सौंपती है और वह, संविधानके सिद्धान्तके अनुसार सभाके सभी प्रतिनिधियोंकी सामूहिक प्रज्ञा और सत्ताका मूर्त-रूप है। कांग्रेस-संविधानकी व्याख्या और उसके निर्वहणका एकमात्र अधिकार उसीको है और इन मामलोंमें तथा कार्यविधि सम्बन्धी प्रश्नोंपर उसके विनिर्णय सर्वोपरि और निर्णायक हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि अध्यक्षके विनिर्णय सदा सही होते हैं। परन्तु उन्हें ठीक करानेका तरीका यह नहीं है कि अध्यक्ष-पदकी गरिमापर ही कुठाराघात किया जाये, जैसा कि दिल्लीमें किया गया है। . . . आपकी कड़ी फटकारसे मेरा विश्वास डिगा नहीं है, बल्कि और मजबूत हो गया है . . . पर मेरे रुखको बाधा डालनेवाला बताना तो पूर्व-ग्रहकी भाषा बोलना है, ईमानदाराना मतभेदोंका मजाक उड़ाना है, और यह संकेत देना है कि एक आदमी काफी असुविधा झेलकर और इतना खर्च करके बम्बईसे दिल्ली केवल अपने और औरोंके मनोरंजनके लिए गया होगा। यही शायद सबसे ज्यादा चोट पहुँचानेवाला आक्षेप है, और यदि आप आज्ञा दें तो कहूँ कि यह सच्ची गांधीवादी मनोवृत्ति नहीं है।

मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि महाराष्ट्र दलका आपने जो उल्लेख किया है वह प्रशंसाके लिए है। परन्तु मुझे पूरा विश्वास है कि महाराष्ट्रसे बाहर भी वह उस रूपमें नहीं लिया जायेगा। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है . . . मैं बेकारकी शेखी बघारनेके लिए नहीं बल्कि विनम्र कृतज्ञताके साथ, यह कहनेका साहस करता हूँ कि यह पूरा जिला, जिसके साथ मेरा भाग्य बँधा

है, मेरी मनोवृत्तिके बारेमें आपके अनुमानका पूर्णतया खण्डन करेगा; और आप स्वयं भी किसी दिन दुःखके साथ यह अनुभव करेंगे कि आपने एक विनीत अनुयायी और सहकर्मीके साथ अन्याय किया है।

भवदीय,

हार्वे रोड
जमनादास एम० मेहता

बम्बई,

१७ नवम्बर, १९२१

श्री मेहताके प्रतिवादको मैं सहर्ष स्थान दे रहा हूँ। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूँ कि मैं उनकी भावनाओंको चोट नहीं पहुँचाना चाहता था, बल्कि मेरी टिप्पणियाँ पूर्ण सद्भावनाके साथ लिखी गई थीं। यदि श्री मेहता अपनी आपत्तिके सम्बन्धमें पूर्णतया गम्भीर थे, तो मुझे यह कहनेके लिए क्षमा किया जाये कि मुझे उनके भाषण-में कोई तर्क नजर नहीं आया। परन्तु श्री मेहताने अपनी गम्भीरताका जो विश्वास दिलाया है, उसे मैं पूर्णतया स्वीकार करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १–१२–१९२१

२१६. पत्र-लेखकोंसे

ए० मोहम्मद यासीन: लाहौरमें उलेमाओंके सम्मेलनने एक प्रस्ताव पास कर-के जबर्दस्ती धर्म-परिवर्तनकी निन्दा की है। मैं आपकी इस बातसे सहमत हूँ कि मलाबारके मोपला और हिन्दू अभीतक मित्रोंकी तरह रहते आये थे और यदि कलक्टरने आवेश और लापरवाही न दिखाई होती तो यह उपद्रव खड़ा न होता।

सी० वी० नायडू पूछते हैं

१. यदि नगरपालिकाएँ और स्थानीय बोर्ड भी जनतापर जबर्दस्ती थोप दिये गये हों, जैसा कि चिरलामें हुआ है, तो क्या इन संस्थाओंको कर अदा नहीं करने चाहिए?

यदि स्थानीय कष्टोंसे छुटकारा पानेके लिए सविनय अवज्ञाका सहारा लिया जाता है, तो इस तरहके करोंकी अदायगी रोक देना न्यायोचित ही होगा, और यदि किसी खास इलाकेके कर-दाता स्वराज्यके लिए सविनय अवज्ञाके इस रूपको अपनाते हैं, तो भी करोंका रोक देना उतना ही न्यायोचित होगा। जाहिर है कि यह दूसरा तरीका वहाँ नहीं अपनाया जा सकेगा जहाँ नगरपालिका जनता द्वारा निर्वाचित है और जहाँ उसके साथ असहयोग नहीं किया जा रहा है। प्रत्येक अवस्थामें वातावरण अहिंसात्मक रखना है, यह बात हम पहले ही मान कर चलते हैं।

२. क्या कोई असहयोगी नगरपालिकाओं और स्थानीय बोर्डोंमें निर्वाचित सदस्यकी हैसियतसे प्रवेश कर सकता है?

वस्तुत असहयोगी भारत-भरमे नगरपालिकाओमे प्रवेश कर रहे है, और जहाँ उनके बहुमतकी सम्भावना है वहाँ तो वे विशेष रूपसे ऐसा कर रहे है।

३. क्या आप समझते हैं कि दक्षिण भारत अपने यहाँ फैली हुई अस्पृश्यताको देखते सविनय अवज्ञाके किसी भी रूपको अपनानेका अधिकारी है? (आन्ध्र इसमें शामिल नहीं है, केवल तमिलसे ही अभिप्राय है।)

यदि तमिल-भारतका कोई भी भाग अस्पृश्यताके पापको नही छोडता, तो वह सविनय अवज्ञा करनेके उपयुक्त नही माना जा सकता।

एक पारसी: चेचकके टीकेको बहुत ही नापसन्द करते हुए भी, मुझे 'यग इडिया' के स्तम्भोमे उन बातोके प्रचारके लोभको रोकना पडता है जिन्हे मेरे मित्र मेरी सनक कहते हैं। लेकिन टीका और इसी तरहकी दूसरी बुराइयोका समाधान स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके बाद ही निकाला जा सकेगा।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १-१२-१९२१

२१७. मानवताके नामपर

उदारदलीय लोगोके नाम अपने पत्रमे[1] मैंने अपनी पूरी बात कह दी है, उसकी व्याख्याकी आवश्यकता नही। उसमे मैंने मलाबारकी घटनाओके अप्रमाणित या एक-तरफा विवरणोके बारेमे कुछ नही कहा है। परन्तु मेरे सामने ऐसे पत्र है जिनमे ऐसी-ऐसी अमानुषिकताओका उल्लेख किया गया है जिनके आगे पजाबके अत्याचार भी फीके पड जाते हैं। मलाबारमे प्रवेश निषिद्ध है। वहाँ जिस तरहकी नृशसता हो रही बताई जाती है उसमे कैदियोको दम घोटकर मारनेकी खबर सबसे अधिक चौकानेवाली चीज है, यद्यपि यही सबसे क्रूर अत्याचार नही है। स्वार्थपूर्ण विवरणोके कारण हिन्दुओकी दृष्टि पूर्वग्रहोसे अधी हो गई है। मै इस बातसे इनकार नही करता कि मोपलाओने जबर्दस्ती धर्मपरिवर्तन व अन्य अत्याचार किये हैं। परन्तु मेरी आत्मा यह स्वीकार नही करती कि उसका बदला निर्दोष मोपलाओसे या अपराधियोके बीबी-बच्चोसे लिया जाये, न ही अन्यायी लोगोको यन्त्रणा देनेसे मुझे कोई खुशी हासिल होगी। इस प्रकारके प्रतिशोध मानवीय नही हैं।

मुझे तथ्यो या आरोपोकी और अधिक चर्चा नही करनी है। मैं तो केवल शान्ति-की अपील करता हूँ। सरकार क्या कर रही है? वह सुरक्षा प्रदान करनेमे इतनी असमर्थ क्यो सिद्ध हुई है? या उसका कर्त्तव्य केवल प्रतिशोध लेनेतक और मोपलाओ तथा उनके शिकार हिन्दुओको अलग कर देनेतक ही सीमित है?

यदि यह मान भी लिया जाये कि असहयोगियोने मोपलाओको सरकारके विरुद्ध भडका कर यह उपद्रव शुरू किया था, तो क्या इस समय भी असहयोगी लोग मोपलाओ-

१. देखिए "उदार दलवालोंके नाम", २७-११-१९२१।

के रोषकी ज्वाला भडका रहे है ? क्या विद्रोहको कुचलनेसे वे सरकारको रोक रहे है ? सरकार असहयोगियोको वहाँ जाने और मोपलाओको समझानेके लिए अनुमति-पत्र क्यो नही देती ? यदि वे अपने दिये गये वचनके विपरीत कुछ करे तो वेशक उन्हे गोलीसे उडा दिया जाये। सरकार नेकचलनीके लिए कुछ व्यक्तियोको जमानतके तौरपर अपनी हिरासतमे रख ले। जव एक सम्भव उपाय सामने है और जव असहयोगी, कुछ शर्तोके अधीन, वहाँ जाने और शान्तिके लिए प्रयत्न करनेका प्रस्ताव रख रहे है, उस समय सरकारके लिए मनमाने ढगसे विध्वस और विनाशपर ही तुले रहना विलकुल अमानुषिकता है।

यद्यपि शान्ति और मेलजोल स्थापित करनेका काम निश्चित रूपसे वहुत ही कठिन वना दिया गया है, फिर भी यदि असहयोगियोको उपद्रव-क्षेत्रमे जाने और मोपलाओको समझाने-वुझानेकी पूरी सुविधाएँ दी जाये, तो मै अव भी उसकी सफलताके वारेमे आशावान हूँ। मोपलाओने अपनी वीरताका चाहे कितना ही गलत प्रयोग किया हो, पर उनके साथ अच्छा व्यवहार होना चाहिए।

मै मद्रास प्रेसीडेसीके हिन्दुओसे प्रार्थना करता हूँ कि वे शान्त रहे और पथभ्रष्ट मोपलाओको अपने हृदयमे स्थान दे। उनका धर्म उन्हे यह नही सिखाता कि कुछ व्यक्तियोकी गलतियोके लिए पूरी जातिको ही लाछित किया जाये। उन्हे अपनी गलती भी स्वीकार करनी चाहिए। वे मोपलाओको जानते थे फिर भी उन्होने मोपलाओको और अच्छा पडोसी वनानेकी कोशिश नही की। हम अपनी पिछली लापरवाहीका फल भोग रहे है। अव विना कोई फर्क किये सभी मोपलाओको राक्षस वताना और कहना कि वे मानवीय महानुभूतिके पात्र नही है, हमारे लिए उचित नही है। मोपलाओकी पाशविकतासे इस्लामको नि सन्देह क्षति पहुँची है। परन्तु, मोपलाओके खूनका प्यासा होनेसे, हिन्दूधर्मको भी इस्लामकी ही तरह क्षति पहुँच रही है। वलात्कार या हत्या करना काफी वुरी वात है, परन्तु वलात्कारी या हत्यारेकी खाल उधेडना, उसके घरकी औरतोके साथ वलात्कार करना या उसके परिवारके वाकी लोगोकी हत्या करना भी यदि अधिक नही तो उतनी ही वुरी वात जरूर है। मै नही जानता कि दुराचारी या हत्यारा आकस्मिक आवेगमे अपराध कर वैठनेकी दलील नही दे सकता। परन्तु मनमाने ढगसे प्रतिशोध लेनेवाला भी क्या अपनी सफाईमे कोई दलील दे सकता है ? हिन्दुओको मोपलाओके खूनका प्यासा वनकर डायर और ओ'डायरके कारनामोका औचित्य सिद्ध नही करना चाहिए। यदि हम मोपलाओके सम्वन्धमे वीभत्सता और मान-मर्दनकी नीति अपना सकते है, तो क्या वैसा करके हम सर माइकेल ओ'डायर और जनरल डायरके कारनामोको उचित नही ठहराते जिन्होने कल्पित अन्याय और भयके कारण पजावमे आतक फैला दिया था ? मुझे भय है कि सरकार मलावारके उपद्रवोको जारी रखनेके लिए हिन्दुओके रोषको भडकाकर अपना स्वार्थ सिद्ध कर रही है। मलावार और मद्रासके हिन्दुओको सावधान हो जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यग इडिया, १–१२–१९२१

२१८. स्वयंसेवक-दलपर कुठार

बम्बईने प्रान्तीय सरकारोको यह मौका दे दिया है कि वे व्यवस्थित ढगसे दमन-चक्र चलाये और असहयोग आन्दोलनको बिलकुल समाप्त कर देनेकी कोशिश करे। बगाल, सयुक्त प्रान्त, पजाब और दिल्लीकी सरकारोने स्वयसेवक-सगठनोको छिन्न-भिन्न कर देनेकी जो अधिसूचनाएँ जारी की है वे बम्बईकी सरकारके जवाबमे ही है। मैं अपनी तरफसे तो इन अधिसूचनाओका स्वागत ही करता हूँ। इन अधिसूचनाओके रूपमे हमे एक ऐसा कारण मिल गया जिससे हम अब सहज ही सविनय अवज्ञा कर सकते है। यदि हम सरकारकी इस चुनौतीको स्वीकार करनेके लिए तैयार है, तो हम तत्काल अपनी ताकत आजमा सकते है। सत्याग्रही अपना सघर्ष शुरू करनेका अवसर स्वय आप ही निश्चित करता है। यह सविनय अवज्ञाकी एक अपनी खूबी है। वह तबतक अवज्ञा करना उचित नही समझता, जबतक उसे ऐसा करना आवश्यक न लगे। सरकार अपनी तरफसे उसे कितना ही उत्तेजित क्यो न करे, वह उससे सविनय अवज्ञा शुरू नही करा सकती।

ऐसी अवस्थामे यदि वे प्रान्त जहाँ ये अधिसूचनाएँ जारी हुई है तैयार हो तो उनके लिए सिर्फ इतना ही काफी है कि वे अपने स्वयसेवक सगठनोको भग करनेसे इनकार कर दे, और हर स्वयसेवक अपनेको जेल पहुँचा सकता है। लेकिन हमे पहले अपनी बुनियाद अच्छी तरह देख लेनी चाहिए। इन सगठनोपर जो आरोप लगाया गया है वह यह है कि वे ऐसी सस्थाएँ है जो बल-प्रयोगका साधन बनती है, शान्ति-रक्षाका नही। अतएव हमारा पहला फर्ज यह है कि हम इस आरोपकी जाँच करे और अगर वह किसी भी अशमे हमपर घटता हो तो अपने उस दोषको बिलकुल निर्मूल कर डाले। जिन-जिन स्वयसेवकोने बल-प्रयोग किया हो या अपने वचनो और कार्योके द्वारा बल-प्रयोगकी धमकी भी दी हो, उनको अवश्य उनके कामसे हटा देना चाहिए।

सयोगसे कार्यसमितिने भी इसी मौकेपर स्वयसेवक-दलोका सगठन करनेका प्रस्ताव[1] स्वीकृत किया है। मुझे आशा है कि प्रत्येक प्रान्तकी काग्रेस कमेटी और खिलाफत-समितियाँ इस कामको तुरन्त उठा लेगी और तमाम स्वयसेवक-दल एक ही सगठनमे शामिल हो जायेगे तथा जो भी स्वयसेवक अहिसाके सिद्धान्तका कायल न हो वह उसमे न रहने पायेगा। तब यदि इन सस्थाओके काममे किसी तरहका हस्तक्षेप किया गया तो हम सघर्ष छेड सकते है। पर इस सघर्षकी शर्त यह है कि जब स्वयसेवकोको जेल भेजा जाये तब शेष सभी लोग खामोश रहे और शान्ति बनाये रखे। बिना शोरगुलके, बिना भीड़-भाडके जेलोको भर देनेका यही सबसे उचित अवसर होगा। यदि हम चुपचाप कष्ट-सहन करनेके महत्वके कायल हो, तो हमे सरकारके लिए अपनी गिर-

१. बम्बईमें २३-११-१९२१ को स्वीकृत प्रस्ताव।

पतारी आसान कर देनी चाहिए। जब हर दफा हम उसका प्रदर्शन करने लगते है और जुलूस निकालते है तब सरकारके लिए गिरफ्तारी करना कठिन हो जाता है। जेलकी सजाएँ तो हमारे सामान्य दैनिक व्यवहारकी बात हो जानी चाहिए। जब हम हवाखोरीके लिए या पिकनिक आदिपर जाते है तब इतना सारा प्रदर्शन तो नही होता। मै कहता हूँ कि ऐसी ही उदासीनता जेल जानेके विषयमें भी हमारे मनमे आ जानी चाहिए। मै अदालतमे बयान देनेके सम्बन्धमे श्री जयकरके इस नुस्खेको बहुत अच्छा समझता हूँ कि एक मसविदा बना ले और सब लोग वैसा ही बयान दें। अगर बयान देने या न देनेमे से किसी एकको चुनना हो तो मै न देनेके पक्षमे अपना मत बिना हिचकिचाहटके दे दूंगा। जेल जानेसे किसी तरहकी सनसनी नही फैलनी चाहिए, क्योकि सनसनीसे उत्तेजना बढती है और उत्तेजनासे दगे-फसादकी नौबत आ सकती है और दगे-फसाद शुरु हो जानेसे निरपराध लोगोके लगातार जेल जानेके क्रममे गडबडी पैदा होती है।

जेल जानेसे भी ज्यादा महत्वकी बात है शान्तिपूर्ण वातावरण बनाये रखना। अतएव सगठन-भग करनेकी सरकारी आज्ञाओका उल्लघन करके हिंसाको बढावा मिलनेकी जोखिम उठाना और जेल जानेकी जल्दी मचाना किसी भी प्रान्तके लिए ठीक न होगा। अहिंसाको स्थायी रूप देनेमे यदि हमे देर भी लगे तो उससे अन्तमे हमारी कुछ भी हानि नही होगी। हमारी स्वराज्यकी क्षमता इसी बातमे है कि हम उन हरएक तजवीजो और बन्दिशोको जो हमसे हिंसा-काण्ड मचवानेके लिए की जा रही हो, पहले ही से समझ ले और उनकी दाल न गलने दे, फिर वे चाहे खुफिया पुलिसके द्वारा कराई गई हो, अथवा अन्य किसी तरीकेसे।

[अंग्रेजीसे]

यग इडिया, १-१२-१९२१

२१९. पत्र-लेखकोंसे

डी० वी० राव पूछते है

> **१ क्या आपका यह विश्वास है कि श्रीकृष्णने अर्जुनको अहिंसाके सिद्धान्तका उपदेश न दे कर गलती की थी? या उन्होने युद्ध और हिंसाका प्रतिपादन करके ठीक किया था?**

मेरे विचारमें 'भगवद्गीता' एक विशुद्ध धार्मिक ग्रथ है, ऐतिहासिक नही। एक ऐतिहासिक और लौकिक घटनाको लेकर इसमे एक महान धार्मिक सिद्धान्तकी स्थापना की गई है। इसमे मानव-मनमे नित्य चल रही बुराई और भलाईकी शक्तियोके बीच, अहुरमज्द और अहरमनके बीच, हाइड और जेकिलके बीच चलनेवाले सघर्षपर प्रकाश डाला गया है। मन रूपी इस लघु कुरुक्षेत्रमे उभरनेवाले सभी दुष्ट मनोवेगोपर हम जितनी भी हिंसा करे थोडी है। ऐतिहासिक दृष्टिसे विचार करनेपर 'भगवद्गीता' यह

दिखाना चाहती है कि अर्जुन निर्णय कर चुकनेके बाद, मिथ्या भावनाके वशीभूत हो, युद्धसे अलग नही हो सकता था। 'गीता'कारने युद्ध या हिंसाका कभी भी प्रतिपादन नही किया है। 'गीता' तो अहिंसाका उपदेश है। क्रोध और आवेशसे रहित युद्ध आत्मिक ही हो सकता है।

२. क्या सीताको पुन. प्राप्त करनेके लिए रामने रावणके विरुद्ध हिंसाका मार्ग अपनाकर गलती या पाप किया था? या हिंसा केवल विशेष परिस्थितियो-में ही उचित है? यदि ऐसा है तो वे स्थितियाँ कौनसी है?

मै 'रामायण'को भी उसी दृष्टिसे देखता हूँ जिससे कि 'भगवद्गीता'को। रामने जो शस्त्र प्रयुक्त किये वे विशुद्ध रूपसे आत्मिक थे। रावणपर रामकी विजय बुराईपर भलाईकी, अहकारपर विनम्रताकी, पशु बने हुए एक मानवपर ईश्वरकी सहायता पानेवाली एक अबला और पतिव्रता नारीकी विजयका समारोह है।

किसीने पूछा है

१. मान लीजिए सरकार दुष्टतापूर्ण उपायोसे हमें उत्पीडित करती है, तो हम कबतक अहिंसात्मक रहे?

निश्चय ही तबतक जबतक कि हम सरकारको निरस्त्र न कर दे। हमने जब शपथ ली थी तो यह आशा नही की थी कि सरकार हमे झुकानेके लिए नरमीका बर्ताव करेगी।

२. स्वराज्य प्राप्त कर लेनेपर हम अन्य राष्ट्रोके आक्रमणोसे अपनी रक्षा कैसे करेगे?

आपको 'यग इडिया' की पुरानी फाइले देखनी चाहिए। परन्तु सामान्यत कहा जा सकता है कि हमे अन्य देशोसे किसी झगडेकी आशका ही नही करनी चाहिए। किन्तु यदि वे, हमारी ओरसे कोई अपराध न होनेपर भी, हमपर चढाई करते है तो, हमे सभी आक्रमणकारियोसे अपनी प्रतिरक्षा कर सकनेके लिए कष्ट-सहनकी अपनी सामर्थ्यपर भरोसा रखना चाहिए।

३. क्या सामन्ती रियासतोकी सत्ता कायम रहेगी?

नि सन्देह। उनके विरुद्ध हमारी कोई योजना नही है। तब उनके पास आजसे अधिक वास्तविक शक्ति होगी। तब स्वभावत उनको जनमतका दबाव मानना पडेगा, चाहे वह जनमत उनकी रियासतकी सीमाओके भीतरका हो या बाहरका।

४ यदि आप सविनय अवज्ञामें सफल हो गये तो, क्या आप गणराज्यकी घोषणा करेगे? मौलाना शौकत अलीने ऐसी ही राय जाहिर की है।

मैंने दिल्लीमे जिस उग्र ढगकी सविनय अवज्ञाकी कल्पना की थी, बम्बईने कुछ समयके लिए उसे धराशायी कर दिया है। किसी भी हालतमे मै यह नही समझता कि असहयोगियोने अपनी शक्ति अभी इतनी सगठित कर ली है, या इतना रचनात्मक कार्य कर लिया है कि सालके आखिरतक एक प्रभावशाली गणराज्यकी घोषणाकी जा सके। जो भी हो, गणराज्यकी घोषणा करना या न करना किसी एक आदमीपर निर्भर नही।

५. क्या आप पारसियोंको, जो मुख्य रूपसे शरारती रहे हैं, हर्जाना देंगे?

पारसियोंको 'शरारती' कहकर आप स्पष्ट ही एक दूसरा प्रश्न खड़ा कर रहे हैं। मुझे पक्का विश्वास है कि शरारत हिन्दुओं और मुसलमानोंने शुरू की थी। निश्चय ही मैं आशा करता हूँ कि पारसी और ईसाई अपने-आपको इतने देशभक्त सिद्ध करेंगे कि वे सरकारके जरिये हर्जाना हासिल करनेकी कोशिश न करें, और निष्पक्ष सहयोगियोंकी एक गैरसरकारी समिति बनाई जायेगी, जो इन दुर्भाग्यपूर्ण उपद्रवसे पीड़ित सभी व्यक्तियोंके हर्जानेके दावोंको सुनेगी और उनकी जाँच करेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १-१२-१९२१

२२०. पत्र: अब्बास तैयबजीको

गुरुवार [१ दिसम्बर, १९२१]

प्रिय मित्र,

आपका पत्र कल अहमदाबादमें मिला। अब मालूम हुआ है, आप खाट पकड़े हुए हैं। सिपाहियोंके लिए बीमार पड़नेकी गुंजाइश कहाँ? इसलिए आपको जल्द ही स्वस्थ होकर तेजीसे काम करनेमें जुट जाना चाहिए। आपके स्वास्थ्य और शक्तिका आज बहुत ज्यादा महत्व है, आपको एक दिनकी भी मुहलत नहीं दी जा सकती। इन सबका मतलब है आपको जल्दी स्वस्थ होनेकी प्रेरणा और उत्साह देना, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि आप पूरी तरह स्वस्थ हुए बिना ही बिस्तर छोड़ दें। जितने आरामकी जरूरत हो, कीजिए ताकि बीमारी दुबारा न उभर पाये। ऐसी बातोंमें जल्दबाजीसे काम बिगड़ता है।

आपके निर्देशोंके अनुसार मैंने धारालाओंके नाम एक अपील लिखकर श्री फूलचन्दको[1] दे दी है।

आशा है, शनिवारकी शामतक मैं बारडोलीमें रहूँगा और उसके बाद बम्बई जाऊँगा। अधिकसे-अधिक गुरुवारतक वहाँसे लौट आनेकी आशा रखता हूँ और उसके बाद, अगर इस बीचमें आपकी तबीयत बेहतर हुई होगी और आपकी इच्छा होगी तो, मैं आपको खेड़ाके लिए दो-तीन दिन दूँगा। हमारी तैयारी ठोस और पक्की होनी चाहिए। स्वदेशीकी जड़ें गहरी जम जानी चाहिए, अस्पृश्यता सचमुच समाप्त हो जानी चाहिए और हिन्दू-मुस्लिम एकता सच्ची होनी चाहिए। यह सब अहिंसात्मक भावनाके बिना असम्भव है।

१ फूलचन्द कस्तूरचन्द शाह, सौराष्ट्रके एक राजनीतिक और रचनात्मक कार्यकर्ता।

पूरे परिवारसे मेरा सस्नेह निवेदन करें। ईश्वर आपको स्वस्थ बनाये।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ९५९७) की फोटो नकलसे।

२२१. भाषण: बारडोलीमें

[३ दिसम्बर, १९२१]

उन्होंने कहा, इस ताल्लुकेमें मैं पिछले दो दिनोंसे हूँ। इस बीच मैं जो कुछ देख सका हूँ, उसके बाद मैं यहाँके लोगोंको हार्दिक बधाइयाँ ही दे सकता हूँ। यह लोगोंके लिए बहुत प्रशंसनीय बात है कि उन्होंने अपने मनसे अस्पृश्यताको इस हदतक निकाल दिया है और उन्होंने आम तौरपर जिस तरह शान्ति बनाये रखी है, उसके लिए वे अधिकसे-अधिक सराहनाके पात्र हैं। लेकिन मुझे यह जानकर बहुत गहरा दुःख हुआ कि स्वदेशीके मामलेमें ऐसा बहुत-कुछ नहीं किया गया है जो करना चाहिए, हालाँकि स्वदेशी सबका सार है। आप लोग अब भी खद्दरके लिए बाहरी लोगोंकी उदारताके मोहताज हैं, जिससे प्रकट होता है कि कताईके साथ-साथ अभी गाँवोंमें बुनाईका प्रवेश नहीं हुआ है। यह एक बहुत बड़ी खामी है। हर गाँवमें कुछ करघे स्थापित कर देना कोई मुश्किल काम नहीं है। औरतें मोटा और कमजोर सूत इसलिए कातती हैं कि गाँवोंमें अभी बुनाई नहीं होती और इसलिए उस सूतकी परीक्षा नहीं हो पाती। यह काफी नहीं है कि श्रोताओंमें से बहुत ज्यादा लोगोंने खादी पहन रखी है। मैं इस तथ्यकी उपेक्षा नहीं कर सकता कि बहुत-सी औरतोंने खादी इसलिए नहीं पहनी है कि उतनी खादी मिलती नहीं। उपाय स्वयं आपके ही हाथोंमें है। मुझे पूरा विश्वास है कि आप चौकेमें अपना परिश्रम बचानेके लिए बाहरसे आटा गुंधवाना मंजूर नहीं करेंगी। यह व्यवस्था बेतुकी होगी और उतनी ही बेतुकी बुनाईके बिना कताई भी है। अगर आप अपने मनमें तय कर लें तो मैं जानता हूँ कि बहुत जल्दी इसे सीखा जा सकता है। स्वराज्य आप चन्द महीनोंमें ही प्राप्त कर सकते हैं, उसमें वर्षों लगनेकी कोई बात नहीं है। मैं चाहता हूँ कि अब इतना-कुछ कर लेनेके बाद आप पूर्णता प्राप्त करनेके लिए और भी कठोर श्रम करें। अगर अबतक आप सार्वजनिक सभाओंमें अछूतोंके आगमनका स्वागत करने लग गये हैं और उन्हें आपने अपने कुओंका भी उपयोग करने दिया है तो आपसे यह आशा करना उचित ही होगा कि

१. पिछले शीर्षकसे प्रकट है कि गांधीजीने बारडोली ताल्लुका शनिवार तारीख ३ दिसम्बरको छोड़ा था और रिपोर्टमें उल्लेख है कि यह भाषण गांधीजीने वहाँसे रवाना होनेके कुछ ही समय पहले दिया था।

आप एक कदम आगे जायें। उदाहरणके लिए, उनके घरोमे जाकर शकाशील माता-पिताओको अपने बच्चोको राष्ट्रीय स्कूलोमें भेजनेके लिए समझायें-बुझायें।

सरकार द्वारा सचालित शैक्षणिक तथा अन्य सस्थाओके बहिष्कारके लिए आपके ताल्लुकेमे कही-कही अबतक जो तरीके अपनाये गये है, आगे उनसे भिन्न और अच्छे तरीकोसे काम लिया जा सकता है। जैसी कि खबर है, कुछ स्वयसेवकोने माता-पिताओके दयाभावको जगानेके लिए इस खयालसे अनशन किया कि वे अपने-अपने बच्चोको इन सस्थाओसे हटा ले। यह अनशन भी एक तरहसे नैतिक हिंसा ही है। इस उपायके अवलम्बनका परिणाम आम तौरपर यह होता है कि लोग कहनेवालोकी बात अनिच्छापूर्वक मान लेते है। लेकिन असहयोगियोके लिए यह आचरण वाछनीय नही है, क्योकि वे तो सभीके लिए अधिकसे-अधिक स्वतन्त्रताकी वकालत करते है। लेकिन मै चाहता हूँ, बारडोलीकी शानदार उपलब्धिकी कोई खामी बतानेका मतलब लोग यह न समझे कि मै अपनी निराशा व्यक्त कर रहा हूँ। यह तो है कि मै बारडोली तहसीलके लिए यह नही कह सकता कि उसने तत्काल सविनय अवज्ञा करनेकी योग्यता प्राप्त कर ली है, और इसलिए उसे पूरे अक तो नही दे सकता, लेकिन साथ ही आपके सन्तोषके लिए मै आपको बडे हर्षके साथ आश्वस्त करता हूँ कि सविनय-अवज्ञा और इस तरह स्वराज्यकी तैयारीके रास्तेपर मैने किसी भी अन्य ताल्लुकेकी अपेक्षा बारडोलीको ज्यादा अच्छी तरह चलते पाया है। आपकी सादगी और उत्कटताका तो कोई सानी नहीं है। हिन्दू-मुस्लिम एकता जितनी सुरक्षित और निश्चित यहाँ है उतनी और कही नहीं। मुझे आशा है कि बारडोली अपने इस महान उपक्रममे इसी उत्साहके साथ लगा रहेगा, और तैयारीके रूपमें अब जो थोडा-बहुत करना बच रहा है उसे भी वह यथासमय पूरा कर लेगा। केवल तभी आप मुझे एक बार फिर बुलाकर कह सकते है कि "अब आप हमारे युद्धका सचालन करिये" और इसी तरह आप मुझे एक शान्तिपूर्ण क्रान्तिका नेतृत्व करनेका आनन्द दे सकते है, बशर्ते कि तब भी उसकी आवश्यकता बची रहे।

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १०-१२-१९२१

२२२. गुर किल्ली

ताप त्रिविध प्रेम-आप दूर ही करे।

—तुलसीदास

बडी-बडी सस्थाओमे सभी कमरोके तालोके लिए एक चावी रहती है। सभी कमरोके ताले उससे खुल जाते है। अलग-अलग चावियाँ भी रहती है, परन्तु व्यवस्थापकके पास एक ऐसी चावी रहती है जो सबमे लग जाती हे। उसे अग्रेजीमे 'मास्टर की' कहते है। 'गुर किल्ली' उसीका अनुवाद हे।

धारा-सभाओका वहिष्कार करनेसे कौसिलोमे जानेवाले रुक सकते है, मदरसोके वहिष्कारसे मदरसे जानेवाले, और अदालतोके वहिष्कारसे मुकदमेबाज, किन्तु जव हमारी अपीलोका इन सभीपर असर नही पडता तव हमारे कार्यक्रमकी सफलताके विपयमे पर्याप्त शकाएँ की जाने लगती है।

परन्तु इन सब बाधाओकी गुर किल्ली प्रेम है, और वही हमारे सब लोगोके लिए रामबाण हे।

जिस असहयोगमे प्रेम नही वह राक्षसी असहयोग है, और जिसमें प्रेम है वह ईश्वरी। हजरत मुहम्मदने तेरह वर्पतक मक्काके अरव लोगोके साथ जो असहयोग किया वह प्रेमके ही वश होकर किया। मक्काके लोगोकी आँखे उन्होने प्रेमके वलपर ही खोली। मीराबाईने राणा कुम्भाके साथ जो असहयोग किया उसमे द्वेप नही था। राणा कुम्भा द्वारा दिये गये कठोर दण्ड उसने प्रेम-पूर्वक स्वीकार किये। हमारे असहयोगका मूल भी प्रेम ही है। उसके विना सब फीका, सब खाली है। प्रेम हमारे लिए केवल मुख्य चावी ही नही वल्कि वह हमारे लिए एकमात्र चावी है। शिक्षालयोका त्याग करनेवाले लोग यदि त्याग न करनेवालोसे द्वेष करे तो त्याग करनेवालोका त्याग निरर्थक कहलायेगा। धारा-सभामे जानेवालोके साथ द्वेष किया जाये तो हमारा धारासभाका त्याग बेकार हो जाये। जो हमारे मतको न माने उन्हे प्रेमसे जीतना तो धार्मिक वृत्ति है और उनपर रोष करना राक्षसी, नास्तिक वृत्ति है।

हमे शर्मके साथ यह कवूल करना चाहिए कि हमारे त्यागमे कुछ-न-कुछ रोष और जहर वाकी रहा है, और इसीसे यह त्याग न पूरी तरह फूला, न पूरी तरह फैला। जितने आदमियोने त्याग किया है उन्होने यदि त्याग न करनेवालोके प्रति द्वेप न किया होता तो हमारी हालत आज वहुत ही अच्छी होती और हम स्वराज्य स्थापनाकी अवस्थामे होते।

अतएव हमारा वडेसे-वडा काम यही है कि हम चारो ओर प्रेमकी वर्षा कर दे। प्रेम वरसानेका अर्थ यह नही है कि हम उनके साथ हो जाये। वह तो मोह होगा, गलत काममे साथ देना कहलायेगा। हम अपने विरोधियोके साथ भी प्रेम रखे, उन्हे मूर्ख न माने और उनकी सेवा करे—यह प्रेम है? हिन्दू यदि हिन्दूपर प्रेम करे

तो इसमे कौन वडाई है? हिन्दू यदि मुसलमानके साथ भी उतना ही प्रेम करे, उनके रिवाजोको वरदाश्त करे तो यह अच्छाईकी निशानी है। असहयोगी असहयोगीके साथ मेलजोल रखे तो इसमें कौन खूवी है? परन्तु असहयोगी सहयोगीके साथ तीव्र मतभेद होते हुए भी, मुहव्वत करे, धीरज रखे — यह वीरता है, नम्रता है। उनको वदनाम करने, तुच्छ मानने और धिक्कारने मे वडप्पन नही है। वडप्पन उनके घर नगे पैर दौडे जाकर उनकी सेवा करनेमें है।

हमने अपना यह कर्त्तव्य जितना चाहिए उतना नही निवाहा। मैंने भी इसके विषयमे लिखा और कहा, परन्तु जितना चाहिए उतना जोर नही दिया। मुझे इसका पछतावा हो रहा है। वम्वईके अनुभवने मेरी आँखे खोल दी है। वम्वईके अनुभवने वतला दिया है कि मेरी सहिष्णुता उथली थी। जव-जव सहयोगियोके ऊपर शाब्दिक आक्रमण हुए, तव-तव यदि मैंने कडाईसे काम लिया होता तो आज हम वहुत उन्नति कर चुके होते। जव कभी किसीने जवरदस्ती किसीकी टोपी छीनी तव यदि हर वार मैंने उसका जोरसे विरोध किया होता तो आज उसका वडा अच्छा फल मिला होता। ऐसे महान सग्रामके नायकपदका उपभोग करना और पूरे तौरपर जाग्रत न रहना महापाप है। यह मैं जानता हूँ। इस युद्धके नायकमे यदि दीनता, दुर्वलता, और लाचारी हो तो उसे अपना पद छोड देना चाहिए।

जहाँसे भूले है, अव वहीसे हमें अपनी भूल सुधारनी होगी।

अव हमे अपने मनसे सहयोगियोके प्रति, पारसियो और ईसाइयोके प्रति, तथा अग्रेजोके प्रति रोषको निकाल डालना चाहिए। उन्हे भी भाई समझना चाहिए। उनका हम वहिष्कार न करे। उनके पानी, नाई आदिको न रोके। उन्हे खाना खिलाकर खाये, उनकी सेवा करके प्रसन्न रहे। सभी धर्मोमे निहित इस नियमका रहस्य समझ सकनेके वाद ही स्वराज्य जल्दी और आसानीसे मिल सकेगा, उसके पहले नही। अतएव जहाँ-जहाँ कानूनके सविनय-भगकी तैयारियाँ हो रही है वहाँ-वहाँ हमे सवसे पहले यही काम करना है कि वहाँ जितने सहयोगी है उन सवके साथ मेल-मुहव्वत करे और मतभेद रहते हुए भी मित्रता कायम रखे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ४-१२-१९२१

२२३. हिन्दू-मुस्लिम-पारसी

मुझे हिन्दुओकी ओरसे तथा उसी तरह पारसियोकी ओरसे पत्र प्राप्त होते रहते है। इन पत्रोमे वे एक-दूसरेके दोप बताते रहते है। ऐसा करनेसे हम सच्ची एकताकी स्थापना नही कर सकते। हिन्दुओ और मुसलमानोको याद रखना चाहिए कि पारसी कौम छोटी हे और लगभग एक ही स्थानपर रहती हे। इसलिए हमे उनके दोप ही दिखाई देते है, हम उनके गुणोको भूल जाते है। यदि हम परिवारके लोगोके दोप ही देखे तो जगतमे पूर्ण तो हम अपनेको ही मानेगे और बाकी सब तो दोपोसे इतने भरे हुए जान पडेगे कि उनका स्पर्श-मात्र करनेसे हम अपनेको दूपित मानेगे। लेकिन सत्य यह हे कि इस तरह दोप देखनेवाला ही सबसे बडा पापी होता है।

दोष देखनेवाला अपनी दुर्बलताका परिचय देता हे। और जो हिन्दू या मुसलमान पारसियोके दोप निकालते रहते है वे अवश्य दुर्बल है। अगर हम अपने ही दोप देख सके तो हम खुद उन्नति करे और औरोको भी उन्नत करे। हमारा सबसे भारी दोप तो यह है कि हम सहिष्णुता खो बैठे है। नये धर्मको अगीकार करनेके बाद हम उसकी मर्यादा भूलकर धर्मोन्मत्त बन गये। हमे असहयोग हाथ लगा, हमने उसकी कीमत पहिचानी, इसलिए जो इसे नही पहचान पाये उन्हे हमने बेअक्ल, अज्ञानी, देशद्रोही और पापी माना! ऐसा करके हमने अपने असहयोगको लाछित किया है। अभी कलतक हम भी सहयोगी ही थे, इस बातको हम भूल गये। हमने धीरज खो दिया। बलपूर्वक लोगोसे विलायती कपडेकी टोपियोको उतरवाया, लेकिन अपने पास पडी विलायती धोतियोको तो हम भूल ही गये है।

पारसी भाइयोकी हमने बहुत आलोचना करनी शुरू कर दी। हमने मान लिया कि ये कभी समझनेवाले नही हैं। इन्होने अगोरा-कोपमे, तिलक-कोपमे चन्दा दिया था, सो भूल गये। इनमे से बहुत सारे लोग खादी पहनते है, पारसी बहने भी खादी पहनने लगी है, यह सब भूल गये और पारसी भाई-बहनोपर क्रोधित हो उठे। उनमे से अनेक व्यक्तियोने जो त्याग किया है उसे हमने बिसार दिया।

लेकिन आपके पास इस बातका क्या जवाब हे कि पारसियोने ही यह सारा झगडा शुरू किया है? कोई ऐसा प्रश्न पूछ सकता है। हम यदि एक लाख होते तो क्या करते, क्या इसका विचार हम नही करेगे? हम बाईस करोड अथवा सात करोड न हो, हिन्दुस्तानमे हमारी सख्या केवल एक लाख रह जाये तो हम क्या करेगे —इसका अगर हम खयाल करे तो हमे पता चले। प्रत्येक पाठकको किसीन-किसी स्थानपर अल्पसख्यामे होनेका अनुभव आया होगा। वह उस समयकी अपनी उस अवस्थाका विचार करे। अभी हिन्दुओ और मुसलमानोने भी एक दूसरेके भयको नही छोडा है तो ऐसा वे कैसे मान सकते है कि पारसी अपने इस भयको तुरन्त छोड दे। पारसियोके साथ वैर बाँधकर अगर हिन्दू और मुसलमान राज्य करना चाहे तो यह एक बुरी इच्छा कही जायेगी। अल्पसख्यक समुदायोके साथ मित्रता करना और उन्हे

अभयदान देना, हिन्दू-मुसलमानका पहला धर्म है। उनका विश्वास जीतनेके प्रयत्नमे उन्हे अमूल्य रत्न हाथ लगेगे।

याद रखना चाहिए कि ईश्वर असहायोका सहारा है। यदि हम दुर्बलोकी रक्षा करेगे तो हम स्वय भी रक्षाके पात्र बनेगे। मौलाना अब्दुल बारी साहबकी यह बात बिलकुल सत्य है कि छोटे समुदायोके साथ मित्रता करनेमे हमारी परीक्षा होगी। उन्हे निर्भय नही बनायेगे तो हम स्वय कभी निर्भय नही बनेगे।

अल्प-सख्यक समुदायोके लोग हिन्दुओ और मुसलमानोके पास लाचार होकर आये, इसकी न तो उन्हे अपेक्षा करनी चाहिए और न उनके साथ ऐसा व्यवहार ही करना चाहिए। हमारा धर्म है कि हम पारसी, ईसाई आदिको अपने पास स्वय बुलाये, उनके प्रति मैत्रीका भाव रखे।

ऐसा करते समय मै झूठी खुशामदकी सिफारिश नही करता। उनके दु खमे भाग लेना, उनके साथ झगडा न करना, वे सरकारके साथ सहयोग करे तो सहन करना, उनके विदेशी कपडे पहननेकी टीका न करना, उसके कारण उनपर क्रोध न करना और शुद्ध हृदयमे उन्हे अपना भाई समझना — यह सब करना जरूरी है। अगर हमारे पडोसमे दो-चार पारसी और ईसाई रहते हो तो उनके साथ हमे ऐसा व्यवहार नही करना चाहिए मानो उन्हे कभी हम मिले ही न हो, बल्कि हमारा धर्म यह है कि हम उनकी सेवा करे और उनसे परिचय बढाये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ४-१२-१९२१

२२४. कांग्रेसका आगामी अधिवेशन

इस अकके प्रकाशित होनेके बाद काग्रेसके आगामी अधिवेशनके शुरू होनेमे बीस दिन रह जायेगे। यह अधिवेशन दूसरे अधिवेशनोसे बिलकुल भिन्न प्रकारका होगा। इसमे काग्रेस स्वराज्यकी प्राप्तिका उत्सव तो नही मनायेगी तथापि उसे कुछ उसके जैसा ही करना पडेगा अर्थात् उसे हर तरहसे अपने कार्यमे स्वराज्यकी योग्यता बतानी पडेगी। व्यवस्थामे कौशल, विवेकमे पूर्णता, निर्भीकता और स्वतन्त्रतामे किसी प्रकारकी कोई त्रुटिका न होना — यह सब हमे बताना पडेगा।

व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि हम किसी भी चीजको न भूले। खाने, रहने, नहाने और सफाईका पूरा प्रबन्ध होना चाहिए। कूडेके स्थानपर कूडा, पानीके स्थान-पर पानी होना चाहिए। कूडा, पानी और मैला बहुत ज्यादा होनेके बावजूद जहाँ दृष्टि जाये वहाँ स्वच्छता दिखाई देनी चाहिए। कही भी पानीके गड्ढे नजर न आये। टट्टियोका उपयोग तो सब करे, लेकिन जहाँ देखो वहाँ सफाई नजर आनी चाहिए। यह तो शरीरका प्रथम धर्म है और चूँकि इकट्ठे होनेवाले हम सब लोग शरीरधारी है, इसलिए हमारी दृष्टि सबसे पहले स्वच्छताकी ओर जानी चाहिए। खादीनगरकी स्वच्छताका आदर्श पदार्थपाठ होना चाहिए।

लोगोको पहलेसे ही पत्रिकाओंसे, भाषणोंसे इस बातकी तालीम देनी चाहिए कि वे तनिक भी आवाज न करें, झुण्ड बना-बनाकर खादीनगरमें खड़े न रहें, स्वयंसेवकोंके सुझावोंको मानें। जहाँ जानेकी मनाही हो या मनाही की जाये वहाँ न जायें और जहाँ जायें वहाँ वे सब ऐसा कुछ न करें जिससे दूसरोंको असुविधा हो। ये संघमें रहनेकी हमारी योग्यताके लक्षण हैं और जो इस अवसरपर प्रकट होने चाहिए।

स्वयंसेवक गरीब व्यक्तिको भी 'तू' न कहें। वे सबको सिपाहीकी तरह आदेश न दें, जो कहना हो उसे विनयपूर्वक कहें। स्वयंसेवकोंका व्यवहार सामान्य सिपाहीसे उलटा होता है।

दुकानदार जो बेचें, उसके ठीक-ठीक दाम लें, आये हुए मेहमानोंको लूटनेका विचार न करें। इससे सिद्ध होगा कि हम सभ्य और सुशिक्षित लोग हैं।

वहाँ तथाकथित तथा सच्चे असहयोगियोंका काफी बड़ा समुदाय इकट्ठा होगा। वे ऐसा न मानें कि उन्हें पृथ्वीके राज्यका पट्टा मिल गया है। वे सिर्फ यह मानें कि वे सेवा करनेके लिए पैदा हुए हैं। हम ऐसी आशा रखते हैं कि सब लोग खादी पहनकर ही आयेंगे। [स्वागत-समितिके] सभी सदस्य और कांग्रेसके प्रतिनिधि, ये सब खादी पहनकर ही आयें लेकिन अतिथि अथवा यात्री अथवा दर्शक चाहे जिस पोशाकमें आयें, कोई उनका अपमान न करे। जो सहयोगी माने जाते हैं, उनकी बात भी विनयपूर्वक सुनी जाये। कोई बालकको भी हाथ न लगाये। कोई किसीके कपड़ेको न छुए। "देख बिचारी बकरीका भी कोई न पकड़े कान", यह कविता इस राज्यके सम्बन्धमें तो गलत साबित हुई है, लेकिन स्वराज्यके सम्बन्धमें गलत साबित न हो, यह हमें बता देना होगा।

यदि हम स्वागत समितिके अध्यक्षपर ही सारा बोझ डालनेका विचार रखते हों तो हम आजसे ही कांग्रेसके इस अधिवेशनको विफल हुआ मान सकते हैं। स्वागत-समितिका अध्यक्ष तो निमित्त-मात्र है। उसे मदद करनेवाले हजारों होंगे तभी वह यश प्राप्त कर सकेगा। उसके हाथपैर स्वयंसेवक हैं। अहमदाबादके स्वयंसेवक अगर प्रत्येक स्थानपर फैल जायें, अपने कार्यसे उसे सुवासित करें, तभी काम अच्छी तरहसे हो सकता है। एक भी अनजान व्यक्तिको भटकना न पड़े। जाने-माने और अपरिचित, दोनों तरहके प्रतिनिधियोंके लिए ठीक व्यवस्था होनी चाहिए।

ये तो हमारी योग्यताकी निशानियाँ हुईं, प्रभुसे मेरी प्रार्थना है कि अहमदाबाद और गुजरातके लोग इसमें उत्तीर्ण हों।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ४-१२-१९२१

२२५. टिप्पणियाँ

मेरा अज्ञान

गुजरातके भूगोलके सम्बन्धमे मेरे अज्ञानका कोई हिसाव नही है। आनन्दके एक निवासी और खेडाके मुखिया अब्बास साहव अभिमानपूर्वक मुझे मेरी भूल[1] वताते है कि डाकोर कोई आनन्दमे नही है कि उसके सुधारका वोझ मैं आनन्दके कन्धोपर डाल सकूं। यद्यपि मैं यह जानता था कि डाकोर ढासरा ताल्लुकेमे है तथापि लेख लिखते समय मैं भूलसे डाकोरको आनन्दमे लिख गया। इस अज्ञानके लिए मैं पाठकोसे क्षमा चाहता हूँ, तथापि मैं अपनी भूलपर कायम रहना चाहता हूँ। सरकारकी सहूलियतके लिए डाकोरजी भले ढासरामे रहे, लेकिन आनन्द अपने उत्तरदायित्वको नही छोड सकता। आनन्द ताल्लुकेके सव निवासी धार्मिक अर्थात् शूरवीर, विवेकी और सदाचारी वने तथा इसका असर उनके पडौसमे रहनेवाले डाकोरके लोगोपर न पडे, यह हो ही नही सकता। डाकोरको सुधारनेके वोझको मैं आनन्द ताल्लुकेपर नही डालता। लेकिन डाकोर मेरे लिए आनन्द ताल्लुकेमें होनेवाले सुधारोका थर्मामीटर होगा।

हृदय-परिवर्तनकी आवश्यकता

जिन सुधारोकी मुझे जरूरत है, जिन सुधारोसे ही आनन्द और वारडोलीको विजय प्राप्त हो सकती हे, वे सुधार अगर ऊपरी दिखावा-भर हुए तो व्यर्थ जायेंगे। उनका प्रभाव गहरा होना चाहिए। लोगोके हृदयका परिवर्तन होना चाहिए। भय दूर हो गया है, इसका दिखावा नही, भयका सचमुच नाश होना चाहिए। शान्तिका दिखावा नही, उसका ज्ञानपूर्वक पालन किया जाना चाहिए। खादीका स्वाग नही, उसका शौक उत्पन्न होना चाहिए। चरखेकी पूजा नही, प्रत्येक घरमे उसका धर्म समझकर उपयोग किया जाना चाहिए। तभी हमारी जीत होगी। अगर हृदयमे हम गुलामीका सेवन करते रहे तो हमे स्वतन्त्रता कभी नही मिलेगी।

अनोखी लडाई

यह कसौटी सत्यकी अर्थात् सत्यके आग्रहकी है। ससारमे आजतक किसी भी राष्ट्रने केवल सत्यके आग्रहका दावा करके स्वतन्त्रता प्राप्त नही की है। जो अनुकूल मालूम हुआ वैसा करके राष्ट्रोने स्वतन्त्रता नही, अन्य राष्ट्रोपर सत्ता प्राप्त की है। इग्लैड स्वतन्त्र नही, सत्तावान् है। उसने हमें गुलाम वनाया है। गुलामको अपना मालिक स्वाधीन-जैसा दीख पडता है और वह भी उसके जैसा वननेका प्रयत्न करता है, अर्थात् दूसरोको गुलाम वनानेमे आनन्दका अनुभव करता है। यह गुलाम स्वतन्त्र नही वनता, हमेशा अपनेसे अधिक वलशाली व्यक्तिका गुलाम ही वनता है।

१. देखिए "पत्र वारडोली और आनन्दके निवासियोंके नाम", २९-११ १९२१ ।

सत्य अर्थात् सत्य

लेकिन इस समय मैं पाठकोको इतने गहरेमे नही ले जाना चाहता। उसका रूप जो भी हो, हमने अपनी स्वतन्त्रता सत्याग्रह द्वारा प्राप्त करनेकी प्रतिज्ञा की है। इसलिए मिथ्याचारसे तो वह हमे मिलनेवाली नही है और जो बिना समझे अथवा समझनेके बावजूद छलपूर्वक सत्याग्रहमे शामिल हुए होगे उन्हे खुद सन्तोप नही मिलेगा, जनताको भी वे सन्तुष्ट नही कर सकेगे और अन्तमे वे देखेंगे कि उनके हाथ कुछ भी नही लगा है, और सचमुच ऐसा ही होगा। क्या ढेढ और भगीके प्रति तिरस्कारका भाव रखकर और स्पर्श करनेका केवल ढोग रचकर हम अस्पृश्यताके पापसे मुक्त हो जायेगे? हम जबतक मनसे मलिनताको दूर करके उन्हे अपने भाई-बहनके जैसा नही समझेगे और उनके दु खमे दुखी नही होगे तबतक हम स्वतन्त्र नही होगे, क्योकि तबतक हम उसके योग्य नही होगे। वे ही हमारी प्रगतिको रोकेगे। कोई व्यक्ति अपने-आपको इस भुलावेमे डालकर कि उसे ज्वर नही है और उसमे पर्याप्त शक्ति है, कितनी दूरतक जा सकता है। भयके कारण ही अगर हम हिन्दू और मुसलमानकी दोस्तीका ढोग कर रहे होगे तो हम अन्तिम घडीतक कभी एक साथ नही रह सकते और हमारे मनकी मलिनता ठीक समयपर उभरकर ऊपर आ जायेगी। हमारी पूरी कसौटी हुए बिना हमे स्वराज्य कैसे मिलेगा? और कदाचित् अग्रेज अधिकारी एक बार धोखा खा भी जाये तो भी हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरेके साथ लडने लग जायेगे। उस हालतमे हम कभी स्वराज्यकी शुरुआत ही नही कर सकेगे। आरम्भसे ही हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरेसे द्वेप और भय करने लगेगे। फलत यह मित्रता बिलकुल सच्ची होगी तभी हम आगे बढ सकेगे।

हमारी स्थिति

मै स्वय स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए जितना अधीर हो रहा हूँ, मुझमे उतना ही धैर्य भी है और हर व्यक्तिको मेरी सलाह है कि वह भी ऐसा ही बने। हमने जिन उपायोपर अमल करनेका निश्चय किया है, अगर हम उनपर सचमुच अमल करे तो स्वराज्य प्राप्त करना आसान है। और इन उपायोके बिना मै इस वर्ष तो क्या इस युगमे भी स्वराज्य प्राप्त करना असम्भव समझता हूँ।

अन्य सब लोगोकी अपेक्षा हमारी स्थिति भिन्न है, यह बात हमे याद रखनी चाहिए। हमारी सख्या ही हमारा बल है और यही हमारी दुर्बलता है। हिन्दुस्तान-की तरह किसी भी देशमे ऐसे भिन्नधर्मी लोग नही रहते जो आजतक एक-दूसरेको अपना शत्रु मानते है, किसी भी देशमे हिन्दुस्तानकी भाँति जनताका एक बडा हिस्सा अस्त्र-शस्त्रके प्रयोगसे इतना नही डरता और किसी भी देशमे मनुष्य-जातिका इतना अपमान नही किया जाता जितना हिन्दुस्तानमे ढेढ और भगीका किया जाता है। इसलिए हमारे देशके रोगका उपचार भी नया होना चाहिए।

भूलमें न रहे

गुजराती भूलमे न रहे ऐसी मेरी इच्छा है। लकडीकी तलवारसे हमारा काम नही चलनेवाला। सत्याग्रहकी तलवार फौलादकी तलवारकी अपेक्षा अधिक पैनी और

तेज है। यह कोई बच्चोंका खेल नहीं, यह तो एक खरा और सच्चा खेल है। इसमें झूठको तनिक भी अवकाश नहीं। यदि हम सच्चे बने तो इसी वर्ष स्वराज्य मिल जाये। लेकिन स्वराज्य मिलनेसे हम आज जो कर रहे हैं उसमें कोई फर्क पड़नेवाला नहीं है, हमारी मुश्किलें कम होनेवाली नहीं हैं। अभी तो हममें से अधिकांश लोगोंका समय लड़नेमें अर्थात् प्रहारको सहनेमें जाता है। लेकिन बादमें तो हमें निर्माण करना होगा, नाजुक प्रश्नोंका निर्णय करना होगा, देशका शासन-प्रबन्ध चलाना होगा। क्या हम फिरसे अस्पृश्यताको दाखिल करेंगे? बादमें हम खादी कम पहनने लगेंगे कि ज्यादा? बादमें हम चरखेको जला डालेंगे या उसे और ज्यादा चलायेंगे? क्या बादमें हिन्दू मुसलमानोंको और मुसलमान हिन्दुओंको तथा ये दोनों ईसाइयों और पारसियोंको भुला देंगे और एक दूसरेके लिए अपरिचित बन जायेंगे? क्या बादमें हमें स्कूल चलानेकी जरूरत न रहेगी अथवा अभी जो स्कूल सरकारी कहलाते हैं उनका भी प्रबन्ध हमें करना पड़ेगा? क्या बादमें हम अदालतोंमें और ज्यादा भीड़ लगाने लगेंगे अथवा बादमें वकालतकी मौजूदा पद्धतिको भी बदलकर अदालतोंका संगठन आज जैसा है उसमें महत्वपूर्ण परिवर्तन करेंगे? कोई मन-ही-मन इस बातका भरोसा न रखे कि बादमें तो हमारे पास एकाएक कार्यदक्ष व्यक्तियोंकी बरसात होगी। अगर आज इसकी कमी है तो उस समय और भी ज्यादा कमी होगी। देशका शासन-प्रबन्ध हमें चलाना होगा। उसका बीज तो हमने नागपुर कांग्रेसमें बो दिया। जैसा हमने बोया है वैसा हमें काटना भी होगा।

एक वर्ष बाद

इसलिए यदि कुछ लोग ऐसा मानते हों कि दिसम्बरके बाद हम हवाखोरीके लिए निकल पड़ेंगे तो इसके जैसी कोई और भूल नहीं हो सकती। स्वराज्य अभी मिले अथवा बादमें, हम आज जो कर रहे हैं, उसमें बहुत ही कम परिवर्तन होगा। बादमें भी आत्म-शुद्धिका कार्य तो हमें करते ही रहना होगा। आज उसमें जो अपूर्णता है तब हमें उसे पूरा करना ही होगा। यदि आनन्द, बारडोली आदि लड़ना चाहते हैं तो वे यह समझ लें कि एक बार रणक्षेत्रमें उतरनेके बाद एक वर्ष लगे अथवा अनेक वर्ष, वे फिर पीछे नहीं हट सकेंगे और वे यदि आगे आयेंगे तो जैसे उनकी विजय होनी निश्चित है वैसे ही उन्हें इस समय कष्ट सहन करनेका निश्चय भी करना होगा। वे कदम आगे न बढ़ायें तो उन्हें कोई कुछ कहनेवाला नहीं है, लेकिन एक बार कदम बढ़ानेपर उनके लिए लड़ने अथवा मरनेके सिवा कोई और चारा न रहेगा। इतना शौर्य और धैर्य अनिवार्य है।

निराश न हों

ये वाक्य मैं गुजरातियोंको निराश करनेके लिए नहीं लिख रहा हूँ। बल्कि उन्हें उनका कर्त्तव्य और उत्तरदायित्व बतानेके लिए लिख रहा हूँ। इसलिए लिख रहा हूँ कि वे गलतफहमीमें न रहें — ऐसा मानकर कि इसमें क्या बड़ी मुश्किल है। मैदानमें उतरनेके बाद अपने-आपको हँसीका पात्र न बनायें। जो इस लड़ाईके रहस्यको समझ

गये है, जो सत्य और अहिंसाका सेवन करने लगे है वे तो मेरे ऐसा लिखनेसे तनिक भी चौकनेवाले नही है। लेकिन यदि कोई गुजराती अभीतक इस लडाईके मर्मको नही समझा है तो वह समझ जाये, ऐसा सोचकर मैने स्पष्ट शब्दोमे यह चेतावनी दी है।

पवित्रताकी सीमा

खादीकी पवित्रता उसके स्वदेशी होनेमे है, यह मै अनेक वार कह चुका हूँ। गेहूँ पवित्र खाद्यान्न है, लेकिन उसे सन्यासी और चोर दोनो ही खाते है। इसी तरह पवित्र खादी पाखण्डी भी पहनते है और पुण्यवान् भी। भारतीयोका यह शारीरिक धर्म है, इसका जो त्याग करता है वह भूल करता है और हिन्दुस्तानको नुकसान पहुँचाता है। यह सच है कि इस सन्धिकालमे खादीमे अन्य अनेक गुणोका आरोपण किया जाता है और पाखण्डी लोग खादी पहनकर अपने पाखण्डका पोपण करते है। लेकिन ऐसा अधिक समयतक नही चल सकता। जब खादी पहनना हमारा सहज धर्म हो जायेगा तब उसकी जो कीमत होगी वही आँकी जायेगी। जिन लोगोने खादी पहनने और उसका उत्पादन करनेके धर्मको समझ लिया है वे अगर किसी स्थानपर खादीका दुरुपयोग होते हुए देखेगे तो भी अपने इस धर्मसे कभी विमुख नही होगे।

एक मित्रने कुछेक ऐसे प्रश्न उठाए है जिनका उत्तर देते हुए धर्म-सकट जैसा महसूस होता है, उन्हे समझनेमे अब कोई कठिनाई नही होगी। यह हमारा सौभाग्य है कि अब देशमे विवाह अथवा मरण आदि प्रसगोमे खादीका उपयोग करना आवश्यक माना जाने लगा है। अहमदाबादमे अभी हालमे ऐसे अनेक विवाह हुए है, जिनमे पूरी तरह तो नही पर मुख्य रूपसे खादीका उपयोग किया गया। सुना है कि एक वरने तो यह कहा कि अगर बहूको खादीकी साडी न पहनाई गई तो वह विवाह नही करेगा। अब प्रश्न यह उठता है कि खादीको उत्तेजन देनेके लिए क्या हमे उन विवाहोमे भी शामिल होना चाहिए जो अन्यथा अपवाद रूप हो? अगर हम शामिल न हो और कदाचित् ऐसे वर-वधूको इससे दुःख पहुँचे और वे खादीका भी त्याग कर दे तो? यह प्रश्न कायरतापूर्ण है। यदि कोई बतौर घूसके खादी पहनता है तो इसे हमे कदापि स्वीकार नही करना चाहिए। प्रत्येक वस्तुका मूल्याकन उसके गुण-दोपको देखते हुए करना चाहिए। साठ बरसका बूढा भगवे रगकी खादी और रुद्राक्षकी माला पहनकर तथा भभूत लगाकर बारह वर्पकी कन्याके साथ विवाह करनेके लिए निकले तो भी हमे खादीको उत्तेजन देने अथवा उसके सादेपनका बखान करनेकी खातिर उसकी शादीमे शरीक नही होना चाहिए। और उसी तरह पच्चीस वर्षका युवक अगर अपनी स्त्रीके मरनेपर श्मशानमे ही किसी दूसरी स्त्रीके साथ सगाई करता है और दूसरे दिन विवाह करनेके लिए निकल पडता है तो हमे उसके विवाहमे भी नही जाना चाहिए। खादीकी और विवाहकी नीति अलग-अलग है। विवाह दूसरी तरहसे उचित हो किन्तु यदि उसमे खादीका प्रयोग न किया जा रहा हो तो जिस तरह हम वहाँ जानेमे आनाकानी करते है उसी तरह खादीसे लदी हुई अनमेल जोडीके विवाहमे भी हमे शरीक न होना चाहिए।

इसी प्रसगमे मुझे एक अन्य मित्रका पत्र प्राप्त हुआ है जिसमे वे दुखी हृदयसे लिखते है "हम खादीकी महिमासे तो परिचित है, लेकिन जिस विवाहमे उपस्थित लोग खादीसे सज्जित हो, स्त्रियाँ भी खादी पहने हो, पर अश्लील गालियाँ गा रही हो, तो वहाँ क्या करना चाहिए? खादीकी खातिर ये गन्दी गालियाँ सुने अथवा खादीकी पोशाक होनेके बावजूद ऐसी गालियोसे अपने कानोको अपवित्र होनेसे रोके?" इस प्रश्नको मैंने कोई उत्तर देनेके विचारसे नही लिखा है और प्रश्नकर्त्ताने भी उत्तर पानेके उद्देश्यसे इसे नही पूछा है। प्रश्नकर्त्ताने तो टीकाके लोभसे इस रिवाजकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया है। उनका कहना है कि जहाँ लडके और लडकियोको भी ऐसी बीभत्स शिक्षा दी जाती है वहाँ धर्म-राज्यकी क्या आशा की जा सकती है? प्रश्न दुख उपजानेवाला है। स्त्रियाँ जिस समय ऐसे अश्लील गीत गाती है उस समय उन्हे उनकी अश्लीलताका शायद ही भान रहता होगा। ऐसी बुरी आदते गई नही है, इसके लिए पुरुष वर्ग ही दोषी है। पुरुष वर्गने इस बातका विचार ही नही किया कि उन्हे जो ज्ञानोपलब्धि हुई है उसे उन्हे स्त्रियोको भी देना चाहिए। ऐसे विषयोपर पुरुषवर्ग बहुत आसानीसे सत्याग्रह कर सकता है। यह युग नवयुवकोका है। वे यदि नम्र और नीतिमान हो तो ऐसी कुप्रथाको तुरन्त दूर कर सकते है। शिक्षित लडकियाँ भी ऐसे रिवाजके विरुद्ध सत्याग्रह कर उसे दूर कर सकती है। प्रत्येक पाठक बहन ऐसी कुप्रथाओका विरोध कर सकती है। समझदार स्त्रियाँ अगर ऐसे कार्योमे भाग लेनेसे इनकार कर दें तो यह रिवाज तुरन्त बन्द हो जाये।

बेमेल जोड़ी

बेमेल जोडो तथा पुरुषोके दूसरी और तीसरी बार विवाह करनेकी समस्या कठिन है। यह गन्दगी शायद काठियावाडमे सबसे अधिक है। जबतक गरीब माता-पिता अपनी लडकियोको बेचनेके लिए और विषयान्ध धनवान केवल अपनी विषय-वासनाकी तृप्तिके लिए पैसा देनेको तैयार होते है तथा जबतक समाज इस बातको सहन कर सकता है तबतक इस गन्दगीका दूर होना लगभग असम्भव है। स्वराज्यकी प्रवृत्तिमे धर्मकी जो झाँकी दिखाई दे रही है उसके सिलसिलेमे अगर पुरुष अपनी विषय-वासनाको मर्यादित करना सीखे तो ही साठ वर्षके बूढे पत्नीकी मृत्यु होनेपर दूसरे ही दिन विवाह करनेसे रुकेगे। समाज अगर दूसरोके दोषोकी चौकसी-भर करे तो यह सुधार नही हो सकता। ऐसे दुखोका निवारण तिरस्कारसे नही हो सकता। यह तो केवल विवेकसे, दलीलसे और दयासे होगा। जो पिता अपनी लडकीको बेचता है और जो उस लडकीको खरीदता है, वे दोनो रोगी है और दयाके पात्र है। अगर हम हमेशा उनका तिरस्कार करेगे तो वे अपना हृदय कठोर बना लेगे और निर्लज्ज हो जायेंगे। लेकिन यदि हम उनके रोगका उपचार कर उन्हे शर्मिन्दा करेगे तो वे अवश्य मर्यादा सीखेगे। प्रत्येक जाति-बिरादरी इस सम्बन्धमे समय रहते सुधार कर सकती है। ऐसे विवाहोमे समझदार लोग शरीक न हो, इस बातको मैं केवल उपचारके रूपमें ही नही देखता, बल्कि इसे धर्म मानता हूँ। इस धर्मके पालनमें दया होनी चाहिए, तिरस्कार अथवा अभिमान नही।

धाराला, गरासिया आदि भाइयोसे

आप क्षत्रिय होनेका दावा करते है। इस धर्म-यज्ञमे हमे सब कौमोका, सब वर्णोका सहयोग चाहिए। जबतक सब लोग एक-दूसरेको भाई न मानेगे और एक-दूसरेकी रक्षा करना नही सीखेगे तबतक स्वराज्य मिलना कठिन हे।

क्षत्रियका धन्धा तो विशेष रूपसे रक्षा करनेका ही हे। इसके विपरीत धाराला भाइयोमे से अधिकाशने उल्टा रास्ता अपनाया हे। उनपर तो सरकार अनेक बार अपराधी जातियोसे सम्बन्धित कानून भी लागू करती है।

मेरी अब आप सबसे प्रार्थना है कि आप अपने साहस और सहनशीलताका उपयोग देशके हितार्थ करे। मारनेकी हिम्मत रखनेकी अपेक्षा मरनेकी हिम्मत रखना अधिक अच्छा हे और इसीकी सारा जगत प्रशसा करता है। मै आपसे देशकी खातिर मारे बिना मरनेकी हिम्मत रखनेकी अपेक्षा रखता हूँ।

मै आपसे यह माँगता हूँ कि आप पिछले वैरको भुलाकर अपने शान्त व्यवहारसे पास-पडौसके लोगोको निर्भय बनाये।

आप अपने घरोमे पीजना, कातना और बुनना शुरू करे तो सकटके वर्षोमे भी आपको अनाज और वस्त्रकी कमी महसूस न होगी। ये तीनो क्रियाएँ सहल और गृहस्थ लोगोको शोभान्वित करनेवाली है। उनसे परिवार अपना भरण-पोषण कर सकते है। आप इन्हे ग्रहण करे, ऐसी मेरी कामना है।

आपका शुभ-चिन्तक,
मोहनदास करमचन्द गाधी

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ४–१२–१९२१

२२६. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको[1]

मगलवार, ६ दिसम्बर, १९२१

वहाँकी बातोको सुननेके बाद मुझे लगता है कि तुम्हे अब शूरवीर बननेकी जरूरत है। अर्थात् जहाँ जरूरत जान पडे वहाँ शान्तिपूर्वक लेकिन दृढतासे बात करो और विरोध करो। विरोध करते समय व्यवहारमे सख्ती नही आनी चाहिए और क्रोध तो कतई नही आना चाहिए। अगर तुम ऐसा करोगे तो सब तुम्हारी बात ध्यानसे सुनने लगेगे। दूसरी ओर अपने मतदाताओको ठीक जानकारी दो और अपने निर्वाचन-क्षेत्रको ताकतवर बनाओ। इस तरह सत्य प्रकट होगा तो यह क्षणिक तूफान शान्त हो जायेगा। जो लोग यह चाहते है कि सब-कुछ शुद्ध तरीकेसे हो वे आपसमे मिल-कर विचार कर ले कि उनका क्या कर्त्तव्य है। जो भूल करते दीख पडते हो उनके

१. गाधीजीने यह पत्र बम्बईकी कार्रवाइयोसे सम्बन्धित प्रेषी द्वारा भेजे गये अनेक पत्रोंके उत्तरमें लिखा था।

प्रति दिलमें तनिक भी क्रोध नही होना चाहिए, केवल प्रेम और दया होनी चाहिए। इसका असर उनपर भी पडे विना न रहेगा। यह तो मैंने तुम्हे राजयोगका मार्ग सुझाया है। तुम इस मार्गको अपनाने योग्य हो। मेरी इच्छा हे कि निराश न होओ।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

२२७. तार : चित्तरजन दासको

[७ दिसम्बर, १९२१को या उसके प्रश्चात्][1]

हार्दिक वधाई। आपकी पत्नी और वहनके नेतृत्वमे वगालकी पचास ओरसे। अव स्वराज्य सुनिश्चित ओर समीप हे। मुझे आपसे ईर्पा होती है। आशा है कि पूर्ण शान्ति होगी।

[अग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १३-१२-१९२१

२२८. टिप्पणियाँ

निराशाकी जरूरत नहीं

कुछ लोगोने चिन्ता प्रकट की हे कि पजावमे लाला लाजपतराय शायद शीघ्र ही जेलके मेहमान हो जायेंगे, असममे सर्वश्री फूकेन और वारदोलोई पहले ही जेल भेजे जा चुके है और इसी तरह अजमेरकी काग्रेस कमेटी और खिलाफत कमेटी, दोनोके सभापति मौलाना मोहिउद्दीन जेल भेजे जा चुके है, तव इस अवस्थामे इन प्रान्तोमे आगे काम कैसे होगा? मैंने यह जवाव दिया कि इन नेताओंके जेल जानेसे हमारा कार्य और आगे ही वढेगा। इन लोगोके जेल जानेके फलस्वरूप मै तो यही उम्मीद करता हूँ कि इन प्रान्तोके लोग अधिक सयमका और अपने दायित्वके प्रति अधिक जागरूकताका परिचय देगे। इन प्रान्तोमे और ज्यादा खादी तैयार होने लगेगी, विद्यार्थियो और वकीलोमे और अधिक जागृति पैदा होगी। यदि हम अपना शासन आप करनेके लायक होगे तो इन नेताओकी वीरता अवश्य ही दूसरोको प्रेरणा देगी। दमनके साथ-ही-साथ हमे भी अधिकाधिक ऊपर उठना चाहिए। जव-जव लोग सरकारके दमनसे दव जायेंगे तव-तव पशुवलपर आधारित सरकारको दमनका सहारा लेनेमे फायदा दिखता रहेगा। फिर अन्तमे चाहे भले ही लोग फिर उठ खडे हो। जो सरकार पशुवलपर अपनी हस्ती कायम रखती हे वह चार दिनोतक ठहरती है और केवल दमनके

१ श्रीमती दास और दूसरोंको ७ दिसम्वरको गिरफ्तार किया गया लेकिन तत्काल छोड़ दिया गया था।

ही बलपर जीती है। जब उसके जोर-जुलमके उपाय कारगर नही रह जाते तब वह अपने आप मौतके घाट उतर जाती है। अपने नेताओके हमसे अलग कर दिये जानेके बाद यदि हमने खुद अपने अन्दर और अपने द्वारा उनके तेज और उत्साहको प्रकट नही किया, तो कहना चाहिए कि हम उनके अनुगामी होनेके लायक थे ही नही।

सिखोंका बलिदान

हमारे सिख भाई खुद अपनी और सारे भारतकी समस्या हल कर रहे है। अपने मत और विश्वासके नामपर सभी बडे-बडे सिख अपनेको बलिवेदीपर चढा रहे है। सच्चे सैनिकोकी तरह, वे एकके बाद एक जेल जा रहे है और सो भी बिना भीड-भाड, बिना तडक-भडक और बिना जरा भी हिंसाके। यदि वे बराबर ऐसा ही साहस, और ऐसी ही शान्ति दिखाते रहे तो वे इसके द्वारा निस्सन्देह अपनी समस्या हल कर लेगे और भारतकी समस्याको सुलझानेमे भी सहायक होगे। सिख भाई इस समय जो अपने धर्म-प्रेमका परिचय दे रहे है उसकी ओर सारा भारत उत्सुकताके साथ टकटकी लगाये है।

भारत-प्रेमका पुरस्कार

जहाँतक मेरी जानकारी है लाहौरमे श्री स्टोक्सकी गिरफ्तारीके सम्बन्धमे बम्बईके समाचारपत्रोको कोई भी तार नही मिला है। यह ताज्जुबकी बात है। मैने 'ट्रिब्यून' मे इस घटनाके बारेमे एक पैरा देखा है। मै सोच ही नही पाता कि एक इतनी सनसनीखेज गिरफ्तारीके बारेमे किसीने कोई तार न भेजा हो। इससे मै यह नतीजा निकालता हूँ कि गिरफ्तारीकी सूचनाके तारोको अली-भाइयोकी गिरफ्तारीके बारेमे भेजे गये तारोकी तरह ही या तो दबा दिया गया है या उनको कुछ समयके लिए रोक लिया गया है। श्री स्टोक्सको 'ट्रिब्यून' मे छपे उनके लेखोके सिलसिलेमे ३ तारीखको लाहौर छावनीमे गिरफ्तार किया गया था। उन लेखोके बारेमे यह आपत्ति थी कि वे "राजद्रोहकी भावना और सम्राट्की प्रजाके विभिन्न वर्गोमे घृणाका प्रचार करते" है। जिला मजिस्ट्रेटने श्री स्टोक्सको जमानतपर छोडनेकी बात कही थी, पर श्री स्टोक्सने उसे स्वीकार नही किया। सरकारने यह एक विचित्र-सा कदम उठाया है। श्री स्टोक्स मूलत एक अमेरिकी है, जिन्होने अपने आपको स्वेच्छया ब्रिटिश प्रजा बना लिया है। उन्होने भारतको अपना घर बना लिया है। शायद ही किसी अमेरिकी या अग्रेजने आजतक ऐसा किया हो। पिछले महायुद्धके दौरान उन्होने सरकारकी बडी-बडी सेवाएँ की थी और उच्चाधिकारी लोगोमे वह सरकारके शुभचिन्तकके रूपमे जाने जाते है। उनमे किसी भी दुर्भावनाका कोई सन्देहतक नही कर सकता। पर सरकार यह सहन नही कर सकी कि वह अपने आपको भारतीयोके साथ एकात्म महसूस करे और भारतीयोके दु खमे दु ख माने और उनकी ओरसे सघर्षमे हाथ बँटाये। आलोचनाकी खुली छूट उनको नही दी जा सकी और इस प्रकार सरकारने उनकी गोरी चमडीका जरा भी कोई लिहाज नही किया। सरकार आन्दोलनको हर कीमत-पर कुचलनेके लिए तुली हुई है। लेकिन यह उसके बसकी बात नही। श्री स्टोक्सकी

गिरफ्तारी सरकारकी कमजोरीकी जितनी बडी निशानी है, लालाजीकी गिरफ्तारी भी शायद इतनी नही थी। लालाजीको युद्धके दौरान सरकारकी सेवाका श्रेय प्राप्त नही था। लालाजीको एक आन्दोलनकारी माना जाता था। वह गोरी जातिके नही है। इसलिए जब श्री स्टोक्स-जैसे व्यक्तिको गिरफ्तार किया जाता है तब तो बाहरके लोग भी सरकारकी सदाशयताको सन्देहकी दृष्टिसे देखने लगते है।

बारडोली

बारडोली तहसीलके लोग बडी उत्कण्ठासे मेरे आनेकी राह देख रहे थे। आखिरकार मौलाना आजाद सोबानीके साथ मै वहाँ गया। बारडोली तहसीलकी आबादी कोई एक लाख है। उसमे करीब १४० गाँव है। वहाँ लगभग ६५ सरकारी मदरसे थे। उनमे से ५१ राष्ट्रीय पाठशालाके रूपमे परिणत हो चुके है। जहाँ-कही सरकारी मदरमे जारी है उनमे लडकोकी उपस्थिति-सख्या १० से भी कम है। राष्ट्रीय पाठशालाओमे छ हजारसे ऊपर विद्यार्थी पढ रहे है, जिनमे कुछ सौ लडकियाँ भी है। इन तमाम पाठशालाओमें सूत-कताई अनिवार्य है। हाँ, अभी नियमपूर्वक उसकी शिक्षा नही दी जा रही है और न उसका अभ्यास कराया जाता है। अधिकाश मदरसे तो इन पिछले तीन महीनोमे ही राष्ट्रीय बनाये गये है। सभी गाँवोमे मैने देखा कि स्त्रियाँ इस राष्ट्रीय आन्दोलनमे बडी दिलचस्पी ले रही है। हम वहाँ दो रोज ठहरे। इन बीच छ गाँवोंमें दौरा किया और हजारो आदमियोसे मिले। अधिकाश लोग ऊपरसे नीचेतक शुद्ध हाथकती खादी पहने थे और औरते भी बहुत बडी तादादमे इसी लिबासमें थी। जो लोग खादी नही पहने थे उन्होने इस बातकी शिकायत की कि हमें खादी नही मिल सकी। परन्तु इसका मतलब यह नही कि वहाँ स्त्री-पुरुषोने विदेशी कपडे सर्वथा त्याग दिये है। मुझे दु खके साथ कहना पडता है कि कितने ही लोग अब भी घरोमे उन्ही कपडोको बरतते है। खादी तैयार करनेका काम अभी बहुत-कुछ होना बाकी है। बारडोली तहसीलमे चरखे तो बहुतेरे है, पर करघे बहुत ही थोडे है। यहाँकी खास पैदावार कपास है। पाठकोको यह जानकर दु ख होगा कि अबतक सारी पैदावार बाहर भेजी जाती थी। यहाँ हिन्दू और मुसलमानोमे पूरा मेल-जोल है। सहयोगियोके साथके सम्बन्धोमे कटुता नही है। अछूत लोग बेधडक सभाओमे आते है। फिर भी मैने यह जता दिया है कि यह स्थिति तबतक सन्तोषजनक नही कही जा सकती जबतक राष्ट्रीय पाठशालाओके व्यवस्थापक 'अछूत' लडकोको अपनी पाठशालाओमे भरती करनेका विशेष प्रयत्न नही करते और गाँवके लोग अपने इन दलित भाइयोके कल्याणके लिए खुद अपने तईं दिलचस्पी नही लेते। कितनी ही शराबकी दुकानोपर खरीदार दिखते ही नही। मुझे जितना कुछ ब्यौरा मालूम हुआ है उसके अनुसार बिना जोरो-जब्रके ही, अथवा बहुत थोडी डर-धमकी दिखाकर ही इतनी आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की गई है। सिर्फ दो या तीन मिसाले ऐसी मिलती है कि स्वयसेवक गाँववालोके यहाँ गये और जबतक बेचारे उन लोगोने तग आकर अपने लडके सरकारी मदरसोसे नही उठा लिये तबतक वे उनके दरवाजेपर धरना देकर बैठे रहे और उपवास करते रहे। मैने कार्यकर्त्ताओको सूचित किया कि इस

प्रकारका दबाव भी हिसाके ही बराबर है, क्योकि हमे अनशन करके लोगोको अपनी रायके अनुसार चलानेका कोई हक नही। हाँ, अपने हकको प्राप्त करनेके लिए तो उपवास करना ठीक हो सकता हे, परन्तु दूसरोको अपनी राय माननेपर मजबूर करनेके लिए नही।

एक दुकानदारने शराब न बेचनेका वचन दिया था, पर उसने निबाहा नही। अतएव समाजकी ओरसे उसका बहिष्कार भी किया गया था। परन्तु मैंने लोगोको ऐसे बहिष्कार भी न करनेकी सलाह दी हे, क्योकि यहाँकी प्रजा तो बेचारी यो ही असहाय है। वर्तमान अवस्थामे तो हमारी भीतरी बुराइयोके सुधारका एकमात्र इलाज 'प्रबल लोकमत' ही हो सकता है। सामाजिक बहिष्कार, जैसे नाई, धोबी आदि बन्द कर देना, तो निस्सन्देह एक तरहकी सजा है। वह स्वतन्त्र समाजमे ही लाभदायक हो सकती है, पर जो समाज बरसोसे पशु-बल द्वारा शासित हो रहा हे उसमे तो यह साधन दमनकारी बन जाता हे।

बारडोली तहसीलके जीवनके अनेक अगोमे जो इतना गहरा सुधार हुआ और सो भी प्राय बिलकुल शान्तिपूर्ण ढगसे, उसे देखकर मुझे सचमुच बडा कौतूहल हुआ। एक और बडी अच्छी लेकिन साथ ही ताज्जुबकी बात यह है कि यहाँ इस आन्दोलनका सचालन ऐसे बूढे लोग कर रहे है जिन्होने पहले कभी देशके राजनीतिक जीवनमे भाग नही लिया था। पाठक यह सुनकर खुश होगे ओर आश्चर्य करेगे कि बारडोलीमे यह इतना बडा काम ऐसे स्वयसेवको द्वारा हुआ है जिन्होने उसके लिए एक कौडी तक नही ली है। बारडोली एक ऐसी तहसील है जिसमे कगाल लोग बहुत ही कम है और अधिकाश निवासियोके जीवन-निर्वाहके साधन कम मेहनतके है। यहाँके सार्वजनिक जीवनका यह स्फुरण इसलिए और भी प्रशसनीय है कि यह यदि पूर्णत नही तो मुख्यत उन सुयोग्य और उत्साही कार्यकर्त्ताओकी पूर्ण नि स्वार्थ सेवाका फल है जो केवल यही बात जानते है——करो या मरो। परन्तु इतना बडा कार्य सम्पन्न हो जानेपर भी, अपनी इच्छाके विपरीत, मुझे यही फैसला देना पडा कि एक महान् साम्राज्यकी सत्ताको ललकारनेके पहले बारडोलीको अपना स्वदेशीका कार्यक्रम पूरा कर देना चाहिए——यहाँतक कि अपनी जरूरतका कपडा उसे खुद ही कातकर तैयार करना चाहिए, अपने राष्ट्रीय विद्यालयोमे अछूत लडकोको बिना दिक्कत भरती करना चाहिए और इतनी कडाईके साथ अहिसाका पालन और शान्तिकी रक्षा करनी चाहिए कि निहत्थे और अकेले सहयोगी और अग्रेज तथा दूसरे हाकिम अपनेको हर तरहसे सुरक्षित महसूस करने लगे। मौलाना आजाद सोबानी भी मेरी बातसे सहमत हुए और वहाँके उदार हृदय कार्यकर्त्ताओने भी इसे स्वीकार किया। और यदि ईश्वरने चाहा तो बारडोलीके उत्साही लोग अपने वचनके अनुसार कुछ ही महीनोमे इन शर्तोको पूरा कर दिखायेगे। एक वृद्ध सहयोगी सज्जनने कहा कि ज्यादासे-ज्यादा छ महीनेमे यह सब हो जायेगा। एक उत्साही नवयुवकने कहा कि "नही जी, एक ही महीनेमे हो सकता है"। वह अपने कथनकी गम्भीरताको जानता था। अब मै पाठकोको यह सूचना देते हुए बारडोली-यात्राके अपने इन सुखकर सस्मरणोको समाप्त करता हूँ कि कितने ही सहयोगी-भाइयोने — जिन-जिनसे मै मिला —— इस बातकी पुष्टि की है कि स्वयसेवकोने

इस तहसीलमें बड़ी शान्ति और उत्साहके साथ काम किया है। आइए, हम आशा करें कि यदि आवश्यकता हुई तो, इस तहसीलको सरकारसे युद्ध ठाननेका सौभाग्य प्राप्त होगा।

सभापति दासको चेतावनी

बंगालके गवर्नर लॉर्ड रोनाल्डशेने उस दिन अपने भाषणमें कांग्रेसके मनोनीत सभापति देशबन्धु दासको कुछ नसीहतें और साथ ही यह चेतावनी भी दी कि यदि अहमदाबादके कांग्रेस-अधिवेशनमें देशबन्धुने ठीक-ठीक आचरण नहीं किया तो गवर्नर साहब उनको इसका मजा चखायेंगे। यदि सभापति महाशय इस मजेको न चख सकें, तो मैं जानता हूँ, इसमें उनका दोष नहीं होगा। उन्होंने अपने देशके लिए सर्वस्व अर्पित कर दिया है। वे ऐसे समयमें कांग्रेसके सभापति-जैसे ऊँचे पदपर विराजमान हो रहे हैं, जो इस देशके इतिहासमें सबसे अधिक नाजुक है। वे बंगालमें अपने अविराम प्रयत्नों द्वारा नया जीवन फूंक रहे हैं। वे मौका-बेमौका बराबर अहिंसाके सिद्धान्तका प्रचार कर रहे हैं और खुद भी उसपर आचरण कर रहे हैं। उनके इस कठिन कार्यमें हमें हर तरहसे निष्ठापूर्वक उनका साथ देना आवश्यक है। यदि हरएक प्रतिनिधि इस तैयारीसे और इस दृढ़ निश्चयके साथ आयेगा कि चाहे कैसा ही संकट क्यों न उपस्थित हो, हम लड़ाईमें विजय प्राप्त करके ही मानेंगे, तो सभापतिका काम कुछ हलका हो जायेगा।

प्रतिनिधियोंके सम्बन्धमें

मैं आशा करता हूँ कि सभी प्रतिनिधियोंका निर्वाचन हर हालतमें कांग्रेसके संविधानके अनुसार ही हुआ होगा। इस प्रकार चुने हुए ये सज्जन अपने मतदाताओंके सच्चे प्रतिनिधि होंगे। मतदाता तो वही लोग हो सकते हैं जिनके नाम कांग्रेसके पत्रकोंमें दर्ज हैं। जहाँ किसी प्रतिनिधिको जेल जाना पड़ा हो, वहाँ उपचुनाव द्वारा उसकी जगह दूसरा प्रतिनिधि चुना जाना चाहिए। आवश्यक प्रस्तावोंको स्वीकार करते समय सभी प्रतिनिधियोंको उपस्थित रहना चाहिए। मैं आदर्श प्रतिनिधि उसीको मानता हूँ जिसका निजी और सार्वजनिक जीवन निष्कलंक हो, कांग्रेसके कार्यक्रमके सम्बन्धमें उसे अपने जिलेकी जानकारी हो, वह सूत कातनेमें इतना होशियार हो कि दूसरेको सिखा सके, वह हाथकती-बुनी खादी पहननेका आदी हो गया हो, वह अपने राष्ट्रीय ध्येयको सिद्ध करनेके लिए तथा हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई, यहूदी इन सबकी एकताको चिरस्थायी रूप देनेके लिए अहिंसाको अपना धर्म मानता हो, असहयोग कार्यक्रमकी जो-जो बातें उसपर घटित होती हों उनके अनुसार व्यवहार करता हो, उसने जेल जानेकी तैयारी कर रखी हो और यदि सारा नहीं तो अपना अधिकांश समय देशकार्यके लिए दे डाला हो। इसके अलावा यदि वह हिन्दू हो तो उसने छुआछूतका त्याग कर दिया हो और इस साल अपने जिलेके अछूतोंकी कुछ-न-कुछ सेवाएँ की हों। ३० करोड़ देशभाइयोंकी सेवाके लिए छः हजार कट्टर, सच्चे और निर्भीक तथा पूरे समय काम करनेवाले लोगोंसे इतनेकी उम्मीद रखना कुछ ज्यादा नहीं है। मैं इसी अनुपातसे

मुसलमान और सिख प्रतिनिधियोकी सख्याकी भी आशा करता हूँ। मै यह भी आशा करता हूँ कि प्रत्येक प्रान्तसे महिलाएँ तथा 'अछूत' प्रतिनिधि भी काफी तादादमे आयेगे।

पण्डित जवाहरलाल नेहरूका जवाब

एक पत्र-लेखकने पण्डित जवाहरलाल नेहरूपर यह आरोप लगाया था कि उन्होने वर्तमान शासन प्रणालीके बदले इस प्रणालीके अग्रेज प्रणेताओ और प्रशासकोकी निन्दा की है।[1] मैने इस विषयपर उनसे जिज्ञासा की। उन्होने उसका बिलकुल साफ और पूरा उत्तर भेजा है, जो नीचे दिया जा रहा है

> आगरेके प्रान्तीय सम्मेलनमें मै तीन मौकोपर बोला। यह तो नहीं बता सकता कि मैंने ठीक-ठीक किन लफ्जोका इस्तेमाल किया, लेकिन मेरा मतलब क्या था, यह मेरे दिमागमे बहुत साफ था। पहले मौकेपर तो जब प्रच्छन्न रूपसे हिंसाकी चर्चा हुई तो मैंने उसका विरोध किया। हसरत मोहानी अध्यक्ष थे और अपने अध्यक्षीय भाषणमें उन्होने अहिंसाके सिद्धान्तके प्रति असन्तोष प्रकट किया। कई वक्ताओने बहुत उग्र भाषाका प्रयोग किया और उनकी बातोसे स्पष्ट था कि वे उस दिनकी कामना कर रहे हैं जब हिंसाको खुलकर खेलनेका मौका मिलेगा। ये सब बाते कराची प्रस्तावके सन्दर्भमें कही गईं। मैंने सघर्षके अहिंसात्मक स्वरूपपर जोर दिया और कहा कि स्वदेशी ही हमारी एकमात्र आशा है।
>
> दूसरे दिन मैंने स्वदेशीपर प्रस्ताव पेश किया। एक संशोधनका नोटिस दिया गया था जिसमे ब्रिटिश मालके बहिष्कारकी बात थी। शायद इसी मौके-पर मैंने ऐसे मुहावरो और शब्दोंका इस्तेमाल किया जिन्हे श्री गांधीसे प्रश्न पूछनेवाले व्यक्तिने गलत समझा। मेरा सम्पूर्ण तर्क यही था कि अभीतक तो सिवा स्वदेशीके, स्वतन्त्रता पानेका दूसरा कोई रास्ता हमें कोई दिखा नही सका है। मैं हिंसाके सवालपर भी बोला और उसका समाधान कर दिया। इसके बाद मैंने अन्य बहुत-सी आपत्तियोका जवाब दिया। मैंने कहा कि भारतको अग्रेजोंकी प्रभुतासे मुक्त करानेकी मेरी उत्कट इच्छा है, और स्पष्टतः चरखा और स्वदेशी ही इसके उपाय हैं।
>
> तीसरी बार मैं ब्रिटिश मालके बहिष्कारके सम्बन्धमें पेश किये गये संशो-धनके उत्तरमें बोला। इस संशोधनका मैंने विरोध किया, और उसपर बडी गरमा-गरम बहस हुई। दूसरे पक्षसे कोई बीस वक्ता बोले। सशोधनपर मत लिया गया और वह पास न हो सका।

१. देखिए "गाली किसे कहते हैं?", १७-११-१९२१।

स्पष्ट है कि कुछ अखबारोंमें मेरे भाषणकी गलत रिपोर्ट छपी है। अभी तक मैंने अपने भाषणोंकी कोई रिपोर्ट नहीं देखी है, इसलिए मुझे मालूम नहीं है कि किस अखबारमें ऐसा किया गया है। मैंने जो "अंग्रेजोंकी प्रभुता" या "अंग्रेजी हुकूमत" -- इन शब्दावलियोंका प्रयोग किया, उन्हें अंग्रेज जनतापर लागू कर दिया गया है। हो सकता है कि मैंने "अंग्रेजोंको हिन्दुस्तानसे अलग करना" या ऐसे ही शब्दोंका प्रयोग किया हो, और संवाददाता इन्हीं शब्दोंको सन्दर्भसे अलग करके ले उड़े हों। सच तो यह है कि मैं "अंग्रेजोंको" स्वदेशीके बलपर निकाल बाहर करना चाहता हूँ, इस बातसे ही सुननेवालोंको यह समझ जाना चाहिए था कि मैं व्यक्ति नहीं प्रणालीकी चर्चा कर रहा था। चरखेके बलपर किसी भी अंग्रेजको यहाँसे निकालनेकी कोशिश करना मूर्खता ही होगी।

बेशक, मैं यह तो नहीं ही कह सकता कि अंग्रेजोंके रूपमें अंग्रेजोंके प्रति मेरी भावना सर्वथा अवैयक्तिक है। इस प्रणालीसे तो मुझे घृणा है ही, साथ ही, न चाहते हुए भी कभी-कभी व्यक्ति-विशेषके प्रति भी मेरे मनमें कमसे-कम कुछ देरके लिए दुर्भावना आ जाती है और फिर यही दुर्भावना सम्पूर्ण अंग्रेज जातिके प्रति दुर्भावनाका रूप धारण कर लेती है। लेकिन ऐसी भावना बराबर क्षणिक ही हुआ करती है। वास्तवमें मुझे यह देखकर आश्चर्य होता है कि अंग्रेजोंके प्रति आम तौरपर मेरे मनमें कोई दुर्भावना नहीं है।

यह बात कुछ विचित्र-सी है कि जिन वाक्योंको लेकर आपत्ति की गई है वे ब्रिटिश मालके बहिष्कारके विरोधमें दिये गये मेरे भाषणमें आये थे। बहिष्कारका विरोध मैंने जिन बातोंके आधारपर किया उनमें एक यह थी कि यह काम असहयोगके विरुद्ध है और यह प्रेम नहीं, घृणापर आधारित है, आदि। जिन लोगोंने भी मेरी बातें सुनीं और सुननेवालोंमें से जिन लोगोंको भी उर्दू आती होगी, वे मनपर कभी ऐसी छाप ले कर जा ही नहीं सकते थे कि मैं व्यक्तियोंके रूपमें अंग्रेजोंके खिलाफ जिहादमें शामिल था।

मनुष्यको उसके कामसे अलग करके देख पाना बराबर एक कठिन बात है। बेशक, मैं ऐसा मान सकता हूँ कि अगर कोई अंग्रेज मुझे अपमानित करे तो मैं उबल पड़ूँगा और उसपर प्रहार कर दूँगा। लेकिन मैं समझता हूँ, यह मेरी कमजोरी ही होगी। मुझे अपने ऊपर पूरा नियन्त्रण नहीं है, और तनिक-सी उत्तेजनापर मैं आपा खो बैठ सकता हूँ। कभी-कभी मैं अंग्रेजोंपर बहुत नाराज हो जाता हूँ। लेकिन अंग्रेजोंके रूपमें अंग्रेजोंको भारतसे 'निकालने' की इच्छा मुझमें कभी नहीं जगी। तमाम बातोंके बावजूद मैं अंग्रेजोंका बहुत बड़ा प्रशंसक हूँ, और मैं अब भी महसूस करता हूँ कि कई बातोंमें मुझे कोई अंग्रेज एक सामान्य भारतीयकी अपेक्षा ज्यादा समझ सकता है।

यह पत्र अखबारी रिपोर्टोंपर भरोसा करनेके कुपरिणामका एक उदाहरण है। स्वर्गीय सर फीरोजशाह मेहता गलत रिपोर्ट छपनेकी आशकासे इतने भयभीत रहते थे कि उन्होने बिना लिखे कभी कोई भाषण दिया ही नही। स्वर्गीय श्री गोखले भी अक्सर अपने भाषणोकी रिपोर्टें खुद दोहरा जानेपर आग्रह रखते थे। अगर वाग्मिताके इन विशारदोको भी यह खतरा रहता था कि उनके भाषणोकी गलत रिपोर्ट छाप दी जा सकती है तो उनके बारेमे तो कुछ कहना ही नही जो भाषण देते है हिन्दुस्तानीमे और जिनके दुर्भाग्यसे उन भाषणोकी रिपोर्ट दी जाती है अग्रेजीमे। अधिकसे-अधिक सद्भावना रखते हुए भी सवाददाता मेरे भाषणोकी बिलकुल सही रिपोर्ट कदाचित् ही दे पाये है। दरअसल, सर्वोत्तम बात तो यह होगी कि जबतक भाषणोके विवरण स्वय वक्ताओको न दिखा लिये जाये तबतक अखबारोमे प्रकाशित ही न किये जाये। अगर इस सीधे-सादे नियमका पालन किया जाये तो बहुत-सी गलतफहमियाँ टाली जा सकती है।

[अग्रेजीसे]

यग इंडिया, ८-१२-१९२१

२२९. असल रंग

पजाबमे लाला लाजपतराय, मलिक लालखान, श्री सन्तानम् और श्री गोपीनाथकी, असममे श्री फूकन और बारदोलोईकी, बगालमे बाबू जितेन्द्रलाल बनर्जीकी, अजमेरमे मौलाना मोहिउद्दीन तथा अन्य लोगोकी और लखनऊमे पण्डित हरकरणनाथ मिश्र तथा अन्य व्यक्तियोकी गिरफ्तारियोसे पता चलता है कि सरकार अब कुछ करनेपर आमादा है। यह पकड-धकड केवल यही नही दिखलाती कि सरकार अब कृतसकल्प है, बल्कि यह भी कि अब वह सचमुच असहयोग आन्दोलनको सहन नही करेगी। अब सवाल केवल हिसाको दबानेका ही नही रह गया है, बल्कि लोगोको सहयोग करनेके लिए विवश करनेका हो गया है। ठीक है, चाहिए भी यही था। किसी-न-किसी दिन तो सरकारको अपना असली रूप प्रकट करना ही था। युवराजका जैसा स्वागत यहाँ हो रहा है वैसा किसी भी युवराजका कही न हुआ होगा। और इसलिए जनताके चुनिन्दा नेताओको रास्तेसे हटाया जा रहा है जिससे लोगोपर सरकारका रोब गँठ जाये, वह उसके बताये ढगसे चले, और विभिन्न प्रान्तोमे जहाँ-जहाँ युवराज जाये वहाँ-वहाँ उनके पहुँचनेके दिन हडताल न होने पाये।

भारत सरकारको, अपने वर्तमान गठनके अनुरूप, यह सब-कुछ करनेका अधिकार है। वह इस अधिकारका दावा भी करती है और उपयुक्त समयपर अपने अधिकारोका प्रयोग भी करती है, और इसीलिए हम उसके साथ असहयोग कर रहे है। उसका यह हक है क्या? जनतापर अपनी इच्छा थोपना और प्रजाका उसकी इच्छाके अनुसार चलनेका अधिकार स्वीकार न करना और इसके लिए जेलका भय दिखलाना। मसला साफ है, और लॉरेंस साहबकी मूर्तिके मामलेने उसे बिलकुल साफ तौरपर प्रकट कर

दिया है। कानूनन उस मूर्तिपर लोगोका स्वामित्व है, तो भी सरकार उसे वहाँसे हटाने नही देती। वह या तो हुक्मनामे निकालकर "कलमके द्वारा शासन करना चाहती है या तलवारके बलपर।" एक बार फिर लोगोको कलम या तलवार, दोनोमे से कोई एक चुननेके लिए कहा गया है। क्या जनता तलवारसे शासित होनेका अधिक सम्मानप्रद विकल्प चुनकर, कलमके अपमानजनक हुक्मका विकल्प अस्वीकार करेगी ?

लोगोको असहयोगका प्रशिक्षण प्राप्त करते १५ महीने हो गये है। इतनेपर भी यदि वे यह न जान पाये हो कि इस समय हमे क्या करना चाहिए तो उन्हे शिकायतके लिए कोई गुजाइश नही। हाँ, सबसे अच्छी बात जो वे कर सकते है, यह है कि वे कुछ न करे—अर्थात् वे जैसे थे वैसे ही बने रहे और अपने तमाम काम इस तरह करते रहे मानो कोई असाधारण बात हुई ही न हो। लॉर्ड किचनरके मर जानेसे इग्लैडने युद्धसे मुँह नही मोड लिया। उसका तो यही सिद्धान्त-वाक्य था—"जो काम जैसे चल रहा था वैसा ही चलता रहे।" उसका हिंसा-बल सुसगठित था—इतना सुसगठित कि वह बिना सेना-नायकके, अथवा लगातार एकके न रहनेपर दूसरा सेना-नायक जुटाकर अपना काम चला सके। क्या हमारा अहिंसा-बल इतना सुसगठित हो गया है कि हम बिना नेताके, अर्थात् लगातार एकके बाद दूसरा नेता जुटाकर अपना युद्ध जारी रख सके ?

लाला लाजपतरायको गिरफ्तार कर सरकारने हमारे एक बडेसे-बडे मुखियाको पकड लिया है। उनका नाम भारतके बच्चे-बच्चेकी जबानपर है। अपने आत्मत्यागके बलपर वे अपने देशभाइयोके हृदयमे उच्च स्थान प्राप्त कर चुके है। अहिंसाके प्रचारके लिए और उसके साथ ही लोकमतको सगठित करने और उसकी निर्बाध अभिव्यक्तिके लिए उन्होने जितना परिश्रम किया है, उतना बहुत ही थोडे लोगोने किया है। उनकी गिरफ्तारीसे सरकारके रुखका जितना ठीक पता चलता है, उतना दूसरी किसी बातसे नही।

पजाबने तुरन्त ही उनकी जगह लेनेके लिए अपना दूसरा नेता चुन लिया। उन्होने आगा सफदरको अपना अगुवा बनाया है। पजाबी भाइयोको उनसे अच्छा नेता नही मिल सकता था। वे एक सच्चे मुसलमान और एक वीर हिन्दुस्तानी है। उन्होने जितनी सेवाएँ की है वे सब बिना दिखावेकी है। मुझे इस बातमे जरा भी सन्देह नही है कि लोग लालाजीकी तरह ही सच्चे हृदयसे उनका साथ देगे। पजाबी भाई लालाजीका बडेसे-बडा सम्मान जो कर सकते है वह यही है कि वे यही समझ कर उनका काम बराबर आगे बढाते रहे कि लालाजी हमारे साथ ही है। वह प्रेम जो कि अविनाशी आत्माको धारण करनेवाले इस कलेवरके कुछ दिनोके लिए अथवा हमेशाके लिए जुदा हो जानेके बाद खतम हो जाता है, अन्धा, मूढ और स्वार्थी प्रेम है। सम्भव है, पजाबी भाई हमेशा ही लालाजीकी जगहपर किसी आगा सफदरको अपनी रहनुमाईके लिए न पाये। मुमकिन है कि हमारे अनुमानसे पहले ही वे हम लोगोसे जुदा कर दिये जाये। जिन सस्थाओका सगठन अच्छा होता है, वहाँ नेताओका

चुनाव केवल कार्यकी सुविधाके लिए किया जाता है, किसी असाधारण गुणके कारण नही। नेता क्या है? अपने बराबरीवालोमे सबसे आगेका व्यक्ति। किसी-न-किसीको तो आगे रखना ही चाहिए। परन्तु यह कोई जरूरी नही कि वह जजीरकी कम-जोरसे-कमजोर कडीसे अधिक मजबूत हो ही। लेकिन एक बार चुनाव कर लेनेके बाद हमारे लिए उसका अनुसरण करना लाजिमी है, अन्यथा जजीर टूट जायेगी और सब-कुछ नष्ट हो जायेगा।

हमे अपने ध्येयतक पहुँचनेके लिए अब बहुत-कुछ करना बाकी नही रहा है। मैं अपना यह विश्वास लोगोके दिलमे बैठा देना चाहता हूँ। हमारा रास्ता बिलकुल साफ है। काग्रेसके मनोनीत सभापति देशबन्धु दासने उसे बिलकुल स्पष्ट शब्दोमें रखा है

> **मेरा पहला और आखिरी निवेदन आपसे यही है कि आप लोग अहिंसात्मक असहयोगके आदर्शसे कभी च्युत न हो। मै जानता हूँ कि इस धर्मका पालन करना कठिन है। मै यह भी जानता हूँ कि कभी-कभी उत्तेजना इतनी अधिक होती है कि विचार, वाणी और कर्ममें अहिंसक बने रहना अत्यन्त कठिन हो जाता है। तथापि इस आन्दोलनकी सफलता तो इसी महान् सिद्धान्तपर अव-लम्बित है।**

इस महान् सिद्धान्तको अपने जीवनमे उतारनेकी क्षमता अपने अन्दर पैदा करनेके लिए हमे उत्तेजनाकी सभी सम्भावनाओसे अपनेको बचाना चाहिए। अतएव अब न तो जुलूसोकी जरूरत है, न विशाल सभाओकी। जिन लोगोमे जागृति आ चुकी है बस उनको ही इस ढगसे अनुशासित बना देना चाहिए कि वे उत्तेजनाके समय भी स्थिरचित्त, शान्त रह सके और रुई धुनने, हाथसे सूत कातने, बुनने आदि रचनात्मक राष्ट्रीय कार्योके सगठनमे लग जाये, जिससे राष्ट्रके लाखो बेकार लोगोको रोजी मिले और देशके स्वल्प साधनोमे वृद्धि हो। हिन्दू-मुस्लिम एकता हमारा अटल सिद्धान्त है। उसके स्थापित करने या प्रदर्शित करनेका एक ही मार्ग है ओर वह है राष्ट्रीय उत्थानके लिए सब लोग एक साथ मिलजुल कर काम करे अर्थात् सभी लोग अपना सारा समय अकेले खादीकी तैयारीमे ही लगाये।

ज्यो ही हम विदेशी कपडेका पूर्ण रूपसे बहिष्कार कर देगे और अपने-अपने प्रान्तो और गाँवोके लिए आवश्यक खादी वही तैयार करना शुरू कर देगे, त्यो ही हम, सम्भवत बिना सामूहिक सविनय-अवज्ञाके ही आजाद हो सकेगे। इसलिए हमे उद्धत किस्मकी सविनय अवज्ञाको कमसे-कम उस अवस्थातक तो टालना ही चाहिए जबतक कि हम विदेशी कपडोका पूर्ण रूपसे बहिष्कार करके हाथसे कती और बुनी खादी तैयार करनेके योग्य न बन जाये। हाँ, अपने आन्दोलनको आगे बढाते हुए जब-जब हम सविनय अवज्ञा करनेको बाध्य हो जाये, तब-तब हमे उसका हृदयसे स्वागत करना चाहिए।

इन गिरफ्तारियो और सजाओकी बदौलत यदि हमारा दिल बैठ गया या हम भटक गये, तो यह हमारी कमजोरी और स्वराज्य पानेकी हमारी अयोग्यताका स्पष्ट

चिह्न होगा। जो सिपाही मरनेसे डरता है या पूरी कीमत चुकानेसे जी चुराता है वह सच्चा सिपाही नही। सच्चे सिपाहीको तो जितना ही अधिक जूझनेका अवसर मिलता है, उतनी ही अधिक खुशीसे वह सबसे आगे बढता है। सरकार अपनी जेलोमे हमसे जो-जो काम कराये वह सब हमे करना चाहिए। हमारे लिए इस बातको समझ लेना और इसपर कायम रहना आवश्यक है। मुझे इसपर पूर्ण विश्वास हो चला है कि दलीलोके द्वारा नही, बल्कि बेगुनाह लोगोके कष्टसहनके द्वारा ही सजा देनेवाले और और सजा पानेवाले, दोनोके दिलपर गहरा असर होता है। ऐसे कष्टसहनको देखकर एक ओर तो देश अपने आलस्य और उदासीनताको त्यागकर उठ खडा होगा और दूसरी ओर सरकारको भी अपनी निर्दयता त्यागनी पडेगी। परन्तु यह कष्टसहन उन लोगो द्वारा होना चाहिए जो बहादुरीके साथ खुशी-खुशी उसे उठाये, उन अनिच्छुक लोगो द्वारा नही जो कमजोर और लाचार हो। जो जेल जा चुके है या जानेकी तैयारीमे है, वे कह सकते है — 'बस, हमारा काम खतम हुआ।' लेकिन हम लोगोको, जो अभी जेलोके बाहर है, उनके खतम किये हुए कामके लायक अपने आपको सिद्ध करना है। यह हम किस तरह सिद्ध करे? जबतक हम उन्हे आजाद न कर दे या उनके साथ जेलोमें शामिल न हो जाये, तबतक बराबर उनका काम जारी रखकर हम वैसा करे। जो अधिकसे-अधिक कष्टसहन करता है, वही अधिकसे-अधिक सेवा करता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८-१२-१९२१

२३०. हम क्या करे?

श्री जयकरके भाषणके परिणामस्वरूप अकोलामे सारे महाराष्ट्रका एक सम्मेलन हुआ है। श्री जयकर एक विचारक है, उन्हे अपने देशसे प्यार है। उनकी बाते बरबस ध्यानसे सुननी पडती है, और ध्यान देने लायक वे होती भी है। जो लोग अकोलामे इकट्ठे हुए वे सब उत्कट देशभक्त और देशके तपे हुए सैनिक है। वे देशके निर्भीकसे-निर्भीक और सर्वाधिक अनुशासनबद्ध कार्यकर्ताओमे से है। अत जब ये लोग किसी कार्यक्रमसे असहमत हो तब एक बार रुककर सोचना जरूरी ही हो जाता है।

श्री जयकरके भाषण और अकोला सम्मेलनने मेरे भीतर विचारोका तूफान खडा कर दिया है। जो परिवर्तन सुझाये गये है, उन्हे समझनेमे, उनके महत्वको ग्रहण करनेमे कोई कठिनाई नही हो सकती। अगर अनुचित न माना जाये तो मै तो कहूँगा कि यह एक अविश्वाससे प्रेरित कार्यक्रम है। यह इस मान्यतापर आधारित है कि स्वराज्य जल्दी नही मिल सकता और हमे चाहिए कि मौजूदा शासन-तन्त्रको सुधारनेके खयालसे उसका जैसा बन पडे, वैसा उपयोग करे। अभी जिस कार्यक्रमपर अमल किया जा रहा है वह इस विश्वासपर आधारित है कि मौजूदा तन्त्र बिलकुल बेकार

है और इसके उपयोगसे हमारी प्रगतिके मार्गमे बाधा ही पडती हे और हमारा ध्यान बँटता है।

इस राष्ट्रीय आन्दोलनका मूल आधार हे हिंसासे असहयोग -- चाहे वह हिसा कलमकी हो या तलवारकी। शिक्षा और विधि-निर्माणका काम आज हिसक हाथोके साधन बनकर रह गये है। सरकारकी अदालतो, या धारासभाओ अथवा उसके स्कूलो-का उपयोग करना उसकी हिसामे भाग लेना है। दोनो प्रक्रियाओमे बुनियादी अन्तर है। एक कीटाणु-निरोधक है तो दूसरा कीटाणु-नाशक। वे एक-दूसरेसे सर्वथा भिन्न हैं। एकमे तो आप शरीर-तन्त्रकी अन्तर्निहित स्वच्छताका भरोसा करते हुए आश्वस्त रहते है कि इस शरीरमे जो भी विषैले कीटाणु प्रविष्ट हो गये हैं उनका नाश अपने-आप हो जायेगा, लेकिन दूसरेमे आप बाहरी साधनोका सहारा लेते हैं। अर्थात् जो कीटाणु शरीरमे प्रवेश कर गये हैं उनका नाश करनेके लिए आप अधिक शक्तिशाली विषका उपयोग करते हैं। दोनो ही प्रक्रियाएँ प्रभावकारी हो सकती हैं, लेकिन दोनोका प्रयोग एक-साथ नही किया जा सकता। गत वर्ष हमने निश्चित रूपसे कीटाणु-नाशक विधिको अस्वीकार कर दिया। लेकिन महाराष्ट्रका बहुमत अब फिर खुल्लमखुल्ला उसी रास्तेपर लौट आनेको कहता है।

अब हम अन्धकारमे नही है। पन्द्रह महीनोके प्रयोगका परिणाम हमारे सामने है। अदालतो, स्कूलो और कौंसिलोका त्याग इस कार्यक्रमका एक अभिन्न हिस्सा है। अगर हमे विश्वास है कि इस कार्यक्रमका अमुक हिस्सा अपने-आपमे वाछनीय है तो हम सिर्फ इसीलिए तो उसे छोड नही सकते कि हमे पूरी सफलता नही मिली। यद्यपि हम इन तीनो सस्थाओको पूरी तरह त्याग नही पाये हैं, फिर भी उनकी प्रतिष्ठा तो हमने समाप्त कर ही दी है। अब न उनसे हमे कोई परेशानी होती है और न वे हमे चमत्कृत करती हैं। यह सही है कि बहुतसे माता-पिताओ, बहुतसे वकीलो और बहुतसे विधायकोने यह पुकार अनसुनी कर दी है, लेकिन इससे सिर्फ यही प्रकट होता है कि हमे उन्हे उस ओरसे विमुख करनेके लिए और अधिक प्रयत्न करना चाहिए और यह कि अब प्रयत्नका तरीका उनके सामने दलील करना नही होगा, बल्कि इन सस्थाओका त्याग करनेवालो द्वारा उनके सामने आदर्श आचरणका नमूना पेश करना होगा। मेरे लिए तो वे ही सरकार हैं। जैसे मुझे सिर्फ इस कारणसे किसी वैतनिक पदके लिए अर्जी नही देनी चाहिए कि इन पदोपर काम कर रहे लोग इनका त्याग नही करते, उसी तरह मुझे सिर्फ इस कारणसे अवैतनिक पद भी नही स्वीकार करना चाहिए कि इन पदोपर काम करनेवाले इनका परित्याग नही कर रहे हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि देशमे आज जो जागरण दिखाई दे रहा है उसका कारण यही है कि इन थोडेसे लोगोने भी मौजूदा सरकारके प्रतीकोसे अपने आपको अलग रखा है।

लोगोने कार्यक्रमके इस हिस्सेके प्रति पर्याप्त उत्साह नही दिखाया, मगर यही बात, अगर हम करे तो, अच्छे राष्ट्रीय स्कूलो और अच्छी पचायते स्थापित करनेका एक जोरदार कारण है। इस अपर्याप्त उत्साहके कारण हमे अपनी अक्षमता स्वीकार करके पुन इन सस्थाओकी शरणमे जाकर ऐशोआरामकी जिन्दगी अपनानेकी बात नही सोचनी चाहिए।

लेकिन हम वाद-विवादकी मजिल पार कर चुके है। जव सूरज आपके माथेपर चमक रहा हो तो उसकी गरमी देनेकी ताकत किसीको दलील देकर समझानेकी जरूरत नही है। और अगर कोई धूपमे भी काँप रहा हो, तो आप लाख दलील दे, उसे सूरजकी गरमीका विश्वास नही होगा, और न आप उस काँपते हुए व्यक्तिसे इस कारण झगडा ही कर सकते है। वह अपने-आपको गरमी पहुँचानेके लिए दूसरे उपाय —अगर ऐसे दूसरे उपाय हो तो—ढूँढेगा ही। मेरा कहना यह है कि हर कोई अपने-अपने विश्वासके अनुसार काम करे। काग्रेसके मचपर अनेक विचारोके लिए स्थान है। इसका सिद्धान्त आश्चर्यजनक रूपसे सीधा और सरल है। कोई पूर्ण सहयोगी तथा ऐसा राष्ट्रवादी भी इसमे रहकर काम कर सकता है जो इस कार्यक्रममे परिवर्तन चाहता है। सस्थाके आदेशकी दलीलको हास्यास्पद सीमातक नही खीच ले जाना चाहिए और वहुमतके प्रस्तावोका गुलाम नही वन-वैठना चाहिए। यह तो पशु-वलको और भी घातक रूपमे पुन प्रतिष्ठित करना होगा। और अल्पमतवालोके अधिकारो-का खयाल रखना है तो वहुमतवालोको उनके विचार और कार्यके प्रति सहिष्णुता वरतनी चाहिए, उसका आदर करना चाहिए। ऐसा कोई कारण दिखाई नही देता कि राष्ट्रवादी लोग वकालत करने, अपने वच्चोको सरकारी स्कूलोमे भेजने और कौसिलोके लिए चुनाव लडनेके वावजूद काग्रेसमे क्यो नही वने रह सकते। हाँ, इतना जरूर है कि जवतक वे काग्रेसके वहुमतसे अपना विचार स्वीकार न करवा ले तवतक काग्रेसके नामपर काम नही करे। इसका ध्यान रखना वहुमतवालोका कर्त्तव्य होगा कि अल्पमतवालोकी वात ठीकसे सुनी जाये और अन्य तरीकोसे भी उन्हे अपमानित नही किया जाये। अगर व्यक्तियोको अपनी निर्णय-वुद्धिको वहुमतकी मर्जीपर ही छोड देना पडे तो स्वराज्य विलकुल वेमानी चीज हो जायेगा।

मै सभी काग्रेसी भाइयोमे एक व्यक्तिगत अनुरोध करना चाहता हूँ। वे मेरी इस वातको सच माने कि अगर इस कार्यक्रमके पक्षमे मत देनेवाले लोगोने मेरे साथ हार्दिक सहयोग नही किया तो कलकत्तेमे प्रारम्भ हुए इस आन्दोलनके नेता ओर प्रणेताके रूपमे मुझे अपना मार्ग वहुत ही विघ्न-वाधाओसे भरा लगेगा। अगर इस कार्यक्रमके समर्थक लोग अल्पमतमे हो तव भी मै खुशी-खुशी और विश्वासपूर्वक विजयकी मजिलकी ओर कूच कर सकूँगा। अगर दृढता और धार्मिक निष्ठासे विरोध किया जाये तो यह सरकार एक जिलेके विरोधके सामने भी एक दिन नही ठहर सकती वगर्ते कि दूसरे उस तरहसे वीचमे न आये जिस तरह वम्वई आ गया था।

ईमानदार लोगोकी सख्याको देखते हुए हमारे महान् देशमे अनेक दलोके लिए भी गुजाइश है। जिस तरह मै चाहूँगा कि सभी सगठन उन सम्पूर्णतावादियोके प्रति सहि-ष्णुता वरते जो सरकारसे सारे सम्भव सम्वन्ध तोड लेना चाहते है, उसी तरह मै ऐसे किसी कार्यक्षम और अच्छे सगठनका भी स्वागत करूँगा जो सरकारी सस्थाओका उप-भोग करनेमे विश्वास रखते है और उनसे जितना सन्तोप उन्हे मिल सकता हो उतना प्राप्त करना चाहते है। कोई कारण नही कि जो प्रान्त जनताको अपने साथ लेकर चल सकता हो वह इन दोमे से किसी भी एक आधारपर अपना सगठन न करे।

मतलब यह कि मैं तो सच्चा कार्यक्रम और सच्चा दल चाहता हूँ। लोग उन्ही कार्यक्रमोपर अमल करे जिनमे उनका पूरा विश्वास हो। मानवीय सस्थाओके प्रति वफादारीकी कुछ सुनिश्चित सीमाऐ है, किसी सगठनके प्रति वफादार होनेका मतलब यह नही है कि व्यक्ति अपने निश्चित विश्वासोकी बलि चढा दे। दल बन सकते है, बिगड़ सकते है। लेकिन अगर हमे स्वतन्त्रता प्राप्त करनी है तो हमारे आन्तरिक विश्वासोपर ऐसे अस्थायी परिवर्तनोका कोई असर नही होना चाहिए।

हम एक नये जीवनके द्वारपर खडे है। हो सकता है कि इस महीनेके अन्त तक हम स्वराज्यके क्षितिजको अपनी आँखोके सामने उभरा नही देखे, लेकिन आगे जो-कुछ होनेवाला है उसके आह्लादकारी प्रकाशका अनुभव तो हमे स्पष्ट रूपसे होना ही चाहिए। और उसका अनुभव हम तभी कर पायेगे जब हर कोई स्वय अपने प्रति ईमानदार रहनेकी कोशिश करेगा। अपने साधनोकी अव्यर्थतामे अटूट विश्वास होनेका मतलब ही स्वराज्य प्राप्त करना है। इस बार काग्रेसमे जो मतदान हो वह यह मानकर नही होना चाहिए कि हम अँधेरेमे कदम रख रहे है या कोई प्रयोग कर रहे है। हमे या तो मौजूदा कार्यक्रमको जोरदार ढगसे स्वीकार करना है या स्पष्ट रूपसे अस्वीकार कर देना है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८-१२-१९२१

२३१. दुःखद मोपला-काण्ड

मुझे मोपलाओके दु खद काण्डके सम्बन्धमे एक बडा मार्मिक पत्र मिला है। उसका एक अश यहाँ उद्धृत कर रहा हूँ

> बम्बई नगरके दुःखद काण्डके बीच भी आपका ध्यान रेलके कालकोठरी-जैसे माल-डिब्बोंमें मोपला बन्दियोके ठूँसे जानेके काण्डकी ओर अवश्य गया होगा। फिर भी मै आपको अखबारकी दो कतरनें भेज रहा हूँ। इनमें सारी कहानी मौजूद है। यह काण्ड मात्र दु खद नहीं है। यह मलाबारके अधिकारियोंकी मनोवृत्तिका परिचायक भी है। ऊपरके अधिकारियोकी भावना ही निश्चित करती है कि नीचेके अधिकारी मानवीयता और कर्त्तव्यकी ओर कितना ध्यान किस ढगसे दें। दूसरी प्रेस विज्ञप्तिसे हमें मद्रास सरकारकी मनोवृत्तिका पता चलता है। उसमें स्वीकार किया गया है कि मोपला कैदी अक्सर ही सील-बन्द माल डिब्बोमें "चलते थे" और उनके स्वास्थ्यपर किसी भी तरहका बुरा प्रभाव नहीं पड़ता था। उनके कष्टोके प्रति दिन-दिन बढ़ती उदासीनता और सभी सम्बन्धित अधिकारियोकी पशुताने ही उनको कमसे-कम जगहमे ज्यादासे-ज्यादा कैदियोको ठूँसते जानेके लिए प्रेरित किया। यहाँतक कि १८ फुट लम्बे, ९ फुट चौडे और साढे सात फुट ऊँचे लोहेके एक ही डिब्बेमे ऊँचे-पूरे १२७

आदमियोको ठूँस दिया गया और उसे सीलबन्द कर दिया गया। डिब्बा भी ऐसा जिसमें न कोई दरवाजा था और न खिडकी ही। १२७ आदमियोके लिए इस लम्बाई-चौडाईके डिब्बेमे १६२ वर्गफुटका क्षेत्रफल था। वे उसमें बैठतक नही सकते थे। सभी खडे-खडे एक-दूसरेसे सटे हुए गये। जाहिर है, इस तरहकी असहनीय स्थिति छ घण्टेसे ज्यादा समयतक नही रह सकी। क्या अमानवीय-ताकी यह पराकाष्ठा भी इस प्रकारकी सभी कार्रवाइयोको बन्द कर सकेगी? यदि सैनिक कार्रवाई बन्द कर दी जाये और मोपला लोगोकी निराशाके कारण दूर कर दिये जाये, और आपको तथा आपके मित्रोको उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रमें जानेकी अनुमति दे दी जाये तो हम आपको गारटी दे सकते है कि एक ही सप्ताहमें शान्ति स्थापित हो जायेगी।

इस पत्रके साथ ही, मुझे 'सर्वेंट ऑफ इडिया' की यह अप्रत्याशित एक कतरन भी एक दूसरे सज्जनने भेजी है

श्री गाधीको असहयोगियोकी शक्तिमे अपार विश्वास है। इसी विश्वासके आधारपर वह समझते है कि मलाबारमे बल-प्रयोग किये बिना फिर व्यवस्था कायम की जा सकती है। विचित्र बात है कि श्री गाधी वर्तमान वैमनस्यके लिए सिर्फ सरकारको ही जिम्मेदार ठहराते है। उनका खयाल है कि इस स्थितिके जारी रहनेका मतलब है——मोपला लोगोका अविचारपूर्ण विनाश। यह तो सोचा भी नहीं जा सकता कि यह वैमनस्य तभी खत्म होगा जब समूची मोपला जाति नष्ट हो जायेगी, पर जो लोग श्री गाधी-जैसी सहज श्रद्धाके साथ असहयोगियोकी इन अद्भुत शक्तियोमें विश्वास नही रखते, उनको इस समस्यामें कुछ ऐसी पेचीदगियाँ दिखाई पडती है जो श्री गाधीकी समझमें नहीं आती। और नरम दलीय नेताओके नाम अपनी अपीलके पीछे जो उनकी नीति है वह और भी विचित्र है। अहिसाका उनका सिद्धान्त उनको किसी भी मामलेमे सरकारसे सीधी बात करनेसे रोकता है, और इसीलिए वह मलाबारके मामलेमें नरमदलीय नेताओके जरिये सरकारसे बातचीत करना चाहते है। वह नरमदलीय नेताओसे अपील इसलिए कर रहे हैं कि वे नेता सरकारको अन्य बातोके साथ-साथ असह-योगियोको उपद्रव-ग्रस्त क्षेत्रोमे जानेकी अनुमति देनेके लिए भी राजी कर ले। हम पूछना चाहते हैं कि क्या इसे सहयोग नहीं कहा जायेगा? दूसरी चीज यह कि सरकारने आम तौरपर कोई प्रतिबन्ध तो लगाया नहीं है, इसलिए असहयोगी यदि चाहे तो सम्मिलित रूपसे आम लोगोकी तरह मलाबार जा सकते है, और अभीतक तो वे इस उपद्रव-ग्रस्त जिलेमें शान्ति स्थापित करनेमें समर्थ हो नहीं पाये है। लेकिन यदि केवल श्री गाधी ही शान्ति स्थापित कर सकते है, तो हमारा यही विनम्र सुझाव है कि सविनय-अवज्ञा आन्दोलन शुरू करनेका समय आनेपर उनको इस निषेधाज्ञाकी ही अवज्ञा करनी चाहिए। उस स्थितिमें वे

> **सरकारको झुकानेके साथ-साथ इन वर्तमान अत्याचारोको भी रोक सकेगे। इस बीच वह कमसे-कम मलाबारके असहयोगियोंको तो यह समझा सकते है कि गडबड़ीको रोकनेका सबसे अच्छा तरीका यही है कि सरकार अपनी फौज वापस बुला ले। हमारे सुननेमे जो शिकायत आई है वह यह है कि जरूरतसे ज्यादा बल-प्रयोग करना तो दूर, सरकार पर्याप्त बल-प्रयोग भी नहीं कर रही है और इस तरह असहयोगियोको सबक सिखानेके उद्देश्यसे ही जानबूझकर जनताके कष्ट मिटानेमें विलम्ब कर रही है।**

मैने कभी सोचातक नही था कि 'सर्वेट ऑफ इडिया' कभी मेरे दृष्टिकोणको इतने गलत रूपमे समझेगा। नरमदलीय नेताओसे अपील करनेके पीछे कोई नीतिचातुरी नही थी। सहयोगका तो बिलकुल कोई प्रश्न उठता ही नही। और मलाबारमे शान्ति स्थापित करनेके लिए लोगोके वहाँ जानेकी अनुमति लेनेके लिए सरकारसे सीधे बात करनेमे भी मुझे कोई सकोच नही, हजार बार उसकी जरूरत पडे तो मै उसके लिए भी तैयार हूँ। मैने अपनी अपीलमे यही कहा है कि नरमदलीय नेता हस्तक्षेप करे और सरकारको अनुमति देनेके लिए बाध्य करे। मै उसमे यह मानकर चला था कि नरमदलीय नेताओको इस बातकी जानकारी अवश्य होगी कि मेरे कालीकट जानेकी बात मालूम होते ही मुझे वहाँसे वापस कर देनेकी धमकी दी गई थी और [कांग्रेसके] सचिवकी हैसियतसे मलाबारमे सहायता-कार्यके लिए जानेकी अनुमति मॉगनेपर श्री च० राजगोपालाचारीको मना कर दिया गया था, और श्री याकूब हसनको उपद्रव शुरू होते ही मोपलाओको शान्त करनेके लिए मलाबार जानेकी अनुमति नही दी गई थी। मै यह माननेके लिए बिलकुल तैयार हूँ कि कई मामलोमे असहयोगियोका बिलकुल कोई वश नही चलता। अहिंसामे उनका विश्वास ही इसका कारण है। असहयोगी शान्ति स्थापित करनेवाले कार्यके लिए आवश्यक होनेपर अनुमति मॉगनेमे कोई सकोच नही करता। वह अपने विश्वासके कारण किसी भी ऐसी परिस्थितिमे स्वेच्छासे हाथ नही डालता जिससे उसका अलग रहना सम्भव हो, और यदि सरकारकी सहायताके बिना काम चल सकता हो तो वह उसे मॉगने नही जाता।

इस अनुच्छेदके लेखकने सविनय-अवज्ञाका सुझाव बडी निर्दयतासे दिया है। सविनय-अवज्ञा अपनी बहादुरी दिखानेका तो साधन नही है। यदि सविनय-अवज्ञासे यह गडबडी ठीक की जा सकती तो वह बहुत पहले शुरू कर दिया जाता। और अहिंसापूर्ण आचरणकी बात सुनिश्चित हो जानेपर इस सीधेसे मसलेको लेकर भी सार्वजनिक रूपसे सविनय-अवज्ञा आन्दोलन शुरू किया जायेगा।

मै इस गडबडीके लिए सरकारको ही पूरी तौरपर जिम्मेदार मानता हूँ — यह "विचित्र" बात क्यो है? सरकार यदि चाहती तो खिलाफतके सवालका मसला तय करके इस गडबडीको रोक सकती थी, वह असहयोगियोको मोपलाओके बीच जाकर अहिंसाका सन्देश सुनानेकी अनुमति देकर इस गडबडीको टाल सकती थी। यदि कलक्टरने मोपलाओकी धार्मिक भावनाका खयाल किया होता, तो यह उपद्रव खडा ही न होता।

म सरकारको इस बातके लिए सचमुच दोषी ठहराता हूँ कि शरारत शुरू हो जानेके बाद मोपलाओंके अत्याचारोंसे हिन्दुओंकी रक्षा करनेके बदले वह मोपलाओंको दण्ड देनेमें ही लगी रही। यदि ये अत्याचार हिन्दू परिवारोंके बदले अंग्रेज परिवारोंपर हो रहे होते, तो भी क्या सरकार इतनी ही ढिलाईके साथ काम करती? यदि ये तथाकथित विद्रोही लोग मोपला न होकर अंग्रेज होते, तो भी क्या सरकार उनके साथ इतनी ही अमानवीयता बरतती? मुझे खेदपूर्वक यही कहना पड़ता है कि सरकारने हिन्दुओंकी रक्षा करने और मोपलाओंके साथ मानवीयताका बरताव करनेके अपने दोनों ही कर्त्तव्योंके प्रति अपराधपूर्ण उपेक्षा दिखाई है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८–१२–१९२१

२३२. भारतीय अर्थशास्त्र

एक मित्रने भारतीय वस्त्र-व्यवसायपर एक विवरण पुस्तिका (बुलेटिन) मुझे दी जिसे भारत सरकारके आदेशपर श्री एस० सी० काओम्रो, सी० बी० ई०ने तैयार किया था। इसमें पूर्व-कथनके रूपमें निम्नलिखित टिप्पणी दी हुई है

> "सरकार चाहती है कि इस विवरणिकामें प्रस्तुत विवरण या विचार स्वयं लेखकके ही माने जायें।"

यदि ऐसा है तो सरकार इस प्रकारके प्रकाशनोंपर धन व्यर्थ खर्च करके कर-दाताओंपर और अधिक बोझ क्यों डालती है? यह जो मेरे सामने पुस्तिका है वह इस मालाकी १६वीं पुस्तिका है। क्या सरकार प्रश्नके दोनों पक्ष पेश करती है?

प्रस्तुत विवरणिकाका मंशा स्वदेशी-आन्दोलनका उत्तर देना है। इसमें विभिन्न तालिकाओं द्वारा देशमें आयात किये गये तथा निर्मित वस्त्रोंपर जिनमें हाथका बुना कपड़ा भी शामिल है, प्रकाश डाला गया है। किन्तु इससे पाठकको आन्दोलनके अध्ययनमें कोई सहायता नहीं मिलती। अध्यवसायी लेखकने वर्तमान आन्दोलन अथवा उसके क्षेत्रका अध्ययन करनेका कष्ट नहीं उठाया। भारत सरकार इस देशमें चलनेवाले इस रचनात्मक तथा सहकारी आन्दोलनको इतनी तिरस्कारपूर्ण दृष्टिसे देखती है और जनताके धनको उसके एक सद्भावनापूर्ण अध्ययन और विवेचनके बदले व्यर्थके खण्डन-मण्डनके प्रयासोंपर खर्च करती है। जिस व्यवस्थाके अन्तर्गत यह सब किया जाता है उसकी भर्त्सना इससे बढ़कर और क्या हो सकती है?

लेखकका तर्क है कि

१ यदि आन्दोलन सफल होता है, तो इससे खादीको संरक्षण नहीं मिलेगा, उससे केवल विदेशी वस्त्रोंका निषेध ही होगा।

२ इससे केवल भारतके पूँजीपतियोंको ही लाभ होगा तथा उपभोक्ताओंको हानि होगी।

३ आयात किये जानेवाले वस्त्रोके क्षेत्रमे कोई प्रतियोगिता नही है, क्योकि वे भारतमे तैयार नही होते।

४ ऐसे आयातित वस्त्रोके वहिष्कारका परिणाम यही होगा कि मूल्य वढ जायेगे, पर साथमे मुनाफा उतना नही वढेगा।

५ और चूँकि वहिष्कार, माँग तथा सम्भरण और उपभोक्ताओके प्रतिकूल पडता है, इसलिए वह सफल नही होगा।

६ मैंने हाथकी कताईके उद्योगके जिस विनाशकी निन्दा की है वह समयकी वचतके उपकरणोके आविष्कार-जैसे स्वाभाविक कारणोसे हुआ है, और इसलिए यह अनिवार्य ही था।

७ कपासके उत्पादनको जो किसी समय वडी ही उन्नत अवस्थामे था, स्वय ही आलस्यवश नष्ट कर देनेसे भारतीय कृपक ही इस विनाशके लिए उत्तरदायी हैं।

८ अतएव मै कृपकोकी सबसे अच्छी सेवा यही कर सकता हूँ कि उनसे कपासकी किस्मने सुधार करनेके लिए कहूँ।

९ अन्तमे, लेखकका कथन है कि

> **घर-घरमें व्यर्थके चरखे चलवानेके स्थानपर यदि वे (अर्थात् गाधी) कपासकी, विशेषकर लम्बे रेशेवाली कपासकी, सघन खेतीके प्रोत्साहनके लिए प्रचार करे तो उनका प्रभाव न केवल आज अपितु आगामी कई पीढियाँ भी महसूस करेगी।**

इसी प्रकार पाठक देखेंगे कि जिसे मैंने भारतकी आर्थिक मुक्तिके लिए सर्वोपरि आवश्यकता माना है, लेखक उसे परले सिरेकी मूर्खता समझता है। इसलिए हम दोनोके विचार एक-दूसरेसे सर्वथा भिन्न हैं। मैंने जिसे उद्धृत किया है, भारत-सरकारके उस पूर्व-कथनके वावजूद लेखक सरकारी दृष्टिकोणको ही पेश करता है। मैंने जनताको और विशेषकर सरकारके साथ सहयोगमे विश्वास करनेवालोको भी हर सूरतमे इस जन-आन्दोलनका साथ देनेके लिए आमन्त्रित किया है। उन्हे इसके राजनीतिक परिणामोपर ध्यान नही देना चाहिए, क्योकि इसमे उनका विश्वास नही है, और यदि उनकी आशाओके विपरीत चरखेकी प्रगतिसे जनताकी राजनीतिक शक्ति वढती है तो निश्चय ही उन्हे दुखी होनेकी जरूरत नही। खादीके विरुद्ध युद्ध छेडनेके स्थानपर, वे उसके उपयोगको लोकप्रिय वना सकते हैं। और अपने इस विलकुल ही निर्मूल सन्देहका निवारण कर सकते हैं कि इसका मशा भारतीय कृपकोको हानि पहुँचाकर विदेशी कारखानेदारोको लाभ पहुँचाना है। मेरा निमन्त्रण सदैव सभीके लिए प्रस्तुत है। मेरी भविष्यवाणी है कि राष्ट्रीय कार्यक्रमकी अन्य वातोमे चाहे जो फेर-वदल हो जाये, पर स्वदेशी अपने वर्तमान रूपमे सदा इसी तरह वनी रहेगी और यदि भारतसे दरिद्रताको निर्वासित करना है तो इसे वनी ही रहना चाहिए।

यद्यपि मैं अर्थशास्त्रका पण्डित नही, एक सामान्य व्यक्ति ही हूँ फिर भी मैं कह सकता हूँ कि अर्थशास्त्रकी पुस्तको द्वारा निर्धारित ये तथाकथित नियम भी मीडो तथा पारसियोके नियमोके समान अपरिवर्तनशील नही हैं और न सार्वभौमिक ही

है। इग्लैंडका आर्थिक गठन जर्मनीसे भिन्न है। जर्मनीने अपने यहांके व्यवसायियोको चुकन्दरसे चीनी बनानेका उद्योग खूब बढानेके लिए सहायता देकर अपने-आपको समृद्ध बनाया है। इग्लैंडने विदेशी बाजारोका शोषण करके समृद्धि प्राप्त की है। एक छोटेसे घने बसे क्षेत्रके लिए जो सम्भव था वही एक १९०० मील लम्बे तथा १५०० मील चौडे क्षेत्रके लिए सम्भव नही। हर देशका अर्थशास्त्र उसकी जलवायु, भूतत्त्वीय दशा तथा जनताके मानसिक गठन द्वारा निर्धारित होता है। भारतीय परिस्थितियां इग्लैंडसे सभी बातोमे भिन्न है। इग्लैंडके लिए जो लाभकर है, वही भारतके लिए अनेक अवस्थाओमे विष है। गोमासका शोरबा इग्लैंडकी जलवायुमे लाभकारी हो सकता है, किन्तु धर्म-प्रवण भारतकी उष्ण जलवायुके लिए तो वह विष है। ब्रिटिश द्वीपके उत्तरमे व्हिस्की-जैसी तेज शराब एक आवश्यकता हो सकती है किन्तु भारतीयोको तो वह समाजमे उठने-बैठने अथवा काम-धन्धेके लिए सर्वथा अनुपयुक्त बना देती है। फरके कोट स्काटलैंडमे अपरिहार्य है, किन्तु भारतकी जलवायुमे तो वे एकदम असह्य ही होगे। उस देशके लिए जो औद्योगिक बन गया है, जिसकी जनसख्या नगरोमें निवास कर सकती है और करती है, जिसकी जनता दूसरे देशोको लूटना बुरा नही समझती और इसलिए अपने कृत्रिम व्यापारके सुरक्षार्थ विशाल नौ सेना रखे हुए है, ऐसे ही देशके लिए निर्बाध व्यापार आर्थिक दृष्टिसे लाभकारी हो सकता है (यद्यपि जैसा कि पाठकोको ज्ञात है इसकी नैतिकतापर मुझे आपत्ति है)। मुक्त व्यापार भारतके लिए तो अभिशाप ही सिद्ध हुआ है। उसने भारतकी पराधीनता कायम रखी है।

अब श्री काओत्रोकी स्थापनाओके विषयमे

१ आन्दोलनका मशा ऐच्छिक रूपमे विदेशी व्यापारका निषेध करना ही है।

२ किन्तु आन्दोलनकी योजना इस प्रकार बनाई गई है कि इससे न तो पूंजीपतियोको ही अनुचित लाभ प्राप्त हो सकेगा और न उपभोक्ताओको ही हानि उठानी पडेगी। सक्रमणकी एक बहुत छोटी-सी अवधिमें ही देशमे तैयार होनेवाली वस्तुओके मूल्योमे तदनुरूप वृद्धि हो सकती है। किन्तु यह वृद्धि अल्पकालिक ही होगी क्योकि अधिकाश उपभोक्ता अपनी आवश्यकताका वस्त्र स्वय तैयार करने लगेगे। जिस प्रकारसे घरोमें तैयार होनेवाला भोजन महँगा नही होता और उसका स्थान होटलका भोजन नही ले सकता, उसी प्रकारसे घरोमे तैयार किया जानेवाला यह सूत तथा वस्त्र मँहगा नही पड सकता। २५ करोडसे भी अधिक लोग अपने हाथसे सूत कातनेका कार्य कर रहे होगे और इस प्रकार काते गये इस सूतसे पास-पडोसमे ही वस्त्र बुनवा लिया जायेगा। यह जनसख्या कृषिपर निर्भर रहती है तथा वर्षमे कमसे-कम चार मासतक उसके पास काम नही रहता।

यदि वे इस खाली अवधिमे सूत काते तथा उससे वस्त्र बुनवाकर पहने तो मिलका वस्त्र उनकी इस खादीकी प्रतियोगितामें टिक ही नही सकता। इस प्रकार निर्मित वस्त्र उनके लिए सबसे सस्ता पडेगा। यदि शेष जनसख्या इस कार्यक्रममे भाग नही लेती, तो भी इन २५ करोड लोगो द्वारा किये गये अतिरिक्त उत्पादनमे से ही उनकी आवश्यकताओकी पूर्ति सरलतासे की जा सकेगी।

३ यह सही है कि भारतीय मिलोके उत्पादनसे प्रतियोगिता करनेवाले आयातकी तुलनामे स्पर्द्धारहित आयातकी मात्रा कही अधिक है। मैंने जो योजना की है उसमे यह प्रश्न ही नही उठता, क्योकि उसमे अन्य देशोके विरुद्ध व्यापारिक युद्ध छेडनेका इतना विचार नही है जितना कि राष्ट्रके फालतू समयका उपयोग करके और इस प्रकार इस स्वाभाविक प्रक्रिया द्वारा अपनी बढती हुई दरिद्रतासे मुक्ति पानेमे सहयोग लेना है।

४ मै यह पहले ही सिद्ध कर चुका हूँ कि इस बहिष्कारके फलस्वरूप अन्तमे वस्त्रोके मूल्यमे वृद्धि नही होगी।

५ प्रस्तावित बहिष्कार माँग और सम्भरणके नियमके विरुद्ध नही है क्योकि यह सम्भरणके लिए पर्याप्त उत्पादन करके उस नियमको लागू करनेकी आवश्यकता ही नही रहने देता। आन्दोलन तो उन व्यक्तियोकी, जिन्होने बडे महीन किस्मके वस्त्रोको अपना लिया है तथा जो विभिन्न रगो तथा डिजाइनोके तडक-भडकदार वस्त्रोकी चकाचौधमे फँस गये है, रुचिमे परिवर्तन लानेकी अपेक्षा रखता है।

६. मैंने इन्ही पृष्ठोमे दर्शाया है कि ईस्ट इडिया कम्पनीके एजेटो द्वारा किस प्रकार अत्यन्त ही अमानुषिक ढगसे हाथसे सूत कातनेकी कलाको विनष्ट करनेकी रूपरेखा बनाई तथा क्रियान्वित की गई थी। यदि इसके विनाशके लिए एक व्यवस्थित ढगसे यह कृत्रिम और अमानुषिक तरीका न अपनाया जाता तो इस राष्ट्रीय कला और उद्योगको नष्ट नही किया जा सकता था, फिर चाहे जितने और जिस भी प्रकारके नये-नये उपकरण प्रयुक्त होने लगते। वे इस उद्योगको पदच्युत नही कर सकते थे।

७ मै कपासके उत्पादनकी अवनतिके लिए भारतीय कृषकको उत्तरदायी ठहरानेमे सर्वथा असमर्थ हूँ। जब हाथकी कताईको ही विनष्ट कर दिया गया तो कपासके उत्पादनकी कोई प्रेरणा ही नही रह गई। सरकारने कभी भी कृषकोकी चिन्ता नही की।

८ मुझे यह सोचकर गर्वका अनुभव होता है कि मेरे कार्योने कृषकोका ध्यान कपासके सुधारकी ओर खीचा है। राष्ट्रकी कला-प्रियताका यह आग्रह रहेगा ही कि कपाससे महीन किस्मके बढिया वस्त्र तैयार किये जाये, जिसके लिए लम्बे रेशेकी कपास आवश्यक है। केवल कपासका उत्पादन ही भारतकी निर्धनताकी समस्याका समाधान नही कर सकता, इसलिए कि इसके बाद भी लाचारीके कारण फालतू समय पडा रहनेकी समस्या ज्योकी-त्यो बनी रहेगी।

९ इसीलिए मेरा दावा है कि केवल चरखा ही एक ऐसा साधन है जो आर्थिक विपन्नताकी समस्याको सबसे अधिक स्वाभाविक, सरल, कमखर्च तथा कारगर ढगसे हल करनेमे समर्थ हो सकता है। अतएव चरखा अनुपयोगी नही है जैसा कि लेखकने अज्ञानतावश सुझाया है बल्कि वह तो प्रत्येक घरके लिए एक उपयोगी तथा अत्यन्त ही अपरिहार्य वस्तु है। यह राष्ट्रकी समृद्धिका और इस तरह उसकी स्वतन्त्र-ताका प्रतीक है। यह व्यापारिक युद्धका नही अपितु व्यापारिक शान्तिका प्रतीक है। यह ससारके अन्य राष्ट्रोके प्रति दुर्भावनाका नही अपितु सद्भावना तथा आत्म-निर्भर-

ताका सन्देश देता है। इसे ससारकी शान्तिको खतरा पैदा करनेवाली तथा उसके साधनोका शोषण करनेवाली नौ-सेनाके सरक्षणकी आवश्यकता नही पडेगी, अपितु इसे करोडो लोगोके सच्चे सकल्पकी आवश्यकता है कि वे जिस प्रकार अपने घरोमे अपना भोजन स्वय तैयार करते है उसी प्रकारसे अपना सूत कातेगे। हो सकता है कि भावी पीढियाँ मुझे अनेक भूल-चूकोका दोषी ठहराये, पर मुझे पूर्ण विश्वास है कि वे चरखेके पुनरुद्धारका सुझाव देनेके लिए मुझे आशीष देगी। इस बाजीपर मै अपना सब-कुछ लगा सकता हूँ। इसलिए कि चरखा अपनी गतिके साथ शान्ति, सद्भावना और प्रेमके तार कातता चलता है। और साथ ही जिस प्रकार चरखेके लोपका फल भारतकी गुलामी हुआ है, उसी प्रकार इसके स्वैच्छिक पुनरुद्धारका फल होगा भारतका स्वतन्त्र होना।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, ८–१२–१९२१

२३३. पत्र-लेखकोसे

आर० बी० वाहुलेकर १ कृपया गताकमें पत्र-लेखकोको दिये गये उत्तरोको पढिए। दया और घृणा उस व्यक्तिके लिए समान ही है जिसने पूर्णता प्राप्त कर ली हो। उसके समक्ष हत्याका कोई कारण नही रह जायेगा। मेरे जैसे अपूर्ण व्यक्तिके लिए प्रेम और घृणा दो भिन्न-भिन्न तथा परस्पर-विरोधी अनुभूतियाँ है, और अपूर्ण व्यक्तियोके सम्बन्धमे 'गीता'के उपदेशको लागू करनेपर मुझे यह विश्वास करना बडा कठिन जान पडता हे कि हम क्रोध किये बिना भी हत्या कर सकते है। मेरी विनम्र सम्मतिमें अपूर्ण व्यक्तियोपर इसका प्रयोग करना वेदान्तके साथ व्यभिचार करना है। ऐसा आचरण तो पूर्ण व्यक्तियोके लिए ही सम्भव है।

२ मैने त्रावणकोरके सुसस्कृत "अछूतो"को परामर्श दिया हे कि वे सामूहिक रूपसे नही, मन्दिरोमे केवल अपने ही लिए प्रवेशाधिकारकी माँग कर सकते है, बशर्ते कि वे सयमसे काम ले तथा न्यायालयोकी सहायता लिये बिना प्रबन्धकर्त्ताओके अपमानजनक व्यवहारको सहन कर सके। जबतक अस्पृश्यताकी यह बुराई देशमे मौजूद है, तबतक "अछूतो"को मेरी यही सलाह है कि वे मन्दिरोमे अपने प्रवेशाधिकारकी आजमाइश न करे। मैने किसी भी दशामें धार्मिक स्थलोमे प्रवेशका परामर्श नही दिया है। सिद्धान्तत मेरा यह मत है कि हिन्दू मन्दिरोके सरक्षकोको अछूतोके लिए भी उन भागोके कपाट खोल देने चाहिए जो अन्य वर्गोके लोगोके लिए खुले है।

एस० गोविन्द स्वामी अय्यर आपकी आस्था असहयोगमे है, तो विद्यार्थियोकी सैनिक टुकडीमें आप सम्मिलित नही हो सकते।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, ८–१२–१९२१

२३४. संयुक्त प्रान्तमें स्वदेशी आन्दोलन

संयुक्त प्रान्तमें स्वदेशी आन्दोलनकी प्रगतिसे, जिसके सम्बन्धमें संयुक्त प्रान्तकी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने एक रिपोर्ट[1] तैयार की है, भारतके अन्य प्रान्त सगठन-कार्यकी कई दिशाओमें मिली सफलताओके बारेमें और सामने आनेवाली कठिनाइयोके बारेमें भी कई बाते सीख सकते है। इस कार्यपर निम्नलिखित शीर्षकोके अन्तर्गत विचार किया गया था: (१) चरखोका वितरण; (२) एक खादी-भण्डारकी व्यवस्था करना; (३) जुलाहोको हाथका कता सूत देना और उन्हे केवल इसी तरहके सूतसे कपडा बुननेके लिए प्रेरित करना; और (४) बहिष्कार आन्दोलनका प्रचार-प्रसार करना।

सयुक्त प्रान्तकी प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीको स्वदेशीके कार्यकी उसकी प्रगतिपर बधाई दी जानी चाहिए। परन्तु, मुझे आशा है कि जबतक वहाँ सारी खादी हाथके कते सूतसे नही बनने लगेगी, तबतक वह चैनसे नही बैठेगी। भारतकी दरिद्रताको दूर करनेका गुर हाथकी कताईका विकास ही है। हाथके कते सूतकी किस्मको सुधारने और सुस्थिर बनानेके लिए विशेषज्ञोकी आवश्यकता है।

[अंग्रेजीसे]

यग इडिया, ८–१२–१९२१

२३५. घृणा नहीं प्रेम

साबरमती
८ दिसम्बर, १९२१

इलाहाबादसे तार प्राप्त हुआ है कि पण्डित मोतीलाल नेहरू, पण्डित जवाहरलाल नेहरू, पण्डित श्यामलाल नेहरू तथा 'इडिपेडेट'के सम्पादक जॉर्ज जोजेफ महोदय गिरफ्तार कर लिये गये है। तार गत रात्रि ११ बजे प्राप्त हुआ था। इससे नि सन्देह मुझे बडी ही प्रसन्नता हुई। मैने इसके लिए ईश्वरको धन्यवाद दिया।

मुझे पण्डितजीकी गिरफ्तारीकी आशा नही थी। अपनी चर्चाओमे मै पण्डितजीसे कहा करता था कि उन्हे यदि सरकार गिरफ्तार करेगी भी तो सबसे बादमे। सर हरकोर्ट बटलर उनपर हाथ डालनेका साहस न करेगे। यदि उन्हे गिरफ्तार किया गया तो उनके मित्र महमूदाबादके राजा साहब अपने पदपर रहना स्वीकार न करेगे। सर हरकोर्ट बटलरने जिस निश्चित भावसे यह कदम उठाया है, उसपर मुझे हैरानी

१. सक्षिप्त रिपोर्टका आरम्भिक अनुच्छेद ही यहाँ दिया गया है।

होती है। पण्डितजी अत्यन्त ही विषम परिस्थितियोमे भी कार्य करते रहे है। उन्हे अपने पुराने शत्रु दमेसे भी जूझते रहना पडा है। मै जानता हूँ कि उन्होने कभी भी अपने धनीमानी मुवक्किलोके लिए इतना परिश्रम नही किया, और न उन्होने कभी आपद्ग्रस्त पजाबके लिए ही इतनी लगनसे काम किया था जितना कि वे इस निर्धन भारतके लिए करते रहे हैं। मैने उनसे आराम करनेका अनुरोध किया था, किन्तु उन्होने इसे अस्वीकार कर दिया। मुझे इस विचारसे प्रसन्नता ही होती है कि अब वे शरीरको दिन-दिन जर्जर बनानेवाले कठोर परिश्रमसे छुट्टी पा जायेगे। पर मुझे और भी अधिक प्रसन्नता यह सोचकर हुई है कि बम्बईके हमारे अपराधके कारण मै समझ रहा था कि जो चीज इस वर्षके खतम होनेसे पहले नही हो पायेगी, वही अब देशके सर्वोत्तम और बडेसे-बडे नेताओके निरपराध कष्ट-सहनके कारण अभी इसी समय पूरी होने जा रही है। सर्वथा निरपराध व्यक्तियोकी ये गिरफ्तारियाँ ही सच्चा स्वराज्य है। अब अली-बन्धु तथा उनके साथियोका जेलमे रहना कोई शर्मकी बात नही। भारत उनके बलिदानके प्रति सदैव सचेत रहा है।

किन्तु मेरी प्रसन्नता, जिसमे मुझे आशा है कि और भी हजारो लोग साथ देंगे, तभी कायम रह सकेगी जब हमारे नेताओको चुन-चुनकर जेल भेज दिये जाने-पर भी जनता पूर्णत शान्तिपूर्ण बनी रहे। "गिरफ्तारियोके बावजूद यदि हम पूरी तरह अहिसक बने रहे तो विजय बिलकुल निश्चित है। पर यदि हम सभी लोगोको नियन्त्रणमे रखकर भी शान्ति बनाये रखनेमे असफल हुए तो पराजय निश्चित है।" हम किसीकी जान लिये बिना जान देनेके लिए तैयार है। क्रोध अथवा दु ख अनुभव किये बिना जेल जानेका हमने निश्चय किया है। हमने स्वय ही जो बन्दिश अपने ऊपर लगाई है, उसे हमे तोडना नही चाहिए।

बल्कि इसके विपरीत हमारी अहिसा तो हमे अपने शत्रुओसे भी प्रेम करना सिखाती है। हम अहिसात्मक असहयोग द्वारा अग्रेज प्रशासको तथा उनके समर्थकोके क्रोधपर विजय प्राप्त करना चाहते है। हमे उनसे प्रेम करना चाहिए तथा ईश्वरसे यह प्रार्थना कि वह उनको इतनी सद्बुद्धि दे कि वे भी अपनी उन भूलोको समझ सके जिनको हम भूले मानते है। यह प्रार्थना सबलकी होनी चाहिए, निर्बलकी नही। हमे सशक्त होकर अपने ईश्वरके प्रति विनम्र होना चाहिए।

अपनी इस परीक्षा तथा विजयकी घडीमे मै अपनी आस्था फिर व्यक्त कर देना चाहता हूँ कि मै अपने शत्रुओको भी प्रेम करनेमे विश्वास करता हूँ। मेरा विश्वास है कि केवल अहिसा ही भारतके हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई और यहूदियोके लिए एकमात्र उपाय है। मेरा विश्वास है कि कष्ट-सहनमे कठोरतम हृदयोको भी पिघला देनेकी शक्ति है। युद्धका प्रहार प्रथम तीन, अर्थात् हिन्दू, मुसलमान और सिखोको ही झेलना चाहिए। अन्तिम तीन — पारसी, ईसाई और यहूदी — तो प्रथम तीनके सम्मिलित बलसे भयभीत है। हमे अपने सत्यनिष्ठ आचरणसे स्पष्ट कर देना चाहिए कि वे हमारे ही अपने बन्धु है। हमे अपने व्यवहारसे प्रत्येक अग्रेजको यह दिखा देना चाहिए कि वह भारतके किसी भी कोनेमे उतना ही निरापद है जितना कि मशीनगनके पीछे वह अपने-आपको अनुभव करता है।

इस्लाम, हिन्दू, सिख, जरतुश्त, तथा यहूदी — प्रत्येक धर्मकी वास्तवमे यह परीक्षा है। हम ईश्वरपर तथा उसकी सत्य-प्रियतापर विश्वास रखते है या नही रखते। भलेसे-भले मुसलमानोके सम्पर्कमे आकर मैने यही सीखा है कि इस्लाम तलवारके बलपर नही अपितु उसके फकीरो और सन्तोके भक्तिपूर्ण प्रेमके बलपर फैला है। इस्लाममें तलवारके प्रयोगकी आज्ञा है, किन्तु इसकी शर्ते इतनी कठोर है कि उनका पालन प्रत्येकके वशकी बात नही। ऐसा दोष-रहित सेनापति है कहाँ जो जिहादका आदेश दे सके? कहाँ है वह कष्ट-सहन, प्रेम और पवित्रता, जो तलवारके प्रयोगकी एक अनिवार्य शर्त है? हिन्दू भी अपने धर्मके इसी प्रकारके प्रतिबन्धोसे कमसे-कम इतने तो बँधे ही है जितने कि भारतीय मुसलमान। सिखोका अपना ही हालका गौरवमय इतिहास उनको बल-प्रयोगके विरुद्ध आगाह करता है। हम इतने अपूर्ण, इतने दोष-पूर्ण तथा इतने स्वार्थी है कि, शौकतअलीके कथनानुसार, ईश्वरके काममे भी सशस्त्र युद्ध करनेको तैयार रहते हैं। क्या सब प्रकारसे दोषरहित भारतको कभी तलवार उठानेकी आवश्यकता पडेगी? गत वर्ष कलकत्तामे हमने दोषरहित बननेकी, आत्म-शुद्धीकरणकी इसी प्रक्रियाका सूत्रपात किया था।

तब हम क्या करे? निश्चित रूपसे हम अहिसावादी बने रहे तथा अपने अन्दर इतनी सामर्थ्य रखे कि सरकार जितने भी व्यक्तियोको गिरफ्तार करना चाहे उतने ही व्यक्तियोको हम स्वेच्छापूर्वक प्रस्तुत करते जाये। हमारा कार्य घडीके काँटेके सदृश्य नियमिततासे चलता रहे। प्रत्येक प्रान्त अपने यहाँके उत्तराधिकारी नेताओका चुनाव स्वय करे। लालाजीने सभी आवश्यक प्रबन्ध करके एक शानदार उदाहरण प्रस्तुत किया है। प्रत्येक प्रान्तमे काग्रेसके अध्यक्ष तथा मन्त्रीको आपत्कालीन अधिकार दिये जाने चाहिए। कार्यकारिणी-समिति यथासम्भव छोटीसे-छोटी हो। प्रत्येक काग्रेसीको स्वयसेवक बनना चाहिए।

हमे गिरफ्तारियोसे बचना नही चाहिए, पर अनावश्यक ढगसे उसका अवसर भी नही पैदा करना चाहिए।

जबतक हम अपनी आवश्यकतानुरूप पूर्णरूपेण हाथकी कती खादीका उत्पादन करनेमे पूरी तौरपर सगठित न हो जाये तथा विदेशी वस्त्रोका पूर्ण बहिष्कार न कर दे, हमे स्वदेशी-आन्दोलनमे पूरी शक्तिसे जुटे रहना चाहिए।

एक-एक करके हमारे सभी नेताओके गिरफ्तार हो जानेपर भी, हमे हर कीमतपर काग्रेसका अधिवेशन करना चाहिए, जबतक कि सरकार ही इसे बलात् भग न कर दे। और यदि हम हतोत्साहित हुए बिना और उत्तेजित होकर हिसाको अपनाये बिना अपना राष्ट्रीय कार्य जारी रखनेमे समर्थ रहे, तो हम निश्चय ही स्वराज्य प्राप्त कर लेगे। इसलिए कि ससारकी कोई भी शक्ति शान्तिपूर्ण, दृढप्रतिज्ञ तथा ईश्वर-भक्त लोगोको आगे बढनेसे नही रोक सकती।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८-१२-१९२१

२३६. अन्त्यजोंकी पुकार

दो अन्त्यज भाई लिखते हैं[1]

इसमे कुछ हदतक अज्ञान और अज्ञानसे उत्पन्न रोप है तथापि पत्रका उतना हिस्सा छोड दे तो उनकी बात विचारणीय है। अन्त्यजोके सम्बन्धमे प्रस्ताव पास करके, उनकी समस्याओकी चर्चा करके हमने उनमे आशाका सचार किया है। ऐसा करनेकी जरूरत भी थी। उनमे आशाका सचार अवश्य होना चाहिए था और अगर हम कहे कि वह हुआ भी है, तो इतना ही उत्तर अन्त्यज भाइयोके सन्तोपके लिए पर्याप्त होना चाहिए। दूसरा जवाब यह है कि वे सारा बोझ मेरे कन्धोपर डालते हैं। उनके कथनमे जो मार्मिक दश है, उसे मै समझ सकता हूँ। मुझपर यह आरोप लगाया जाता है कि मै स्वय थोडा बहुत करके सन्तोष मान लेता हूँ और दूसरे मुझे धोखा देते है और मै धोखेमे आ जाता हूँ।

अस्पृश्यता एक वृत्ति है, वस्तु नही। इसलिए लोगोके मनसे उसे निकालना, विद्यार्थियोको [सरकारी] स्कूलोसे निकालने-जैसी बात नही है। उसके सम्बन्धमे स्कूलो-जैसा आन्दोलन नही किया जा सकता। जिस प्रकार शान्ति [अर्थात् अहिसा] का सिद्धान्त स्वीकार करनेके लिए हृदय-परिवर्तनकी आवश्यकता है, उसी प्रकार इसमे भी हृदय-परिवर्तनकी आवश्यकता है। इसलिए अस्पृश्यता-निवारणका आन्दोलन भी शान्ति या अहिसाके प्रसारके आन्दोलनकी तरह ही चलाया जा सकता है। जिस तरह शान्तिका माप अपवादरूपसे होनेवाली अशान्तिसे निकाला जा सकता है उसी तरह अस्पृश्यताका भी निकाला जा सकता है। इसपर गणित-शास्त्रका नियम लागू नही किया जा सकता। आज इतने हिन्दुओने इतने अन्त्यजोका स्पर्श किया तो सब हिन्दुओको सब अन्त्यजोका स्पर्श करनेमे कितना समय लगेगा? इस तरह इसका हिसाब नही निकाला जा सकता। लेकिन समय आनेपर उसका पता चल जाता है। इस बातपर सबसे पहले सिद्धान्तरूपमे गुजरात विद्यापीठमे चर्चा हुई थी। इस चर्चाके परिणाम-स्वरूप विद्यापीठने अपने अस्तित्वको जोखिममे डालकर भी अन्त्यजोको स्कूलमे जगह देनेके सिद्धान्तको स्वीकार किया और उसी कारण त्याग-पत्र देनेवाले कुछेक सदस्योको विद्यापीठसे चले जाने दिया। आज दक्षिणामूर्ति-भवन जैसी महान् सस्थाका अस्तित्व खतरेमे पड गया है, उसका मूल कारण भी यही है। जो शिक्षक इस सस्थाके प्राण हैं वे वहाँ केवल इस सिद्धान्तको स्वीकार करवानेकी खातिर ही जूझ रहे हैं। इन दोनो परिणामोके यशका मैं भागी नही बन सकता। विद्यापीठके सदस्य अगर विरोध करते तो मुझे पराजय स्वीकार करनी पडती। लेकिन वे लोग स्वतन्त्र रूपसे सिद्धान्तको माननेवाले थे। दक्षिणामूर्ति भवनमे जो धर्मयुद्ध चल रहा है उसमे तो व्यक्तिके रूपमे भी मेरा कोई हाथ नही है। इस सिद्धान्तकी खातिर ही तिलक स्वराज्य कोपमे कुछ

१. यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है।

लोग चन्दा देते-देते रुक गये, लेकिन व्यवस्थापकोंने इसकी कोई परवाह नहीं की। गुजरात तथा अन्य स्थानोंपर हुई सैंकडों सभाओंमें अन्त्यजोंने बिना किसी रोक-टोकके भाग लिया है। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने अन्त्यजोंके लिए अलग-अलग स्थानोंपर लगभग ५०,००० रुपयेकी रकम मंजूर की है। प्रान्तोंने जो पैसा खर्च किया है, सो अलग है। इस तरह असहयोगी चारों ओर निष्पक्ष होकर काम कर रहे हैं। प्रत्येक प्रान्तमें उत्साही और चारित्र्यवान युवक शुद्ध अन्तःकरणसे अन्त्यजोंकी सेवामें सर्वार्पण कर रहे हैं। यह पहला अवसर है कि अन्त्यज भाइयोंके माँग न करनेपर भी उन्हें प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्रसे प्रतिनिधि चुना गया है।

इतना तो उपर्युक्त अन्त्यज भाइयों और उन-जैसे अन्य असन्तुष्ट भाइयोंके सन्तोषकी खातिर हुआ। लेकिन यह बताते समय कि अस्पृश्यता-निवारणका यह आन्दोलन आगे बढ रहा है हमें इस बातको भी स्वीकार करना होगा कि उनकी फरियादमें सचाई है। अनेक लोग अपने दोषोंको छिपानेकी खातिर स्पर्श करनेका ढोंग करते हैं, लेकिन नितान्त निर्मल हृदयसे नहीं। इस तरह किये गये स्पर्शका फल कडवा होगा। अस्पृश्यता अधर्म है, इसलिए यह दोष जब दिलसे, लोगोंके हृदयसे निर्मूल होगा तभी इसका मधुर फल प्राप्त होगा। यह कोई राजनीतिकी चीज नहीं है कि जिसमें दूसरोंको धोखा देकर भी काम चलाया जा सकता है। यह अन्त्यजोंको सन्तोष देने अथवा घूस देनेकी प्रवृत्ति नहीं है। यह तो केवल आत्माको सन्तुष्ट करनेकी बात है। और उसके सम्बन्धमें हमारी कल्पना भी यही है कि जबतक हिन्दू समाज इस पाप-को निकाल बाहर नहीं फेंकेगा तबतक यह पाप अदृश्य रूपसे हमारे आड़े आता रहेगा और हमें स्वराज्य प्राप्त नहीं करने देगा। कर्मकी गति गहन है। कर्मके विधानमें अप-वाद नहीं है। अपने अच्छे-बुरे कर्मोंका, पाप-पुण्य आदिका फल हमें प्रकट या अप्रकट रूपसे मिलता ही रहता है।

मैं यह स्पष्ट रूपसे मानता हूँ कि हम जबतक इस मैलको दिलसे निकाल बाहर नहीं फेंकेंगे, शान्तिके [अहिंसाके] मार्गको नहीं अपनायेंगे, हिन्दू-मुसलमान सच्चे मनसे एक नहीं हो जायेंगे तबतक हम स्वाधीन नहीं होंगे। इन तीनों वस्तुओंको स्थूल रूपसे नहीं मापा जा सकता। ये जबतक सिद्ध नहीं हो जातीं तबतक स्वराज्य नहीं मिल सकता और जब स्वराज्य मिलेगा तब ये तीनों सिद्धियाँ हमें मिल चुकी होंगी। जबतक छः करोड़ अन्त्यज हमारे द्वारपर पुकार करते रहेंगे और हम लोग उनकी पुकार नहीं सुनेंगे तबतक हमें स्वराज्य नहीं मिलेगा —— कभी नहीं मिलेगा।

लेकिन हिन्दू अपने पापोंका परिमार्जन कर भी लें तो इससे क्या अन्त्यजोंको विमान मिल जायेगा —— क्या उन्हें स्वर्ग प्राप्त हो जायेगा? यह पुरुषार्थ तो उन्हें स्वयं ही करना होगा। उन्हें शराब पीना, जूठा अन्न लेना छोड देना चाहिए। उन्हें माँसाहार छोड देना चाहिए, सेवाकी खातिर गन्दगीकी सफाईका ऐसा काम करते हुए भी, जिसमें गन्दे होनेका डर है, स्वच्छ रहना और ईश-भजन करना चाहिए। यह सब तो तभी हो सकता है जब अन्त्यज खुद इसे करें, उनके लिए दूसरे लोग यह नहीं कर सकते। उनकी भूखको दूर करनेके लिए चरखा और करघा मौजूद ही हैं। हजारों अन्त्यज इसे अपनाकर अपनी दशा सुधारनेमें सफल हुए हैं। स्वदेशीका आन्दोलन

ही ऐसा है कि वह समाजके सब अंगोंका पोषण करता है और मेरा तो विश्वास है कि ज्यों ज्यों समय बीतेगा, यह हिन्दुस्तानकी गरीबीको भी दूर करेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-१२-१९२१

२३७. तार : श्रीमती मोतीलाल नेहरूको[1]

अहमदाबाद
८ दिसम्बर, १९२१

श्रीमती नेहरू
इलाहाबाद

आपको और कमलाको बधाई। ईश्वर आपको साहस और आशा प्रदान करे।

गांधी

मूल अंग्रेजी तारसे

सौजन्य : म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद

२३८. पत्र : महादेव देसाईको

[साबरमती
८ दिसम्बर, १९२१][2]

चि० महादेव,

तुम्हारा तार और पत्र मिले। श्रीमती नेहरू शान्त होंगी। तुम निश्चिन्त भावसे अपना काम करते रहना।

देवदास आ रहा है, तुम्हें उसकी पूरी मदद मिलेगी। और मददकी जरूरत हो तो माँगना। 'इंडिपेंडेंट' को सुधारना। संवाददाताओंकी रिपोर्टोंपर खूब अंकुश रखना। चाहे कम मिले लेकिन अच्छी हो, ऐसा प्रबन्ध करना। सतीशबाबूकी[3] मदद मिले तो

१ ६ दिसम्बरको मोतीलाल नेहरू और जवाहरलाल नेहरूकी गिरफ्तारीपर। इसीके साथ गांधीजीने श्रीमती उमा नेहरूको भी एक सन्देश भेजा था, जिसका अनुवाद **आज**, १०-१२-१९२१ में प्रकाशित हुआ था।

२ महादेवभाईका तार ७ तारीखको रातमें देरसे मिला था और देवदास ८ तारीखकी सुबह दिल्लीके लिए रवाना हो गये थे।

३ सतीशचन्द्र मुकर्जी।

लेना। एन्ड्रयूजको मैंने तो नही लिखा है लेकिन तुम लिख सकते हो। मैंने नही लिखा क्योकि यह कुछ दबाव डालनेकी बात मानी जायेगी।

श्रीमती नेहरू अगर मुझे पत्र लिखे तो इससे मुझे खुशी होगी।

दूसरो द्वारा बताये गये व्रतोको लेनेमे निश्चय ही भय है। तुम्हे जो व्रत सुझाये गये है उनमे से जो तुम्हे लेने योग्य मालूम हो और लिया जा सकता हो उसे ले लो और उसके साथ भूतकी तरह लगे रहो। अभी लेनेकी शक्ति न हो तो मत लेना। न लेनेमे विघ्न नही है, विघ्न तो उसके न पालनेमे है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२८) की फोटो-नकलसे।

२३९. पत्र: महादेव देसाईको

शुक्रवार [९ दिसम्बर, १९२१][1]

चि० महादेव,

तुम्हारा तार मिला। 'इडिपेडेट' के प्रकाशनके लिए तुम्हे जमानत जमा करानी पडी, यह बात मुझे अच्छी नही लगी, लेकिन पण्डितजी जो कुछ कहे, उसे करना हमारा कर्त्तव्य है। तुम गिरफ्तार हो जाओ तो निश्चय ही मुझे खुशी होगी। लेकिन पण्डितजीसे कह दो कि अगर फिर कोई जमानत माँगी जाती है तो उसे जमा न कराकर हस्तलिखित पत्र निकालना अच्छा होगा। ऐसा करना सबसे आसान है। वे निश्चय ही तुम्हे गिरफ्तार कर लेगे, लेकिन इसकी कोई चिन्ता नही है। सरूप और रणजीत वहाँ जा रहे है, वे भी [पत्रके] मालिक बन सकते है। मै यहाँसे किसीको भेजनेकी कोशिश जरूर करूँगा।

प्यारेलाल बेशक आ सकता है।

बापूके आशीर्वाद

मूल अग्रेजी पत्र (एस० एन० १०६०२८) से।

१ महादेव देसाईने जमानत देकर ७ तारीखको 'इंडिपेंडेंट' का काम-काज अपने हाथमें लिया। शुक्रवारको उपर्युक्त तिथि ही पड़ती थी।

२४०. तार: श्रीमती वासंतीदेवी दासको[1]

[१० दिसम्बर, १९२१ को या उसके पश्चात्]

आपको और आपके पतिको बधाई। आशा है आप अहमदाबाद आ रही हैं।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १३-१२-१९२१

२४१. श्यामसुन्दर चक्रवर्तीको लिखे पत्रका अंश

[अहमदाबाद
१० दिसम्बर, १९२१ के पश्चात्][2]

इन गिरफ्तारियोंकी खबर सुनकर खुशी होती है। स्वराज्यकी शीघ्र स्थापनाके लिए दो चीजोंकी जरूरत है — सविनय अवज्ञा करनेवालोंका ताँता कभी न टूटे और वातावरण अहिंसात्मक रहे। मुझे आशा है कि इन दोनों मामलोंमें बंगाल सबसे आगे रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

सेवन मन्थ्स विद महात्मा गांधी

२४२. साल-भरका वादा

एक तरफ तो मुझसे यह अनुरोध किया जा रहा है कि यदि इस सालके अखीर तक स्वराज्य न मिला तो मैं हिमालय चल देनेकी अपनी धमकीपर अमल न करूँ और दूसरी तरफसे यह भी पूछा जा रहा है कि स्वराज्य न मिलनेपर आप लोगोंको क्या मुँह दिखायेंगे? बेचारी जनता कितनी निराश हो जायेगी? मुझे इतना बड़ा वादा करके पछताना पड़ेगा।

मेरी समझमें 'नवजीवन' के पाठकोंके दिलमें ऐसे विचार नहीं उठते होंगे। फिर भी मैं जानता हूँ कि कुछ लोग इस तरह सोचते हैं। मेरा वादा शर्तोंके साथ

१ देशबन्धु दासकी गिरफ्तारीपर, वे १० दिसम्बरको गिरफ्तार हुए थे।

२ देशबन्धु दास १० दिसम्बर, १९२१ को गिरफ्तार हुए थे और बंगाल कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष श्री चक्रवर्ती बने थे। अतः यह पत्र उस तिथिके बाद ही लिखा गया होगा।

है। मैंने जो शर्ते पेश की थी उनका पालन किया जा सकता है। मैंने कहा था "इन शर्तोका पालन करो और स्वराज्य ले लो।"

कहा जा सकता है, व्यवहार-कुशल मनुष्यको शर्तें पेश करते समय पालन करनेवाले लोगोकी शक्तिका अन्दाज लगाकर ही वादा करना चाहिए। यह वात सच है। मैं व्यवहार-कुशल होनेका दावा भी रखता हूँ। यदि मेरा यह दावा गलत सिद्ध हो तो मुझे सार्वजनिक जीवनसे अलग हो जाना चाहिए।

अतएव यदि वर्षके अन्तमे लोगोको यह पूछना पडे कि 'स्वराज्य कहाँ है?' तो कहना होगा कि मेरी व्यवहार कुशलता सिद्ध नही हुई और मुझे हिमालयकी राह ले लेनी चाहिए।

पर यदि उन्हे निश्चित रूपसे यह दिखाई दे कि स्वराज्यका रास्ता वही है जो मैंने लोगोको बताया है, और उन्हे यह मालूम हो कि उस रास्तेको तय करते हुए वे वहुत दूर, लगभग अन्ततक आ पहुँचे है, तो न उन्हे मुझे ताना मारनेकी जरूरत रहे और न मुझे हिमालय भाग जानेकी ही। वह तो स्वराज्य मिलनेके बराबर ही होगा। जिसे मोक्षका मार्ग मिल गया है वह यम-नियम आदिका पालन करता चला जाता है। जो प्रत्यक्ष देख रहा है कि तडातड बन्धन टूटते जा रहे है वह मोक्षको प्राप्त कर चुकनेवाले पुरुषके समान ही है। वह अपने मार्गसे इधर-उधर नही भटकता। वह दिनपर-दिन बलवान् होता जाता है। उसे मार्ग-दर्शककी आवश्यकता नही रहती। जिसे सन्देह है उसका कही ठिकाना नही। उसका नाश निश्चित है। वह रास्ता चलते हुए भी नही चलता, क्योकि वह यही नही जानता कि मैं हूँ कहाँ।

इसी प्रकार यदि दिसम्बरमे आनेवाले समस्त प्रतिनिधि बिना बहसमे पडे यह कबूल कर ले कि स्वराज्य-प्राप्तिका मार्ग यही है, हम स्वराज्यकी झाँकी तैयार कर रहे है, जितना काम इस वर्षमे हुआ है उतना पिछले किसी वर्षमे नहीं हुआ और हम तो इसी मार्गसे जाना चाहते है तो मै कहूँगा कि यह स्वराज्य मिल जानेके वरावर हो गया। जो कुछ अधूरा वच जायेगा इसका कारण हमारे परिश्रमकी कमी है। जहाँ जरा ज्यादा मेहनत की कि काम पूरा हुआ।

जो लोग यह मान बैठे है अथवा जिन्होने लोगोको ऐसा समझा रखा है कि स्वराज्य तो गाधी जिस तरह बन पडेगा दिसम्बरके पहले दिला देगा, तो वे दोनो अनजाने ही स्वय अपने तथा देशके दुश्मन है। वे स्वराज्यका अर्थ ही नही समझे है। स्वराज्यका अर्थ केवल स्वावलम्बन ही है। मेरे हाथो स्वराज्य पानेका मतलव तो केवल परावलम्बन ही हुआ। मै तो उसे पानेका रास्ता वतानेवाला हूँ। लेना तो लोगोके ही हाथमे है। मै वैद्य हूँ, दवा वताता हूँ। खानेकी विधि, उसका अनुपान, मात्रा, पथ्य इत्यादि वताता हूँ पर अन्तमे वह सव करना तो रोगीको ही पडेगा।

यदि एक वर्षके अन्तमे लोगोको यह प्रत्यक्ष अनुभव न हुआ हो कि स्वराज्य शान्तिके द्वारा, हिन्दू-मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई, यहूदीकी एकताके द्वारा, स्वदेशी और अस्पृश्यताके नाशके द्वारा ही मिल सकता है तो मेरी व्यवहार-कुशलता पूरी तरह न्यून सिद्ध हुई और मुझे हिमालय अवश्य ही भाग जाना चाहिए।

यह अवश्य ठीक है कि मैने आशा इससे अधिक की थी। मैने सोचा था कि हम इस वर्षमे न केवल स्वराज्यका मार्ग देख लेगे, वल्कि स्वराज्यकी प्रतिमा भी हमारे सामने आकर खडी हो जायेगी, हम शासन-कर्त्ताओके साथ सुलह कर लेगे, असहयोग समाप्त हो जायेगा तथा शुद्ध सहयोग शुरू हो जायेगा। पर अव मुझे डर है कि इन शेप दिनोमे हम शायद इस स्थितिका अनुभव न कर सके। वल्कि, इसके विपरीत हमारे असहयोगका वेग और भी तीव्र हो जायेगा और ऐसा मालूम होगा कि मानो अव सहयोग होनेकी सम्भावना ही नही रही। परन्तु यही अनुभव सहयोगको नजदीक लानेवाला होगा। प्रभातके पहलेका अन्धकार घोरतम होता है। प्रसूतिके पहलेकी वेदनाये असह्य होती है और इसलिए स्वय प्रसवके ही विपयमे मॉको सन्देह उत्पन्न होने लगता है। उसी प्रकार हमारा प्रसूतिकाल भी कठिनसे-कठिन होगा।

वम्वईने उसमे विघ्न डाल दिया। हमने स्वेच्छासे जो जोर लगाना चाहा था, हमने स्वय अपने ऊपर दु ख झेलनेकी जो प्रतिज्ञा की थी, वम्वईने उसका द्वार वन्द कर दिया। परन्तु सौभाग्यसे सरकारने हमारे लिए अधिक कर्तृत्व करने, अधिक दु ख भोगनेका दरवाजा खोल दिया है। उसने दमनका वेग वढा दिया है। यदि हम निर्भय होकर इस सिहद्वारमे प्रवेश कर जाये तो स्वराज्यकी प्रतिमाके हमारे सम्मुख आकर खडी होनेमे देर नही लगेगी।

पर अभी मै निश्चयपूर्वक यह क्यो नही कह रहा हूँ कि इस वर्षमे स्वराज्यकी प्रतिमा खडी हो ही जायेगी? इसलिए कि मुझे भविष्य ठीक-ठीक ज्ञात नही है। मै त्रिकालदर्शी नही हूँ। मुझे दिखाई नही देता, मै तो केवल श्रद्धालु हूँ। मै ईश्वरको सर्वशक्तिमान मानता हूँ। हमारे हृदयमे वह कव कोई वडी उथल-पुथल कर डालेगा, यह कौन कह सकता है? १७ नवम्वरको जिस समय मै आशाकी वडी-वडी वाते कर रहा था उसी समय निराशाजनक घटनाएँ घट रही थी, इसकी मुझे क्या खवर थी? और अव जव कि मुझे भी इतने दिनोमे प्रतिमा खडी हो जानेमे सन्देह है, यदि ईश्वर वह प्रतिमा तैयार कर रहा हो तो मै क्या जानूँ? जिस प्रकार मै वैद्य हूँ, उसी प्रकार मै रोगी भी हूँ। जो स्वराज्य मुझे लेना है उसे मै ले नही पाया। मुझे रास्ता मिल गया है ओर मै उसे हर्गिज नही छोडूँगा। मेरा स्वराज्य तो वहुत दूर है। पर इसी महीनेमे मै उसे पा जाऊँ तो मुझे आश्चर्य नही होगा। मै पाठकोको निस्सन्देह यह विश्वास दिलाता हूँ कि मैने अपने प्रयत्नमे कोई कोर-कसर नही रख छोडी है। मेरी तो यही धारणा है कि भारतके लिए स्वराज्य प्राप्त करनेके प्रयत्नमे ही मेरा मोक्ष है। यदि मुझे ऐसा मालूम होगा कि मोक्ष प्राप्त करनेके वजाय मै वन्धनमे जकडा जा रहा हूँ, चढनेके वजाय गिर रहा हूँ, तो फिर मै हिमालय चल देनेमे रोके नही रुकूँगा। अभीतक तो मुझे ऐसा नही मालूम होता कि मै अधिक वँधता जा रहा हूँ। जनवरीकी पहली तारीखको मेरे मनकी दशा कैसी होगी, यह मै निश्चय ही नही जानता। इससे पाठक समझ गये होगे कि स्वराज्य मेरी साधना हे, मेरे मोक्षका द्वार हे। मेरा आन्दोलन केवल स्वार्थमूलक है और ऐसा ही रहेगा।

एक दृष्टिसे, मै यह नही चाहता कि इस वर्षके भीतर स्वराज्यकी प्रतिमा खडी हो जाये। मै अपने वारेमे सभी प्रकारके भ्रमसे वचना चाहता हूँ। मै लोगोको यह

समझाना चाहता हूँ कि मै तो एक लघुजीव हूँ और अपनेको महात्मा समझने देनेमे मै लोगोकी तथा अपनी हानि ही देखता हूँ। भले ही मेरा अनुमान गलत माना जाये, भले ही मै बेवकूफ ठहरूँ, भले ही मै अव्यावहारिक आदमी माना जाऊँ, अभीष्ट तो यही है कि लोग यह माननेकी अपेक्षा कि मेरे बलके द्वारा कुछ मिला है, यह माने कि जो-कुछ मिला है वह उन्हीके बलके द्वारा, उन्हीकी तपश्चर्याके द्वारा, उन्हीकी आत्मशुद्धिके द्वारा मिला है। अपने सम्बन्धमे तो मै बस इतनी ही श्रद्धाका भूखा हूँ — 'जिस समय उसे जो सच्चा दिखाई दिया वह उसने निर्भय होकर लोगोके सामने उपस्थित किया।' इससे बडा कोई प्रमाणपत्र मुझे नही चाहिए। इससे अधिकके लायक मै हूँ भी नही।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ११-१२-१९२१

२४३. बारडोली

मौलाना आजाद सोबानी और अपनी बारडोली ताल्लुकेकी यात्राकी याद मुझे हमेशा बनी रहेगी। इस ताल्लुकेके लोगोकी सादगी, भलमनसाहत, सरलता और दृढतासे हम दोनो चकित रह गये। बारडोली ताल्लुकेमे बहुत सुन्दर काम हुआ है, इसमे कोई शक नही है। हम दोनोने यह बात महसूस की कि कुल मिलाकर यह ताल्लुका सविनय-अवज्ञाके लिए सबसे जल्दी तैयार हो सकता है।

वहाँ लगभग ६५ सरकारी स्कूल होगे, जिनमे से ५१ राष्ट्रीय स्कूलोमे परिवर्तित हो चुके है। और इसमे सन्देह नही कि जहाँ-जहाँ स्कूल राष्ट्रीय बनते जाते है वहाँ-वहाँ उत्साह बढता जाता है। स्कूलोको लोगोके अधिकारमे आये हुए अभी थोडे ही हफ्ते हुए है, इसलिए उनका कार्य धीमी रफ्तारसे चल रहा है। बालकोको चरखा चलानेका अभ्यास कराया जा रहा है। पुरुषोमे खादीका पहरावा खूब बढ गया है। सब लोग खादीका कुर्ता, धोती या जाँघिया और टोपी पहने दीख पडे। स्त्रियाँ भी सभाओमे खासी सख्यामे खादीकी साडियाँ पहन कर आई थी।

हिन्दू-मुसलमानोके बीचमे अच्छी एकता दिखाई देती है। जो ढेढ और भगी सभामे आते है उन्हे छूनेमे कोई दोष नही मानता और वे मिलकर सब लोगोके साथ बैठ सकते है। यह सब करनेमे बारडोलीके लोगोने शान्तिका अच्छा पालन किया है। सरकारी अधिकारियोके साथ भी स्नेह बनाये रखा है और सरकारसे सहयोग करने-वालोके साथ भी उनकी कोई दुश्मनी नही है।

इतनी अधिक प्रगतिके लिए हम वहाँके लोगोको बधाई दिये बिना नही रह सकते।

तथापि यह चित्र पूर्ण नही है। स्कूलोपर लोगोका इतना अधिक अधिकार होना चाहिए कि वे सरकारी स्कूलो अथवा सरकारी शिक्षाका नामतक भी न ले। स्कूलोकी व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि विद्यार्थी यहाँ-वहाँ घूमते न फिरे और

चरित्रवान् शिक्षकोंके मार्गदर्शनमे अपने चरित्रका निर्माण करे। हिन्दू बालक और वालिकाएँ संस्कृत सीखे और 'गीता' पढे। मुसलमान वालक अरबी सीखे और 'कुरान' पढे। सब वालक सुन्दर, मजबूत, पर्याप्त बटवाला और समान सूत काते। इसके सिवा, कुछ वालक धुनना और बुनना भी सीखे। स्त्रियोमे खादीका अधिक प्रसार हो और स्त्री-पुरुष सब खादी पहनने लगे। इतना ही नही, ताल्लुकेकी जरूरतकी खादी ताल्लुकेमे ही काती और बुनी जानी चाहिए तथा उसमे मिलके तानेका प्रयोग नही होना चाहिए। यह काम अभी बहुत पिछडा हुआ है। करघे कम है। चरखोकी संख्या करघोकी अपेक्षा अच्छी है, लेकिन यह बहुत ज्यादा होनी चाहिए और वे निरन्तर चलते रहने चाहिए। वारडोलीमे विदेशी अथवा मिलका बना कपडा मिलना असम्भव अथवा अत्यन्त कठिन होना चाहिए।

ढेढ और भंगी सभामे आजादीसे आ सके, इतना ही पर्याप्त नही है। अस्पृश्यता-निवारणका रहस्य समझना चाहिए। लोगोंके दिलोमे उनके प्रति प्रेमभाव उत्पन्न होना चाहिए। ऐसी परिस्थिति होनी चाहिए कि उनके बच्चे राष्ट्रीय स्कूलोमे आजादीसे आ सके। अगर वे न आये तो उनके माता-पिताको समझाकर उन्हे ले आना चाहिए। उनके मुहल्लोमे जाकर उनकी तकलीफोकी जाँच करनी चाहिए। उनसे विनम्रतापूर्वक अपनी बुरी आदतोको छोडनेके लिए कहना चाहिए। हिन्दू-मुसलमानोके बीच कोई झगडा न हो, यह बहुत अच्छी बात है, लेकिन दोनोके दिलोका मैल भी पूर्ण रूपमे निकल जाना चाहिए। पारसी, ईसाई और 'सहयोगियो' के साथ हमारा ऐसा विनय-भरा व्यवहार होना चाहिए कि उन्हे असहयोगियोसे जरा भी भय न लगे। शराबकी दुकानवाले समझानेपर अपनी दुकानोको स्वयं बन्द रखे तभी वे बन्द रखाई जाये। लोग उनका बहिष्कार न करे और न उनका हुक्का-पानी बन्द करे। उनसे तथा शराब पीनेवालोसे प्रेमसे जितना काम लिया जा सकता है, उतना ही ले। उनके साथ किसी तरहकी जबरदस्ती करनेकी गंध भी नही आनी चाहिए। उन्हे बिलकुल निर्भय होना चाहिए। विद्यार्थियोसे सरकारी स्कूल खाली करवानेके लिए स्वयंसेवकोके दल न जाये, वे [इसके लिए] गाँवोमे जाकर उपवास भी न करे। लोगोकी बुद्धि जागे और वे स्वयं सोच-समझकर अपने बच्चोको सरकारी स्कूलोसे उठा ले, तभी यह कार्य सही अर्थमे सफल हुआ माना जायेगा।

मेरे मनपर ऐसी छाप अवश्य पडी है कि लोगोने खूब काम किया है। लेकिन उसमे कुछ अज्ञान भी रहा है। मालूम होता है, लोगोंके मनमे यह खयाल रहा है कि खादी-मात्र दिसम्बरतक ही पहननी पडेगी। स्कूल भी हमे दिसम्बरके बाद नही चलाने पडेगे। और बादमे ढेढ तथा भंगीको भी स्पर्श करनेकी जरूरत न रहेगी। इस भावना-से किया गया कार्य तो बहुत कृत्रिम हुआ, और उसका असर अच्छा पडनेके बजाय बुरा ही पडेगा। दिसम्बरमे हमारे हाथमे सत्ता आ जायेगी, ऐसा मुझे तो नही जान पडता। लेकिन सत्ता आनेके बाद भी हम अपने ताल्लुके अथवा गाँवमे कता और बुना कपडा ही पहननेवाले है, तब भी स्कूल दूसरे लोग आकर नही चलायेगे, उस समय भी सारा बन्दोबस्त हमारे ही हाथमे होगा। आज दो सत्ताएँ है इसके बदले स्वराज्यमे एक ही सत्ता होगी। अगर सरकार हमारी होगी तो सत्ता भी हमारी ही

होगी। आज हमे जितना उद्यम करना पडता है, आज जितना उत्तरदायित्व हमारे सिरपर है, उतना ही उद्यम हमे तब भी करना पडेगा, उतना ही उत्तरदायित्व हमारे कन्धोपर तब भी होगा। तब भी हम ढेढ और भगीका स्पर्श करेगे, उनपर प्रेमभाव रखेगे। आज हम जो करते है वह सब सोच-समझकर करे और यह मानकर करे कि यह हमेशाके लिए है, ऐसा करनेपर ही हममे योग्यता आयेगी।

मै मानता हूँ कि बारडोली ताल्लुकेमे यह सब करनेकी पूर्ण शक्ति है। जो-कुछ अधूरा रहा सो कुछ तो समयकी तगीके कारण और कुछ अधूरी समझके कारण। इस लिए मै बिलकुल ही निराश नही हुआ हूँ, लेकिन ऐसा मानता हूँ कि समस्त त्रुटियोको थोडे ही समयमे दूर करके लोग सविनय कानून-भग करनेकी पूर्ण योग्यता प्राप्त करेगे।

जिन 'सहयोगियो' से मै मिला हूँ उन्होने भी इस बातकी गवाही दी है कि सारा काम शान्तिपूर्वक हुआ है और कहा है कि छ महीनोमे बारडोली ताल्लुका तैयार हो जायेगा। ताल्लुकेके प्राणरूप भाई कुँवरजी मानते है कि वे एक मासमे कातने-बुननेका तथा दूसरा काम पूरा कर सकेगे। सम्भव है कि दोनोके कथनमे जाने-अनजाने कुछ अतिशयोक्ति हो। लेकिन बारडोलीके भले स्त्री-पुरुषोने मेरे ऊपर यह छाप जरूर डाली है कि वे थोडे ही समयमे योग्यताका प्रमाणपत्र प्राप्त कर लेगे।

सबसे सुन्दर बात तो मुझे यह दिखाई दी कि काम करनेवाले लोगोमे सिर्फ युवक ही नही बल्कि बुजुर्ग लोग भी है। स्त्रियाँ भी दिलचस्पी लेती है। स्वयसेवक बिना पैसेके काम करते हैं। जो रुपया-पैसा खर्च होता है वह सब बारडोलीमे से ही पूरा किया जाता है। इसलिए जागृति सारे ताल्लुकेकी ही मानी जायेगी, उसके अमुक वर्ग-की नही।

बारडोलीका उत्तरदायित्व अब बढ गया है। बारडोलीने ही मुझे दिल्लीमे सविनय अवज्ञाकी योजनाको स्पष्ट स्वरूप प्रदान करनेके लिए प्रेरित किया। इससे अन्य प्रान्तोमे भी उत्साह बढा, इसीके परिणामस्वरूप हमारे कई महान् योद्धा आज जेलमे विराज रहे है। इस तरह उत्साहका निमित्त बननेके बाद बारडोली चुपचाप नही बैठा रह सकता। बारडोलीको एकदम पूर्ण आत्मशुद्धि करनी होगी और उस शुद्धिके लिए महान पुरुषार्थ करना होगा। लोग विचारपूर्वक काम, काम और सिर्फ काम ही करते रहे और यदि उनका सच्चा हृदय परिवर्तन हो गया हो तो जिस प्रयत्नकी जरूरत है, उसे करना कठिन नही होगा।

पाठक देखेगे कि लोगोमे दु ख सहन करनेकी, जेल जानेकी और गालियाँ खानेकी ताकत है या नही — मैने इस बातकी चर्चा ही नही की है। मैने किसीसे पूछा भी नही है। मेरा अनुभव है और मेरा विश्वास है कि जब मनुष्य अपने कर्त्तव्यका पालन करता है तब उसमे दु ख सहन करनेकी शक्ति तुरन्त आ जाती है। बारडोलीके लोग तो जेल जानेकी योग्यता प्राप्त करनेकी खातिर इतना प्रयास कर रहे है तो फिर मै यह प्रश्न करके कि उनमे जेल जानेकी शक्ति है या नही, उनका अपमान कैसे कर सकता हूँ? यह समय ऐसा है कि जेल जाना कठिन है, जेल न जाना ही आसान है। जो व्यक्ति सूत नही कातता, खादी नही पहनता, ईमानदार नही है, विनयशील नही है, सबके साथ द्वेष करता है, ढेढ और भगीका स्पर्श नही करता उसे जेल जानेके लिए

कह ही कौन सकता है? जिस ताल्लुकेके लोग अस्पृश्यतामें चिपके रहते हैं उस ताल्लुके-को जेल जानेका आमन्त्रण कोई नहीं देगा, अतएव बारडोलीके लोगोंकी हिम्मत और जेल जानेकी इच्छाके सम्बन्धमें मुझे जरा भी शंका नहीं है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ११-१२-१९२१

२४४. टिप्पणियाँ

पधारिए कर्नल प्रतापसिंहजी

कोई एक हफ्तेसे यह सुना जा रहा है कि कांग्रेसके समय सरकार अहमदाबादका कब्जा कर्नल प्रतापसिंह तथा उनके सिपाहियोंको सौंप देगी और कर्नल प्रतापसिंहने कांग्रेसके प्रतिनिधियोंको सीधा करनेका काम अपने सिरपर लिया है। मैं उस अफवाहको बिलकुल झूठ मानता हूँ। सरकार उतनी डरपोक, नीच या मूर्ख नहीं है। सरकारके पास कांग्रेसके प्रतिनिधियोंसे निपटनेके पूरे साधन हैं। मैं यह नहीं मानता कि उसे कर्नल प्रतापसिंहकी मददसे अपना काम चलाना जरूरी है। फिर भी मैं सुनता हूँ कि मिलोंमें काम करनेवाले सीधे-सादे मजदूरोंको डरा दिया गया है और वे भयभीत हैं। ऐसी अफवाहें एक तो किसीको सुननी ही नहीं चाहिए और यदि सुन लें तो उन्हें सुनकर फैलाना नहीं चाहिए। किसी भी प्रकारके डरका अन्देशा हुआ तो कांग्रेसकी तरफसे सूचना मिलेगी। मनगढन्त अफवाहोंसे घबरा जाना भीरुताका चिह्न है और भीरु लोग न तो स्वराज्य ले ही सकते हैं और न पा जानेपर उसे कायम ही रख सकते हैं। फिर यह नास्तिकताका भी चिह्न है। अतः यह समझ कर कि 'जो ईश्वरको मंजूर होगा सो होगा', हम शान्त क्यों न रहें?

पर मान लीजिए कि कर्नल प्रतापसिंहजी अपना दल-बल लेकर यहाँ पधार जायें तो भी डर किस बातका है? वे भी हमारे ही हैं। उनके सिपाही भी हमारे ही हैं। हमें उनका आगमन सहन करना चाहिए, उनका स्वागत करना चाहिए और उनके सिपाहियोंकी गोलियाँ भी बरदाश्त करनी चाहिए। हम उन्हें गोलियाँ चलानेका मौका ही क्यों दें? क्या वे रास्ते चलते हुए को छेड़ेंगे? छेड़ें तो छेड़ते रहें — हमें अपने रास्ते जानेसे काम। क्या वे हमारी खादीकी टोपी उतरवायेंगे? यदि जबर्दस्ती उतारें तो हम टोपी न छोड़ें और मारका स्वागत करें। इतनेपर भी उतार लें तो दूसरी टोपी पहनकर निकलें और फिर मार बर्दाश्त करें। अन्तको वे थक जायेंगे। जिनमें मार खाने लायक शक्ति न हो [जहाँ उनके सिपाही हों] ऐसे रास्तेसे वे न जायें, पर सफेद टोपी छोड़ें हरगिज नहीं। जिस प्रकार निरामिष भोजी उन देशोंमें नहीं जाता जहाँ माँस खाये बिना गुजर ही नहीं, जैसा कि उत्तरी ध्रुवके पास, परन्तु यदि उत्तरी ध्रुवमें पहुँच ही जाये तो प्राण भले ही चले जायें पर वह माँस-भक्षण नहीं करेगा। धर्म तो वही जिसका पालन प्राण देकर भी किया जाये, नहीं तो फिर वह सुविधा या विलास ही हुआ।

यदि हमने गोरे सिपाहियोसे डरना छोड देनेका निश्चय कर लिया हो तो फिर हमे कर्नल प्रतापसिहके गेहुँए रगके सिपाहियोसे डर क्यो मानना चाहिए ?

डरना तो हमारी अपनी अशान्ति और वैर-भावकी सूचना है। जिसे हम दुश्मन मानेगे वह जरूर ही हमारा दुश्मन हो जायेगा। यदि हम दुश्मनको भी अपना मित्र मानकर उसके साथ वैसा ही व्यवहार करेगे तो वह समय पाकर जरूर ही मित्र हो जायेगा। मनुष्य जैसा विचार करता है, वैसा ही बनता है। करे मित्रता, परन्तु पाये दुश्मनी, यह हो ही नही सकता। हमारा असहयोग शत्रुको भी मित्रताके द्वारा जीतनेका साधन है।

यह केवल हिन्दू धर्मकी ही नही, इस्लामकी भी यही शिक्षा है। इस्लाममे धैर्य-को सबसे ऊँचा पद दिया गया है। युद्धके लिए विधान तो है, पर वह तभी जब दूसरे सब उपाय चुक गये हो और जालिमकी अपेक्षा उनकी सख्या कम हो तथा न लडना कायरताका चिह्न माना जाये एव युद्ध करवानेवाला नेता कोई ऐसी उज्ज्वल आत्मा हो कि जिसपर सबका भरोसा हो और जिसने हर तरहके स्वार्थको तिलाजलि दे दी हो। पर हिन्दुस्तानकी अवस्था ऐसी है ही नही और हो भी नही सकती। हमारी तादाद बहुत है। फिर हमे वैसी लडाईके लिए प्रेरित करनेवाला कोई नही। ऐसा युद्ध हमारी मर्दानगीका चिह्न नही है, और न हम खुद अभी दूसरे उपायोको करके थक ही चुके है। हमने अभी शान्तिका पाठ पूरा-पूरा नही पढा है। हमने अभी स्वदेशी व्रतका पूरा पालन नही किया है। हम अभी प्रामाणिक नही बने। हिन्दू और मुसलमानोने अभी पारस्परिक मनोमालिन्यको पूरी तरह धो नही डाला है। अभीतक हमारे बहुतसे लोगोको सरकारका साथ देना प्यारा मालूम होता है। ऐसी स्थितिमे युद्ध ठानना 'जेहाद' नही बल्कि 'फसाद' माना जा सकता है। मैने कितने ही आलिमोके मुँहसे यह बात सुनी है।

अतएव प्रत्येक धर्मकी दृष्टिसे विचार करते हुए एक ही निर्णय लिया जा सकता है कि हमे दुश्मनको प्रेमके बलपर जीतना है। सो, चाहे गोरी सेना आये चाहे काली, उसके साथ हमारा व्यवहार एक ही-सा होना चाहिए। इसलिए, यद्यपि मेरी धारणा है कि कर्नल प्रतापसिहजी हमे दण्ड देनेके लिए आनेवाले नही है, तथापि मान लीजिए कि वे आये अथवा और कोई कर्नल अपनी टुकडी लेकर आये तो हम कह सकते है — "पधारिए कर्नल साहब"।

दास पकड़े गये ?

ऐसी ही अफवाह देशबन्धु दासके पकडे जानेके विषयमे उड रही है। मै नही मानता कि वे गिरफ्तार कर लिये गये है। पर हाँ, कर्नल प्रतापसिहके यहाँ आनेकी अपेक्षा देशबन्धुकी गिरफ्तारीकी सम्भावना अधिक सच हो सकती है। जहाँ दमन-नीति हमेशा बढती जा रही है, और भारतके बादलका रँग बदलता रहता है वहाँ हम क्या कह सकते है कि कौन कब पकडा जायेगा ? साथ ही, यह जाननेकी भी हमे क्या जरूरत कि "कौन पकडा गया है।" चाहे तमाम अगुआ लोग क्यो न पकड लिये जाये, हमे अशान्त होनेका कोई कारण नही। यदि हम आलसी हो तो काममे जुट

जाये, यदि नेताओंकी मौजूदगीमें हमारा मन कामके बजाय खेलमें ज्यादा रमता हो तो उनकी गैरहाजिरीमे हमें खुद जवाबदेही अपने सिरपर लेकर अगुआ हो जाना चाहिए। हमारे इस संग्राममें सबको अग्रणी होनेका अधिकार है। क्योंकि यहाँ अग्रणी वही है जो सबसे अधिक सेवा करे। सेवाके लिए अगुआ होनेमे द्वेष किस बातका?

सो, यदि देशबन्धु दास गिरफ्तार हो जाये तो हमें खुश होना चाहिए, निराश न होते हुए अधिक उत्साहवान होना चाहिए। और यह आशा रखनी चाहिए कि अब हमारी विजय नजदीक आती जा रही है। कसौटीपर चढे बिना हमे कुछ भी नही मिल सकता और यदि बिना कसौटीके मिल गया तो वह टिकनेवाला नही। जिस प्रकार बिना भूखके खाया हुआ भोजन नही पचता उसी प्रकार बिना दु खके सुख भी नही पच सकता। ज्यों-ज्यों हमारे बन्धन हमारे आन्तरिक बलसे एकके बाद एक टूटते है त्यो-त्यो हमारी शक्ति बढती है। परन्तु यदि बँधे हुए मनुष्यको कोई एकाएक छोड दे तो बन्धन टूट जानेपर भी वह अपग-जैसा दिखाई देता है और वह होता भी है। वही हाल हमारा भी हो सकता है। अतएव हमारे नेताओका जेल जाना मानो हमारी स्वतन्त्रताके प्रभातकालकी सूचना है।

कांग्रेसके अधिवेशनमें भले ही हमारे नेता न आ पाये — उसमे लालाजी न हो, दास न हो, मोहिउद्दीन साहब न हो, असमके फूकन न हो, फरुखाबादके शान्तिस्वरूप न हो, लखनऊके हरकरणनाथ न हो, आन्ध्रके गुप्ता न हो, मद्रासके याकूब हसन न हो, किचलू न हो, स्टोक्स न हो, पण्डित नेकीराम, पण्डित सुन्दरलाल, भगवानदीनजी, पीर बादशाह मियाँ, जितेन्द्रलाल बनर्जी, सेनगुप्त और ऐसे ही अन्य अनेक योद्धा भी न हो। लेकिन इसकी क्या चिन्ता? भले उसमे अली-बन्धु न हो, वीर सिख सरदार न हो, हमें इसकी परवाह नही करनी चाहिए। उनका शरीर चाहे न रहे पर उनकी आत्मायें तो हमारे साथ ही रहेगी। वे हमारे पराक्रमको देखेंगी। हमारी परीक्षा लेगी। वे जाँचेगी कि हम उनके बलिदानके लायक है या नही? लडनेवाले घायल हो जानेसे घबराते नही। वे तो समझते है कि घाव खानेसे तो अपना बल सिद्ध होता है और बल सिद्ध करना मानो विजय प्राप्त करना है। हमें यह दृढ विश्वास होना चाहिए कि जो जेलसे बाहर रहकर सेवा करता है वह जब निर्दोष होते हुए भी जेल जाता है, तब अधिक सेवा करता है।

पारसी भाई-बहनोंको

मै जानता हूँ कि कई जगह पारसी भाई-बहन कुछ घबराये हुए है और हिन्दुओ तथा मुसलमानोसे डरका अनुभव करते है। मुझे यह बात लिखते हुए भी लज्जा आती है। जिस समय हम स्वराज्यके मन्त्रका जप कर रहे है उस समय यदि किसी एक समाजको, किसी समाजको ही क्यो, एक निर्दोष व्यक्तिको भी यदि भयका कारण रहता है तो स्वराज्यवादीके लिए यह लज्जाकी बात है। पारसी भाई-बहनोंको इतना आश्वासन तो मै देता हूँ कि ऐसे सैकडो हिन्दू और मुसलमान है जो उनके लिए और इसी प्रकार ईसाई आदि अन्य अल्पसंख्यक समाजोके लिए अपने प्राण दे सकते है। हो सकता है कि उन्हे कुछ अंग्रेज अधिकारी समझ-बूझकर या अनजाने भडका

रहे हो। लेकिन पारसी भाई-बहनोकी शोभा तो इस बातमे है कि वे किसीके डरानेसे डरे नही। ऐसा समझे कि हिन्दू और मुसलमान उनके भाई ही है और उनपर विश्वास रखे। मै उनसे यह याचना करता हूँ कि हम सब, मरना हो तो एक-दूसरेके हाथसे और बचना हो तो एक-दूसरेके हाथसे बचनेका निश्चय करे। विश्वाससे विश्वास बढता है और अविश्वाससे अविश्वास।

इतना आश्वासन देनेके बाद भी पारसी भाई-बहनोको मेरी यह सलाह है कि जहाँ-जहाँ उन्हे थोडा भी डर लगता हो वहाँ-वहाँ वे कांग्रेसके दफ्तरमे या खिलाफतके दफ्तरमे इस बातकी खबर दे। सूचना मिलनेपर मै मानता हूँ कि उनकी रक्षाके लिए उन-उन दफ्तरोके लोग पूरा प्रबन्ध करेगे और उसमे थोडी भी असावधानी नही दिखायेगे। बम्बईमे मुझे कई पारसी भाइयोने कहा था कि अनेक मेमन भाइयोने पारसी भाई-बहनोको सम्पूर्ण सरक्षण दिया था। कई मारवाडी घरोमे भी पारसी कुटुम्बोकी रक्षा हुई थी। कोई पारसी भाई या बहन ऐसा तो नही मानते होगे कि सारा हिन्दू समाज या सारा मुस्लिम समाज पारसियोके खिलाफ हो गया है।

कोई-कोई पारसी भाई, उन्हे जो नुकसान हुआ है उसके सम्बन्धमे मुझे लिखते रहते है। उन्हे मै इतनी ही सान्त्वना दे सकता हूँ कि ऐसे मामलोकी जॉच करनेके लिए मै पारसी समाजके प्रमुख व्यक्तियोके साथ एक कमेटी नियुक्त करनेकी बातचीत कर रहा हूँ। यदि ऐसी कमेटी बन जाती है तो जिन्हे नुकसान हुआ है और जो उस नुकसानको सहनेमे समर्थ नही है, ऐसे सब लोगोके लिए कुछ किया जा सकेगा। मै चाहता हूँ कि एक भी पारसी अपने नुकसानकी भरपाईकी माग करनेके लिए सरकारके पास न जाये।

कपडवज और ठासरा

किसानोका कहना है कि इस वर्ष कपडवज और ठासरा ताल्लुकोमे फसल कुछ जगह रुपयेमे छ आनेसे और कही चार आनेसे भी कम हुई है। वे पूछते है कि इस हालतमे वे क्या करे? असहयोगीके नाते मै तो उन्हे एक ही सलाह दे सकता हूँ कि सरकारके पास राहत मॉगनेके लिए तो उन्हे नही जाना चाहिए। लेकिन यदि उनमे हिम्मत हो तो वे सरकारको यह नोटिस दे सकते है कि फसल चार आनेसे भी कम हुई है, अत वे लगान नही दे सकेंगे। यदि सरकारको फसलके बारेमे किसानोका अनुमान स्वीकार न हो तो वह पच-समिति नियुक्त करे जिसमे सरकार और किसानोके प्रतिनिधियोकी सख्या बराबर हो। यह समिति जो भी निर्णय दे उसे दोनो पक्षोको स्वीकार कर लेना चाहिए। यदि सरकार इस तरह पच-फैसला करा लेनेकी बात न माने तो किसान लगान न भरे और तब यदि सरकार उनकी सम्पत्ति बेचकर लगान वसूल करना चाहे तो उसे वैसा करने दे। लेकिन ऐसा कदम उठानेके पहले किसानोको पूरा विचार कर लेना चाहिए।

१ क्या वे एक रह सकेंगे?

२ अपने मवेशी, बर्तन और घरके सामान आदिका बिकना वे सह सकेंगे?

३ क्या वे शान्तिका पालन कर सकेंगे?

यदि इन तीनों प्रश्नोंका जवाब "हाँ" में हो तो वे, जैसा ऊपर बताया है उस तरह, सरकारसे पंच नियुक्त करनेके लिए कह सकते हैं और अपने इस प्रस्तावके नामंजूर होनेपर लगान देना बन्द कर सकते हैं। किसानोंको यह भी याद रखना चाहिए कि उनकी इस निजी लड़ाईमें कांग्रेस उन्हें कोई सहायता नहीं दे सकती। उन्हें अपने ही बलपर लड़ना होगा। इसके लिए उनके पास कुशल नेता होने चाहिए। इसके सिवा, लड़ाईमें झूठको कोई स्थान नहीं मिलना चाहिए।

यह तो हुआ किसानोंकी इस स्थानिक तकलीफके बारेमें।

अब, इसके आगे यदि किसान स्वराज्यकी या खिलाफतकी लड़ाईमें भाग लेना चाहते हों तो उन्हें और भी ज्यादा कष्ट सहनेके लिए तैयार होना चाहिए। उसमें यह सवाल नहीं उठाया जा सकता है कि उनकी फसल रुपयेमें इतने आना हुई है। उन्हें स्वदेशीके व्रतका पूरा पालन करना चाहिए, इसके लिए स्त्रियोंको भी समझाना चाहिए, अस्पृश्यताके दोषको दूर करना चाहिए। ऐसा करें तो ही वे कानूनका सविनय-भंग करनेके लिए तैयार हुए कहे जा सकते हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ११-१२-१९२१

२४५. सन्देश: हरिलाल गांधीको[1]

[११ दिसम्बर, १९२१ को या उसके पश्चात्]

तुमने बहुत अच्छा काम किया। ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे। रामदास, देवदास तथा अन्य लोग भी तुम्हारा अनुकरण करेंगे।

आज, १५-१२-१९२१

२४६. तार: देवदास गांधीको[2]

[साबरमती
११ दिसम्बर, १९२१ को या उसके पश्चात्]

तुम जब चाहो तब अपनेको गिरफ्तार करा दो।

बापू

[अंग्रेजीसे]

सेवन मंथ्स विद महात्मा गांधी,

१ ११ दिसम्बरको हरिलाल गांधीकी गिरफ्तारीके बाद गांधीजीने यह सन्देश भेजा था।
२ यह तार हरिलाल गांधीकी गिरफ्तारीके बाद भेजा गया था।

२४७. पत्र : सी० एम० डोकको

सावरमती
१३ दिसम्बर, [१९२१][1]

प्रिय क्लीमेट[2],

आपका पत्र पाकर कितना अधिक आनन्द हुआ? इसने हमारी पहलेकी सभी सुखद स्मृतियोको फिरसे ताजा कर दिया है। कृपया माँ, ऑलिव[3], विली[4] तथा श्रीमती इवान्सको मेरा प्यार कहे।

मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मै प्रार्थना किये बिना कुछ नही करता।

श्रीमती गाधी और रामदास मेरे साथ है। देवदास इलाहाबादमे है। हरिलाल अभी हाल ही एक सविनय अवज्ञाकारीके रूपमे कलकत्ता जेलमे गया है। मणिलाल[5] दक्षिण आफ्रिकामे 'इडियन ओपिनियन' का काम देख रहा है।

कृपया कभी-कभी लिखते रहा करे।

आप व श्रीमती क्लीमेट हमारे समादर ले।

आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजी पत्र (जी० एन० ७४४) की फोटो-नकलसे।

१ देवदास और हरिलालके उल्लेखको ध्यानमें रखते हुए लगता है कि यह पत्र निश्चय ही १९२१ में लिखा गया था।

२ रेवरेंड जे० जे० डोकके पुत्र, जो दक्षिण आफ्रिकामें गाधीजीके निकट सहयोगी थे।

३ रेवरेंड डोककी पुत्री।

४ रेवरेंड डोकके ज्येष्ठ पुत्र।

५ गाधीजीके द्वितीय पुत्र, जो दक्षिण आफ्रिकामे थे।

२४८. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

मंगलवार

१३ दिसम्बर, १९२१

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें जो चोट आ गई थी, आशा है, वह अबतक ठीक हो गई होगी। अब तो हमें स्वस्थ और प्रसन्न रहना है और लक्ष्मीके टीकेकी राह देखते हुई बैठना है।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

२४९. तार : मदनमोहन मालवीयको[1]

[१४ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्]

पण्डित मालवीयजी

बनारस सिटी

अहमदाबाद छोड़ना असम्भव। तेईसको यहाँ कार्य-समितिकी बैठक हो रही है। सम्मेलन यदि अहमदाबादमें करें या कांग्रेसके बाद, जिसमें कृपया आप शामिल हों तो मैं उसमें सहर्ष उपस्थित होऊँगा।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७१५) की फोटो-नकलसे।

१. यह तार मालवीयजीके १४ दिसम्बर, १९२१के तारके जवाबमें दिया गया था। उनका तार इस प्रकार था: "तारके लिए धन्यवाद। अठारहको आश्रम पहुँच रहा हूँ। वर्तमान परिस्थितिमें सम्मिलित रूपसे क्या कदम उठाया जाये इसपर विचार करनेके लिए सभी दलोंके प्रतिनिधियोंका सम्मेलन बाईस और तेईसको बम्बईमें बुला रहा हूँ। विश्वास है कि आप उसमें शरीक होंगे। तार दीजिए।"

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

प्रोफेसर टी० एल० वास्वानीका उत्तर[1]

प्रिय महोदय,

आपका ३० तारीखका पत्र मुझे कल डाकसे मिला। मुझे मैत्रीपूर्ण मुलाकातके बारेमे तो कोई आपत्ति हो ही नही सकती थी। परन्तु मै अब भी यही समझता हूँ कि आपके पत्रोसे जिस मनोदशाका आभास मिलता है, उस मनोदशामे मुलाकात निष्फल ही रहेगी और सचमुच आपके आखिरी पत्रसे तो लगता है कि जैसे आप मुझे कोई 'आन्दोलनकारी' समझते है और आपको शक है कि मै मुकदमेके उस ढोगको 'राजनीतिक चाल' की तरह और 'अपने मित्रके विक्षोभको राजनीतिक प्रचार' के लिए इस्तेमाल कर रहा हूँ। अपने यूरोपीय मित्रोके लिए मेरे हृदयमे प्रेम और आदरके भाव है, यूरोपीय कवियो और स्वतन्त्रताका उद्घोष करनवाले मनीषियोके सामने मै श्रद्धानत हूँ और इस प्रेम, आदर और श्रद्धाकी खातिर अपने देशमे बसनेवाले यूरोपीय मेरे व्यक्तित्व और उद्देश्योके बारेमे जो भी कहेगे, मुझे सुनना ही पडेगा। आप कहते है कि मेरे मित्रको दी गई सजा अत्यन्त कठोर मालूम पडती है, इससे मुझे प्रसन्नता हुई। मै आशावादी हूँ, और अब भी मुझे आशा है कि इस मामलेपर सावधानीके साथ विचार करनेके बाद आप मेरी इस बातसे सहमत होगे कि यह सजा सर्वथा अन्यायपूर्ण है। न्यायका तकाजा है कि उनको रिहा कर दिया जाये।

आप इसे कहते है—'भारतीय न्यायाधीशका न्याय'। मुकदमेकी कार्यवाही और फिर फैसला सुननेके लिए उस कमरेमे बैठे-बैठे मुझे लगा कि मेरी महान् मातृभूमिका अपमान किया गया है। ऐसा प्रतीत होता था जैसे कि सजा पहलेसे ही तय थी। निश्चय ही वह कार्यवाही न्यायोचित नही थी।

आप कहते है—"[सजा पर] पुनर्विचार करवानेके साधन आपको सुलभ है, आप उनका उपयोग क्यो नही करते?" **स्वामीको रिहा कर देना ही एकमात्र न्यायपूर्ण पुनर्विचार होगा।** किन्तु वे उच्चतर न्यायालयमे अपील नही करेगे। आप पूछते है क्या नही करेगे? इसपर मै आपके सामने कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरके पत्रका यह अंश पेश करता हूँ "मुझे याद है कि स्कूलके दिनोमे मेरे एक ऐसे अध्यापक थे जो बात-बातपर अपशब्द निकालते थे और विवेकहीन व्यवहार करते थे। वे मुझे मारते-पीटते और अपमानित करते रहते थे, परन्तु मै न रोता था न तो इसकी किसीसे

१. जैसा कि पत्रमें उल्लेख है, यह पत्र 'तिलक-दिवस' के अवसरपर लिखा गया था।

शिकायत करने दौडता था। वास्तवमे **मै इस दण्डके प्रति उपेक्षा दिखाकर अपने सम्मानको कायम रखनेका प्रयत्न करता था, और इस प्रकार नैतिक विजय मेरी होती थी।"** यह बात स्वामीके विषयमे भी लागू हे। उनको जितने ही ज्यादा दिनोतक वन्दी रखा जायेगा, ईमानदार लोगोकी नजरमे सरकार उतनी ही ज्यादा ओछी सिद्ध होगी।

हाँ, वेचैनी है, और आप जितना सोचते है, उससे गहरी। इसको कम करनेका उपाय? सो तो मैने अपने पिछले पत्रमे लिखा था। सिन्धके अधिकारियोको न्याय-परायण होना चाहिए तथा "नई भावना"को समझकर चलना चाहिए। आप कहते है कि आप आदर्शोको उतना ही महत्व देते है, जहाँतक कि वे अमलमें लाये जा सकते है। और अधिकारी वर्ग स्वतन्त्रता, समानता तथा न्यायके जिन आदर्शोका दम भरता हे, हमारे प्रति व्यवहारमे उन्ही आदर्शोको अमलमे लानेमे वह वार-वार असफल रहा है। मेरे दृष्टिकोणसे **सच्चा आदर्शवादी तो व्यावहारिक होता है और जो व्यक्ति प्रामाणिकताके साथ व्यावहारिक हो, वह आदर्शवादी ही हे। उसके कार्यमें आदर्शवादिता है।** स्वामीको दी गई सजाके पीछे मुझे सरकारकी शक्ति जतलानेकी इच्छा दिखाई पडती है। **इस प्रकारकी शक्ति दुर्बलता ही है।** इसलिए कि न्यायको पैरो तले कुचलने वाली शक्ति वास्तवमे दुर्बलता होती है—हिंसाकी दुर्बलता।

आप इतने सुसस्कृत है, देश-देशान्तर घूम चुके है, इसपर भी लगता है कि आप सरकारकी नीतिको न्याय-सगत ठहराते है। इसका मै केवल एक ही कारण समझ पाया हूँ और वह यह कि एक गुलाम देशको जो अपमान और कष्ट सहने पडते है उनकी जानकारी आपको है ही नही। डायरने ३००-४०० भारतीयोको गोलियोसे उडा दिया, और वह ९०० पौड वार्पिक पेशन पा रहा है और मुझे मालूम हुआ है कि उसके यूरोपीय प्रशसकोने उसे लगभग ३०,००० पौडकी एक थैली भी भेटमे दी है। किन्तु स्वामी-जैसे निर्दोप भारतीय केवल देश-प्रेमके अपराधमे जेलोमे सड रहे है। एक समय था जब ब्रिटिश अधिकारी सहनशीलता, सहानुभूति तथा न्याय आदि महान् गुणोसे विभूषित माने जाते थे। यहाँतक कि १९१४मे जब महायुद्ध शुरू हुआ, तो राष्ट्रीय काग्रेसने निश्चय किया था कि "भारत हर समय और हर हालतमे साम्राज्यका साथ देगा।" आज काग्रेस युवराजके आगमनका वहिष्कार कर रही है और इसमे महाविभव-का अपना कोई दोप नही है। इसका कारण? बेचनी दिन-प्रतिदिन बढती जा रही है। क्यो? राज्य और राष्ट्र, सरकार और जनताके बीचकी खाई दिन-प्रतिदिन चौडी होती जा रही है। क्यो? सरकार अपने राजदण्डका प्रयोग करनेके लिए अत्यधिक उतावली हो रही है, उसका वल-प्रयोगमे विश्वास है।

क्या आप जानते है कि राजनीतिक विचारोके कारण हमारे कितने नौजवान आज जेलमे है? तिलक-दिवसपर लिखते हुए, क्या मै यह भूल सकता हूँ कि भारत-की सेवा करनेवालोमे से सर्वश्रेष्ठ लोगोको एक-न-एक बार अपनी देशभक्तिके लिए दण्ड भोगना ही पडा है। विद्वान् तिलक, देशभक्त तिलकको एकसे अधिक बार जेल भेजा गया। एनी बेसेटको नजरबन्द किया गया था, लाला लाजपतरायको निर्वासित किया गया था। विपिनचन्द्र पालको पजाबमे घुसने नही दिया जाता था। वे विद्रोही

नही थे। किन्तु वे भारतसे प्रेम करते थे। बगालमे कितने नवयुवकोको राष्ट्रीय आजादीका राजनीतिक आदर्श रखनेके कारण जेल भेजा गया? और उनमे से कुछको जेल भी किस तरह भेजा गया था? एक बगाली प्राध्यापकको नजरबन्द किया गया — उसे किसी भी अपराधके लिए सजा नही सुनाई गई थी। बस उसे बहुत दूरके एक जेलमे नजरबन्द कर दिया गया — उसकी माँको इसकी सूचना तक नही दी गई। उसे अपने पुत्रकी दुर्दशाका हाल एक लम्बे अर्से बाद मालूम हुआ। उसने अपने पुत्रके मामलेकी उचित ढगसे जाँच-पडताल करनेके लिए याचिका भेजी। उसे सूचना दी गई कि उसका पुत्र एक काल-कोठरीमे बन्द है और वहाँ पागल हो गया है! पुलिसने एक गाँवमे दो महिलाओको गिरफ्तार किया। उन्हे जेल भेज दिया गया। अखबारोने पुलिस-जुल्मका पर्दाफाश किया। सरकारने गलती स्वीकार की और उनकी रिहाईका आदेश जारी किया। किन्तु महिलाओको इसपर भी १५ दिन और जेलमे रोक रखा गया। उनकी रिहाईका आदेश देनेवाले तारको इधर-उधर कर दिया गया! उनकी रिहाईके बाद पुलिसके एक भी सिपाहीको दण्ड नही दिया गया। अभी पिछले ही सप्ताह सिन्धके एक गाँव मटियारीमे पुलिसने निहत्थी भीडपर गोली चलाई। एक व्यक्तिकी मृत्यु हो गई और एक दर्जन लोग घायल हुए। इस करतूतकी लीपापोती करनेके लिए सभी अखबारोमे एक सरकारी विवरण छपवा दिया गया। गैर-सरकारी विवरणको सिन्धके तार कार्यालयके अधिकारियोने आपत्तिजनक करार देकर रोक लिया। जलियाँवाला बागकी कहानी आपको मालूम हे ही। मै पूछता हूँ, आज यूरोपके किस सभ्य देशमे इस तरहकी ज्यादतियाँ बर्दाश्त की जायेंगी? निर्दोष व्यक्तियोका निर्वासन, उनको नजरबन्द करना तथा जेल भेजना! निर्दोष व्यक्तियोको बेत लगवाना और गोलियोका शिकार बनाना! वर्षोसे भारतकी यही कहानी चली आ रही है। मेरे देखे-सुने यूरोपके किसी भी देशकी ऐसी कहानी नही रही। इसका कारण ढूँढनेके लिए दूर नही जाना पडेगा। वे स्वतन्त्र है और भारत गुलामीकी बेडीमे जकडा हुआ है।

मैने ब्रिटिश साम्राज्यवादकी चर्चा की थी। मैने कहा था कि यह साम्राज्यवाद एशिया, फारस, मेसोपोटामिया, मिस्र और भारतमे मानव-भावनाके विपरीत चल रहा हे। वह पूर्वी देशोपर अपना आर्थिक नियन्त्रण बनाये रखनेकी धुनमे लगा रहता है, और यहाँ इस देशमे हम स्वदेशीके शान्तिपूर्ण साधनके प्रयोगके द्वारा उसकी 'शान्तिपूर्ण घुसपैठ'को रोकनेका प्रयत्न कर रहे है। आयरलैडकी तरह, मिस्र और भारतमे, और अब मुस्लिम देशोमे भी साम्राज्य राष्ट्रीयताके सिद्धान्तके विपरीत आचरण कर रहा है। किन्तु यह एक ऐसा विषय है जिसपर अलगसे विचार करनेकी आवश्यकता है।

आपने अपने पत्रमे "वैयक्तिक स्वतन्त्रताके सच्चे आदर्श"का उल्लेख किया है और इसपर मेरी राय माँगी है। मुझे खेद है कि मैने उसे बडी जल्दीमे 'गजट'मे देखा था, और इस समय वह मेरे सामने नही है। किन्तु मेरा खयाल हे, आप यह सिद्ध करना चाहते है कि शराबकी दुकानोपर धरना देना वैयक्तिक स्वतन्त्रताके सच्चे आदर्शसे मेल नही खाता। यदि मेरी बात गलत हो तो मै उसे ठीक करनेको तैयार हूँ। यदि वास्तवमे आपका यही खयाल है कि धरना देना वैयक्तिक स्वतन्त्रतासे मेल नही खाता, तो मुझे सचमुच दु ख होगा। वैयक्तिक स्वतन्त्रताका आदर्श हर फ्रासीसी-

तो बड़ा प्यारा है। मेरा इस धरनेसे जिसका प्रयोग स्वामीने किया है, कोई विरोध नहीं है। उनका धरना तो केवल आग्रह-मात्र था। हिन्दू तथा मुसलमान धर्म-शास्त्रोंमें शराब पीनेकी अनुमति नहीं है। भारतमें किसी दिन राष्ट्रीय सरकार शराबबन्दीका कानून अवश्य ही पास करेगी। यह सरकार धरना तो हमारी और राष्ट्रीय प्रवृत्तियोंका विरोध करती है, और इसलिए तो हम नागरिक केवल वही उद्देश्य पूरा करना चाहते हैं जिसे राष्ट्रीय सरकार शराबबन्दीका कानून बनाकर आसानीसे पूरा कर देगी। मैं समझता हूँ कि भारतमें हमने ही सबसे पहले पूनामें धरना देना प्रारम्भ किया था। हममें अनेक लोग कुछ सुधारक धरना देनेको एक नैतिक कर्तव्य मानते हैं। फिर भी यह सच है कि निर्दोष साधनोंके समान धरनेका भी दुरुपयोग हो ही सकता है, और यह जोर-जबरदस्तीका रूप धारण कर सकता है। डांट-डपट, जोर जबर्दस्ती, सामाजिक बहिष्कार, हिंसा — ये सभी मेरे वैयक्तिक स्वतन्त्रताके आदर्शके प्रतिकूल पड़ते हैं। मैं नहीं जानता कि स्वामीजी वैयक्तिक स्वतन्त्रता-सम्बन्धी मेरे इन विचारोंसे सिद्धान्ततः पूर्ण सहमत होंगे या नहीं। मैं जानता हूँ कि मेरे बहुतसे मित्र मेरे इन विचारोंसे सहमत नहीं होंगे। उन्हें शराबके व्यापारको इस देशसे समाप्त करनेके लिए सामाजिक बहिष्कारका सहारा लेनेपर कोई आपत्ति नहीं होगी। पर मैं एक बात पक्के तौरपर जानता हूँ कि स्वामी सदा ही अनुरोध और आग्रहके ही हामी रहे हैं, धमकी और दबावके कभी नहीं। एक बात जोर देकर फिर कह रहा हूँ उन्होंने पुलिसके सिपाहीको नहीं पीटा, उन्होंने हिंसाका प्रयोग नहीं किया। मैंने उनसे यह प्रश्न पूछा था, उनका साफ जवाब था — 'नहीं'। वे झूठ नहीं बोल सकते और मैं आपके सभी पुलिसवालोंके मुकाबले उनकी ही बातका विश्वास करूँगा। मैं फिर कहता हूँ, उन्होंने सिपाहीपर भी हमला नहीं किया और न उन्होंने हिंसाकी शक्तिका प्रयोग ही किया है। किन्तु उन्होंने इन सबसे ज्यादा खतरनाक एक काम किया अर्थात् उन्होंने मद्यपान-विरोधी आन्दोलन बड़ी मुस्तैदीसे चलाया और उन्होंने अनैतिक व्यापारसे प्राप्त होनेवाले राजस्वमें कमी पैदा करनेका खतरा खड़ा कर दिया और उन्मत्त सरकारने जनतापर असर डालनेके लिए जोर-जुल्मकी नीतिका सहारा लेकर उनको बारह महीनेके सश्रम, कठोर कारावासकी सजा दे दी। इस सजाका असर तो पड़ा है। जैसे-जैसे यह खबर एक शहरसे दूसरे शहर जायेगी भारतकी समूची जनता समझ जायेगी कि 'सुधारों' के इस 'नये युग' में सिन्धमें न्याय और सहज विवेकका कैसा मखौल उड़ाया जा रहा है।

आपका सच्चा,
टी० एल० वास्वानी

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २५-८-१९२१

५४२

परिशिष्ट २

नागरिकोंसे अपील

निम्नलिखित अपील जनताके लिए जारी की गई है। इसपर सभी सम्प्रदायोके प्रतिनिधियोने हस्ताक्षर किये हैं

बम्बईके नागरिकोको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि हिन्दू, मुसलमान तथा पारसी नेताओके सगठित प्रयत्नोके फलस्वरूप नगरके अधिकाश भागोमे पुन शान्ति स्थापित हो गई है। वे सुबहसे राततक गाडियोमे बैठकर नगरके चक्कर लगाते रहे और जनतासे शान्त रहने तथा शान्ति बनाये रखनेका अनुरोध करते रहे। जनताने भी उनके अनुरोधका अनुकूल उत्तर दिया। इसमे सन्देह नही कि कुछ बस्तियोमे अब भी थोडी उत्तेजना फैली हुई है। उन इलाकोमे पुन शान्ति स्थापित करनेके लिए प्रत्येक व्यक्तिको प्रयत्नशील होना चाहिए। एक-दूसरेकी गलतियोको भूल कर क्षमा कर देनेमे हमारी शोभा है। भारतमे रहनेवाले हिन्दुओ, मुसलमानो, पारसियो, ईसाइयो तथा यहूदियोको भाई-बहनकी तरह रहना चाहिए और एक-दूसरेके मतभेदो तथा त्रुटियोको सहन करना चाहिए। बम्बईके निष्कलक नामपर लगनेवाला यह धब्बा हम सभीके लिए लज्जास्पद है। शान्ति स्थापित करके तथा उसे बनाये रखकर ही हम उस कलकको धो सकते है, हम बम्बईके सभी नागरिकोसे अपील करते है कि वे इस मामलेमें हार्दिक सहयोग दे।

[अग्रेजीसे]

यग इंडिया, २४-११-१९२१

सामग्रीके साधन-सूत्र

गाधी स्मारक सग्रहालय, नई दिल्ली, गावी साहित्य और सम्वन्धित कागजातका केन्द्रीय सग्रहालय तथा पुस्तकालय। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

नगरपालिका सग्रहालय, इलाहाबाद।

साबरमती सग्रहालय पुस्तकालय तथा आलेख सग्रहालय, जिनमे गाधीजीके दक्षिण आफ्रिकी काल तथा १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्वन्धित कागजात रखे है। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

'अमृत बाजार पत्रिका' कलकत्तासे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'आज' बनारससे प्रकाशित हिन्दी दैनिक।

'गुजराती' बम्बईसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'ट्रिब्यून' अम्बालामे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'नवजीवन' (१९१९–१९३१), गाधीजी द्वारा सम्पादित और अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल' बम्बईसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'यग इडिया' (१९१८–३१), अहमदाबादसे प्रकाशित अग्रेजी साप्ताहिक। गाधीजी द्वारा सम्पादित तथा मोहनलाल मगनलाल भट्ट द्वारा प्रकाशित।

'हिन्दी नवजीवन' (१९२१–१९३५), गाधीजी द्वारा सम्पादित और अहमदाबाद-से प्रकाशित हिन्दी साप्ताहिक।

'हिन्दू' मद्राससे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स।

'टू अवेकिग इडिया' (अग्रेजी) एस० ई० स्टोक्स, गणेश ऐड कपनी, मद्रास, १९२२।

'बापुना पत्रो–२ सरदार वल्लभभाईने' मणिबहेन पटेल द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो–४ मणिबहेन पटेलने' मणिबहेन पटेल द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'माई डियर चाइल्ड' (अग्रेजी) एलिस एम० बार्न्ज द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५६।

'सेवन मन्थ्स विद महात्मा गाधी' (अग्रेजी), खण्ड २ कृष्णदास, प्रकाशक रामविनोद सिन्हा, गाधी कुटीर, दिघवाडा, बिहार, १९२८।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(२१ अगस्तसे, १४ दिसम्बर १९२१)

२१ अगस्त मलाबारमें २० अगस्तको मोपलों द्वारा विद्रोह करने, खिलाफत राज स्थापित करने और हिन्दू जमींदारोंको लूटनेके सम्बन्धमें सरकारने सैनिक-घोषणा की।

२२ अगस्त तेजपुरकी एक सार्वजनिक सभामें गांधीजीने विदेशी कपड़ोंकी होली जलाई।

२४ अगस्त जोरहाटमें कर-दाता संघ और सार्वजनिक सभा द्वारा अभिनन्दन। तिनसुखिया होते हुए डिब्रूगढ़को रवाना हुए।

२५ अगस्त डिब्रूगढ़में स्त्रियोंकी सभा और सार्वजनिक सभामें भाषण।

३० अगस्त युवराजके आगमनके विरोधमें हड़ताल करनेकी सलाह देते हुए सिलहटसे वल्लभभाई पटेलको पत्र और तार भेजा।

३१ अगस्त चटगाँवमें हड़ताली रेल कर्मचारियोंको बताया कि उन्होंने दक्षिण आफ्रिकामें किस प्रकार चालीस हजार मजदूरोंकी हड़तालका सफलतापूर्वक नेतृत्व किया था।

१ सितम्बर विदेशी कपड़ोंकी होली जलानेके सम्बन्धमें सी० एफ० एन्ड्रचूजको उत्तर देते हुए "विनाशका नैतिक औचित्य" शीर्षकसे 'यंग इंडिया' में एक लेख लिखा।

५ सितम्बर वल्लभभाई पटेलको सविनय अवज्ञा स्थगित रखनेके सम्बन्धमें लिखा।

६ सितम्बर गांधीजी कलकत्तामें रवीन्द्रनाथ ठाकुरसे मिले।

७ सितम्बर पंजाब सभाकी बैठकमें भाषण। मारवाड़ी व्यापारियोंसे बातचीत की।

८ सितम्बर विदेशी कपड़ेके बहिष्कारपर सार्वजनिक सभामें भाषण।

१० सितम्बर खिलाफत स्वयंसेवकोंके समक्ष भाषण।

१३ सितम्बर मिदनापुरकी सभामें भाषण।

१४ सितम्बर मलाबार जाते हुए वालटेयरमें मुहम्मद अलीकी गिरफ्तारी। मुहम्मद अली तथा अन्य लोगोंकी गिरफ्तारीपर गांधीजीने बम्बईके नागरिकोंको सन्देश भेजा।

१४ सितम्बरके पश्चात् एक ज्ञापन-पत्र जारी किया जिसमें मुहम्मद अली तथा अन्य लोगोंकी गिरफ्तारीपर विचार-विमर्श करनेके लिए नेताओंको बम्बई आमन्त्रित किया।

१५ सितम्बर मद्रास पहुँचे।
'डेली एक्सप्रेस' और 'मद्रास मेल' के प्रतिनिधियोंसे भेंट।
सार्वजनिक सभामें भाषण।
मद्रासमें हिन्दी प्रचारके लिए हिन्दी-प्रेमियोंसे आर्थिक सहायता देनेकी अपील।

१६ सितम्बर मद्रासमे स्त्रियो, कपडेके व्यापारियो और मजदूरोकी सभामे भाषण।
१७ सितम्बर कडालोरकी सार्वजनिक सभामे भाषण।
पोर्टनोव होते हुए कुम्भकोणम् रवाना। सर शकरन् नायरने भारत परिषद्से त्यागपत्र दे दिया।
१८ सितम्बर चित्तरजनदास काग्रेस अध्यक्ष चुने गये।
कुम्भकोणम्मे गाधीजीने सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।
१९ सितम्बर त्रिचिनापल्लीमे नगरपालिका और काग्रेस कमेटी द्वारा दिये गये मानपत्रके उत्तरमे भाषण।
२० सितम्बर श्रीरगम्मे नगरपालिकाके मानपत्रके उत्तरमे तथा सार्वजनिक सभामे भाषण।
२१ सितम्बर डिंडीगलमे नगरपालिकाके मानपत्रके उत्तरमे तथा सार्वजनिक सभामे भाषण। मदुराके स्वागत समारोहमे भाषण।
२२ सितम्बर मदुरामे स्वदेशी और लगोटीके सम्बन्धमे सन्देश।
तिरुपत्तूरके नागरिकोकी सभामे भाषण।
कनाडुकातन, कोट्टायुर और देवकोट्टाकी सभाओमे भाषण।
२३ सितम्बर 'देशाभिमानी'के सम्पादकसे भेट।
तिन्नवेलीमे भाषण।
२४ सितम्बर गाधीजीने अली-भाइयोकी गिरफ्तारीपर भारतके मुसलमानोके नाम एक अपील जारी की।
२५ सितम्बर त्रिचिनापल्लीसे कोयम्बटूर रवाना हुये।
२६ सितम्बर अली-भाइयो और अन्य लोगोके मामलेकी सुनवाई कराचीमे शुरू हुई।
२७ सितम्बर सेलममे गाधीजीने नगरपालिकाके मानपत्रके उत्तरमे तथा सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।
२८ सितम्बर तिरुपतिमे नगरपालिकाके मानपत्रके उत्तरमे भाषण।
२९ सितम्बर विदेशी कपडेके बहिष्कारके सम्बन्धमे अपील जारी की।
बम्बईके गवर्नरकी राजद्रोह सम्बन्धी चेतावनीके उत्तरमे 'यग इडिया'मे 'राजभक्तिसे भ्रष्ट करनेका आरोप" शीर्षक एक लेख लिखा।
'नवजीवन'मे 'मेरी लगोटी' शीर्षक लेख लिखा।
१ अक्तूबर बेल्लारी नगरपालिकाके मानपत्रके उत्तरमे भाषण।
२ अक्तूबर अपने जन्मदिवसपर भगिनी समाज, बम्बईको स्वदेशीपर एक सन्देश भेजा।
४ अक्तूबर गाधीजी तथा अन्य नेताओने सैनिको और नागरिकोके नाम सयुक्त ज्ञापन जारी करते हुए अपील की कि वे सरकारसे अपना सम्बन्ध तोड ले।
५ अक्तूबर गाधीजीने 'बॉम्बे क्रॉनिकल'को लिखे पत्रमे लोगोसे अपील की कि मेरे गिरफ्तार होनेपर भी वे शान्त बने रहे।
रायल सीमाके मजदूरोको सन्देश।
६ अक्तूबर पूर्व आफ्रिकामे बसे भारतीयोकी समस्याओपर 'नवजीवन'मे लेख।

८ अक्तूबर अहमदाबादमें मजदूरोंकी पाठशालाओंके छात्रोंके समक्ष भाषण।

९ अक्तूबर अपने गिरफ्तार किए जानेपर अहिंसा और स्वदेशीका पूर्ण पालन करनेकी सलाह, 'नवजीवन' में।

'गुजरातकी परीक्षा' शीर्षक लेख लिखकर गुजरातकी जनतासे असहयोगके कार्यक्रमके पालन करनेमें एक आदर्श उपस्थित करनेका आह्वान।

१२ अक्तूबर सूरतमें स्वदेशीपर भाषण।

१३ अक्तूबर रवीन्द्रनाथ ठाकुरको उत्तर देते हुए 'यंग इंडिया' में "महान प्रहरी" शीर्षकसे एक लेख लिखा।

१६ अक्तूबर बम्बईसे सविनय अवज्ञा शुरू करनेके योग्य बननेकी अपील की।

फिजी और पूर्वी आफ्रिकामें रंग-द्वेषकी नीति और भारतमें अस्पृश्यताकी भर्त्सना करते हुए 'नवजीवन' में टिप्पणियाँ लिखीं।

१९ अक्तूबर कार्यसमिति और अ० भा० का० कमेटीके अध्यक्षके अधिकारोंके सम्बन्धमें विजयराघवाचार्य और मोतीलाल नेहरूको तार भेजा।

२३ अक्तूबर अहमदाबादमें स्त्रियोंकी सभामें स्वदेशीपर भाषण।

२७ अक्तूबर कराची जेलसे गांधीजीको लिखा मुहम्मद अलीका पत्र 'यंग इंडिया' में प्रकाशित हुआ।

गांधीजीने 'यंग इंडिया' में "युवराजका स्वागत करें" शीर्षकसे प्रकाशित लेखमें युवराजके सम्मानमें किये जा रहे समस्त समारोहोंका पूर्ण बहिष्कार करनेकी अपील की और साथ-साथ अपनेसे भिन्न मत रखनेवालोंके प्रति सहिष्णुता बरतनेको कहा।

'यंग इंडिया' में "असहयोगका रहस्य" शीर्षकसे प्रकाशित लेखमें गांधीजीने २४ महत्वपूर्ण प्रश्नोंके उत्तर दिये।

२९ अक्तूबर अहमदाबादमें विदेशी कपड़ोंकी होलीके समय भाषण।

३१ अक्तूबर प्रतिदिन दूसरी बार भोजन करनेसे पहले आधा घंटा कातने तथा न कात पानेपर भोजन न करनेका व्रत लिया।

४ नवम्बर दिल्लीमें हुई अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें सविनय अवज्ञापर भाषण।

५ नवम्बर सेनाकी नौकरी तथा अन्य सभी सरकारी नौकरियाँ छोड़नेके प्रस्तावपर कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें भाषण।

९ नवम्बर लाहौर राष्ट्रीय कालेजके दीक्षान्त समारोहमें भाषण।

१० नवम्बर लाहौरकी सार्वजनिक सभामें अली-बन्धुओंको दी गई सजापर भाषण।

'यंग इंडिया' में लेख लिखकर सविनय अवज्ञाकी शर्तोंका स्पष्टीकरण किया।

१६ नवम्बर अहमदाबादमें श्रीमद् राजचन्द्र जयन्तीके अवसरपर भाषण।

१७ नवम्बरसे पूर्व बम्बईकी सार्वजनिक सभाको भेजे गये अपने सन्देशमें गांधीजीने युवराजके स्वागतार्थ आयोजित समारोहोंका बहिष्कार करनेकी सलाह दी।

१७ नवम्बर बम्बईकी सार्वजनिक सभामें भाषण देते हुए गांधीजीने पूर्ण अहिंसा, स्वदेशी और हिन्दू-मुस्लिम एकतापर जोर दिया।

युवराजके आगमनपर बम्बईमे दगा।

'यग इडिया' मे प्रकाशित अपने लेख "आत्मनिरीक्षण" मे गाधीजीने दिसम्बरके अन्ततक स्वराज्य न मिलनेपर आत्महत्या कर लेनेकी अपनी बातको स्पष्ट किया।

१८ नवम्बर "गहरा कलक" शीर्षक लेख लिखकर बम्बईके दगोकी भर्त्सना की।

१९ नवम्बर उपवास प्रारम्भ किया, बम्बईके सभी सम्प्रदायोके लोगोसे आपसमे मिल-जुलकर रहने तथा शान्ति बनाये रखनेकी अपील की।

२० नवम्बर बम्बईके मवालियोसे अपील की।

२१ नवम्बर हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और पारसियोकी एक सभामे उपवास तोडा तथा अपने वक्तव्यमे साम्प्रदायिक एकता बनाए रखनेकी अपील की।

२२ नवम्बर साथी कार्यकर्त्ताओके नाम गाधीजीकी अपील 'यग इडिया' मे प्रकाशित हुई।

२५ नवम्बर इलाहाबादके जिलाधीशने काग्रेस कार्यकर्त्ताओके नाम सविनय अवज्ञा सम्बन्धी सभाएँ न करनेका आदेश जारी किया।

२६ नवम्बर पजाब वाणिज्य सघ (पजाब चेम्बर ऑफ कॉमर्स) के प्रतिनिधि मण्डलको उत्तर देते हुए वाइसरायने असहयोग सम्बन्धी सरकारकी नीतिका स्पष्टीकरण किया।

गाधीजीने बम्बईके नागरिकोसे साम्प्रदायिक एकताकी अपील की।

२७ नवम्बर उदार दलके लोगोके नाम मलाबार दुर्घटनाके सम्बन्धमे एक पत्र लिखा।

२ दिसम्बर राजद्रोहात्मक सभा कानूनके अन्तर्गत लाला लाजपत राय, के० सन्तानम् तथा अन्य लोगोको गिरफ्तार किया गया।

३ दिसम्बर अस्पृश्यता निवारणपर बारडोलीके लोगोको बधाई दी।

४ दिसम्बर 'नवजीवन' के अपने लेखमे प्रेमको असहयोगकी 'गुर-किल्ली' कहा।

६ दिसम्बर मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू, तथा अन्य लोगोको इलाहाबादमे भारतीय दण्डविधि सशोधन अधिनियमके अन्तर्गत गिरफ्तार किया गया।

७ दिसम्बर या उसके पश्चात् चित्तरजन दासको उनकी पत्नी तथा बगालकी अन्य स्त्रियोकी गिरफ्तारीपर बधाई दी।

१० दिसम्बर 'इडिपेडेट' के सम्पादक जॉर्ज जोजेफको १८ महीनेकी सादी कैदकी सजा दी गई।

कलकत्तामे चित्तरजन दासको गिरफ्तार कर लिया गया।

११ दिसम्बर गाधीजीके पुत्र, हरिलाल तथा अन्य स्वयसेवक गिरफ्तार।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

ई

उ

ए

ख

ग

छ

ज

ट

ठ

ध

न

भ

श

ह